खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९४१—४३ ई०]

प्रथम भाग

संपादक

पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

उत्तरप्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०१५ वि०

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक—महताबराय, नागरी मुद्रण, काशी
प्रथम संस्करण, सं० २०१५, १००० प्रतियाँ
मूल्य ११)

विषय सूची

———

वक्तव्य

खोज का अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण पाठकों के सामने प्रस्तुत है। इसमें सन् १९४१-४३ ई० के खोज कार्य का उल्लेख किया गया है। यह दो जिल्दों में है। सामग्री की उपयोगिता की दृष्टि से इसका संक्षेपीकरण नहीं किया गया इसलिये कुछ बृहद् होते हुए भी अनुसंधान की दृष्टि से इसकी उपादेयता और बढ़ गई है। इस विवरण को भूतपूर्व निरीक्षक पं० विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र ने खोज विभाग के साहित्यान्वेषकों, विशेषतः श्री दौलतराम जुयाल की सहायता से हिंदी में संपादन किया था। हिंदी में संपादन होने से इसमें उल्लिखित ग्रंथों और ग्रंथकारों का अनुक्रम भी हिंदी वर्णमाला के अनुसार है। पहले अंग्रेजी राज्य में प्रांतीय सरकार के नियमानुसार खोज विवरण अंग्रेजी में तैयार किए जाते थे इसलिये उनमें उक्त अनुक्रम अंग्रेजी लिपि के अनुसार रहते थे। अब यह बाधा नहीं रह गई है। पं० विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र ने इस विवरण को छपने के पूर्व अच्छी तरह देख लिया था।

हम उत्तर प्रदेशीय सरकार के आभारी हैं जिसकी सहायता से खोज विवरणों का प्रकाशन हो रहा है तथा जिसे इस कार्य के संरक्षण का श्रेय प्राप्त है। खोज विवरणों का प्रकाशन संतोषप्रद रूप में अग्रसर हो रहा है। अब तीन खोज विवरण (सन् १९४४-४६; ४७-४९ ई०; ५०-५२ ई०) और रह गए हैं जिनके छप जाने पर वह पुराना कार्य समाप्त हो जाएगा जो प्रकाशन व्यवस्था के अभाव में दीर्घकाल से रुका हुआ था। हमें पूर्ण आशा है कि राज्यशासन की सहायता से उक्त शेष विवरण भी शीघ्र छप जाएँगे।

मैं सभा के प्रधान मंत्री डा० राजबली पांडेय के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण रुचि लेते हुए इस विवरण को नागरी मुद्रणालय में छपवाने का तुरंत प्रबंध कर दिया। मुद्रणालय के मैनेजर बाबू महताबराय जी का मैं विशेष अनुगृहीत हूँ जिन्होंने प्रस्तुत विवरण को समय पर छापने के अतिरिक्त प्रूफ संशोधन के कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाई। खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल के परिश्रम और लगन से ही यह कार्य शीघ्र संपन्न हो सका है। इस खोज विवरण को प्रस्तुत करने का श्रेय भी उनको है। अतः वे विशेष रूप से धन्यवाद के भाजन हैं। खोज विभाग के सहायक श्री कुलदीपनारायण जी 'झड़प' एवं श्री शिवशंकर मिश्र को भी उनकी सहायता के लिये धन्यवाद देता हूँ।

उत्तर प्रदेशीय राज्यशासन द्वारा दिए गए प्रथम १०,०००) रु० के अनुदान से चार त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२६-३७ ई०) छापे गए थे। उनके पश्चात् चार त्रैवार्षिक विवरणों (सन् १९३८-४९ ई०) के प्रकाशन के निमित्त भी राज्यशासन से १६ जुलाई १९५६ ई० की राजाज्ञा द्वारा कृपापूर्वक ७०००) रु० का द्वितीय अनुदान मिला। हमने

आशा की थी कि इस द्वितीय अनुदान से उक्त शेष विवरणों में से तीन त्रैवार्षिक विवरण छाप लिए जाएँगे, परंतु ऐसा संभव न हो सका। इधर जो दो त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९३८-४० ई०, पृष्ठ संख्या ४८८ ; सन् १९४१-४३ ई० पृष्ठ संख्या ११६६) छापे गए हैं उनमें कहीं अधिक व्यय हो गया। इसका कारण एक तो प्रस्तुत खोज विवरण का दो जिल्दों में छपना है और दूसरा कागज का अधिक महँगा हो जाना है। अस्तु, अब सन् १९५० ई० के पहले के केवल दो खोज विवरण छपने शेष रह गए हैं। मेरा विश्वास है कि राज्य सरकार की सहायता से हम इन्हें भी शीघ्र प्रकाशित कर देंगे।

काशी
७-१-५९

हजारीप्रसाद द्विवेदी
निरीक्षक, खोज विभाग

प्राचीन हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज का *
अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

(सन् १९४१—४३ ई०)

इस त्रिवर्षी (सन् १९४१, ४२, ४३ ई०) में खोज का कार्य दो निरीक्षकों और दो संयुक्त निरीक्षकों की देखरेख में हुआ। प्रथम वर्ष पं० विद्याभूषण जी मिश्र निरीक्षक और पं० रामबहोरी जी शुक्ल संयुक्त निरीक्षक रहे। तत्पश्चात् डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल को निरीक्षक और मुझे संयुक्त निरीक्षक चुना गया। परंतु यह चुनाव भी अधिक नहीं टिक सका और उक्त अवधि की परिसमाप्ति पर सभा ने निरीक्षक का कार्यभार मुझे ही सौंप दिया। फलतः यह खोज विवरण मेरे निरीक्षण में तैयार किया गया है।

विवरण को आरंभ करने के पहले मैं पं० परशुराम जी चतुर्वेदी (बलिया) स्वर्गीय पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध' (आजमगढ़) और पं० देवीप्रसाद जी शुक्ल (सरस्वती संपादक, प्रयाग) के प्रति आभार प्रदर्शित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में सभा के अन्वेषकों को अमूल्य सहायता प्रदान की। वास्तव में इन विद्वानों के परिश्रम और पूर्ण सहयोग से ही प्रस्तुत खोज का कार्य संतोषप्रद रूप में संपन्न हुआ।

प्रस्तुत खोज विवरण की कार्यावधि में खोज का कार्य बलिया, आजमगढ़ और इलाहाबाद जिलों तथा काशी नगर में हुआ। बलिया का कार्य समाप्त हो जाने पर वहाँ के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल आजमगढ़ जिले में कार्य करने के लिये भेज दिए गए।

इस कार्यकाल के समाप्त होने के लगभग एक वर्ष पहले खोजकार्य में बाधा डालने वाली दो घटनाएँ हुईं। एक तो इलाहाबाद में कार्य करनेवाले नये अन्वेषक श्री महेशचंद्र गर्ग एम० ए० ने अकस्मात् त्यागपत्र दे दिया और दूसरे अगस्त आंदोलन के कारण पुराने अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल अपने कार्यक्षेत्र से काशी लौट आए। फिर भी जैसा आगे के विवरणों से पता चलेगा, कार्य को संतोषप्रद स्थिति में लाने का पूरा प्रयास किया गया।

श्री महेशचंद्र गर्ग के स्थान पर श्री उदयशंकर त्रिवेदी की नियुक्ति की गई थी; परंतु छह मास पश्चात् वे भारत कलाभवन में चले गए। उनके स्थान पर श्री विद्याधर त्रिवेदी नियुक्त हुए। श्री दौलतराम जुयाल तथा नवीन अन्वेषक सभा में रहकर आर्यभाषा पुस्तकालय के हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण लेने और प्रस्तुत खोज विवरण के प्रस्तुत करने का कार्य करते रहे।

---

* यह सारा विवरण खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल ने प्रस्तुत किया है, जिसके लिये वे धन्यवादार्ह हैं। —विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

इस त्रिवर्षी के आरंभ में युक्तप्रांत (अब उत्तर प्रदेश) की सरकार की एक विशेष आज्ञा (आर्डर नंबर १४५५।ऐक्स वी २१३।४०) प्राप्त हुई जिसका पालन करते हुए निम्नलिखित चार बातों का ध्यान रखा गया —

१—हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त करना ।

२—महत्वपूर्ण हस्तलिखित ग्रंथों की, जो प्राप्त न हो सकें, प्रतिलिपि करना ।

३—प्राप्त हुए हस्तलिखित ग्रंथों की जिल्दबंदी करना तथा उनकी नामानुक्रमणिका तैयार करना ।

४—उन हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण लेना जो अबतक खोज में न मिले हों तथा पूर्व विवृत उन ग्रंथों का भी विवरण लेना जो रचनाकाल, लिपिकाल, पाठ की शुद्धता अथवा अन्य दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हों ।

इनके अनुसार प्रस्तुत तीन वर्षों में किस प्रकार कार्य हुआ, उसका विवरण क्रमानुसार इस प्रकार है—

१—प्राप्त किए गए समस्त हस्तलिखित ग्रंथों की संख्या ११० है जिनकी सूची आगे परिशिष्ट ६ में दी गई है ।

२—जिन ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ हुई हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—

१—नल दमन काव्य—सूरदास (अष्टछाप के सूरदास से भिन्न) कृत । यह प्रबंध काव्य है ।

२—संतवाणियों की चार जिल्दें जिनमें ३४ ग्रंथ हैं । इनमें बावरी साहबा, बीरू साहब, बुल्लासाहब, गुलाल साहब, भीखा साहब और देवकीनंदन साहब आदि निर्गुन संतों के उच्चकोटि के पद हैं । ये संत एक ही परंपरा के हैं ।

३—रूपसरी—शिव नारायण स्वामी कृत ।

४—संतसागर— ,, ,, ,,

५—संताखरी— ,, ,, ,,

६—संतविचार— ,, ,, ,,

७—संत उपदेश— ,, ,, ,,

८—शब्द ग्रंथ महिमा— ,, ,, ,,

९—शब्द ग्रंथ संताखरी— ,, ,,

३—हस्तलिखित ग्रंथों की जिल्दबंदी तथा नामानुक्रमणिका प्रस्तुत करने का कार्य चल रहा है जो थोड़े दिनों में संपन्न हो जायगा ।

४—विवरण लेने के कार्य का, जो विवरण का प्रधान अंग है, आगे विस्तार पूर्वक वर्णन किया जाता है —

समस्त ७५० ग्रंथों की ८०८ प्रतियों के विवरणपत्र प्राप्त हुए। इनमें जोधपुर के श्री महावीर सिंह गहलोत एम० ए० के भेजे हुए १०४ ग्रंथों के विवरण भी संमिलित हैं। यह कार्य तीन वर्षों में इस प्रकार विभक्त है—

सन् ईसवी	विवरण लिए हुए ह० लि० ग्रंथों की संख्या।
१९४१	२४३
१९४२	३५३
१९४३	२१२

३८९ ग्रंथकारों के रचे ६०१ ग्रंथों की ६६१ प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। उनके अतिरिक्त १४७ ग्रंथ ऐसे हैं जिनके रचयिता अज्ञात हैं। ३२४ ग्रंथकारों के निर्मित ५१८ ग्रंथ खोज में बिल्कुल नवीन हैं। इनमें २५५ ऐसे नवीन ग्रंथ सम्मिलित हैं जिनके रचयिता तो ज्ञात थे, किंतु उनके इन ग्रंथों का पता नहीं था।

ग्रंथों और उनके रचयिताओं का शताब्दिक्रम निम्नलिखित है—

शताब्दी	१२वीं	१३वीं	१५वीं	१६वीं	१७वीं	१८वीं	१९वीं	अज्ञात	योग
ग्रंथकार	१	१	५	२०	५९	५७	४१	२०५	३८९
ग्रंथ	१	१	२१	१०	४१	४८	३७	६४९	८०८

ग्रंथों का विषयानुसार विभाजन इस प्रकार है—

(१)—धार्मिक और सांप्रदायिक ३४, (२) भक्ति, स्तोत्र और माहात्म्य—२२८, (३) आध्यात्मिक तथा दर्शन—५९, (४) कोकशास्त्र—३, (५) लीला विहार—३७, (६) उपदेश, नीति और ज्ञान वैराग्य—९८, (७) प्रेम और शृंगार—५०, (८) जीवनी—१०, (९) स्वरोदय—७, (१०) शालिहोत्र—४, (११) योग—२, (१२) काव्य—५२, (१३) सामुद्रिक—१, (१४) कथा कहानी तथा वार्ता—१७, (१५) रमल तथा शकुन—५, (१६) रीति और पिंगल—३६, (१७) विरुदावली तथा वंशावली—१०, (१८) इंद्रजाल तथा तंत्र मंत्र—४, (१९) पुराण और इतिहास—२३, (२०) पौराणिक कथा—३३, (२१) राजनीति—५, (२२) अलंकार—८, (२३) संगीत—३, (२४) कोश—२, (२५) यात्रा—१, (२६) ज्योतिष २, (२७) वैद्यक—१९, (२८) विविध—५५।

नवीन रचयिताओं में जो मुख्य हैं उनका उल्लेख सिद्ध (नाथ योगी), संत,

प्रेमकथानक काव्य रचयिता, रीति-ग्रंथों के प्रणेता तथा फुटकल ग्रंथों के रचयिताओं के क्रम से किया जाता है—

१—सिद्धों या नाथ योगियों में गोरखनाथ, भरथरी, चिरपट, गोपीचंद, जलंधरी पाव, पृथ्वीनाथ, चौरंगीनाथ, कणेरीपाव, हालीपाव, मीडकीपाव, हणवंत, नागा अरजन, सिद्धहरताली, सिद्धगरीव, धुंधलीमल, रामचंद्र, बालगुदाई, घोड़ाचोली, अजैपाल, चौणक नाथ, देवलनाथ, महादेव, पारवती, सिद्धमालीपाव, सुकुलहंस और दत्तात्रेय हैं।

प्रस्तुत खोज में इनकी बानियाँ या सबदियाँ मिली हैं जो हस्तलेख (सभा में विद्यमान, हस्तलेख संख्या ८७३) में एक ही जगह दी हुई हैं। पुष्पिका भी एक ही है जिसका आरंभ का वाक्य इस प्रकार है—

'इति सिधूं की वाणी संपूर्ण"

इससे यद्यपि यह प्रकट होता है कि ये सिद्ध थे तथापि इनमें केवल गोरखनाथ, चिरपट, जलंधरीपाव, चौरंगीनाथ, कणेरीपाव, और नागा अरजन ही ऐसे हैं जिनके नाम सिद्धों की नामावली से मिलते हैं (देखिये पं० रामचंद्रशुक्ल का हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ ८) गोरखनाथ, चिरपट, जलंधरीपाव, तथा नागा अरजन नाथों की परंपरा में भी हैं। शेष नाम न तो सिद्धों के नामों से मिलते हैं और न नाथों के नामों से ही। फिर भी, ये नाम लोगों में प्रसिद्ध हैं और अब जहाँ तहाँ इनकी सबदी और बानियाँ भी मिल रही हैं। इन्हें अलौकिक शक्तिसंपन्न भी बतलाया जाता है; कदाचित् अलौकिक शक्तिसंपन्न मानकर ही इन्हें सिद्ध कहा गया है, विशेष अर्थ में ये सिद्ध नहीं थे।

कुछ नाम हणवंत, रामचंद्र, महादेव, और पारवती ऐसे हैं जो कुतूहल उत्पन्न करते हैं तथा जिनके मूल रचयिता होने में संदेह होता है। ये नाम पुराणों में आए देव, देवी और अवतारों के हैं। इनके विषय में यह समझना कि इन्होंने सबदियाँ आदि कही हैं, युक्तिसंगत नहीं जँचता। इन सबदियों में से बहुतों की भाषा प्राचीन है, जैसे—गोरखनाथ की वाणियाँ तथा भरथरी, चरपट, गोपीचंद और कणेरी आदि की सबदियाँ।

हस्तलेख में हणिवंत वीर, हालीपाव, कणेरीपाव, भरथरी, लाल या ठीकर, सतवंती, और रुघनाथ (?) के कुछ पद अलग से भी संगृहीत हैं। इसी में "महापुरुषों के पद फुटकर" शीर्षक से कुछ और प्राचीन संतों और योगियों के पद दिए हैं जिनमें मछीन्द्रनाथ के भी थोड़े से पद हैं।

खेद है, प्रस्तुत, बानियों और सबदियों द्वारा इन सिद्धों के समय तथा परिचय के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। सामान्यतः इनका समय १० वीं शताब्दी से लेकर १४ वीं शताब्दी तक कहा जाता है।

बानियों का विषय संसार को निस्सार बताकर योग द्वारा मुक्तिलाभ करना है।

रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता, लिपिकाल संवत् १८५५ है। हस्तलेख में सिद्धों की बानियों के अतिरिक्त, निरगुन संतों की भी रचनाएँ हैं, देखिये सेवादास।

गोरखनाथ पिछले खोज विवरणों में कई वार उल्लिखित हैं, देखिये खोज विवरण (२-६, १६६, १७९, १५६, १६८, १४३, २९९, २१९, १५७) (३-८५) (९-९९) (पं० रिपोर्ट ३३) (३५-३०)। इस बार अन्य सिद्धों के साथ नाम आने के कारण ही यहाँ उनका उल्लेख किया गया है। उनकी जो रचनाएँ मिली हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—

१-गोरखबोध, २-दत्तात्रयगोरख संवाद, ३-गोरख गणेशगुष्टि, ४-ज्ञान तिलक, ५-आभै मातरा, ६-चौतीस लक्षन, ७-ग्रंथ सिद्धि पुराण, ८-चौबीस सिध्य, ९-आत्माबोध ग्रंथ, १०-ग्रंथ खड़ाचारी, ११-रसरासि ग्रंथ, १२-ग्रंथ गिनानमाला (ज्ञानमाला), १३-ग्रंथ रोमावली पंचमातरा, १४-पंच अगनि तिथि जोग ग्रंथ, १५-ग्रंथ सपतबार नौ ग्रह, १६-आत्माबोध, १७-सिष्यादरसण, १८-अष्टमुद्रा, १९-अष्ट चक्र व न सै बोध, २०-रामबोध, २१-पद और २२-सबदी।

पदों के अर्थ भी सूत्र रूप में दिए गए हैं।

नीचे प्रस्तुत सिद्धों की बानियों से थोड़े-थोड़े उद्धरण दिए जाते हैं—

गोरखनाथ

॥ अथपद ॥ राग आसावरी ॥

मारौ मारौ श्रपणी नृमल जल पैठी। त्रिभुवन डसतां गोरख नाथ दीठी ॥ टेक ॥
मारि ल्यौ श्रपनी जगाइ ल्यौ भूंरा। जिनमारी श्रपनी ताकौ कहा करै जौंरा ॥ १ ॥
श्रपनी कहै मैं अमला मलीया। ब्रह्मा विष्ण महादेव छलीया ॥ २ ॥

× × × ×

॥ अथ भरथरी जी की सबदी ॥

अहंकारे प्रथमी पीणी पहौपै पीणां भूंरा।
सतिसति भापंतरा जोगी भरथरी पिंड का बैरी जूंरा ॥ १ ॥

दुषिया रोवंत सुषीया हसंत केला करंत कांमंणी।
सूरा जूझंत भूंदू भाजंत सति सति भापंत राजाभरथरी ॥ २ ॥
दुषी राजा दुषी प्रजा दुखी बांभण वांणीयां।
सुषी राजा भरथरी ज्यन गुर का सबद पिछांणीयां ॥ ३ ॥

× × ×

॥ अथ चिरपट जी की सबदी ॥

काया तरवर माकड़ चित। डाले पाते भरमै नित।
कलपै झलपै दह दिस जाइ। तिस कारणि कोइ सिधनथाइ ॥ १ ॥

ढीलक छोटी मन भंग फिरै । धरि धरि नैन पसारा करै ।
पाया झरै न वाचा फुरै । ता कारणि भूंदू झरि झरि मरै ॥ २ ॥
मन चंचल पवना चंचल चंचल वाई धारा ।
या घटिमधि तीनूं चंचल क्यूं रापिवा झरता पिंड का द्वारा ॥ ३ ॥

× × ×

॥ गोपीचंद जी की सबदी ॥

राजा तजिलै पूता पाट तजिलै तजिलै हस्ती घोड़ा ।
सति सति भापंत मातामैणांवती रे पूता कलिं में जीवन थोड़ा ॥ १ ॥
राजा कै घरि रांणी होती माता हमरै होती माई जी ।
सत पणै चौवारै वैठंती माता यहू ग्यांन कहां तै ल्याइ जी ॥ २ ॥
गुरु हमारै गोरप बोलीए चरपट है गुर भाइ जी ।
एक सबद हमकूं गुरु गोरखनाथ दीया सो बोल्या मैणांवती माइ जी ॥ ३ ॥

× × ×

मन चलंतां पवन चलै पवन चलंतां विंद ।
विंद चलंतां कंध पड़ै तूं भापै गोपीचंद ॥ १६ ॥

× × ×

॥ अथ जलंधरी पाव जी की सबदी ॥

सुनि मंडल मैं मन का वासा । जहां प्रम जोति प्रकासा ॥
आपै पूछै आपै कहै । सतगुर मिलैपै प्रम पद लहै ॥
एक अचंभा ऐसा हुवा । गागर मांहिं उपास्या कूवा ॥
वोछी नेज पहूचै नांही । लोक पाया सामरि मरि जांही ॥

× × ×

॥ पृथीनाथ जी की सबदी ॥

हंस चढ्या साइर तिरूं सिंध चढ्या वन मांही ।
हस्तीपापर मेल्हि कै मन सूं जूझैण जांही ॥ १ ॥
सोउं तौ हाथि न आवई जागूं तौ भागा जाइ ।
मन ही सेती झूझना वाघ हूवा जगपाइ ॥ २ ॥

× × × ×

मन मुद्रा सुरति सिका सतगुर सवदां वेंध्यां कांन ।
जोगी का घर कठिन है पृथीनाथ कहै वैकूंठ आसांन ॥ ४ ॥

× × × ×

॥ चौरंगीनाथजी की सबदी ॥

मूल सींचोरे अवधू मूल सींचौ ज्यूं तरवर मेल्हंत डालं ।
अम्हे चौरंगी मूल सींचिया अनभै उतरया पारं ॥ १ ॥

मालीलो भल मालीलो सींचै सहज कियारी।
उनमन कला एक पहोप निपाया आवागमन निवारी ॥ २ ॥

मारिबा तौ मनमस्त मारिबा लुटिबा पवन भंडारं।
साधिबा तौ पंच तत साधिबा सेयबा तौ निरंजन निराकारं ॥३॥

× × × ×

॥ कणेरीपावजी की सबदी ॥

सगौ नहीं संसार चित नहीं आवे वैरी।
निरभै होइ निसंक हरप मैं हंस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हंस्यौ कणेरी हरप मैं एक लईआ रन।
जुरा बिछोही जो मरद मरन बिछोह्या मन ॥ २ ॥
मनवा मेरा बीज बिजोवै पवना बाडि लगावै।
चेतन रावल पहरै बैठा मृघा पेतन पावै ॥ ३ ॥

× × × ×

॥ हालीपावजी की सबदी ॥

अजपा जपौ रे अवधु अजपा जपौ पुजौ निरंजन थांन।
गगन मंडल मैं जोति लपाई देपि धरेबा ध्यान ॥ १ ॥
ल्यौकी आंपि चेतन की पांपि। दिष्टि रहै दिष्टि सुनिकूं झांपि।
अगम अगोचर तहां गुरुकूं लहै। एतत देपि सिध हालीपाव कहै ॥

× × × ×

॥ मीडकीपावजी की सबदी ॥

पिंड चलंतां सबको देखै प्राण चलंत अकेला।
प्रान चलंता जे नर देपै तास गुरू मैं चेला ॥ १ ॥

कहां बसै गुरू कहां बसै चेला। कूण सपेन्न कैसैं मेला।
ऐसा ग्यान कथौ रे भाई। गुर सिख की कूंणवो लपाई ॥ १ ॥

× × × ×

॥ हणवंतजी की सबदी ॥

वक्ता आगे श्रोता होइबा धीरं देखि मसकीनं।
सिधकै आगे साधिक होइबा यूं सति सति भाषंत हणवंतवीरं ॥ १ ॥

वेद पढ़े पढ़ि पंडित मुवा पढ़ि गुणि भाट नगारी।
राज करंता राजा मुवा रूप देपि देपि नारी ॥ २ ॥

× × × ×

॥ नागा अरजन की सवदी ॥

दारु तैं दाप उतपनी दाप कथी नही जाई ।
दाप दारू जव परचाभया दाप मैं दारू समाई ॥ १ ॥

पूरव उतपति पछिम निरंतर उतपति परलै काया ।
अभि अंतरि पिंड छाडि प्रान भरपुर रहै ।
सिध संकेत "नागा अरजन" कहै ॥ २ ॥
आपा मेटिला सतगुर थामिला ।
न करिवा जोग जुगति कर हेला ॥
उनमन डोरी जव पैंचीला ।
तव सहज जोति का मेला ॥ ३ ॥

× × × ×

॥ सिध हरतालीजी की सवदी ॥

जोगी सो जो जुगतिजाणै आपा थांभि रहावै ।
वाहै जोतै काटै क्यारी पांणी सुपन गिरावै ॥ १ ॥
जोगी सो जो चौर कूं रापै ससि की भिष्या होइ समांगी ।
गगन मंडल मैं रोपै पंभ नाद विंद वाईस थंभ ॥ २ ॥

× × × ×

करमन काया छाया न माया । सो तत "सिध हरताली" पाया ॥११॥

\+ + + +

॥ सीध गरीवजी की सवदी ॥

काया नगरी मैं मन रावल । अहनिस सीझै तहां नृमल चावल ।
चावल सीझि पकाई डीव । सति सति भाषंत "सिध गरीव" ॥ १ ॥

× × × ×

॥ धुधलीमलजी की सवदी ॥

॥ चौरासी परण मुधा मार्‌या ता समझ्या की कथा ॥

आइसजी आवौ

बावा आवत जात बहुत जुग वीता कछु न चढीया हाथं ।
अव का आवण सुफल फलीया पाया निरंजन सिध का साथ ॥ १ ॥ आइस जावौ ॥
वावा वैठा उठी उठा वैठी वैठी उठि जगदीठा ।
घरि घरि रावल भिष्या मांगे अमी महारस मिठा ॥ २ ॥ आइसजी वैठो ।

× × × ×

वावा जिन रठ गाया तिन सच पाया तजि पेचर वुधि मति बोलै ।
जैसा कमावै तैसा पावै । सति सति भाषै धुधली सोलै ॥१४॥१५॥

॥ रामचंद्र जी की सबदी ॥

अगनि कुंड समो नारी घृतं कुंड समो नरा ।
जंघ जोडि प्रसंगांनांम क्यूं तो मन निहचलरे लखमणां ॥ १ ॥ १६ ॥

॥ बाल गुदाई जी की सबदी ॥

जास माता सीलवंती पिता अस्तन भापते ।
तास पुत्र भये जोगेस्वर पुनिरपि जन्म न विंदते ॥ १ ॥
चहुँ दिस जोगी सदामलंग पेलै वर कामनि कै संग ।
हसै पेलै रापै भाव रापै काया गढ़ का राव ॥ २ ॥

× × ×

अधिक तत्तते गुरु बोलिए सम तत्त गुर भाई ।
हीन तत्त ते चेला बोलीए सति सति भापै वालदाई ॥ १३ ॥ १७ ॥

॥ घोड़ा चोली जी की सबदी ॥

श्री गोरषनाथ पंथ का भेव । अनंत सिधा मिलि पायो भेव ।
पाया भेव भई प्रतीत । अनंत सीधा मैं गोरष अतीत ॥ १ ॥
रावल ते जे चाले रांही । उलटी लहर समंद्र समांही ।
पंच तत का जाने भेव । तेतौ रावल प्रतपि देव ॥ २ ॥

× × ×

अंचितं पुरांणां गगन गरास । बोलै घोड़ाचोली मछिंद्र का दास ।
अचितं फुरै हारयौ न आवै । तब घोड़ाचोली कहां तू पावै ॥ १४ ॥

× × ×

॥ अजैपाल जी की सबदी ॥

मूंड मूंडे भेप वितूंडे नां बूझी सतगुर की बांनी ।
सुनि सुनि करि भूलेव सवा आपा सुध न जाणी ॥ १ ॥
नाभि सुनि तैं पवनां उठया प्रम सुनि मैं पैसा ।
तिहि सुनि तैं पिंड ब्रह्मंड उपज्या ते सुनि है कैसा ॥ २ ॥

× × ×

जुरा मरन काल सरब व्यापै कांम वसंत सरीरं ।
लषमण कहैं हो बाबा अजैपाल तुम कूंण आरंभ थीरं ॥ १७ ॥

× × ×

॥ चौणकनाथ जी की सबदी ॥

काकड़ी करमठ कीजै रे अवधू वाइ चलै असरालं ।
सूनैं देवल चौर पैंडैगा चेतो रे चेतन हारं ॥ १ ॥

सिंध साधक मेरे वाइसूं विंद गगन मैं फेरे।
मनका वाकल चुणि चुणि पोळै सींढी उपरि मन क्यूं डोलै ॥ १ ॥

× × ×

॥ देवलनाथ जी की सवदी ॥

देवल भए दीसंतरी सब जग मेल्ह्या जोइ।
नादी वेदी वहौ मिलै प्रभेदी मिलै न कोई ॥ १ ॥

× × ×

॥ महादेव जी की सवदी ॥

गगन मन वाकि लै त्रिविधि दुप काटि लै थापि लै वाला पंच भूत।
हरि रस पाकि लै जनम मै भागि लै भापंत सति 'सिव' अवधूतं ॥ १ ॥

× × ×

॥ पारवती जी की सवदी ॥

जल मल भरीया नल। अगनि न दलै नाभि कै तल।
अगनि न वलै न प्रगटै किरन। ताकारनि "पारवती" जगत्र का मर्न ॥ १ ॥

× × ×

॥ सिधमालीपाव जी की सवदी ॥

'सिधमाली पावलो' सिधमालीपावलो सहजैं सींचत वयारी।
उनमनी कलां एक पहौपनिपाया जोगिंद्र आवागवन निवारी ॥ १ ॥

× × ×

चंद सूर दोई फूला फूली रचिलै पवनां मांल संजोइ।
गगन सिपर बैठो चौसरि गूंथै विरला वूझंत कोई ॥ ५ ॥ २४ ॥

॥ सुकल हंस जी की सवदी ॥

देवल देपंता पंडिता देवल पड हडसी। राजा देपंता रिण वासं।
गुरु चेलै प्रतपि वाद होसी ॥
पुत्रन मांनसी माइ बापं ॥ १ ॥

× × ×

विमल विचार गिर कंदलि पैसिवा सुकुल हंस भापंत ते डंसं।
चीया चेतन दोइ सम कर मेलिवा उडि न जाइसी प्रमहंसं ॥ ५॥२४ ॥

॥ दत्तात्रेय जी की सवदी ॥

पिमा जापं सील सेवा पंच इंद्री हूतासनं।

उनमनि मंडप निरवान देवा सदा जीवत भावना मेव ॥
लोलीन पूजा मन महूप सति सति भापत श्री दत्तदेव अवधूत ॥ १ ॥

× × ×

हणवंत का पद

वाघनि लोरे वाघनि लो वाघनि है बट पाड़ी लो।
हेत करैं घट भीतरि पैसे सोपि लेवै नौ नाड़ी लो ॥ टेक ॥
जिंद भी सोपे विंद भी सोपे सोपे सुंदरि काया लो।

× × ×

ते नर जोनि कदे नहीं आवै सति सति भापे हणवंत वीरं लो ॥ २ ॥ १ ॥

× × ×

॥ सतवंती के पद ॥

गहीयौ वाला सति सबद सुपधारा गगनमंडल चढ़ि प्रीत्म प्रसौ।
रूप बरन तै न्यारा ॥ टेक ॥
धरता कूं करता मति मांनौ सति कौ सवद चिताऊं।
अव लग करम लह्यौ नही मेरौ गुज वीज कहि जाऊँ ॥ १ ॥

× × ×

इंच्छया वोऊ आदि लूं माया यूं सति भापै सतवंती ॥ ६ ॥ १ ॥८ ॥

संतों में बावरी साहिबा, वीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, और विरंच गोसाईं मुख्य हैं।

२—प्रथम चार संत गुरुशिष्य क्रम से एक ही परंपरा के हैं। एक हस्त लेख में इनके कुछ शब्द तथा वानियाँ मिली हैं जो रचयिताओं के क्रम से इस प्रकार हैं —

रचयिता	रचना।
बावरीसाहिबा	केवल एक शब्द।
बीरू साहब	दो शब्द।
यारीसाहब	तीन रचनाएँ १—इयारी साहब के शब्द, २—रमैनी, ३—राम के कहरा।
बुल्ला साहब	साखी। इनके कुछ शब्द पिछले खोज विवरण (२०–२३) में भी आ चुके हैं।

रचनाओं का विषय साधारणतः संत मतानुसार दार्शनिक सिद्धांतों का वर्णन एवं ज्ञानोपदेश है। रचना काल किसी में नहीं है, लिपिकाल संवत् १८६७ है।

इनके द्वारा रचयिताओं के संबंध में कुछ भी ज्ञात नहीं होता; परंतु ग्रंथस्वामी (इस परंपरा के अनुयायी, बलिया जिला के अंतर्गत चिटबड़ा गाँव में स्थित मठ के महंत) से जो कुछ ज्ञात हुआ है वह निम्नलिखित है—

"बावरी साहिबा निरगुन पंथी मुसलमान महिला थीं। इन्होंने अलग पंथ चलाया जिसका नाम आगे चलकर सत्यनामी पंथ पड़ा। सत्यनामी पंथ का विशेष प्रचार करनेवाले जगजीवनदास उन्हीं की शिष्य परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य थे। इनकी गुरुशिष्य प्रणाली यों है—
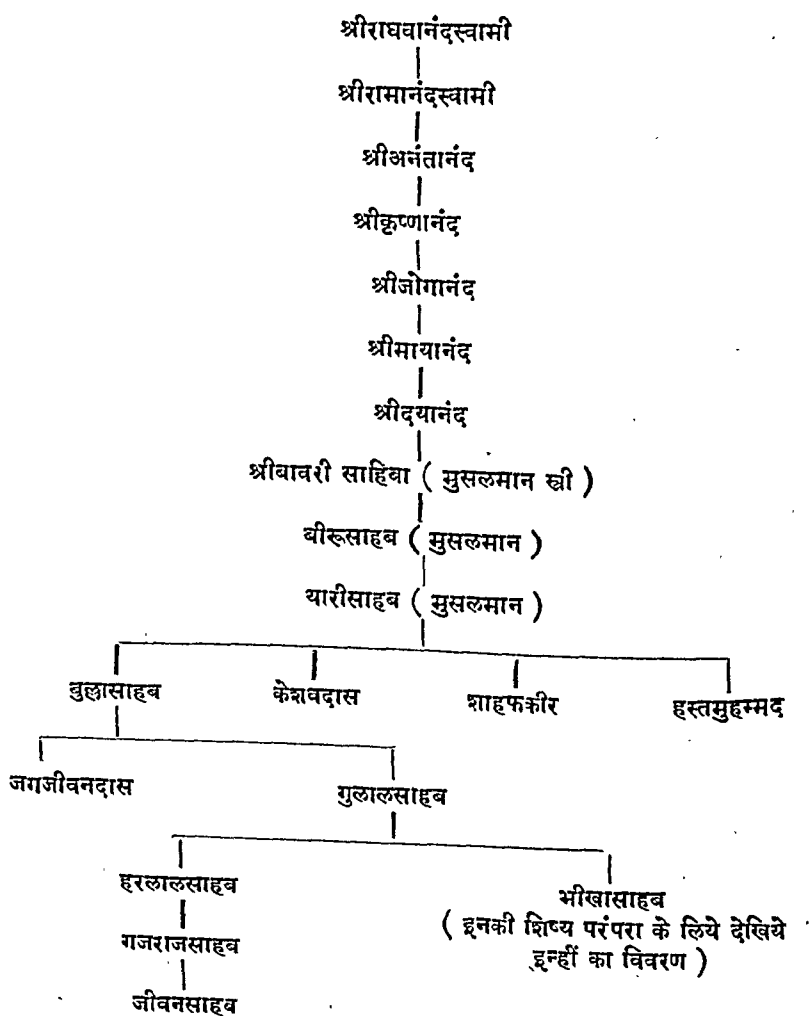
|
तेजधारी साहब
|
देवकीनंदन साहब
|
बनमाली साहब
|
वृजमोहन साहब
|
श्रीराजारामजी
(चिटबड़ा गाँव के वर्तमान महंत)

बावरी साहिबा, बीरूसाहब और यारी साहब तीनों ही मुसलमान थे तथा दिल्ली के निवासी थे। बावरी साहिबा अकबर बादशाह के पहले वर्तमान थीं। यारी साहब के विषय में कहा जाता है कि वे शाही घराने के थे तथा केशवदास, शाहफकीर और हस्त मुहम्मद नामक इनके तीन शिष्य और थे। ये पहुँचे हुए संत थे।"

यारी साहब के शिष्यों में से केशवदास और शाह फकीर की भी कुछ रचनाओं के विवरण लिए गए हैं जिनका उल्लेख प्रस्तुत विवरण में यथास्थान किया गया है।

इस पंथ का वाङ्मय भी विस्तृत है जिसकी महत्ता अन्य निरगुन पंथियों के वाङ्मय से कम नहीं है। आध्यात्मिक ज्ञान और दार्शनिक विचारावली के साथ-साथ इसकी अधिकांश रचनाओं में कवित्व भी दृष्टिगोचर होता है।

३—विरंच गोसांई (जनविरंज वा विरंचराम)—इनकी 'शब्दावली' नामक रचना मिली है जिसमें ज्ञान, वैराग्य और भक्ति संबंधी अनेक पद हैं। रचनाकाल लिपिकाल का कोई पता नहीं चला। विषय की दृष्टि से रचना अच्छी है। भाषा में भोजपुरी और मैथिली का मिश्रण है।

रचयिता ने अपने लिये दो अन्य नाम 'जनविरंज' और 'विरंचराम' भी प्रयुक्त किए हैं। रचना द्वारा इनका कोई विवरण नहीं मिलता; परंतु ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ये बलिया जिला के अंतर्गत गड़वार के पास दामोदरपुर के निवासी एवं जाति के पांडेय ब्राह्मण थे। इनके वंशज अभी तक उक्त ग्राम में रहते हैं। लोगों द्वारा पता चला कि ये सिद्ध महात्मा थे तथा इनकी मृत्यु हुए लगभग साठ सत्तर वर्ष हो गए। इस कथन का और लोगों ने भी समर्थन किया है।

प्रस्तुत रचना पढ़ने से ज्ञात होता है कि ये निर्गुण और सगुण में कोई अंतर नहीं मानते थे—

'निर्गुन सर्गुन एक मूल है भेद भाव नहीं कीजिए।
गगन सो जो अमिय बरसै अमृत प्याला पीजिए॥'

फिर भी, इनकी वर्णन-शैली और विचारधारा अधिकतर निरगुन संतों की सी है।

पट्चक्र के मार्ग का अवलंबन करके त्रिकुटी की त्रिवेणी धारा में स्नान करने का उल्लेख ये भी करते हैं —

'मध्य त्रिकुटी त्रिवेणीधारा करत मज्जन सोई।'

कवीर की तरह अलख पुरुप के साथ विवाह करने का भी वर्णन करते हैं; परंतु उसके ढंग से नहीं। कवीर का इस विपय में यह पद 'दुलहिनि गावहु मंगल चार। हम घर आये हो राम भरतार' प्रसिद्ध है। इनकी दुलहिन विवाह करने के निमित्त स्वयं ही प्रिय के देश को चलती है —

मंगल

"दुलहीनी चललीही दुलहा वीआहन दुलहा न आवे ए देस हे।
सब सखिअन मिलि, मंगल गावल दुलहीनि भेजे ले संदेस हे॥
नाही कोइ हीत वंधु वावा दा नही मोरा माता ना करेले दुलार हे।
नगर के लोग सब देपेला तमाशा व्याह करेलो लज्या छोड़ी हे॥
रुपन मीप तहा मडवा न देपो देसवा परेला उजारि हे।
अलप पुरुप वाकी तहा हवै वसगीति (? वसगति) नाही कीछु तहां ठहराव हे॥
जव हम चलली पीआ पुर सपिया सुरति न डगर वनाइ हे।
जन वीरंज मंगल नीति उपजत अनभो गति के लपाव हे॥"

इनका सगुण भक्ति संबंधी भी एक पद दिया जाता है —

"देपी सखी कान्ह करत लरकाई।
प्रवल जाइके डगर रोकत प्रभु दधि मोर पाइ मटुकी दे गीराई॥
वोरहनो देवे गइलो नंद द्वारे हृदय प्रीति रहेलो मुसुकाई।
वोरहन मानत नाही नंदरानी कहत विरंज अव घर फिरि लजाई॥"

प्रेम-कथानक काव्य-रचयिताओं में दुखहरण और रतनरंग उल्लेखनीय हैं।

४—दुखहरण—इनके कुछ 'कवित्त' और दो ग्रंथ 'पुहुपावती' तथा 'भक्तमाल' मिले हैं। इन सब रचनाओं का विपय भक्ति है। 'कवित्त' और 'पुहुपावती' में मलूक का उल्लेख गुरु के रूप में होने के कारण उन्हें एक ही रचयिता दुखहरण द्वारा रचित मान लिया गया है। 'भक्तमाल' भी जो अपूर्ण है अन्य दो रचनाओं की तरह भक्ति विपयक ग्रंथ होने के कारण इन्हीं की कृति जान पड़ती है।

'कवित्त' में मुक्ति के लिये भगवान् से प्रार्थना की गई है। इसमें रचनाकाल तथा लिपिकाल उल्लिखित नहीं हैं।

'पुहुपावती' एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसकी रचना प्रेम कथानक काव्यों के ढंग पर की गई है। इसका आभास ग्रंथांत में उल्लिखित मृगावती, चित्रावली और मधुमालती के

नामों से मिलता है। फिर भी वस्तुविन्यास सब भारतीय है। कथा का सार इस प्रकार है--

'राजपुर देश का राजा प्रजापति सात द्वीप नौखंड में सब राजाओं का शिरमौर था। शत्रुरहित होने के कारण वह कोई अस्त्र नहीं रखता था। उसको भगवती की तपस्या से एक राजकुमार नामक पुत्र प्राप्त हुआ जिसके विषय में ज्योतिषियों ने भविष्यद्वाणी की कि वह बीस वर्ष की अवस्था में एक रूपवती स्त्री के प्रेम में पड़कर वैराग्य धारण करेगा। फिर उसके साथ विवाह कर तथा मार्ग में एक राजा को जीतकर घर लौटेगा।

निदान बीस वर्ष की अवस्था होने पर एक दिन राजकुमार पिता के पास उन राजाओं के साथ युद्ध करने की आज्ञा माँगने गया जिन्होंने उसके पिता के देश का कुछ भाग जीत लिया था। परंतु राजा ने बालक समझकर राजकुमार को आज्ञा नहीं दी। इस पर राजकुमार असंतुष्ट होकर परदेश चला गया। मार्ग में उसे ऐसा भयानक और गहन वन मिला जिसमें न तो कोई मार्ग था और न कोई पथिक ही। भूख प्यास भी सताने लगी। पास में धन तो था पर भोजन न था। ऐसी विकट स्थिति में राजकुमार को धन की तुच्छता ज्ञात हुई। जब भूख प्यास से प्राण बहुत अकुलाने लगे तो भगवंदकृपा से उसे एक बनजारा मिला जिससे भोजन लेकर उसने क्षुधा की तृप्ति की। वह फिर आगे बढ़ा। दस दिन तक चलते रहने पर अनूपगढ़ नामक नगर में पहुँचा। यहाँ के राजा का नाम अंवर तथा रानी का नाम वसुधा था। सूर्य प्रधान और चंद्र आदि बड़े मंत्री थे। पवन और मेघ क्रमशः अगुआ और महंत थे। पाताल का वासुकी इस राजा के डर से डरता था और इन्द्र नित्य सेवा में उपस्थित रहता था। राजा की पुहुपावती नामक एक पुत्री थी। एक दिन संयोगवश झरोखे से झाँकते हुए उसकी दृष्टि राजकुमार पर पड़ी जिसके सौंदर्य पर वह मुग्ध हो गई। फलतः राजकुमार के बिना उसकी विकलता बढ़ने लगी। किसी प्रकार वह मालिन को दूती बनाकर राजकुमार से मिली। राजकुमार भी, जो पहले से ही पुहुपावती से प्रेम करने लगा था, उसे पाकर अत्यंत प्रसन्न हुआ। मिलन हो जाने पर दोनों ने विधिपूर्वक विवाह हो जाने तक काम के वशीभूत न होने की प्रतिज्ञा की, जिसे निभाते हुए दोनों नित्य प्रति मिलते रहे।

एक दिन राजा अंवर आखेट के लिये चला। राजकुमार भी साथ हो लिया। राजा राजकुमार का परिचय पाकर हर्षित हुआ और उसको अपने साथ ले गया। वन में पहुँचकर राजकुमार ने सिंहनी का पीछा किया जो उसे बहुत दूर ले गई। उसने सिंहनी को तो मार दिया। परंतु मार्ग भूलकर सिंहलद्वीप जा पहुँचा। वहाँ उसकी भेंट उसके मामा सज्ञान से हुई जो उसको खोजता फिरता था। वह राजकुमार को पकड़कर राजपुर ले गया। राजा और रानी पुत्र को पाकर प्रसन्न हुए। उन्होंने शीघ्र ही काशिराज की पुत्री रूपवंती से उसका विवाह कर दिया। परंतु राजकुमार को उससे किसी प्रकार की भी प्रसन्नता न हुई प्रत्युत वह पुहुपावती के विरह में रात दिन उदासचित्त रहने लगा। उधर पुहुपावती को भी राजकुमार का वियोग असह्य हो उठा। उसने मालिन को फिर दूती बनाकर राजकुमार

को ढूँढ़ लाने के निमित्त भेजा। दूती जो अत्यंत विचक्षण बुद्धि की थी, राजपुर पहुँची और बड़े कौशल से राजकुमार को विरागी वेश में अनूपगढ़ ले चली। मार्ग में के धर्मपुर नामक देश का दानव राजकुमार को उठा ले गया। दूती वहीं छूट गई। दानव ने राजकुमार का विवाह सात समुद्र पार बेगमपुर देश के राजा बेगमराइ की पुत्री रँगीली से कर दिया। राजकुमार को इस विवाह से भी कोई हर्ष न हुआ। किसी प्रकार युक्तियों द्वारा दानव को विरागी बनाकर वह अनूपगढ़ के लिए चल पड़ा। रँगीली के प्रार्थना करने पर उसको भी साथ ले लिया। परंतु यह साथ टिक न सका। सात समुद्र पार करते समय रँगीली राजकुमार से बिछुड़ गई। वह एक द्वीप में पहुँची और वहाँ शिव पार्वती के आज्ञानुसार एक मंदिर में चतुर्भुज देवता की उपासना करने लगी। शिव जी ने उसको उक्त उपासना द्वारा पति दर्शन होने का वरदान दिया।

राजकुमार कठिनाइयों को पार करता हुआ फिर धर्मपुर पहुँचकर दूती से मिला। वहाँ से दोनों अनूपगढ़ पहुँचे जहाँ राजकुमार और पुहुपावती का विवाह हो गया और दोनों सुखपूर्वक रहने लगे।

इधर राजपुर देश में राजकुमार की प्रथम स्त्री भी तरुणावस्था को पहुँच गई। उसे भी पति का वियोग सताने लगा। उसने अपनी मैना को पति ढूँढ़ लाने के लिये भेजा। मैना राजकुमार की खोज में अनूपगढ़ पहुँची और उसको रूपवती का संदेश दिया। संदेश पाकर राजकुमार को अपने देश तथा माता पिता और स्त्री की याद आई। वह पुहुपावती को लेकर शीघ्र देश की ओर चला। मार्ग में उज्जैन के राजा रोठ गँवार के साथ युद्ध हुआ जिसमें उसने विजय प्राप्त की। यहीं पर मैना के प्रयत्न से रँगीली से भी मिलन हुआ। इस प्रकार दो स्त्रियों तथा मैना के साथ राजकुमार अपने देश पहुँचा। राजा और रानी फिर से पुत्र को पाकर हर्षित हुए और शीघ्र ही उसका राजतिलक कर दिया। रूपवंती भी पति को पाकर प्रसन्न हुई।

अंत में परमात्मा (अधम उधारन) राजकुमार की परीक्षा लेने के निमित्त उससे पुहुपावती माँगने आए। राजकुमार ने पुहुपावती को सहर्ष प्रदान कर अपनी दानशीलता का परिचय दिया जिससे भगवान् ने उसको मनोवांछित वरदान दिया।

ग्रंथ में २७ खंड हैं। इसका रचनाकाल सं० १७२६ वि० और लिपिकाल संवत् १८६७ है। रचना प्रायः दोहे चौपाइयों में की गई है। बीच बीच में कवित्त, सवैया कुंडलिया और अरिल छंद भी हैं। भाषा अवधी है। हस्तलेख अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्था में है और बीच से खंडित है। इसके पत्रों के क्रम में भी गड़ बड़ है।

भक्तमाल—इसमें प्राचीन और मध्यकाल के भक्तों की महिमा का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है।

रचयिता ने अपना परिचय केवल पुहुपावती में दिया है। उसके अनुसार इनके पिता का नाम घाटमदास था। जाति के कायस्थ और गाधीपुर (गाजीपुर) के निवासी

थे। इनके तीन मित्र थे जिनके नाम प्रेमराज, बेचनराम तथा मुरलीधर थे। इन्होंने अपने गुरु मलूकदास, जन्मस्थान गाधीपुर और तत्कालीन बादशाह औरंगजेब का विस्तृत वर्णन किया है।

ये सुप्रसिद्ध संत शिवनारायण स्वामी के गुरु जान पड़ते हैं, देखिये प्रस्तुत विवरण में शिवनारायण स्वामी पर लिखी गई टिप्पणी इसकी संभावना इस बात से प्रकट होती है कि शिवनारायण स्वामी बलिया जिले के अंतर्गत चंदवार ग्राम के रहनेवाले थे। पहले गाजीपुर और बलिया एक ही जिले के अंग थे। चंदवार और गाधीपुर (गाजीपुर जो प्रस्तुत रचयिता का जन्मस्थान है) पास पास ही हैं, अतः दोनों संतों का समीप में रहने के कारण परिचय एवं सत्संग हो जाना संभव जान पड़ता है।

५—रतनरंग—इनकी "छिताई कथा" नाम से एक रचना मिली है। रचना में अलाउद्दीन की देवगिरि विजय की यह कथा वर्णित है—

"देवगिरि में राजा रामदेव राज्य करता था। उसके समय में दिल्ली से एक चित्रकार वहाँ गया और चार वर्ष तक रहा। जब वह आने लगा तो राजा ने अलाउद्दीन के लिये बहुमूल्य भेंट और भीमसेनी कपूर भेजा। अलाउद्दीन ने भेंट को देख कर कपूर की विशेष प्रशंसा की। इस पर देवगिरि की एक दासी हँसी और कहा कि जिस कपूर की तुम भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे हो वह हम लोगों के लिये तुच्छ पदार्थ है।

चित्रकार ने देवगिरि की राजकुमारी छिताई का भी चित्र दिखाया जिसे देखते ही बादशाह मूर्छित हो गया। फिर क्या था, देवगिरि पर चढ़ाई हुई और विजय के रूप में अलाउद्दीन की अभिष्ट पूर्ति हुई।"

कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। छिताई का उल्लेख बहुत पहले से ही काव्यों में होता आ रहा है। पदमावत (जायसीकृत) और वीरचरित्र या वीरसिंहदेव चरित (केशव कृत) में भी यह नाम मिलता है।

ग्रंथ में रचनाकाल तो नहीं है, परंतु लिपिकाल दिया है जो संवत् १६८२ है। लिपि प्राचीन और दुर्बोध है। भाषा ब्रज है जिसमें प्रौढ़ता और एकरूपता का अभाव है।

प्रेम-कथा-काव्यों की एकधारा सूफी धारा से भिन्न भारतीय पद्धति पर चल रही थी जिसका प्रमाण प्रस्तुत 'छिताई कथा' से भी मिलता है।

रचयिता के जीवनवृत्त के विषय में प्रस्तुत रचना से कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने से समय का भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता; परंतु लिपिकाल संवत् १६८२ होने के कारण इनकी प्राचीनता स्पष्ट प्रकट होती है।

रीतिग्रंथ-प्रणेताओं में लाल और श्रीधर मुरलीधर नवीन हैं।

६—लाल-ये "विक्रमविलास या नवरस" नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में

नायिका भेद विषय का वर्णन है। इस विषय की यह उत्तम रचना है। उदाहरणों में अन्य कवियों के भी छंद दिए गए हैं। खोज में इसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। एक प्रति में, जो पूर्ण है, रचना काल का कोई उल्लेख नहीं; परंतु दूसरी में जो अपूर्ण है रचना काल संवत् १६४० दिया है।

इसकी पुष्पिका के पश्चात् भी एक संवत् का उल्लेख है जो १६४२ है। दोनों संवतों के दोहे नीचे दिए जाते हैं—

"सोलह से चालीस में संवत् अवधारु।
चेतमास शित पछ पुण्य नवमी भृगु वारु॥"

× × × ×

सोलह से वालीस में संवत अवधारु।
चेतमास शुभ पछ पुण्य नवमी भृगुवारु॥

दोहों को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि "चालीस" और 'वालीस' शब्दों को छोड़ इनमें और कोई अंतर नहीं। अतः ये दोनों एक ही संवत् का उल्लेख करते हैं। विचार करने पर रचनाकाल सं० १६४० ही ठीक जँचता है।

यदि संवत् १६४२ होता तो "सोलह से वालीस" न लिखकर "सोलह से बयालीस अथवा ब्यालीस" लिखा जाता जिससे 'बयालीस, का स्पष्ट बोध होता। लेख प्रमाद से चालीस का ही 'वालीस' हो गया जान पड़ता है। अस्तु।

लिपिकाल प्रथम प्रति में संवत् १८७२ और दूसरी में संवत् १७२१ है। रचयिता किसी विक्रमशाही के आश्रित थे। इससे अधिक इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ की प्रथम प्रति के ऊपर ग्रंथ का एवं एक व्यक्ति नेवजीलाल दीक्षित का नाम इस प्रकार उल्लिखित है—

विक्रम विलास की पोथी भाषा॥१॥
नेवजीलाल दीक्षित॥१॥

हो सकता है कि नेवजीलाल दीक्षित रचयिता का ही नाम हो।

इन्होंने अपने दो ग्रंथों का भी उल्लेख किया है जिनके नाम, 'कथामाधवानल' और 'नाटक ऊपाहार' हैं, यथा—

कथा माधवानल करी नाटक ऊपाहार।
तृप्ति ना मानी लाल तब नवरस कियो विचार॥

आश्रयदाता की वंशावली इस प्रकार दी है—

वंशावली से यह प्रकट नहीं होता कि यह राज वंश कहाँ का था।

७—श्रीधर मुरलीधर—इन्होंने "भाषा भूषण" नामक ग्रंथ की संवत् १७६७ वि० में रचना की। ग्रंथ में संस्कृत के 'चंद्रालोक' और 'कुवलयानंद' ग्रंथों के आधार पर अलंकारों का निरूपण किया गया है। इसकी रचना महाराज जसवंतसिंह के भाषाभूषण के ढंग पर हुई है। आधे दोहे में लक्षण और आधे में उदाहरण दिए गए हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति कब लिखी गई, पता नहीं चलता।

रचयिता प्रयाग के निवासी ओझा ब्राह्मण थे। इनके आश्रयदाता का नाम नवाब मुशल्लेह खान बहादुर था जिनकी आज्ञा पर ग्रंथ की रचना हुई। इनका श्रीधर नाम था और मुरलीधर नाम से प्रसिद्ध थे—

"श्रीधर ओझा विप्रवर मुरलीधर जसनाम।
तीरथराज प्रयाग में सुवस वस्यो रविधाम" ॥

हिंदुओं में कई नाम हुआ भी करते हैं।

फुटकर ग्रंथों के नवीन रचयिताओं में गोपाल (जनगोपाल) और लखन-सेनी मुख्य हैं।

८—गोपाल (जनगोपाल)—ये "रासपंचाध्यायी" ग्रंथ के रचयिता हैं। नाम के अतिरिक्त इनका और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में गोपाल नामक कई रचयिताओं के उल्लेख हैं; परंतु ये उनसे सर्वथा भिन्न हैं। खोज में इनका पता पहली बार लगा है।

इनकी 'रासपंचाध्यायी' काव्य की दृष्टि से उत्तम रचना है। इसमें श्रीकृष्ण और गोपियों के प्रसिद्ध रास का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७५५ और लिपिकाल संवत् १८८१ है। कविता दोहा, चौपाई, छप्पय, तोटक, भुजंगप्रयात, गीतिका, कवित्त और सवैया आदि अनेक छंदों में की गई है।

९—लखनसेनी—इनकी "कान्ह की बारहमासी या बारहमासा" नामक रचना की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। रचना में [illegible] प्रवास पर राधा के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल का [illegible] में नहीं है। लिपिकाल

केवल एक में संवत् १७८५ दिया है। रचना सरस और मधुर है। कविता दोहे चौपाइयों में की गई है। भाषा में भोजपुरी और मैथिली का मिश्रण है।

प्राप्त प्रतियों में बहुत सी अशुद्धियाँ और पाठांतर हैं। बलिया जिले से विवृत प्रति अत्यंत जीर्णशीर्ण अवस्था में है। उसके बहुत से अंश खंडित हो गए हैं तथा कितने ही स्थलों के अक्षर मिट गए हैं। दूसरी प्रति यद्यपि सुवाच्य है तथापि लिपिकर्त्ता के लेख दोष से मूल शब्दों में बहुत से परिवर्तन हो गए हैं। इसके दोहों में अधिकतर "लखनसेनी असगावा राधा न तजु प्रान' पद बार-बार आया है। बलिया की प्रति में ऐसा नहीं है। मिलान करने पर बलिया वाली प्रति का पाठ अधिक शुद्ध पाया जाता है।

रचयिता का नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। बलिया वाली प्रति में दो स्थानों में 'राजा' शब्द प्रयुक्त हुआ है, जैसे—

"लखनसेनी कवी उपर वो राजा चीतवे वाट।"

× × ×

"राजा मनमाह जपी के लाए रहे अती धीआना।"

इससे प्रकट होता है कि ये एक एक राजा थे। परंतु दूसरी प्रति में 'राजा' शब्द का कहीं उल्लेख न होने के कारण कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती। नाम के साथ "सेनी" शब्द से यदि ये सेनवंशी राजाओं में से कोई रहे हों तो असंभव नहीं।

इस वंश के राजाओं ने मध्यकाल में पालवंश के पश्चात् बंगाल में राज्य किया था।

एक लखनसेनी खोज विवरण (६—१६७) पर 'महाभारत भाषा—के रचयिता के रूप में उल्लिखित हैं। हो सकता है कि ये दोनों एक ही हों।

ज्ञात रचयिताओं में जो मुख्य हैं उनका उल्लेख संत, रीति और फुटकल ग्रंथों के रचयिताओं के क्रम से किया जाता है।

संतों में गुलाल साहब, जगजीवनदास, धरनीधरदास, नवनिधिदास, सेवादास और हरिदास निरंजनी उल्लेखनीय हैं।

१०—गुलालसाहब—निर्गुण संतों की एक परंपरा बावरी साहिबा, बीरूसाहब, यारीसाहब और बुल्लासाहब से भी चली जिसको सत्यनामी संप्रदाय कहते हैं। इसी परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य प्रस्तुत संत गुलालसाहब हुए। ये भीखा साहब के गुरु थे। जिला गाजीपुर के भुड़कुड़ा में इनका निवासस्थान था। इनके समय का कोई पता नहीं चलता। परंतु जैसा इनके शिष्य भीखा साहब का समय (संवत् १७८८ के लगभग) खोज विवरण (२०—१८) से स्पष्ट है इनका समय इससे कुछ पूर्व अथवा इसके लगभग मानना उचित है। ये उच्चकोटि के संत थे। 'गुलालसाहब की वाणी' नाम से इनके कुछ पद खोज में पहले मिल चुके हैं, देखिये खोज विवरण (२०—५५)।

प्रस्तुत खोज में दो रचनाएँ और मिली हैं जिनके नाम, १—रामजी के सहस्रनाम और २—शब्द हैं। पहली में रामके एक सौ नामों का वर्णन है तथा दूसरी में आध्यात्मिक विषय का प्रतिपादन है। पदों में शीर्षकों की योजना नहीं है। 'शब्द' नाम से पदों का विवरण ले लिया गया है। इसमें भोजपुरी शब्द रूपों का भी प्रयोग है। रचनाकाल किसी कृति में नहीं है। लिपिकाल संवत् १८३८ तथा १८४० के अंतर्गत है। हस्तलेख में ये दोनों संवत् दिए हैं।

११—जगजीवनदास—इनका उल्लेख इनकी 'वानियों' तथा अन्य ग्रंथों के साथ पहले भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (९–१२२) (२३–१७५) (२६–१८७) (२९–१६३)। इनके अनुसार ये सत्यनामी पंथ के प्रवर्तक, कोटा (वाराबंकी) के रहनेवाले थे और संवत् १७६१ में वर्तमान थे।

इस त्रिवर्षी में इनके गुरु के विषय में कुछ पता चला है।

वलिया के चिटवड़ागाँव में महंत राजाराम जी के यहाँ श्री वावरी साहवा, वीरू साहव, यारीसाहव और वुल्लासाहव आदि की वानियों का एक हस्तलेख मिला है, देखिए (भीखा साहव)। महंत जी के कहने से ज्ञात हुआ कि ये सव संत एक ही परंपरा के हैं जिसे सत्यनामी संप्रदाय कहते हैं। जगजीवनदास वुल्लासाहव के शिष्य थे। सत्यनामी संप्रदाय का प्रचार करने के कारण ही इनका नाम इसके प्रवर्तकों में गिना गया।

इस बार इनकी वानियों के फिर से विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८५५ है। इनमें इनकी तीन रचनाएँ—१—चिंतावणी जोग ग्रंथ, २—प्रेमनामो जोग ग्रंथ और ३—पद संमिलित हैं। इनका विषय निर्गुणमतानुसार ज्ञानोपदेश है। ये वानियाँ एक वड़े हस्तलेख में हैं जिसके लिये देखिए सेवादास।

१२—धरनीदास—इनके निम्नलिखित वह ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—

१—धरनीदास जू को संकटमोचन—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन भक्तों का गुणगान।

२—महराई गोसाई धरनीदास—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—योगानुकूल एक आध्यात्मिक कथा का वर्णन है जो इस प्रकार है—

"एक दिन मेरा मन पहाड़ पर चढ़ा (पट् चक्र भेदन में प्रवृत्त हुआ)। उसने (मन ने) वहाँ नाना प्रकार की गायों (चित्त वृत्तियों अथवा इंद्रियों) के समूह को विचरता हुआ देखा जिसमें अगणित गायें (चितवृत्तियों या इंद्रियों के भेद उपभेद)

श्रीरामानंद जी (प्रसिद्ध)

|

सुरसुरानंद जी

|

वेलानंद जी

|

पून्यानंद जी

|

चेतनानंद जी

|

विहारीदास जी

|

रामदास जी

|

विनोदानंद जी (पातेपुर गाँव वर्तमान जिला मुजफ्फरपुर विहार)

|

धरनीदास जी

आगे की परंपरा श्री चतुर्वेदी जी के कथनानुसार इस प्रकार है—

धरनीदास जी

सरमानंद जी | सदानंद जी | सकलानंद जी

सदानंद जी

|

अमरदास

|

मायाराम जी

|

रहनदास जी

गोपालदास जी | बालमुकुंददास जी

बालमुकुंददास जी

|

रामदास जी

पीताम्बरदास जी | सीतारामदास जी | श्रीपालदास जी

इनकी तीन गद्दियाँ सहतवार (बघांव), मिलकी और गुहियाँ छपरा (जिला, वलिया) में हैं। सहतवार में चैनराम बाबा की और मिलकी में महाराज बाबा की समाधियाँ हैं। गुहियाँ छपरा में सुदिष्ट बाबा जी का स्थान है जहाँ उनके नाम पर एक बड़ा मेला (धनुषयज्ञ) लगता है। मिलकी में वर्तमान महंत श्रीबाबा लक्ष्मणदास जी भूतपूर्व नाम भूमदेव तिवारी हैं।

प्रस्तुत खोज में दो रचनाएँ और मिली हैं जिनके नाम, १—रामजी के सहस्त्रनाम और २—शब्द हैं। पहली में रामके एक सौ नामों का वर्णन है तथा दूसरी में आध्यात्मिक विषय का प्रतिपादन है। पदों में शीर्षकों की योजना नहीं है। 'शब्द' नाम से पदों का विवरण ले लिया गया है। इसमें भोजपुरी शब्द रूपों का भी प्रयोग है। रचनाकाल किसी कृति में नहीं है। लिपिकाल संवत् १८३८ तथा १८४० के अंतर्गत है। हस्तलेख में ये दोनों संवत् दिए हैं।

११—जगजीवनदास—इनका उल्लेख इनकी 'बानियों' तथा अन्य ग्रंथों के साथ पहले भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (९-१२२) (२३-१७५) (२६-१८७) (२९-१६३)। इनके अनुसार ये सत्यनामी पंथ के प्रवर्तक, कोटा (बाराबंकी) के रहनेवाले थे और संवत् १७६१ में वर्तमान थे।

इस त्रिवर्षी में इनके गुरु के विषय में कुछ पता चला है।

बलिया के चिटबड़ागाँव में महंत राजाराम जी के यहाँ श्री बावरी साहबा, वीरू साहब, यारीसाहब और बुल्लासाहब आदि की बानियों का एक हस्तलेख मिला है, देखिए (भीखा साहब)। महंत जी के कहने से ज्ञात हुआ कि ये सब संत एक ही परंपरा के हैं जिसे सत्यनामी संप्रदाय कहते हैं। जगजीवनदास बुल्लासाहब के शिष्य थे। सत्यनामी संप्रदाय का प्रचार करने के कारण ही इनका नाम इसके प्रवर्तकों में गिना गया।

इस बार इनकी बानियों के फिर से विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८५५ है। इनमें इनकी तीन रचनाएँ—१—चिंतावणी जोग ग्रंथ, २—प्रेमनामो जोग ग्रंथ और ३—पद संमिलित हैं। इनका विषय निर्गुणमतानुसार ज्ञानोपदेश है। ये बानियाँ एक बड़े हस्तलेख में हैं जिसके लिये देखिए सेवादास।

१२—धरनीदास—इनके निम्नलिखित वह ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—

१—धरनीदास जू को संकटमोचन—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन भक्तों का गुणगान।

२—महराई गोसाईं धरनीदास—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—योगानुकूल एक आध्यात्मिक कथा का वर्णन है जो इस प्रकार है—

"एक दिन मेरा मन पहाड़ पर चढ़ा (षट् चक्र भेदन में प्रवृत्त हुआ)। उसने (मन ने) वहाँ नाना प्रकार की गायों (चित्त वृत्तियों अथवा इंद्रियों) के समूह को विचरता हुआ देखा जिसमें अगणित गायें (चित्तवृत्तियों या इंद्रियों के भेद उपभेद)

थीं तथा जिनसे दसों दिशाएँ आच्छादित हो गईं। इनमें कितनी ही तो बहिला थीं और कितनी ही गाभिन तथा ब्याई हुई। कुछ बड़े सींगोंवाली, कुछ छोटे सींगोंवाली और कुछ विना सींगोंवाली थीं। इनके साथ छोटे बड़े तथा मध्यमावस्था की बछियाँ और बछड़े भी थे। लाली, गौली (गौरी), धवरी, पीली आदि अनेक रंगों से सुशोभित थीं। महरा (गोपालक भगवान) ने नीचे धरती और ऊपर आकाश दोनों को गायों के विचरने का स्थान बनाया (योग में त्रिकुटी से नीचे शरीर का भाग धरती है तथा ऊपर का आकाश)। वहाँ (त्रिकुटी पहाड़ पर) उत्तम घास लहलहा रही है तथा शीतल जलाशय भी है (त्रिकुटी के ऊपर अमृत का झरना मानते हैं)। मन ने यह सब देखकर भी जब महरा (गोपालक, भगवान्) को नहीं देखा तो बड़ा उदास हुआ; परंतु कुछ ही समय पश्चात् पावों के नूपुरों के बजने की ध्वनि (अनहद शब्द) हुई। एक साकार रूप भी दृष्टिगोचर हुआ जिसकी कटि पतली थी और जो लंबी काछनी (धोती) कसे तथा ऊपर से पीला दुपट्टा ओढ़े हुए था। उसकी कटि का वर्णन नहीं हो सकता (यह गोलोक की स्थिति है)। सारा अंग चंदन की खौर से पुता हुआ अनंत गंगा की धाराओं की शोभा धारण करता था। मस्तक पर मुकुट और हाथ में सुंदर लाल लकुटी थी। भाल में सूक्ष्म तिलक एवं कंठ तुलसी की माला से सुशोभित था। सुंदर नासिका, पतले होंठ और बड़ी बड़ी आँखें थीं। मुकुट के बीच में मोरपंख जड़ा हुआ था एवं प्रफुल्लित मुख पर मुसकान विराजमान थी। फिर क्या था, उस शोभा के ऊपर "धरनी" ने अपने को निछावर कर दिया। मन ने पृथ्वी पर शिर रख उस मूर्ति को प्रणाम किया और प्रभु ने मस्तक पर हाथ धर कर आशीर्वाद दिया।

इसके पश्चात् कुछ उपदेश करके कहा कि यह कहानी मात्र (मसलक बात) नहीं है। जब तक चरवाहा (भगवान्) को इस मन ने देख नहीं लिया तब तक वह अगाध (अवगाह) जल में (भवसागर में) तैर रहा था। ऐसे अवसर पर जब कान्हा ने वंशी बजाई तो उसके (मन के) आनंद की सीमा न रही। मानों भिक्षुक को राज्य प्राप्त हो गया हो। वंशी की ध्वनि सुनकर वह ऊपर (सहस्रदल कमल की ओर) चला गया जहाँ उसे एक अद्भुत ही खेल देखने को मिला। विना सूर्य का वहाँ प्रकाश था तथा रिमझिम जलधारा मोती के अनुरूप बरसती थी। सुनने में, प्रिय लगनेवाला सघन घन गर्जन हो रहा था और दसों दिशाओं में बिजली चमक रही थी। नाना प्रकार के सुरंग फूल झड़ पड़ते थे जिनमें भँवरा (मन) भूल पड़ा (यहाँ पर मन का अस्तित्व नहीं रहता)। वहाँ एक चक्र फिर रहा था जिसकी ओर एक सांप (कुंडलिनी) उड़ा हुआ चला जाता था। वहाँ न तो धर्म कर्म ही था और न पुण्य पाप ही। उस चक्र पर एक महरा खड़ा था जिसका कोई वर्ण नहीं था तथा जिसका कोई वर्णन भी नहीं किया जा सकता था। उसकी प्रतीति का अनुमान तभी लग सका जब वह सुरति (सं० स्मृति) में परिणत हो गया।

आगे यह प्रतिपादन किया गया है कि इंद्रियों तथा चित्तवृत्तियों का खून (निरोध) नहीं किया जाना चाहिए। ये सब ईश्वर (महरा) की गायें हैं जो स्वयं इनको मिलाकर चून (सकचून) या आटा (सुधार) करता रहता है। इनके ठीक-ठीक पालन करने से ही वह मनुष्य को निहाल कर देता है।"

ग्रंथ विषय की दृष्टि से उत्तम है।

३—उधवा प्रसंग—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन। यह भी उत्तम रचना है। इसकी भाषा भोजपुरी है। यद्यपि इसके नाम से उद्धवगोपी संवाद की ध्वनि निकलती है तथापि उधवा वास्तव में एक स्थानीय गीत विशेषहै। इसकी रचना बरवै छंदों में की गई है।

४—पद—रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात। विषय-ज्ञान और भक्ति। ये पद उच्चकोटि के हैं। इनकी भाषा कबीर की भाषा की तरह ही पूर्वी है। कुछ पदों में फारसी के शब्द भी व्यवहृत हुए हैं।

५—बोधलीला—रचनाकाल, लिपिकाल अप्राप्त। विषय—ब्रह्म के विषय में ज्ञानोपदेश।

६—ककहरा—रचनाकाल लिपिकाल अविदित। विषय—नागरी अक्षरों के क्रम से चौपाइयों में ज्ञानोपदेश।

प्रथम रचना भीखा साहब कृत 'रामसहस्रनाम' के साथ एक हस्तलेख में है। 'उधवा प्रसंग' और 'पद' नामक रचनाओं का भी एक ही हस्तलेख है। प्रथम रचना के अंतिम पद में गुरु बनोदानंद का उल्लेख होने से पता चलता है कि ये रचयिता के गुरु थे। इसकी पुष्टि पं० परशुरामजी चतुर्वेदी के एक लेख से भी होती है जो "बाबा धरनीदासजी" शीर्षक से श्रावण, संवत् १९९४ के कल्याण के 'संत अंक' में निकला है। उसके अनुसार बाबा धरनीदास मांझी गाँव (जिला सारन, सूबा बिहार) के रहनेवाले थे। ये परशुरामदास के पुत्र और जाति के कायस्थ थे। पितामह का नाम टिकैतराय था जो प्रयाग की ओर से मुसलमानों के आक्रमण के कारण इधर चले आए थे। पिता और पितामह दोनों प्रसिद्ध वैष्णव थे। ये पाँच भाई थे जिनके नाम क्रमशः धरनीदास, छबीराम, छत्रपति, बेनी और कुलमनि थे। इन्होंने एक पद में अपने पिता की मृत्यु का संवत् १७१३ वि० दिया है—

सत्रह सै संवत लीपंत तेरह अधिकानो। समय नाम अषारह पछ उजियार बषानो॥
तिथि परीवा बुधवार गंग सरबंग अहाए। परसराम तन तज्यो बास बैकुंठ सिधायो॥

इससे प्रकट होता है कि ये उक्त संवत् में वर्तमान थे। इन्होंने अपनी गुरु परंपरा का भी उल्लेख किया है जो यहाँ दी जाती है—

श्रीरामानंद जी (प्रसिद्ध)
|
सुरसुरानंद जी
|
वेलानंद जी
|
पून्यानंद जी
|
चेतनानंद जी
|
विहारीदास जी
|
रामदास जी
|
विनोदानंद जी (पातेपुर गाँव वर्तमान जिला मुजफ्फरपुर विहार)
|
धरनीदास जी

आगे की परंपरा श्री चतुर्वेदी जी के कथनानुसार इस प्रकार है—

धरनीदास जी
|
सरमानंद जी — सदानंद जी — सकलानंद जी

सदानंद जी
|
अमरदास
|
मायाराम जी
|
रहनदास जी
|
गोपालदास जी — वालमुकुंददास जी

वालमुकुंददास जी
|
रामदास जी
|
पीताम्बरदास जी — सीतारामदास जी — श्रीपालदास जी
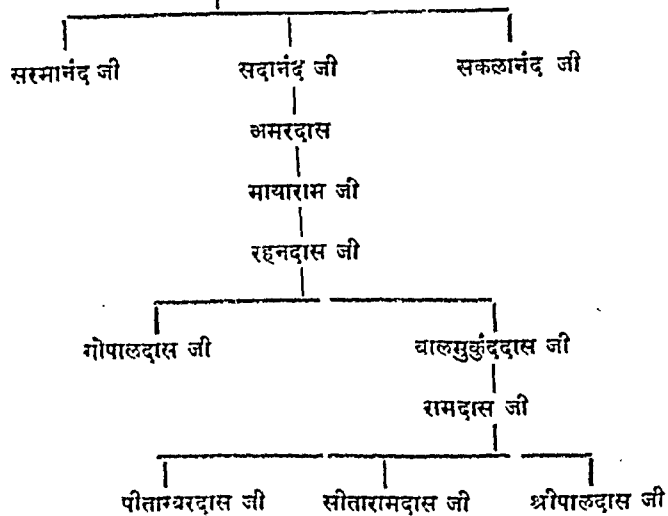
इनकी तीन गद्दियाँ सहतवार (वर्षांव), मिलकी और गुहियाँ छपरा (जिला, वलिया) में हैं। सहतवार में चैनराम वावा की और मिलकी में महाराज वावा की समाधियाँ हैं। गुहियाँ छपरा में सुदिष्ट वावा जी का स्थान है जहाँ उनके नाम पर एक वड़ा मेला (धनुपयज्ञ) लगता है। मिलकी में वर्तमान महंत श्रीवावा लक्ष्मणदास जी भूतपूर्व नाम भूमदेव तिवारी हैं।

रचयिता का उल्लेख पिछले खोजविवरण (९—७१) में भी हुआ है, परंतु उसमें इनका कोई वृत्त नहीं दिया है।

१३—नवनिधिदास बाबा—इनकी 'मंगल गीता' महत्वपूर्ण रचना है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। इसमें वर्णित विषय इस प्रकार हैं—

१—कवित्त गंगाजी के, २—कृष्णपुकार, ३—ककहरा या कहरा, ४—निर्गुण तथा सगुण विषय के पद, ५—फगुआ, ६—बारहमासा, ७—सिद्धांत संबंधी रचनाएँ और ८—रामखेलावन वाक्य।

अंतिम विषय 'रामखेलावन वाक्य, रचयिता और उनके पुत्र रामखेलावन के संवाद के रूप में है जिसमें आत्मज्ञान, संतमहिमा, अनुभव, राजनीति और तुलसी माहात्म्य आदि का वर्णन है।

कृष्णपुकार में संवत् १९०५ का उल्लेख है जो रचनाकाल है—

दोहा

त्रिपन छपै जानिए कृष्ण चरित्र शुभसिद्धि।
संमत उनइस सौ पांचमैं भापेउ जन नवनिद्धि ॥२॥

लिपिकाल संवत् १९७४ है।

ग्रंथ की अधिकांश रचना पूर्वी में है। 'घाँटों' जैसे स्थानीय गीत को अपनाकर उसमें पद रचना की गई है।

ग्रंथ से रचयिता का परिचय नहीं मिलता; परंतु ग्रंथस्वामी का (जो रचयिता के ही वंशज हैं) कहना है कि वे जाति के कायस्थ और लखौलिया ग्राम (बलिया) के रहनेवाले थे। इनका वंश वृक्ष इस प्रकार है—

नवनिधिदास
|
रामखेलावन लाल
|
महादेवलाल
|
X

ये चार भाई थे जिनके नाम क्रमानुसार मनबोधदास, जोधदास, नवनिधिदास और गतिदास थे। इस समय मनबोधदास का ही वंश चल रहा है। शेष भाइयों का वंश एक एक दो दो पीढ़ियों के पश्चात् रुक गया। ग्रंथस्वामी जो इन सबके उत्तराधिकारी हैं, श्री-मनबोधदास जी की चौथी पीढ़ी में हैं।

नवनिधिदास जी के गुरु का नाम चनरूराम था जिसका मूल रूप रामचंद्र है। ये (रामचंद्र) उच्चकोटि के कवि थे; इनकी "चरण चंद्रिका" उत्तम रचनाओं में से है,

देखिये (पं० रामचंद्र शुक्ल कृत 'हिंदी साहित्य का इतिहास' संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण—पृष्ठ सं० ४०६)। ये लखौलिया (रचयिता के स्थान) से एक मील की दूरी पर चंडाडीह के निवासी थे और इनके वंश में अब भी एक सदाचारी पुरुष हैं जिनका नाम पं० श्यामाचरणदास है जो संन्यासाश्रम में प्रविष्ट हो गए हैं तथा परमहंस कहलाते हैं।

लखौलिया से थोड़ी दूर नवनिधिदास जी का मंदिर भी बना है जहाँ प्रत्येक वर्ष चैत्र पुर्णिमा को संतसम्मेलन होता है।

खोज विवरण (९—२१२) पर उल्लिखित नवनिधिदास भी प्रस्तुत रचयिता ही हैं। उक्त विवरण में इनके कबीरपंथी होने की संभावना की गई है; परंतु यह ठीक नहीं जान पड़ता। यद्यपि इन्होंने निर्गुण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं, फिर भी, ये सगुणोपासना का गुणगान अधिक करते हैं। इनके गुरु भी सगुणोपासक ही थे। अतः इन्हें कबीरपंथी मान लेना उचित नहीं। निर्गुण-सगुण का उल्लेख ये इस प्रकार करते हैं—

जैसुराम सु अर्थ यह दुहता दुहत विभेद।
नृगुन श्रगुण जुक्त करि सकल रसातल भेद ॥

कहीं-कहीं 'श्रीवल्लभ' तथा 'वल्लभस्वामी' का भी उल्लेख किया है—

श्रीवल्लभ श्रीवल्लभस्वामी। गोकुल नायक अंतर जामी ॥
वल्लभ वल्लभ निसुदिन भजै। काम क्रोध दुख सुख सब तजै ॥

आरंभ में श्रीगणेश की स्तुति की गई है तथा कृष्णपुकार में श्रीकृष्ण भक्ति का वर्णन है।

रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

१४—सेवादास—इनके निम्नलिखित १७ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं। उक्त ग्रंथों में से कुछ ग्रंथ पंजाब खोज विवरण (पं० २२-९९) पर आ चुके हैं; परंतु उसमें उद्धरण न दिए जाने के कारण इनको प्रस्तुत विवरण में सम्मिलित कर लिया गया है—

१—आत्मज्ञान—विषय, आत्मज्ञान। रचनाकाल, अज्ञात। लिपिकाल, संवत् १८५५। इसकी भाषा में राजस्थानी की पुट है।
२—किंवत—विषय, निर्गुण ब्रह्म का विवेचन एवं ज्ञानोपदेश। लि० का० संवत् १८५५।
३—कुंडलियाँ—विषय, निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश। इसमें २४ अंग हैं। लि० का० सं० १८५५।
४—गुरुमंत्र जोगग्रंथ—विषय, राममंत्र महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।
५—गुरुमहमा जोगग्रंथ—विषय, गुरु महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।

६—चंद्राइणा—विषय, ज्ञानोपदेश। इसमें बारह अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

७—चिंतावणी जोगग्रंथ—विपय, ईश्वर भजन करने का उपदेश। लि० का० संवत् १८५५।

८—तत्व निरणौ (तत्वनिर्णय)—विषय, तत्वों का निरूपण। लि० का० संवत् १८५५।

९—तिथिजोगग्रंथ—विपय, तिथियों का दार्शनिक वर्णन। लि० का० सं० १८५५।

१०—नाँवमहमा जोगग्रंथ—विषय, नाम महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।

११—पद—विषय, निर्गुण सिद्धांत वर्णन एवं ज्ञानोपदेश। लि० का० संवत् १८५५।

१२—बावनी जोगग्रंथ—विपय, 'क' से लेकर 'ह' तक प्रत्येक अक्षर पर चौपाई रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है। लि० का० संवत् १८५५।

१३—रेखता—विपय, ज्ञानोपदेश। इसमें नौ अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

१४—वंदना जोगग्रंथ—विपय, निरंजन ब्रह्म की वंदना। लि० का० संवत् १८५५।

१५—सवइया—विपय, ज्ञानोपदेश। लि० का० सं० १८५५।

१६—सपतवार जोगग्रंथ—विपय, सात वारों का दार्शनिक विवेचन। लि० का० सं० १८५५।

१७—साखी—विपय, ज्ञानोपदेश। इसमें ५७ अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

ये सब ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं। पुष्पिका के अनुसार रचयिता हरिदास (निरंजनी) के शिष्य थे, यथा—

"श्री श्री दयाल जी श्री हरिदास जी का साध-श्री स्वामी जी श्री सेवादास जी बृकत (? विरक्त) महापुरुप ति सिप श्री स्वामी जी श्री अमरदास जी॥ ता प्रसादि सिप श्री श्री स्वामी जी श्री श्री दरसण दास ता प्रसादि सिप मुकनदास पठनार्थं"।

इसके अनुसार इनकी गुरुशिष्य परंपरा इस प्रकार है—

हरिदास (निरंजनी)
|
सेवादास
|
अमरदास
|
दरसणदास
|
मुकनदास

हस्तलेख के आरंभ में ग्रंथों और रचयिताओं की एक विस्तृत अनुक्रमणिका भी दी हुई है जिसमें इस प्रकार लिखा है—

"सेवादास जी की वाणी चेला हरिदास जी का निरंजनी"

अतः इससे भी स्पष्ट है कि ये सुप्रसिद्ध हरिदास 'निरंजनी' के ही शिष्य थे।

खोज विवरण (९—२८८) में इनकी वाणियों का उल्लेख है जिसमें इन्हें मलूकदास जी का शिष्य कहा गया है। परंतु उसके विवरणों को देखने से ऐसा कोई पता नहीं चलता। केवल टिप्पणी में ही इन्हें मलूक दास जी का शिष्य लिखा है जो प्रामाणिक नहीं जँचता।

इनके समय का तो कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता; परंतु इनके गुरु हरिदास जी के मृत्युकाल के आधार पर जान पड़ता है कि ये सत्रहवीं शताब्दी के अंत में वर्तमान रहे होंगे, देखिए प्रस्तुत विवरण में हरिदास 'निरंजनी'।

प्रस्तुत हस्तलेख बड़े महत्व का है इसमें निरगुन संतों के अतिरिक्त सिद्धों और नाथों के भी ग्रंथ एवं वाणियाँ दी हुई हैं। सिद्धों के नाम के लिये देखिये आरंभ में सिद्धों का विवरण (संख्या १)। निर्गुन संतों के नाम इस प्रकार हैं—

१—सेवादास जी, २—हरीदास जी, ३—कबीर, ४—नामदेव ५—रैदास जी, ६—पीपा, ७—जगजीवनदास, ८—तुलसीदास और ९—सुंदरदास।

हस्तलेख में कबीर के १२१ पदों पर टीका है। ऐसी ही टीका गोरखनाथ के पदों पर भी है। इसमें अन्य रचयिताओं की भी रचनाएँ हैं। जो इस प्रकार हैं—

१—विचार माल—अनाथ कृत, २—साधप्रछया जोग ग्रंथ और भक्ति वैकुंठ जोग—पृथ्वीनाथ कृत, ३—महापुरुषों की वाणी (इसमें मछींद्र के भी पद हैं), ४—सुखमनि—नानककृत, ५—गुणमाया संवाद, गुणादि बोध और हरिचंद सत—ध्यानदास कृत, ६—रामरक्ष्या—रामानंदकृत, ७—पदितनामा—फरीद जी कृत, ८—नांवमाला (नाममाला), ९—प्रश्नोत्तरीमाला, १०—साधको ब्यौरो, ११—ब्रह्म जिज्ञासा, १२—प्रह्लादचरित्र, ध्रु चरित्र और जड़भरतचरित्र—गोपालकृत, १३—भरथरी चरित—जीवणदास (? जीवनदास) कृत, १४—सुख संवाद जोग ग्रंथ, १५—मोहमर्द राजा की कथा—जन जगन्नाथ

कृत, १६—चिंतावणी—खेमकृत, १७—चिंतावणी—लालदास कृत, १८—मुख नामौ-जोगग्रंथ और गुन कठियारा जोग ग्रंथ—वाजिदकृत, १९—ज्ञान बत्तीसी, २०—कबीर रैदास संवाद—सेनाकृत, २१—ग्रंथ नौ नाथ कौ, २२—राममंत्र जोगग्रंथ, २३—नाम महमा जोग ग्रंथ, २४—सवैया और चितावणी—सुंदरदास कृत, २५—अनंतदासकृत—पीपा की परिचई, तिलोचन की परिचई, धनाजी की परिचई, नामदेव की परिचई, कबीर की परचई और सेउ समन की परिचई, २६—हरीदास की परिचई, २७—सेवादास की परिचई, २८—ज्ञान समुद्र—सुंदरदास कृत, २९—भक्तिभावंती-प्रपन्न—गणेशानंद ।

१५—हरिदास निरंजनी—इनकी रचना "हरिदास जी की वाणी" का पिछली खोज में विवरण लिया जा चुका है, देखिए खोज विवरण (९-१०९)। इस बार भी इसका विवरण लिया गया है। इसमें छोटी बड़ी ४९ रचनाएँ संगृहीत हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१—ब्रह्मस्तुति जोगग्रंथ, २—मूलमंत्र जोगग्रंथ, ३—नाँवमाला जोग ग्रंथ, ४—नाँव निरूप जोग ग्रंथ, ५—गिरंजन लीला जोग ग्रंथ, ६—साध चाल मोतीदास जोगग्रंथ, ७—निरंजन लीला जोग ग्रंथ, ८—जोग संग्राम जोग ग्रंथ, ९—अष्ट पदई जोग ग्रंथ, १०—निराकार की वंदना, ११—निरपषा मूल जोग ग्रंथ, १२—प्राण प्रसिध प्रमात्मां पूजा जोग ग्रंथ, १३—जोग समाधि जोगग्रंथ, १४—जोगध्यान जोगग्रंथ, १५—प्राणमाला जोगग्रंथ, १६—आत्मा अभ्यास जोगग्रंथ, १७—उतपति अहेत जोग ग्रंथ, १८—सबद परछया जोग ग्रंथ, १९—बीरारस बैराग जोग ग्रंथ, २०—भ्रम विधूंस जोग ग्रंथ, २१—चिंतावणी उपदेश जोग ग्रंथ, २२—मन चिरत जोग ग्रंथ, २३—मनमद विधूंस जोग ग्रंथ, २४—मनहठ जोग ग्रंथ, २५—मनप्रसंग जोग ग्रंथ, २६—मनमतौ जोग ग्रंथ, २७—मन उपदेश जोग ग्रंथ, २८—व्याहलौ जोग ग्रंथ, २९—तोडरमल जोग ग्रंथ, ३०—इम्रतफल जोग ग्रंथ, ३१—ग्यान उपदेश जोग ग्रंथ, ३२—सपतवार जोग ग्रंथ, ३३—हंस परमोध जोग ग्रंथ, ३४—बड़ी तिथि जोग ग्रंथ ३५—लहुड़ी तिथि जोगग्रंथ, ३६—चालीसपदी जोग ग्रंथ, ३७—चौदापदी जोगग्रंथ, ३८—तीसपदी जोग ग्रंथ, ३९—बारा पदी जोग ग्रंथ, ४०—बावनी जोग ग्रंथ, ४१—सुरसमाधि कौ अरथ, ४२—निखरति प्रवरति जोग ग्रंथ, ४३—मायाछंद जोग ग्रंथ, ४४—जोगमूल सुष जोग ग्रंथ, ४५—ग्यान अग्यान पारछया जोग ग्रंथ, ४६—पद, ४७—किंवत, ४८—कुंडलिया, ४९—साखी ।

इनका विषय साधारणतः संतमतानुसार दार्शनिक विवेचन तथा ज्ञानोपदेश है। रचना काल ज्ञात नहीं, लि० का० संवत् १८५५ है ।

रचयिता निरंजनी पंथ के प्रवर्तक के रूप में प्रसिद्ध हैं। जिस हस्तलेख में इनकी वानियाँ हैं उसमें एक रघुनाथ दास रचित "हरिदास जी की प्रचई" भी है। ये (परिचयीवाले) हरिदास प्रस्तुत रचयिता ही हैं। 'प्रचई' में इनका जन्मस्थान डीडपुर लिखा है—

प्रथम डीडपुर प्रगटे आई। अप चमाल गृह माँझ रहाई ॥

× × ×

इनका मृत्यु संवत् १६०० वि० है। उसका दोहा इस प्रकार है—

संवत् सोलै सै जु सईका। रुति वसंत आनंद लईका ॥
फागुणि सुदि षष्टमी जाना। जन हरिदास हरिमाझ समाना ॥ २ ॥

इसके अतिरिक्त इनका और परिचय नहीं मिलता। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (२–६४; पं० २२–६७)।

प्रस्तुत हस्तलेख महत्वपूर्ण है। इसमें अनेक सिद्धों और संत महात्माओं की कृतियाँ हैं। इसके लिये देखिए 'सेवादास' जो प्रस्तुत रचयिता के ही शिष्य थे।

२—रीतिग्रंथों के ज्ञात रचयिताओं में मतिराम, रसानंद, रामसिंह और सेवकराम मुख्य हैं।

१६—मतिराम—इस त्रिवर्षी में भी इस कवि के पिंगल विषयक ग्रंथ "पिंगल या छंदसार संग्रह" की एक अपूर्ण प्रति का विवरण लिया गया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल सुखदेवमिश्र के 'रसरत्नाकर' के लिपिकाल के आधार पर संवत् १८९२ के लगभग है, ये दोनों ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (१२-११२) (पं० २२-६४) में हो चुका है। अंतिम खोज विवरण में रचनाकाल १७५८ दिया हुआ है जो संभवतः संवत् में है। इसकी रचना राजा स्वरूपसिंह के आश्रय में हुई। कवि कथित वंशवृक्ष यों है—

वीरसिंहदेव
|
चंद्रभानसिंह
|
मित्रसाहि
|
स्वरूपसिंह

बुंदेलों की उपाधि 'पंचम' का व्यवहार स्वरूपसिंह के नाम के साथ बराबर हुआ है। रचयिता का और कोई वृत्त नहीं मिलता।

१७—रसानंद—इनका 'बृजेन्द्रप्रकाश' नायिका भेद विषयक विशाल ग्रंथ है। इसमें 'प्रकाश' नाम से पंद्रह अध्याय हैं। काव्य की दृष्टि से यह उत्तम रचना है। भाषा ब्रजी है तथा इसमें कवित्त, सवैया, दोहा, छप्पय, पद्धरी आदि छंद प्रयुक्त हैं। रचनाकाल संवत् १८९१ और लिपिकाल संवत् १९७६ है। आधुनिक काल का लिखा होने से हस्तलेख में पत्रों के बदले पृष्ठ संख्याएँ दी गई हैं।

रचयिता ने अपना जो वृत्त दिया है उसके अनुसार ये ब्रजमंडल में गंगा यमुना के बीच बसे विश्वपुर नामक ग्राम के निवासी थे। वह स्थान कौशिक मुनि का स्थान भी

कहा जाता है। नृप वलवंतसिंह के यश को सुनकर ये विश्वपुर छोड़ भरतपुर गए जहाँ मोदी वलदेव नामक एक व्यक्ति से उनका परिचय हुआ। मोदी ने इनके साथ मित्रवतव्यवहार किया और श्री गोपाल मंदिर में जिसके महंत का नाम जुगलदास था उनके रहने का प्रबंध कर दिया। साथ ही उन्हें राजा के लिये ग्रंथ रचने का परामर्श दिया। गोपाल मंदिर के महंत का नाम जुगलदास था।

वल्लभाचार्य की वंदना करने के कारण रचयिता वल्लभानुयायी ज्ञात होते हैं। तृतीय प्रकाश के प्रारंभ में एक दोहा इस प्रकार है—

श्री गुपाल गुरुदेव के वंदौ चरन सरोज।
रस आनंद तिनकी कृपा रचि कविता रस चोज॥

इससे विदित होता है कि उनके गुरु का नाम गुपाल था। परंतु जैसा ऊपर लिखा गया है भरतपुर में उनके रहने का प्रबंध श्री गोपाल मंदिर में कर दिया गया था, अतः यह संदेह होता है कि दोहे में उल्लिखित 'श्री गुपाल' का तात्पर्य मंदिर के ठाकुर जी से तो नहीं है ?

रचयिता के आश्रयदाता भरतपुर नरेश महाराज वलवंत सिंह थे। संक्षिप्त विवरण के अनुसार महाराज वलवंत सिंह का राज्यकाल संवत् १८९२ से १९१० तक था, परंतु प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल संवत् १८९१ दिया है जो महाराजा के राज्यकाल का नहीं है, जैसा—

तिनसौं प्रघटै मित्रता मनपाया वहु मोद।
नृप वृजेंद्र हित ग्रंथ कौ कीनौ मंत्र विनोद॥६॥
समझि मनोरथ ग्रंथ कौ नृप आज्ञा प्रमाँन।
श्रीगुपाल के मंद्र मधि दियो कविहि स्वस्थान॥७॥

रेखांकित शब्दों से स्पष्ट हो जाता है कि ग्रंथ की रचना उस समय हुई जब महाराज वलवंत सिंह सिंहासनारूढ़ हो गए थे। यही नहीं, प्रस्तुत ग्रंथ कवि ने दशहरे के उत्सव में महाराज को भेंट रूप में दिया था, यथा —

पाइ विजय दशमी सुदिन, नृपवलवंत उदार।
नजर गुजारन हेत यह कीनौ ग्रंथ तयार॥१२॥

खोज विवरण (पं० २२—९५) में भी प्रस्तुत ग्रंथ का उल्लेख है; परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए गए हैं।

रचयिता का 'संग्राम रत्नाकर' नाम का दूसरा ग्रंथ भी पिछली खोज में मिला है, देखिये खोज विवरण (९—२६०)।

१८—रामसिंह (महाराजा)—इन महाराजा का उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हुआ है, देखिए खोज विवरण (६-२१७) (१२-१४९) (२६-३९६)। ये नरवर ग्वालियर के राजा थे। उक्त खोज विवरणों के आधार पर ये संवत् १८३९ में वर्तमान

थे; परंतु प्रस्तुत खोज में प्राप्त "रसिक शिरोमणि" ग्रंथ के रचनाकाल के अनुसार इनका समय संवत् १८३० के लगभग निश्चित होता है। ये एक प्रतिभासंपन्न कवि थे। इनके आजतक मिले प्रायः सभी ग्रंथ साहित्यिक दृष्टि से उत्तम हैं।

इस बार इनके "रसिक शिरोमणि" और "सहस्रनाम चौपई" नाम से दो ग्रंथ और मिले हैं। प्रथम नायिका भेद विषयक ग्रंथ है। इसकी रचना सं० १८३० में हुई। लिपिकाल नहीं दिया है। दूसरे ग्रंथ में कृष्ण के सहस्र नामों का चौपाइयों में वर्णन है। रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं।

१९—सेवक या सेवकराम—प्रस्तुत खोज में इस कवि के निम्नलिखित दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—

१—बागविलास—रचना काल लिपिकाल अज्ञात। विषय महाराज हरिशंकर ने काशी में एक रमणीय बाग लगवाया था जिसका ग्रंथ में बड़ा मनोरंजक एवं विशद वर्णन किया गया है। बाग को उस समय की उपलब्ध उत्तम से उत्तम मनोरंजक सामग्रियों से सुसज्जित किया गया था जिसका स्पष्टीकरण विषय की अनुक्रमणिका से होता है। विषय की दृष्टि से तो ग्रंथ उत्तम है ही परंतु साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह महत्त्वपूर्ण है। कवि ने इसमें अपने आश्रयदाता महाराज रामरतन और महाराज हरिशंकर तथा उनके पूर्वजों का विस्तृत वर्णन किया है। इनका विस्तारपूर्वक उल्लेख आगे कवि के वृत्त के साथ किया जाएगा।

रचयिता ने ग्रंथ में जहाँ तहाँ ठाकुर, घनिराम, शंकर और अपने पुत्र मान के भी कुछ कवित्त सवैये दिए हैं।

२—बागविलास—प्रस्तुत प्रति में ग्रंथ के नाम का उल्लेख नहीं है। परंतु इसका विवरण पहले भी खोज विवरण (२३-३८३) पर आ चुका है जिसके आधार पर इसका नाम 'बागविलास' ज्ञात हुआ। इसमें नायिका भेद का विस्तारपूर्वक वर्णन है। विषय को स्पष्ट करने के लिये व्रजभाषा के गद्य का भी आश्रय लिया गया है जिसे वार्ता नाम दिया है। कवि ने इसमें अपने पूर्ववर्ती कवियों की भी नकल की है। एक उदाहरण नीचे दिया जाता है जिसमें बेनीप्रवीन के एक कवित्त का अनुकरण किया गया है—

रैनि में जगाई कल करन न पाई इमि,
ललन सताई परजंक अंक महियाँ।

ससकि कसकि कहरतहूँ वितीत निसा,
मसकि 'प्रवीनवेनि' कीन्ही चित्त चहियाँ।
भोर भये भौन के सुकौन लगिगइ सोइ,
सखिन जगाइवे को जाइ गहि वहियाँ।
चौंकि परि चकि परि औचक उचकि परी,
सकि परि जकि परि बकि परि नहियाँ ॥१८०॥

—वेनीप्रवीन

वेनीप्रवीन का यह कवित्त त्रास के उदाहरण में है। प्रस्तुत कवि ने इसका अनुकरण नवोढ़ा के उदाहरण में इस प्रकार किया है—

ठाढी चित्रशाला में विशाला वरमाला आजु,
चंपे की सी माला रति जाकी लगै छहियाँ।
जानि सुने 'सेवक' अजानि को निशंक मानि,
आनि चुपचापहीं पिछानि गही वहियाँ।
चौंकि चितै चंचला सी ससि कौ उससि परी,
वसि परी कसी परी प्यारी अंक महियाँ।
चूकि परी चकि परी उचकि उचकि परी,
छकि परी छकि परी वकि परी नहियाँ ॥९९॥

इस कवित्त का सारा बनाव वेनीप्रवीन के कवित्त का सा ही है। चौथा चरण तो अक्षर-अक्षर मिलता है। जो कुछ अंतर देखने में आता है उसमें लिपिकर्त्ता का लिपि दोष प्रत्यक्ष विद्यमान है। रचना काल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

ये दोनों ग्रंथ आधुनिक पीले कागज पर लिखे हुए एक ही हस्तलेख में हैं जिसमें पत्र संख्याओं के वदले पृष्ठ संख्याएँ दी हुई हैं। पुष्पिका का उल्लेख किसी में नहीं है।

'वागविलास' में रचयिता ने अपना और अपने आश्रयदाता का विस्तृत वृत्त दिया है जिसके अनुसार ये असनी (अश्वनी) के रहने वाले थे। इनके प्रपितामह का नाम ऋपिनाथ, पितामह का ठाकुर और पिता का नाम धनिराम था। पुत्र का नाम मान तथा पौत्र का काशी (कसिया) था। मुरलीधर और कृष्ण भतीजे थे। वड़े भाई का नाम शंकर था। दोनों भाई महाराज रामरतन और हरिशंकर के आश्रय में रहते थे। खोज विवरण (९-२८६) में इन्हें महाराज देवकी नंदन सिंह के आश्रित कहा गया है जो भूल है। उक्त विवरण में इनके एक ग्रंथ वरवै नखशिख का भी उल्लेख है। इनके परिवार के उपर्युक्त

सभी व्यक्ति साहित्य और काव्य कला में प्रवीण थे। ऐसा विदित होता है कि इन लोगों का काशी नरेश एवं आश्रयदाता के वंशजों के साथ परंपरागत संबंध बना हुआ चला आता था।

ऋषिनाथ—जिन्होंने अलंकार मंजरी की रचना की, काशीराज वरिवंड सिंह के आश्रय में थे। बिहारी सतसई के टीकाकार ठाकुर महाराज देवकी नंदन सिंह के आश्रित थे जिन्होंने इनको कड़ामानिकपुर का तहसीलदार बनाया। धनीराम महाराज जानकी प्रसाद के आश्रय में रहते थे जिनके नाम पर उन्होंने राम चंद्रिका पर तिलक, जुक्तरामायण तिलक-सहित और रामाश्वमेध की रचनाएँ कीं। संस्कृत ग्रंथ काव्यप्रकाश के आठ प्रकाशों का उलथा करने के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गई। उनके एक ग्रंथ 'रामगुणोदय' का उल्लेख खोज विवरण (३—११६) पर हो चुका है जिसमें उन्हें देवकीनंदनसिंह के आश्रित होना लिखा गया है।

रचयिता के समय का कोई निश्चित पता नहीं चलता। परंतु जैसा कि इन्होंने अपने आश्रयदाता द्वारा संवत् १९१३ (सन् १८५७) के गदर में अंग्रेजों की सहायता करने का उल्लेख किया है, अतः इसी समय के लगभग इनका भी वर्त्तमान रहना सिद्ध होता है।

इन्होंने कुछ अन्य कवियों के नामों का भी उल्लेख किया है—

श्रीबांधोपति के सुकवि हैं किशोर सरूप।
वंशगोपाल सुकवितथा अरु मदनेस अनूप ॥६॥

श्री द्विज मन्नालाल कवि] कमलापति रसतज्ञ।
सुवन सुकवि मणिदेव के श्री हनुमान रसज्ञ ॥७॥

श्री काश्यीश्वर के सुकवि के सुकवि त्यों जानकी प्रसाद।
तेजे नंदकिशोर कवि लछिमन वचन अवाद ॥८॥

सुकवि भवानी कामता काशी तथा सचेत।
ममकवितापर करिकृपा जब तब दरसन देत ॥९॥

मिसिर स्यामसुंदर भिषज है असनी के वास।
रहत काव्य के चोप नृप हरिशंकर के पास ॥१०॥

श्रीदंपति किशोर कवि व्यास गनेस प्रसाद।
दुषभंजन श्रीराम कवि रामभरोस अवाद ॥११॥

सिउगोविंद श्रीकृष्ण कवि मुरलीधर शुभनाम।
इन सबके गुन गनन को सेवक सेवकराम ॥१२॥

ऐसा विदित होता है कि ये सब कवि इनके समसामयिक थे।

इन्होंने अपने आश्रयदाताओं की वंशावली देकर उनका जो वर्णन किया है वह इस प्रकार है—
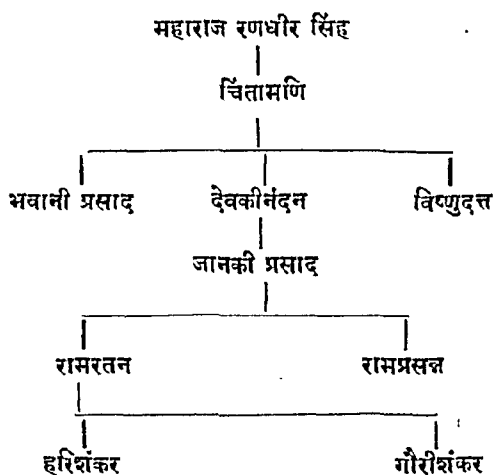
इस वंश का मूल पुरुष ब्रह्मा और गोत्र शांडिल्य लिखा है। इनका स्थान अनिमापुर ग्राम (अब ऐनापुर) था। ये श्रृंगवेरपुर तथा भद्रादिकपुर के स्वामी थे। इनके यहाँ कन्नौज के राजा जयचंद के भेजे हुए पत्रों के विद्यमान रहने का उल्लेख किया गया है। ये महाराजा बड़े यशस्वी, वीर, दानी, दयावान, प्रजाप्रिय और शरणागत वत्सल हुए। इनमें प्रसिद्ध कुछ पुरुषों का वर्णन किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार से है —

रणधीरसिंह—इन्होंने एक नृप के भाई को जो नृप के क्रोध के कारण भाग आया था—शरण दी थी। इसके लिये इन्हें लड़ाई भी लड़नी पड़ी जिसमें शत्रु को बुरी तरह परास्त किया। लड़ाई में ये खेत रहे।

भवानी प्रसाद—नवाब गयाजुद्दीन हैदर (लखनऊ) ने इनकी कुछ भूमि एक दूसरे राजा को दे दी थी। इस पर इन्होंने हैदर से लड़ाई ठान ली और बादशाह के द्वारा उसको नीचा दिखाकर अपनी भूमि वापिस ले ली।

देवकीनंदन सिंह—इन्होंने डंकन साहब (अंग्रेज) से मित्रता जोड़कर बहुत से गढ़ों को छुड़वाया था। डंकन साहब ने इन्हें प्राग का सूबेदार नियत किया। काशी रामापुरा में इन्होंने अपनी एक ड्योढ़ी का निर्माण किया। शिवपंचायतन मंदिर बनवाया और गौरीगंज बसाया। असनी के ठाकुर कवि को जो इनके कवि थे कड़ामानिकपुर का तहसीलदार बनाया।

राम रतन—ये बड़े प्रतिभाशाली थे। सितारा और डुमराँव के राजा तथा काशी के राजा ईश्वरी प्रसाद, बेतिया और टिकारी के राजा, लाट गवर्नर तथा टामसेन इनके घर पर आए थे। इन्हें महारानी विक्टोरिया की ओर से भी बड़ा सम्मान मिला था।

हरिशंकर—संवत् १९१३ (सन् १८५७) के गदर में इन्होंने अंग्रेजों की सहायता की जिसके फलस्वरूप इन्हें भी बड़ा भारी सम्मान प्राप्त हुआ।

फुटकल ग्रंथों के ज्ञात रचयिताओं में आनंदघन (घनानंद), आलम और शेख तथा रसखान मुख्य हैं।

२०—आनंदघन (घनानंद)—इस खोज में आनंदघन की 'जमुना जस' और 'आनंदघन के कवित्त' नामक दो और रचनाएँ मिली हैं। जमुनाजस में यमुना माहात्म्य वर्णित है। इसकी प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल का और न लिपिकाल का ही उल्लेख है। कवित्तों की छानबीन करने से पता चला कि यह घनानंद के 'सुजान हित' नामक ग्रंथ की खंडित प्रति है। इसमें भी रचनाकाल और लिपिकाल उल्लिखित नहीं हैं।

पिछले खोज विवरणों में रचयिता के उल्लेख के लिये देखिये खोज विवरण (००-७१) (३-६६) (६-७९) (१२-४) (१७-१८) (२३-१४) (२६-१२) (दि० ३१-६)।

२१—आलम और शेख—इनके कवित्त सवैयों का एक संग्रह इस त्रिवर्षी में मिला है। आलम का रचनाकाल संवत् १७५३ के लगभग माना गया है और वे मुअज्जमशाह के आश्रित कहे गए हैं।* इनके 'आलमकेलि' और 'आलम कवि की कविता' ग्रंथों का उल्लेख पहले हो चुका है, देखिए खोज विवरण (३-३३; ९-३)।

शेख का खोज में अभीतक उल्लेख नहीं किया गया था। पर जब आलम की कविता के साथ इनकी भी रचना मिलती है तो इनका उल्लेख भी आवश्यक है।

प्रस्तुत संग्रह में आलम के २२६ और शेख के ४५ कवित्त सवैये हैं। इनके अतिरिक्त ४४ कवित्त सवैये छापरहित हैं। इनका विषय श्रृंगार और भक्ति है। इन्होंने श्री कृष्ण लीला के अतिरिक्त शिव और राम की भी स्तुति की है।

छानबीन करने से पता चलता है कि तीनों रचनाएँ एक ही हैं। 'आलम केलि' नाम गलत है, शुद्ध नाम 'आलमके कवित्त लिप्यते' ही रहा होगा। 'के' के आगे का शब्द 'कवित्त' और 'लि' के आगे के दो अक्षर 'प्यते' हस्तलेख के जीर्ण या अत्यंत प्राचीन होने के कारण मिट गए जिससे अन्वेषण कर्त्ता ने पढ़ने में आने योग्य 'के' और 'लि' अक्षरों को ही मिलाकर 'केलि' शब्द लिख दिया।

प्रस्तुत प्रति आदि अंत में खंडित है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

२२—रसखान—इनके अधोलिखित दो ग्रंथ खोज में मिले हैं—

१—कवित्त—इसमें कुल ९३ कवित्त सवैये हैं। ये कवित्त सवैये कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं। अन्य रचनाओं के नाम इस

---

* यह भ्रम है आलम एक ही हुए हैं जो अकबर के समय में थे, देखिए 'आलम और उनका समय'; नागरीप्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५०, सं० २००२, पृ० ३४।

प्रकार हैं—१—कुछ संस्कृत रचनाएँ, २—रसखान के कवित्त, ३—श्रीकृष्णस्तोत्र—मिश्रसुखलालकृत, ४—अयोध्यापचीसी— घारैठमेदराम जी कृत, ५—कलिपचीसी—पद्माकर।

प्रस्तुत कवित्तों में राधाकृष्ण का शृंगार तथा भक्ति का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९७६ दिया है।

२—दानलीला—इसमें दही बेचने के निमित्त जाती हुई गोपियों को कृष्ण द्वारा रोकने और उनसे गोरस लेने की कथा संक्षेप में वर्णित है। कथा कवित्त सवैयों में उत्तर प्रत्युत्तर के रूप में है। रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं। रचना दानलीला प्रसंग के फुटकर सवैयों का संग्रह मात्र है।

रचयिता व्रजभाषा के लब्धप्रतिष्ठ कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्राप्तरचनाओं से इनका और कोई वृत्त नहीं मिलता।

२३—अज्ञातनामा लेखकों की रचनाओं में "कामरूप का किस्सा" उल्लेखनीय है। रचनाशैली द्वारा तथा मंगलाचरण में अल्लाह की वंदना होने से यह किसी मुसलमान लेखक की रचना विदित होती है—

अल्लाही बाद कात्र कार है। दुआलिम का पैदा करन हार है॥
न कोई करै तेरी कुदरत वइआ। नहीं इलम तेरा किसी पर अइआ॥

ग्रंथांत का छंद इस प्रकार है—

मुकररहो मिहनत से राहत मिले। दरीनेक वखतीव हितारतपुले॥
बरूदवर महंमद कहो हरका दाम। हुआठजलहक का किसा तमाम॥

इसमें सूफी आख्यान काव्यों की भाँति प्रेम कथा वर्णित है जिसका संक्षेप यों है—

अवध गोरखपुर के राजा महाराजपत को किसी दरवेश की कृपासे पुत्र हुआ जिसका नाम कामरूप रखा गया। ज्योतिषियों ने उसके भाग्य में बारह बरस पर विपत्ति का योग बताया जिसके अनुसार उसे वियोगी बनना था। निदान समय आने पर राजकुमार को एक स्वप्न हुआ जिसमें उसका प्रेम सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला से हो गया। स्वप्न भंग हो जाने पर भी उसका प्रेम नहीं छूटा। स्वप्न की राजकुमारी कामकला के बिना उसे जीवन भार सदृश लगने लगा। बहुत से उपचार किए गए, परंतु सब व्यर्थ।

उधर सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला को भी राजकुमार का साही स्वप्न हुआ और वह भी राजकुमार के प्रेम में विकल रहने लगी। उसने सुमित नाम का अपना पुरोहित

राजकुमार को खोज लाने के निमित्त भेजा। भाग्यवश सुमित ब्राह्मण की भेंट राजकुमार से हो गई जिसको उसने कामकला का परिचय दिया। राजकुमार इससे अत्यंत प्रसन्न हुआ और अपने छह मित्रों को लेकर पुरोहित के साथ सरनद्वीप को चला। जहाजों द्वारा वे सरनद्वीप के निकट पहुँचे ही थे कि अचानक समुद्र में भयानक तूफान उठा। जितने जहाज थे सब के सब डूब गए। राजकुमार, उसके मित्र और सुमित पंडित डूबने से बच तो गए, पर साथ न रह सके। सब एक दूसरे से अलग-अलग समुद्र की तरंगों में बहने लगे।

राजकुमार, किसी प्रकार, बचकर एक द्वीप में पहुँचा जहाँ वह रानी रावता के बंधन में पड़ा। वहाँ से किसी प्रकार छुटकारा मिला तो एक परी उसे कोहकाफ पर्वत पर ले उड़ी। वहाँ से भी निकला तो तसमपैर नाम के जंतु के अधिकार में जा पड़ा। इस प्रकार उसे बारह मास तक विकट कष्टों एवं कठोर दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा। पश्चात् उसे वह दरवेश मिला जिसकी कृपा से उसका जन्म हुआ था। उसकी सहायता से उसका भाग्य पलटा और उसको एक-एक करके सब साथी मिल गए तथा सुमित पुरोहित भी बच निकला। सबको साथ लेकर वह फिर सरन द्वीप को चला। वहाँ पहुँच कर और कुछ कष्ट झेलने के अनंतर कामकला से उसका विवाह हो गया। अपने प्रधान मित्र मित्रचंद का भी विवाह कामकला की सखी कामलता से (जो दीवान की पुत्री थी) करवा दिया।

इस तरह सफलता प्राप्त कर और कुछ दिन सरन द्वीप में रहकर राजकुमार मित्रों-सहित तथा कामकला और कामलता को लेकर अपने देश लौट आया।

रचना काव्य की दृष्टि से तो अधिक महत्व की नहीं; परंतु भाषा की दृष्टि से महत्व-पूर्ण है। इसकी भाषा खड़ी बोली है जिसमें फारसी के शब्द भी मिश्रित हैं। छंद का ढंग तथा कुछ फारसी शब्द ही विदेशी हैं, शेष सब स्वदेशी है। उपमाएँ भी भारत की ही हैं। उदाहरणार्थ, नीचे कुछ उद्धरण दिए जाते हैं—

महल में बना नाच अउ रंग सभ। बजे हरतरफ ताल मृदंगसभ॥
सहेली सखी साथ मिलकर सभन। सवारे कला काम का सभ वदन॥
सखी जो रहे नित कला कामपास। करे हंस के परीतम (प्रीतम) रिझावने की बात॥
कोई बालगूथे केई चीर अंग। केई फूल गूथे से भूपन के संग॥
बतीसो बरन करके सोलहिंसिंगार। पुले अनपुले गल मो फूलों के हार॥
कलाकाम ने जब कीआ सभ बरन। बनी पदमनी सी वह कामन दुलहन॥
कुअर को गए ले कलाकाम पास। भवर ने लीआजाके अरविंद बास॥

× × ×

चंदर वदन अलकां (अलकें) बिसीअर (विषधर) की।
भंवे कमान अधर सुरखी॥
कुच उत्तिग (उत्तंग) बाचा पिक सोहै।
ग्रीवीदेख कपोतन मोहै॥

कट केहर नासा सुक केरी ।
गत गिइंद (गयंद) मनमथ मन हेरी ॥

× × ×

रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता । प्रेम की महत्ता दिखाने में रचयिता ने सुप्रसिद्ध प्रेमी व्यक्तियों के नाम गिनाए हैं जिनमें हिंदू और मुसलमान दोनों हैं । इनमें अवध के नवाब का भी उल्लेख है जिससे वाजिद अलीशाह की ओर संकेत होता है । अतः स्पष्ट है कि रचना वाजिदअलीशाह के पश्चात् हुई ।

प्रस्तुत प्रति के पत्रों के क्रम में गड़बड़ है । पत्र संख्या १० के पश्चात् २१ से लेकर ३० तक के पत्रें हैं तथा ३० के पश्चात् ११ से लेकर २० तक के । शेष क्रम ठीक है ।

नीचे प्रस्तुत विवरण के परिशिष्टों की सूची दी जाती है ।

परिशिष्ट १—ग्रंथकारों पर टिप्पणियाँ ।
,, २—ग्रंथों के विवरण पत्र (उद्धरण, विषय, लिपि, और कहाँ वर्तमान हैं आदि विवरण) ।
,, ३—उन रचनाओं के विवरण पत्र (उद्धरण, विषय, लिपि और कहाँ वर्तमान हैं आदि विवरण) जिनके लेखक अज्ञात हैं ।
,, ४ (क)—प्रस्तुत खोज में मिले नवीन रचयिताओं की नामावली ।

(ख) ज्ञातनामा उन रचयिताओं की नामावली जिनके प्रस्तुत खोज में नवीन ग्रंथ मिले हैं ।

(ग) काव्य-संग्रहों में आए नवीन कवियों की सूची ।
,, ५—ग्रंथकार और उनके आश्रयदाताओं की सूची ।
,, ६—अन्वेषकों द्वारा सभा के लिये प्राप्त किए गए हस्तलिखित ग्रंथों की सूची ।

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
निरीक्षक, खोज विभाग

प्रथम परिशिष्ट

उपलब्ध हस्तलेखों के रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

प्रथम परिशिष्ट

रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

१ अजैपाल-अजैपाल का नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी थोड़ी सी बानियाँ मिली हैं। इनके तथा बानियों के लिये देखिए 'गोरखनाथ' और 'सिद्धों की वाणी' का विवरण-पत्र, संख्या ५५ तथा विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त अज्ञात है।

२ अनंतदास—इस त्रिवर्षी में अनंतदास के तीन ग्रंथ मिले—(१) धना जी की परिचयी, (२) रांका बाँका की परिचयी और (३) सेउ समद की परिचयी। रचनाकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिया है, तीनों का लिपिकाल संवत् १८५६ है। विषय इनके नाम से ही ज्ञात है। प्रथम दो ग्रंथ नवीन प्राप्त हुए हैं। तीसरे ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (३२-९) में भी है। ये रचनाएँ बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जो बड़ा महत्वपूर्ण है। इसके लिये देखिए 'सेवादास'।

रचयिता पिछले कई खोज विवरणों में उल्लिखित है, देखिए खो० वि० (१-१३३) (६-१२८) (९-५) (२३-१८)। इनका कोई विशेष वृत्त इधर नहीं मिला।

३ अनाथ—अनाथदास के दो ग्रंथ प्राप्त हुए हैं—विचारमाला और सर्वसार उपदेश या प्रबोध चंद्रोदय नाटक। इनके ये ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में भी उल्लिखित है, देखिए (१५-१२९) (९-१३१) (१२-७) (२०-८) (२३-१९) (२६-१५) (२९-१५)। इस बार सर्वसार उपदेश या प्रबोध चंद्रोदय नाटक द्वारा इनकी निम्नांकित गुरु-परंपरा का भी पता चला:—

श्री रामानंद
|
अनंतानंद
|
कृष्णदास पयहारी
|
अग्रदास
|
जंत्री जी
|
तुलसीदास
|

मुरारिदास
|
हरिदास मौनी
|
अनाथ

उक्त नाटक का रचनाकाल सं० १७२६ है। इस बार इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। एक में लिपिकाल सं० १९०५ भी दिया हुआ है।

४ अभय सोम—अभयसोम और उनकी रचित 'मानतुंग मानवती चउपई' का पहले पहल पता चला है। ये जैनमतावलंबी थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई वृत्त ज्ञात नहीं।

उक्त ग्रंथ में 'मानतुंग-मानवती' की कथा वर्णित है। इसका रचनाकाल सं० १७२० तथा लिपिकाल सं० १७५९ है। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है।

५ अमृतलाल—अमृतलाल और इनके ग्रंथ "आत्मविचार वैराग या ज्ञान वहोत्तरी" नए मिले हैं। ग्रंथ में जैन आगमों के अनुसार मोक्ष ज्ञान का प्रतिपादन किया गया है :—

दोहा

वोल वहुतरा किया जिन आगम अनुसार।
सुने सुनावे सुरदवे ते पावे भव पार॥

ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १९०७ तथा लिपिकाल सं० १९२६ है। यह राजस्थानी गद्य में है। भाषा में गुजराती का भी मिश्रण है।

रचयिता का वासस्थान रतनपुरी था। और कोई वृत्त नहीं मिलता।

६ अस्वपति रषीसुर—अस्वपति रषीसुर का पता पहले पहल ही लगा है। इनका "शालि होत्र" नाम का अपूर्ण गद्यग्रंथ मिला है जिसमें घोड़ों के लक्षण और उनकी बीमारियों के उपचार वर्णित हैं। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है; लिपिकाल सं० १८६३ है।

रचयिता के नाम का उल्लेख पुष्पिका में अस्वपति रषीसुर है। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

७ आत्माराम—इनका पता पहले ही पहल लगा है। ये जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह के आश्रित थे तथा उन्हीं के आदेश से और उन्हीं के नाम पर इन्होंने 'जयसिंह प्रकाश' ग्रंथ की रचना की। यह महाकवि कालिदास के रघुवंश का पद्यबद्ध अनुवाद

है। प्राप्त प्रति आधुनिक रूलदार कागज पर पत्र की एक ओर लिखी गई है। पुष्पिका के पश्चात् एक दोहे में संवत् १७७१ दिया है, जो रचना-काल जान पड़ता है—

सत्रह सै इकहत्तरा दसराहौ गुरुवार।
राम कियौ उज्जेनि मैं कै रघुवंश विचार॥

'राम' रचयिता का उपनाम है, जो ग्रंथ में सर्वत्र प्रयुक्त हुआ है।

रचयिता, जैसा दोहे से प्रकट है, उज्जैन का निवासी था। अन्य वृत्त अज्ञात है। टीका द्वारा ये कवि ज्ञात होते हैं। अनुवाद का एक नमूना देखिए—

श्लोक— इति विरचित वाग्भिर्वन्दि पुत्रैः कुमारः
सपदि विगत निद्रस्तल्पमुन्झाञ्चकार।
मद पटु निनदद्भिर्बोधिवो राजहंसैः,
सुरपतिरिव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः॥

अनुवाद— यह भांति विरचित वचन वंदी,
पुत्र तिन बोधित ठयो।
ततकाल भूप कुमार उठि कै,
सेज को छोड़त भयो॥

मदते मनोहर सबद भाषें राज हंसनि भीरज्यौं।
जिमि जागि सुरगज सुप्रतीक तजै सुगंगातीरज्यौं॥

८ आत्माराम—आत्माराम का "स्वातिग शुभ लक्षिन" ग्रंथ खोज में नया मिला है। इसमें सात्विक जीवन का निरूपण है। अन्त में, जैसी संतों की पद्धति थी, हठयोग की साधना के भी छंद हैं। ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया गया, लिपि काल सं० १८०९ है।

जैसा कि नीचे के उद्धरणों से विदित होता है, ग्रंथकार स्वामी चरणदास जी के शिष्य थे।

चरनदास के चरन को ऐसो उत्तिम ध्यान।
आत्माराम पग्यो रहै छाड़ि करम अज्ञान॥

× × ×

चरनदास को ध्यान धरियै।

× × ×

चरनदास की गुरु-शिष्य परंपरा जो अन्वेषक को मिली है, इस प्रकार है—

सुखदेव
|
चरणदास
|
आत्माराम
|
लछिराम
|
साधु-शरण

स्वामी चरणदास का रचनाकाल संवत् १७६० से सं० १८३८ तक माना जाता है। इसलिए इनका रचनाकाल अठारहवीं शती का उत्तरार्द्ध और उन्नीसवीं शती का पूर्वार्द्ध ठहरता है।

९ आनंदकवि —प्रस्तुत खोज में आनंद कवि की 'रासपंचाध्यायी' मिली है। जैसा कि नाम ही से प्रकट है यह श्रीमद्भागवत की 'रासपंचाध्यायी' का पद्यबद्ध अनुवाद है। रचनाकाल संवत १८३५ दिया गया है। लिपिकाल का पता नहीं चला।

रचयिता काशी निवासी थे। अन्य वृत्त अप्राप्य है। ये सन् १९०३ के खोज-विवरण की संख्या ३७ पर उल्लिखित 'आनंद अनुभव' के रचयिता 'आनंद' ही जान पड़ते हैं आनंद अनुभव में भी इनके काशी वासी होने का उल्लेख है। इसका रचनाकाल सं० १८४२ है।

१० आनंदघन (घनानंद)—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २० पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

११ आनंदघन (मुनि)—'आनंदघन चौबीस स्तवन' के रचयिता आनंदघन मुनि खोज में पहले पहल ही मिले हैं। ये जैन थे और जैसा नाम से ही विदित है इसमें चौबीसों तीर्थकरों की स्तुति की गई है। ये राजस्थान के रहनेवाले थे, क्योंकि रचना में राजस्थानी मिश्रित व्रज का प्रयोग है।

रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

१२ आलम और शेख—इनके लिये देखिए विवरण अंश में संख्या २१ जहाँ इनका उल्लेख कुछ विस्तार से किया गया है।

१३ इंद्रदत्त—इस खोज में प्राप्त 'पदसंग्रह' नामक एक संग्रह में सूरदास और इंद्रदत्त के पद मिलते हैं। सूरदास तो वे ही प्रसिद्ध 'सूरसागर' के रचयिता हैं, पर इंद्रदत्त का वृत्त अज्ञात है। इसमें सूरदास के ही पद अधिक हैं। इंद्रदत्त के पद साधारण हैं। ये भी कोई कृष्णभक्त रहे होंगे।

'पदसंग्रह' का हस्तलेख जीर्णशीर्ण और खंडित है। इसके दो पत्रे नागरी और शेष कैथी लिपि में हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

१४ ईसवी खाँ—ईसवी खाँ ने 'रसचंद्रिका' नाम से विहारी सतसई की टीका की है। इस खोज में इसकी दो प्रतियों का उल्लेख है। एक प्रति, जो वलिया में प्राप्त हुई है, अपूर्ण है। उसमें पत्र संख्या १०४ के पश्चात् ३८ पन्ने गायब हैं। इसमें लिपिकाल तो नहीं दिया है, पर रचना काल अंत में दिया गया है। किंतु कुछ अक्षरों के मिट जाने से अस्पष्ट है। दूसरी प्रति पूर्ण है और काशी नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा-पुस्तकालय के रत्नाकर-संग्रह में सुरक्षित है। इसमें रचनाकाल का दोहा आरंभ में है और स्पष्ट है। इसके अनुसार 'रस-चंद्रिका' सं० १८०९ में निर्मित हुई। दोहों के क्रम में ये प्रतियाँ एक दूसरी से भिन्न हैं। बलिया की प्रति में अकारादि क्रम से दोहे रखे गये हैं और पहला दोहा यह है—

अपने अपने मत लगे, वादि मचावत शोर।
ज्यौं ज्यौं सवही सेइयौ, एकै नंद किशोर॥

सभा की प्रति में पहला दोहा 'मेरी भववाधा हरौ राधा' 'सोइ है। इसमें अकारादि क्रम बिल्कुल नहीं है। पाठ और लिपि की शुद्धता की दृष्टि से दोनों प्रतियाँ उत्तम हैं।

रचयिता ने इसकी रचना नरवर नरेश छत्रसिंह के इच्छानुसार की थी। ये महाराजा छत्रसिंह महाराजा राम सिंह (संवत् १८३९ में वर्तमान) के पिता थे, जिसका उल्लेख खोज विवरण (६—२१७) में हुआ है।

१५ उदय—उदय कवि कृत 'ककावली' या 'कका वत्तीसी' नाम की छोटी सी रचना मिली है। इसमें 'क' से लेकर 'ह' तक अक्षर क्रम से वत्तीस दोहे हैं जिनमें नीति और उपदेश की बातें कथित हैं। रचनाकाल संवत् १७२५ है। लिपिकाल नहीं दिया है। भाषा राजस्थानी मिश्रित व्रज है।

रचयिता उदयपुर का निवासी था। खोज में ये नये ही मिले हैं।

१६ उदैराज—उदैराज की "उदैराज दोहावली" संयोग-वियोग शृंगार विषयक रचना है। यह अपूर्ण है तथा इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। ग्रंथ की भाषा मिश्रित राजस्थानी है।

ग्रंथकार के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। कहीं ये 'ककावली' के रचयिता 'उदय' ही न हों।

१७ उदैराज—उदैराज की "उदैराज वावनी" नामक पुस्तक मिली है जो अपूर्ण है। यह रचना नीति और धर्मोपदेश विषयकी है। रचना काल संवत् १६७६ तथा लिपिकाल संवत् १७७३ हैं। इसकी भाषा भी राजस्थानी है।

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। इन्होंने ग्रंथ के आरंभ में "उदय सिंह नाम नृप उचरूँ" और अंत में 'चहुवाण राण नृप सोनगिरि वसा वास जगनाथरौ' उल्लेख

किया है। इससे पता चलता है कि उदयसिंह सोनगिरि के चहुवान राजा थे। संभवतः रचयिता इन्हीं के आश्रय में रहे होंगे। इन्होंने आरंभ में नवकार की वंदना की है, जिससे ये जैन प्रतीत होते हैं।

१८ उमराव या जन उमराव—भक्त गीतामृत के रचयिता उमराव का पता शोध में पहली ही बार लगा है। अन्वेषक ने इन्हें कायस्थ बतलाया है, पर उद्धृत अवतरणों से जाति का कोई पता नहीं चलता। अन्य वृत्त भी अज्ञात है।

ग्रंथ का रचना काल संवत् १६०५ है और लिपिकाल संवत् १९१४। इसमें तुलसी, जटायु, शबरी, रामदास, श्रीधरस्वामी, श्रीनिंवादित्य, अंवरीष, प्रह्लाद, कृष्णदास, अजामिल, निष्कंचन, मोरध्वज, साखीगोपाल, कामध्वज, भुवन चौहान राजा जयमल, गुहाराम, सुदामा, मामा भनेज ग्वाल, वंशी, रंतिदेव, चंद्रहास राजा, खड्‌गसेन कायस्थ, रंतवंत वाई, और रत्नावली वाई प्रभृति भक्तों के चरित्र वर्णित हैं।

तुलसीदास जी के संबंध में कहा गया है कि वे कान्यकुब्ज ब्राह्मण और वाल्मीकि के अवतार थे।

१९ कणेरीपाव—कणेरीपाव सिद्धों में से हैं। इन्हीं का नाम कन्हपा या कर्णपाद था। अभी तक इनका कोई प्रामाणिक वृत्त नहीं मिला। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वानियों के विवरण लिए गए हैं, देखिये, "सिद्धों की वाणियों" का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

२० कनक सोम—प्रस्तुत शोध में कनक सोम का पता पहिली बार लगा है। इनकी "आषाढ़ भूत चौपई" की दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल संवत् १६३८ है। एक प्रति का लिपिकाल संवत् १७८२ तथा दूसरी का संवत् १८३१ है। इसमें 'आषाढ़ भूत' नाम के जैन साधु का चरित्र वर्णित है। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का नाम केवल ग्रंथांत में मिलता है। इसके अतिरिक्त इनका कुछ भी चरित्र ज्ञात नहीं।

२१ कबीर—कबीर के नाम पर इस त्रिवर्षी में निम्नलिखित ग्रंथ ऐसे मिले जिनका पता पहले नहीं लगा था—

(१) कबीर दास की बाणी—लिपिकाल सं० १८५५ है। इसमें इनकी चार रचनाएँ साखी, रमैणी, पद और रेखता हैं। यह बानी एक बड़े हस्तलेख में है जिसके लिये देखिए 'सेवादास'। इसी हस्तलेख में आगे चलकर कबीर की दो अन्य रचनाएँ भी हैं, एक "पद कबीर जी का अरथ सहित—" (१२१ पद-सटीक) और दूसरा "रमैणी जन्मबोध।"

(२) नामदेव की लीला—लिपिकाल सं० १८३५। इसमें भक्त नामदेव का चरित्र अंकित है। कबीर का नाम ग्रंथांत में दिया गया है।

(३) ग्रंथ भव तारन—लिपिकाल सं० १९२८। विषय-कबीर का धर्मदास को ज्ञानोपदेश। रचयिता का नाम अंत में आया है।

(४) सुखसागर—लि० का० सं० १८१२ दिया है। इसमें परब्रह्म के स्वरूप तथा कबीर के संसार में आने का हेतु वर्णित है।

(५) कबीर और शंकराचार्य की गोष्ठी—लि० का० सं० १८१२। विषय-कबीर द्वारा शंकराचार्य (संन्यासी संप्रदाय) को तत्त्वज्ञान का उपदेश।

(६) संतोषबोध—लि० का० सं० १८१२। विषय—जीव विषयक ज्ञान का वर्णन।

(७) ज्ञान प्रगास या धर्मदास बोध—लि० का० सं० १८७९। विषय—कबीरदास का धर्मदास को निर्गुण ज्ञानोपदेश।

(८) सुख निदान—लि० का० अज्ञात। विषय-कबीर धर्मदास संवाद।

(९) स्वरोदय—लि० का० अज्ञात। विषय-स्वरोदय वर्णन।

इन सबका रचना काल नहीं दिया गया है।

इनमें से प्रथम को छोड़कर शेष में शायद ही कबीर की वास्तविक रचनाएँ मिलें। ये कबीर पंथ के परवर्ती-साधु-महात्माओं की रचनाएँ हैं।

२२ करताराम द्विज "करता"—करताराम द्विज, उपनाम "करता" 'शालिहोत्र नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की दो अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। पहली में' रचनाकाल तो दिया है, पर पदावली गड़बड़ है—

री भव बक्र सोनागइ नंदु*जुत करी सम्य (? समय) जानी।
असाढ़ सी सीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानी।

लिपिकाल संवत् १९०९ है। दूसरी प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है, परंतु रचना-काल सं० १८५४ है। इसमें रचना काल इस प्रकार दिया है:—

वेद वान बसु भू सहित है सुभ संमत साच।
कातीक बदि बुध छटी केशन वाह शै पाच॥

रचयिता ने ग्रंथ में अपने नाम का उल्लेख "कवी द्वीज करताराम" (प्रथम प्रति) किया है। कहीं कहीं केवल 'करता' का प्रयोग है। अतः इनका पूरा नाम करतारामद्विज और उपनाम 'करता' जान पड़ता है। ग्रंथ की दूसरी प्रति से ज्ञात होता है कि इन्होंने अपना कुछ वृत्त भी लिखा है, पर प्रति के त्रुटित होने से केवल निम्नोद्धृत अंश ही प्राप्त है :—

हरिगीतिका छंद

"शरकार गोरषपुर में सीधुआ विमल वीप्यात।
पावन पड़ोना जाके......................"

पदरौना रियासत के पास सीधुआ गोरखपुर जिले का एक गाँव है। रचयिता

कदाचित् पडरौना के राजा के आश्रित थे। प्रथम प्रति की इस पंक्ति से इसका कुछ पता चलता है:—"सीरमनी राऐ रजाए को सुख पाए कवी 'करता' कहा।"

शोध में प्रथम बार ही इनका पता चला है।

कदाचित यह चरण इस प्रकार है:—विधिभव वक्त्र सुनाग इंदुजुत करी समय जानी। विधि वक्त्र =४, भववक्त्र =५, नाग=८, इंदु=१=१८५४।

२३ कल्यानपुजारी—इस खोज में "कल्यान पुजारी जी की बानी" मिली हैं। कल्याण पुजारी राधा वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे। इन्होंने श्री सुंदरवर जी को अपना गुरु लिखा है जो श्री हित हरिवंश जी के पौत्र और वनचंद जी के पुत्र थे। राधा-वल्लभ संप्रदाय में सुंदरवर जी का जन्मकाल सं० १६०९ माना जाता है। अतः इनका काव्यकाल विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध था। ये अनन्य भक्त तथा वृंदावन सेवी थे। राधावल्लभ मंदिर में पुजारी के कार्य पर नियुक्त थे।

इनकी उपर्युक्त रचना अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। इसमें श्री हित हरिवंश जी, वनचंद जी, कृष्णचंद्र जी, गोपीनाथ जी, मोहनचंद्र जी और सुंदरवर जी की प्रशंसा तथा राधाकृष्ण के मान, रूप, रति, सुरतांत आदि केलि क्रीड़ाओं का वर्णन है। यह एक अत्यंत सरस और सुंदर रचना है। रचना कवित्त सवैया और पदों में की गई है।

इनकी कुछ बानियों का पता पहले भी लग चुका है, देखिये खोज विवरण (१२-८९)। पर प्रस्तुत बानियाँ उनसे भिन्न हैं। उक्त विवरण में इन्हें वनचंद जी का शिष्य लिखा गया है, पर अब स्पष्ट हो गया कि ये उनके पुत्र सुंदरवर जी के शिष्य थे।

२४ कविया करणीदान या करणीदान—ये जोधपुर नरेश महाराज अभयसिंह के आश्रित थे। इनका एक ग्रंथ 'वृहद सिणगार पहले मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (१—१०५; २९—१८६)। इस बार इनका 'सूरज प्रकाश' नामक एक वृहद् और नया ग्रंथ मिला है। इसमें जोधपुर के महाराज अयभसिंह का जीवनचरित्र वर्णित है। रचना काल संवत् १७८७ है; लिपिकाल अज्ञात है।

"राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज" के संपादक ने लिखा है कि 'वृहद सिणगार' सूरज प्रकाश का संक्षिप्त रूप है।

२५ काशीराम—"कवित्त काशीराम" के रचयिता काशीराम का वृत्त अज्ञात है। खोज में पहले भी दो काशीराम मिले हैं। एक 'कनक मंजरी की कथा' के रचयिता (देखिये खोज, ३-७) और दूसरे 'परशुराम संवाद' के (देखिये खोज २३-२०६)। परंतु इनमें से किसी के साथ प्रस्तुत कवि की अभिन्नता स्थापित करने के लिये कोई सूत्र नहीं मिलता। फिर भी संभावना होती है कि 'परशुराम संवाद' के कर्ता ये ही हैं।

इन कवित्तों के रचना काल का पता नहीं है, परंतु लिपिकाल संवत् १७८७ के आस पास हो सकता है क्योंकि एक ही हस्तलेख में इन कवित्तों के साथ 'अद्वैत प्रकाश' भी है जिसका लिपिकाल सं० १७८७ है।

कवित्तों के देखने से ये प्रतिभाशाली व्यक्ति प्रतीत होते हैं।

२६ किशोर जन—इनका पता खोज में प्रथमबार ही चला है। ये पारीख कुल के थे। इन्होंने अपना निवासस्थान मथुरा (ब्रजमंडल) के अंतर्गत रामगढ़ (रामपुरी) बतलाया है, जहाँ कमलापति बाराह भगवान हैं तथा जिनके समीप अर्जुन के बाण से निकली हुई सरिता बहती है।

इनकी उपलब्धकृति का नाम "उपा चरित्र" है जिसका रचनाकाल संवत् १६६४ तथा लिपिकाल संवत् १८१९ है। इसमें बाणासुर की पुत्री ऊपा का प्रख्यात चरित्र वर्णित है। रचना दोहा, चौपाई, सवैया और अरिल्ल छंदों में की गई है। भाषा ब्रज है जिसमें राजस्थानी शब्दों का भी मेल है।

२७ किसन या जन किसन—इनकी कृति 'रुक्मिणी विवाह' है। यह राजस्थानी मिश्रित ब्रजभाषा में है। अतः ये राजस्थान के होंगे। ग्रंथ में नाम का उल्लेख अंत में हुआ है:—

"रुक्मिनी व्याह कथ्यो ज्यन क्रिस्ने सीखे सुनै रगावै।"

ग्रंथ में रचना काल का और प्रतिलिपि में लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना पदों में है, इसमें रुक्मिनी के विवाह का वर्णन है। इसकी प्रतिलिपि नरवर में किसी बाई रत्नावली ने की है।

२८ किसनिया—"किसनिया रा दूहा" प्रस्तुत खोज में प्राप्त हुआ है। इसमें नीति विषय के पद्य हैं। 'दूहा' नाम से दोहे को ही नहीं समझना चाहिये। राजस्थान में सोरठा को भी दोहा कहते हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है। डिंगल की रचना है। रचयिता राजस्थान के चारण थे। इनकी रचना का राजस्थान में राँजिया की रचना की ही भाँति प्रचार है।

२९ कुलपति मिश्र—कुलपति मिश्र आगरा निवासी परशुराम माथुर (चौबे) के पुत्र थे। ये जयपुर नरेश महाराज रामसिंह के आश्रित थे। इनके दो ग्रंथ 'युक्ति तरंगिनी' और 'दुर्गा भक्ति चंद्रिका' मिले हैं। दोनों ग्रंथ खोज में पहले आ चुके हैं, देखिये खोज विवरण (६–१२५; १२–१००; २३–२३१)। प्रथम ग्रंथ खोज विवरण (६–१२५) पर उल्लिखित है; परंतु उसमें इसके उद्धरण नहीं हैं। इसका रचनाकाल संवत् १७४३ तथा प्रति का लिपिकाल संवत् १९०७ है। इसमें नखशिख नायिकाभेद और रसों का वर्णन है।

पुष्पिका में किसी चत्रभुज ने एक वाक्य जोड़कर अपने को कुलपति का वंशज लिखा है।

३० कुशलसिंह—इनके "गीताज्ञान" और "अर्जुन गीता या राम रतन गीता" नामक दो ग्रंथों के विवरण लिये गये हैं। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में हो चुका है, देखिये खोज विवरण (२३–२३१ और २४७)। 'अर्जुन गीता या रामतरन गीता' को दो ग्रंथकारों 'राम रतन' और 'कुशल सिंह', के नाम पर लिखकर उक्त विवरण में भूल की

गई है। वास्तव में यह एक ही की रचना है। ध्यान देने से स्पष्ट हो जाता है कि 'राम रतन' ग्रंथकार का नाम नहीं है, बल्कि ग्रंथ का ही नाम है। नीचे वे उद्धरण दिये जाते हैं जिनमें 'रामरतन' नाम आया है:—

रामरतन गीता गीता के आरजुन कीन्ह अनुसार।
शांतन सुनही जौ चीत दै मुक्ती होई सबसार॥

× × ×

तब कछु ज्ञान ह्रीदय मह आवा। रामरतन गीता प्रभु गावा।

तथा पुष्पिका में

इति श्री रामरतन गीता संपूरनं।

इससे स्पष्ट है कि 'राम रतन' ग्रंथकार का नहीं ग्रंथ का नाम है। कुशल सिंह का रचयिता के रूप में स्पष्ट उल्लेख अधोलिखित अर्धाली में पाया जाता है:—"भाषा कुशल-सींघतेहीं नामा। क्रीपा गुरुदेव अवर श्रीरामा।"

वस्तुतः यह गीता किन्हीं रामरत्न के नाम पर बनाई गई है। ये कुशलसिंह के आश्रयदाता थे या पुरखा यह नहीं कहा जा सकता।

उक्त विवरण में कुशलसिंह को बाराबंकी जिले के मथुरा नामक स्थान का निवासी कहा गया है। इनके रचना काल के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं।

इस बार "अर्जुनगीता या रामरतनगीता" की दो प्रतियों के विवरण लिए गये हैं जिनमें से एक में केवल लिपिकाल संवत् १८९६ दिया है।

३१ कृष्णदासहित—पिछली खोज विवरण (१२-९६) के अनुसार ये 'समय प्रबंध' के रचयिता हैं। इन्हें हित हरिवंश के संप्रदाय का अनुयायी तथा गोस्वामी गोवर्द्धन लाल जी का शिष्य लिखा गया है। साथ ही इनका स्थितिकाल सत्रहवीं शती माना गया है।

प्रस्तुत शोध में इनके दो ग्रंथ 'धमारि' और 'सिद्धांत के पद' मिले हैं। रचनाकाल और लिपिकाल किसी में नहीं हैं। प्रथम रचना में होरी के अवसर पर श्रीकृष्ण की लीलाओं का तथा द्वितीय में सांप्रदायिक सिद्धान्तों का वर्णन है।

३२ कृष्णप्रसाद भट्ट—इन्होंने अनेक कवियों के कृष्णलीला विषयक कवित्त-सवैयों का संग्रह—"कृष्णगीतामृत लहरी" नाम से किया है। प्राप्त प्रति अपूर्ण है। इसके पन्ने अलग अलग खर्रे के रूप में हैं। इसमें कुल १२ तरंगे थीं; परंतु १, ४, ७, ११ और १२ तरंगों का पता नहीं चलता। लिपिकार ने कहीं-कहीं पत्र के एक ही ओर और कहीं-कहीं दोनों ओर लिखा है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिये हैं। साहित्यिक दृष्टि से यह संग्रह महत्वपूर्ण है।

संग्रह के आरंभिक अंश से प्रकट होता है कि इनके पिता का नाम चिंतामणि था। ये गुजरात के भट्ट ब्राह्मण थे। गौडीयमाध्व संप्रदायानुयायी श्रीराधा गोविंद जी इनके गुरु

थे। गुरु के आदेशानुसार इन्होंने बहुत से कवियों के कवित्त-सवैये इकट्ठे किये और यह संग्रह प्रस्तुत किया। संग्रह का नाम पुष्पिका में "श्रीकृष्णलीलामृत सिंधु" भी मिलता है।

ये खोज में नए मिले हैं।

३३ केवल राम वृंदावन जीवन—इनकी 'पदावली' का पता चला है। कदाचित् ये पंजाब के थे, क्योंकि इनके कुछ पद पंजाबी में हैं। इनका परिचय अज्ञात है। कविता से ये प्रौढ कवि प्रतीत होते हैं।

पदावली का प्रधान वर्ण्य विषय तो राधाकृष्ण का प्रेम और भक्ति है; पर राम, हनुमान, गंगा आदि के पद भी मिलते हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं।

पदों का क्रम रागों के अनुसार है।

३४ केशव—प्रस्तुत खोज में केशव की एक रचना 'जंबू के रेखते' नाम से मिली है। रचनाकाल संवत् १७१२ और लिपिकाल संवत् १७६५ हैं। इसमें एक जैन महापुरुष जंबूकुमार की मातृभक्ति तथा उनके वैराग्य और गृहत्याग का वर्णन है।

रचयिता जैन थे और गोइंदवाल नामक स्थान में रहते थे। इनके गुरु का नाम हंसराज गणि था। ये खोज में पहली बार ही मिले हैं।

३५ केशवदास—इनका 'रासा' (रासा श्री केशवदास जी का) मिलता है। ये निर्गुणमार्गी संत थे और श्री बावरी साहबा की परंपरा में यारी साहब के शिष्य थे। प्रस्तुत रचना में केवल दो पद हैं। पदों में पंजाबी तथा मारवाड़ी शब्द मिलते हैं, अतः रचयिता मारवाड़ और पंजाब की सीमा पर के रहने वाले ज्ञात होते हैं:—

"नीझर झरंदा दसो दीसा बरपै अमृत बानी।"

× × ×

"पीया थारे रूप लोभानी हो।"

विशेष वृत्त के लिये देखिये 'भीखा साहब'। पदों में तत्त्वज्ञान का प्रतिपादन है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल उपर्युक्त संग्रह के लेखनकाल के आधार पर १८६७ है।

३६ केशवदास—इनकी कृति 'भागवत' आदि और अंत में खंडित है। इसके केवल छः पन्ने उपलब्ध हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता। ग्रंथकार का नाम एक स्थान पर यों आया है:—

गुर गणपति ने सारदा ब्रह्मा वेदव्यास।
नारद शुक शौनक नमूं कहे एम "केशवदास"।

ग्रंथ के नाम का भी उल्लेख है :—

संसारी पड़ता सहु अवलोकी अंधकूप।
दया करी दीवो करो श्री भागवतस्वरूप"॥

ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है जिसमें गुजराती का भी मिश्रण है। इससे प्रकट होता है कि रचयिता उधर का ही रहने वाला था।

३७ कोविद—इनके "पद" के तीन पत्रे प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। आरम्भ में दो स्थलों पर "रामोजजति" का उल्लेख है। प्रायः ये राम सीता विषयक पद हैं। इनमें उन्हीं के क्रीड़ा विहारादि का वर्णन है। एक पद में राजकुमार का भी उल्लेख है जिसका अभिप्राय राम ही जान पड़ता है।

रचयिता के विषय में पदों द्वारा कुछ भी ज्ञात नहीं होता। इनका नाम प्रत्येक पद में आया है।

पिछले दो खोज विवरणों में चंद्रमणि मिश्र उपनाम 'कोविद' का उल्लेख है, देखिए खोज विवरण (६–६२; २६–२४); परंतु यह प्रकट नहीं होता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा अभिन्न।

३८ कृपाराम—कृपाराम की "कंठमाल" और "विशुनपद क्रीपाराम जी" छोटी रचनाएँ हैं। प्रथम में (रचयिता के कथनानुसार) नाभादास के भक्तमाल के अनुसरण पर हरिभक्तों की महिमा का वर्णन है।

> शाधुन के महिमा प्रभु नीजमुप दुरवाशा प्रतीभापु।
> नाभामत ले "रामक्रीपा" एह कंठमाल रुचीरापु॥

दूसरी में सृष्टि का वर्णन है।

इनके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। कंठमाल द्वारा ये रामोपासक जान पड़ते हैं:—

> वीनती शभ भक्तन सों कीजै।
> अवधचंद्र न्रीप राव लाडिलो ताशुभगती मोही दीजै॥

संभवतः खोज विवरण (४–४६; ५–६; ६–१८३; ९–१५५, २२६) पर आए रामानुज संप्रदाय के साधु कृपाराम यही हैं।

३९ खड़िया खेमा—खड़िया खेमा का पता प्रस्तुत शोध में पहली बार लगा है। ये राजस्थानी विदित होते हैं; क्योंकि इनका रचा हुआ "खड़िया खेमा का परिहा" राजस्थानी भाषा में है। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

रचना में नायिका का शृंगार वर्णित है। रचना काल, लिपिकाल अज्ञात हैं।

४० खड़िया वख्ता—खड़िया वख्ता कृत "अभैसिंह रा कवित्त" का विवरण खोज में प्रथम बार लिया गया है। यह राजस्थानी भाषा में लिखा गया है जिससे इसका रचयिता राजस्थान का रहने वाला विदित होता है। विवरण कर्त्ता श्री महावीर सिंह गहलौत ने इन्हें चारण लिखा है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

रचना में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है इसमें महाराज अभयसिंह का यश वर्णित है। यह पता नहीं चलता कि ये महाराज कहाँ के थे। फिर भी, जोधपुर,

के होने की संभावना है जिनका राज्यकाल सं० १७८१–१८०५ तक था, देखिए खोज विवरण (२–४३, ७२, ८१, ४०) (१–१०५)।

४१ खींवड़ा—खींवड़ा का पता प्रस्तुत शोध में प्रथम वार लगा है। इनका ग्रंथ 'खींवड़ा रा दूहा' राजस्थानी भाषा में है। इसलिये ये राजस्थानी कवि विदित होते हैं। अन्य वृत्त अज्ञात है।

रचना में नीति के दोहे और सोरठे संगृहीत हैं। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सं० १८४३ दिया है।

४२ खेम जी—'चितावणी' ग्रंथ के रचयिता खेम जी के विषय में प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा कुछ भी ज्ञात नहीं होता। परंतु पिछले खोजविवरणों से पता चलता है कि ये दादू पंथी साधु थे और इन्होंने 'सुख संवाद' नामक ग्रंथ लिखा (खोज १–१३४; २–९४; २३–२०६)।

प्रस्तुत ग्रंथ भी 'ग्रंथ ज्ञान उपदेश' नाम से पहले आ चुका है (खोज-२२–११७)। इसका रचनाकाल अब भी अज्ञात ही है। लिपिकाल सं० १८५६ है।

४३ गंगादत्त—ये 'लीला सागर' नामक बृहद् ग्रंथ के रचयिता हैं और प्रस्तुत शोध में इनका पता प्रथम वार ही लगा है। इन्होंने अपना जो विवरण दिया है उसके अनुसार ये सिरमौर की रानी हृदयश्री के आश्रित थे। रियासत सिरमौर (पंजाब) की राजधानी विलासपुर का इन्होंने वर्णन किया है जो सतलज नदी के तट पर बसा हुआ है।

यद्यपि इन्होंने प्रभुवंश और कविवंश वर्णन में एक तरंग (अध्याय) का उपयोग किया है तथापि इसमें केवल एक दोहा और एक कवित्त है जिनमें विलासपुर का वर्णन है। उक्त तरंग की पुष्पिका में अवश्य ही आश्रयदाता तथा अपने नाम का उल्लेख किया है:—

व्यासदेव को नगर जिह है विलासपुरी ख्यात।
वसत सतरुद्रा तीर में लसत दीप हूँ सात ॥२॥

॥ कवित्त ॥

चरचा रहति जहाँ वेदन के भेदन की अरचा सदैव देव जगर मगर हैं।
सरम के सिंधु मेले करम अनेक करें धरम धरनपुर वगर वगर हैं।
गुननि गँभीर धीर वीरन की भीर वसै गंगादत्त सुकवि वखानत अगर हैं।
सकल विलास को निवास भास दुष्टनि को नगर विलासपुर सोभित नगर हैं ॥३॥

इति श्री मन्महाराज कुमारि राणी हिरदै श्री सरमौरी रचतिये गंगादत्त विरंचिते लीलासागरे प्रभु कविवंश वर्णनो नाम प्रथमोतरंगः ॥ १ ॥

विदित होता है कि प्रभुवंश वर्णन तथा कविवंश वर्णन के उद्धरण छूट गए हैं, क्योंकि एक दोहे और एक कवित्त के लिये ही एक तरंग का उपयोग नहीं हो सकता था। अस्तु।

ग्रंथ पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध नाम से दो भागों में है। पूर्वार्द्ध में ५३ तरंग हैं तथा उत्तरार्द्ध में ५५। इसमें नारद और श्री कृष्ण के प्रश्नोत्तर के रूप में महाभारत एवं पुराणों

के आधार पर भक्तिविषयक अनेक कथाएँ वर्णित हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८८६ दिया है।

रचना ब्रजभाषा में है जो काव्य की दृष्टि से अच्छी है।

४४ गंगाराम (कायस्थ)—संस्कृत ग्रंथ 'कर्म विपाक' के अनुवादक के रूप में इनका पता प्रथम बार ही लगा है। ये जाति के कायस्थ और संवत् १७३९ में वर्त्तमान थे। अपने विषय में इन्होंने निम्नलिखित प्रकार से लिखा है:—

रामानंद सुत पटनावासी। भुअपति अवर गजेंद्र नेवासी।
संसक्रित केहु बूझि न परई। तेहि निति भाप छंद उचरई॥

इससे विदित होता है कि इनके पिता का नाम रामानंद था जो पटना के रहनेवाले थे। रचना अवधी में दोहा-चौपाई वृत्तों में की गई है। रचनाकाल संवत् १७३९ तथा लिपिकाल संवत् १८७१ है।

४५ गंगाराम तिवारी—इनका पता शोध में प्रथम बार लगा है। इनके लिखे हुए दो अपूर्ण ग्रंथ "बारह मासा" और "फुटकल कवित्त" प्राप्त हुए हैं। संक्षिप्त विवरण में एक गंगाराम त्रिपाठी (मालवीय) का उल्लेख है लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत रचयिता उससे भिन्न हैं अथवा अभिन्न। इन्होंने "फुटकर कवित्त" में महाराज डालचंद के यश का वर्णन किया है जिससे पता चलता है कि वे उनके आश्रय में रहे होंगे। यदि राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के प्रपितामह डालचंद यही हों तो इनका समय उनके कालानुसार सं० १८८७ के पूर्व ठहरता है, देखिए खोज विवरण (६–२३६, १९५)।

ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ये प्रयाग निवासी थे जहाँ के बड़े बूढ़े इनके विषय में जानते हैं। प्रथम रचना का विषय शृंगार है और इसकी रचना बरवै छंदों में की गई है। दूसरी रचना कवित्तों में है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी भी रचना में नहीं दिए हैं। काव्य की दृष्टि से ये रचनाएँ उत्तम हैं।

४६ गजानंद—इन्होंने 'नेमनाथ रीधमाल' की रचना की जिसमें नेमनाथ जी का यशोगान है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता के विषय में कोई पता नहीं चलता, परंतु ग्रंथ में प्रयुक्त भाषा से ये राजस्थान के जान पड़ते हैं।

रचना के अंत में मीरा का माधुर्य भाव का पद है। इनकी रचना भी माधुर्य भाव की है।

४७ गणेश कवि—इस कवि की १—कालिका अष्टक २—जनकवंश वर्णन ३—त्रिवेणी जी के कवित्त और ४—रामचंद्र यश वर्णन नामक चार छोटी २ रचनाएँ नवीन प्राप्त हुई हैं। इनके दो ग्रंथों के विवरण पहले भी लिए जा चुके हैं, देखिये (खोज

३-२४, ९-८३) जिनके अनुसार ये गुलाब कवि के पुत्र और सं० १८९२ के लगभग वर्त्तमान थे। काशी नरेश राजा ईश्वरीप्रसाद और उदितनारायण सिंह इनके आश्रयदाता थे।

प्राप्त रचनाओं में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। विषय इनके नाम से ही स्पष्ट हो जाते हैं। ये रचनाएँ साहित्यिक कोटि की हैं।

४८ गरीब दास—ये "भक्तन के नाममाला या भक्त बछावली" के रचयिता हैं जिसका इस बार विवरण लिया है। पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिताओं के उल्लेख हैं, परंतु ये उन सबसे भिन्न, बावरी साहिबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब तथा गुलाल साहब की परंपरा में संत गुलाल साहब के शिष्य हैं। इन संतों का इन्होंने विस्तृत वर्णन किया है। गुलाल साहब की विशेष प्रशंसा की है। दादूदयाल जी तथा अन्य भक्तों का साधारण वर्णन मात्र है।

रचना का नाम प्रारंभ में 'भक्तन्ह कै नाममाला' तथा पुष्पिका में "भक्त बछावली" दिया है। यह भीखा साहब कृत "राम सहस्रनाम" के साथ एक ही हस्तलेख में है जिसमें दो लिपिकाल सं० १८३८ (विचारमाला) और १८४० (हस्तलेख के अंत में) दिए हैं। रचना काल अज्ञात है।

४९ गिरिधरदास (गोपालचंद)—ये भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के पिता थे। हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ होने के साथ-साथ ये अच्छे कवि थे। पिछले खोजविवरणों में इनके दो ग्रंथों "बुधकथा" और "श्री कृष्ण चरित कवितावली" के उल्लेख हैं, (खोज १२-६०; २६-१४०)। इस बार इनकी एक नवीन रचना "कथामृत" नाम से मिली है। यह पत्राकार प्राचीन लीथो में छपी है, पर प्रस्तुत प्रति खंडित है। इसमें दशावतारों की कथा का वर्णन रहा होगा; परंतु प्राप्त प्रति में मच्छ, कच्छ, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं तक ही वर्णन है। कच्छप की कथा उस अंश के अंत के पन्नों के खंडित हो जाने से अपूर्ण रह गई है। शेष कथाएँ पूर्ण है।

प्रत्येक कथा भाग भिन्न-भिन्न स्थानों में छपा है, उसका ब्योरा नीचे दिया जाता है:-

१ मच्छ कथामृत—रचना काल सं० १९०६ वि०, लि० का० सं० १९११। "बाबू श्रीगोपाल चंद्र की आज्ञानुसार यंत्रालय मो कांद हिंद पांडे की हउली में मुनशी हरवंशलाल वो हनुमान प्रसाद ने छापी दसखत कन्हैयालाल ता० २६ अप्रैल सन् १८५४ इसवी श्री हरि: ॥

२ नृसिंह कथा—लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपाल चंद्र की आज्ञानुसार पाषाणयंत्र में मुद्रित भई। श्रीकृष्णायनमः। लि० कन्हैयालाल ॥

३ वामनकथा—रचना काल १९०६ वि०; लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद्र जी की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया ॥ इस कथामृत में

आगे भूल से चार सै तैंतीस का अंक दो वेर लिख गया है इस-लिए पीछे पाँच सै बयासी का अंक घटा दिया। अब बराबर जानना।

दोहा

विरच्यो गिरधरदास जू लिख्यो कन्हैयालाल।
छाप्यो मुन्नालाल ने, रामकटोरा हाल ॥ १ ॥

४ रामकथा—लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लि० कन्हैयालाल खत्री ॥

'कच्छप कथा' अपूर्ण होने के कारण उसका विवरण अप्राप्त है।

५० गुरुदत्त—खोज में इनका पता पहली बार लगा है। अमेठी के राजा गुरुदत्त सिंह से ये भिन्न हैं। इनकी तीन रचनाओं-१—"कवित्त" २—"कवित्त हनोमान जी के" तथा ३—"कवित्त श्री विंध्याचल देवी जी को"—के विवरण लिए गए हैं। येसब खर्राकार हस्तलेख में संगृहीत हैं जिसमें नित्यानंद (देखिये प्रस्तुत विवरण में नित्यानंद) नामक सुकवि के भी कवित्त हैं। प्रथम रचना में सिखों के अकालीदल और गुरु गोविंदसिंह की बड़ाई की गई है। शेष दो रचनाओं का विषय उनके नाम से स्पष्ट है। रचनाकाल तथा लिपिकाल किसी में नहीं दिया है। काव्य की दृष्टि से तीनों रचनाएँ अच्छी हैं।

रचयिता का नाम जहाँ तहाँ कवित्तों में प्रयुक्त हुआ है। इसके अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता।

५१ गुरुप्रसाद नारायण—ये 'सन्निपात चंद्रिका' नामक वैद्यक ग्रंथ के कर्त्ता हैं। इन्होंने अपना निवास स्थान आजमगढ़ लिखा है। वंश परिचय इस प्रकार है:—

"हरजूसिंह के वंस नाथसिंह नाम जो पाया।
गुरुदयाल भै तासु तने कान्हूसिंघ जायो ॥
तीनही को सुत जुगल श्रेष्ट गुनभयो निधाना।
गुरुप्रसाद लघु नाम गुरुनारायण जाना ॥

ये नानकपंथी थे :—

गुरु नान्हक को शिष्य नाम आनंद जो पायो।
विद्या दीन्हो मोहि पंडित शिव वच पढ़ायो ॥
तीनही के परसाद करी कविता मैं भापी।
नाम चंद्रिका सन्निपात यहि को लिखि रापी ॥

ग्रंथ का रचना काल संवत् १९१२ वि० है। लिपिकाल इसके साथ लिखे गये 'दयाविलास' के आधार पर सं० १९१२ वि० के लगभग है। ये दोनों ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

५२ गुलाल साहब—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १० पर विस्तारपूर्वक हो चुका है; अतः देखिए उक्त अंश।

५३ गुलाब सिंह—ये 'अध्यात्म रामायण' के रचयिता हैं। इस नाम के रचयिता पिछले खोज विवरणों में आए हैं (देखिए खोज विवरण ३-७८, ९-११०); परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा नहीं। इनका और कोई परिचय नहीं मिलता।

ग्रंथ मूल संस्कृत से अनूदित है। प्रस्तुत प्रति अयोध्याकांड की है। इसका रचना काल अज्ञात है; लिपिकाल सं० १६१३ है। प्रतिलिपि दोषपूर्ण है।

५४ गुविंद—प्रस्तुत खोज में इनकी दो रचनाएँ मिली हैं। पहला कोई 'अलंकार' ग्रंथ है और दूसरा "कवित्त सार संग्रह"। प्रथम ग्रंथ अपूर्ण है। ग्रंथ का आरंभ अलंकार भेद से होता है। इसमें अलंकारों के उदाहरण मात्र दिए गए हैं, लक्षण नहीं। उदाहरण अधिकांश रचयिता के स्वनिर्मित हैं। कुछ केशवदास आदि अन्य कवियों के भी हैं। दूसरी रचना में ऋतुवर्णन संबंधी कवित्त-सवैये संगृहीत हैं जो गुविंद, देव, कालिदास, केशवदास, ठाकुर, भवानी और वासीराम के हैं। ऋतुवर्णन वसंत से आरंभ होकर हेमंत पर समाप्त होता है। वर्षा के अंतर्गत हिंडोला और शरद् के अंतर्गत रास के कवित्त हैं। रचनाओं में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता के विषय में भी कुछ ज्ञात नहीं होता। पिछले खोज विवरण (२३-१३७) (१२-६६) (३२-१८८) में आए हुए गुविंद से इनकी एकता स्थापित करने के लिये कोई प्रमाण नहीं मिलता। दोनों रचनाओं में "गुविंद" की रचना अधिक होने से अन्वेषक ने दोनों का कर्तृत्व 'गुविंद' से जोड़ दिया है। हो सकता है, संग्रहकर्त्ता भी कोई अन्य व्यक्ति हों।

५५ गो० गोकुलनाथ—प्रस्तुत खोज में गो० गोकुलनाथ द्वारा रचित "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" की चार अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल केवल एक में संवत् १८४९ दिया है। इसमें पुष्टिमार्ग के अनुयायी चौरासी भक्तों (जिनमें अष्टछाप के कवि भी सम्मिलित हैं) की वार्ताएँ ब्रजभाषा गद्य में लिखी गई हैं।

गो० गोकुलनाथ जी श्री वल्लभाचार्य जी के पौत्र और गुसाँई श्री विठ्ठलनाथ जी के पुत्र थे।

५६ गोपाल (जन गोपाल)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या ८ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

ये "रास पंचाध्यायी" के रचयिता हैं। नाम के अतिरिक्त इनका और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में गोपाल नामक कई रचयिताओं का उल्लेख है; परंतु ये उनसे सर्वथा भिन्न हैं। खोज में इनका पता पहली बार लगा है।

इनकी 'रास पंचाध्यायी' काव्य की दृष्टि से उच्च कोटि की रचना है। इसमें श्रीकृष्ण और गोपियों के प्रसिद्ध रास का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७५५ और लिपिकाल संवत् १८८१ है।

५७ गोपालदास चाणक—इनका पता खोज में पहली बार लगा है। इनकी रची हुई निम्नलिखित छह रचनाएँ तथा इनके पुत्र माखन का बनाया "श्रीनाथ पिंगल" एक जिल्द में मिले हैं। इन सबके विवरण लिए गए हैं:—

१ कर्मशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—कर्म की प्रधानता तथा कलियुग के प्रभाव से मनुष्य के कर्मों में काम, क्रोध, मद, लोभ के समावेश का वर्णन।

२ कीर्तिशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—ब्रह्मा, विष्णु, महेश की कीर्ति का वर्णन।

३ पुन्यशतक—रचना काल-लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय—राजाओं को न्यायपूर्वक राज्य करने का उपदेश।

४ विनोदशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—राधाकृष्ण का कुंज विहार तथा बारह मासा।

५ वीरशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—छह प्रकार के वीरों—सत्य-वीर, दानवीर, उत्साहवीर, संग्रामवीर, और विद्यावीर का सात्विक, राजस तथा तामस गुणों के अनुसार वर्णन।

६ सिंगारशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—नायिकाभेद और रसों का संक्षेप में वर्णन।

इन रचनाओं के साथ प्रयुक्त 'शतक' शब्द से स्पष्ट है कि इनमें सौ सौ छंद रहे होंगे; पर प्राप्त प्रतियों में किसी में भी पूरे छंद नहीं हैं।

जैसा ऊपर लिखा गया है, ये रचनाएँ माखन कृत "श्रीनाथ पिंगल" के साथ एक हस्तलेख में हैं। यह हस्तलेख सैय्यद कासिम अली, प्रधान अध्यापक नार्मल स्कूल, छुईखदान स्टेट से प्राप्त हुआ है। उनका एक पत्र इसके भीतर रखा हुआ है जिसमें प्रस्तुत रचयिता (गोपाल) और उनके पुत्र (माखन) के विषय में इस प्रकार लिखा है:—

"ये दोनों कवि (माखन और उनके पिता गोपाल) छत्तीसगढ़ म० प्रा० के प्रमुख गण्यमान्य धुरंधर कवि हो गये हैं। पं० लोचन प्रसाद जी पांडेय ने दिसंबर १४ की 'हितकारिणी' में इन दोनों कवियों की जीवनी दर्शाते हुए इनकी लिखी पुस्तकों पर प्रकाश डाला था। इनकी कई पुस्तकें बड़े २ राजाओं ने प्रकाशित करा दी हैं। अब ये दो (श्रीनाथ पिंगल और शतक जो सभा में भेजे गये हैं) और मिली हैं जो अभी तक भी प्रकाशित नहीं हो सकीं।

'गोपाल कवि' रतनपुर (बिलासपुर) के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम गंगाराम था। इनके पुत्र का नाम माखन था। इन दोनों पिता पुत्रों ने कविता में कई ग्रंथ

रचे थे। इनका कविता काल संवत् १७५९ वि० (सन् १७०२) दृष्टिगोचर हुआ है। इनके सात मुख्य २ कविता ग्रंथ इन समेत मिल चुके हैं:—

(१) भक्त चिंतामणि—२५० पृ० कांकेर नरेश ने प्रकाशित करा दी।
(२) राम प्रताप—पं० जयलाल जी ने मुद्रित करा दी।
(३) जैमिनी अश्वमेध—खैरागढ़ नरेश ने प्रकाशित करा दी।
(४) खूब तमाशा—प्रकाशित हो गया।
(५) सुदामा चरित्र—प्रकाशित नहीं हुआ।
(६) छंद विलास—
(७) विनोद शतक—(प्रस्तुत शतकों के आदि में यह नाम भी दिया है।)

'इनके ग्रंथों में राजसिंह राजा का वर्णन आया है। ये राजसिंह राजा संवत् १७५६ से १७७६ तक शासन करते रहे हैं; छंद विलास से ही पता चलता है। राजसिंह रतनपुरा के राजा थे जो आज बिलासपुर के अंतर्गत है। और ग्रंथों में रायपुर का प्रकाश दिखता है। इससे मालुम होता है कि रायपुर का राजवंश रत्नपुर के घराने का है। राजसिंह के कोई संतान(?) हुई इससे रायपुर में सम्मिलित हो गया हो। और गोपाल और माखन कवि इनके चाणक थे इससे यह भी रायपुर आ गए हों—या ग्रंथ के अंत में रायपुर आ गये हों—जो कुछ भी हो। इन ग्रंथों में एक महत्व और भी उल्लेखनीय है कि **माखन कवि ने ग्रंथ रचे पर पितृभक्ति लोप (?) के कारण उन्हीं पिता के नाम से इतिग्रंथ किया गया है**। राजा राजसिंह हैहयवंशी थे और बड़े प्रजाभक्त तथा विद्यानुरागी तथा विद्वानों के मान करने वाले थे"।

ऊपर के मोटे अक्षरों में लिखे वाक्य से सहमत होना तथ्य को देखते कठिन है। प्रस्तुत हस्तलेख में केवल "श्रीनाग पिंगल" ही माखनकृत है। शतक गोपाल कृत ही है; क्योंकि उनमें इनके नाम की छाप कवित्त और सवैयों में मिलती है। पुष्पिका में तो नाम है ही। अतः ये शतक माखनकृत न होकर गोपालकृत ही हैं। हो सकता है, अन्य किसी रचना में वैसी स्थिति भी हो।

"श्रीनाग पिंगल" में राजा राजसिंह रायपुर (मध्यप्रांत) के हैहयवंशी बतलाए गए हैं:—

राजसिंह नृपराज मणि हैहो वंश प्रकाश।
सुवस रायपुर में रच्यो सुंदर छंदविलास ॥४॥
सदा सुकवि गोपाल को श्री गोपाल कृपाल।
तित सासन हित तै रच्यौ छंद विलास रसाल ॥५॥

५८ गोपीचंद—प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ 'वाणियों' के विवरण लिए गए हैं। इनके लिये देखिए "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र, संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

५९ गोरखनाथ—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या १ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

६० गोविंद स्वामी या गोविंद प्रभु—ये अष्टछाप के कवि हैं। इनके विषय में जनश्रुति है कि ये पद बनाकर यमुना में बहा देते थे। इनकी भतीजी ने किसी तरह २५२ पद और १२ धमार बचा लिए। कहते हैं, अब तक इनके येही पद और धमार मिलते हैं। प्रस्तुत खोज में इनके 'पद' तीन नामों से मिले हैं जो नीचे दिए जाते हैं:—

१ गोविंद प्रभु की बानी– रचना काल, लिपिकाल अज्ञात। विषय—दान लीला, मानलीला, गोचारण और रूपवर्णन।

२ पदावली—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय–बाललीला, रूपवर्णन, मानलीला आदि।

३ गोविंदस्वामी के २५२ कीर्त्तन – रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, कृष्णलीला और कृष्ण भक्ति।

पूर्वविवृत—(३२–६७)।

६१ गोविंद सुकवि—इनकी "राधासुष षोडशी" नामक रचना का विवरण लिया गया है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। रचना कवित्तों में की गई है जिनमें श्री राधा के मुख की शोभा का वर्णन है। इसके नाम से विदित होता है कि इसमें १६ कवित्त रहे होंगे, परंतु प्राप्त अंश में केवल १२ कवित्त हैं। अतः यह अपूर्ण है। रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसमें कठिन शब्दों के अर्थ दिए गए हैं और कहीं-कहीं अलंकारों का भी निर्देश कर दिया गया है।

रचयिता का नामोल्लेख केवल कवित्तों में है। इसके अतिरिक्त और कोई पता नहीं लगता।

खोज विवरण (पं० रि० — ३४) (२३–१३७) पर दो गोविंद कवि आए हैं; परंतु उनका प्रस्तुत रचयिता के साथ साम्य स्थापित करने के लिये कोई आधार नहीं मिलता।

६२ घनस्याम—ये "नासकेतु पुराण" के अनुवादक हैं। अनुवाद दोहा, चौपाई और सोरठों में हुआ है। रचनाकाल संवत् १९१५ है। लिपिकाल उल्लिखित नहीं है।

रचयिता रामानुजपंथी जान पड़ते हैं। इन्होंने प्रस्तुत अनुवाद राम पदारथलाल गोलवारा आजमगढ़ के आज्ञानुसार किया :—

"राम पदारथलाल गोलवार आजमगढ़ी।
तेहि आज्ञानुसार घनस्याम रचना किए ॥"

और परिचय नहीं मिलता। ये आज तक मिले इस नाम के ग्रंथकारों से पृथक् ही जान पड़ते हैं।

६३ घोड़ा चोली—घोड़ा चोली का नाम केवल सुनने में आता था। प्रस्तुत खोज में इनकी घोड़ा चोली नामक कुछ औषधियों के नुसखों के तथा कुछ 'बाणियों' के विवरण लिए गए हैं।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी में भी नहीं है। प्रथम रचना गद्य में है जिसमें खड़ीबोली की क्रियाएँ हैं। इसकी शैली निराली है। कहीं तो हिन्दी ही है और कहीं कहीं हिंदी मिश्रित संस्कृत। नीचे दिए उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जायगा :—

"ए सर्व बराबरि करि कपड़छान करना ये सर्वक बराबरी अजेपाल शुद्ध करि मीजी लेना पुनः सर्व एकत्र परलना भंगरा रस सुं परलना दि २१ पुनः गोली मुंग प्रमान अथवा मृत प्रमान अर्चितं नित्य सर्व रोग नाशनं।"

'वाणियों' के लिये देखिये, "सिद्धों की वानियों" का विवरण पत्र संख्या—५९ और विवरण अंश में संख्या –१।

रचयिता का कालादि तथा विशेष वृत्त अप्राप्त है। 'घोड़ाचोली' रचना में एक स्थान पर इसके नाम का उल्लेख इस प्रकार हुआ है :—

"घोराचोली सिधकालापानि नमोस्तुते श्रीगोरषनाथ पादुका नमस्तुते सिधदाता गणेश"

इससे विदित होता है कि 'घोराचोली' कोई सिद्ध हैं और गोरखनाथ की पादुका को नमस्कार करने के कारण संभवतः गोरख के शिष्य अथवा गोरखपंथी हैं। 'कालापानि' नाम भी हो सकता है उन्हीं का हो। जो कुछ हो, उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि घोड़ाचोली नामक कोई सिद्ध हुए हैं। और उनके नाम पर 'वाणियाँ' भी मिली हैं। अतः दोनों रचनाओं के घोड़ाचोली नामधारी रचयिता एक ही हैं।

६४ चंडीदान—इनकी रची "अमल को कविता" नामक छोटी सी रचना के विवरण लिया गया है। इसमें अफीम खाने वालों की दशा का वर्णन किया है। यह अपूर्ण है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता। इनके नाम का उल्लेख विवरण पत्र में दिए गए उद्धरणों में नहीं है।

६५ चंद्रदास—ये "श्रृंगार सागर" नामक ग्रंथ के कर्त्ता हैं। इन्होंने अपने विषय में इतना ही लिखा है कि—मैंने हंसपुरी नामक ग्राम में वसकर यह पुराण बनायाः—

ग्राम सो हंसपुरी वसिके एहु पूरन दिव्य पुरान संवारो।
चंद तजे रसभाव सबै रच जोग शो छीरहि अंत विचारो॥

ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १८०५ और लिपिकाल संवत् १९०२ है। इसमें बारह अध्याय हैं जिनमें कृष्णस्वरूप का श्रृंगार पूर्ण वर्णन किया गया गया है। यह उत्तम काव्य-कृति है।

खोज (१९०९–११) पर भी एक चंद्रदास उल्लिखित हैं जिन्होंने 'रामायण' भाषा और 'नेहतरंग' ग्रंथों का प्रणयन किया। ये कदाचित् कृष्णसंप्रदाय के नहीं हैं, अतः इनसे भिन्न हैं।

६६ चिंतामनि—इनकी "चिंतामनि पद्धति" वैद्यक विषयक रचना है। इसका रचना काल संवत् १७८८ है हस्तलेख अपूर्ण रहने से लिपिकाल अज्ञात है। रचना गद्यपद्य दोनों में है। गद्य पूरबी का है खड़ी बोली मिश्रित।

रचयिता का नाम केवल अध्यायों की पुष्पिकाओं में दिया हुआ है—"इति श्री रीपी राममिश्र अत्मज श्री चिंतामनि पध्यतौ प्रथमा आलोकः॥"

इसके अनुसार इनका नाम चिंतामनि तथा इनके पिता का नाम रिपीराम मिश्र था। अन्य परिचय अज्ञात है।

६७ चिंतामणि—प्रस्तुत शोध में इनके द्वारा रचित "रास मंडल" का विवरण लिया गया है। इसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १८२५ है। विषय कृष्ण और गोपियों का रास वर्णन है जो भागवत के आधार पर झूलना छंदों में है। झूलनों की संख्या तीस है। अंत में एक छप्पय भी है। काव्य की दृष्टि से रचना सरस है।

रचयिता के नाम का उल्लेख आरंभ में तथा पुष्पिका में हुआ है। नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। अतः नहीं कहा जा सकता कि ये चिंतामणि कौन हैं।

६८ चिरपट—चिरपट का नाम सिद्धों के साथ आया है। प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ 'वानियाँ' प्राप्त हुई हैं। वानियों द्वारा इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। विशेष के लिये कृपया देखिए, "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र संख्या–५६ और विवरण अंश मे संख्या—१

६९ चेतन—इनके तीन ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं:—

(१) कक्का पैंतीसी—रचनाकाल १८४५, लिपिकाल संवत् १८७०। विषय-ज्ञानोपदेश। ककहरा पद्धति पर राग रागिनियों में पद रचना है।

(२) चैत्य वंदना—रचनाकाल अप्राप्त, लिपिकाल सं० १८७०। विषय—चौबीस जैन तीर्थकरों की वंदना।

(३) लघुपिंगल भाषा—रचनाकाल संवत् १८४७ लिपिकाल संवत् १८७०। विषय—पिंगल। र० का० का दोहा इस प्रकार है:—

१ ८ ४ ७
'चंद सिद्ध वेदा मुनी, मास पोस गुनपान।
श्वेत बीज गुरुवार को, पूरे ग्रंथ सुजान॥"

"सिद्ध" को "सिद्धि" मानकर संवत् १८४७ होता है। इसकी रचना 'रूपदीप-चिंतामणि' नामक पिंगल ग्रंथ को देखकर की गई है। 'रूपदीप चिंतामणि' जयकृष्ण कृत है, देखिए खोज (००–८०; ९–१३८)। प्रस्तुत सब ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता जैन थे। इनके गुरु का नाम ऋद्धि विजय वाचक था। इनका जन्म वंग प्रदेश में हुआ। गुरु से दीक्षा लेकर इन्होंने यात्रा की और फिर अपने देश को लौट आए। "कक्का पैंतीसी" के अंत में संवत् १८४५ दिया है जो रचनाकाल है:—

१ ८ ४ ५
इक अष्ट चतुर चित पंथ धरिये विक्रम के इहसाल रे।
अतिमाह उज्जल चंद जनमें बुद्ध चेतन लाल रे॥

७० चौणकनाथ—इनकी बानियों के विवरण लिए गए हैं जिनके लिये देखिए—"सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या–५९ तथा विवरण अंश में संख्या १। इन्हें सिद्ध कहा गया है। अन्य वृत्त अज्ञात है।

७१ चौरंगीनाथ—चौरंगीनाथ का नाम गोपीचंद भरथरी की कहानी में सुनने को मिलता है। इस बार इनकी कुछ बानियाँ मिली हैं, जिनके लिये देखिए "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र संख्या–५९ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त इनका अज्ञात है।

७२ जन छबील—प्रस्तुत शोध में इनका पता प्रथम बार लगा है। इनके रचे "हरिभक्ति विलास (उत्तरखंड)" नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें पत्रों की संख्या ३१७ से आरंभ होती है और ४०१ में समाप्त। कदाचित् ४०० पत्रों में पूर्व खंड और उत्तर खंड दोनों साथ ही रहे होंगे। प्राप्त अंश से रचनाकाल का कोई पता नहीं चलता। लिपिकाल संवत् १८१९ है। ग्रंथ की रचना भागवत के आधार पर हुई है। साहित्य की दृष्टि से इसका कोई महत्व नहीं।

रचयिता का नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। कदाचित् आरंभ में इन्होंने अपना वृत्त तथा रचनाकाल दिया होगा जो अप्राप्त है।

७३ जगजीवन दास—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ११ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

७४ जगन्नाथ (जन)—इनके द्वारा रचित "मोहमर्दराजा की कथा" का विवरण लिया गया है। इसमें मोहमर्द राजा की कथा का पौराणिक आख्यान वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८५३ इस आधार पर है कि प्रस्तुत ग्रंथ एक बड़े आकार के हस्तलेख में है जिसमें इस संवत् में लिखी गई कई रचनाएँ हैं। इसके लिये देखिए, सेवादास।

ग्रंथ द्वारा रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। एक जगन्नाथ इसी नाम के ग्रंथ के रचयिता के रूप में पहले भी आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (२३–१७७) (२६–१९४) (२९–१६४) (पं० रि० २२)। परंतु ग्रंथों के आपस में न मिलने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि वे तथा प्रस्तुत रचयिता एक ही हैं।

७५ जगराम—इनका प्रथम बार ही पता लगा है। इनके 'पद संग्रह' का विवरण लिया गया है। संग्रह के प्रारंभ में कुछ दोहे और कवित्त हैं, फिर पद। विषय, जिनदेव की भक्ति है। भाषा ब्रज है। बीच में कुछ पद पंजाबी के भी हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि ये जैन थे।

७६ जनप्रसाद—खोज में ये नए मिले हैं। इनके एक "पदसंग्रह" का पता

लगा है जिसमें रामचरित का वर्णन है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पद सुंदर तथा सरस हैं।

रचयिता का नाम कहीं-कहीं 'दास प्रसाद' भी दिया है। अन्य वृत्त अप्राप्त है। ये रामोपासक हैं।

७७ जयराम—इनकी "श्रीमद्भगवतगीता की टीका" मिली है जिसका विवरण लिया गया है। पुष्पिका से पता चलता है कि इसकी रचना श्री रामानुजाचार्य के श्रीभाष्य के अनुसार है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। अनुवाद दोहे चौपाइयों में किया गया है।

रचयिता ने अपने विषय में किसी प्रकार का उल्लेख नहीं किया। खोज विवरण (ज-१३०) पर ज्वर विनाशन के रचयिता एक जयरामदास उल्लिखित हैं; परंतु प्रस्तुत रचयिता से उनकी एकता स्थापित करने के साधन नहीं हैं।

७८ जयसिंहदास—ये 'हितोपदेश के कथा' के कर्ता हैं और सारंगगढ़ कोट के राजा उद्दोत साहि के मंत्री देवकीनंदन के आश्रय में रहते थे। उनके कहने से इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

प्रस्तुत हस्तलेख अंत से खंडित है। रचनाकाल संवत् १७८२ है। लिपिकाल हस्तलेख खंडित होने के कारण अप्राप्य है।

७६ जलंधरी पाव—जलंधरी पाव का नाम गोपीचंद और भरथरी की कहानियों में आता है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' का विवरणपत्र संख्या—५६ और विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त खोज में अब भी अनुपलब्ध है।

८० जानकी प्रसाद—ये 'युक्ति रामायण' के रचयिता हैं। इनका जीवन वृत्त प्राप्त नहीं है। परंतु जैसा सेवक या सेवक राम (संख्या २९८) के विवरण से ज्ञात होता है कि उन (सेवक के) पिता धनीराम ने महाराज रणधीर सिंह के वंशज बाबू देवकीनंदन के पुत्र जानकी प्रसाद के नाम पर १—रामचन्द्रिका पर तिलक, २—युक्त रामायण तिलक सहित और ३—रामाश्वमेध नाम के तीन ग्रंथ रचे। संभवतः वे जानकीप्रसाद यही हैं। ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें रामचरित्र का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। इसमें अध्यायों के बदले 'प्रतीहार' है। समस्त प्रतीहारों की संख्या लगभग ७ है। छः पूर्ण हैं तथा सातवाँ अपूर्ण। रचयिता ने छंदों के बदले में विशेष रुचि दिखलाई है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

८१ जिनदास—इनकी प्रस्तुत रचना 'नेमिनाथ राजमती मंगल' में नेमिनाथ और राजमती के विवाह तथा वैराग्य का वर्णन है। ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८०६ दिया है।

रचयिता के विषय में कोई अन्य बात नहीं विदित होती। खोज विवरण (१७–८९) पर एक जिनदास पंडित का उल्लेख है जिन्हें जैन कवि कहा गया है। वे संवत् १६४४ के लगभग वर्तमान थे। संभवतः वे तथा प्रस्तुत जिनदास एक ही हैं।

८२ जीवनधन—इनका पता खोज में पहली बार लगा है। ये 'सुरतांत लीला' के रचयिता हैं, विशेष परिचय नहीं मिलता। इनका नाम ग्रंथ के अंत में केवल एक स्थान पर आया है। रचनाकाल प्राप्त न होने से यह भी नहीं कहा जा सकता कि ये किस समय में वर्तमान थे।

ग्रंथ में राधा और कृष्ण का दाम्पत्य विलास वर्णित है। रचना अधिकतर रोला छंदों में हुई है। दोहे, चौपाई, कवित्त और सवैये का भी प्रयोग किया गया है। भाषा ब्रजी है। लिपिकाल संवत् १८४० दिया है।

८३ जुगतानंद—इनके दो ग्रंथों 'भक्ति प्रबोध' और 'भगवत गीतामाला' के विवरण लिए गए हैं। खोज में ये नवीन मिले हैं। केवल प्रथम ग्रंथ से ही इनके विषय में कुछ पता चलता है जिसके अनुसार ये सुखदेव जी के शिष्य चरणदास जी के शिष्य थे। इन्होंने कुछ पदों में राजस्थानी शब्दों का प्रयोग किया है जिससे ये राजस्थानी विदित होते हैं। यह रचना संवत् १८२४ में हुई, अन्य परिचय नहीं मिलता। इन्होंने निर्गुण और सगुण दोनों को रचना का विषय बनाया है। एक ओर राधा कृष्ण का गान तो दूसरी ओर 'अजपा' और 'सतगुरु' का वर्णन। इस ग्रंथ में भक्ति और ज्ञान-वैराग्य संबंधी नाना विषयों का विविध छंदों में निरूपण है। इस दृष्टि से ग्रंथ कई अंशों में विभाजित हो सकता है, किंतु इन अंशों में परस्पर विचित्र प्रकार की एक रूपता पाई जाती है। विषय के साथ-साथ नवीन छंद रखने की चेष्टा की गई है। दोहा, चौपाई, पद, कवित्त और कुंडलिया आदि विविध छंदों का प्रयोग किया गया है। कृष्ण, सुखदेव, गुरुचरणदास की प्रार्थना के पश्चात् गुरुमहिमा, साधु महिमा, मन जग निवृत्ति, वैराग्य, नाम माहात्म्य अजपा जाप, कृष्ण चरित्र, सुकदेव स्तुति और बारहमासा आदि विषयों का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है।

दूसरा ग्रंथ—'भगवत गीता माला' गीता का अनुवाद है। अंत में रामाष्टक, हनुमान जैत, विष्णु पंजर स्तोत्र आदि भी हैं। इससे रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। विषय साम्य तथा रचयिता के नामसाम्य के कारण ही इसे एवं प्रथम ग्रंथ को एक ही रचयिता की कृतियाँ मान लिया गया है। इसमें रचनाकाल नहीं है। विवरण पत्र के उद्धरणों में लिपिकाल का उल्लेख नहीं है, परंतु अन्वेषक ने लिपिकाल सं० १८५९ माना है।

८४ जेठुवा—'जेठुवारा सोरठा' के इस रचयिता का पता प्रथम बार ही लगा है। रचना में केवल १३ सोरठे हैं जिनमें नीति का विषय वर्णित है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। रचना राजस्थानी भाषा में होने के कारण ये राजस्थानी ज्ञात होते हैं।

८५ जैतसिंह (महापात्र)—इस रचयिता की निम्नलिखित तीन रचनाएँ खोज में मिली हैं—

(१) 'साहिजादे माजम के कवित्त' या 'मुअज्जम शाह के कवित्त'—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १७४२। विषय—मोअज्जम शाह की प्रशंसा का वर्णन।

(२) माजम प्रभाव अलंकार—रचनाकाल संवत् १७२७, लिपिकाल अज्ञात। विषय--अलंकारों का वर्णन। इसमें मोअज्जमशाह की वंशावली भी दी है।

(३) प्रबोध चन्द्रोदय नाटक (भाषानुवाद)—रचनाकाल और लिपिकाल संवत् १७६२। विषय—संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का अनुवाद।

प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं जिनमें से एक प्रति तथा अन्य दो ग्रंथ एक हस्तलेख में हैं। यह (हस्तलेख) रचयिता के हाथ का ही लिखा हुआ है। स्याही और लिपि के साथ साथ प्रबोध चन्द्रोदय नाटक की पुष्पिका से भी इसकी पुष्टि होती है, यथा—

'इति श्री प्रबोध चंद्रोदय नाटकस्य तस्य भाषा करिष्य महापात्र जेतसिंहस्य षष्ठमो अंकः लिषितं स्वहस्त ज्येष्ठ वदि षष्टी गुरौ संवत् १७६२॥ पुस्तक संपूर्ण शुभमस्तु॥'

प्रथम ग्रंथ के ७७ वें कवित्त के पश्चात् इस प्रकार का उल्लेख है:—संवत् १७४२ शाके १६०७ श्रावणे मासे कृष्णपक्षे नवमी भ ३७ ग ४० संध्या समये मकर लग्ने श्री महापात्र जयतसिंहस्य चत्वारिंशतमो ४० वर्ष प्रविष्टः।

इससे स्पष्ट है कि रचयिता का जन्म संवत् १७०३ में हुआ था। ये असनी जिला फतेहपुर के महापात्र नरहरि के वंशज मनिराम के पुत्र थे। मोअज्जम शाह इनके आश्रयदाता थे जिनकी प्रशंसा में तथा जिनके नाम पर इन्होंने प्रथम दो ग्रंथ रचे।

दूसरे ग्रंथ 'माजम प्रभाव अलंकार' में आश्रयदाता की वंशावली इस प्रकार दी है:—

शाहजहाँ के पश्चात् औरंगजेब का नाम न देना स्पष्ट भूल है। मोअज्जमशाह जो बहादुर शाह के नाम से गद्दी पर बैठा औरंगजेब का पुत्र था। मोअज्जमशाह के कवित्तों में कुछ अन्य लोगों के कवित्त मिले हुए ज्ञात होते हैं। एक जगह शाहजहाँ की घटना के संबंध में सं० १६२२ का उल्लेख है; परंतु उसमें जेत की छाप नहीं है। संभवतः यह कवित्त इनके पिता मनिराम का है जो शाहजहाँ के समय में वर्तमान थे। इन कवित्तों में राजा जयसिंह राघोराय और छत्रसाल आदि ऐतिहासिक व्यक्तियों के भी उल्लेख पाए जाते हैं।

मोअज्जम शाह के संबंध में अनेक युद्धों का वर्णन है। यह रचना साहित्यिक होने के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

८६ ज्ञानदास—इनका नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। इनकी छोटी सी रचना 'तमाल–मद्य भांग–मांसानां निषेध' का विवरण लिया गया है। विषय नाम से ही स्पष्ट है। लिपिकाल संवत् १८७८ है। रचनाकाल अज्ञात है। ग्रंथ ब्रह्मांड पुराण के एक अध्याय का अनुवाद है।

८७ टीपू सुलतान (अनुवादक पूर्णवल्लभ मिश्र)—प्रस्तुत ग्रंथ 'मामूल अतिब्या' के मूल कर्त्ता टीपू सुलतान दक्षिणी भारत के प्रसिद्ध शासक थे। इनका जन्मकाल सं० १८०६ तथा राज्यकाल सं० १८४० से १८५६ तक था।

मूल ग्रंथ फारसी में है जिसको टीपू सुलतान ने संगृहीत किया था। इसका हिंदी अनुवाद बुलंदशहर जिला के निवासी पूर्णवल्लभ मिश्र ने किया। टीका के रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १६०७ में वर्तमान थे।

ग्रंथ का विषय वैद्यक है।

८८ टोडरानंद—'टोडरानंद वैद्यक' के रचयिता के नाम का कोई निश्चित पता नहीं चलता। ग्रंथ के नाम के आधार पर ही 'टोडरानंद' अनुमानित किया गया है। अन्वेषक का कहना है—'मैंने भंडारकर के संग्रह में 'टोडरानंद' (व्यवहार सौख्य) ग्रंथ देखा है जो संवत् १७३१ के लगभग का लिखा है। उसमें अकबर के नाम का स्पष्ट उल्लेख है।'

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। टोडरमल के आश्रित होना अनुमित हो सकता है। लेखक का नाम 'टोडर' होना भी संभव है।

ग्रंथ का विषय उसमें आए वैद्यक शब्द से स्पष्ट है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १७३७ है। इसकी भाषा अवधी और खड़ी बोली का मिश्रण है।

८९ ठाकुर कवि—इनका कोई परिचय नहीं मिलता। पिछले खोजविवरणों में उल्लिखित इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न जान पड़ते हैं। इनका रचा हुआ 'महाभारथ कर्न आरजुनी' नामक ग्रंथ मिला है जिसमें इन्होंने अपने को 'कवी ठाकुर' कहा है :—

'तीनी लोक सब देषै कवी ठाकुर कहै गाई।'

इसी के आधार पर इन्हें 'ठाकुर कवि' मान लिया गया है। ग्रंथ में कर्णार्जुन युद्ध का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १७९६ है। इसकी भाषा अवधी है जिसमें भोजपुरी के शब्दों का भी मेल है।

९० ठाकुरदास 'ठाकुर'—इनका प्रस्तुत ग्रंथों द्वारा कोई परिचय नहीं मिलता, परंतु ग्रंथस्वामी (पंडित जगन्नाथ मिश्र) का कथन है कि ये मेरे पुरखे थे और इनका समय लगभग १००।१५० वर्ष प्राचीन है। इन्होंने ग्रंथों में अपना नाम 'ठाकुर' या 'ठाकुरदास' दिया है।

इनके दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनमें ग्रंथ के नामों का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। एक में नाम 'शब्द सतगुरु के' दिया है तथा दूसरे में 'ज्ञा० गी०' है जो संभवतः 'ज्ञान गीता' है। प्रथम में भक्ति, ज्ञान और वैराग्य संबंधी पदों का संग्रह है। इसके नाम से विदित होता है कि संग्रह किसी शिष्यों ने किया है। मूल नाम केवल 'शब्द' रहा होगा। शिष्य ने आदर प्रदर्शित करने के लिये ही 'शब्द सतगुरु के' लिखा है।

इस रचना से पता चलता है कि रचयिता सनातन धर्म में आस्था रखने वाला था। साथ ही उसकी शैली निरगुनियों की सी है। एक ओर कलियुग के प्रभाव का वर्णन तथा सनातन धर्म का अवलंबन करने का उपदेश करते हैं तो दूसरी ओर निरगुनियों की तरह परमतत्व का विवेचन करते हैं। उदाहरणार्थ दो पद दिए जाते हैं :—

कलजुग और सनातन धर्म

कलजुगवा कपट पट खोलु रे।
जौ कलजुगक कपट पट खोलबे सीआराम सुधि पइबे।
निज सतगुरु चर्ण निरेखो अगम निगम गति पइबे ॥ १ ॥
साधु संत कै करौ वंदगी तनमन वा जी वारो।
भक्ति सनातन मारग लीजै रोको जम के द्वार हो ॥ २ ॥
राजनेति गति राज करौ तु धर्म सनातन लेव।
जैसे कर्णी करि राखै ताकै तैसे देव ॥ ३ ॥
राम भक्ति से नेह लगावो ज्ञान वैराग्य बढ़ावो।
माता पिता परिवार पालना संत नाम गुण गावो ॥ ४ ॥ आदि ॥

निर्गुण विवेचन

नहीं आकाश है नहीं पाताल है नहीं मृत्युलोक की कारसाजी।
नहीं जमराज हैं नहीं धर्मराज हैं नहीं पाप नहीं पुन्य ताजी॥
चंद्र अरु सूर्य तारंगणा पवन जल नहीं हिंदुआ तुरकसोजी।
नहीं वह हद है नहीं अनहद है नहीं वह जगमगी जोति साजी॥
भूत बयताल नहीं काल शयतान नहीं जगत परिपंच नहीं कोउ काजी।
रूप अखंड है लहर आनंद है अगम की पंथ है सत्यसाजी।
दास ठाकुर सोह देश में पेश नीज जागता पुरुश शेश कल साजी॥ १॥

दूसरी रचना 'ज्ञान गीता' का विषय आध्यात्मिक है जो एक रूपक द्वारा स्पष्ट किया गया है।

काशी रूपी काया में एक मनसराज ब्राह्मण बुद्धि रूपी स्त्री के साथ रहता था। वह विश्वनाथ का बड़ा भक्त था। उसकी भक्ति की परीक्षा लेने के लिए भगवान् ने एक अघोरी साधु के भेष में उसके पास जाकर तपस्या की सिद्धि के निमित्त उसका मांस मांगा। भगवान् ने ब्राह्मण से कहा, 'तू बड़ा भक्त है। मुझे तपस्या की सिद्धि तब प्राप्त हो सकती है जब मैं तेरे जैसे भक्त का मांस खाऊँ। अतः हे भक्त! मुझे अपना मांस दो।'

ब्राह्मण ने पहले तो अपने से उत्तम भक्त की खोज की; परंतु जब कोई नहीं मिला तो स्वयं स्त्री पुत्र के साथ साधु की इच्छा पूर्ण करने के लिये तैयार हो गया। इसपर भगवान् बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने प्रत्यक्ष दर्शन देकर ब्राह्मण से वरदान माँगने के लिये कहा। ब्राह्मण ने पुत्ररूप में अपने यहाँ जन्म लेने की प्रार्थना की। भगवान् ने तथास्तु कहकर उसकी इच्छा पूर्ण की।

आगे मनसराज पुत्र द्वारा वैकुंठ लाभ करता है। बुद्धि को भी ज्ञान प्राप्त होता है और वह पुत्र से योग विषयक ज्ञान प्राप्त करती है। इसके पश्चात् ग्रंथ खंडित है।

योग के प्रकरण में त्रिकुटी, इंगला, पिंगला और अनहद नाद आदि का वर्णन निर्गुणियों की शैली पर हुआ है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिए हैं।

६१ तुरसीदास (गुसांई)—तुरसीदास गुसांई का उल्लेख पहले खोज विवरण (२५-१००) में भी हो चुका है। उसके अनुसार ये निरंजनी पंथ के साधु थे और शेरपुर (राजपूताना) में महंत थे।

इस बार इनकी बानियाँ 'तुरसीदास की वाणियों' के नाम से मिली हैं जिनमें तीन ग्रंथ हैं—'साखी' 'ग्रंथ चौअक्षरी' और 'पद'। 'ग्रंथ चौअक्षरी' में तीन छोटी-छोटी रचनाएँ हैं—१—करनीसार जोग ग्रंथ, २—साध सुलक्षन जोग ग्रंथ, ३—तत्व गुनभेद

जोग। इन सबका विषय निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५६ है। ये बानियाँ एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जिनके लिए देखिए 'सेवादास'।

९२ तेज—ये 'भ्रमर गीत' के रचयिता हैं। ग्रंथ द्वारा इनके विषय में कोई विवरण नहीं मिलता। तेज नाम रचना में केवल एक स्थान पर है, इससे संदिग्ध है।

ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें गोपी उद्धव संवाद वर्णित है। रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात है। कविता सरस हैं।

९३ त्रिलोकसिंह—प्रस्तुत खोज में इनका 'राजनीति चंद्रिका' नामक ग्रंथ विवृत हुआ है। यह राजनीति विषय पर लिखा गया है जिसमें राजपुरोहित नृप लक्षण तथा राज्य के लिये त्याज्य और विहित कर्मों का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९०५ दिया है। इसकी भाषा परिमार्जित है।

त्रिलोकी सिंह नाम के एक कवि के 'सभा प्रकाश' ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (५-३२१) पर भी है। दोनों एक ही हो सकते हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार रचयिता के जीवनवृत्त के संबंध में कोई नवीन बात नहीं विदित होती। उसमें इनके कुँवर गोपाल सिंह के पिता होने की संभावना की गई है जो सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वर्तमान थे, देखिए खोज विवरण (६-४२)।

९४ दत्तात्रेय—प्रस्तुत खोज में इनके नाम से कुछ बानियाँ मिली हैं। पता नहीं कि ये प्रसिद्ध साधक दत्तात्रेय ही हैं या कोई अन्य व्यक्ति। इनके विषय में देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या-५९ तथा विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त अज्ञात है।

९५ दयादेव—इनका पहले पहल पता चला है। 'कवित्त दयादेव के' नाम से इनकी एक रचना का इस बार विवरण लिया गया है। इसमें विप्रलंभ श्रृंगार के सात कवित्त हैं जो काव्य की दृष्टि से उत्तम हैं। विवरणपत्र में उद्धृत अंश से तो रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता; परंतु अन्वेषक ने लिपिकाल संवत् १८१२ लिखा है जिसका आधार विदित नहीं होता। इसकी भाषा राजस्थानी मिश्रित ब्रजी है।

रचयिता के जीवनवृत्त के संबंध में कुछ विदित नहीं होता।

९६ दयाल कवि—'भाषा महिमन (शिव महिम्न)' के रचयिता हैं। इन्होंने यह रचना नृपति सुजानसिंह के आज्ञानुसार की :—

नरपति सिंह सुजान ने आयसु दीन्ह्यो मोहिं।
रचि भाषा महिमन करौ सैव सराहै तोहिं॥
नरपति सिंह सुजान पै करौ कृपा जगदीश।
करौ चक्कवै जगत को ... ... यहुदीस॥

पता नहीं ये सुजान सिंह कहाँ के राजा थे। अनुमान से ये भरतपुर के महाराज बदनसिंह के पुत्र सुजान सिंह हो सकते हैं। इनका राज्यकाल संवत् १८१२ से संवत् १८२० तक था।

पिछले दो खोज विवरणों में जनदयाल और दयाल नामक रचयिताओं का उल्लेख है, देखिए खोज विवरण (२६-१९३) और (३८-३५)। यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत रचयिता इनमें से कोई एक है या नहीं।

रचना 'महिम्न स्तोत्र' का अनुवाद है और कवित्त सवैयों में की गई है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

९७ दयालनेमि—ये 'अवगत उल्लास' अन्य नाम 'आत्मप्रकाश या सर्वसार संग्रह' के रचयिता हैं। इनका वृत्त अज्ञात है। ग्रंथ में कहीं कहीं खड़ी बोली का मेल है जिससे अनुमान होता है कि ये १८वीं शताब्दी के बाद हुए होंगे:—

नहीं काहू की ह्वै रहती है। सबहूँ कों अंतर दहती है।
कृष्णादिक सों छल करती है। यह काहू सों नहीं डरती है।

माया, पत्र सं० ५९

ग्रंथ वेदांत विषय का है। आरंभ में रचयिता ने स्वयं अपनी (आत्मरूप में) वंदना की है। पश्चात् पंचदेवताओं की प्रार्थना है जो केवल परंपरा पालनार्थ की गई जान पड़ती है।

इसमें ९ अध्याय (प्रयोग) हैं तथा इसमें कवित्त और दोहों का विशेष प्रयोग किया गया है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं।

९८ दयालाल—इनकी 'प्रेम बत्तीसी' नामक रचना का प्रस्तुत खोज में विवरण लिया गया है। इसमें कृष्ण और गोपियों के प्रेम का वर्णन गोपी उद्धव संवाद के रूप में किया गया है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी रचना कवित्तों में हुई है। भाषा ब्रजी है। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ साधारणतः अच्छा है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त अन्य कोई विवरण नहीं मिलता।

९९ दलपत या दौलत विजय—ये 'नवरस विलास (खुमान रासो ?)' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति—जो दो जिल्दों में है—अपूर्ण है। इस प्रति में सात खंड पूरे हैं और आठवाँ खंड अधूरा है। यह पुराने देशी कागज में लिखी है तथा इसमें ६१२ पन्ने (पहली जिल्द में १-९० तक और दूसरी में ९१-६१२ तक) हैं। प्रत्येक पत्र के एक ओर लिखा है, दूसरी ओर खाली छोड़ दिया गया है। इसका लेख बहुत आधुनिक (अधिक से अधिक १०-२० वर्ष का) है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथ में उसके नाम का उल्लेख स्पष्ट रूप से नहीं मिलता। तीसरे और चौथे खंडों की पुष्पिकाओं में 'नवरस विलास' ग्रंथ के नाम के रूप में उल्लिखित है इसलिये

उपयुक्त न होते हुए भी एवं किसी निश्चित नाम के अभाव में इसी को ग्रंथ का नाम मान लिया गया है। आर्यभाषा पुस्तकालय (काशी नागरी प्रचारिणी सभा) में यह 'खुमान-रासो' नाम से है। ग्रंथ में यह नाम कहीं नहीं आया है, पर खुमान के चरित को प्रधानता दी गई है:—

साहसीक आपाद सिध क्षत्री मोड खुमाण।
गाहभमल्ल दातार गुरु अनमी अवली वाण॥ १४॥
उदयो ज्यूँ उदयाचलें भलहल तेजे भाण।
रायजादो रघुवंस रिधु प्रगट्यो पुता प्रमाण॥ १५॥
चरित तास गुणचौपई अधिकभाव अधिकार।
सुण्या घणों सुप संपजे सयणा सुभा सम्भार॥ १६॥

—पत्र ३

बड़े अक्षरों वाले पद में आए 'चरित' शब्द से यदि ग्रंथ का नाम 'खुमानचरित' मान लें तो सार्थक न होगा, क्योंकि एक तो इसमें आद्योपांत खुमाण का चरित्र नहीं दिया है और दूसरे इसके कतिपय खंडों की पुष्पिकाओं में प्रयुक्त 'बाप्पा खुमाणचरित्र' (द्वि० खं०), 'करण खुमाणचरित्र' (च० खं०) और 'कानड़देक सामोड रति सुंदरी देवलदे इत्यादिक चरित्र' (च० खं०) नाम भी ग्रहण करने पड़ेंगे जो उचित नहीं कहे जा सकते।

श्री अगरचंद नाहटा का एक लेख 'खुमाणरासो का रचनाकाल और रचयिता' नाम से नागरी प्रचारिणी पत्रिका (वर्ष ४४, संवत् १९९६, नवीन संस्करण—भाग २०, अंक ४) में निकला है। उक्त लेख में खुमाणरासो की जिस प्रति का उल्लेख है उससे प्रस्तुत प्रति कुछ पाठांतरों और 'अथ' से प्रारंभ होनेवाले अंश (जो इसमें नहीं है) को छोड़कर अविकल रूप से मिलती है। मिलान के लिये आदि अंत के थोड़े से उद्धरण दिए जाते हैं:—

पत्रिका में छपे श्री नाहटा जी के लेख से

प्रारंभ—॥ ६६० ॥ श्री अंबिकाय नमः॥ सकल पंडित शिरोमणि पंडित श्री १०८ श्री हिमत्त विजयगा चरण कमले भ्यो नमः॥

॥ गाहा ॥

ॐ ऐं मंत्र अपारं, सारद प्रणमांसि माय सुप सन्नं।
सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं, पूरे वरवेद पढि पुन्नं॥ १॥

अंत—तुरत मजधर तेडिया, दीधा त्या शिरपाव।
तीन नदी वां ··············

प्रस्तुत प्रति से

प्रारंभ—श्री गणेशाय नमः

ओं ऐं मंत्र अपारं। सारद प्रणमांमि माय सुप्रसन्नं।
सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं। पूरे वर ब्रेद पढि पुन्नं॥ १॥

अंत—तुरत गजधर तेड़िया दीध्या त्यां शिरपाव।
तीन नदी वाँ ··· ···

ग्रंथ के प्रत्येक खंड की कथा का वर्णन संक्षेप में इस प्रकार है :—

प्रथम खंड (पत्र १–६५ तक)

शारदा, गणेश और गुरु की वंदना, चित्रकोट (चित्तौड़) का वर्णन तथा सूर्यवंशी राजाओं की वंशावली के अनंतर वाप्पारावल की कथा का वर्णन। कथा यों है:—चित्रकोट रघुवंशियों की राजधानी थी। उनमें से गहिलो नाम का एक पुरुष गांजणगढ़ आया। उसके वंश में श्रीपंजर हुआ जिसके समय में गढ़ मुसलमानों के हाथ में चला गया। श्री पंजर की रानी किसी तरह प्राण बचाकर मेवाड़ भागी और वहाँ किसी नागेल (नागल) द्विज के यहाँ रहने लगी। उसने वाप्पारावल को जन्म दिया। वाप्पारावल जब आठ बरस का हुआ तो वह वन में गाय चराने के निमित्त जाने लगा। वन में उसे हारीत ऋषि के दर्शन हुए। ऋषि की कृपा से उसे शिव जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि वह चित्तौड़ का राजा होगा। ऋषि ने उसको एक लिंग की उपासना करने का भी उपदेश दिया। इन्हीं घटनाओं के क्रम में उसको देवी के भी दर्शन हुए जिसने प्रसन्न होकर सदा उसकी सहायता करने का वचन दिया। आशाओं के साथ-साथ वाप्पा का तेज और उत्साह बढ़ा। उसने चित्रकोट के राजा चित्रसेन के यहाँ प्रति दिन एक लाख मुद्रा- वेतन पर चाकरी कर ली। थोड़े दिन पश्चात् उसे द्रोणगिरि के एक दानव को मारने की आज्ञा हुई जिसने चित्रसेन के राज्य के एक भाग की प्रजा को खाकर समूल नष्ट कर दिया था। वाप्पा ने देवी की सहायता से दानव को मार दिया और गांजणगढ़ को मुसलमान बादशाह (सुलतान साह सलेम) के हाथ से छीन लिया। जब लौटकर आया तो चित्रसेन को मारकर चित्रकोट (चित्तौड़) पर भी अधिकार कर लिया। उसने दानव और चित्रसेन की पुत्रियों से विवाह किया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा। इस समय वाप्पा की अवस्था सोलह वर्ष की थी। संवत् ४९१ (?) में वह चित्तौड़ की गद्दी पर बैठा। संवत् का उल्लेख इस प्रकार है:—

संवत च्यार एकाणुवे एकलिंग अंवाव।
वर दीधो वापावदं लगत कियो सुपचात ॥ २८ ॥

× × ×

शुक्ल पक्ष वैशाख सुध पंचमी पुष्य नषत।
श्री गुरुवासर चित्रगढ़ बेठो वप्प तखत ॥ ३१ ॥

वाप्पा के बावन पुत्र हुए। उनके तरुण हो जानेपर उसने अश्वमेध यज्ञ किया।

इस खंड की पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री दोलत विजय विरचिते वापारो अधिकार संपूर्ण ॥ श्री रघुवंशान्वने वापातें खुमाण बिचें आठ पेढी थई हिवें खुमाण रावल रो अधिकार कहे छें ॥ १ ॥ प्रथम खंड ॥

द्वितीय खंड (पत्र ६६—११० तक)

वाप्पा रावल की ७वीं पीढ़ी (संभवतः) में करण राजा हुआ। उसका पुत्र खुमाण हुआ। करण के पास पुरपट्टन से एक गजधर (?) आया। वह वास्तुशास्त्र का जाननेवाला था। करण ने उसको एक महल बनवाने की आज्ञा दी। जिसके अनुसार उसने महल बनाकर तैयार किया। महल के एक खंड में उसने दिल्ली का चित्र बनाया जिसमें पाँच पद्मिनी स्त्रियों को भी अंकित किया गया था। खुमान इन स्त्रियों पर मोहित हो गया। उसको गजधर से पता चला कि वे दिल्ली के तोमर राजा की पुत्रियाँ हैं। अंततोगत्वा खुमाण का विवाह उनसे हो गया। दूसरा खंड समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपती श्री रघुवंशे वापा पुमांण चरित्रे रति सुन्दरी अभीग्रहकरण चित्रकारिका चरित्र रमण राजकुंवारी पाणी ग्रहण पंचसहेली चित्रगढ़ मिलण दौलतविजय रचिते द्वितीय पंड सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

तृतीयखंड (पत्र ११०–२३० तक)

इसमें खुमान की रतिक्रीड़ाओं और नलवरगढ़ की राजपुत्री तिलोत्तमा के साथ विवाह करने का वर्णन है। नायिका भेद, बारहमासा, षट्-ऋतु और संगीत आदि का विशद वर्णन दिया गया है। इस खंड की पुष्पिका यों है:—

इति श्री रघुवंशे चित्रकोटाधिपती वापारावल पट्टालंकार रावल करण तनुज पुंमाण चरित्रे दंपति संवाद पंच सहेली आपेटक अधिकार नलवरगढ़ गमन लाषागृहे तिलोत्तमा आगमण धींगा गवरी पुनर पीटेटन मृत संजीवन एकत मिलन सामान्य वनिताष्टनायका भाव नवरस विलास त्रितियोपंड सपूर्णम् ॥ ३ ॥

चतुर्थखंड (पत्र २३०–४०८ तक)

इसमें खुमान का महम्मद गजनी के साथ घोर युद्ध का वर्णन है। युद्ध में खुमान को विजय श्री मिली। पश्चात् करण रावल ने खुमान को गद्दी पर बिठाया और स्वयं काशी वास करने लगा। करण ने ६१ वर्ष २० दिन राज्य किया। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री सूर्यवंशे वापारावल पट्टालंकार करण पुमांण चरित्रे संदेशा मोचन पुनः प्रीयतेडण चित्रगढ़ आगमन गजनीपत महमद पातसाह चित्रगढ़ आगमनं सामंत जुद्धकरणं सामंत नायका जुद्धकरणं पातशाह ग्रहें मोंचन कांनड़देक सामोड रति सुंदरी देवल दे इत्यादिक चरित्रे यं दौलत विजय विरचिते नवरस विलास ग्रंथस्य चतुर्थें पंड संपूर्ण ॥४॥

पंचमखंड पत्र (४०८–४५१ तक)

आलणसी चित्तौड़ का राजा हुआ। उसका गुजरात के राजा जयसिंह से युद्ध हुआ जिसमें आलणसी को विजय प्राप्त हुई। जयसिंह ने उससे अपनी पुत्री का विवाह कर जान बचायी। पश्चात् आगे के रावलों की वंशावली दी है, जिसमें समरसिंह का उल्लेख

है। उसने दिल्लीपति पृथ्वीराज को अपनी पुत्री विवाही। पृथ्वीराज ने संयोगिता (जयचंद की पुत्री) के साथ बलपूर्वक विवाह किया। महम्मदगोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया और संयोगिता को माँगा। इसपर लड़ाई छिड़ गई। समरसिंह पृथ्वीराज की ओर से लड़ा और वीरतापूर्वक मारा गया। इसी प्रसंग में पृथ्वीराजरासा (पत्र ४२५) का भी उल्लेख है। यहाँ से चित्तौड़गढ़ के रावलों (गहलोतों) की पदवी राया हुई। भीम चित्तौड़ का रावल हुआ। इसका छोटा भाई भारत था। इनके पिता का नाम सूरजमल था। भारत दिल्ली दरबार में चला गया। भीम को पुत्री के अतिरिक्त और कोई संतान न थी। अतः उसने अपने जामाता को चित्तौड़ का उत्तराधिकारी बनाया। परंतु भीम की मृत्यु हो जाने के पश्चात् राजविद्रोह हुआ और भारत (भीम के छोटे भाई) को बुलाया गया। अंत में राहप (?) को राजगद्दी मिली और वह प्रथम राणा हुआ। इस खंड की पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपति सूर्यान्वये बापारावल पट्टालंकार करण पुमांण संताने राणा राहप अधिकारेयं दौलतविजय विरचिते आलणसी रावल समरसिंघ रावल अधिकारे पंचम खंड संपूर्णम् ॥ ५ ॥

षष्टम खंड (पत्र ४५१–५१६ तक)

इसमें रतनसेन पद्मिनी की कथा दी हुई है। अलाउद्दीन पद्मिनी के लिये चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है जिसमें वह हार जाता है। पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपति बापा खुमाणात्वने राणा रतनसेन पद्मिनी गोराबादल संबंध किंचित पूर्वोक्तं किंचीत ग्रन्थाधिकारेण पं० दौलतविजय विरचितोयं (षष्टा) धिकारं संपूर्णम् ॥ ६ ॥

सप्तम खंड (पत्र ५१६–५६८ तक)

इस खंड में हम्मीर और अलाउद्दीन तथा राणा सांगा और बाबर की लड़ाइयों का वर्णन है। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री वी दलपती विरचितोयं बापा पुमाण वंशा नृत्रने पंड सप्तमो समाप्तं।

अष्टम खंड अपूर्ण (पत्र ५६८–६१२ तक)

यह खंड अपूर्ण है। इसमें संख्या ५६८ से ६१२ तक के ही पन्ने हैं। जितना अंश उपलब्ध है उसमें विक्रमसिंह, वनवीरसिंह, उदयसिंह, प्रतापसिंह, अमरसिंह, करणेश जगतसिंह और राजसिंह तक के राणाओं का वर्णन है। राणा उदयसिंह और राणाप्रतापसिंह का वर्णन कुछ विस्तार से है।

रचयिता ने अपने नाम दलपति और कवि दल्ल भी दिए हैं। ये अपने को देवीसुत और कमलासुत लिखते हैं। तपगछ साधुओं की परंपरा में ये शांतिविजय के शिष्य (तनुज) थे।

तपगछ गिरुआ गणधार। सुमति साधू वसें सुपकार ।। ९६ ।।
पंडित पदमविजें गुरुराय। पट्टोदय गिरि रवि कहवाय ।। ९७ ।।
जयबुध शांति विजयनो शीश। जंपैं दौलत मनह जगीस ।।

—द्वितीय खंड, पत्र संख्या ११०।

सोहे तपगछ कुल सिणगार। पंडित पद्मविजय सिरदार ।।
जय विजें पंडित जयकार। शिशु तस शांति विजय सुपकार ।। ५५ ।।
तास तनुज उलट चित धरी। सेवें शक्त त्रिपुर सुंदरी ।।
किल कायम कवियण दौलती। गुण रचियो गुणवेधकवती ।।५६।।

—तृतीय खंड, पत्रसंख्या २३०।

जय सीस शांति सुधिराज सुत करजोडी दलपति कहैं।

—चतुर्थ खंड, पत्र संख्या ४०७।

बड़े अक्षरों वाले पद से विदित होता है कि इन्होंने त्रिपुर सुंदरी की सेवा करके उलटा कार्य किया। इनकी परंपरा इस प्रकार है:—

सुमतिसाधु > पं० पद्मविजय > जय विजय > शांतिविजय > दौलतविजय। इस परंपरा से यह स्पष्ट नहीं होता कि यह वंशानुक्रम से है या गुरुशिष्य के अनुक्रम से। अन्य परिचय अज्ञात है। श्री अगरचंद नाहटा ने अपने लेख में जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है, शांतिविजय का समय सं० १७३३–५६ वि० के लगभग निश्चित करके वही इनका भी समय माना है।

वीरगाथा काल के ग्रंथों में 'खुमानरासो' का स्थान सर्वप्रथम माना जाता है। परंतु यदि हम प्रस्तुत ग्रंथ को वही खुमानरासो मान लें तो यह भूल होगी। बाह्य और अभ्यंतर के परीक्षण से यह बहुत पीछे की रचना सिद्ध होती है। सबसे पहली बात तो यह है कि इसकी भाषा बहुत प्राचीन नहीं है। दूसरी बात यह है कि इसमें राणा राजसिंह तक का वर्णन मिलता है। तीसरी बात यह कि इसमें कुछ इधर के कवियों की भी रचनाएँ दी गई हैं, जिनमें आलम (अकबरकालीन) भी एक है। आलम का सुप्रसिद्ध कवित्त 'प्रेम रंग पगे जगमगे' उद्धृत है, पर इसके केवल तीन ही चरण दिए हैं जो बहुत ही विकृत रूप में इस प्रकार हैं :—

प्रेम जगजगें जगमगे जामनी के जोबन को जोति हुते ज्यूं उमहत हैं।
आलंम नमत हो नीक्याई नीके नयन की कमल पाँप पर भौर फरत है।
चाहत हैं उड़वे कूं देपत मयंक मुखी जानत हैं रयण ताते ताहि में रहत हैं ।।९२।।

मूल कवित्त इस प्रकार है:—

प्रेम रंग पगे जगमगे जगे जामनि के, जोबन की जोति जगि जोर उमगत हैं।
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं, झूमत हैं झुकि झुकि झंपि उघरत हैं।

आलम सो नवल निकाई इन नैनन की, पाँखुरी पदुम पै भंवर थिरकत हैं।
चाहत हैं उड़िबे को देखत मयंक मुख, जानत हैं रैनि तातें ताहि में रहत हैं॥

चौथी बात यह है कि इसमें कहीं कहीं खड़ी बोली मिश्रित पद भी दिये हैं, परंतु उनमें खड़ी बोली के जो रूप प्रयुक्त हुए हैं वे बहुत प्राचीन काल के नहीं हैं। उदाहरण के लिये 'हरिवंश स्वामी' का एक सवैया दिया जाता है:—

मेरा चित्त बसें उस मित की पास तौं मित का चित्त की जाणे बिधाता।
तां बिछड़ां मोहि खान न भावै नो पाणी न फूल न पान सुहाता।
जागत जागत रैन पड़ी मही नींद न आवें जी सेझ सुहाता।
'हरिवंस' के सामी कूँ ऐसे भजूं, जैसें सावण बूँद पपीहा लुभाता॥ २२०॥

सवैया छंद भी बहुत प्राचीन नहीं है।

पाँचवीं बात यह है कि इसमें कहीं भी 'खुमानरासो' अथवा 'खुमानरास' नाम नहीं आए हैं।

छठीं बात यह है कि इसके अनुसार खुमाण का युद्ध महम्मद गजनी के साथ हुआ था न कि खलीफा अलमामू के साथ।

१०० दलेल सिंह—इनके निम्नलिखित ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं:—

(१) मुक्ति रत्नाकर—यह विशालकाय ग्रंथ है, इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल सं० १७५५ है। लिपिकाल दोनों प्रतियों का अज्ञात है। विषय—गोलोक का वर्णन और राधा कृष्ण एवं उनके अवतार लेने के हेतु का वर्णन करता है। साथ साथ वदरिकाश्रम सतशृंग, व्यंकटादि (जो गोलोक में माना गया है), गंगा चरित्र, तुलसी चरित्र, कैलाश और अवधपुरी (इसको भी गोलोक में माना है) का भी वर्णन है। इनमें १४ अध्याय हैं जिनके नाम रत्नप्रकाश रखे गए हैं। इसकी एक प्रति अपूर्ण है।

(२) राम रसार्णव—यह भी विशालकाय ग्रंथ है। इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से दो अपूर्ण हैं। रचनाकाल संवत् १७५० और लिपिकाल संवत् १८६५ एवं फसली सन् १२४६ हैं। विषय—प्रधानतः रामचरित्र का वर्णन है। इसके अतिरिक्त दशावतार, हरिश्चंद्र चरित्र, सहस्रनाम, मार्कण्डेय चरित्र, माया दर्शन, गाधि चरित्र आदि का भी वर्णन है। इसमें अध्यायों के बदले 'तरंग प्रकाश' नाम हैं जिनकी संख्या एक प्रति में ५२, दूसरी में ३० तथा तीसरी में ४६ हैं। दूसरी प्रति प्रथम प्रति से प्राचीन जान पड़ती है। प्रथम प्रति में ग्रंथ रचना का समाप्तिकाल भी दिया है जो सं० १७५३ है।

(३) शिवसागर—यह भी बृहद् ग्रंथ है। इसके तीन हस्तलेखों के विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल संवत १७५७ है लिपिकाल तीनों के क्रमशः सं० १८१६, १८४८ और १८९६ हैं। विषय—ब्रह्मवैवर्त तथा अन्य पुराणों के आधार पर देवदेवी प्रादुर्भाव, सृष्टि वर्णन, नारद, प्रकृति, गंगा, तुलसी, सावित्री, गणपति तथा गोलोक और शिव एवं श्री कृष्ण चरित्र का वर्णन किया गया है। ग्रंथ में अध्याय का नाम 'तीर्थ संगम' दिया है। समस्त 'तीर्थ संगमों' की संख्या ३३ है। इसके प्रस्तुत हस्तलेखों की पुष्पिकाओं में एक-एक संवत् और दिया है। प्रथम दो प्रतियों का संवत् तो मिलता है जो सं० १७७१ है, परंतु तीसरी प्रति का इनसे भिन्न संवत् १७६३ है।

महि[1] मुनि[7] सागर[7] सिंधु[1] सुत भौ संवत् जब ख्यात।
पुस्तक लिखि पूरन किए सिव सागर सिवदान॥

(प्रथम दो प्रति)

स्मत दीन्हेउ राम[3] रस[6] दिन[7] ससि[1] मास वैसाप।
उमडेउ सागर शंभु कै पूरन जन अभिलाष॥

(तीसरी प्रति)

इससे पता चलता है कि मूल प्रति की नकल एक बार सं० १७६३ में हुई होगी और फिर संवत् १७७१ में। पहली दूसरी प्रतियाँ १७७१ की अनुलिपि वाली शाखा में हैं, तीसरी प्रति १७६३ वाली शाखा में। इस ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (२०-३२) पर हो चुका है।

काव्य की दृष्टि से प्रथम दो ग्रंथ महत्वपूर्ण हैं। शिव सागर विशेषतः पौराणिक ग्रंथ है।

तीनों ग्रंथों की शैली रामचरित मानस की सी है। इनमें भी दोहे और चौपाइयाँ हैं। साधारणतः सात-सात चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा है। भाषा अवधी है जिसमें ब्रजी, मगही और भोजपुरी के भी शब्द मिश्रित हैं।

रचयिता, राजा दलेल सिंह करनपुरा के राजा हिम्मत सिंह के पौत्र और राजा रामसिंह के पुत्र थे। खोज विवरण (२०-३२) पर इन्हें चौहान क्षत्रिय कहा गया है।

निवास स्थान का नाम 'रागरसार्णव' में रामगढ़ और 'शिव सागर' में शिवगढ़ दिया है। इसके अतिरिक्त ग्रंथों के द्वारा इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता; परंतु डुमराँव निवासी पं० अक्षयवट मिश्र के एक पत्र द्वारा इनके संबंध में कुछ ज्ञातव्य बातें प्रकट हुई हैं। मिश्र जी ने रचयिता के उक्त तीन ग्रंथ तथा चतुरदास कृत भागवत एकादशस्कंध, इन चारों को अपनी मृत्यु से पहले सभा को दिया था। हस्तलिखित ग्रंथों

में प्रत्येक ग्रंथ का संक्षिप्त परिचय दिया है। प्रस्तुत रचयिता के विषय में उन्होंने जो कुछ लिखा है वह यों है :—

'करणपुरा के राजा हेमंतसिंह उनके पुत्र रामसिंह उनके पुत्र दलेल सिंह थे जिनकी यह रचना है। करनपुरा को छोड़कर ये लोग रामगढ़ में रहने लगे। 'राम रसार्णव' में रामगढ़ और 'शिवसागर' में शिवगढ़ लिखा है। ये लोग या तो दोनों के मालिक थे अथवा एक ही किले के दो नाम थे। अब भी करनपुरा (मगह) में है। रामगढ़ में क्षत्रिय लोग निवास करते हैं। राजा दलेल सिंह कवि और अच्छे ग्रंथकार थे।'

मिश्रजी ने यह भी लिखा है कि रचयिता के स्वनिर्मित और भी ग्रंथ हैं।

प्रस्तुत खोज विवरण में आए पद्मन (संख्या १२१) के आश्रयदाता दलेलसिंह भी प्रस्तुत रचयिता ही हैं।

१०१ दशरथ—इनके दो ग्रंथ 'नवीन' और 'वृत्त विचार (पिंगल)' मिले हैं। पहले ग्रंथ की तीन प्रतियाँ मिली हैं। इसका विषय नायिकाभेद है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल दो प्रतियों में संवत् १७९२ है और तीसरी में संवत् १८६९। प्रथम दो प्रतियों में पुष्पिका के बाद कविवंश का उल्लेख किया है और फिर संवत् का वर्णन है। यह संवत् रचनाकाल का न होकर लिपिकाल का होना सिद्ध होता है, क्योंकि कवि वंश वर्णन में जो दोहे दिए गए हैं उनमें दोहों की संख्याएँ ग्रंथ में आए दोहों के क्रम से दी हुई हैं। संवत् के दोहे में संख्या का क्रम उनसे संबद्ध न होकर आगे लिपिकर्त्ता के नाम वाले दोहे से संबद्ध है। ये केवल दो दोहे हैं जिनमें क्रम संख्याएँ १–२ दी हुई हैं तथा जिनमें संवत् और लिपिकर्त्ता का वर्णन है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि यह रचनाकाल न होकर लिपिकाल है। इसके लिपिकर्त्ता हरजू मिश्र थे जो जौनपुर निवासी और बिहारी सतसई के दोहों के नवीनक्रम से संपादन करनेवाले थे। देखिए प्रस्तुत विवरण में 'हरजू मिश्र'। रचयिता ने अपना जो वंश वर्णन दिया है उसके अनुसार वे असनी के महापात्र नरहरि के बंधु सदबंधु के पुत्र चतुर्भुज के वंशज थे:—

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु सदबंधु।
तिन तनभो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु॥ ४२८॥
तिन कुल पंचादरति कवि भौ 'दशरथ' इहिनाम।
काढ़्यो निजबुधि सिंधुमथि एक नवीन ललाम॥ ४२९॥

विषय की दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है।

दूसरे ग्रंथ 'वृत्त विचार (पिंगल)' में छंदशास्त्र का संक्षेप में प्रतिपादन है। इसके साथ-साथ राम का यश भी वर्णित है। यह प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में उल्लिखित 'इति रघुवर कीर्तए्...' से स्पष्ट है। इसमें मात्रावृत्त, वर्णवृत्त और उभय वृत्तों का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १७९३ है।

प्रस्तुत दोनों ग्रंथ पहले भी मिल चुके हैं, देखिए खोज विवरण (९-५७, ५८) (६-१५३)। इनके अनुसार ये ग्रंथ अलग-अलग रचयिताओं के माने गए हैं तथा 'वृत्त विचार' और 'पिंगल' को एक दूसरे से भिन्न माना गया है। वास्तव में ये एक ही रचयिता के जान पड़ते हैं। इसका एक कारण तो यह है कि इस बार ये दो ग्रंथ (नवीन और वृत्तविचार) एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध मिले हैं जिससे प्रकट होता है कि एक ही रचयिता की कृति मानी जाने के कारण ऐसा किया गया होगा। दूसरा कारण यह है कि दोनों ग्रंथ रीति विषयक हैं। एक नाम के दो रचयिताओं द्वारा की गई एक ही प्रकार की रचना संभवतः देखने में नहीं आती। अतः दोनों ग्रंथों को एक ही रचयिता का मानने में कोई अड़चन नहीं पड़ती। 'वृत्त विचार' और 'पिंगल' भी एक ही ग्रंथ हैं। इस बार मिली 'वृत्त विचार' ग्रंथ की प्रति के प्रत्येक पत्र के कोने में 'पी' अक्षर लिखा हुआ है। इससे स्पष्ट होता है कि 'पी' से 'पिंगल' का ही अर्थ है। अतः ये दोनों नाम एक ही ग्रंथ के हैं। इन्हें अलग-अलग मानने में जो भूल हुई है उसका कारण खोज विवरण (१९०६-८ सं० १५३) में आए पिंगल ग्रंथ का उद्धरण न दिया जाना है।

१०२ दामोदर दास 'हित'—इनका उल्लेख पिछले दो खोज विवरणों में हो चुका है, देखिए खोज विवरण (१२-४६) (२९-७४)। इनके अनुसार ये राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे। श्री हित हरिवंश जी के तृतीय पुत्र श्री गोपीनाथ जी के शिष्य श्री लाल स्वामी इनके गुरु थे। इनका समय सं० १६८७ है। प्रस्तुत खोज में इनकी तीन रचनाएँ और मिली हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं:—

१—दामोदर स्वामी के पद—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय होली के अवसर पर श्री कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन।

२—राधा कृष्ण वर्णन—रचनाकाल लिपिकाल अविदित। विषय—राधा कृष्ण के प्रेम का वर्णन।

३—हरिनाम महिमा—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल सं० १८६४। विषय - हरिनाम की महिमा का वर्णन।

१०३ दिनेश पाठक—इन्होंने 'रसिक संजीवनी' की रचना की जिसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। एक प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। दूसरी में रचनाकाल संवत् १७२४ और लिपिकाल सं० १७६४ दिए हैं। इस प्रति में रचयिता का परिचय भी दिया है जिसके अनुसार ये मगपुर पट्टन के निवासी दामोदर ब्राह्मण के पुत्र थे। ये सोन गंगा के बीच में बसे भोजपुर नामक नगर के राजा अमर साहि के अनुज प्रबल सिंह के आश्रय में रहते थे। आश्रयदाता का वंशवृक्ष निम्नलिखित है:—

राम साहि

|

संग्रामसाहि

|
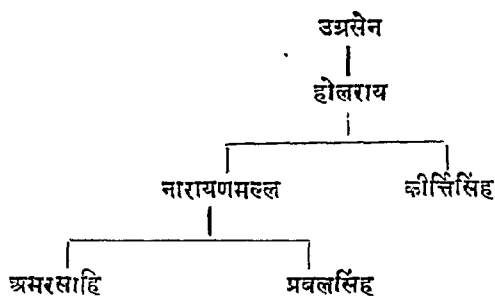
इस दृष्टि से ग्रंथ का ऐतिहासिक महत्व भी है। इसका विषय रसों का प्रतिपादन और नायिका भेद का वर्णन है। परंतु श्रृंगार के अतिरिक्त और रसों का वर्णन केवल नाम के लिये ही है। इसमें ग्रंथकार ने राधा कृष्ण के प्रति भक्ति भावना भी व्यक्त की है, यथाः—

श्री राधा राधा रमन के किए यथा गुनगान।
भई रसिक संजीवनी हरि भगतन की प्रान ॥

रचयिता का पता प्रथम बार ही चला है।

१०४ दिलेराम—दिलेराम 'अलंकार दीपक' ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ का विषय, जैसा उसके नाम से प्रकट है, अलंकारों का वर्णन करना है। इसमें यद्यपि लक्षण और उदाहरण पद्य में हैं, तथापि इन्हें अधिक स्पष्ट करने के लिये व्रजभाषा गद्य का भी प्रयोग किया गया है। रचनाकाल सं० १८४५ की श्रीकृष्ण जन्माष्टमी हैः—

बाग[५] वेद[४] धृति[१८] शक भए श्री विक्रम भूपाल।
अलंकार दीपक रच्यो जनमाठे नंदलाल ॥

लिपिकाल अज्ञात है। ग्रंथ महत्वपूर्ण है।

रचयिता ने ग्रंथांत में अपना परिचय दिया है जिसके अनुसार ये व्रज के तरसोपरि ग्राम के मधुसूदन पांडे के पौत्र और घनश्याम पांडे के पुत्र तथा शिव प्रसाद के शिष्य थे। घनश्याम पांडे के पाँच भाई थे। एक भाई का नाम जयचंद था जो विशेष प्रसिद्ध हुए। अन्य भाइयों का नाम नहीं दिया है।

गुरु के नाम का उल्लेख यों है :—

शिवरूप (रूपी) शिव के वरन शिवप्रसाद पदध्यायी (इ)।
अलंकार दीपक कर्‌यो भाषा में सुखपाई (इ) ॥ २ ॥

१०५ दुखहरण—इनके लिए देखिए विवरण अंश संख्या—२ जहाँ इनका उल्लेख विस्तृत रूप से किया गया है।

१०६ दुर्गादेवी (अज्ञात)—प्रस्तुत खोज में इनके नाम से एक 'साठिका' ग्रंथ मिला है। विवरणपत्र पर उद्‌धृत अंशों में कहीं भी दुर्गादेवी का नाम नहीं मिलता और न

अन्वेषक ने यही लिखा है कि किस स्थान पर इनका उल्लेख है। देवी भागवत में देवी द्वारा संवत्सरों का वर्णन है। हो सकता है, अनुवाद में 'दुर्गादेवी उवाच' होने से दुर्गादेवी को रचयिता मान लिया हो। अस्तु।

ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है, परंतु लिपिकाल संवत् १७५९ है। ग्रंथ गद्य में लिखा गया है जिसमें खड़ी बोली के भी रूप मिलते हैं।

अनुवादक के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं।

१०७ देवकी नंदन साहब—प्रस्तुत रचयिता की निम्नलिखित चार रचनाएँ मिली हैं:—

१—चतुर मासा तथा फुटकल पद—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १८८६। इसमें चौमासा, श्री कृष्ण चरित्र तथा अध्यात्म आदि विषयों का वर्णन है। इसका नाम नहीं दिया है। इसमें चौमासा और फुटकल पद संगृहीत हैं।

२—शब्द—रचनाकाल अप्राप्त, लिपिकाल सं० १८८६। विषय—निर्गुण तथा सगुण भक्ति का वर्णन।

३—शब्द—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल सं० १८८६। विषय—इसमें कृष्णलीला तथा अध्यात्म संबंधी पदों का संग्रह है।

४—कुंडलियाँ—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८८६। विषय—संसार से विरक्तिपूर्वक राम नाम का स्मरण।

ये रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। विषय की दृष्टि से ये प्रौढ़ रचनाएँ हैं। 'शब्द' और 'कुंडलियाँ' साहित्यिक दृष्टि से भी सुंदर हैं। इनसे रचयिता की कवित्वशक्ति का परिचय मिलता है। रचनाओं में झूलना, हिंडोल, चंचरीक, कवित्त, अरिल्ल तथा कुंडलिया आदि छंद प्रयुक्त हुए हैं। रचयिता का नाम प्रत्येक पद तथा कुंडलिया में दिया है। ग्रंथों में कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं। ग्रंथस्वामी श्री राजाराम जी का, जो कि चिटबड़ागाँव (बलिया जिला) में सत्यनामी पंथ के एक मठ के महंत हैं, कहना है कि ये उनके (महंत जी के) परबाबा थे। श्री गुलाल साहब के शिष्य श्री हरलाल साहब के वंश में उत्पन्न श्री तेजधारी साहब इनके पिता थे। ये जाति के कौशिक क्षत्रिय थे।

'चतुरमासा' के पश्चात् भिन्न स्याही में कुछ श्लोक और दोहे लिखे हैं जिनमें रचयिता की मृत्यु तिथि सं० १९१३ दी हुई है :—

गुण^{3} ससि^{1} ग्रह^{9} मेकं^{1} सम्वते सुप्रमाणं दिनकर दिन मध्ये श्रावने शुक्ल नौम्यां।
सुनपत अनुराधे लग्नतूले सुप्यातः तनु तजि ब्रह्मलीनं देवकी नंदनोयं॥ १॥
राम^{3} चन्द्र^{1} ग्रह^{9} चन्द्रे^{1} नवम्यां श्रावणे सिते देवकी नंदनोदेहा रवौ ब्रह्मत्वमाप्तवान्॥१॥

गत संवत् उनतीस सत अधि त्रैयोदस जान।
श्रावन सीत नौमी तिथी रवीवासर परमान ॥ १ ॥

बुध्यमान गुननिधि चतुर देवकी नंदन उदार।
तजि शरीर स्वतत्र प्रभु भार मिले करतार ॥ २ ॥

वोणइस सत तेरह अधीक शंवतगत अस्थूल।
श्रावन शुक्ल सुखंड तिथि रविदिन मंगलमूल ।।१।।
सीयाराम पद ध्यान करि गुरुपद कमल सनेह।

देवकी नंदन सुगवन करि राम धाम तजि देह ॥ २ ॥
संवत जानहु धीर गुन[3] शशि[1] ग्रह[9] गन द्वीज [1]।
देवकी तजेउ सरीर रवि नउमी श्रावन सुकल ॥

मृत्युकाल से प्रकट होता है कि प्रस्तुत हस्तलेख रचयिता के जीवन काल में ही लिखा गया था। इसमें भिन्न स्याही से मृत्युकाल के लिखे जाने का कारण उचित है, क्योंकि वह मृत्यु के पश्चात् लिखा गया है।

इन संवतों से स्पष्ट है कि रचयिता सं० १८८६ से पूर्व वर्तमान थे। ये चिटवड़ागाँव में सत्यनामी (ऐसा मठ के वर्तमान महंत से ज्ञात हुआ) मठ के महंत थे।

इनकी गुरु परंपरा बावरी साहिबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब और गुलाल साहब से प्रारंभ होती है (देखिए प्रस्तुत खोज में भीखा साहब का विवरण)।

१०८ देवदत्त—इनके रचित 'इंद्रजाल' में नाना प्रकार के फल देनेवाले जंत्र-मंत्रों का संग्रह है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का नाम इसमें कई बार आया है। इसके अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता।

१०९ देवलनाथ—प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ वाणियाँ विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' और गोरखनाथ संख्या—५९ तथा विवरण अंश संख्या १। इन्हें सिद्ध कहा गया है। विशेष वृत्त अज्ञात है।

११० देवाराम बाबा—इनके भक्ति संबंधी 'कुछ पद' मिले हैं। इनके रचनाकाल और लिपिकाल के विषय में कोई पता नहीं चलता। अधिकांश पदों की रचना भोजपुरी भाषा में की गई है।

रचयिता के विषय में इन पदों द्वारा कुछ विदित नहीं होता। ग्रंथ स्वामी पं० साधुशरण तिवारी से जो कुछ ज्ञात हुआ वह यों है:—

देवाराम बाबा प्रसिद्ध महात्मा हो गए हैं। ये बिहार प्रांत के आरा जिला में डाकखाना उमरावगंज के अंतर्गत कारजा ग्राम के निवासी थे। सन् ५७ के गदर में मारे गए सुप्रसिद्ध कुँवर सिंह के समय में वर्तमान थे। कुँवरसिंह ने इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके

कुटुम्ब के नाम ५० बीघा जमीन निःशुल्क दी थी जो अभी तक चली आती है। बाबा जी के विषय में बहुत सी अलौकिक बातें कही जाती हैं।

१११ देवीदास व्यास--इनकी 'नारद नीति' महाभारत के सभापर्व के एक अध्याय का हिंदी रूपांतर है। राजसूय यज्ञ के अवसर पर नारद ऋषि ने महाराज युधिष्ठिर को राजा के धर्म, कर्म और नीति विषय पर जो उपदेश दिया था उसीका इसमें वर्णन है। रचनाकाल संभवतः संवत् १७२० है:—

संमत सतरह से ससै वीसैं करण विवेक।
रसिकराज कारण रची टीका अर्थ अनेक॥

इसमें सतरह से तो स्पष्ट है। उत्तर पद 'वीसै करण विवेक' का 'वीसै' शब्द बीस संख्या का सूचक जान पड़ता है जिससे संवत् १७२० निश्चित होता है।

लिपिकाल संवत् १८६८ है। ग्रंथ गद्य में लिखा गया है जिसकी भाषा अधिकांश राजस्थानी है।

इसकी रचना महाराज करणेश के पुत्र राजकुमार अनूपसिंह के निमित्त हुई है। यह राजवंश बीकानेर का जान पड़ता है, देखिए खोज विवरण (२-७६)।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि ये राजकुमार अनूपसिंह के आश्रित थे।

११२ देवीदास—इस रचयिता की 'अंगदवीर' नामक रचना मिली है। इसमें सत्तर रेखते हैं जिनमें अरबी-फारसी शब्दों का बाहुल्य है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पुस्तक में रावण की सभा में अंगद की वीरता का वर्णन है।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में आए 'ए देवीदास हरफ करो आवत मम तुम' के आधार पर देवीदास मान लिया गया है। इसके अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं है।

११३ द्विज प्रयोग (प्रयाग)—इन्होंने लावनी में 'नागलीला' की रचना की जिसमें श्री कृष्ण द्वारा कालियनाग के दमन का वर्णन है। रचना खड़ी बोली में है। अरबी फारसी के भी शब्द प्रयुक्त हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख न होने से यह नहीं कहा जा सकता कि खड़ी बोली का यह रूप किस काल का है। इसमें संदेह नहीं कि ख्याल और टप्पाबाजों की ही तरह लावनीबाज भी खड़ी बोली के प्रसार के कारण थे। इनका समय १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से आरंभ होता है। अतः प्रस्तुत रचना भी इसी काल की हो सकती है।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में आए 'द्विज प्रयोग प्रभु को यह लीला छंदलावनी गान करै मधुरमूर्ति नटवर गिरधारी' से 'द्विज प्रयोग' (प्रयाग द्विज) विदित होता है। और वृत्त अप्राप्त है।

११४ धरनीदास—इनके लिये देखिए विवरण अंश में संख्या १२ जहाँ इनका उल्लेख विस्तृत रूप में किया गया है।

११५ धुँधलीमल—इन्हें सिद्धों में गिना गया है। इनकी वाणियों का विवरण 'सिद्धों की वाणी' के विवरण के साथ लिया गया है। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या—५९ और विवरण अंश में संख्या—१। इनका वृत्त और समय अज्ञात है।

११६ ध्यानदास—इस रचयिता के तीन ग्रंथ मिले हैं जिनके नाम विषयादि के अनुसार नीचे दिए जाते हैं:—

१—गुण माया संवाद जोग ग्रंथ—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—गुण और माया से रहित होकर भगवद्भक्ति करने का उपदेश।

२—गुणादि बोध जोग ग्रंथ—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—शून्य का स्वरूप वर्णन।

३—हरिचंद सत—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—राजा हरिचंद की कथा।

ये रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। हस्तलेख के लिये कृपया देखिए प्रस्तुत विवरण में 'सेवादास'। हस्तलेख सभा में ही है।

तीसरा ग्रंथ खोजविवरण (१–१०७) में आ चुका है। उसमें इन्हें साधुशरण का गुरु कहा गया है। अन्य वृत्त अब भी अप्राप्त है। इनके अन्य दो ग्रंथों—दानलीला और मानलीला का उल्लेख खोज विवरण (६–१६० ए, बी) में हुआ है।

११७ ध्रुवदास—ये सुप्रसिद्ध भक्त कवि श्री आचार्य हित हरिवंश जी के शिष्य एवं उन्हीं के अनुयायी थे। इनके बहुत से ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोज विवरण (००–८, १३, १८, १९, २०, २१) (२–२६४, २४४) (६–१५९) (३८–४२)। ये संवत् १६८६ के लगभग वर्तमान थे। इस बार इनकी निम्नलिखित रचनाएँ और प्राप्त हुई हैं:—

१—भजनाष्टक—इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८३५ दिया है। विषय है श्री राधाकृष्ण की भक्ति का उपदेश। इसमें केवल दो दोहे हैं।

२—शृंगार मनी—रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात। एक सौ दो दोहों में राधा के अंगों का शृंगारपूर्ण वर्णन है।

३—रसमंजरी—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—राधा कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन।

४—प्रिया जू की नामावली (नामावली या प्रिया नामावली)—इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं। विषय—श्री राधा जी के नामों का वर्णन।

रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल केवल एक प्रति में दिया है—संवत् १८३५।

५—दानविनोद—रचनाकाल तथा लिपिकाल अप्राप्त। विषय है दानलीला।

६—आनंदाष्टक—दो प्रतियाँ मिली हैं। दूसरी प्रति में भजनाष्टक भी संमिलित है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए हैं। आठ दोहों में राधाकृष्ण का गुणगान है।

११८ नंददास—अष्टछाप के प्रसिद्ध कवियों में से एक और गुसाईं विठ्ठलनाथ जी के शिष्य जो संवत् १६२४ के लगभग वर्तमान थे। इनकी बहुत सी रचनाएँ पिछले खोज विवरणों में आ चुकी हैं, देखिये खोज विवरण (१–११, ६९) (२-५८, ७०,२०९) (३–१५२) (६–२००) (९–२०८) (२३–२९४) (१७–११९) (पं० २२–७२)।

प्रस्तुत शोध में इनकी दो रचनाएँ, १—नायक नायिका भेद और २—नाम चिंतामणि माला और मिली हैं। पहले का विषय उसके नाम से ही प्रकट है। संस्कृत की श्री भानुदत्त कृत रसमंजरी के आधार पर इसकी रचना हुई है। पंचाध्यायी की तरह इसकी भी रचना एक मित्र के कहने से हुई:—

'एक मीत हमको अस गुन्यो। मैं नायका भेद नहिं सुन्यो।'

× × × ×

'रसमंजरी अनुसार करि नंद सुमति अनुसार।'

—नायिकाभेद

नाम का ऐसा ही उल्लेख नाममाला में भी है:—

'तिनहिं नंद यथा सुमति रचत नाम की दाम'

इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। इसी ग्रंथ का उल्लेख पिछले खोज विवरण (६–२००) पर हुआ है; परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए गए हैं। इस बार इसके उद्धरण प्राप्त हुए हैं। इसमें श्री कृष्ण के नामों का वर्णन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल इसमें भी नहीं दिए गए हैं।

११९ नरसी मेंहता—इनकी 'हारसमय हारमाला' नामक रचना का विवरण लिया गया है जिसमें एक सौ सोलह पदों का संकलन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९४४ है। विषय भक्ति है। इसकी भाषा पछाहीं हिंदी है जिसमें गुजराती का अधिक मिश्रण है।

नरसी मेहता का नाम भक्तों में प्रसिद्ध है। प्रस्तुत रचना द्वारा इनका कोई वृत्त ज्ञात नहीं होता।

१२० नरहरि (महापात्र)—इनके ग्रंथ 'रुक्मिणी मंगल' का उल्लेख खोज विवरण (३–११) पर हो चुका है। ये संवत् १६०७ के लगभग वर्तमान थे। ये जाति

के भाट तथा बादशाह अकबर के आश्रित थे। इन्हीं की प्रार्थना पर बादशाह ने गोवध बंद कर दिया था। ये असनी निवासी थे।

प्रस्तुत त्रैवार्षिक खोज में इनके कवित्त 'नरहरि के कवित्त या कवित्त नरहरि महापात्र के' नाम से विवृत हुए हैं। इसमें इनके केवल कवित्त ही नहीं हैं दोहा, छप्पै और कुंडलियाँ भी हैं। इनकी समस्त संख्या १२४ है। विषय विविध हैं जैसे, सोने, लोहे को वादु (झगड़ा), तेली तमोली को वादु आदि। इनके अतिरिक्त कुछ प्रशस्तियाँ हैं और फिर भक्ति विषयक रचनाएँ। प्रशस्तियों में शेरशाह और वीरसिंह नृपति का उल्लेख पाया जाता है।

रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। दोनों प्रतियों का पाठ दोष पूर्ण है।

१२१ नवनिधि दास (बाबा)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या १३ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

१२२ नवलदास साहि—ये 'वद्र्धमान पुराण' नामक जैन ग्रंथ के रचयिता हैं। इनका कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ के रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८२५ में वर्त्तमान थे।

ग्रंथ में भगवान् महावीर का पवित्र चरित्र वर्णित है। रचनाकाल सं० १८२५ तथा लिपिकाल सं० १९५१ है।

रचना दोहा, चौपाई और छप्पै छंदों में की गई है। दोहा और चौपाई प्रधान हैं। रचयिता खोज में नवोपलब्ध हैं।

१२३ नवलराय—ये संभवतः 'जलंधर युद्ध' के प्रणेता हैं। ग्रंथांत में 'नवलराय' का प्रयोग है :—

'कीया चर्चन जान कै भगत करौ चितलाय।
सो या लीला सुनै और गावै तारपा नवल राज॥'

नवलराज में 'ज' के बदले 'य' होना चाहिए जिससे पूर्वपद के 'चितलाय' के साथ ठीक तुक बैठे।

इनके विषय में और कोई विवरण नहीं मिलता।

ग्रंथ में 'जलंधर और वृंदा' पौराणिक आख्यान का वर्णन है। रचनाकाल का पता नहीं। लिपिकाल सं० १८२५ वि० है।

१२४ नागड़ा—इस रचयिता की नीति विषयक एक छोटी रचना 'नागड़ादास दूहा' प्राप्त हुई है जिसमें बीस सोरठे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का भी कोई वृत्त नहीं मिलता। सोरठों की भाषा और नाम से ये राजस्थानी जान पड़ते हैं।

१२५ नागा अरजन—खोज में इनकी कुछ 'वाणियाँ' विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिये 'सिक्खों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अप्राप्त है। इन्हें सिक्खों में गिना जाता है।

१२६ नाथ कवि—इस कवि की 'पावस पचीसी' नाम की छोटी किंतु सरस रचना मिली है। इसमें २५ कवित्त हैं जिसमें वर्षा ऋतु का वर्णन राजा, मंत्री, पहलवान, नट, बाजीगर, पंच, पंडित, जोगी, चोर, डाकू, वधिक, कसाई, गज, सिंह, पथिक, गवैया, दूलह, सूम, काम, इंद्र, फिरंगी, कामी, वीर, शिशु के रूपक द्वारा किया गया है। रचनाकाल संवत् १९३७ है।

द्वीपन[७] में दग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] को जान।
जन्ममास व्रजनाथ को मंगल कर कल्यान ॥

लिपिकाल नहीं दिया है। रचना के हस्तलेख के मुखपत्र पर किसी लोकनाथ चौबे का पेंसिल से शुभाशिष लिखा यह पत्र है जिसमें इन्होंने अपना पता अंग्रेजी में दिया है:—

'कृपाकर मेरे श्रम को विचार कर शीघ्रतर इसे छापिये। और एक कापी मेरे पास भेजिए। भारत मित्र एक पेज में पूरा होगा और संपूर्ण एकीवार छापने में अच्छा होगा नहीं तो इसका मजा जाता रहेगा।'

'लोकनाथ चौबे ऐट जम्मू सीटी
केअर आफ पं० गनेश प्रसाद चौबे
चीफ जज आफ जम्मू'

इससे पता चलता है कि कश्मीर जम्मू से कदाचित् यह पुस्तिका भारत मित्र में छापने के लिये भेजी जानेवाली थी अथवा भेजी गई थी और पत्र सहित लौट आई। यह स्पष्ट नहीं होता कि लोकनाथ चौबे का इस रचना से क्या संबंध था परंतु पत्र से अनुमान किया जा सकता है कि प्रस्तुत रचना उन्हीं की है। जो कुछ भी हो रचयिता के विषय में और कुछ पता नहीं चलता। खोज विवरण (९-२०९) (२६-३२५) में क्रमशः 'भागवत पचीसी' और 'रंगभूमि' के रचयिता नाथ कवि उल्लिखित हैं।

१२७ नानकदास—इनके 'प्रबोध चंद्रोदय' नाटक का उल्लेख पंजाब खोज विवरण में संख्या ७१ पर है, परंतु उसमें उद्धरण न होने से प्रस्तुत खोज विवरण में इसको फिर सम्मिलित कर लिया गया है। उक्त खोज विवरण के अनुसार इसका रचनाकाल संवत् १७४६ है। प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है, परंतु रचनाकाल का उल्लेख यों है :—

संवत् सत अखादस अवर षट चालीस।
मंघर शुक्ल पंचमी पोथी पूर्ण करीस ॥ १८६ ॥

इसमें रेखांकित 'अखादस' अष्टादस जान पड़ता है जिससे संवत् १८४६ निकलता है। अतः दोनों में एक शताब्दी का अंतर पड़ता है।

प्रस्तुत प्रति से यह भी प्रकट होता है कि इस ग्रंथ को किसी वलिराम ने पूर्ण किया :—

'यह पोथी पूरण करी वलीराम हरिसंत।
ताको भापा में रच्यो नानकदास विनवंत ॥'

यदि ये वलिराम 'अद्वैत प्रकाश' या 'चार वेद पट् शास्त्र मत' के रचयिता हों तो उनका समय सं० १८८५ है, क्योंकि 'अद्वैत प्रकाश' की रचना सं० १८८५ में हुई, देखिए खोज विवरण (१७-१७)। ग्रंथ की भापा पश्चिमी (राजस्थानी और पंजाबी) हिंदी है। यह संस्कृत के 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' का अनुवाद है। रचयिता का और कोई परिचय नहीं मिलता।

१२८ नायक—इनके निम्नलिखित दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं :—

१-दत्तात्रय सत्संग उपदेश सागर—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १९२२। विषय-दत्तात्रेय और उनके चौबीस गुरुओं की कथा का वर्णन।

२-सर्व सिद्धांत श्री राममोक्ष परिचय—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १९२२। विषय, ब्रह्मज्ञान तथा श्री रामचंद्र के तीन कल्पों के अवतारों का वर्णन। इसमें १७ तरंग हैं। यह दोहे चौपाइयों में है जिसकी विस्तृत टीका की गई है। टीका का नाम 'परमानंद लहरी' है। भापा व्रजी है जिसमें खड़ी बोली का भी मिश्रण है।

रचयिता ने ग्रंथांत में नामोल्लेख के अतिरिक्त और कोई विवरण नहीं दिया।

१२९ नित्यानंद 'नंद' - प्रस्तुत खोज में इस कवि के बीस 'कवित्त सुकवि नित्यानंद के' शीर्षक से प्राप्त हुए हैं। ये कब रचे गए पता नहीं। लिपिकाल भी अज्ञात है। इनमें राधा कृष्ण की वीरता का वर्णन किया गया है। हस्तलेख खर्रे के रूप में है।

रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। दूसरे कवित्त में इन्होंने सुकवि निधान के पदों की वंदना की है, अतः ये उनके शिष्य जान पड़ते हैं। 'मिश्रबंधु विनोद' में दो निधान (सं० ३२२ और ८३१) तथा दो नित्यानंद (सं० ५७९ और ११५५) उल्लिखित हैं जिनमें एक निधान और एक नित्यानंद ब्राह्मण हैं।

ब्राह्मण नित्यानंद किसी श्यामशरणदास (भवभोगी) के शिष्य संवत् १८०७ के लगभग वर्त्तमान थे, देखिये खोज विवरण (५-४१)। दूसरे नित्यानंद जो संवत् १७५४ के पूर्व वर्तमान थे (देखिए मिश्रबंधु विनोद) ब्राह्मण निधान के शिष्य नहीं हो सकते, क्योंकि ब्राह्मण निधान का समय संवत् १८०८ के लगभग है। अतः हो सकता है कि ये संवत् १६९८ में वर्तमान रहनेवाले निधान के शिष्य रहे हों। यदि यह संभावना ठीक हो तो नित्यानंद 'नंद' दूसरे नित्यानंद से अभिन्न हो सकते हैं। ये खोज विवरण (२६-३३७) (२९-७८) (३२-१५८) पर उल्लिखित नित्यानंद नामक ग्रंथकारों से भिन्न जान पड़ते हैं।

१३० नैनकवि—इनकी तीन इन रचनाओं के विवरण लिए गए है—१-कवित्त अलीशाह मरदान की हालगढ़ खैबर की लड़ाई का, २—कवित्त हजरत अली के माजिजा के, ३—अंगद रावण संवाद। प्रथम रचना अपूर्ण है। इसमें हजरत अली की खैबर की लड़ाई का सजीव और ओजपूर्ण भाषा में वर्णन है। दूसरी में हजरत अली के माजिजा के कवित्त हैं। ये दोनों एक ही हस्तलेख में हैं तथा इनका एक ही विवरण लिया गया है।

तीसरा ग्रंथ भी अपूर्ण है जिसमें नाम तक का उल्लेख नहीं। विषय की दृष्टि से इसका नाम 'अंगद रावण संवाद' रख दिया गया है। इसमें रामायण के आधार पर अंगद रावण संवाद का वर्णन है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी में नहीं हैं। रचना छप्पयों और कवित्तों में की गई है।

रचयिता का नाम रचनाओं के आरंभ में तथा उनकी पुष्पिकाओं में नहीं मिलता, केवल कवित्तों और छप्पयों में ही आया है। अन्य परिचय अज्ञात है। खोज में ये प्रथम बार ही विदित हुए हैं।

१३१ पदुमन (प्रद्युम्न)— प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख खोज विवरण (४-१४) पर 'काव्यमंजरी' के रचयिता के रूप में हो चुका है। उक्त विवरण के आधार पर ये दामोदर के पुत्र और संवत् १७३६ के लगभग वर्तमान थे। इनके तीन भाई थे जिनके नाम क्रमशः हरिशंकर, लालमणि और कृष्णमणि थे। जाति के कायस्थ तथा वादप नगर के राजा दलेलसिंह के आश्रित थे।

राजा दलेलसिंह प्रस्तुत खोज विवरण में विवृत 'शिवसागर', 'मुक्ति रत्नाकर' और 'रामरसार्णव' के रचयिता हैं। प्रस्तुत रचयिता की इस बार मिली नवीन रचना भक्ति कल्पतरु द्वारा इनका (राजा दलेल सिंह का) कुछ और विवरण मिला है जिसके अनुसार ये राजा वेणु के वंश में राजा रामसिंह के पुत्र थे। इनकी वंशावली इस प्रकार है:—

राजा वेणु के वंशज बाघदेव
|
कीरतसिंह
|
हिम्मतसिंह
|
रामसिंह
|
दलेलसिंह

बाघसिंह किसी दूसरे स्थान (पैरवार) वादप नगर की ओर चले आए जहाँ वे करनपुरा के अधिपति हुए। राजा दलेलसिंह की एक पंडित सभा भी थी जिसमें तुलाराम, तुलसी राम और गुनाराम आदि प्रसिद्ध विद्वान् थे।

'भक्ति कल्पतरु' भागवत का संक्षिप्त अनुवाद है। इसमें १५ पलो (पल्लव) हैं। यह संवत् १७३९ में रचा गया। लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता। हस्तलेख की लिपि अत्यंत भद्दी और दोषपूर्ण है जिसके फलस्वरूप आश्रयदाता का निवासस्थान बादप नगर के स्थान पर बादमनगर पढ़ने में आता है। आश्रयदाता की वंशावली के क्रम में भी अशुद्धि हो सकती है।

१३२ परमदास—इनका 'जैमिनी पुराण' मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। रचनाकाल संवत् १६४६ और लिपिकाल संवत् १७९३ हैं।

रचयिता ने अपना थोड़ा सा परिचय दिया है जिसके अनुसार ये बादशाह अकबर के समकालीन थे। इनके पूर्वज गोरखपुर के अंतर्गत बड़ा गाँव में रहते थे। एक समय अकाल पड़ने के कारण उसे छोड़कर ये पश्चिम की ओर सहस्रनाम में आ बसे। इस वंश में एक व्यक्ति हिगहरिमा हुए जो बड़े भक्त थे। उनके पुत्र मेघ भी परम वैष्णव हुए।

इनकी जाति कुरवी और कुल जैसवार था। इन्होंने प्रस्तुत अनुवाद धरनीधर पंडित की सहायता से किया जो हाजीपुर में भारद्वाज गोत्रीय नरोत्तम दीक्षित के पौत्र और हरसिंव नृप के पुत्र थे।

इसकी जो प्रति खोज में मिली है अपूर्ण है। प्राचीन कैथी लिपि में होने के कारण कठिनाई से पढ़ी जाती है। हो सकता है, धरनीधर के वृत्त में कुछ भूल हो।

१३३ परमानंद—इनकी 'दानलीला' का विवरण लिया गया है। इसकी भाषा गुजराती मिश्रित है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। ये अष्टछाप वाले सुप्रसिद्ध परमानंद से भिन्न हैं या अभिन्न इसका निश्चय करना कठिन है। रचना में गुजराती भाषा के मेल से यह निश्चय कर सकते हैं कि कदाचित् ये उनसे भिन्न हों।

१३४ पारवती—इनके नाम से कुछ 'वाणियों' का विवरण लिया गया है, देखिए सिद्धों की वाणी का विवरणपत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। हस्तलेख के अनुसार विशेष प्रकार के साधक का नाम पारवती (पार्वती=पार्वत्य) जान पड़ता है:—

काकदृष्टि बगोध्यानी। वाल अवस्था भवंगम अहारी।
अवधूत सौ बैरागी पारव्रती। दूजा सब भेषधारी॥

१३५ पृथ्वीनाथ—पृथ्वीनाथ का नाम सिद्धों के नामों के साथ आया है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' प्राप्त हुई हैं। इनके लिए देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

१३६ साँदू पृथ्वीराज—'अभय विलास' नामक डिंगल काव्य के रचयिता हैं। विवरण पत्र में दिए गए उद्धरणों से इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता, परंतु 'राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज' नामक पुस्तक के आधार पर ये साँदू शाखा के

चारण थे। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ जोधपुर के महाराज अभयसिंह (राज्यकाल संवत् १७८१-१८०६) के आश्रय और समय में रचा। इसमें उनके वीरोचित कार्यों और शौर्यपराक्रम का बड़ा सजीव वर्णन है।

१३७ प्रतापकुँवरबाई—'रामपदावली' की ये रचयित्री हैं। पदों में 'दास प्रताप' करके रचयिता का उल्लेख है, परंतु अन्वेषक ने 'प्रताप कुँवरबाई' नाम दिया है।

इसका रचनाकाल संवत् १९२४ है जो 'बारहमासा' (पदों के अंतर्गत बारहमासा भी है) में दिया है। लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। पदों में रामगुणगान किया गया है।

रचयिता के विषय में और कोई विवरण नहीं मिलता।

१३८ प्रभानाथ—इन्होंने संवत् १८३८ में 'प्रवीण सागर' नामक विशाल ग्रंथ की रचना की। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। इसमें ७१ लहर (अध्याय) हैं जिनमें अनेक विषय प्रतिपादित हैं जैसे—नाड़ी परीक्षा, वैद्योपचार, शिकारभेद आदि। बीच बीच में शिव पार्वती और कैलाश की वंदना है। तत्पश्चात् उत्सवों का वर्णन एवं राधाकृष्ण के युगल रूप का विवेचन किया गया है। ग्रंथ में विषय निर्वाह तथा अनेक विषयों में साम्य स्थापन की कोई चेष्टा नहीं है। एक विषय समाप्त हुए बिना ही दूसरा आ जाता है। फिर भी ग्रंथ महत्वपूर्ण है।

रचयिता का अन्य वृत्त अज्ञात है।

१३९ प्रह्लाददास पाठक (जन)—इनकी 'हनुमत जस लीला' में हनूमान के यश का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८२६ वि० है।

ग्रंथकार ने अपना कोई परिचय नहीं दिया। 'पाठक' शब्द से ये ब्राह्मण विदित होते हैं।

१४० प्राणनाथ (त्रिवेदी)—इनके द्वारा रचित एक ग्रंथ 'कल्कि-चरित्र' पहले खोज में मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (३-२९) (२३-३२०)। उक्त ग्रंथ के द्वारा ये जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और संवत् १७६५ के लगभग वर्तमान थे।

इस बार इनका 'जैमिनी पुराण' मिला है जिसकी रचना संवत् १७५७ में हुई। लिपिकाल संवत् १९२४ है।

इन्होंने मंगलाचरण में 'पट्टन देवी' का उल्लेख किया है। वर्तमान बस्ती और गोंडा के मध्य में तुलसीपुर स्टेशन के पास एक स्थान है जिसे 'पाटन की देवी का मठ' कहते हैं। यह देवी का मंदिर है, संभव है रचयिता का तात्पर्य इसी देवी से हो।

१४१ प्रियादास—ये 'भक्तमाल' के टीकाकार के रूप में बहुत प्रसिद्ध हैं। पिछले खोज विवरण में इन्हें नाभादास जी का शिष्य लिखा गया है, परंतु यह भूल है। वृंदावन में यह पता चला कि ये गौड़ीय संप्रदाय के थे और वृंदावन के राधारमण मंदिर में रहते

थे। 'भक्तमाल' की टीका के मंगलाचरण में इन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु और अपने गुरु मनोहरदास जी की वंदना की है। अतः इन्हें अब नाभादास जी का शिष्य न मानकर गौड़ीय संप्रदाय का मानना उचित है।

इस बार इनकी 'भागवत सुलोचना टीका' नामक एक और रचना प्राप्त हुई है। इसके तीन मयूखों में भागवत धर्म का ग्रहण और फल कथन किया गया है। प्रस्तुत प्रति खंडित है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख पिछले खोज विवरण (१–५५) (९–३२४) (६–२४७) (२०–१३५) (२६–२७२) में हुआ है।

१४२ प्रियादास—प्रस्तुत रचयिता की एक रचना 'सेवक जू की जन्म बधाई' खोज में प्राप्त हुई है। इसमें राधावल्लभी-संप्रदायानुयायी श्री सेवक जी की जन्म-बधाइयाँ हैं।

इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। रचयिता का भी कोई विश्वसनीय विवरण प्राप्त नहीं। खोज विवरण (९–२३१) (१७–१६६) में उल्लिखित इस नाम के रचयिता से ये अभिन्न हैं। उक्त खोज विवरणों के अनुसार ये राधावल्लभी संप्रदाय के प्रवर्तक आचार्य हित हरिवंश जी के अनुयायी एवं संवत् १९०५ में वर्तमान थे।

१४३—प्रेमदास—प्रेमदास का 'जैमिनी पुराण' आदि और अंत से खंडित है। बीच से भी कुछ पन्ने लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। यह मूल संस्कृत से अनूदित है।

रचयिता का नाम पाँचवें अध्याय की पुष्पिका से 'प्रेमदास' ज्ञात होता है:—

'इति श्री असमेध जग्य महाभारत जैमुनी ससक्रत पचमो अधाभाषा प्रमदासकृत'

'प्रमदास' का शुद्ध रूप प्रेमदास माना गया है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

१४४ प्रेमरंग—इनकी रची 'अयोध्याकांड रामायण' छोटी सी रचना है जिसमें अयोध्याकांड की कथा संक्षेप में वर्णित है। इसमें रचनाकाल का तो उल्लेख नहीं है; परंतु लिपिकाल संवत् १८८५ दिया है जो इसकी प्राचीनता प्रकट करता है। भाषा खड़ी बोली है जिसमें अरबी फारसी के शब्दों का भी समावेश है।

रचना लावनी में है। आरंभ में दिए:—'रागणी बरवे जल्द इ छंद लावणी हरिजम' से यह स्पष्ट है।

रचयिता का नाम स्पष्ट नहीं दिया है। केवल अंत के छंद से 'प्रेमरंग' ज्ञात होता है :—

'मुनिपद परसे अनुसूया ने सियमुख सुना स्वयंबर को।
'प्रेमरंग' प्रभु सुख सों बसे धसे वन घन सर धनुधर को॥

इनका वृत्त अज्ञात है।

१४५ प्रेमा—इनका 'श्री राधाकृष्ण विवाह विनोद' ४०९५ अनुष्टुप् का बड़ा ग्रंथ है। इसमें २१ अध्याय हैं जिनमें स्कंदपुराण के आधार पर राधा कृष्ण के विवाह का विस्तृत वर्णन है। कथानक छोटा है; परंतु उसे विस्तृत करने के लिये विवाह की प्रत्येक रीति-विधि का अलग-अलग वर्णन किया गया है। भाषा ब्रजी है। दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया और सोरठा छंदों का व्यवहार किया गया है। रचना साधारण है।

रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८०८ दिया हुआ है।
रचयिता राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी श्री कल्यानदास जी के शिष्य थे। 'प्रेमा' संप्रदायगत नाम प्रतीत होता है।

१४६ फकीरशाह—इनके कुछ पद 'शाह कबीर के शब्द' नाम से प्राप्त हुए हैं जिनमें अध्यात्म के साथ-साथ ज्ञानोपदेश भी है। इनका रचनाकाल ज्ञात नहीं। लिपिकाल संवत् १८६७ है। रचना निरगुनी संतों की शैली में है। भाषा में खड़ी बोली का पुट है। एक झूलना छंद तो खड़ी बोली में ही है। ग्रंथ स्वामी श्री राजाराम जी महंत के कथनानुसार रचयिता निर्गुण संत यारी साहब के शिष्य थे और दिल्ली में रहते थे। प्रस्तुत पदों में भी यारी साहब का नामोल्लेख है:—

'संत फटक आगम नीसानी तामें 'इयारी' बोलता है।'

× × × ×

'भाई 'इआरी' हम तुम पाई गावै 'साह फकीर'

विशेष परिचय ज्ञात नहीं होता। यारी साहब के विषय में देखिए यारी साहब पर टिप्पणी। ये अनुमान से १६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वर्त्तमान थे।

१४७ फकीरसिंह और मनिकंठ कवि—फकीर सिंह 'बैताल पचीसी' के रचयिता मनिकंठ कवि के आश्रयदाता थे। इनका और वृत्त अज्ञात है। इनका और मनिकंठ का उल्लेख उक्त ग्रंथ की कथाओं की पुष्पिकाओं में इस प्रकार मिलता है:—

'इति श्री बैताल पचीसी फकीर सिंह कारिते मनिकंठ कवि भाषते त्रैविसतमो कथा समाप्त॥'

मनिकंठ कवि की उपर्युक्त रचना मूल संस्कृत का हिंदी पद्यानुवाद है। यह अंत से खंडित है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। अनुवाद साधारणतया अच्छा है।

इसकी प्रस्तुत प्रति द्वारा मनिकंठ का उपर्युक्त वृत्त -- कि ये फकीरसिंह के आश्रित थे—के अतिरिक्त और विवरण नहीं मिलता। परंतु ये प्रस्तुत ग्रंथ के साथ खोज विवरण (२३-२६६) में उल्लिखित हैं। उक्त विवरण के अनुसार ये वर्ण के वैश्य, संवत् १७८२ के लगभग वर्तमान और आजमपुर के निवासी थे तथा सूदन ने अपने 'सुजान चरित' में इनका उल्लेख किया है।

१४८ फरीद जी—'इनके 'पदितनामा' में अलिप्त रहकर भगवद् नाम स्मरण करने का उपदेश है। रचना खड़ी बोली गद्य में है जिसमें अरबी फारसी के शब्द भी व्यवहृत हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५५ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता। नाम से ये मुसलमान जान पड़ते हैं।

१४९ बद्रीलाल (गुसाईं)—ये 'श्री भगवद्गीता' के टीकाकार हैं। टीका ब्रजभाषा गद्य में है जिसमें खड़ी बोली का भी मिश्रण है। टीका का समय अज्ञात है। हस्तलेख संवत् १९१८ का लिखा हुआ है।

टीकाकार का विशेष परिचय नहीं मिलता।

१५० बलदेव—प्रस्तुत रचयिता की दो रचनाएँ हैं—'स्फुटरचना' और 'अजमति खाँ यश वर्णन'। पहली का वास्तविक नाम ज्ञात नहीं। फुटकल विषयों जैसे, जगत के विषय-विधाता के कौतुक सदृश कार्य, श्री रामचंद्र द्वारा अयोध्या के जीवों का उद्धार, रामभजन, सविता की साहिबी सी कविता हमारी है, वाणी सिद्ध कवि तथा अन्य समस्याओं पर कविता होने के कारण सुविधा की दृष्टि से इसका नाम 'स्फुट रचना' रख दिया गया है। इसमें चार कवित्त, एक दोहा, एक पद, एक शार्दूल विक्रीडित और दो सार छंद हैं।

दूसरी रचना में रचयिता ने अपने आश्रयदाता अजमति खाँ के यश का वर्णन किया है।

दोनों रचनाएँ कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं। इनका रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल प्रथम का संवत् १७८१ है। द्वितीय में लिपिकाल तो नहीं दिया है, परंतु इसके पहले—बलभद्र कृत 'सिखनख' और हरिलाल कृत 'रामजी की वंशावरी' का लिपिकाल संवत् १८७२ है। इसलिए इसका लिपिकाल भी इसी के लगभग होगा।

रचयिता ने अपना नाम केवल कवित्तों में दिया है जिनके द्वारा इनका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। परंतु ग्रंथस्वामी पं० दयाशंकर जी मिश्र के कथनानुसार ये उनके पूर्वज थे। वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
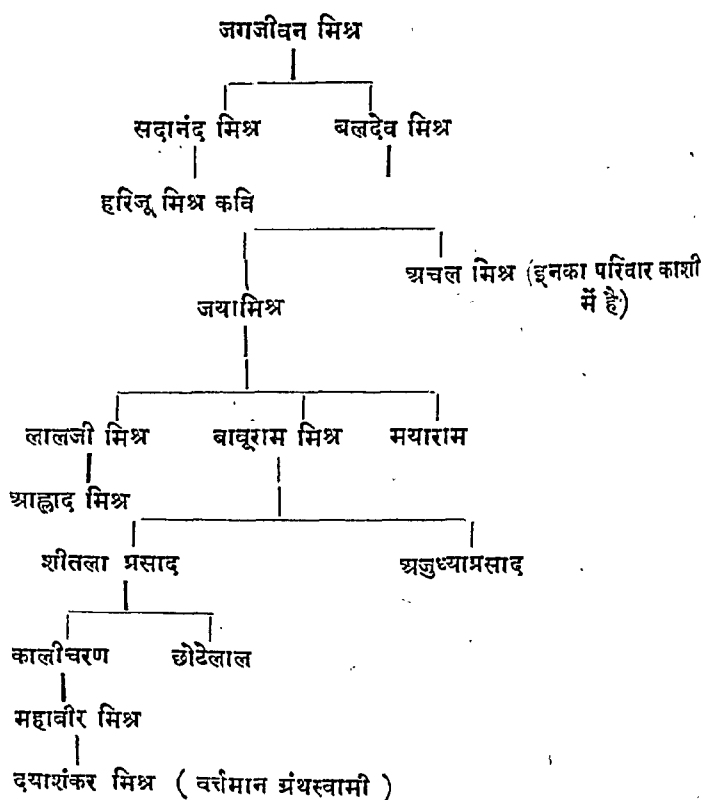
बलदेव मिश्र आजमगढ़ के राजा अजमत खाँ के राजकवि, गुरु और मंत्री थे। अजमत खाँ के पश्चात् उनके पुत्र महावति के भी वे मंत्री रहे। अनुमान से इनका समय अठारहवीं शताब्दी के लगभग ज्ञात होता है; क्योंकि अजमत के बड़े भाई आजम खाँ संक्षिप्त विवरण के अनुसार संवत् १७८६ के लगभग वर्तमान थे, देखिये खोजविवरण (९-११२, २७०, ११)। अतः इनका तथा अजमत खाँ का इस समय में वर्त्तमान रहना संभव है।

अजमत खाँ के आश्रय में रहने का प्रमाण इनकी अन्य रचना से भी मिलता है जो अलग पन्ने पर लिखी मिली है :—

'नृप अजमति पां वलि कोपि धायो गहे पग्ग वैरी हने
हाकि संग्राम कै वीर बांके वड़े ऐंड वाले लिए
पानी भाले महा मत्त उन्मत्त पृथ्वी मिलाए घने।
प्रवल सवारि सोहे ध्वजा वज्जि नीसान समध्य जोधा
कृपान कृपारक्ष कारी महा कोहवंते अरंते नगर को दरंते ठनैं
जोग जीतै भनै रौदवानी रोपानी मनै॥
दिनकर किरनावली सी चली वान की पांति भाजे

परास्त नारी गही दुःखभारी बिडारी बिदारी वियोग महारी
तजै देह सारी उघारी सुलज्जा छुटी जौति रूठी तनै ॥
कविवर बलदेव भाषै भयो जुद्ध भारी परी हाहाकारी गढ़ी
गाँजि भंजे बड़े वीर वैरी मिलैरी हसै जोगिनी कालिका
स्याल स्याली सुगिद्धै चपै शुद मेदै कहालै गनै ॥

इनके आश्रयदाता के विषय में ग्रंथस्वामी से यह ज्ञात हुआ है:—

अजमत खाँ के बड़े भाई का नाम आजमखाँ और पिता का विक्रम था। विक्रम को तत्कालीन बादशाही (संभवतः शाहजहाँ) ने धोका देकर मुसलमान बना लिया। इनके वंशजों को अंतिम राज्याधिकार रहने तक इसका खेद बना रहा। ये मुसलमान होने पर भी अपने को राजपूत कहते रहे तथा गुरु और पुरोहित का पूर्ववत् संमान करते रहे। ये गौतम कुल (गोत्र) के राजपूत थे। रचयिता के निम्नलिखित दो कवित्तों में इसका संकेत मिलता है :—

'नवो खंड मंडल में मंडित प्रताप रवि दरसै 'चकत्ता' अतिसिंधु अवगाह की।
'बलदेव' दसहू दिसान में निसानन की धमक धूम भूमै गयंदनि अरि के उछाह की।
अजमति गौतमानुज के पयान बल एते बड़े साहिन से ऐन निरवाह की।
जैसे सतरंज में कुपेच परे पादिहू की किस्ती के दिये ते हो सिकस्त पातशाह की॥
तै साहिन को साल गनिमनि को मलनिहार मुलुक को मालिक मुलुक विकरमको।
तेरे ही बसाय बसै देसन में उमराय तेरे ही चलाए चले पंथ सुधरम को।
'बलदेव' तेरी त्रास धसत सवासवास वैरिन को बाढ़यो उर दरद मरम को।
गौतम के कुल को कमल अजमत खान गुन को निधान पुनि सागर सरम को॥'

आजम खाँ आजमगढ़ के संस्थापक थे। इन्हें शिवाजी से मिल जाने के कारण औरंगजेब ने कन्नौज में कैद कर दिया था।

पंडित बलदेव मिश्र ने इस वंश की अच्छी सेवा की। वे अजमत खाँ के साथ उसके शत्रु से लड़ने जाया करते थे। इसी से युद्ध का आँखों देखा स्वाभाविक वर्णन किया है। जिस लड़ाई में अजमत खाँ मारे गये उसका वर्णन उपर्युक्त प्रथम दंडक छंद में है। ये कवि और वीर होने के साथ-साथ राजनीतिज्ञ भी थे। प्रस्तुत हस्तलेख में इनकी कुछ संस्कृत रचनाएँ हैं जो इनके संस्कृत ज्ञान का पता देती हैं।

१५१ बलवीर—इनका 'शारंगधर वैद्यक' मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। यह गद्य पद्य दोनों में है। पद्य का प्रयोग आरंभ के केवल दो पत्रों में हुआ है, शेष गद्य है जो अपरिमार्जित खड़ी बोली का है। टीका का रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९०० है।

रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख आरंभ में केवल एक चौपाई में किया है:—
'नैनन जलन औसुज शरीरा। निस्चे मीचुकहत 'बलवीरा'।

अन्य परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं।

१५२ बलिराम 'बलि'—प्रस्तुत रचयिता अपने एक ग्रंथ 'अद्वैत प्रकाश' के साथ खोज विवरण (१७–१७) में उल्लिखित है।

उक्त विवरण के अनुसार ये संवत् १८९५ के लगभग वर्तमान थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई वृत्त नहीं मिलता। इनका उपनाम 'बलि' था जो ग्रंथ में जहाँ तहाँ प्रयुक्त हुआ है।

इस बार इनका एक 'बिना नाम का ग्रंथ मिला है जिसका विषय आध्यात्मिक है। उपर्युक्त 'अद्वैत प्रकाश' का विषय भी यही है। अतः हो सकता है कि प्रस्तुत रचना भी वही अथवा उसका ही एक भाग हो। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं।

१५३ बलिहारी—इस रचयिता के कुछ पद 'पदसंग्रह' नाम से मिले हैं। पदों में राधाकृष्ण तथा गोपियों की दान, मान, पनघट, रास और वसंत आदि लीलाओं का सरस और सुंदर वर्णन है।

रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। अधिकांश पदों की भाषा ब्रजी है; परंतु बीच-बीच में कुछ पद जिनकी संख्या १२ है पंजाबी भाषा के भी हैं।

रचयिता कोई वैष्णव थे। अपने नाम का कहीं भी इन्होंने स्पष्ट उल्लेख नहीं किया; किंतु पदों के अंत में 'बलिहारी' शब्द के आने से कहीं इनका नाम 'बलिहारी' सखी न हो। कुछ पद पंजाबी भाषा में होने के कारण अनुमान किया जा सकता है कि ये मूलतः पंजाब के रहने वाले रहे हों। ये उच्चकोटि के कवि थे।

प्रस्तुत खोज विवरण में आए 'बलिराम' उपनाम 'बलि' से ये भिन्न हैं एवं खोज में नवोपलब्ध हैं।

१५४ बाँकीदास आसिया—ये 'धवल पचीसी' और 'मान जसोमंडन' नामक दो रचनाओं के प्रणेता हैं। ये जोधपुर के महाराज मानसिंह (राज्यकाल संवत् १८६०–१९००) के समकालीन और संभवतः उन्हीं के आश्रित थे। उनकी प्रशंसा में इन्होंने 'मानजसोमंडन' की रचना की। विशेष वृत्त नहीं मिलता।

'धवलपचीसी' में बैल की प्रशंसा में २५ दोहे हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। उसमें केवल ९ दोहे हैं। दोनों रचनाएँ राजस्थानी भाषा में हैं।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी में नहीं पाया जाता।

१५५ बाघरा—इनकी प्रस्तुत रचना 'बाघरारा दूहा' में वियोगिनी की विरह दशा के ग्यारह दोहे हैं। रचना राजस्थानी भाषा में है। रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही पता चलता है कि ये राजस्थान के रहनेवाले थे।

१५६ वाजीद—इनकी ज्ञानोपदेश विषयक दो रचनाओं 'मुखनामों' और 'गुन कठियारा' के विवरण लिए गए हैं। इनमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८५६ दिया है। ये रचनाएँ एक बड़े हस्तलेख में हैं जो अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके लिये देखिए 'सेवादास' का विवरण।

रचयिता का विशेष वृत्त नहीं मिलता। संभवतः ये खोज विवरण (२–७९) में आए वाजिद (दादू दयाल जी के शिष्य, सं० १६५७ के लगभग वर्तमान) ही हों।

१५७ वालकृष्ण—इनके द्वारा रचित 'रस चंद्रिका' साहित्य शास्त्र विषयक उत्तम ग्रंथ है। इसमें क्रमशः नवरस विवेचन, रस विचार, नायक निर्णय, नायिका विचार, दूती विचार, छंद विधान, दोष निरूपण, गुण, कवि नियम और दंपति विनोद नाम से ग्यारह प्रकाश (अध्याय) हैं। विषय 'प्रकाशों' के नाम से स्वयं स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल प्राप्त नहीं। इसकी रचनाशैली परिमार्जित और पुष्ट है।

रचयिता के पिता का नाम बलभद्र त्रिपाठी और बड़े भाई का नाम काशीनाथ त्रिपाठी था। विशेष विवरण नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

१५८ वालगोदाई—इनका नाम सिद्धों के साथ आता है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनके लिए देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त अज्ञात है।

१५९ वावरी साहबा—इनका केवल एक पद 'श्री बावरी साहबा के शब्द' नाम से मिला है। ये निर्गुणपंथी मुसलमान महिला थीं। इनका महत्व इस बात से है कि इन्होंने एक पृथक पंथ ही चलाया। जिसका नाम आगे चलकर 'सत्यनामी पंथ' पड़ा। सत्यनामी पंथ का विशेष प्रचार करनेवाले इन्हीं की शिष्य परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य जगजीवन दास थे। इनकी गुरु शिष्य परंपरा के लिए देखिये 'भीखा साहब' का विवरण। ये दयानंदजी की शिष्या थीं।

इस पंथ का साहित्य विस्तृत है जो आजतक उन्हीं लोगों तक सीमित रहा जो इसके अनुयायी थे। इसकी महत्ता अन्य निर्गुण पंथियों के साहित्य से कम नहीं है। आध्यात्मिक ज्ञान और दार्शनिक विचारावली के साथ-साथ इसकी अधिकांश रचनाओं में कवित्व भी दृष्टिगोचर होता है।

प्रस्तुत रचयित्री का 'शब्द' यहाँ उद्धृत किया जाता है जिससे इस विषय में कुछ अनुमान लगाया जा सकेगा :—

अजपा जाप सकल घट बरतै
जो जानै सो पेपा।

गुर गम जोति अगमघर वासा
जो पाया सो देपा।

मैं बांदी हौं परमतत्तु की
जग जानत किसु (? किछु) भोरी।
कहत 'बावरी' सुनो हो 'वीरू'
सुरति कमल पर डोरी॥

वीरू बावरी साहबा के शिष्य थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी से ज्ञात हुआ है कि ये अकबर बादशाह से पहले वर्तमान थीं।

उपर्युक्त पद एक बड़े हस्तलेख में है जिसमें वीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, गुलाल साहब, भीखा साहब, शाह फकीर और केसोदास की भी बानियाँ संगृहीत हैं।

ये सब संत थे और क्रम से इनकी ही शिष्य परंपरा में हुए। शाह फकीर और केसवदास श्री धारी साहब के शिष्य थे। इनके अतिरिक्त हस्तलेख में नानक, कबीर, मकरंददास (केवट), जन कुवा, सूरदास, रामानंद, अग्रदास, मलूकदास, मीराबाई, तुलसी, धरनीदास तथा कृष्ण जीवन लच्छीराम के भी पद हैं। रामानंद और अग्रदास की रचनाएँ आरंभ में दी हुई हैं।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी किया गया है।

१६० वीठू बांकीदास—इनके 'दामोदर हरिदास चरित' अन्य नाम 'ज्ञानावली' में ज्ञानोपदेश का वर्णन है जो एक घटनात्मक कथा के रूप में है। घटना इस प्रकार है:—

'जोधपुर में खोड़पा संतों का स्थल है। वहाँ से दो साधु (गुरु शिष्य) शिव परगने के ऊंडू गाँव में चौमासा करने जाते थे। एक दिन मार्ग में चोर मिले जिनसे उनकी लड़ाई हुई। अंत में उन्होंने चोरों को ज्ञानोपदेश द्वारा शिष्य बना लिया।

ग्रंथ रचना गीत, दोहा, नाराच आदि ६० छंदों में हुई है। भाषा राजस्थानी है। रचनाकाल संवत् १८८३ दिया है जो विवरण पत्र में उद्धृत नहीं है। लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। नाम एवं ग्रंथ की भाषा से ये राजस्थानी ज्ञात होते हैं।

१६१ वीरू साहब—जैसा कि ग्रंथ स्वामी श्री राजारामजी महंत (चिट बड़ागाँव, जिला बलिया) से पता चला है ये निर्गुण मतानुयायी बावरी साहिबा के शिष्य दिल्ली के निवासी तथा जाति के मुसलमान थे। अन्य वृत्त नहीं मिलता। विशेष के लिये देखिए बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण।

प्रस्तुत शोध में यद्यपि इनके केवल दो ही शब्द प्राप्त हुए हैं, तथापि इन्हीं से इनके उच्चकोटि के संत होने का पूरा परिचय मिल जाता है। इनमें निर्गुण मतानुसार आध्यात्मिक ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८६७ है। इनकी भाषा पूर्वी अवधी है।

रचयिता खोज में नवोपलब्ध हैं। इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी है।

१६२ शाह बुरहान—शाह बुरहान के दो ग्रंथ 'मुनफातुल ईमान' अर्थात् धर्म का लाभ और 'कशयुल वजूद' अर्थात् ब्रह्म निरूपण प्रस्तुत खोज में मिले हैं। ये दोनों सूफी दृष्टिकोण से रचे गए हैं। रचयिता का एक दूसरा ग्रंथ 'सुख सुहेला' नाम का भी है जिसका संपादन और प्रकाशन प्रस्तुत ग्रंथों के स्वामी डा० मुहम्मद हफीज सैयद साहब, इलाहाबाद द्वारा हुआ है। वह ग्रंथ भी 'मुनफातुल ईमान' के साथ लिपिबद्ध है।

ग्रंथों की भाषा यद्यपि हिन्दी है तथापि इनमें भाषा की एक रूपता और परिमार्जन कम पाया जाता है। पारिभाषिक शब्द सीधे फारसी से लिए गए हैं। साहित्यिक दृष्टि से इनका कोई महत्त्व नहीं ; परंतु भाषा के इतिहास की दृष्टि से ये महत्त्वपूर्ण हैं।

रचयिता का जीवन वृत्त तथा अन्य कोई परिचय नहीं मिलता।

१६३ शाह बुरहान उद्दीन जाना—ये पूर्वोक्त रचयिता शाह बुरहान से अभिन्न हैं अथवा नहीं इसका ठीक-ठीक निश्चय नहीं होता। ये भी सूफी मत के हैं। इनका भी जीवन वृत्त अज्ञात ही है।

इनके एक ग्रंथ 'इरशाद नामा शाह बुरहान उद्दीन जाना' का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में गुरु शिष्य संवाद के रूप में सूफी मत का प्रतिपादन किया है। इसमें पद्य के अतिरिक्त गद्य भी है, पद्यभाग चौपाइयों में है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल हिजरी सन् १०२७ है जो संवत् १६७५ के लगभग होता है।

ग्रंथ दखिनी भाषा में (जिसे दक्खिनी उर्दू कहा जाता है) लिखा हुआ है। इनके शब्दों के रूपों में प्रायः ये विशेषताएँ मिलती हैं :—

कुछ के लिए कुज प्रयुक्त हुआ है।
लेकिन ,, ,, लाकिन ,, ,, ,,
और ,, ,, होर ,, ,, ,,
भी ,, ,, वी ,, ,, ,,

क्रिया के रूपों में 'मानिया' 'जानिया' आदि भी मिलते हैं। भाषा के इतिहास की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है।

१६४ शुलाकी नाथ नाना—प्रस्तुत खोज में इनके रचे दो ग्रंथों, १—रामायण और २—गीता ज्ञान सागर के विवरण लिए गए हैं। दोनों ग्रंथों की रचना हरिहरपुराण के आधार पर हुई है। हो सकता है, ग्रंथकार ने समस्त हरिहर पुराण का अनुवाद किया हो जिसके प्रस्तुत ग्रंथ अलग अलग अंश हों। प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिलीं हैं जिनमें से एक में किष्किंधाकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड हैं तथा दूसरी में अयोध्याकांड और बालकांड हैं। प्रथम प्रति में दो संवतों १८०७ और १८३३ का उल्लेख है इनमें से कदाचित् प्रथम रचनाकाल और द्वितीय लिपिकाल है। यह अपूर्ण और अत्यंत जीर्ण शीर्ण

अवस्था में है। दूसरी प्रति भी अपूर्ण है जिसके अंत के पन्ने नष्ट हो गए हैं। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का एक ही संवत् १८४१ दिया है।

दोनों प्रतियों को देखने से पता चलता है कि ये रचयिता की ही लिखी हुई संभवतः मूल प्रतियाँ हैं। इसकी रचना गो० तुलसीदास की रामायण के अनुकरण पर की गई है। भाव, भाषा और शैली भी उसी प्रकार की है। भाषा में अवश्य ही भोजपुरी का भी मिश्रण है। उदाहरणार्थ कुछ उद्धरण दिये जाते हैं :—

सोरठा

शंकर चाप जहाज रघुवर सागर बाहुबल।
बूड़े सकल समाज चढ़े जो प्रथमहि मोहवश॥

रामचरित मानस

× × ×

दोहा

संभु चरण सागर तरणी राम बाहु बल थाह।
बीनु पेवे प्रभु पार करी, चढ़ै सकल नरनाह॥

—प्रस्तुत रामायण

× × ×

चौपाई

मातहिं पितहिं उऋण भये नीके। गुरु ऋण रहा सोच बड़ जीके॥
सो जनु हमरे माथे काढ़ा। दिन चलि गयेउ ब्याज बहुबाढ़ा॥

—रामचरित मानस

लखन कहेउ जस मुनि कै करनी। को नहीं जानु सुफल जग बरनी॥
पीत्र भगती अब सब करी बीते। रही सोच गुरु न जीते॥
सो निज काढ़े गये दिन बाढ़े। बढ़ी बीआज पर रोकेहु गाढ़े॥

—प्रस्तुत ग्रंथ

दूसरा ग्रंथ 'गीता ज्ञानसागर' आदि-अंत से खंडित है। इसके कुल दस पत्रे (संख्या २११ से लेकर संख्या २२० तक के) उपलब्ध हुए हैं। पत्र संख्याओं से स्वयं प्रकट हो जाता है कि यह ग्रंथ कितना विशाल रहा होगा। रचनाकाल का कोई पता नहीं लग सका। यह ग्रंथ रामायण की उपर्युक्त प्रथम प्रति के साथ एक हस्तलेख में है। अतः इसका लिपिकाल भी उसी के अनुसार संवत् १८२३ मानना उचित है। यह अध्यायों में है। उपलब्ध अंश में चार ही अध्याय ५१, ५२, ५३ और ५४ हैं। जिनमें क्रमशः केवट केवटनीं संवाद, पच्छिम के घोड़ों का रामदर्शन के लिए अयोध्या जाना, धरती, वनस्पति और पशु संवाद, उनका रामदर्शन को चलना तथा शिशु, नृप, पशु, धरती और वनस्पति संवाद आदि विषयों का वर्णन है।

रचयिता के विषय में रामायण की प्रथम प्रति की पुष्पिका द्वारा पता चलता है कि इनके पिता का नाम जोधसिंह और गुरु का नाम जुड़ावन पर्वत था। ये गौतम गोत्र के सेंगर ठाकुर थे। वास स्थान का नाम सुरतानपुर था जो उस समय गाजीपुर के अंतर्गत तथा अब बलिया जिला में है। उस समय सूबा (प्रांत) इलाहाबाद था। ये प्रसिद्ध महात्मा थे जिन्होंने जल शयन और पंचाग्नि का साधन किया था। अपने नाम के साथ इन्होंने 'पयहारी' शब्द भी जोड़ा है।

उपर्युक्त रामायण की प्रति में किष्किंधाकांड के पश्चात् एक पत्र में इनके वैकुंठवास की तिथि दी हुई है जो इस प्रकार है :—

शमत अठारह सै गये औ पैतालीस आए।
तादिन तजेउ शरीर कह हरीपुर गए हरषाए॥
परीवा रवी दीन पष शुकुल माश पुश करी जानु।
बुलाकी हरीधाम कह ता दीन कीयो पआन॥

इसके अनुसार वैकुंठवास पौष शुक्ल प्रतिपदा, रविवार, संवत् १८४५ को हुआ।

इन महात्मा की समाधि जिस स्थान पर बनी हुई है उसका नाम बुलाकीदासजी की मठिया है। यह अब एक गाँव है जहाँ बाबा जी के ही वंशज रहते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ वहीं प्राप्त हुआ है।

इसमें संदेह नहीं कि बाबाजी सिद्ध महात्मा होने के साथ साथ प्रतिभाशाली कवि भी थे। प्रस्तुत रामायण काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

१६५ बुल्ला साहब—ये ग्रंथ स्वामी श्री राजारामजी महंत (चिट बड़ागाँव, बलिया) के कथनानुसार, यारी साहब के शिष्य और गुलाल साहब के गुरु थे। ये भुड़कुड़ा (जिला गाजीपुर) में निवास करते थे। विशेष के लिये देखिए बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण पत्र। पिछले खोज विवरण (२०-२३) में इनके 'शब्द' विवृत हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार ये १८वीं शताब्दी में वर्तमान थे। इनका असली नाम बुलाकी राय था। साधु हो जाने के पश्चात् बुल्ला साहब कहलाए। सत्यनामी पंथ के प्रवर्तक जगजीवनदास इन्हीं के शिष्य थे।

प्रस्तुत शोध में इनकी 'सापी' मिली है जिसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४० हैं। इसमें निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी है।

१६६ भगवानदास—इन्होंने जयदेव कृत गीतगोविंद का 'अमृत भाष्य गीत गोविंद' नाम से ब्रजभाषा गद्य में अनुवाद किया। पुष्पिका के लेख 'भगवानदास रामानुजा चीरंजी भाषामृत प्रत्तत्पसे' से पता चलता है कि ये रामानुज संप्रदाय के अनुयायी थे।

ग्रंथ में उल्लेख न होने के कारण इनके समय का ज्ञान नहीं होता। दिये हुए उद्धरणों से इनके बारे में और कुछ पता नहीं चलता।

संभवतः खोज विवरण (६९) पर आए भयानकाचार्य के शिष्य भगवानदास यही हों। भयानकाचार्य भी रामानुज संप्रदाय के थे।

१६७ भगवानदास—'प्रेम पदारथ' नामक ग्रंथ के ये निर्माता हैं। रचना में इन्होंने अपना नाम 'भगवान हित रासराय' दिया है। इसमें 'हित' शब्द से यह संदेह होता है कि ये हितानुयायी रहे होंगे।

विवृत हस्तलेख के आरंभ में:—

'श्री राधावल्लभो जयति श्री हित हरिवंश चंद्रो जयति लिखा है।' इससे यह हस्तलेख हित हरिवंशजी के संप्रदायवालों में से किसी का लिखा है।

१६८ भगवानदास—प्रस्तुत रचयिता के 'हरि चरित्र पारायण अमृत कथा' (वृंदावन खंड) नामक एक वृहद् ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसका 'मथुरा खंड' नाम से दूसरा भाग भी है। दोनों भागों (वृंदावन खंड और मथुराखंड) में भागवत दशम स्कंध पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध की कथाओं का वर्णन है। प्रस्तुत भाग में ७२ अध्याय हैं जिनमें कंसजन्म, देवकी वसुदेव विवाह, कृष्णजन्म और व्रज की कृष्ण लीलाएँ वर्णित हैं। अंतिम अध्याय में अक्रूर के साथ मथुरागमन की कथा दी गई है। रचना दोहे, चौपाई और अन्य छंदों में हुई है। चौपाइयों की संख्या २४०० है और अन्य छंदों की ६८।

रचयिता का वृत्त अज्ञात है। इस नाम के कई रचयिता पिछले खोज विवरणों में आए हैं; परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से कोई इनसे साम्य रखते हैं या नहीं। पुष्पिका से पता चलता है कि ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति संवत् १९३१ में लिखी गई।

१६९—भगवतीदास—इन्होंने 'बारहमासा' की रचना की जिसमें श्री कृष्ण के प्रवास पर एक गोपिका के विरह का वर्णन है। रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और विवरण अप्राप्त है। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं अथवा अभिन्न यह जानने का कोई सूत्र नहीं मिलता।

१७० भगौतीदास—गरुड़ पुराण के आधार पर इन्होंने 'नासकेत कथा' लिखी है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं। रचनाकाल संवत् १६८८ है :—

> संवत् सोरह से भये अठासी। जेष्ठ मास दुतिया पर भासी।
> सुकल पछ औ सोमकवारा। मिरग सिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा॥

रचयिता ने अपने विषय में कुछ नहीं लिखा है। आरंभ में इन्होंने अपने नाम के साथ 'नृप' शब्द जोड़ा है जिससे ये राजा जान पड़ते हैं।

१७१ भजनदास (हित)—इनकी 'हित भजनदास की बानी' में राधा कृष्ण के प्रेम विहार का वर्णन है। आरंभ में गुरु चितवनी अलि (चेतनदास, वास्तविक नाम) की वंदना है। पश्चात् श्री हित हरिवंश जी की स्तुति की गई है। अंत में युगलमूर्ति (राधा कृष्ण) का प्रेम विहार वर्णित है। रचना काव्यग्रंथ न होकर धार्मिक अथवा सांप्रदायिक ग्रंथ मात्र है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८७६ है।

रचयिता हितानुयायी थे। गुरु का नाम जैसा कि ऊपर लिखा गया है चेतनदास था। अन्य परिचय नहीं मिलता।

१७२ भरथरी—भरथरी गोपीचंद भरथरी के नाम से समस्त भारत परिचित है। प्रस्तुत शोध में भरथरी के नाम से कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं। इनके विषय में कृपया देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

१७३ भागवतदास—प्रस्तुत रचयिता के निम्नलिखित दस ग्रंथ इस त्रिवर्षी में विवृत्त हुए हैं। इनमें से कुछ के विवरण पहले लिए जा चुके हैं जिनका उल्लेख यथास्थान किया जायगा :—

१—भागवत चरित्र—इस ग्रंथ में चार व्यूह अथवा खंड हैं और प्रत्येक व्यूह में अट्ठारह-अट्ठारह अध्याय हैं। इसका मूल विषय अवतारों और भक्तों का चरित्रवर्णन है। भक्तों में से अधिकांश पौराणिक हैं, जैसे प्रह्लाद, ध्रुव आदि। शेष ऐतिहासिक हैं, जैसे—शंकराचार्य, रामानुज माधवाचार्य, और विष्णु स्वामी आदि। ये चरित्र परंपरागत अनुश्रुतियों पर आधारित हैं। अतः इनमें ऐतिहासिकता का अभाव है। इसका रचनाकाल संवत् १८६३ वि० और लिपिकाल संवत् १८८० है। रचना अवधी भाषा और दोहा चौपाई छंदों में हुई है। इसका विवरण पहले भी लिया जा चुका है, देखिए खोज (९-२२; २३-५१)। इसकी प्रस्तावना की शैली रामचरित मानस की सी है।

२—हनुमान अष्टक—यह ग्रंथ हनुमान जी के स्तोत्र के रूप में लिखा गया है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इसकी भाषा भी अवधी है। छंद दोहा, सवैया हैं।

३—रामायण माहात्म्य—प्रस्तुत रामायण माहात्म्य में श्री रामचंद्र जी की महिमा का वर्णन है। पुष्पिका में संवत् १९११ दिया है जो लिपिकाल का संवत् है।

४—रामायण माहात्म्य—इसमें क्रमशः रामकथा की महिमा, उसके प्रभाव से सुदामा नामक व्यक्ति की मुक्ति, कथा पारायण की विधि तथा फल वर्णित हैं। इसकी रचना सूत और शौनक ऋषि के संवाद के रूप में हुई है।

५—तत्वबोध—इस ग्रंथ का विषय दर्शन है। इसमें ब्रह्म, जीव और जगत् का विचार है। इसमें दोहा और सोरठा छंदों का प्रयोग कर केवल ६ पद्यों में दर्शन जैसे गूढ़ एवं जटिल विषय का सरलतापूर्वक निरूपण किया गया है। इस ग्रंथ में

रचयिता ने अपने लिये 'जन भगवत' का भी प्रयोग किया है —'जन भगवत त्येहि मग चलै सहज परमपद होई ॥' रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

६—रामरसायन—इसका मूल विषय तो पिंगल है; परंतु रचयिता ने इसमें रस, अलंकार आदि अन्य काव्यांगों का भी यथास्थान समावेश किया है। ग्रंथ के अंत में पट्ऋतुओं का वर्णन है। लक्षणों और उदाहरणों के लिये 'रामचरित मानस' के छंद ही उद्धृत किए गए हैं। इसका रचनाकाल संवत् १८६७ है। लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत त्रिवर्षी में इसकी दो प्रतियाँ विवृत हुई हैं। इस ग्रंथ का उल्लेख पहले भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (९-२१; २३-४५)।

७—सूर्य पुराण—इसमें पाँच अध्याय हैं जिनका वर्ण्य विषय क्रमशः नीचे दिया जाता है :—१-सूर्य के बारह नाम, महिमा, पुराण की परंपरा, नारद और ब्रह्मा का संवाद, पूजा विधि; २-अवतार वर्णन, ३-सूर्य के व्यूहों का वर्णन, ४-नारद यज्ञ, ५-नाम माहात्म्य। इसमें रचनाकाल तो नहीं, परंतु लिपिकाल सं० १८९३ का उल्लेख है। संभवतः यह रचयिता के समक्ष ही लिखा गया ज्ञात होता है। भाषा अन्य ग्रंथों की अपेक्षा प्रौढ़ है।

८—सच्चिदानंद विहार स्तोत्र—इसका विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल एक ही संवत् १८५५ है। भाषा से ज्ञात होता है कि यह रचयिता की प्रारंभिक रचना होगी।

९—रामरहस्य—इसमें भगवान् राम का यश वर्णित है। रचयिता ने इसे महाकाव्य लिखा है। इस में नीचे दिये छ सर्ग हैं —१-सीता अवतार वर्णन, २-राम सावित्री जन्म से लेकर दंडकारण्य तक की कथा, ३-राम कलस को जागरन व्रत, इसमें दंडकवन की रहस्य लीला का वर्णन है, ४-साकेत नगर का वर्णन, ५-सप्तग्राम लीला वर्णन, इसमें जाप की विधि और सूर्पणखा लीला तक की कथा है, ६-जज्ञ वर्णन, इसमें महाप्रयाण की कथा वर्णित है। इसकी भाषा अवधी है। यह दोहा, चौपाई, सोरठा और अन्य वृत्तों में लिखा गया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं। लिपिकाल संवत् १९११ है।

१०—रामकंठाभरण—इसमें १०८ पद और कवित्तों में राम चरित्र का वर्णन है। इसमें सीताराम के विवाह तथा दांपत्य सुख की कथा का ही समावेश है। मुख्य विषय के अतिरिक्त रामभक्ति के भी अनेक पद हैं। पदों में आद्योपांत विपयानुकूल कोई क्रम नहीं। भाषा व्रज है। रचनाकाल संवत् १८८९ और लिपिकाल संवत् १९२६ है। ग्रंथ साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

रचयिता प्रयागनिवासी श्री संप्रदाय के वैष्णव थे। प्राचीन पत्रों (कागजातों) के आधार पर इनकी गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

इनके जन्म अथवा मृत्यु का समय अद्यावधि निर्णीत है। इन्होंने 'भागवत चरित' की रचना संवत् १८६३ में मथुरा में आरंभ की जिसका ग्रंथ में उल्लेख है। इसके अतिरिक्त एक पुराने कागज से इनका सं० १८९७ वि० में होना सिद्ध होता है—'मिती पौष सुदी अमावस १५ वार मंगल संवत् १८९७ भूमि ठाकुर क चढ़ाई जिमीदार तिलहापुर के ठाकुर छोट्ट सिंह दुरगापुर मा महंत भागवतदास जी कौ बीगहा २८ दसखत छोट्ट सिंह।'

इससे सिद्ध होता है कि ग्रंथकार सं० १८६३ और १८९७ के बीच वर्तमान थे। ये परम साधु एवं सिद्ध महात्मा थे। इनका स्वभाव स्वच्छंद और विचारशील था। ये प्रयाग छोड़कर फतेहपुर जिले में चले गए थे जहाँ खजुहा तहसील के शिलावन गाँव में इन्होंने शिलावन कुटी की स्थापना की तथा यत्रतत्र कई तालाब खुदवाये।

सन् १९०९–११ के खोज विवरण में इनके 'रामरसायन' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है, परंतु उसके आधार पर कवि का जो जीवनवृत्त दिया है उसका सार संक्षेप यह है—भागवतदास जी भगरौरा (जिला रायबरेली) के रामप्रसाद विप्र के पुत्र थे। वहाँ से प्रयाग आकर टहलदास बाबा की परंपरा में बाबा सीताराम जी के शिष्य हुए। ये सीताराम रामदास या सीतारामदास ही रहे होंगे।

१७४ भीखासाहब—ये अपनी रचना 'शब्दावली' के साथ पिछले खोज विवरण (२०–१८) में उल्लिखित हैं। उसके अनुसार ये सत्यनामी संत गुलाल साहब के शिष्य थे। जन्मस्थान खानपुर बोहना (जिला आजमगढ़) था। जाति के चौबे ब्राह्मण थे। बारह वर्ष की वय में इनके हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई।

इस बार चिटबड़ा गाँव (बलिया) के महंत श्री राजाराम जी द्वारा इनके विषय में और बातें विदित हुई हैं जिसके अनुसार ये विरक्त होने पर गुरु के साथ भुड़कुड़ा (जिला गाजीपुर) में रहने लगे। पीछे गद्दी के महंत बने। इनकी गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

श्री राघवानंद स्वामी
|
श्री रामानंद स्वामी
|
श्री अनंतानंद जी
|
श्री कृष्णानंद जी
|
श्री जोगानंदजी
|
श्री मायानंद जी
|
श्री दयानंद जी
|
श्री बावरी साहबा (स्त्री मुसलमान)
|
बीरू साहब (मुसलमान)
|
यारी साहब (,,)
|
बुला साहब
|
जगजीवनदास — गुलाल साहब
|
भीषासाहब (देखिए दूसरे पृष्ठ पर) — हरलाल साहब
|
गजराज साहब
|
जीवन साहब
|
तेजधारी साहब
|
देवकी नंदन साहब
|
बनमाली साहब
|
बृजमोहन साहब
|
श्री राजारामजी (वर्तमान चिटबड़ागाँव)

इससे यह पता चलता है कि प्रस्तुत खोज विवरण में आए बावरी साहबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, गुलाल साहब आदि इन्हीं की गुरु परंपरा में हुए हैं।

प्रस्तुत खोज में इनके निम्नलिखित पाँच ग्रंथ और मिले है :—

१—ककहरा—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४० हैं। विषय—'क' से लेकर 'ह' तक तथा 'अलिफ' से लेकर 'ए' तक के प्रत्येक अक्षर से आरंभ करके ब्रह्म ज्ञानोपदेश किया गया है।

२—नामपहरा—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय—एक से लेकर दस तक के प्रत्येक अंक से आरंभ करके ज्ञानोपदेश किया गया है।

३—श्री रामकुंडलिया—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय-सांसारिक माया मोह त्यागकर रामभजन करने का उपदेश।

४—श्री रामजी का सहस्र नाम—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय-राम के सहस्रनामों का वर्णन।

५—रेखता—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। इसमें रचयिता ने आत्मकहानी लिखी है। संक्षेप में आत्मकहानी इस प्रकार है:—

'बारह वर्ष बीतने पर हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई जो बहुत अच्छी लगी। उसके आगे खाना, पीना, घर, द्वार, स्त्री, पुत्र आदि सब नीरस जान पड़ने लगे। लोगों के कहने पर शांति के लिये षट्दर्शन पढ़े। काशी में भी रहा; परंतु सब व्यर्थ।

'अंत में चलते-चलते भुड़कुड़ा स्थान पर आया जहाँ श्री गुलाल साहब के घर पर चित्त शांत हुआ। साथ ही साथ आत्मज्ञान भी प्राप्त हुआ'।

श्री राघवानंद स्वामी
|
श्री रामानंद स्वामी
|
श्री अनंतानंद जी
|
श्री कृष्णानंद जी
|
श्री जोगानंदजी
|
श्री मायानंद जी
|
श्री दयानंद जी
|
श्री बावरी साहबा (स्त्री मुसलमान)
|
बीरू साहब (मुसलमान)
|
यारी साहब (,,)
|
बुला साहब
|
जगजीवनदास — गुलाल साहब
|
भीखासाहब (देखिए दूसरे पृष्ठ पर) — हरलाल साहब
|
गजराज साहब
|
जीवन साहब
|
तेजधारी साहब
|
देवकी नंदन साहब
|
वनमाली साहब
|
बृजमोहन साहब
|
श्री राजारामजी (वर्तमान चिटवड़ागाँव)

इससे यह पता चलता है कि प्रस्तुत खोज विवरण में आए बावरी साहबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, गुलाल साहब आदि इन्हीं की गुरु परंपरा में हुए हैं।

प्रस्तुत खोज में इनके निम्नलिखित पाँच ग्रंथ और मिले है :—

१—ककहरा—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४० हैं। विषय—'क' से लेकर 'ह' तक तथा 'अलिफ' से लेकर 'ए' तक के प्रत्येक अक्षर से आरंभ करके ब्रह्म ज्ञानोपदेश किया गया है।

२—नामपहरा—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय—एक से लेकर दस तक के प्रत्येक अंक से आरंभ करके ज्ञानोपदेश किया गया है।

३—श्री रामकुंडलिया—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय-सांसारिक माया मोह त्यागकर रामभजन करने का उपदेश।

४—श्री रामजी का सहस्र नाम—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय-राम के सहस्रनामों का वर्णन।

५—रेखता—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। इसमें रचयिता ने आत्मकहानी लिखी है। संक्षेप में आत्मकहानी इस प्रकार है:—

'बारह वर्ष बीतने पर हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई जो बहुत अच्छी लगी। उसके आगे खाना, पीना, घर, द्वार, स्त्री, पुत्र आदि सब नीरस जान पड़ने लगे। लोगों के कहने पर शांति के लिये षट्दर्शन पढ़े। काशी में भी रहा; परंतु सब व्यर्थ।

'अंत में चलते-चलते भुड़कुड़ा स्थान पर आया जहाँ श्री गुलाल साहब के घर पर चित्त शांत हुआ। साथ ही साथ आत्मज्ञान भी प्राप्त हुआ'।

पहली और चौथी संख्या के ग्रंथ एक हस्तलेख में हैं जिसमें गुलाल साहब, यारी साहब, मलूकदास, बुल्ला साहब, गो० तुरसीदास, नानक देव, मीरा, सूरदास, देवमुरारि, अनाथ, गरीबदास, रैदास, अग्रदास, धरनीदास और कबीर आदि की रचनाएँ संगृहीत हैं। इसमें दो लिपिकाल दिए हैं। संवत् १८३८ (विचारमाल रचना में) और १८४० (ह० ले० के अंत में)।

१७५ भुवनदास—प्रस्तुत रचयिता के दो ग्रंथों, १—कृष्ण संहिता और २—राम संहिता (यज्ञ खंड) के विवरण लिए गए हैं।

प्रथम में ८ मंडकों (अध्यायों) में भागवत की कथा का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १९२४ है। लिपिकाल नहीं दिया है।

दूसरे ग्रंथ में सात मंडक (अध्याय) हैं जिनमें रामकथा का विस्तृत वर्णन है। रचनाकाल संवत्१९३५ है। लिपिकाल अज्ञात है।

ग्रंथों को देखने से विदित होता है कि ये एक ही ग्रंथ के अंश हैं। इनकी भाषा अवधी है तथा रचना दोहा और चौपाई छंदों में की गई है।

रचयिता ने अपना कोई विवरण नहीं दिया है। खोज विवरण (९–२८) पर आए भुवनदास से ये भिन्न हैं।

१७६ जनभुवाल—इनकी रची हुई 'अर्जुन गीता' खोज विवरण (१७–२७) पर आ चुकी है जिसकी एक प्रति इस बार भी मिली है। इसमें गीता का ही सार वर्णित है। रचनाकाल संवत् १७०० और लिपिकाल संवत् १८९८ वि० हैं। रचना दोहे, चौपाइयों में की गई है।

यह दो अन्य ग्रंथों, १—छप्पै रामायण (गो० तुलसीदास कृत), २—सुदामा चरित्र (हलधर कृत) के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता का वृत्त इस बार भी अज्ञात ही है।

१७७ भूपराम—इनके 'सूर्य कथा' नामक ग्रंथ में सूर्य भगवान् की महिमा तथा उनके व्रत का फल वर्णित है। प्रसंगानुसार इसमें त्रिपुर, दैत्य, हलधर विप्र, रूप महेश, तथा जैमल विप्र की कथाएँ हैं। कथा का आरंभ उमा-महेश्वर-संवाद से हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं।

रचयिता के नाम का उल्लेख केवल एक स्थान पर है। कोई और परिचय नहीं मिलता। प्रस्तुत खोज में ये प्रथम बार ही विदित हुए हैं।

१७८ भृगुपति—इनका 'सुदामा चरित' मिला है। रचनाकाल का कहीं उल्लेख नहीं। लिपिकाल संभवतः हिजरी सन् में दिया है जो ११५९ शाल १८ रजव (रज्जब) रोज शुक्र है जिसके अनुसार संवत् १८०३ होता है। ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसकी रचना खड़ी बोली में है जिसमें प्रांतीय शब्दों और ध्वनियों का भी समावेश है। यत्र तत्र फारसी के शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

रचयिता ने अपना नाम ग्रंथांत में 'भीर्गपती' लिखा है जिसका शुद्ध रूप भृगुपति समझा गया है जो विवरण पत्र में दे दिया गया है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

१७९ मंडन—इनकी 'रसरत्नावली' की एक प्राचीन पूर्ण प्रति (संवत् १७८८ में लिपिबद्ध) का इस बार विवरण लिया गया है। इसमें रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं। इसका उल्लेख खोज विवरण (२०–१०३) (२३–२६५) (२६–२९२) में हो चुका है।

प्राप्त प्रति से रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता; परंतु खोज विवरण (२०–१०३) के अनुसार ये जैतपुर (बुंदेलखंड) के निवासी और राजा मंगदसिंह के आश्रित थे। अपने समय के अच्छे कवि थे। पूरा नाम संभवतः मणि मंडन था। ये संवत् १७१६ में वर्तमान थे। इनकी एक रचना 'जनक पचीसी' खोज विवरण (६–७२) में उल्लिखित है।

१८० मकरंद हित—'इनकी 'मकरंद वाणी' में 'पद' तथा 'रतिरण केलि लता' नामक रचनाएँ संमिलित हैं। विशेषता पदों की ही है। कहीं कहीं सवैया आदि भी हैं जो अपवादस्वरूप हैं। इसमें श्री राधाकृष्ण जी के रास विलास तथा हित हरिवंश जी का यश वर्णित है। रचनाकाल संवत् १८१८ और लिपिकाल संवत् १८२५ है।

रचयिता का विशेष जीवनवृत्त नहीं मिलता। रचनाकाल के आधार पर ये संवत् १८१८ में वर्तमान थे।

१८१ मगनिया—इनका 'मगनिया रा दूहा' नामक नीति और धर्मविषयक चौवालीस सोरठों का संग्रह विवृत हुआ है। इनका कोई परिचय नहीं मिलता, परंतु सोरठों की भाषा राजस्थानी होने से ये राजस्थानी जान पड़ते हैं।

सोरठों का रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात है।

१८२ मतिराम—इनका उल्लेख विवरण में संख्या १६ पर विस्तृत रूप से हो चुका है अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

१८३ (मन) संतोष—'विषहरन विधि' नामक रचना में अनेक प्रकार के विषों की औषधों का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १९२० है।

रचयिता का नाम 'संतोष' है। कहीं कहीं 'संतोष चदेरी' का उल्लेख है।

'संतोष चदेरी वैद तावै।'

'चदेरी' कदाचित् स्थान का नाम है। एक चंदेरी ग्वालियर में है। अन्य विवरण अज्ञात है। खोज विवरण (६–३२४) में उल्लिखित 'विषनाशन' के रचयिता संतोष से ये अभिन्न जान पड़ते हैं। उक्त विवरण में ग्रंथ से उद्धरण नहीं दिये गये हैं, इसलिये पूरा मिलान नहीं हो सका।

१८४ मनिवेद या वेदमनि वेद—प्रस्तुत रचयिता के शृंगार और भक्ति विषयक कवित्तों तथा कुछ पदों का एक संग्रह 'कवित्त' नाम से विवृत हुआ है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। रचना साहित्यिक है।

रचयिता ने अपने नाम के लिये अधिकतर 'वेदमनि' लिखा है। कहीं कहीं 'मनिवेद' या 'वेद' भी नाम आए हैं।

अन्य परिचय नहीं मिलता। इनका पता प्रथम बार ही लगा है।

१८५ मनिराम—इनके कवित्तों के दो संग्रह 'मनिराम के कवित्त' और 'पातिसाहि कवित्त साहिजहाँ के' नाम से प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। प्रथम में दो सौ छह कवित्त हैं और दूसरे में दो सौ चार। रचनाकाल तथा लिपिकाल किसी में नहीं दिए हैं। दोनों के आरंभ के कवित्त एक ही हैं, अतः विदित होता है कि ये मूल संग्रह की दो भिन्न-भिन्न प्रतियाँ हैं। कवित्तों के विषय में उल्लेखनीय बात यह है कि इनके अधिकांश कवित्तों में 'मनीराम' की छाप नहीं है तथा संख्या में क्रम का अभाव है। बहुत ही थोड़े कवित्त ऐसे हैं जिनमें काव्य की प्रौढ़ता पाई जाती है।

कवित्तों का मूल विषय शाहजहाँ और उसके दरबार के राजपुरुषों की प्रशंसा है। इसके अतिरिक्त कुछ कवित्तों का विषय देवी, शिव और कृष्णभक्ति तथा भ्रमर गीत आदि हैं।

शाहजहाँ के विषय के कवित्तों में उसके बसाये दिल्ली और शाहजहाँनाबाद नगरों का भी वर्णन है। शेष में निम्नलिखित राजपुरुषों के वर्णन हैं:—

१—फिरोज खाँ (कवित्त संख्या २, २५, २६)
२—मुदफर हुसैन (क० सं० ११, १७, १८, ३६, ३७, ७०, ७४)
३—मिरजा साहब शेख फुलह (क० १२)
४—वहमनियार खाँ (आसफ खाँ के पुत्र क० सं० २४)
५—इतराद खाँ (आसफ खाँ के पुत्र क० सं० ६६)
६—मिरजा मुतलिब (क० सं० ३०, ३१)
७—दारा शिकोह (क० सं० ३२, ५६, ७२, ७१)
८—तरबियत खाँ (क० सं० ३५)
९—निजाबत खाँ (क० सं० ६३, ६४)
१०—असालत खाँ (क० सं० ६७)
११—आसफजाह (क० सं० १६३, १६७)
१२—माथुर मुकुंदराय (क० सं० १६८)
१३—जयसिंह (क० सं० ५३, ५४, ५५)
१४—कुँवर अमरसिंह (राजा जयराम के पुत्र क० सं० ३३)
१५—मित्रसेन (क० सं० १३)
१६—सदारंग (क० सं० १४)

ऊपर कवित्तों की संख्याएँ दूसरे संग्रह (पातसाही कवित्त साहिजहाँ) के अनुसार दी गई हैं ।

रचयिता असनी के महापात्र नरहरि के वंशज थे। इनकी वंशावली इस प्रकार है (अन्वेषक ने पता लगाकर यह वंशावली दी है :—
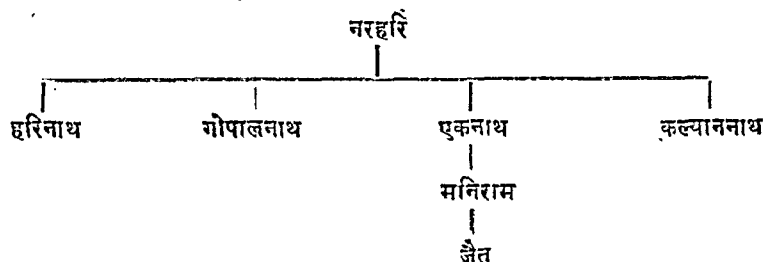
प्रथम संग्रह (मनिराम के कवित्त) में इनके पुत्र जैत (जेतसिंह महापात्र) का जन्मांग दिया है जिसमें उनका जन्मसंवत् १७०३ का उल्लेख है। अतः इनका समय लगभग यही माना जाना उचित है, देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में जैतसिंह महापात्र।

ये शाहजहाँ के समकालीन और उनके दरबार से संबद्ध थे। प्रस्तुत कवित्तों से स्पष्ट है कि न केवल बादशाह अपितु वजीर, सेनापति तथा अन्य राजन्यवर्ग भी हिंदी कविता के प्रेमी और कवियों के आश्रयदाता थे। खोजविवरण (६-२९०) में 'आनंद मंगल' के रचयिता एक मनिराम का उल्लेख है। पर यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा अभिन्न ।

१८६ मनोहरदास—इनका प्रस्तुत ग्रंथ 'श्री राधिकारमण रससागर' या 'राधा रमणरस सागर' पिछले दो खोज विवरणों (९-१०१) (१२-१०९) में उल्लिखित है। अबतक इनका विवरण अज्ञात था। इस बार इनके संबंध में जो कुछ विदित हुआ वह यों है :—

ये श्री माध्व गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी श्री राधारमण मंदिर वृंदावन में रहते थे। इन्होंने अपनी गुरु परंपरा इस प्रकार दी है :—
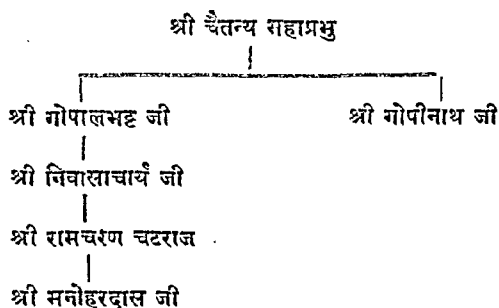
विवरण पत्र में उद्धृत पाँचवें छप्पय से विदित होता है कि श्री हरिनाथजी, श्री मथुरादास जी तथा श्री हरिरामजी इनके पूर्वज थे।

वृंदावन के निवासी तथा गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी श्री किशोरदास बाबा द्वारा पता चला कि सुप्रसिद्ध भक्तमाल के टीकाकार श्री प्रियादास जी इन्ही मनोहरदास जी के शिष्य थे।

१८७ मलूक—इनकी 'उधौ पच्चीसी' में उद्धव और गोपियों का संवाद है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचना कवित्त और सवैयों में है। भाषा ब्रजी है।

रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। ये कड़ा मानिकपुर निवासी प्रसिद्ध संत मलूकदास से भिन्न ज्ञात होते हैं।

१८८ मलूकदास—'प्रगटज्ञान' के ये रचयिता कड़ा मानिकपुर निवासी प्रसिद्ध मलूकदास हैं। ग्रंथ में विवेक, घटसाधन, विचार, जगतकारन, आत्मदेह, मुक्ति, अनात्म-अनाम, ज्ञान-जोग आदि विषय वर्णित हैं। रचनाकाल और लिपिकाल, अज्ञात हैं। रचना दोहे चौपाइयों में की गई है। भाषा अवधी है। 'कथा प्रगट ग्यान गरंथ संसकीरत में अनभा' से पता चलता है कि ग्रंथ का आधार कोई संस्कृत ग्रंथ है।

१८९ काजी महमूद बहरी—इनका 'मनलगन' ग्रंथ सूफी दर्शन विषयक रचना है। आरंभ में क्रम से ईश्वर वंदना, मुहम्मद साहब की वंदना, सामयिक सम्राट् (बादशाह औरंगजेब) की प्रशंसा, गुरु की वंदना और पुस्तक लिखने के कारण आदि वर्णित हैं। पश्चात् मूल विषय आरंभ होता है जिसका प्रतिपादन कहानी और उपदेश के क्रम से किया गया है। अर्थात्—पहले कहानी के रूप में कोई दृष्टांत दिया गया है तब उसका निष्कर्ष समझाया गया है। रचना हिजरी सन् के अनुसार बारहवीं सदी की है :—

'हे भाई यो बारवीं सदी है।
नेकी को दवा बंदी बदी है॥'

पुस्तक की भाषा दक्खिनी हिंदी है। फारसी शब्दों का प्रयोग स्वतंत्रता पूर्वक हुआ है। सूफियों के प्रिय छंद दोहे-चौपाइयों के स्थान पर फारसी छंद ही लिए गए हैं। रचना शैली भी फारसी की है।

रचयिता गोगी के रहनेवाले और शेख मुहम्मद बाकिर कादिरी के शिष्य थे। ग्रंथ रचना दक्खिनी हिंदी में है :—

'हिंदी तो जबान चाहे हमारी
दखिनी न लागी हमन को भारी'

दखिनी, हिंदी का ही विशेष रूप है जिसको वहाँ के नवाबों तथा राजवर्ग ने अपने ढंग पर पाला पोसा था। इसमें क्रमशः अधिक से अधिक विदेशीपन लाने की चेष्टा की गई।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता, परंतु रचयिता ने औरंगजेब और हिजरी की १२ वीं सदी का उल्लेख किया है, अतः रचना भी उसी समय की है।

१६० महादेव—इनका नाम सिद्धों के साथ आया है तथा इनकी 'वाणियों' के विवरण भी लिए गए हैं, देखिये 'सिद्धों की वाणी का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या ५९ तथा विवरण अंश में संख्या १।

१६१ माखन—इनका 'श्री नाग पिंगल' छोटा सा ग्रंथ है जिसमें पिंगल विषय का अत्यंत संक्षेप में वर्णन है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

प्रस्तुत ग्रंथ सैय्यद कालिम अली प्रधान अध्यापक नार्मल स्कूल छुईखदान स्टेट से प्राप्त हुआ है। इसके भीतर उनका लिखा एक पत्र भी है जिससे रचयिता तथा उनके पिता गोपाल के विषय में कुछ बातें विदित होती हैं। पत्र से ये अंश ज्यों के त्यों उद्धृत किये जाते है :—

'ये दोनों कवि (रचयिता और उनके पिता गोपाल) छत्तीसगढ़ मध्यप्रांत (अब मध्यप्रदेश) के प्रमुख गण्यमान्य धुरंधर कवि हो गये हैं। पं० लोचनप्रसादजी पांडेय ने दिसंबर १४ की हितकारिणी में इन दोनों कवियों की जीवनी दर्शाते हुए उनकी लिखी पुस्तकों पर प्रकाश डाला था। इनकी कई पुस्तकें बड़े बड़े राजाओं ने प्रकाशित करा दी हैं। अब ये दो (श्री नाग पिंगल और विनोद शतक जो सभा में भेजे गये हैं) और मिली हैं जो अभी तक भी प्रकाशित न हो सकीं।

'गोपाल कवि, रतनपुर (बिलासपुर) के रहनेवाले थे। इनके पिता का नाम गंगाराम था और पुत्र का नाम माखन। इन दोनों, पिता पुत्रों ने कविता में कई ग्रंथ रचे। इनका कविता काल संवत् १७५९ व सन् १७०२ दृष्टिगोचर हुआ है। इनके ७ मुख्य मुख्य कविता ग्रंथ इन समेत मिल चुके हैं।

१—भक्त चिंतामणि—२५० पृष्ठ कांकेर नरेश ने प्रकाशित करा दी।

२—रामप्रताप—पं० जयलालजी ने मुद्रित करा दी।

३—जैमिनी अश्वमेध—खैरागढ़ नरेश ने प्रकाशित करा दी।

४—खूब तमाशा—प्रकाशित हो गया।

५—सुदामाचरित्र—प्रकाशित नहीं हुआ।

६—छंद विलास—

७—विनोद शतक—

'इनके ग्रंथों में राजसिंह राजा का वर्णन आया है। ये राजसिंह राजा संवत् १७५६ से १७७६ तक शासन करते रहे हैं, छंद विलास से यही पता चलता है। राजसिंह रतनपुरा के राजा थे जो आज बिलासपुर के अन्तर्गत है। और ग्रंथों में रायपुर का प्रकाश दीखता

है। इससे मालूम होता है कि रायपुर का राजवंश रत्नपुरा के घराने का है राजसिंह के कोई संतान (?न) हुई—इससे रायपुर में सम्मिलित हो गया हो, और गोपाल व माखन कवि इनके चाणक थे इससे वह भी रायपुर आ गये हों या ग्रंथ के अंत में रायपुर आ गये हों—जो कुछ भी हो।

'इन ग्रंथों का एक महत्व और भी उल्लेखनीय है कि **माखन कवि ने ग्रंथ रचेपर पितृभक्ति स्त्रेण (?) के कारण उन्हीं के पिता के नाम पर इति ग्रंथ किया गया है।**

'राजा राजसिंह हैहयवंशीय थे और बड़े प्रजाभक्त और विद्यानुरागी तथा विद्वानों का आदर करनेवाले थे।'

ऊपर बड़े अक्षरों वाला अंश विचारणीय है। इस विषय में देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में 'गोपाल'।

प्रस्तुत ग्रंथ गोपाल कवि के विनोदशतक, शृंगारशतक, कीर्तिशतक, पुण्यशतक, वीरशतक और कर्मशतक के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता गोपाल कवि के पुत्र, राजा राजसिंह के आश्रित और रायपुर के रहनेवाले थे। ये आजतक की खोज में मिले इस नाम के अन्य रचयिताओं से भिन्न हैं।

१६२ माखनदास—माखनदास द्वारा रचित 'दोहावली' का विषय ज्ञान, भक्ति और वैराग्य है। आरंभ में गुरु की महिमा है पश्चात् रामनाम का माहात्म्य और अंत में राम के शील तथा भक्तवत्सलता का वर्णन। रचनाकाल प्राप्त नहीं। लिपिकाल संवत् १८६१ है। रचना साधारण है।

रचयिता राममार्गी वैष्णव जान पड़ते हैं। खोज में नवोपलब्ध हैं।

१६३ माणक प्रस्तुत शोध में इस कविकृत 'माणकबोध या आत्मविचार' का विवरण लिया गया है। यह आत्मज्ञान विषयक प्रौढ ग्रंथ है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९१५ दिया है। इसमें चार प्रकरण हैं।

इसकी टीका भी की गई है जो रचयिता से भिन्न व्यक्ति द्वारा की गई विदित होती है :—

'यो प्रकर्ण आपकी (आत्मा की संभवतः) विशुद्धि के लिये कीयो है कछु कीर्त्यादि के लिए नहीं कीयो है। ऐसो आपको अभप्राय कवित्त में दिखावे है।'

मूल कवित्त-सवैयों में है और टीका गद्य में। ग्रंथ अपूर्ण है तथा लिपिकर्त्ता के लिपिदोष से अत्यंत अशुद्ध है।

रचयिता तथा टीकाकार में से किसी का भी परिचय नहीं मिलता। खोज विवरण (३८-९७) में आए 'माणक पदावली' के रचयिता भी संभवतः ये ही हैं। 'माणक पदावली' का विषय भी ज्ञान ही है।

१६४ माधोदास—इनका वृत्त उपलब्ध नहीं होता। अन्य खोजविवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न, इसका भी पता नहीं चलता।

इनकी प्रस्तुत रचना 'करुणाष्टक' का विषय कृष्णस्तुति है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है।

१९५ माधोदास--ये 'दानलीला' के रचयिता हैं। इनके संबंध में कोई विवरण नहीं मिलता। साथ ही यह भी प्रकट नहीं होता कि अन्य खोजविवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं के साथ ये किसी प्रकार का साम्य रखते हैं अथवा नहीं।

प्रस्तुत रचना का विषय नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है। भाषा राजस्थानी है।

१९६ माधोदास—इनकी 'रथलीला' में जगन्नाथ जी की रथयात्रा का वर्णन है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है।

रचयिता का भी कोई परिचय नहीं मिलता। रचना द्वारा ये वल्लभ संप्रदाय के ज्ञात होते हैं।

खोज विवरण (२९–२१६) (३८–६२) में आए माधोदास से ये भिन्न हैं या अभिन्न, इसका कोई निश्चय नहीं होता।

१९७ माधोदास—इनकी 'पदावली' में राम और कृष्ण की भक्ति विषयक फुटकल पद हैं। रचनाकाल अविदित है। लिपिकाल हस्तलेख में लिपिबद्ध अन्य ग्रंथ के आधार पर संवत् १८०७ है। पदों की भाषा ब्रजी है। प्रस्तुत पदों से रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। अन्य खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से इनका साम्य स्थापित करने का कोई सूत्र नहीं मिलता। प्रथमपद से इनका वृंदावन के प्रति अनुराग लक्षित होता है। संभव है ये वहीं रहते रहे हों।

१९८ माधोसिंह (छितिपाल या छितिपालक उपनाम)—इन्होंने संवत् १९१३ में 'मनोजलतिका' नामक ग्रंथ की रचना की। रचना में नखशिख का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है।

रचयिता ने अपना जो विवरण दिया है उसके अनुसार ये अमेठी के राजा थे और रामनगर में रहते थे। ये बंधुल गोत्री एवं सूरजकुल कछवाहा ठाकुर थे। खोज विवरण (२३–२५६) में ये 'देवी चरित्र सरोज' के रचयिता के रूप में उल्लिखित हैं। डाक्टर ग्रियर्सन ने इनका सन् १८८३ में जीवित रहना लिखा है।

१९९ मानमुनि—ये 'मान बतीसी' के रचयिता हैं। नाम से ये जैन विदित होते हैं। ये संवत् १७२१ में वर्तमान थे। अन्य परिचय नहीं मिलता। 'कविप्रमोदरस' नामक वैद्यक ग्रंथ के एक रचयिता मानजी मुनि का खोज विवरण (२०–१०१) में उल्लेख है। परंतु यह पता नहीं चलता कि वे प्रस्तुत रचयिता से भिन्न हैं अथवा अभिन्न। दोनों के ग्रंथों का विषय अलग अलग होने से उन्हें एक मानने में अड़चन है। यद्यपि दोनों का समय लगभग एक ही है तथा दोनों ही राजस्थानी विदित होते हैं। मान जी मुनि संवत् १७४६ में वर्तमान थे।

'मानबत्तीसी' संयोग शृंगार विषयक रचना है। यह तीन अध्यायों (उन्मादों) में है। रचनाकाल संवत् १७३१ है। लिपिकाल नहीं दिया है।

२०० मीड़कीपाव—मीड़कीपाव का नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ 'बाणियाँ' प्राप्त हुई हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की बाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। समय और विशेष परिचय अज्ञात हैं।

२०१ शाह मीरानजी—'शाहीदतुल तहकीक' नामक इनके ग्रंथ का विषय तसव्वुफ अर्थात् सूफी दर्शन है। इसमें क्रम से ईश्वर वंदना, मुहम्मद साहब की प्रशंसा गुरु या पीर का स्मरण और उपदेश आदि का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल में से किसी का उल्लेख नहीं है। इसकी भाषा यद्यपि हिंदी है, फिर भी उसमें फारसी के काफी शब्द मिश्रित हैं। हिंदी के अंतर्गत इसे उन रचनाओं में संमिलित करना चाहिए जिनके सहारे उर्दू का विकास हुआ। उर्दू साहित्य की प्रारंभिक रचनाएँ अधिकांश इसी ढंग की हैं। इसकी भाषा में एकरूपता का नितांत अभाव है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता।

२०२ बारैठ मेंदरामजी—प्रस्तुत खोज में इनकी 'अयोध्या पचीसी' और 'मिथिला पचीसी' नामक दो रचनाओं का विवरण लिया गया है जिसका एक ही विवरण पत्र है। ये रचनाएँ रसखान के कवित्तों के साथ एक हस्तलेख में हैं। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १७९६ है।

रचयिता के नाम के आगे 'बारैठ' शब्द लगा हुआ है जिससे ये राजपूताने की ओर के रहनेवाले विदित होते हैं। लेकिन इनकी भाषा से इनका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता। विशेष परिचय अज्ञात है।

२०३ मोहनलाल—इनके 'नेमनाथ ब्याहला' नामक (जैन) ग्रंथ का प्रस्तुत खोज में विवरण लिया गया है। ग्रंथ में जिनदेव नेमिनाथ और राजमती के विवाह का मनोरंजक वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

रचयिता के विषय में ग्रंथ से कुछ भी विदित नहीं होता।

२०४ मोहन सुंदर—प्रस्तुत त्रिवर्षी में मोहन सुंदर कृत 'फूल बत्तीसी' का विवरण लिया गया है। इस ग्रंथ में वसंत आदि विभिन्न ऋतुओं के बत्तीस दोहे हैं तथा कृष्ण रुक्मिणी संवाद और राधा अंग वर्णन आदि विषय है। रचना राजस्थानी भाषा में है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

रचयिता राजस्थानी भाषा में रचना करने के कारण राजस्थानी विदित होते हैं। विशेष वृत्त नहीं मिलता।

२०५ यारी साहब—इनके प्रस्तुत खोज में तीन ग्रंथ, १—इयारी (यारी) साहब के शब्द, २—रमैनी और ३—राम के ककहरा विवृत हुए हैं। इनके विषय आदि का विवरण क्रमशः यों है :—

१—इयारी (यारी) साहब के शब्द—इसमें निर्गुण भक्ति का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८६७ है।

२—रमैनी—इसमें आत्मज्ञान का वर्णन है। रचनाकाल का तो पता नहीं, लिपिकाल संवत् १८६७ वि० है।

३ राम के ककहरा—इसमें फारसी लिपिमाला के 'अलिफ' से लेकर 'ए' तक के अक्षरों पर कविता करके ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १८६७ वि० है।

ग्रंथों द्वारा रचयिता की जीवनी का कुछ भी पता नहीं चलता। इनके ये हस्तलेख बलिया के महंत राजाराम जी के यहाँ प्राप्य हैं जिनके कथनानुसार यारी साहब (श्री बीरू साहब के शिष्य) दिल्ली में रहते थे। इनके शिष्य श्री बुल्ला साहब, केशवदास, शाह फकीर और हस्त मुहम्मद शाह थे। ये पहुँचे हुए सिद्ध थे। इनकी रचनाओं से इनके गंभीर चिंतन का पता चलता है। कहते हैं ये शाही घराने के मुसलमान थे। विशेष के लिये देखिए 'बावरी साहबा' का विवरण और विवरण अंश में संख्या २।

२०६ युगलानन्यशरण—प्रस्तुत रचयिता के २३ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनका क्रमशः विवरण यों है:—

१—अर्थ पंचक—इसमें छः अध्याय (विवेक) हैं जिनमें रामनाम का माहात्म्य, व्याकरण संमत 'राम' शब्द का अर्थ और वेदांत के सिद्धांतों का प्रतिपादन है। रचनाकाल अविदित है, लिपिकाल संवत् १९३७ वि० है।

२—उपदेश नीतिशतक—नीति का आश्रय लेकर सूक्तियों के रूप में उपदेश है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

३—जानकी सनेह हुलास शतक—इसमें सीताराम के प्रत्येक अक्षरों पर ककहरा पद्धति पर अलग अलग दोहे लिखे गए हैं। फिर जानकी जी की महिमा, उनका स्वरूप तथा उनके प्रताप आदि का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ वि० है।

४—नखल अंग प्रकाश—इसमें श्री रामचंद्रजी के नखशिख का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

५—नाम परत्व पंचासिका—इस ग्रंथ में रामभक्ति की महत्ता तथा उपदेश वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

६—निंदक विंसतिका—इसमें निंदकों की स्तुति है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२५ है। इसके दोहे साहित्यिक दृष्टि से बहुत अच्छे हैं।

७—निंदकविनोदाष्टक—इसमें निंदकों की निंदा की गई है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२५ है।

८—प्रकाशभक्ति रहस्य—इसमें रामभक्ति की महत्ता और कुछ उपदेश हैं। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

९—प्रश्नोत्तरी प्रकाश-संस्कृत के प्रश्नोत्तरी ग्रंथ का अनुवाद है। इसमें गुरु शिष्य संवाद के रूप में आध्यात्मिक विषय का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

१०—फारसी झूलना-फारसी वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर पर ककहरा पद्धति से झूलना छंदों की रचना कर रामचरित्र वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

११—मणिमाला-इसमें राम नाम माहात्म्य की कथा एवं रामचरित्र वर्णित हैं। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

१२—मनबोध शतक-मन को संबोधित कर इसमें ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया हुआ है।

१३—मोद चौंतीसी-नागरी वर्णमालानुक्रम से ककहरा पद्धति पर राम का यश वर्णित है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं।

१४—वरन उमंग-इसमें नागरी वर्णमालानुक्रम से सीताकुंड (अयोध्या) की महिमा वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं लिपिकाल संवत् १९२१ है।

१५—वरनमाला-अक्षरानुक्रम से रामनाम माहात्म्य का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

१६—वरन विचित्र-प्रस्तुत ग्रंथ में अक्षरानुक्रम से रामनाम और रामचरित्र की महिमा वर्णित है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

१७—वरन विहार-रामभक्ति का उपदेश है। रचनाकाल नहीं दिया है, परंतु लिपिकाल संवत् १९२१ है।

१८—वरनबोध-प्रस्तुत ग्रंथ में रामभक्ति और उसकी महिमा का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

१९—वरवा विलास भावना रहस्य-इसमें श्री सीताराम का प्रेम और रहस्य वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १८२२ है। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

२०—वर्णविचार-वर्णमालानुक्रम से प्रत्येक अक्षर पर दोहे चौपाइयों में ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२९ दिया हुआ है।

२१—विरति विनोद-अक्षरानुक्रम से दोहों में वैराग्य का उपदेश है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२१ दिया है।

२२—विरति शतक-भीष्म और पांडवों के संवाद रूप में सांसारिक माया मोह त्यागकर भक्ति साधन का उपदेश है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

२३—संतविनयशतक-भक्तमाल के ढंग पर संतों का माहात्म्य वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९२२ है।

रचयिता संक्षिप्त विवरण के परिशिष्ट $\left(\frac{\text{ज-प (२)}}{\text{६२}}\right)$ में आए युगलानंद-शरण ज्ञात होते हैं। उसमें इन्हें अयोध्या का महंत कहा गया है तथा संवत् १९०४ से लेकर संवत् १९३५ तक इनके वर्तमान होने का उल्लेख है। 'प्रश्नोत्तरी प्रकाश' की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि ये महंत जीवाराम के शिष्य और रामवल्लभ के गुरु थे जिन्होंने प्रायः इनके सब ग्रंथों की प्रतिलिपि की है। इनके अयोध्या प्रभृति स्थानों में कई मठ भी हैं।

२०७ रघुनाथ—प्रस्तुत त्रिवर्षी में इनकी 'देवी जी के छप्पय' नामक रचना मिली है जिसमें देवी की स्तुति की गई है। समस्त रचना छप्पय वृत्तों में है। प्रत्येक छप्पय में 'रघुनाथ' की छाप पाई जाती है। साहित्यिक दृष्टि से रचना सुंदर है। रचना-काल और लिपिकाल दोनों अप्राप्त हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से ये भिन्न हैं।

२०८ महाराज रघुराज सिंह—प्रस्तुत खोज में इनके 'रघुराज विलास' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। जिस हस्तलेख में यह ग्रंथ है उसमें इनके 'विनय पत्रिका' और 'यदुराज विलास' नामक दो ग्रंथ और संगृहीत हैं जो पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं (००–४६) (००–४९)। इनके अन्य ग्रंथों के लिये देखिए (००–४५) (१--७) (२६--२७१ वी) (३--१७; १८) (४–८२) (९–२३७)।

प्रस्तुत रचना के मंगलाचरण में ही इसके विषय का संकेत है। उसमें राम और कृष्ण दोनों की वंदना की गई है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि इसमें रचयिता ने सब अवतारों के चरित्र का समावेश किया है। इसमें 'राम' दाशरथीराम के ही अर्थ में नहीं प्रत्युत् ब्रह्म के भी अर्थ में प्रयुक्त हैं। इसकी रचना पदों में हुई है जिनकी भाषा ब्रज है। रचनाकाल अविदित है, लिपिकाल संवत् १९२९ है।

रचयिता संक्षिप्त विवरण के अनुसार रीवाँ नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह के पुत्र थे। इनका राज्यकाल संवत् १९११ से १९३७ तक था। जन्मकाल का संवत् १८८० है। रामानुजदास के ये शिष्य थे और स्वामी मुकुंदाचार्य इनके दीक्षा गुरु रहे। इनके दरबार में विद्वान् लोग विशेष आश्रय पाते थे। संगीत विषयक इनकी रचनाओं को मनन करने से ज्ञात होता है कि इन्हें संगीत से भी अनन्य प्रेम था।

२०९ रघुवर—इनकी कृति 'प्रेम प्रमोद' का विवरण लिया गया है जिसमें सखियों द्वारा राधा कृष्ण के प्रेम का वर्णन है। यह साधारण कोटि की रचना है। इसमें अनुप्रास और यमक का अधिक आश्रय लिया गया है। 'सारंग ने सारंग गह्यो सारंग पहुँच्यो आइ' की तरह दृष्टिकूटक कविता विशेष है। निम्नलिखित उद्धरण उदाहरण स्वरूप दिया जाता है :—

'कमलापति के कर बसें, प्रथम अंक बिलगाय।
हर रिपु वनिता एक करि, हरि ढिग देहु लगाय॥

रचना दोहों में है जिनकी संख्या १०१ है। रचनाकाल संवत् १९२९, फसली सन् १२८० है :—

सन बारह सै असी है संवत वेद बखान।
चौनइस सै चौनतीस मैं सो लिखि कहेउ सुजान॥

रचयिता ने अपना कुछ परिचय दिया है जिसके अनुसार ये बरेली जिला के अंतर्गत दर्याना परगना के सुखराजपुर ग्राम के निवासी थे। यह ग्राम राजापुर ताल्लुका में बताया गया है। ये कायस्थ जाति के थे। प्रस्तुत विवरण में आए रघुवर सखा से ये भिन्न हैं।

२१० रघुवर सखा—प्रस्तुत खोज में इनके ग्रंथ 'प्रेमधारसागर' की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। ग्रंथ में श्री कृष्ण चरित्र जन्म से लेकर उद्धव संवाद तक का वर्णन संक्षेप में है। रचना पदों में है और काव्य की दृष्टि से सुंदर है। शैली सूरसागर की पद शैली है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का विशेष वृत्त नहीं मिलता। ये खोजविवरण (२३—३३३) में उल्लिखित रघुवरदास उपनाम 'रघुवर सखा' से अभिन्न ज्ञात होते हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार ये जाति के मुराऊ तथा मिरजापुर स्थान (बहराइच जिला) के निवासी थे। जन्मकाल सन् १८०३ ई० और मृत्युकाल सन् १८८६ ई० है।

२११ रज्जब जी—इनकी 'फुटकर साखी' और 'कायाबेली' के विवरण लिए गए हैं। दोनों रचनाएँ एक ही साथ हैं। इनका विषय निर्गुण ब्रह्म की चरचा है। 'कायाबेली' में दिखलाया गया है कि जो ब्रह्मांड में है वही पिंड (शरीर) में है। शरीर के रहस्यों को जानने और अनहद नाद एवं आनंद की अनुभूति के लिये सद्गुरु की परमावश्यकता है आदि। इसमें ब्रजभाषा गद्य का प्राचीन उदाहरण मिलता है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं, परंतु हस्तलेख प्राचीन जँचता है।

रचयिता दादूदयाल जी के शिष्य थे जिसका पता 'कायाबेली' के एक उद्धरण से चलता है—'दादू प्रगट पी मिले।' अतः इनका समय दादू के समय के निकट हो सकता है।

रज्जब के ग्रंथों के साथ एक ही हस्तलेख में उनके गुरु की बानी भी लिपिबद्ध है। इनके कुछ छप्पय पिछले खोज विवरण में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१७-१४२)।

२१२ रतनरंग—प्रस्तुत खोज में इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ५ पर विस्तृत रूप से हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश। प्रस्तुत खोज में 'छिताई कथा' का विवरण लिया गया है। इस रचना में अलाउद्दीन की देवगिरि विजय की यह कथा वर्णित है :—

'देवगिरि में राजा रामदेव राज्य करता था। उसके समय में दिल्ली से एक चित्रकार वहाँ गया और चार वर्ष तक रहा। जब वह आने लगा तो राजा रामदेव ने अलाउद्दीन के लिये बहुमूल्य भेंट और भीमसेनी कपूर भेजा। जिस समय अलाउद्दीन बैठा हुआ भेंट देख रहा था और कपूर की प्रशंसा कर रहा था उस समय उसके ऊपर देवगिरि की एक दासी हँसी और कहा कि जिस कपूर की तुम भूरि भूरि प्रशंसा कर रहे हो वह हम लोगों के लिये तुच्छ पदार्थ है। चित्रकार ने देवगिरि की राजकुमारी छिताई का भी चित्र दिखाया जिसे

देखते ही अलाउद्दीन मूर्छित हो गया। फिर क्या था, देवगिरि पर चढ़ाई हुई और विजय के रूप में अलाउद्दीन की अभीष्टपूर्ति हुई।

कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। छिताई का उल्लेख बहुत पहले से काव्यों में होता आ रहा है। इसका उल्लेख 'वीरसिंह देवचरित' (केशव कविकृत) और 'पद्मावत' (जायसी कृत) दोनों में है। इसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १६८२ है। लिपि प्राचीन और दुर्बोध है। भाषा व्रज है जिसमें प्रौढ़ता और एकरूपता का अभाव है। प्रेमकथा काव्यों की एक धारा सूफीधारा से भिन्न भारतीय पद्धति पर चल रही थी जिसका प्रमाण प्रस्तुत छिताई कथा से भी मिलता है।

रचयिता के जीवन वृत्त के विषय में प्रस्तुत रचना से कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने से समय का भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता, परंतु लिपिकाल संवत् १६८२ होने के कारण इनकी प्राचीनता स्पष्ट प्रकट होती है।*

* देखिए पत्रिका में प्रकाशित श्री बटेकृष्ण का लेख।

२१३ रत्नकवि या रतन कुवँरि—इनके 'प्रेम रत्न' का विवरण पहले भी लिया जा चुका है, देखिए खोजविवरण (.९–२६७, २३–३५९, २९–२९७) । अंतिम दो खोज विवरणों में रचयिता का नाम रत्नदास माना गया है जो संदेहजनक है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचयिता का नाम रतन दिया हैं :—

कुरुक्षेत्र शुभ थान व्रज वासीह हर कौ मिलन।
लीला रस की खान प्रेम रतन गायो 'रतन'॥

उपर्युक्त अंतिम खोज विवरण में इस ग्रंथ की दो प्रतियों का उल्लेख है जिनमें से दूसरी प्रति की पुष्पिका में रचयिता का नाम 'बीबी रतन कुवँरि' दिया है। अतः रचयिता का वही वास्तविक नाम है। ग्रंथ में कुरुक्षेत्र तीर्थ में सूर्य ग्रहण पर्व पर श्री कृष्ण तथा व्रजवासियों का मिलन वर्णित है। रचनाकाल संवत् १८४४ है, लिपिकाल का पता नहीं चलता।

रचयित्री काशी की निवासिनी और संवत् १८४१ में वर्तमान थीं।

२१४ रमईराम या रमैआ राम—इनके 'राम रछ्या' का विवरण लिया गया है जिसमें राम माहात्म्य वर्णित है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए गए हैं।

रचयिता की जीवनी के संबंध में इस ग्रंथ से कुछ विदित नहीं होता। रामानंद और कबीर के नाम से भी 'रामरछ्या' नामक रचनाएँ मिली हैं, देखिए खोज विवरण (००-७६) (६-१७७) (९-२५०)। परंतु प्रस्तुत 'रामरछ्या' उनसे बिल्कुल भिन्न है।

२१५ रमनदास—प्रस्तुत खोज में इनके 'भक्तमाहात्म्य' का विवरण लिया गया है। ग्रंथ आदि के दो पत्रों और अंत में संख्या ६१ के पश्चात् के पत्रों से खंडित है। विषय इसके नाम से स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा अवधी है। रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख इस प्रकार किया है :—

'कहु दास रमन प्रचारी मन में अजनी करनी टलतहा।'

अन्य परिचय नहीं मिलता। प्रस्तुत 'भक्त माहात्म्य' जैसे ग्रंथों से पता चलता है कि लगभग एक शताब्दी पूर्व तक भक्तों के गुणगान करने की एक प्रथा सी चलती रही। इसमें संदेह नहीं कि नाभादास जी, ध्रुवदास जी और राघवदास जी इस विषय के मान्य कवि हैं। किंतु अन्य जिन भक्तों और संतों ने इस विषय पर लिखा उनके ग्रंथों में न तो काव्य के ही दर्शन होते हैं और न उनके द्वारा किसी भक्त या संत के विषय में कोई ऐसी महत्व की ही बात प्रकट होती है जो उक्त रचयिताओं के इस विषय के ग्रंथों में न हो।

२१६ रसखान—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २२ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२१७ रसानंद—इनका उल्लेख विवरण में संख्या १७ पर विस्तारपूर्वक हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२१८ रसिकदास—इनके दो ग्रंथों—१ कुंज कौतुक और २ कृष्ण जन्मोत्सव के विवरण लिए गए हैं। पहला ग्रंथ खोजविवरण (२–९८) (१२–१५४) में आ चुका है जिसके अनुसार रचयिता संवत् १७५१ के लगभग वर्तमान, राधा वल्लभी संप्रदाय के वैष्णव, स्वामी नरहरिदास के शिष्य और वृंदावन निवासी थे।

दूसरी रचना, 'कृष्ण जन्मोत्सव' में कृष्ण के जन्मोत्सव का वर्णन है। इसमें समस्त बाईस दोहे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचयिता का भी कोई वृत्त नहीं दिया है।

२१९ रसिकराइ—इनके शृंगार विषयक कुछ कवित्त 'कवित्त रसिकराइ' नाम से विवृत हुए हैं। इनमें कतिपय कवित्त खंडित हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। रचना साहित्यिक कोटि की है।

रचयिता का वृत्त भी अप्राप्त है। हरिराइ जी, वल्लभकुल के आचार्य (००–३८), का भी 'रसिकराई' उपनाम था, परंतु यह प्रकट नहीं होता कि प्रस्तुत 'रसिकराइ' ये ही हैं अथवा उनसे भिन्न। रचना द्वारा तो ये भिन्न ही ज्ञात होते हैं। क्योंकि यह विशुद्ध शृंगारिक रचना है जिसमें राधाकृष्ण का कोई नामोल्लेख नहीं पाया जाता। हरिराइ जी वैष्णव आचार्य थे और वैष्णवों की शृंगारपूर्ण रचनाएँ भक्तिरस युक्त हैं। अतः हरिराइ उपनाम 'रसिकराई' से ये भिन्न हैं।

खोज विवरण (२–३८) (६–२१९) में आए रसिकराय प्रस्तुत रचयिता ही हैं।

२२० रसिक बिहारीलाल—ये गीता भाषानुवाद के रचयिता हैं। यह ग्रंथ खोज विवरण (४—५९) में तुलसीदास के नाम से विवृत हुआ है। उक्त विवरण में 'तुलसीदास' रचयिता होने का आधार केवल पुष्पिका का लेख है :—

'इति श्री मद्भगवद्गीता तुलसीदास विरचितं अष्टादशोध्यायः। श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥ ६० ॥'

परंतु प्रस्तुत प्रति में रसिक बिहारी लाल का स्पष्ट उल्लेख ग्रंथांत में दिया है :—

हरि अर्जुन संवाद यह अद्भुत है यह ख्याल।
पुत्रहेत वर्णन कियौ रसिक बिहारी लाल ॥ ९३ ॥

अतः वास्तविक रचयिता रसिक बिहारी लाल ही ज्ञात होते हैं जिन्होंने पुत्र के निमित्त गीता का भाषांतर किया। इनका अन्य वृत्त नहीं मिलता।

२२१ राघोदास उपाध्याय—'रुक्मिणी मंगल' के इस रचयिता का जीवन वृत्त प्राप्त नहीं होता। प्रमाणों के अभाव में यह भी निश्चय नहीं होता कि पिछले खोज विवरण में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न।

ग्रंथ में कृष्ण रुक्मिणी के विवाह की कथा है। रचनाकाल संवत् १८०० है, लिपिकाल नहीं दिया है। प्रस्तुत प्रति संभवतः मूल प्रति ही है।

२२२ राम कृष्ण—प्रस्तुत शोध में इनका 'लक्ष्मी चरित्र' मिला है जिसमें लक्ष्मी के निवास योग्य गृहों तथा नरनारियों का वर्णन किया गया है। रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल संवत् १९१२ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न इसका भी कोई निश्चय नहीं होता।

२२३ रामचंद्र—ये 'चंद्र चंद्रिका' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। इनके विषय में कोई और विवरण नहीं मिलता। प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में इस प्रकार लिखा है :—

'इति श्रीमन् साहासाह कुमार श्री बाबू रामचंद्र विरचितायां...'

यह भी हो सकता है कि ये रामचंद्र ग्रंथकर्त्ता न होकर आश्रयदाता हों।

हस्तलेख आदि अंत से खंडित है जिसके कारण रचनाकाल और लिपिकाल के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। इसमें एक पुराना चिट्ठा रक्खा है जिसमें संवत् १९०४ लिखा है। अतः प्रस्तुत प्रति इससे प्राचीन ज्ञात होती है।

ग्रंथ में बिहारी सतसई की गद्यपद्यात्मक टीका है। यह अध्यायों में है जिन्हें 'मरीचिकाएँ' कहा गया है। समस्त मरीचिकाओं की संख्या लगभग १५ है।

२२४ रामचंद्र—प्रस्तुत खोज में इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५६ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त अज्ञात है।

२२५ रामचरणदास—पिछले खोज विवरणों में इनके कई ग्रंथों के विवरण लिए जा चुके हैं, देखिए खोज विवरण (२–७४,६८) (४–६३) (६–२११) (९–२४५) (१७–१४३) (२०–१४५) (२३–३३९) (२६–२७७)। ये अयोध्या के महंत थे और संवत् १८४४ में वर्तमान थे।

इस बार इनकी 'झूलना' नामक रचना मिली है जिसका विषय ज्ञान और भक्ति है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। भाषा खड़ी बोली है तथा रचना झूलना छंदों में की गई है।

२२६ रामदास—इनके 'सुदामा की कथा' नामक ग्रंथ का विवरण प्राप्त हुआ है। ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है। यह लखनसेनी कृत 'बारहमासा' (देखिए प्रस्तुत खोज विवरण) के साथ एक ही हस्तलेख में है। 'बारहमासा' का लिपिकाल संवत् १७८५ है, अतः इसका लिपिकाल भी यही माना जा सकता है। दोनों की स्याही तथा लिपि भी एक ही है। इसकी भाषा पूर्वी है।

ग्रंथ अपूर्ण है। इसका मूल नाम ज्ञात नहीं हो सका। विषय को देखकर 'सुदामा की कथा' नाम रख दिया गया है। विवरण पत्र में इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

रचयिता ने अपना थोड़ा सा परिचय निम्नलिखित दोहे में दिया है :—

अब एक अधम महा जड़ उपदेसा सारीदास।
अगर हरी के कुल सह कह बानी 'रामदास ॥'

इससे यह पता चलता है कि ये अगरहरि के कुल में थे। अगरहरि कौन थे ? इसका कोई पता नहीं चलता।

पिछले खोज विवरणों में आए अपने नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न, कहा नहीं जा सकता।

२२७ रामभरोसादास बाबा—इनके दो ग्रंथ, १—'ब्रह्म विलास' और २—'गीतारतन' के विवरण लिए गए हैं। प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। इसमें कपिलदेव ऋषि द्वारा अपने माता पिता (कर्दम ऋषि और उनकी स्त्री देवहुती) के प्रति कहे गये सांख्य योग का वर्णन है। रचनाकाल खीष्टाब्द में सन् १८६४ ई० है जो संवत् १९२१ होता है। लिपिकाल एक में संवत् १९३६ और दूसरी में संवत् १९३५ है। भीमपुरा (बलिया) से विवृत प्रति में रचनाकाल दो दिए हैं। एक दोहे में, जो संवत् १९२१ होता है और दूसरा पुष्पिका में जो संवत् १९१८ है। पुष्पिका में दिया संवत् इस प्रकार है :—

'श्री संवत् १९१८ सीती भादो कृस्न पक्षे तिथी अष्टमी जन्म ॥ ८ ॥'

संभवतः संवत् १९१८ में ग्रंथरचना आरंभ हुई होगी और संवत् १९२१ में समाप्त।

दूसरे ग्रंथ 'गीतरतन' में राम कृष्ण के भक्ति विषयक पद हैं जो काव्य की दृष्टि से उत्तम हैं। यह ग्रंथ रतनपुरा (बलिया) से विवरण लिए गए 'ब्रह्म विलास' के साथ एक ही हस्तलेख में है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९३६ है।

रचयिता जाति के ब्राह्मण और बलिया के अंतर्गत रतनपुरा के रहनेवाले थे (यह गाँव बी० एन० डब्लू० आर० का स्टेशन है)। इनके गुरु का नाम कृपाराम था। रतनपुरा से कुछ दूर हटकर रतनपुरा कुटी नाम से इनका एक स्थान है जहाँ ये भजन पूजादि करते थे। इनके स्थापित किए राम जानकी और शिव के मंदिर भी यहाँ हैं। पं० महादेव शर्मा आचार्य इस स्थान के महंत हैं जो इन्हीं के कुटुम्बी हैं। महंतजी के कथनानुसार इनकी वंशावली इस प्रकार है :—
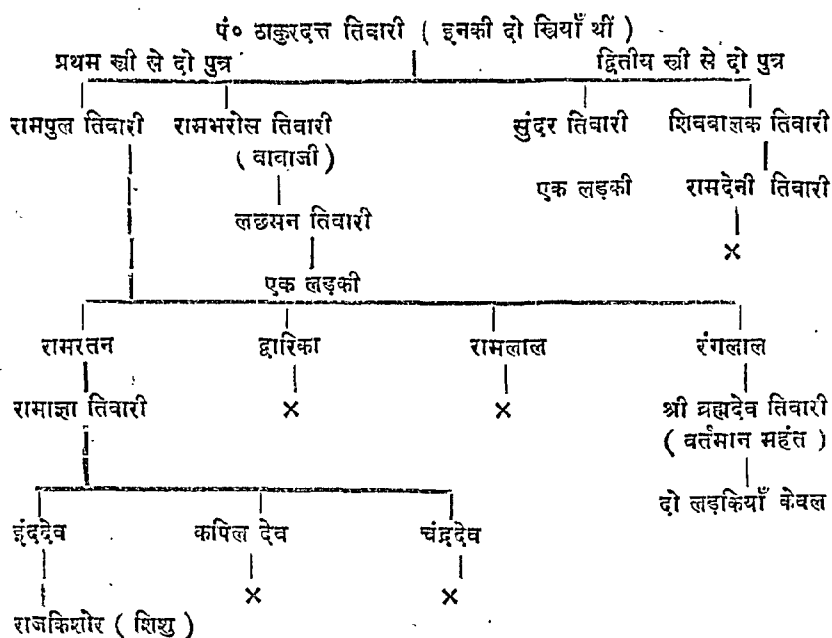
रतनपुरा कुटी पर क्वार के महीने में मेला लगता है। इससे संबंधित तीन स्थान और हैं जिनके नाम भीमपुरा (जिला बलिया), रसड़ी (आजमगढ़) और आदमपुर (आजमगढ़) हैं। महंतजी का कहना है कि रामभरोस दास बाबा लिखे पढ़े नहीं थे। जो कुछ रचना करते थे उसे दूसरों से लिखवा लिया करते थे। ये उच्चकोटि के भक्त हुए हैं। इनका वैकुंठवास संवत् १९३६ के वैशाख में हुआ। यह तिथि रतनपुरा से विवृत प्रति की पुष्पिका में दी हुई है।

२२८ रामरंग—इनकी 'बारह खड़ी' की एक अपूर्ण प्रति मिली है। इसमें ककहरा के ढंग पर अष्टपदियों में रचना की गई है जिनमें ज्ञानोपदेश वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल दूसरे ग्रंथों—ज्ञान स्वरोदय (चरणदास कृत) और आध्यात्मबोध (साधुशरण कृत) के आधार पर संवत् १९०९ है। ये ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। ग्रंथ के विषय से अनुमान होता है कि ये कोई रामभक्त रहे होंगे।

२२९ रामराइ—ये 'गुण सागर' नामक कोकशास्त्र विषयक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की रचना दोहे चौपाइयों में है। भाषा ब्रजी है। रचनाकाल संवत् १६७८ है। लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। ग्रंथ अपने विषय का उत्तम है।

रचयिता आगरा निवासी थे। इनके समय में जहाँगीर राज्य करते थे :—

छत्र धरैं अविचल सदा राजसाहि जहाँगीर ॥
काम कौतुहल रस कथा चतुर आगरे चाइ।

कवि ताहर तिहि देश, में वरनो चरित बनाइ ॥
संवत् सोलह सै गने अठहत्तरि अधिकाइ।
वादि आसाढ तिथि पंचमी कही कथा रामराइ ॥

बड़े अक्षरों वाले पद से पता चलता है कि कवि ताहिर ने इस विषय का वर्णन किया था। कवि ताहिर कृत गुणसागर का भी पिछले दो खोज विवरणों (६–२३५) (९–३१६) में उल्लेख है। मिलाने पर दोनों ग्रंथों के आरंभिक अंश थोड़े से पाठभेदों को छोड़कर मिलते हैं। अंत के अंश नहीं मिलते। संभवतः रामराइ ने कवि ताहर द्वारा वर्णित विषय को ही कुछ थोड़े से संशोधन और परिवर्तन पूर्वक प्रस्तुत ग्रंथ के रूप में तैयार किया।

ये पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से भिन्न हैं या अभिन्न, नहीं कहा जा सकता।

२३० रामसिंह (महाराजा)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण में संख्या १८ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२३१ रामानंद स्वामी—इनके नाम पर एक छोटी सी रचना 'राम अष्टक' विवृत हुई है। ग्रंथ स्वामी (श्री राजाराम जी, महंत चिटवड़ागाँव, बलिया) के कथनानुसार ये कबीर के गुरु सुप्रसिद्ध स्वा० रामानंद ही हैं। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरण (२–६५) (९–२०५) (६–१७७) (दि० ३१–७१) में हुआ है।

रचना में रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८६७ है। विशेष के लिये देखिये बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण। उनकी रचनाओं के साथ प्रस्तुत रचना एक हस्तलेख में है।

२३२ रासमंजरी—इनके रचे 'अष्टकाल' में राधाकृष्ण की अष्टयाम की क्रीड़ाओं का वर्णन है। यह गोस्वामी रूप सनातन के संस्कृत ग्रंथ 'अष्टकाल' का हिंदी में पद्यानुवाद है। मूल ग्रंथ में केवल ग्यारह श्लोक हैं जिनकी यह विस्तृत टीका है। इसमें संदेह नहीं कि टीका की कविता सरल और मधुर है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता ने यद्यपि अपने नाम का कहीं स्पष्ट वर्णन नहीं किया है तथापि निम्नलिखित अवतरणों से इनका नाम 'रास मंजरी' प्रकट होता है।

'भरी हुलास तब प्यारी पाइन। रासमंजरी सेवत चाइन ॥ ११ ॥'

माध्व गौड़ेश्वर संप्रदाय में बहुत से भक्तों ने अपने को 'मंजरी' नाम से संबोधित किया है। ये अपने को श्री राधाकृष्ण की सेवा और सम्मान का भाजन उसी तरह समझते थे जिस तरह श्री राधाजी की ललितादिक अष्टसखियाँ समझी जाती हैं। प्रत्येक ने अपने नाम में 'मंजरी' शब्द प्रयुक्त किया है। इनके वास्तविक मूल नामों का पता लगाना कठिन है। प्रस्तुत रचयिता का भी मूल नाम क्या था, ज्ञात नहीं होता। इन्होंने अपने गुरु का नाम रूप मंजरी लिखा है। यथाः—

'रूपमंजरी' पद कमल तिनको करिके ध्यान।
करि संक्षेपहि वरनियो प्रथम काल आख्यान ॥'

विशेष वृत्त अनुपलब्ध है।

२३३ रूपसाहि—इनके 'नवरस चतुर्वृत्ति वर्णन' में नवरस और चार वृत्तियों-कैशिकी, भारती, आरभटी और सात्वकी (सात्वती) का वर्णन किया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता। लिपिकाल दशरथ रायकृत 'नवीन (नवीनाख्य)' के आधार पर संवत् १८६९ के लगभग है। ये दो ग्रंथ अन्य तीन रचनाओं—१–चित्रकाव्य २–नैतिक श्लोक (संस्कृत) और ३–हरि जू सुकवि द्वारा संपादित 'विहारी सतसई' के साथ एक हस्तलेख में हैं।

रचयिता के नाम का स्पष्ट उल्लेख कहीं नहीं मिलता। केवल दो जगहों में रूपसाहि का उल्लेख हुआ है। एक तो नवरस के अंत में, यथाः—

एक अनेक अगुन सगुन अरु प्रिथु रूप अनूप।
रूपसाहि जैसे प्रभुहिं सेवत सुमति अनूप॥

और दूसरा चार वृत्तियों के वर्णन वाले एक कवित्त में जो विवरण पत्र में उद्धृत है।

पिछले खोज विवरणों (५–८३) (६–१०५) (२०–१६७) में आए रूपसाही भी ये ही हैं। उक्त विवरणों के अनुसार ये संवत् १८१३ में वर्तमान थे। जाति के कायस्थ थे। पिता का नाम कमलनयन था। बुंदेलखंड के निवासी एवं महाराज हिंदूपति के आश्रय में रहते थे।

संभवतः प्रस्तुत रचना इनके 'रूप विलास' का ही अंश हो। 'रूपविलास' साहित्यिक ग्रंथ है।

२३४ रैदास—इनकी वाणियों का एक संग्रह 'रैदास जी की वाणी' नाम से मिला है। पिछले खोज विवरण (९–२४०) में भी इनकी वाणियाँ विवृत हुई हैं। इनका रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५५ है। प्रस्तुत वाणियों में १० साखियाँ और ८२ पद हैं।

ये एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं। देखिए सेवादास का विवरण।

रचयिता निर्गुण संत के रूप में प्रसिद्ध हैं। इस बार इनके विषय में कोई नवीन बात विदित नहीं हुई।

२३५ लक्ष्मणदास (रूलिंग चीफ बहादुर)—इनके 'राधा कृष्ण रसतरंगिनी' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें जन्म से लेकर दानलीला तक राधाकृष्ण चरित्र वर्णित है। रचनाकाल संवत् १९१४ है। लिपिकाल ज्ञात नहीं। रचना कवित्त, घनाक्षरी, ठुमरी, दादरा, सोहर, कहरवा आदि चलते रागों में है। काव्य की दृष्टि से यह सरस रचना है।

रचयिता का नाम नृप लछिमनदास है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

ग्रंथस्वामी श्री सैय्यद कासिम अली, प्रधान अध्यापक नार्मलस्कूल, छुई खदान स्टेट, सी० पी० ने एक छोटा सा पत्र ग्रंथ के प्रथम पत्र पर चिपकाया है जिसमें इस प्रकार लिखा हुआ है :—

'श्रीमान् लक्ष्मणदास जी नरेश उच्चकोटि के लेखक, कवि हो गये हैं। आपने सैकड़ों कविता ग्रंथ लिखे हैं। यह रसतरंगिनी सन् १८२४ ई० के लगभग लिखी थी

जिसका पता बड़ी मुश्किल से लगा है। इस राजवंश का परिचय मैंने एक 'पुष्पोहार' कविता ट्रेक्ट में पूर्ण देने का साहस किया है और इतिहास से भी पूर्व सन् प्राप्त हुआ है।

सैय्यद कासिम अली
प्रधान अध्यापक
छुई खदान स्टेट'

पत्र में यह प्रकट नहीं किया गया है कि रचयिता कहाँ के नरेश थे। अनुमानतः छुई खदान स्टेट के ही नरेश रहे होंगे।

२३६ लखनसेनी—इनका कुछ विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या ९ पर हो चुका है अतः देखिए उक्त अंश।

२३७ लल्लू जी लाल—इनकी 'राजनीति' नामक रचना मिली है जो संस्कृत के 'हितोपदेश' का अनुवाद है। यह पिछले खोज विवरणों (९-१७४) (२६-२६६) में उल्लिखित है और मुद्रित भी हो चुकी है। इसकी प्रस्तुत प्रति का प्राचीन होने के कारण विवरण लिया गया है। रचनाकाल संवत् १८५९ है और लिपिकाल संवत् १८७०।

रचयिता खड़ी बोली के प्रथम गद्यलेखकों में होने के नाते प्रसिद्ध हैं। इनके विषय में देखिए अन्य खोज विवरण (९-१७२) (६-१९२)।

२३८ कविलाल—इनके कुछ कवित्त सवैये 'कवित्यरामायन' शीर्षक से विवृत हुए हैं। इनमें जनकपुर के धनुषयज्ञ का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ये कवित्त कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक ही हस्तलेख में हैं जिसके अंत में प्रस्तुत कवि की 'कवीत्य हनुमान जी जब लंका चलै हैं' नामक रचना भी लिपिबद्ध है। इस रचना के पत्रे अत्यंत जीर्ण शीर्ण हो गए हैं और अक्षर ठीक-ठीक पढ़ने में नहीं आते। अतः उसका दूसरा विवरण नहीं लिया जा सका। आरंभ का कुछ अंश जितना पढ़ा जा सका है, नीचे दिया जाता है :—

स्रवन सुजश सुनि आयेउ प्रभु भवभंजन भीर।
त्राही त्राही आरत हरन शरन राखु रघुवीर ॥ १ ॥
प्रथम भाल कविलाल धर गुर पद पंकज पंक।
वरनो हनींवंत के वरशो जात वीर गढ़ लंक ॥ २ ॥

॥ छप्पै ॥

चरन चंड उदीत उदंड पल पंड पंड करी।
अति प्रचंड भुजदंड पंड आपंड दंड धरी।
शुंड मुंड अव वदन भुशंड छजही लंबोदर।
एक दंत सुर शंत कंत आनंत क................ ॥
सेवत तोही कवीलाल भनी असशीध वरदाएकं।
हनुमत पेज वरनो चहो, बुधी देहु गननाएकं ॥

दोहा

फटीक शीला सुंदर सुभग रहेव छाए जामवान।

शीघ्र शोच मोचन चहो बोलेव क्रीपा नीधान ॥

कविता से पता चलता है कि कविलाल प्रौढ़ कवि थे। हो सकता है, उन्होंने संपूर्ण रामचरित्र लिखा हो जिसके प्रस्तुत कवित्त अंश मात्र हों। इनका वृत्त अज्ञात है।

पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिता आए हैं, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि ये उनमें से कोई एक हैं अथवा नहीं।

प्रस्तुत कवित्तों के बीच बीच में दोहे भी हैं। लिपिकर्त्ता ने हस्तलेख अत्यंत अशुद्ध लिखा है। अधिकांश अक्षर और शब्द स्थानीय भाषा और ध्वनि के अनुकूल बदल दिए गए हैं जिससे मात्राओं में बहुत सी गड़बड़ी हो गई है और कितने ही शब्द छूट भी गए हैं।

२३९ लालदास—इनकी 'बारहमासी' का विवरण लिया गया है। इसमें कृष्ण के वियोग में गोपियों के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

पिछले खोज विवरणों (६–१९०) (२३–२३९) (२६–२६२) में प्रस्तुत रचयिता के नाम से कुछ बारहमासियाँ उल्लिखित हैं, परंतु उनमें से कोई भी इस बारहमासी से नहीं मिलती।

इसमें दो नामों का उल्लेख हुआ है, यथा :—

प्रेमदास' आनंद भजन कर कर गये बारहमासे।
परमपद कहे सुने पाये। बाँस बरेली के 'लालदास' बारहमासी गावै ॥ १२ ॥

हो सकता है कि 'लालदास' अपने को 'प्रेमदास' भी कहते रहे हों।

लालदास बाँस बरेली के रहनेवाले थे। इनका उल्लेख खोज विवरण (१–३२) (९–१६९) में भी हुआ है जिनके अनुसार ये पीछे अयोध्या में रहने लगे थे। इनका समय संवत् १७३२ के लगभग है।

२४० लाल—प्रस्तुत रचयिता कृत 'नेमिनाथ जी का मंगल' या 'नौमंगल' नामक रचना की दो प्रतियों के विवरण प्राप्त हुए हैं। इसमें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ और राजमती के विवाह तथा वैराग्य का अत्यंत मार्मिक वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७४३ तथा लिपिकाल एक प्रति का संवत् १८६६ एवं दूसरी का संवत् १८८४ है। एक प्रति में रचनाकाल अस्पष्ट है; परंतु दूसरी प्रति में उपर्युक्त संवत् स्पष्टतया दिया हुआ है।

रचयिता सहजादपुर के निवासी जान पड़ते हैं। इन्होंने प्रस्तुत रचना औरंगजेब के राज्यकाल में रची :—

यह गीत मगलनेम का सहजादपुर में गाइया।
नोरंग साहब जी कैबारै लाल मंगल गाइया ॥ ९ ॥

ये रचना द्वारा जैन विदित होते हैं। इनकी प्रस्तुत रचना (पं० २२–५६) में उल्लिखित है, परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए हैं।

२४१ लाल—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ६ पर विस्तृत रूप से किया गया है। अतः देखिए उक्त अंश।

२४२ लालचराम या लालच (हलवाई)--इनके 'हरिचरित्र (दशम स्कंध भागवत)' का उल्लेख पिछले खोज विवरणों (६-१८९) (२३-२३८) (२६-२६१) में हो चुका है। इसके रचनाकाल के विषय में अभी तक कोई निश्चय नहीं हो सका है। आजतक जितनी प्रतियाँ मिली हैं उन सबमें रचनाकाल के संवत् एक दूसरे से भिन्न हैं। इस बार भी इनकी दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक में रचनाकाल संवत् १७२७ और दूसरी में संवत् १५८५ है। लिपिकाल का संवत् प्रथम में १९६८ और द्वितीय में १८८४ है। दोनों प्रतियाँ अपूर्ण हैं। लिपिकाल के संवतों में कोई ऐसा आधार नहीं है जिससे गणना द्वारा उसकी जाँच हो सके।

रचयिता रायबरेली के रहनेवाले थे।

२४३ लालकवि--'सभा विलास या हिय हुलास रागमाला काव्य' इनके द्वारा किया गया एक संग्रह है। इसमें दृष्टांत, नीति, परवाने (कहावतें), अन्योक्ति, नेत्र श्लेप, प्रश्नोत्तर, कूट, कहमुकरी (छेकापन्हुति) तथा राग रागनियों के स्वरूप आदि विषयों पर तुलसी, गिरधरराय, अहमद, वाजीद, रहीम आदि नाना कवियों के दोहों, सोरठों, कुंडलियों, अरिल्लों तथा बरवों में की गई रचनाएँ संगृहीत हैं। इसका वास्तविक नाम 'सभाविलास' है। 'हियहुलास रागमाला काव्य' इसका एक अंश है जिसमें राग रागिनियों के नाम, गुण, आलाप समय, वाद्ययंत्र और स्वरूप आदि का वर्णन है। यह अंश यद्यपि बहुत संक्षिप्त है तथापि है अत्यंत महत्वपूर्ण। संगीत विषय का इसे एक उत्तम ग्रंथ समझना चाहिए। इसकी एक अलग प्रति मिली है जिसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है। रचनाकाल संवत् १८७० है।

'हिय हुलास रागमाला काव्य' की प्रति में रचनाकाल का संवत् अशुद्ध दिया है जो प्रतिलिपिकार के लिपिप्रमाद से हुआ जान पड़ता है। प्राप्त प्रतियों में दिए रचनाकाल के दोहे नीचे दिए जाते हैं :—

> रवं ऋपि वसु चंद्रहिं गगनौ संवत् को परवान।
> माघ शुक्ल नवमी रवौ कियौ ग्रंथ निर्मान ॥ ७३ ॥
>
> —सभाविलास

> संख्या वसु चंदरही गनै समत को परमान।
> माघौ शुक्ल नौमी रच्यौ ग्रंथ निरमान ॥
>
> —हियहुलास

लिपिकाल किसी प्रति में नहीं दिया है। 'हिय हुलास' के हस्तलेख में दो अन्य रचनाएँ 'प्रतीत परीक्षा' बालकृष्ण कृत और 'बारहमासी' प्रेमदास कृत और लिपिबद्ध हैं।

रचयिता का और कोई विवरण नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिता आए हैं, परंतु यह निश्चय नहीं होता कि ये उनमें से कोई एक हैं अथवा नहीं।

२४४ लालजी साह या श्री लाल शाह—प्रस्तुत रचयिता ने 'हरिवंश पुराण भाषानुवाद' नाम से हरिवंश महापुराण का दोहे चौपाइयों में अनुवाद किया है। इसका रचना काल संवत् १८४९ है। लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता इलाहाबाद के पश्चिम गंगातट पर बसे सहजादपुर के निवासी लाला सीतल प्रसाद के पुत्र थे। और विवरण नहीं मिलता। श्रीलाल शाह नाम से भी इनका प्रस्तुत ग्रंथ इस विवरण में संख्या २७२ पर आया है।

२४५ लालमनि—इस रचयिता का एक ग्रंथ 'रसालै०' (रसालय) मिला है। इसका विषय नायिका भेद है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय की दृष्टि से यह उत्तम ग्रंथ है।

रचयिता का नाम जहाँ तहाँ दोहों और कवित्तों में दिया हुआ है। अन्य वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों (६–११) (४–१४) पर भी दो लालमणि आए हैं जो ग्रंथकार नहीं हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से किसी एक के साथ प्रस्तुत रचयिता साम्य रखते हैं या नहीं।

२४६ लालविनोदी -'बारहमासा द्वादशानुप्रेक्षा' इनकी छोटी किंतु सुंदर और सरस रचना है। इसमें जैनतीर्थंकर नेमिनाथ और उनकी स्त्री राजमती के क्रमशः निवृत्ति और प्रवृत्ति विषयक कथोपकथन बारहमासी के रूप में वर्णित हैं। भगवान् नेमिनाथ वैराग्य का प्रतिपादन करते हैं और राजमती सांसारिक जीवन का। यह घटना कैसे घटी? उसका सारांश इस प्रकार है:—

'जिन भगवान नेमिनाथ विवाह के अवसर पर विरक्त होकर गिरनार पर्वत में तपस्या करने के लिये चले गए। राजमति जिसके साथ विवाह होना निश्चित हुआ था पति को लौटाने के लिये उनके पीछे-पीछे गिरनार पहुँची। उसने पति को समझाने की बहुत चेष्टा की, परंतु असफल रही। अंत में स्वयं भी तपस्या करने के निमित्त भगवान् के ही साथ रहने लगी।

प्रस्तुत रचना एक बृहद् जैन धर्म ग्रंथ के अंतर्गत लिपिबद्ध है। रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। खोज विवरण (२–७६) (१७–१०६) (पं० २२–५६) (२६–२६०) (दि० ३१–५४) (३२–१३२) में आए लालचंद्र विनोदी के साथ इनका ऐक्य स्थापित करने का कोई प्रमाण नहीं मिलता।

२४७ लालस्वामी (हित)—ये अपने ग्रंथ 'श्री स्वामिनी जी ठाकुरजी सवैय्या' के साथ खोज विवरण (२३–२४५) में उल्लिखित हैं। नाम के साथ 'हित' का प्रयोग होने के कारण ये राधावल्लभी संप्रदायानुयायी जान पड़ते हैं। अधिक परिचय नहीं मिलता।

इस बार इनकी 'मंगल' नाम से एक और रचना मिली है जिसमें रचनाकाल तो दिया है, परंतु वह स्पष्ट नहीं होता, यथा :—

रसनसाइक सक्र सुत तिथि सोम कहत न आवई।

लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ 'नागरीदास की बानी' के आधार पर संवत् १८२५ है। प्रस्तुत ग्रंथ और नागरीदास की बानी एक ही हस्तलेख में हैं।

२४८ लोकमनिदास—ये 'बजरंग चालीसी' नामक एक छोटी सी रचना के रचयिता हैं। विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में दिया है :—

अर्नग परेउ दया करि हेरो। दास लोकमनि चेरो तेरो ॥

इसके अतिरिक्त अन्य परिचय अप्राप्त है।

२४९ वंशमनि या वंशराज—प्रस्तुत खोज में ये 'रसचंद्रिका' नामक ग्रंथ के रचयिता के रूप में विवृत हुए हैं। बिहारी के दोहों पर इनके द्वारा कवित्त सवैया रचे गए हैं तथा उनको नायिकाभेद के क्रम से लगाया गया है। ग्रंथ में बारह अध्याय हैं। ग्रंथ के अंत में 'नृप स्तुति वर्णन' वाला अंश अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता ने अपना वृत्त दिया है जिसके अनुसार इनका नाम वंशमनि है, परंतु रचना में यत्र तत्र 'वंशराज' भी प्रयुक्त हुआ है। इनके पिता का नाम दुलाकी शर्मा तथा पितामह का नाम लोकमनि था। ये तीन भाई थे जिनके नाम दिए हुए हैं, परंतु स्याही के उखड़ जाने के कारण ठीक ठीक पढ़ने में नहीं आते। ये पाराशर गोत्रीय त्रिपाठी ब्राह्मण थे। त्रिपाठी का उल्लेख प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में हुआ है। इन्होंने अपने ग्राम का नाम वीरभानुपुर दिया है जिसे चयनपुर के निकट बतलाया है। आश्रयदाता का नाम रघुनंदन लिखा है जो श्रीवास्तव कायस्थ और अपने पिता साहि मल्लिनाथ के तृतीय सबसे छोटे पुत्र थे।

रचयिता ने अपना तथा अपने आश्रयदाता का वृत्त आरंभ में संस्कृत के दो श्लोकों एवं हिंदी के दोहों में दिया है। ऐसा ज्ञात होता है कि उत्तरार्द्ध के दो दोहों में आश्रयदाता का परिचय रहा होगा, परंतु ये दोहे ग्रंथ पर नवीन जिल्द बँध जाने के कारण जिल्द के नीचे दब गए हैं। जिल्द को किसी प्रकार अलग भी किया गया फिर भी कागज का कुछ अंश उखड़कर अक्षरों के ऊपर रह गया। अतएव अक्षर नहीं पढ़े जा सकते। इनके आरंभ का केवल एक चरण पढ़ा जा सका है जो इस प्रकार है :—

'गया गयाधर के निकट पहरा नाम के ग्राम।
कानगोइते ··· ··· ··· ··· ··· ॥

इससे यह विदित होता है कि संभवतः आश्रयदाता गया के निकट पहरा नामक ग्राम के रहनेवाले तथा कानूनगो का पेशा करनेवाले थे।

प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल न रहने के कारण इनके समय का कोई पता नहीं लगता।

२५० बजदी—'पंछीनामा' के ये रचयिता प्रथम बार ही विदित हुए हैं। ग्रंथ में नाना प्रकार के पक्षियों को संबोधित कर कही गई भव्य और सुंदर उक्तियाँ हैं। रचना उपदेशात्मक और सूफी मत से संबंधित है :—

एक स्थान पर एक के बाद दूसरे पक्षी एकत्र होते हैं और सब विचार करते हैं कि हम लोगों को अपना राजा चुन लेना चाहिए। हुदहुद पक्षी बतलाता है कि राजा होने योग्य सीमुर्ग है जो अमुक स्थान पर रहता है। हुदहुद के साथ एक पक्षी उसकी खोज में निकलता है और अभीष्ट स्थान पर पहुँचता है। यदि इस रूपक को खोला जाय तो सारी कथा का आशय होगा कि हुदहुद गुरु या पीर दूसरे पक्षी मुरशिद को परमात्मा रूपी सीमुर्ग से साक्षात् कराने के लिये ले जाता है।

मूल विषय के साथ-साथ बीच-बीच में बहुत सी हिकायतें या कथाएँ भी आती हैं जैसे, इलियास, खिज्र, महमूद या सुलेमान की कथाएँ। इन कथाओं में कुछ ऐतिहासिक, कुछ पौराणिक और कुछ कल्पित हैं।

'पंछीनामा' का मूल ग्रंथ फारसी में है जिसका नाम 'मुतकुलतैर' है और जो शेख फजीउद्दीन अत्तार नामक सूफी की प्रसिद्ध रचना है। इसका वजदी ने दखिनी भाषा में अनुवाद किया है:—

'सिकंदर दाखिनी जबान में लेके आऊँ।
ता रहे दुनिया मने मेरा भी नांव॥'

इसका नाम पंछीनामा या पंछीबाचा है:—

'नाम मैं इसका 'पंछीबाचा' रखा।
यादगारे खल्के आलम को दिया॥'

इसकी भाषा में कहीं कहीं हिंदी रूपों की झलक है। उर्दू का प्रभाव अधिक है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

रचयिता के जीवनवृत्त के विषय में प्रस्तुत ग्रंथ से कुछ ज्ञात नहीं होता। इन्होंने केवल यही लिखा है कि बदखशाँ का रत्न (अर्थात् मूल फारसी ग्रंथ की रचना) को मैंने दखिन आकर बेंचा है। इसका बदला मैं यही चाहता हूँ कि सब लोग इसे प्रेम से पढ़ें और मुझे दुआएँ दें जिससे ईश्वर के यहाँ मेरा अपराध क्षमा हो जाय। इससे ज्ञात होता है कि ये दखिन में ही रहे होंगे। रचनाकाल अज्ञात होने के कारण इनके समय की भी कोई जानकारी नहीं होती।

२५१ बटुनाथ या बटुकनाथ—प्रस्तुत रचयिता के 'शनिचरित्र' और 'आनंदरस वल्ली' नामक दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं। प्रथम में विक्रमादित्य की कथा द्वारा शनिग्रह के शुभाशुभ फल तथा उसके माहात्म्य का वर्णन किया गया है। दूसरे में पिंगल विषय का प्रतिपादन है। रचनाकाल का उल्लेख किसी में नहीं मिलता, लिपिकाल संवत् १८७५ है। 'आनंद रस बल्ली' में गद्य रचना के प्रकार की ओर भी निर्देश किया गया है। उसकी पूर्णता, अपूर्णता तथा गुणदोष बतलाकर पिंगल के अनुसार तीन भेद (चूर्णक, उत्कलिक, वृत्तिगंध) दर्शाए हैं, यथा :—

तीन भेद हैं गद्य के पिंगल मत अनुसार।
चूर्णक अकालिकाहु पुनि वृत्त गंध निरधारी।
विमल मधुर अक्षर सहत चरनहीन सविलास।
चूर्णक सो पिंगल मतै रचि कछु अल्प समास ॥ ३० ॥

दृढ़ अक्षर जामैं परत होत न अल्प समास।
तासौं उत्कलिका कहत कवि पंडित सविलास ॥ ३१ ॥

होत वृत्त के एक ही देश वच जो आइ।
वृत्तिगंध तासौं कहै गद्यभेद कौं पाइ ॥ ३२ ॥

इस दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है। इसमें चार अध्याय (स्तवक) हैं।

रचयिता ने इस ग्रंथ में अपने लिये दो नामों—वटुनाथ और वटुकनाथ का प्रयोग किया है। अपना वंशवृत्त भी इसमें दिया है जो इस प्रकार है :—
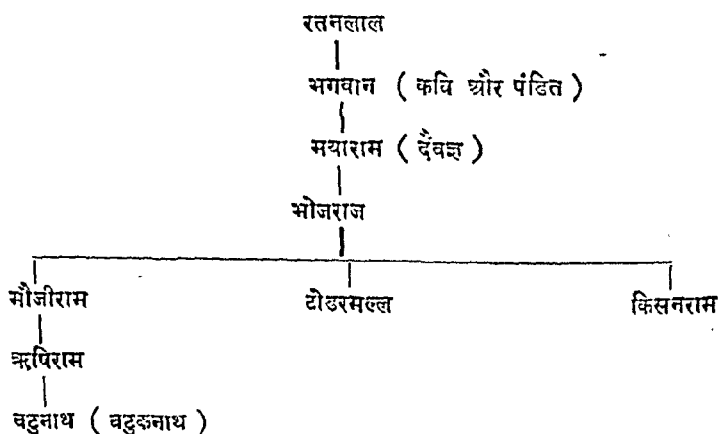
इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। शनि चरित्र में 'नौ' कारक चिह्न का प्रयोग हुआ है जो पश्चिमी राजस्थानी या गुजराती है :—

गोकुलेश वटुनाथ नहिं करत **दयानौ** भंगु।

देखिए बड़े अक्षरों वाले शब्द में 'नौ'। इससे ये राजस्थान या गुजरात की ओर के रहनेवाले जान पड़ते हैं। प्रस्तुत दोनों रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं।

२५२ **विरंच गोसाई जन (विरंज या विरंचराम)**—विवरण अंश में इनका उल्लेख विस्तृत रूप से किया गया है, अतः देखिए उक्त अंश में संख्या ३।

२५३ **विश्वेश्वरदास**—प्रस्तुत रचयिता का 'काशीखंड कथा' नाम से एक ग्रंथ मिला है जो स्कंद पुराणांतर्गत काशीखंड कथा का भाषानुवाद है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण होने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल का पता न चल सका। रचनाकाल दिया

तो है, परंतु उसका आरंभ का अंश खंडित हो जाने के कारण कोई संवत् नहीं निकल सकता :—

'रहे सत उपर चालीस, माहो क्वन अष्टमी बुधवार रजनीस'

रचयिता महाराष्ट्र ब्राह्मण थे। पिता का नाम नारायण और पितामह का शंकर था। इनके पिता के गोविंद नाम के एक भाई थे जिनका माधव नामक एक पुत्र था।

ये तीन पीढ़ियों से काशी में ही रहते थे। खोज में ये प्रथम बार ही मिले हैं।

२५४ विष्णुदास—ये 'भाषा वाल्मीकि रामायण' के रचयिता हैं। इनका नाम ग्रंथ के अठारहवें सर्ग के अंत में आया है :—

'विस्नदास कवि कीयो वषाना।
पढ़त सुनत गंगा कौ न्हान ।।'

प्रस्तुत प्रति के खंडित हो जाने के कारण विशेष कुछ ज्ञात नहीं होता। पिछले खोज विवरण में इस नाम के कई रचयिता हैं, परंतु यह पता नहीं चलता कि उनमें से कोई प्रस्तुत रचयिता के साथ साम्य रखते हैं या नहीं।

ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८०७ के पूर्व इस आधार पर माना गया है कि हस्तलेख के आरंभ के चार पत्रों पर विजयादशमी की पूजा का विवरण दिया है जिसमें यह संवत् उल्लिखित है। विवरण इस प्रकार है:—

'जा जात्रा रामचंद्रे जलनिधि तरने······विजयदशमी मिति कुवार सुदि १० संवत् १८०७।'

इसी प्रकार क्रमशः संवत् १८३० तक की पूजा का उल्लेख है जो ग्रंथस्वामी के यहाँ संपन्न हुई होगी।

अनुवाद दोहा चौपाइयों में किया गया है। भाषा ब्रजी है। साहित्यिक दृष्टि से ग्रंथ साधारण कोटि का है।

२५५ विसराव या विसरावदास (विश्रामदास)—इनके दो ग्रंथ 'श्रीरामनामा' और 'राम हितावली' प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। दोनों एक हस्तलेख में हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९५८ है। प्रस्तुत हस्तलेख संवत् १९१५ में लिखे गए एक अन्य प्रति से नकल किया गया है। इससे यह पता चलता है कि इन ग्रंथों की रचना संवत् १९१५ के पूर्व हुई। प्रथम रचना कवित्तों में है और दूसरी सवैयों में। प्रत्येक कवित्त सवैया के चौथे चरण में क्रमशः 'इहै विसराव मन राम नाम सुमिरहु नाहीं तौ विरथ दीन जात है तोहार हो' और 'राम बिना हित दूसर नाहीं' पद आते हैं।

रचयिता ने 'राम हितावली' में यत्र तत्र कुछ अपने विषय में भी उल्लेख किया है जिसके अनुसार ये बलिया जिला में जाम ग्राम के निवासी थे। ये जाति के सेंगर ठाकुर थे तथा इनके गुरु का नाम 'नीतनंद' (संभवतः नित्यानंद) था।

'कहे वीसराव जे जामु के सेंगर रामवीना हीत दूसर नाहीं' ॥ २३ ॥

× × × ×

नीतनंद गुरु वीसराव के राम वीना हीत दूसर नाहीं ॥ ३२ ॥

रामहितावली

× × × ×

जाम ग्राम में लोगों से तथा इनके वंशज अछूतानंद सिंह और विश्वनाथ सिंह द्वारा इनका वंशवृक्ष इस प्रकार विदित हुआ है :—
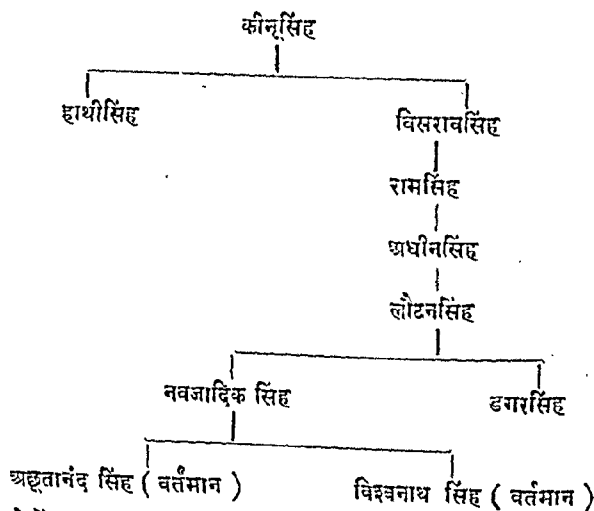
कुछ लोगों का कहना है कि विसरावदास बाबा साधु भेष में रहते थे तथा अविवाहित थे।

ग्रंथों की भाषा में भोजपुरी का मिश्रण पाया जाता है। इनका रचा एक ग्रंथ 'विश्रामसागर' भी कहा जाता है।

श्री प्रसिद्ध नारायण सिंह जी (बलिया के एक साहित्यिक) कृत 'बलिया के कवि और लेखक' नामक पुस्तक में इनके गुरु का नाम बुलाकीदास दिया है।

२५६ वृंद कवि—इनका उल्लेख खोज विवरण (००-१२१) (२-६, ४२) (९-२३०) (२३-४४६) (२६-५०४) (दि० ३१-१६) में हो चुका है जिनके अनुसार ये संवत् १७४३ के लगभग वर्तमान, मेड़ता (जोधपुर) निवासी और कृष्णगढ़ नरेश महाराजा सावंतसिंह (नागरीदास) के पिता महाराज राजसिंह के गुरु थे। संवत् १७६१ में बादशाह औरंगजेब की फौज के साथ ये ढाका तक गए थे। ये सेवक जाति के ब्राह्मण थे। इनके वंशज कवि जयलाल कृष्णगढ़ में वर्तमान हैं, देखिए खोज विवरण (२-७३)।

इस बार इनके निम्नलिखित तीन ग्रंथ और मिले हैं :—

१—पति मिलन—रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात नहीं। विषय—शृंगार।

२—पवन पच्चीसी—रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। विषय-षट्ऋतु वर्णन।

३—यमक सतसई—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय-विविध भेदों उपभेदों सहित यमकालंकार का वर्णन। यह महत्वपूर्ण रचना है।

२५७ वृंदावनदास—इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में हो चुका है, देखिए खोज विवरण (६–२५०) (९–३३१) (१२–१९६) (३२–२२२)। ये हित हरिवंश जी के अनुयायी, राधावल्लभ संप्रदाय के वैष्णव तथा चाचा हित वृंदावनदास के नाम से प्रसिद्ध थे। संवत् १८०३ के लगभग वर्तमान, वृंदावन में निवास करते थे। प्रस्तुत खोज में इनकी निम्नलिखित नौ रचनाएँ और प्राप्त हुई हैं:—

१—आभास प्रथम पदको तथा पद—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात, विषय, वृंदावन की शोभा और कुंज में राधा कृष्ण के शृंगार का वर्णन तथा हित हरिवंशजी की वंदना। रचना गद्य में है जिसमें रचयिता का कोई उल्लेख नहीं; परंतु आगे वृंदावन दास जी के पद दिए होने से यह भी उन्हीं से संबंधित मान ली गई है। पदों में 'रूपहित' का उल्लेख मिलता है जो रचयिता के गुरु थे।

२—कलि प्रतापबेलि—रचनाकाल संवत् १८६४ है, लिपिकाल दिया नहीं। विषय, कलियुग की बुराइयों का वर्णन तथा कृष्ण भक्ति का उपदेश। प्रस्तुत रचना से इनका श्री रूपहित (रूपलाल) का शिष्य होना प्रकट होता है।

३—नीति कुंडलिया—रचनाकाल संवत् १८१०; लिपिकाल अज्ञात। विषय-कृष्ण भक्ति। इसमें कहावतों का भी प्रयोग किया गया है, जैसे:—

१—भयौ नगारौ कूच कौ घोरन बाँधे जीन।
२—नाव कूदि बंदरा मरै टूक जोगना खाय।
३—घरी घरी के रूठने पहर मनावत जात।

रचनाकाल का पद खंडित है। यह ग्रंथ का अंतिम दोहा है जिसमें छंद संख्या २००८ (२०८ ?) दी हुई है। संभवतः संख्या में भूल है, क्योंकि समस्त ग्रंथ के अनुष्टुप् छंदों की संख्या केवल २२८ ही है।

४-विमुख उद्धारन बेलि—रचनाकाल संवत् १८२३, लिपिकाल अज्ञात। विषय, रोचक कथा के ढंग पर है :—

'एक स्त्री सांसारिकता में अत्यंत लिप्त थी जिसे एक साधु ने उपदेश द्वारा भक्ति मार्ग पर अग्रसर किया। स्त्री और साधु का बड़ा वाद विवाद उठा जिसमें स्त्री ने लौकिक पक्ष का समर्थन कर वैराग्य और साधुता को पाखंड बतलाया। परंतु अंत में स्त्री परास्त हुई और उसने भक्ति मार्ग ग्रहण किया।

रचयिता ने अपने पूर्ववर्त्ती कुछ भक्तों के नाम दिए हैं। चिरपरिचित और विख्यात भक्तों को छोड़कर शेष के नाम इस प्रकार हैं:—

नरहरियानंद, जैमल, हरीदास (स्वामी हरिदास से भिन्न राधावल्लभी), केशव काश्मीरी, श्री भट्ट, कृष्णदास, गिरधारी, परमानंद ।

५-मन प्रबोध वेलि—रचनाकाल संवत् १८१३, लिपिकाल अज्ञात। विषय, कृष्णभक्ति और गुरु महिमा का वर्णन ।

६-मन चितावनि वेलि—रचनाकाल संवत् १८२०, लिपिकाल अज्ञात। विषय, चेतावनी और उपदेश। प्रस्तुत रचना 'मनप्रबोध' और 'विमुख उद्धारन वेलि' के साथ एक हस्तलेख में है ।

७-हित रूपस्वामिनी अष्टक—रचनाकाल, लिपिकाल अप्राप्त। विषय, श्री राधिका जी की स्तुति। इस रचना के साथ कृष्णदास हित और कमल नैन हित के भी एक-एक पद हैं ।

८-पदसंग्रह—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात । विषय, फूलडोल (चैत्र में), फूल रचना (जेष्ठ में), चंदन रचना, उशीर मंदिर, जल विहार और नौका विहार आदि का वर्णन । समस्त ८५ पद हैं ।

९-कृपा अभिलाष वेलि—रचनाकाल संवत् १८१२ है। अन्वेषक ने ग्रंथ में दिए काल को हिजरी सन् मानकर संवत् १७६२ दिया है जो भूल है। संवत् का दोहा इस प्रकार है :—

ग्यारह सै गति जानि ऊपर वर्ष 'सुबारहो' ।
वांछित कृपा बखान श्री राधा ··· ··· ··· ॥ ११० ॥

इसमें 'ग्यारह' शब्द लिपिकर्ता के लिपिदोष के कारण 'ठारह' का परिवर्तित रूप स्पष्ट जान पड़ता है। रचयिता के लिखने के ढंग से भी प्रकट होता है कि यह 'ठारह' ही है। देखिए अन्य रचनाएँ। अतः रचनाकाल संवत् १८१२ ही ठीक जान पड़ता है। लिपिकाल नहीं दिया है। विषय, भक्ति । रचना सोरठों में की गई है जिनकी संख्या ११२ है ।

उपर्युक्त 'मन चितावनी वेलि' दो अन्य रचनाओं 'मनप्रबोध' और 'विमुख उद्धारन वेलि' के साथ एक हस्तलेख में है ।

प्रस्तुत रचनाओं से रूपहित (रूपलाल हित) रचयिता के गुरु ज्ञात हुए हैं ।

२५८ वैष्णवदास (रसजानि)—वैष्णवदास और रसजानि कृत एक अपूर्ण ग्रंथ 'गीत गोविंद (भाषा)' के विवरण लिए गए हैं। यह संस्कृत के प्रख्यात गीत गोविंद का हिंदी में अनुवाद है। अनुवाद दोहा, कवित्त, सवैया और अष्टपदियों में किया गया है जो अत्यंत सरल बन पड़ा है। रचनाकाल संवत् १८१४ है। लिपिकाल प्राप्त नहीं ।

रचयिता का पुष्पिका द्वारा 'रसजानि' नाम भी प्रकट होता है। ये गौड़ीय संप्रदायानुयायी थे। गुरु का नाम हरिजीवन था। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ ये पिछले खोज विवरण (९-३२४) में उल्लिखित हैं तथा खोज विवरण (१-५४) (५-८८) (६-२४७) में इनके कुछ अन्य ग्रंथ विवृत हुए हैं। उक्त विवरणों में इन्हें प्रियादास जी का पुत्र कहा गया

है जो प्रामाणिक नहीं जँचता। प्रस्तुत ग्रंथ में प्रियादास जी का उल्लेख किया है परंतु उससे यह प्रकट नहीं होता कि वे इनके पिता थे। संभवतः ये इनके गुरु के गुरु रहे होंगे।

२५९ व्यासजी—प्रस्तुत खोज में इनकी निम्नलिखित चार रचनाएँ प्राप्त हुई हैं:—

१–व्यासवानी—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १९६३ या १८६३। दूसरे संवत् के लिये संभावना प्रकट की गई है। विवरण पत्र में न तो संवत् का ही उल्लेख है और न पुष्पिका का। अतः लिपिकाल का आधार कोई अन्य ग्रंथ है जो इस रचना के साथ एक हस्तलेख में है।

इसमें युगलमूर्ति की वंदना, गुरु, साधु स्तुति, साधु विरह, यमुनास्तुति, नाम कीर्तन, वृंदावनस्तुति, मधुपुरी स्तुति, श्री किशोर और किशोरी जी की स्तुति आदि अनेक विषयों पर पद रचनाएँ हैं। यह विशाल रचना है। काव्य की दृष्टि उच्चकोटि की है।

२–रस के पद—रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त। विषय, श्री कृष्ण लीला वर्णन। रचना अपूर्ण है।

३–पद संग्रह—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति। यह भी अपूर्ण रचना है।

४–फुटकर दोहे—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय, ज्ञान, वैराग्य, वृंदावन की महिमा और राधा कृष्ण की भक्ति का वर्णन। इसमें समस्त ८६ दोहे हैं।

प्रथम को छोड़ शेष रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता काफी प्रसिद्ध हैं, परंतु इनके संबंध में अभी वाद विवाद चला ही आ रहा है। कोई इन्हें माध्वगोड़ेश्वरानुयायी और कोई हितानुयायी बतलाते हैं।

इनके प्राप्त ग्रंथों में 'व्यासवानी' खोज विवरण (६–११८) (९-२३२) (१७–२०४) में, 'रस के पद' खोज विवरण (६-११८) (९-२३२) तथा 'दोहे' (पं० २२-११४) पर विवृत हो चुके हैं।

२६० व्रजराज पंडित—इनके द्वारा रचित 'दानलीला' की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। विषय, नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल किसी प्रति में नहीं दिया है। लिपिकाल पहली प्रति का संवत् १९११ और दूसरी का संवत् १९३९ है। यद्यपि दोनों प्रतियाँ पूर्ण हैं तथापि दूसरी में आरंभ का दोहा अधिक है।

ग्रंथ द्वारा रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। खोज विवरण (९–१९५) में बनारस निवासी एक व्रजराज का उल्लेख है जो मालवीय शुक्ल ब्राह्मण, मथुरानाथ के पिता और संवत् १८१२ के लगभग वर्तमान थे। परंतु उनकी किसी रचना का उल्लेख न होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि ये प्रस्तुत रचयिता से अभिन्न हैं।

२६१ व्रजवासीदास—प्रस्तुत खोज में इनके 'व्रज विलास' नामक ग्रंथ की एक प्रति मिली है। इसका विवरण पहले कई बार लिया जा चुका है, देखिए खोज विवरण (२-८) (६–१४१) (९–३६) (२०–२२) (२३–६९, ७०)। परंतु इनमें दिए रचनाकाल में अंतर पाया जाता है। खोज विवरण (९–३६) में रचनाकाल संवत् १९०९

तथा खोज विवरण (२३–'७०) में संवत् १८०८ है। आश्चर्य यह कि दोनों विवरणों में रचनाकाल का दोहा एक ही है। प्रस्तुत प्रति में भी ठीक यही दोहा है। इसके अनुसार रचनाकाल संवत् १८२७ होता है। दोहा इस प्रकार है :—

संवत् शुभ पुरान सत जानो। तापर और नछत्रन आनौ॥
माघ सुमास पच्छ उजियारा। तिथी पंचमी सुभग शशि वारा॥

'नछत्रन' शब्द बहुवचन में जिसकी संख्या २७ (नक्षत्र २७ हैं) होती है।

इसके अनुसार रचनाकाल संवत् १८२७ स्पष्ट लक्षित होता है जो शुद्ध जान पड़ता है।

२६२ शिवदयाल—इन्होंने वल्लभ संप्रदाय के आचार्य श्री गोपाललालजी की काशी यात्रा का 'श्री गोपाल जी काशी पधारे सो प्रकार' नाम से विस्तृत वर्णन किया है। पुष्पिका से जान पड़ता है कि इसकी रचना संवत् १८७९ में हुई। लिपिकाल भी यही है।

जैसा कि पुष्पिका के लेख से प्रकट होता है, प्रस्तुत रचयिता जाति के माली थे और काशी के दुर्गाकुंड स्थान पर रहते थे। पुष्पिका का लेख इस प्रकार है :—

'मिती वैशाख वदी ५ संवत् १८७९ साल दुर्गाकुंड के बाग में दसकत सिउ दयाल माली हमारे बाग को श्रीमती सामाबेटी जी के चरनारविंद पेड़िया की कोटिन कोटि दंडवत जो बडेन के श्रीमुख से सुनीहती सो लिखो है। ग्वालदास साह को पुर्जा आयौ सो जहाँ की जोगता हती तहाँ लिखो है। इति श्री समाप्तं शुभमस्तु॥'

इस लेख से यह भी प्रकट होता है कि विवरण लेखक ने जैसा कुछ बड़ों के मुख से सुना उसी प्रकार लिखा। इन्होंने किसी सामाबेटी का भी उल्लेख किया है जो वल्लभ कुल की स्यामा बेटी ज्ञात होती है।

२६३ शिवनारायण स्वामी—ये शिवनारायणी पंथ के प्रवर्तक और उच्चकोटि के संत थे। इस बार बलिया जिला के अंतर्गत ससना ग्राम निवासी ठा० रामशंकर सिंह जी (स्वामी जी के वंशज) के द्वारा इनका विस्तृत वृत मिला है जो इस प्रकार है :—

'श्री स्वामी शिवनारायण जी का जन्म चंदवार में हुआ था। घर से विरक्त होने पर ये पंद्रह मील उत्तर एक जंगल में चले गए। पीछे कुटुंबी जन भी उनका वियोग न सह सकने के कारण उनके पास चले गए। इसपर स्वामी जी ने उन्हें जंगल काटकर गाँव बसाने की आज्ञा दी। अतः जंगल काटकर गाँव बसाया गया जिसका नाम स्वामी जी की आज्ञानुसार ससना रक्खा गया। इस ग्राम में जितने नरवनी राजपूत हैं वे सब स्वामीजी के ही वंशज हैं। स्वामी जी यहाँ विरक्त भेष में ही रहते थे। जंगल में एक बरगद के पेड़ के नीचे गुफा बनाकर योगसाधना में लीन रहते थे। यह स्थान अब भी चिह्नस्वरूप एक खेत के किनारे छोड़ दिया गया है जिसके पूर्व में कुछ बाँस के पेड़ भी हैं। यहाँ से लगभग एक सौ गज की दूरी पर उत्तर पश्चिम कोने में स्वामी जी ने एक आम का बाग पांच बीघा रकबे पर लगाया था। अब भी लगभग बीस पचीस पेड़ बाग में वर्तमान हैं

जो अदालती कागजों में 'बाग शिवनारायण जी साहब' के नाम से लिखा हुआ है। मृत्यु के पश्चात् स्वामीजी की समाधि इसी ग्राम में बना दी गई। इस समय यह समाधिस्थान प्रधान गद्दी ससना धाम के नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध किया जा रहा है। यहाँ स्वामी जी के हाथ के लिखे हुए ग्रंथ भी थे, परंतु कुछ वर्ष हुए वे चोरी चले गए। गाँव के एक घर में उनकी खड़ाऊँ अभी तक विद्यमान हैं जिनकी घरवाले नित्यप्रति पूजा करते हैं।

उनके गुरु का नाम दुखहरण था जो ब्राह्मण थे तथा ससना से लगभग एक फलाँग की दूरी पर बहादुरपुर के निवासी थे। इन्होंने भी एक बाग लगाया था जिसमें अब एक महुवा का वृक्ष शेष है। बहादुरपुर में इनका एक कच्चा मंदिर बना दिया गया है।

स्वामी शिवनारायण जी का 'गुरु अन्यास' ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है जिसमें इन्होंने अपना वृत्त इस प्रकार दिया है :—

जन्मभूमि है कनउज देसा। क्रमवसी ते वंग परवेसा॥
गाजीपुर सरकार कहावै। सुबे परआग अमल में पावै॥
से आसथान चंद्रवार कहावै। सीवनारायन जन्म ताँहाँ पावै॥

कनउज (कन्नौज फर्रुखाबाद) को जन्मभूमि कहने से संभवतः यह तात्पर्य है कि उनके पुरखे वहाँ से चंद्रवार (अब बलिया जिला तथा उस समय गाजीपुर में) आए होंगे। उनका जन्म वास्तव में चंद्रवार (अब चंदवार) में ही हुआ था। चंद्रवार उस समय सूबा प्रयाग के अंतर्गत गाजीपुर सरकार के जहुराबाद परगना में था।

स्वामी जी के गुरु का नाम 'दुखहरन' था जिसका उल्लेख 'गुरु अन्यास' के अतिरिक्त उनकी 'रूपसरी' नामक रचना में भी है :—

'दुखहरन नाम से गुरु कहावै।
बड़े भाग से दरसन पावै॥'

गुरु अन्यास

× × × ×

'दुखहरण गुरु पाये।
दुखहरण के पावते गती मुक्ती होये जाये'॥

रूपसरी

× × × ×

गुरु अन्यास के अनुसार ये संवत् १७९१ तक वर्तमान थे। उस समय महम्मद शाह दिल्ली का बादशाह था :—

संमत सत्रह से ऐकानवे होई। ऐगारह सै सन पैतालिस सोई॥
अगहन मास पछ अजीआरा। तीरथ तीरोदसी सुकर संवारा॥
तेही दिन निम एक कथा पुनीता। गुरु अन्यास कथा समहीता॥
साह महमद दीली सुलताना। कासी क्षेत्र आगरे है थाना॥

इस बार खोज में स्वामी जी के ग्यारह ग्रंथ मिले हैं जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

१—गुरु अन्यास—दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल संवत् १७६१; लिपिकाल दोनों का अज्ञात है। विषय—ज्ञानोपदेश। यह उत्तम रचना है।

२—टीका—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, शंकासमाधान द्वारा ज्ञानोपदेश वर्णन। यह किसी दूसरे की रचना ज्ञात होती है।

३—बानी—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय-ज्ञानोपदेश।

४—रूपसरी—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय-संत, गुरु तथा संतदेश (ब्रह्म) का दार्शनिक विवेचन। यह उत्तम रचना है।

५—लव—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय-'संत' और 'शब्द' से लौ लगाने का उपदेश।

६—बिना नाम का ग्रंथ—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—ज्ञानोपदेश। यह अपूर्ण है।

७—शब्द ग्रंथ संत महिमा—रचनाकाल अज्ञात। विषय-संत की महिमा का वर्णन।

८—शब्दावली—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १९३८। विषय—अध्यात्म। इसकी रचना पदों में की गई है। रचना उत्तम है।

९—संत बोजन—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—संत के गुण और उनके नाम, असंत के दुर्गुण और उनके नाम, पचीस प्रकृति और पाँच तत्त्व तथा उनके प्रसार आदि का वर्णन। यह किसी शिष्य वर्ग की रचना ज्ञात होती है।

१०—संताखरी—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—सांसारिक सुख दुख और संत महिमा का विवेचन।

११—हुकुम नामा—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय संत नाम का स्मरण करते हुए सत्कर्म करने का उपदेश। यह शिष्य वर्ग की रचना ज्ञात होती है।

स्वामी शिवनारायण जी का उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हो चुका है, देखिए (९-२९४) (२६-४४८) (३५-९३)।

२६४ शिवराम—प्रस्तुत खोज में इनके रचे कुछ कवित्तों के 'कवित्त' नाम से विवरण लिए गए हैं। जिस हस्तलेख से इन 'कवित्तों' के विवरण लिए गए हैं उसमें गुसाईं चंदलाल जी कृत 'भागवत सार पचीसी', श्री सुखदेवजी कृत 'अध्यात्म प्रकाश', अकबर और बीरबल के परिहास, जहांगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब के संबंध की कहानियां, कुछ फुटकल दोहे एवं कवित्त भी लिपिबद्ध हैं। कवित्तों में श्री कृष्ण चरित्र जन्म से लेकर पूतना वध तक संक्षेप में वर्णित है। इनकी संख्याओं को देखने से ज्ञात होता है कि बहुत से कवित्त छूटे हुए हैं। कवित्त संख्या दो के पश्चात् छप्पय संख्या चार आ जाता है

तथा ११वें कवित्त के बाद १३वाँ कवित्त है। इसी तरह अन्यत्र भी है। किंतु कथा का तार मिला हुआ है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। साहित्यिक दृष्टि से रचना सुंदर है।

रचयिता के जीवनी के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने के कारण इनका समय भी नहीं मालूम किया जा सकता।

२६५ शिवबकस राय—इनकी 'पवन परिछूया' का विवरण लिया गया है जिसका विषय राम कथा का संक्षेप में वर्णन करना है। इसमें यत्रतत्र कहावतें भी लिखी गई हैं जिनका राम कथा से कोई संबंध नहीं है। रचना का क्रम इस प्रकार है, पहले कहावत, फिर दोहा, तदनंतर सवैया या कवित्त। दोहा, कवित्त और सवैयों में राम कथा का वर्णन है। रचयिता ने रचना करने का जो कारण दिया है वह इस प्रकार है :—

नवरस विश्व प्रसिद्ध है तामें हाँस सुहान।
सबकी रुचि सुचि राम गुन तासो हास वषान ॥ ४ ॥
विश्व विदित मसले सबै सबै वरन के नाम।
निज सुप दोहा कवित कहि आदि अंत गुन राम ॥ ५ ॥

इससे प्रकट होता है कि हास्यरस की दृष्टि से प्रस्तुत रचना की गई है। साथ-साथ सभी प्रचलित कहावतें (मसलों) तथा वर्णों का भी नाम गिनाने का प्रयास किया गया है। रचनाकाल संवत् १८९२ है। लिपिकाल भी यही है।

प्रस्तुत ग्रंथ की पुष्पिका से पता चलता है कि रचयिता जाति के खत्री तथा गरियल-पुर के रहने वाले थे। गरियलपुर कहाँ और किस जिले में है पता नहीं। रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८९२ में वर्तमान थे।

२६६ शिवाराम स्वामी—इनकी 'भक्ति जयमाल' नामक रचना खोज विवरण (६-२९६) में विवृत हो चुकी है। इसमें नाना भक्तों तथा चौबीस अवतारों की कथाएँ देकर रामभक्ति एवं उसकी महिमा का वर्णन किया गया है। इसमें १०९ अध्याय हैं जिनका सविस्तृत उल्लेख विवरणपत्र में किया गया है। ग्रंथ में ग्रंथकार ने रामचरित-मानस की शैली अपनायी है। कुछ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा दिया गया है। कहीं-कहीं छंद और संस्कृत के श्लोक भी दिए गये हैं। ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उत्तम है। भाषा का भी अच्छा गुणगान किया गया है, यथा:—

'भाषा अर्थ संस्कृत वानी। भाषा भनीत अमीय सम जानी।।'

× × × ×

'भाषा भगीती देपी जो डरई। सो मतिहीन नरक मह परई।।'

यह ठेठ अवधी में लिखा गया है।

खेद है ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति कैथी लिपि में लिखी होने के कारण बहुत अशुद्ध है। कहीं-कहीं अक्षर भी उड़ा दिए गए हैं। यह आदि अंत में खंडित है। आरंभ में एक पत्र नहीं है और अंत में ३३६ संख्या के पश्चात् के पत्रे नष्ट हो गए हैं। यही कारण है कि इसका लिपिकाल अविदित है। रचनाकाल संवत् १७८७ है।

ग्रंथ से तो ग्रंथकार का परिचय ज्ञात नहीं होता, परंतु ग्रंथकार के विषय में जो अन्यत्र से सूचनाएँ मिली हैं वे दी जाती हैं। श्रीयुत प्रसिद्ध नारायण जी ने 'बलिया के कवि और लेखक' नाम से एक पुस्तक लिखी है। जिसमें बलिया के समस्त प्राचीन कवियों और लेखकों का जीवन वृत्त दिया है। इसमें प्रस्तुत ग्रंथकार के विषय में लिखा है :—

'आप बलिया के ज्ञात कवियों में सबसे प्राचीन हैं। जाति के कायस्थ थे और कारों नामक ग्राम में पैदा हुए थे। आज से दो सौ वर्ष पूर्व आपने 'भक्ति जयमाल' नामक एक वृहद् ग्रंथ की रचना की थी। इसमें कुल १०६ अध्याय हैं।

× × × ×

'शिवराम जी के जन्मकाल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता; किंतु 'भक्ति जयमाल' के आदि में आपने लिखा है :—

'संमत सतरह सौ सतासी। माघ मास तेरस शुभरासी ॥'

× × × ×

'तेहि दिन कथा जन्म कवि कीन्हा। मास पक्ष तिथि दिन कहि दीना' ॥

'इस प्रकार यदि हम मान लें कि शिवाराम जी ने लगभग ५० वर्ष की अवस्था में ग्रंथारंभ किया होगा, जैसा कि कारों के वृद्ध पुरुषों के कहने से जान पड़ता है; तो उनका जन्मकाल संवत् १७३७ के आसपास मानना पड़ेगा। निम्नलिखित दोहे से जान पड़ता है कि आपने 'भक्ति जयमाल' को पूरे सोलह वर्षों में समाप्त किया था :—

'हर दृग व्योम अष्टादशी, संवत् संख्या दीन।
आश्विन शुक्ला पंचमी, कथा समापत कीन ॥'

× × × ×

'शिवाराम जी के विषय में बहुत सी किंवदंतियां कही जाती हैं जिनके लिखने के लिये यहाँ स्थान नहीं है। आप श्री वैष्णव संप्रदाय के महात्मा थे। संस्कृत के भी भारी विद्वान थे जो आपके रचित संस्कृत के श्लोकों से जान पड़ता है। प्रसिद्ध औघड़ बाबा कीनाराम आपके चेले थे। ये महात्मा भी पहले श्री वैष्णव थे। बाद को अपने गुरु के श्राप के कारण इन्होंने औघड़ मत धारण किया।'

२६७ शेख महमूद चिस्ती—इनके द्वारा रचित 'गंजुल इसरार' के विवरण लिए गए हैं। 'गंजुल इसरार' का अर्थ रहस्य की निधि है और यह सूफी मत की रचना है। इसके आरंभ में परमात्मा की प्रशंसा है तत्पश्चात् सृष्टि की कथा, शैतान और मुहम्मद

की उत्पत्ति का वर्णन है। अंत में मुमुक्षु के लिये शरीयत, तरीकत आदि उपायों का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का जीवन वृत्त अनुपलब्ध है। रचनाकाल के लिये रचयिता ने दिन, महीना और समय तक दिया है, पर सन् संवत् का कोई उल्लेख नहीं। अतः इनका समय जानने के लिये भी कोई सूत्र नहीं।

२६८ श्री कृष्ण चर्चरीक—प्रस्तुत खोज में इनके 'तिमिर प्रदीप' का विवरण लिया गया है। यह ज्योतिष विषयक ग्रंथ है। इसमें संस्कृत के वाराह मिहिरकृत सूर्य सिद्धांत का अनुकरण करके एवं द्वादश राशियों को आधारभूत मानकर विभिन्न प्रकार से उनका फल वर्णित है। ग्रंथ के अंतिम भाग में प्रश्नों का समाधान करने की प्रक्रिया का वर्णन अपूर्व है। इसका रचनाकाल यह है—

'विक्रम रवि नृप राजा गत वसु८ ग्रह९ रिषि७ शशि१ काल ॥'

रचयिता का ग्रंथ से कोई परिचय नहीं मिलता। रचनाकाल के अनुसार ये सं० १७९८ में वर्तमान थे।

२६९ श्री कृष्णदास—इनकी एक रचना 'श्री कृष्णदास जू को मंगल' नाम से विवृत हुई है। इसमें श्री स्वामी हरिदास जी का गुणगान, राधा कृष्ण का विहार और श्री विहारिनदास और श्री नागरीदास जी का यश वर्णन किया गया है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचना द्वारा संप्रदायगत कुछ विशेषताओं का भी थोड़ा आभास मिलता है।

रचयिता टट्टी संप्रदाय के अनुयायी तथा नागरीदास जी के शिष्य थे। इन्होंने विहारिन दास जी की अधिक प्रशंसा की है। अन्य वृत्त नहीं मिलता। खोज में ये प्रथम बार ही ज्ञात हुए हैं।

२७० श्रीधर मुरलीधर—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ७ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

२७१ श्री भट्ट जी—ये निंबार्क संप्रदाय के आचार्य थे। इनके शिष्य हरिव्यास जी स्वामी परशुराम जी के गुरु थे। इनका उल्लेख 'जुगलसत' के रचयिता के रूप में खोज विवरण (००–३६, ७५) (६–२३७) में हुआ है। उनमें इन्हें श्री परशुराम जी का गुरु कहा गया है जो भूल है। परशुरामजी वास्तव में जैसा कि ऊपर कहा गया है श्री हरिव्यास जी के शिष्य थे, देखिए खोज विवरण (३५–७४)। इस बार इनकी 'आदिवाणी जुगल सत सिद्धांत' नामक रचना मिली है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। इसमें सिद्धांत सुखपद, ब्रजलीला सुख, सेवा सुख, सहजसुख, सुरत सुख और उछाह (उत्साह) सुख आदि विषयों पर पद रचे गए हैं जो उच्चकोटि के बन पड़े हैं। रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं। 'जुगलसत आदिवाणी' की रचना पृथक-पृथक होकर एक में मिली है।

वृंदावन में कहते हैं कि श्री भट्ट जी अलाउद्दीन के समय में वर्तमान थे।

२७२ श्रीलाल रघुवंशवल्लभ—ये 'मनसंबोध' नामक विशाल ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की रचना दोहा और सोरठों में हुई है तथा इसमें दश प्रकाश हैं। विषय राम चरित वर्णन करना है। साथसाथ संलग्न विषयों की वेदांतानुसार पांडित्यपूर्ण व्याख्या की गई है। रचनाकाल संवत् १९१२ है, लिपिकाल का उल्लेख नहीं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता।

२७३ श्रीलाल शाह—ये तथा प्रस्तुत विवरण के संख्या २४४ पर आए 'लाल जी शाह' एक ही व्यक्ति हैं। अतः इनके संबंध में देखिए उक्त संख्या की टिप्पणी। इनके 'हरिवंश' की प्रस्तुत प्रति अपूर्ण तथा अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्था में पाई गई है जिसका लि० का० सं० १८८२ है। रचनाकाल अज्ञात है।

२७४ संतदास—इनकी एक रचना 'सुमिरन को अंग' नाम से इस बार विवृत हुई है। इसमें राम नाम की महिमा, सुमिरन की विधि तथा फल का वर्णन है। रचना दोहों में है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है।

ग्रंथ द्वारा रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। ये निर्गुण पंथानुयायी कोई संत जान पड़ते हैं। संभवतः खोज विवरण (९–२८१) (२३–३७५) पर आए संतदास ये ही हैं।

प्रथमोक्त विवरण में उल्लिखित संतदास का दूसरा नाम शिवदास तथा उपनाम हजारीदास दिया है एवं उन्हें कबीरपंथी साधु बतलाया गया है।

२७५ सदालाल—प्रस्तुत रचयिता की 'जंग' नामक छोटी सी रचना विवृत हुई है। इसका विषय रामभक्ति है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी भाषा पंजाबी है। 'कहँवा' आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं जो पूर्वी के हैं; परंतु ऐसे शब्द बहुत कम, नहीं के बराबर हैं। रचना पदों में है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता। रचना की भाषा के आधार पर इनके पंजाब निवासी होने की संभावना है।

२७६ सरदार कवि—प्रस्तुत रचयिता पिछले कई खोज विवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोज विवरण (३–९२, १६४) (४–५६,५७, ७६, ८६) (९–२८३) (२०–१७४)। इनके अनुसार ये सं० १९०३ के लगभग वर्त्तमान, ललितपुर (झाँसी) निवासी और काशी नरेश ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह के आश्रित थे। पिता का नाम हरिजन था।

इस बार इनकी 'मानस रहस्य' नामक रचना मिली है। जिसमें गो० तुलसीदास कृत रामायण की चौपाइयों में पिंगल और अलंकार आदि काव्य के अंगों का विवेचन है तथा कठिन स्थलों के भाव और अर्थ प्रकट किए गए हैं। रचनाकाल संवत् १९०४ और लिपिकाल संवत् १९२१ है।

२७७ सरस्वती (कवींद्राचार्य)—इनका 'जोगवाशिष्ट सार' ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुका है, देखिए (६–२७६) (पं० २२–५३) (२०–७९) (२९–१९१)। तीसरे खोज विवरण में इसका दूसरा नाम 'ज्ञानसार' भी दिया है। यह संस्कृत के 'योग वाशिष्ट' का संक्षिप्त अनुवाद है। प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल का दोहा अपूर्ण है, परंतु पिछली प्रतियों के आधार पर यह संवत् १७१४ है। लिपिकाल संवत् १८४० दिया है।

रचयिता संन्यासी थे और गोदावरी के तटपर रहते थे। पीछे बनारस में आकर निवास करने लगे। ये आश्वलायन शाखा के ऋग्वेदी ब्राह्मण थे।

२७८ सर्वसुखदास—प्रस्तुत रचयिता की दो रचनाएँ, १—कवित्तादि और २—सेवक वानी की टीका नाम की मिली हैं। दूसरी रचना खोजविवरण (९–२८५) पर उल्लिखित है।

कवित्तों का विषय भक्ति है। इनमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता। लिपिकाल संवत् १८८० है। ये 'सेवक वानी' के साथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता अपनी रचनाओं के अनुसार राधा वल्लभी जान पड़ते हैं। इन्होंने चतुर्भुज स्वामी (राधा वल्लभी) के 'द्वादस जस' रचना का उल्लेख किया है। जो खोज विवरण (६–१४८ ए) पर विवृत है। अन्य विवरण अप्राप्त है।

२७९ सहजराम—इनकी 'हिरण्य कश्यपवध' नामक रचना का विवरण लिया गया है जिसमें प्रह्लाद की कथा और हिरण्य कश्यप वध वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८३ है। पुष्पिका से पता चलता है कि प्रस्तुत रचना 'रघुवंशदीपक' नामक ग्रंथ का एक अंश (चौथा सर्ग) है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई विवरण नहीं मिलता। परंतु खोज विवरण (१२–१६३) (२३–३६७) पर विवृत रघुवंश दीपक के रचयिता यही हैं। प्रस्तुत ग्रंथ जैसा कि ऊपर कहा गया है, 'रघुवंश दीपक' का एक सर्ग है। 'रघुवंश दीपक' की रचना संवत् १७८९ में हुई थी, अतः रचयिता इसके लगभग वर्त्तमान थे। उक्त विवरण के अनुसार ये जाति के वैश्य थे।

२८० सहदेव - प्रस्तुत खोज में मिले 'शालिहोत्र' के रचयिता के विषय में अन्वेषक ने सहदेव की संभावना की है; परंतु यह प्रकट नहीं किया कि ऐसा किस आधार पर माना है। विवरण में उद्धृत अंश से ऐसा कहीं नहीं प्रकट होता। अस्तु ग्रंथ का विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। यह नकुलकृत संस्कृत शालिहोत्र का अनुवाद है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं।

यदि प्रस्तुत रचयिता सहदेव हैं तो ये खोज विवरण (६–३२३) और (२५–९०) में उल्लिखित क्रमशः 'गज प्रकार' और 'सगुनावली' के रचयिता सहदेव से संभवतः अभिन्न हैं।

२८१ सांईझूला—इनकी 'रुक्मिणी हरण' नामक छोटी सी रचना का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में रुक्मिणी हरण वर्णित है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

रचयिता के विषय में प्रस्तुत रचना द्वारा कुछ ज्ञात नही होता; परंतु 'राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (प्रथम भाग)' के पृ० १७७ में इनका नाम सायाँझूला दिया है। उसमें इनके विषय में इस प्रकार लिखा है :—

'ये झूलाखाँप के चारण ईडर नरेश महाराज कल्याण सिंह के आश्रित थे। इनका रचनाकाल संवत् १६४० के लगभग है। इन्होंने 'नागदमण' नाम का एक छोटा सा ग्रंथ डिंगल भाषा में बनाया जिसमें वीर और वात्सल्य रस का अच्छा स्फुरण हुआ है।'

२८२ साधु शरण 'साधु' या 'रामसाधु'—ये 'अध्यात्मबोध' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में इन्होंने अपना उल्लेख 'साधु' तथा 'रामसाधु' नामों से भी किया है; परंतु अधिक जगह 'साधुशरण' प्रयुक्त होने के कारण यही असली नाम प्रतीत होता है। ये सुखदेव जी के सुप्रसिद्ध शिष्य स्वामी चरणदास जी की शिष्य परंपरा में हुए हैं। ग्रंथ के अंत में इन्होंने अपनी परंपरा इस प्रकार दी है जो स्पष्ट नहीं है :—

सुखदेव
|
चरणदास
|
आतमाराम
|
लछीदास
|
साधुशरण

फिर भी, यह स्पष्ट है कि ये स्वामी चरणदास जी की शिष्य परंपरा में लछीदास जी के शिष्य थे। 'अध्यात्मबोध' के बीच-बीच में कुछ कवित्त सवैये लछीदास जी के भी आए हैं। ग्रंथ गुरु शिष्य संवाद के रूप में लिखा गया है। इसमें छः दर्शनों में अधिक प्रचलित वेदांत दर्शन की प्रशंसा की गई है जिसके अनुसार आध्यात्मिक विषय का प्रतिपादन किया गया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ के आधार पर, जो इसी के साथ एक हस्तलेख में है, संवत् १८०६ है।

२८३ सिद्ध गरीब—इनकी कुछ 'वाणियाँ' खोज में प्राप्त हुई हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा अन्य वृत्त के विषय में कुछ ज्ञात नहीं।

२८४ सिद्ध मालीपाव—इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनका विवरण 'सिद्धों की वाणी' के विवरण पत्र में है, देखिए उक्त विवरण संख्या ५६ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा अन्य वृत्त अप्राप्य है।

२८५ सिद्ध हड़ताली—इनको भी सिद्ध कहा गया है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। समय तथा विशेष परिचय अभी तक अज्ञात है।

२८६ सीतलदास—इनका रचा 'विवेक सार' वेदांत विषय का ग्रंथ है और गुरु शिष्य संवाद के रूप में लिखा गया है। रचनाकाल संवत् १९०२ तथा लिपिकाल संवत् १९०८ है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता। इनका पता खोज में प्रथम बार ही लगा है।

२८७—सुंदरदास—ये अपने दो ग्रंथों—'सुंदर विलास' तथा 'ज्ञान समुद्र' द्वारा काफी प्रसिद्ध हैं। ये दादू जी के शिष्य थे। इनका जन्म काल संवत् १६५३ एवं मृत्युकाल संवत् १७४६ माना जाता है, देखिए खोज विवरण (२-२५) (६-२४२) (१२-१८४) (१७-१८५) (२६-४१०) (पं० २२-१०७) (दि० ३१-८६)। इनके पिता का नाम शाह परमानंद था। जाति के खंडेलवाल वैश्य तथा द्यौसा (जयपुर) के निवासी थे।

इस बार इनकी 'नरक चितावनी' नामक रचना और मिली है। इसका विषय ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त हैं।

२८८ सुंदरलाल या सुंदरसखि—प्रस्तुत रचयिता के निम्नलिखित तीन ग्रंथ इस बार खोज में विवृत हुए हैं। ये तीनों एक ही हस्तलेख में हैं।

१-सिद्धांत आदि फुटकर विषय वर्णन—रचनाकाल संवत् १९१७; लिपिकाल संवत् १९२५। विषय—सिद्धांत, दास लक्षण, राधिका रानी जस प्रताप, व्रज माहात्म्य, वृंदावन शतक, गिरिराज माहात्म्य, श्री जमुनाजी का व्रज में आगमन आदि विषय वर्णित हैं।

२-निकुंज रसमाधुरी-रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं। विषय—राधा कृष्ण की भक्ति और उनकी लीलाओं का वर्णन। इसके 'माधुरी' नाम से तीन भाग हैं जिनमें से प्रत्येक के उपविभाग भी किए गए हैं। ग्रंथ उत्तम है।

३-सनेह मंजरी-रचनाकाल संवत् १९१६ तथा लिपिकाल संवत् १९२५ के लगभग। विषय-राधा कृष्ण भक्ति तथा पति से निष्कपट प्रेम करने का उपदेश वर्णन।

हस्तलेख में ये ग्रंथ इस क्रम से हैं :—सबसे पहले 'सनेह मंजरी तब 'निकुंज रस माधुरी' और फिर 'सिधांत आदि फुटकर विषय'। लिपिकर्ता ने नकल करने में बार-बार स्याही बदली है। अंतिम रचना (सिद्धांत आदि फुटकर विषय) की पुष्पिका दूसरी स्याही और दूसरी कलम से लिखी गई है। इसमें केवल ग्रंथकार द्वारा एक जमुनादास बाबा को प्रस्तुत ग्रंथ भेंट करने का उल्लेख है। अतः इसे पुष्पिका का लेख भी नहीं कह सकते। ग्रंथांत में एक दोहा इस प्रकार है :—

सत संगिन को दिवस रह्यो सुखद सत्संग।
यह निकुंज रस माधुरी गाई छकि रस रंग ॥ ६६ ॥

इससे पता चलता है कि प्रस्तुत रचना (सिद्धांत आदि फुटकर विषय) निकुंज रस माधुरी का एक अंश है। परंतु भिन्न स्याही और भिन्न कलम से लिखित होने से एवं विषयों में कोई साम्य न होने के कारण दोनों के अलग-अलग विवरण ले लिए गए हैं।

रचयिता ने अपना जो परिचय दिया है उसके अनुसार ये निंबार्क संप्रदाय के अनुयायी थे। पिता का नाम सुखलाल था। जाति के कायस्थ तथा जयपुर के रहनेवाले थे। कुछ दिन वोंलिकागढ़ में भी रहे। जुगलकिशोर की सेवा ये सखिभाव से करते थे। इनका संग एक रोड़ूराम पुजारी से रहता था जो स्वयं भी जुगलकिशोर की सेवा सखिभाव से करते थे। ये उन्हें गुरु की तरह मानते थे। इनके दो अन्य व्यक्तियों, फैजसिंह चौहान और बलदेव सिंह कछुवाहा से भी परिचय था। प्रथम व्यक्ति इन्हें पुत्र तुल्य मानते थे तथा चतुरदास कृत एकादश स्कंध भागवत—देखिए खोज विवरण (००–७१; १–११० ६–१४९)—की कथा सुनाया करते थे।

पिछले खोज विवरणों (००–१२५, १२८) (३५–८७) में भी प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख हुआ है।

२८६ सुकलहंस—इनकी कुछ 'वाणियों' के विवरण लिए गए हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र और गोरखनाथ (संख्या ५९) तथा विवरण अंश में संख्या १।

इनका उल्लेख सिद्धों के साथ हुआ है। विशेष वृत्त अज्ञात है।

२९० सुखदान—प्रस्तुत खोज में इनका बिना नाम का एक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। पुष्पिका के आधार पर इसका नाम 'अलंकार ग्रंथ' रख दिया गया है। इसमें केवल अर्थालंकारों का वर्णन है। शब्दालंकार छोड़ दिए गए हैं। विषय के निरूपण में किसी प्रकार का क्रम एवं वर्गीकरण नहीं पाया जाता। अलंकारों के लक्षण दोहों में दिए गए हैं और उनके उदाहरणों के लिये दुर्मिल, सवैया, त्रोटक, मदिरा प्रभृति छंदों का प्रयोग किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय की दृष्टि से रचना उत्तम है।

ग्रंथ से रचयिता का विस्तृत विवरण तो नहीं मिलता पर आरंभ में उल्लिखित 'श्री राधा वल्लभो जयति' तथा मंगलाचरण से निश्चय होता है कि ये राधावल्लभी संप्रदायानुयायी रहे होंगे। अलंकारों के लक्षणों का विषय भी राधा ही है। अपने नाम का स्पष्ट उल्लेख इन्होंने कहीं नहीं किया। दोहों और सवैयों में यत्रतत्र 'सुखदान' शब्द का प्रयोग मिलता है जो छाप के रूप में इन्हीं का नाम ज्ञात होता है। यद्यपि इनका समय ज्ञात नहीं है तथापि ये अनुमान से अठारहवीं शताब्दी के जान पड़ते हैं।

२९१ सुखदेव मिश्र—इनका 'रस रत्नाकर' इस त्रिवर्षी में विवृत हुआ है। इसमें नायिकाभेद और नवरसों का वर्णन है। रचनाकाल प्राप्त नहीं, लिपिकाल संवत् १८९२ है।

इसकी प्रस्तुत प्रति का प्रथम पत्र लुप्त हो गया है। ग्रंथ यद्यपि छोटा है तथापि इसमें विषय के सभी अंग संक्षेप में अच्छी तरह समझाए गए हैं। यह मतिराम कृत 'छंदसार संग्रह' नामक ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता दौलतपुर निवासी प्रसिद्ध सुखदेव मिश्र हैं जो पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (५-९७) (६-२४०) (१७-१८२) (२०-१८७) (२३-४१२) (द्वि० ३१-८०) (९-३६०) (२६-४६५) (३-१२३)। उक्त विवरणों के आधार पर ये संवत् १७२८ के लगभग वर्तमान थे।

२९२ सुखलाल मिश्र—इनकी एक छोटी सी रचना 'श्री कृष्ण स्तोत्र' के विवरण लिए गए हैं। इसमें श्री कृष्ण की स्तुति, सवैया और दोहा वृत्तों में की गई है। रचनाकाल प्राप्त नहीं, लिपिकाल सं० १९७६ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं के साथ इनका साम्य स्थापित करने के लिये कोई आधार नहीं मिलता।

२९३ सूरति मिश्र—प्रस्तुत त्रिवर्षी में इनके निम्नलिखित दो ग्रंथ प्राप्त हुए हैं:—

१—प्रबोध चंद्रोदय नाटक या ग्रंथ—यह संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का अनुवाद है। इसमें कीर्त्तिवर्मा नामक एक राजा की कथा वर्णित है जो बड़ा विषयी था। गोपाल नामक मंत्री ने उसको सुमार्ग पर लाने का एक उपाय सोचा। उसने एक नट को प्रबोध चंद्रोदय नाटक—जिसमें मोह विवेक की लड़ाई का वर्णन है खेलने के लिये तैयार किया। राजा को जब यह नाटक दिखलाया गया तो वह अत्यंत चमत्कृत हुआ और विषय वासना त्याग कर हरिस्सरण की ओर लगा। फलतः अंत में उसकी मुक्ति हुई। यही कथा का सार है जो आध्यात्मिक रूपक को लिए हुए है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८६ है। रचना ब्रजभाषा में हुई है।

२—छंदसार—यह पिंगल विषयक ग्रंथ है। इसमें मात्रा, वर्ण और गण तथा लघु गुरु भेद पर विचार किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत प्रति पत्राकार रूप में है। पुष्पिका के पश्चात् लिपिकार ने 'गणागण विचार' लिखा है जो कविप्रिया का अंश है।

रचयिता का नाम प्रथम ग्रंथ के अंत में तथा दूसरे ग्रंथ में यत्रतत्र छंदों में प्रयुक्त हुआ है। दूसरे ग्रंथ की पुष्पिका में तो सूरत मिश्र का स्पष्ट उल्लेख है। यद्यपि प्रस्तुत ग्रंथों द्वारा इनका कोई वृत्त नहीं मिलता तथापि ये पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित सुप्रसिद्ध सूरति मिश्र से भिन्न नहीं जान पड़ते, देखिये खोज विवरण (१-८६) (२-६६) (३-१०४) (६-२४३) (९-३१४) (२०-१९०) (२३-४१६) (२६-४७४; ३२-२१३)। इन विवरणों के आधार पर ये संवत् १७६८ के लगभग वर्तमान जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण, पिता का नाम सिंघमनि, गुरु का नाम गंगेस (? गंगेस), आगरा निवासी तथा नसरुल्ला खाँ और दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह के आश्रित थे।

२९४ सूरदास—इस महाकवि के निम्नलिखित नौ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं :—

१—भ्रमरगीत—यह सूरसागर का ही एक अंश है जिसमें उद्धव गोपियों के संवाद का एक मार्मिक वर्णन है। हस्तलेख के पन्ने सिलसिलेवार नहीं हैं। प्रारंभ में भ्रमरगीत के ६७ पन्ने हैं, पश्चात् सूरसागर क्रमानुसार प्रारंभ होकर २४४ पन्नों तक लिखा गया है फिर भ्रमरगीत का शेषांश है। इससे ज्ञात होता है कि एक बार हस्तलेख के पन्ने सिलाई से उखड़ गए थे और जब दुबारा उन्हें सिला गया तो असावधानी के कारण यह गड़बड़ी हो गई।

भ्रमरगीत के आरंभ के ६७ पन्नों में भी संख्या ३, ४, ५ के पन्ने लुप्त हो गए हैं; किंतु जो पद उनमें थे वे सूरसागर के आगे पाँच पन्नों में अलग से लिख दिए गए हैं। इन पदों में सात से लेकर छब्बीस तक संख्याएँ पड़ी हैं जो इन्हें भ्रमरगीत का अंश होने की पहिचान करवाती हैं।

अंत में 'अथ कुबिजा गेह प्रवेश' में एक पद देकर ग्रंथ समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

'इति श्री भागवते दशमस्कंधे अष्टचत्वारिंशोध्यायः॥ ४८ ॥ मिति जेष्ठ कृष्णा २ रविवासरे संवत् १८११ ॥ पुस्तक लिष्यो ब्राह्मण चत्रभुज अक्षयगढ़ मध्ये ॥ लिखायते लालाजी बंशीधर जी दाऊ जी सहाय ॥'

भ्रमरगीत के प्रस्तुत अंश में समस्त १२० पन्ने तथा ५५१ पद हैं। इनमें एक पद ऐसा है जो 'परशुराम सागर या रामसागर' में उसके रचयिता (परशुराम) की छाप सहित है (देखिए परशुराम सागर या रामसागर' जो सभा के लिए प्राप्त कर लिया गया है)।

दोनों पद निम्नलिखित प्रकार से हैं :—

ऊधो सुनि माधौ को नातौ।
ज्यों पतंग की चटक दिन द्वै ब्रज मोहि पै माहिन रातौ।

—सूरकृत।

मधुकर सुन मोहन को नातौ।
ब्रज मोहिं बिनु मोहन रातौ॥

—परशुरामकृत।

इन पदों में भावसाम्य के साथ-साथ शब्दसाम्य देखकर आश्चर्य होता है।
हस्तलेख का लिपिकाल सं० १९११ है; रचनाकाल नहीं दिया है।

२—सांझीलीला—इसमें राधाकृष्ण के विहार संबंधी पदों का संकलन है। रचनाकाल और लिपिकाल का इसमें उल्लेख नहीं है।

३—सूरसागर—इसकी चार प्रतियाँ मिली हैं। पहली दो प्रतियों में जन्म से लेकर मथुरा गमन तक की कृष्ण लीलाओं का वर्णन है, यह प्रति अपूर्ण है। इसमें २ से

९८ तक पन्ने हैं तथा पदों की संख्या ६२२ है। लिपि सुंदर और शब्दों के रूप शुद्ध हैं। दूसरी प्रति में ग्यारह स्कंध हैं। पश्चात् बौद्ध अवतार की कथा का पद भी पूरा है। यह भी अपूर्ण प्रति है। पत्र संख्या ९१ के पश्चात् का अंश लुप्त हो गया है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अप्राप्त हैं। तीसरी और चौथी प्रतियाँ पूर्ण हैं। परंतु रचनाकाल इनमें से किसी में नहीं दिया है। तीसरी का लिपिकाल १९१७ और चौथी का संवत् १८८० है। पिछले खोज विवरणों में यह ग्रंथ विवृत हो चुका है, देखिए खोज विवरण (१-२३) (६-२४४) (१२-१८५) (१७-१८६) (२३-४१६) (२३-४१७) (३२-२१२) (२९-३१९)।

४-सूरसागर (नवम् स्कंध)-भागवत के नवम स्कंध में रामायण की कथा है उसी का पदों और दोहों में अनुवाद किया गया है। ग्रंथ खंडित है। इसके आरंभ के २४ पत्रे लुप्त हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८१ है।

५-सूरसागर (दशम स्कंध, एकादश स्कंध, द्वादश स्कंध)-ग्रंथ के आरंभ के ३९७ पत्रे लुप्त हो गए हैं, अतः दशम, एकादश और द्वादश स्कंध ही रह गए हैं। दशम स्कंध के भी आरंभ के कुछ पन्ने नहीं हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९०२ है। पिछली खोज में भी यह विवृत हो चुका है; देखिए खोज विवरण (२९-३१९ ई० एफ० जी०)।

६-सूरसागर (दशम स्कंध तथा विष्णुपद)-इसके आरंभ का केवल एक पत्र खंडित है। समस्त हस्तलेख दो भागों में है। पहले भाग में दशम स्कंध पूर्वार्द्ध की लीलाओं का वर्णन है तथा दूसरे भाग में विष्णुपद हैं जिसमें अनेक लीलाओं के चुने हुए पद संगृहीत हैं। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। पिछली खोज में भी यह विवृत हो चुका है, देखिए खोज विवरण (२३-४१६ डी)।

७-सूरसागर (दशम स्कंध)-इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। प्रथम में कुल १७३८ पद हैं। यह बहुत संक्षिप्त मालूम होता है। अध्याय के अध्याय छोड़ दिए गए हैं, जैसे—८६ वें अध्याय के बाद ९० अध्याय देकर ग्रन्थ समाप्त किया गया है। रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल सं० १९४३ है। द्वितीय प्रति में भी रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १८५४ है।

८-सूरसागर (दशम स्कंध पूर्वार्द्ध)-इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। प्रथम प्रति का लिपिकाल सं० १९२६ और द्वितीय का अज्ञात है। इसके आदि, अंत और मध्य के कई पत्रे लुप्त हैं।

९-सूरसागर (प्रथम से नवम स्कंध तक)-इसमें केवल नौ स्कंध हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९०९ है।

ये समस्त रचनाएँ सूरसागर के ही अंश हैं।

रचयिता के विषय में प्रस्तुत ग्रंथों से कोई नवीन बात नहीं विदित होती।

२९५ सूरदास—ये सुप्रसिद्ध कवि सूरदास से भिन्न हैं। इनकी 'घूँवरा के पद' नामक रचना विवृत हुई है। राधा के पैरों के घूँघर सत्यभामा को दिखाने के लिये श्रीकृष्ण लाए थे। कवि ने उसी घटना का इन पदों में वर्णन किया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पदों की भाषा ग्रामीण ढंग की राजस्थानी है। इस दृष्टि से रचयिता राजस्थानी विदित होते हैं। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

२९६ सेणी—सेणी कृत 'सेणी रा दूहा' इस खोज में नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें कुछ शृंगार के और कुछ प्रास्ताविक के दोहे संगृहीत हैं। दोहों की भाषा राजस्थानी है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता राजस्थानी में रचना करने के कारण, राजस्थानी विदित होते हैं। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता।

२९७ सेनापति—इनके कुछ कवित्त 'कवित्त' शीर्षक से प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। इनका विषय शृंगार है। हस्तलेख अपूर्ण मिला है। केवल १५ पत्रे उपलब्ध हुए हैं। प्रथम पत्र की संख्या बीस है तथा अंत के पत्र की छत्तीस। बीच के दो पत्रे २१वें और २२ वें संख्या के नहीं हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता हिंदी साहित्य के प्रमुख कवियों में से हैं। ये अनूप शहर के रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। पिता का नाम गंगाधर, पितामह का नाम परशुराम और गुरु का नाम हीरामणि दीक्षित था। पिछले कई खोज विवरणों में इनका उल्लेख हो चुका है, देखिये खोज विवरण (४–५१) (६–२३१) (९–२८७) (१२–१७१) (२०–१७६) (२३–३७९) (२६–४३३) (३२–१९६)। इनके आधार पर इनका जन्मकाल संवत् १६८४ तथा कविताकाल संवत् १७०६ माना गया है।

२९८ सेवक या सेवकराम—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण में संख्या १९ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२९९ सेवादास—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १४ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

३०० सेवाराम—इनके 'मल्लिनाथ चरित्र' का विवरण लिया गया है। यह भट्टारक सकलकीर्ति के संस्कृत ग्रंथ की भाषा में गद्य टीका है। इसका विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। इसका रचनाकाल संवत् १८५० और लिपिकाल संवत् १८७९ है। भाषा में राजस्थानी और ब्रजी के साथ साथ खड़ी बोली का रूप भी मिलता है।

रचयिता ने अपने पिता का नाम मायाचंद लिखा है और गोत्र पाटनी बतलाया है। ये पहले घोसा ग्राम के निवासी थे, पर बाद में डीग (रियासत भरतपुर) में रहने लगे। उस समय भरतपुर में महाराज रणजीत सिंह राज्य करते थे। इनको रामसुख, प्रभाती मल्ल, जोधराज और दीपचंद गोधी नामक चार व्यक्तियों ने इस ग्रंथ के भाषांतर करने के लिये प्रेरित किया। ग्रंथ द्वारा ये जैन विदित होते हैं।

३०१ सेवासिंह—प्रस्तुत खोज में 'नलचरित्र या नैषध' नामक ग्रंथ मिला है जिसके ये रचयिता हैं। ग्रंथ पुराणों के आधार पर रचा गया है। इसमें कथा का आरंभ बृहस्पति ऋषि और धर्मराज युधिष्ठिर के संवाद के रूप में होता है। इसकी भाषा ब्रजी है तथा इसमें दोहा, चौपाई, छप्पय, कवित्त सवैया, तोमर कुंडलिया, भुजंग प्रयात तथा त्रिभंगी प्रभृति वृत्त प्रयुक्त हुए हैं। ग्रंथ के आरंभ और अंत के कुछ पन्ने जीर्णावस्था में हैं। बहुत से स्थानों पर स्याही उखड़ जाने के कारण अक्षर नष्ट हो गए हैं। इसके लिखने में लिपिकार ने बहुत अशुद्धियाँ की हैं, कहीं अक्षर छोड़ दिए हैं एवं कहीं शब्दों के रूप ही विकृत कर दिए हैं। 'स' के लिए प्रायः 'श' का ही प्रयोग है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सं० १९२३ है। इसका उल्लेख पिछले एक खोज विवरण में भी हुआ है, देखिए खोज विवरण (२६-४३६)।

इस बार इनका विशेष वृत्त ज्ञात हुआ है जिसके अनुसार इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
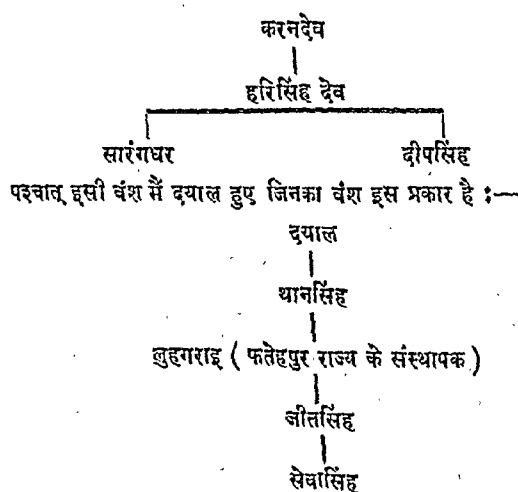
लुहगराइ ने फतेहपुर राज्य की स्थापना की। इसलिये संभव है कि रचयिता, सेवासिंह का निवासस्थान फतेहपुर राज्य ही रहा हो। फतेहपुर राजपूताने की एक रियासत है। इसके अतिरिक्त रचयिता का अन्य वृत्त अज्ञात है। इनकी प्रस्तुत रचना काव्य की दृष्टि से अच्छी है। पुष्पिका में इसका नाम नलचरित्र लिखा मिलता है। आरंभ में 'इति' के आगे 'नै' अक्षर आया है। जिससे 'नैषध' का ज्ञान होता है। आगे के अक्षरों (ष ध) की स्याही उखड़ गई है।

३०२ सैना—प्रस्तुत खोज में सैना के 'कबीर रैदास संवाद' का विवरण लिया गया है। इसमें कबीर और रैदास के संवाद का वर्णन है। प्रस्तुत रचना एक बड़े आकार

के हस्तलेख में है जो बड़ा महत्वपूर्ण है। इस विषय में देखिए 'सेवादास'। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५६ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त अन्य विवरण अज्ञात है। रचना के अंत में 'सैना' नाम दिया है। अनुमानतः ये प्रसिद्ध सैना भक्त ही जान पड़ते हैं।

३०३ सैयद अमीन—ये 'रिसाला मजजूबुल सालकीन' के रचयिता हैं। ग्रंथ सूफी मत का है। इसमें यह दिखलाया है कि सभी धर्म परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग हैं और उनमें नाम के अतिरिक्त और कोई वास्तविक भेद नहीं है। इसकी भाषा हिन्दी का दखिनी रूप है जिसमें फारसी और अरबी शब्दों तथा मुहावरों का बहुतायत से प्रयोग है। रचनाकाल सन् १२३६ हिजरी है, लिपिकाल नहीं दिया है।

रचयिता शाह-अरिफ-गंज बक्स के शिष्य थे और चिश्ती फकीरों की परंपरा से संबंधित थे। इनके कथन के आधार पर इनका खानदान अदहमिया, गिरोह अबदुल वाहिद बिन जैद, मजहब सूफिया और संप्रदाय दीद था। ये हिजरी सन् १२३६ में वर्तमान थे।

३०४ सोहणी—इनका प्रस्तुत खोज में 'वीझै सोणी रा दूहा' नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें 'वीझाँ' और 'सोहणी' के संवाद के ७५ दोहे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता ने राजस्थानी भाषा में रचना की है जिससे वे राजस्थानी विदित होते हैं। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

३०५ स्याम कवि—इस कवि का 'वैद्यक' नामक ग्रंथ नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें रोगों के लक्षणों और औषधियों का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८१९ है। लिपिकार ने लिखने में बहुत अशुद्धियाँ की हैं।

रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है।

३०६ स्यामदास—इनका 'विष्णुस्वामी चरितामृत' नामक ग्रंथ विवृत हुआ है जिसमें श्री विष्णु स्वामी (जिनके नाम से विष्णुस्वामी संप्रदाय प्रसिद्ध है) का चरित्र वर्णित है। पुस्तक में आठ अध्याय हैं। साहित्यिक दृष्टि से तो ग्रंथ महत्वपूर्ण नहीं है, पर जीवन चरित की दृष्टि से उपादेय है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के विषय में ग्रंथ द्वारा कुछ विदित नहीं होता।

३०७ स्वरूपदास—इनकी कृति 'पांडव यशेंदु चंद्रिका' पिछली खोज में भी मिल चुकी है, देखिए खोज-विवरण (२३-४२३) और (२६-४७६)। इसकी एक प्रति का विवरण इस त्रिवर्षी में भी लिया गया है। इसमें महाभारत की कथाओं का सोलह मयूखों (अध्यायों) में संक्षिप्त वर्णन है। रचनाकाल सं० १८९२ और लिपिकाल सं० १९२६ है। इसकी भाषा कवि के कथनानुसार पिंगल, डिंगल और संस्कृत का

मिश्रित रूप है। परंतु डिंगल के शब्दों (नामों) का ही प्रयोग है, क्रियापदों (आख्यातों) का नहीं। प्रस्तुत प्रति की लिपि सदोष है।

रचयिता का इस समय भी कोई वृत्त नहीं मिला। पिछले खोज विवरणों में इनका उपनाम 'रसाल' दिया है।

३०८ हंसराज (जैन)—ये 'ज्ञान द्विपचासिका' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ अपूर्ण और खंडित है। केवल संख्या २, ४, ५, ७ के ही पत्रे उपलब्ध हैं। इसका विषय तो ज्ञानोपदेश है; परंतु साहित्यिक दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता का नाम हंसराज है जो प्रत्येक कवित्त में प्रयुक्त हुआ है। इन्होंने ग्रंथ में यत्रतत्र जिन भगवान् का उल्लेख किया है जिससे पता चलता है कि ये जैन थे। इनके गुरु का नाम वर्द्धमान सूरि था। अन्य परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ के अंत का कवित्त जिसमें इन्होंने अपना वृत्त दिया है विवरण पत्र में उद्धृत है।

३०९ हंसराज—इस त्रिवर्षी में इनके 'बारह मासा' का विवरण लिया गया है। इसमें श्री कृष्ण के प्रवास के अवसर पर गोपियों के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

यह ग्रंथ जिस हस्तलेख में है उसमें अन्य रचनाएँ भी हैं। इसी में आगे चलकर एक हंसराज सिंघ के चार भजन दिए गए हैं। इनके आरंभ में लिखा है—'भजन बनावल हंसराज शीघ चंदेल दुवारी के।'

इसमें आए 'हंसराज शीघ चंदेल' प्रस्तुत रचयिता ही जान पड़ते हैं। बारहमासे और भजनों की रचनाशैली तथा उनकी भाषा से भी इसकी पुष्टि होती है। अतः इस आधार पर ये जाति के चंदेल तथा दुवारी नामक स्थान के रहनेवाले थे। यह स्थान कहाँ है? कुछ पता नहीं चलता। ये पिछले खोज विवरण (००–१३५) (६–४५) पर आये हंसराज बख्शी से भिन्न हैं। विवरण की टिप्पणी के स्तंभ में इनके भजन भी दे दिए गए हैं।

३१० हजरत हयातबेग—इनके 'ज्ञान स्वरोदय' में योग का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। आरंभ के अट्ठारह पत्रे नष्ट हो गए हैं। लिपिकर्त्ता ने प्रत्येक पत्र का आधा अंश लिखा है। भाषा कुछ पंजाबीपन लिये हुए है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल सं० १८७७ वि० दिया है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथांत में इन्होंने एक दोहा इस प्रकार लिखा है:—

पीर गुरु की दया सूं लीनो तत्त सरोधर जाण।
हजरत हयात वेग नु कहत है तत्त सरोधर गीयान ॥ २४० ॥

'हजरत हयात वेग नु' के 'नु' में पंजाबी ध्वनि निकलती है। अतः रचयिता पंजाब की ओर का रहने वाला विदित होता है।

३११ हणवंत—इनकी कुछ 'वाणियाँ' सिद्धों की वाणियों के साथ विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अज्ञात है।

३१२ हरि जू सुकवि—इन सुकवि द्वारा संपादित 'सप्त सतिका (विहारी सतसई)' का इस बार विवरण लिया गया है। ग्रंथ के संपादन का कारण इन्होंने निम्न लिखित बतलाया है :—

सकल वितिक्रमै होइ अर्थ अति गौर।
रामदत्त के हुकुम ते करी सकल एक ठौर ॥ १ ॥
जदपि अहै सौभागिनी मुक्ताहल मैं देपि।
गुहे ठौर के ठौर तें लरि में होत विसेपि ॥ २ ॥
धरयो अनुक्रम ग्रंथ को नायकादि अनुसार।
सहर जौनपुर में बसैं हरजु सुकवि विचार ॥ ३ ॥
जड़ जन दुपन ढुढ़ि है तजि फल फूल सुवास।
ज्यौं सूकर रमनिय वन चहत मलान कुवास ॥ ४ ॥

इससे विदित होता है कि विहारी के दोहों का क्रम खंडित हो जाने के कारण संपादक ने किसी रामदत्त (संभवतः आश्रयदाता) की आज्ञा से उसका फिर से क्रम लगाकर संपादन किया। रचनाकाल अज्ञात है; लिपिकाल संभवतः संवत् १८७९ है। इसका दोहा इस प्रकार है :—

भक्ति[९] लोक[७] वसु[८] ससि[१] द्वित संवत् प्रम प्रकास।
कार्त्तिक शुक्ल दुतिय गुरुवासर सर सकल सुवास ॥

यह लिपिकाल का ही संवत् ज्ञात होता है क्योंकि प्रस्तुत ग्रंथ दशरथ कृत 'नवीनाख्य तथा 'नवरस' और 'चित्रकाव्य' आदि ग्रंथों के साथ एक ही हस्तलेख में है। 'नवीनाख्य' और 'चित्रकाव्य' का लिपिकाल सं० १८६९ दिया है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ का यह संवत् लि० का० ही है। संपादक ने यत्रतत्र नायक नायिकाओं के लक्षण भी दिए हैं जो उन्हीं के रचित ज्ञात होते हैं। ये जौनपुर के रहने वाले थे और संभवतः किसी रामदत्त के आश्रय में रहते थे। इनका एक 'अमरकोष भाषा' नामक ग्रंथ पिछली खोज में मिला है, देखिए खोज विवरण (९–११२)। इसके आधार पर इनका समय १७९१ वि० या १८वीं सदी है।

३१३ हरि कवि—इनके 'भाषाभूषण की टीका' का इस खोज में विवरण लिया गया है। ग्रंथ में महाराजा जसवंत सिंह के भाषाभूषण नामक ग्रंथ की एक अच्छी टीका है। इसमें अलंकारों को स्पष्ट करने के लिये मतिराम और बिहारी के ग्रंथों से भी उद्धरण लिए गए हैं। आरंभ और अंत के पन्ने खंडित हो जाने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल के विषय में कुछ पता नहीं चलता।

रचयिता ने कुछ अपना भी वृत्त दिया है जिसके अनुसार ये त्रिपाठी ब्राह्मण थे। पिता का नाम रामधन त्रिपाठी था जो शालिग्रामी सरजू और गंगा के संगम पर स्थित सारन जिला के अंतर्गत गोआ परगना में चैनपुर ग्राम के निवासी थे। ये (रचयिता) इसे छोड़ मारवाड़ में जा बसे :—

सालग्रामी सरजू की मिली गंग सों धार,
अंतराल मों देश है सो सारनि सरकार ॥ ६५ ॥
परगन्ना गोआ तहाँ लसै चैनपुर ग्राम,
तहाँ त्रिपाठी रामधन वास कियो अभिराम ॥ ६६ ॥
ताके सुत 'हरि कवि' कियो मारवाड़ में वास,
भाषा भूषण ग्रंथ की टीका करी प्रकाश ॥ ६७ ॥
पूरो हित श्री नंद को मुनि शांडिल्य महान
मैं हौं तिनके गोत में मोह ... ... ॥

ये खोज में नवीन मिले हैं।

३१४ हरिकृष्ण आभा—इनके दो ग्रंथों 'ज्ञान बोधामृत' और 'ज्ञानबोध प्रकाश' के विवरण प्राप्त हुए हैं जिनका विषयादि निम्नलिखित प्रकार से है :—

१-ज्ञानबोधामृत-इसमें संसार के मायामोह से दूर रहकर हरि भजन करने का उपदेश है। इसकी भाषा ब्रजी और खड़ी बोली मिश्रित है। रचनाकाल संवत् १८७९ है, लिपिकाल ज्ञात नहीं।

२-ज्ञानबोध प्रकाश-इसमें ग्रंथकार ने जीव की हीनावस्था दिखाते हुए दया धर्म और उपकार में मन लगाना तथा साधु, विप्र और अभ्यागतों की सेवा सत्कार करने का उपदेश किया है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। दोनों रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। विवरण पत्र में इनकी पूर्ण प्रतिलिपियाँ कर दी गई हैं।

रचयिता ने ये रचनाएँ बसवाड़ा नगर में की। इससे पता चलता है कि ये वहाँ के निवासी रहे होंगे। थानापत श्री संतोष दास का ग्रंथ में स्तुति पूर्ण वर्णन किया गया है जिससे विदित होता है कि वे इनके गुरु रहे होंगे। इससे अधिक इनके बारे में कुछ पता नहीं चलता। खोज में ये नवीन मिले हैं।

३१५ हरिचरणदास—ये 'रामायणसार' के रचयिता हैं। ग्रंथ में कवित्त दोहादि १३६ छंदों में रामचरित का संक्षेप में वर्णन है। रचना ब्रजभाषा में है। रचनाकाल संवत् १८३२ और लिपिकाल संवत् १८७८ हैं।

अन्वेषक के कथनानुसार रचयिता कृष्णगढ़ के निवासी थे और संवत् १८३२ के लगभग वर्तमान थे। इनकी अन्य रचनाओं का पिछले खोज विवरणों में भी उल्लेख हुआ है, देखिए खोज विवरण (४-५८) (९-१०८) (४-४) (१७-७१) (२०-५६) (पं० २२-३६) (६-२५५)।

३१६ हरिचरणदास सुरति शुभचिंतक चाकर—हरिनारायण सुरति और शुभचिंतक चाकर कृत 'विहारी सतसई (सटीक)' इस त्रिवर्षी में विवृत हुई है। इसमें विहारी सतसई के सात दोहों की ब्रजभाषा गद्य में टीका की गई है। प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अप्राप्य हैं।

नामों को देखने से तो विदित होता है कि प्रस्तुत रचना तीन रचयिताओं के सम्मिलित प्रयत्न का फल है। हरिचरणदास के रामायणसार नामक ग्रंथ का विवरण इसी त्रिवर्षी में लिया गया है। सूरति, सूरति मिश्र हैं जिन्होंने 'अमरचंद्रिका' नाम से विहारी सतसई की टीका की है। शुभचिंतक चाकर का परिचय अज्ञात है।

जहाँ तक संभावना जान पड़ती है किसी व्यक्ति ने इन कवियों द्वारा विहारी के सात दोहों पर की गई टीकाओं का प्रस्तुत रूप में संपादन किया है।

३१७ हरिदास स्वामी—इन सुप्रसिद्ध महात्मा के कुछ पद 'श्री स्वामी हरिदास जू की वानी' नाम से प्राप्त हुए हैं। ये पद अधिकतर राधा कृष्ण की विहार लीला संबंधी हैं। आरंभ में १८ पद सिद्धांत के तद्पश्चात् एक पद भेंट का और ११० पद शृंगार रस के हैं। इस प्रकार कुल पदों की संख्या १२९ है। इनकी भाषा ब्रजी है जिसमें सदका सतरंज मौज (लहर) सोहवत (असर) प्रभृति शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता टट्टी संप्रदाय के प्रवर्त्तक सुप्रसिद्ध स्वामी हरिदास हैं जिनका पिछले खोज विवरणों में उल्लेख हो चुका है, देखिए खोज विवरण (००-३७, २९, ६७) (१-१२) (६-२२५) (२-५७) (२३-२०, ८८) (पं० २२-१६) (५-६७) (९-१०९वी) (२३-१५५) (१२-७२) (३२-७८)।

३१८ हरिदास निरंजनी—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १५ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

३१९ हरिनाथ (महापात्र)—इनके कुछ कवित्तों के विवरण 'हरिनाथ महापात्र के कवित्त' शीर्षक से लिए गए हैं। इनमें जहाँगीर की प्रशस्ति वर्णित है। रचनाकाल नही दिया है। लिपिकाल जैतसिंह महापात्र की रचनाओं के आधार पर जो प्रस्तुत रचना के

साथ एक ही हस्तलेख में है, संवत् १७६२ के लगभग है, देखिए जैतसिंह महापात्र का विवरण पत्र।

रचयिता सुप्रसिद्ध नरहरि महापात्र के पुत्र थे। इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
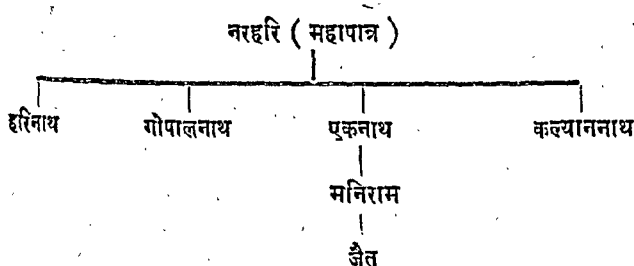
प्रस्तुत हस्तलेख में नरहरि, हरिनाथ, मनिराम और जैत के कवित्तों का संग्रह है। हरिनाथ (रचयिता) के जीवनकाल के संबंध में कोई पता नहीं चलता, परंतु जहाँगीर की प्रशंसा करने के कारण ये उसके समसामयिक जान पड़ते हैं। खोज में इनका प्रथम बार ही पता लगा है।

३२०—हरिनामदास—इनकी निम्नलिखित तीन रचनाएँ एक ही हस्तलेख में प्राप्त हुई हैं :—

१-गोसइआ के धआन की कीताब-रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात। विषय—परमात्मा के स्वरूप का वर्णन। इसमें हिंदू और मुसलमानों के दार्शनिक विचारों का समन्वय है। रचना अधिकतर गद्य में है। बीच बीच में तथा अंत में कहीं-कहीं वाक्यों में अंत्यानुप्रास मिलाए गये हैं, परंतु उन्हें पद्य नहीं कह सकते। उनमें मात्राओं और वर्णों का कोई नियम नहीं है। गद्य की भाषा विचित्र है। फिर भी खड़ी बोली की ओर अधिक झुकी है।

२-ग्रंथ आतमबोध-रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश।

३-पद-रचनाकाल और लिपिकाल में से किसी का पता नहीं। विषय—निर्गुण भक्ति संबंधी ज्ञान का प्रतिपादन। रचना का नाम नहीं दिया है। पदों की अधिक संख्या होने के कारण 'पद' ही नाम रख दिया है।

रचयिता का नाम 'दास हरिनाम' है जो प्रत्येक पद और भजन के अंत में प्रयुक्त हुआ है। इनका अन्य परिचय नहीं मिलता इन्होंने एक पद में पलटूदास, दूल्हनदास और भीखासाहब आदि संतों का उल्लेख किया है। इससे ये इनके पश्चात् के जान पड़ते हैं। कहीं-कहीं रामानंद का भी गुरु के रूप में गुणगान किया गया है। अतः हो सकता है कि ये कबीर पंथी रहे हों। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

३२१ हरिराय पुरी—हरिरायपुरी 'जोगरत्न' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में चौदह अध्याय हैं जिनमें रहस्यात्मक ढंग से ज्ञानोपदेश करते हुए योग के सिद्धांतों का वर्णन है। आध्यात्मिक विषयों के रहस्यात्मक ढंग से कहने की जो परिपाटी चल पड़ी थी वह प्रस्तुत ग्रंथ में भी दृष्टिगोचर होती है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२० दिया है।

रचयिता का आरंभिक नाम श्रीलाल पुरी था। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। रचना में राजस्थानी शब्दों के प्रयुक्त होने के कारण ये राजस्थानी विदित होते हैं।

३२२ हरिराय—इनकी 'नित्यकृत्य' नामक रचना में वल्लभ संप्रदाय के सिद्धांतों के अनुसार ठाकुर जी की पूजा, अर्चना तथा भक्तों के नित्य कर्मों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा कोई विवरण नहीं मिलता। परंतु श्री वल्लभाचार्य के वंश में श्री कल्याणलाल जी के पुत्र से ये अभिन्न जान पड़ते हैं, देखिये खोज विवरण (३८-५६)। ये सिंहाड़ नाथद्वारा (मेवाड़) में श्री गोकुलनाथ जी के मंदिर के अधिकारी थे। इनका उपनाम 'रसिकप्रीतम' था। पिछले खोज विवरणों में इनके कई ग्रंथ आए हैं, देखिए खोज विवरण (००-३८) (६-११५) (२३-१६०) (३२-३४) (३५-३८) (३८-५९)।

३२३ हालीपाव—प्रस्तुत शोध में इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५६ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अप्राप्त है।

३२४ हिरदैराम—इनकी 'धर्मचरित्र' नामक रचना में धर्मराज युधिष्ठिर के सत्कार का वर्णन किया गया है। यह साधारण कोटि की रचना है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं पाया जाता। लिपिकाल संवत् १८३७ है।

रचयिता ने अपना नाम केवल ग्रंथांत में दिया है। अतिरिक्त वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरण (१२-७५) पर आए 'वलि चरित्र' के रचयिता हृदयराम से ये अभिन्न जान पड़ते हैं। दोनों ग्रंथों में रचयिता के नामोल्लेख करने का ढंग एक सा ही है। इसके अतिरिक्त ग्रंथों के नामों में 'चरित्र' शब्द के साम्य से भी कुछ ऐसा ही प्रकट होता है।

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

संख्या १. वाणियाँ, रचयिता—अजैपाल। संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २. धनाजी की परिचयी, रांका बांका की परिचयी, सेउ समद की परिचयी, रचयिता—अनंतदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—१०½ x ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३७, पूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि—अथ धना जी की प्रचई लिपते।

चौपई

गुर गोविंद की आग्यां पाऊं। दास धनां की कथा सुनाऊं॥
हरि की कृपा हरि गुन गाऊं। जथा सक्ति हूँ वरनि सुनाऊं॥
धना कै धीरज मन मांही। हरि सूं हेत और सूं नांही॥
रांम रांम कहि हिरदै रापै। मिथ्या वचन कदे नहीं भापै॥ २॥

मध्य—॥ रांका बांका जी की परिचई लिषते॥

चौपई

साधवा इक देव निरंजन भगति मोहि आंपहू।
हिरदै वांणी मूप सू भापहू॥
राका बांका निरमल साध। ऐसो भगत कोई एका आध॥ १॥
प्रथम पांडरपुर में कियौ निवास। भक्ति हेत भयौ प्रकास॥
कुल कौ किसब करै चितलाई। तामैं जीव हंस्या कही न जाई॥

अंत—॥ सेउ समन जी की प्रचई॥

साधू आया अगमतै कीया पहौम परिगुन।
ठोर ठोर वूझत फिरै समन का घर कून॥ १॥
आय द्वारै ठाढ़े भये तव त्रिया कीनी सैन।
जब समन सुप सोढ़ि कै देष्यां अपनै नैन॥ २॥

समन उठि सेनिह करि दरसन का फल लेह।
मुष छिपाया नां वणैं सनमुष होइ सुष देह ॥ ३ ॥

× × ×

पुर पाटण मैं नीपज्या दोन्यूं हरि का संत।
सेठ समन कथा वरणी 'दास अनंत' ॥ ६० ॥

॥ इति सेठ समन की प्रची सपूरण ॥

विषय—धना, रांका बांका तथा सेठ समन नामक भक्तों की वार्ताएँ।

संख्या ३ क. प्रबोध चंद्रोदय नाटक, रचयिता—अनाथ, कागज देशी, पत्र—५०, आकार—१०½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ वि० (संभवतः), लिपिकाल—सं० १९०५ वि० = सन् १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरितर भगत, स्थान व पोस्ट, मनिअर (मठिया), जिला—बलिया।

आदि—ॐ महा पुरुपोत्माये नमः श्री लीपते प्रबोधचंद्रोदे नाटके सख सारे उपदेश।

दोहा

गंग जमून गोदावरी सींधु सरस्वती सार।
तिरथ सबये अनाथ जहां गोविंद जस विस्तार ॥ १ ॥

श्री गुरु सुप मंगल करन आनंद तहाँ वधेत।
किरति श्री हरीदेव की मुद भर सदा कहेत ॥ २ ॥

भक्ति जुक्ति वरनन करौं श्री गुरु प्रम उदार।
जीन्ह की कृपा कठाछ तें गोपद यह शंसार ॥ ३ ॥

अंत—संपरदा रामानुज रामानंद प्रसिद्ध।
द्वादस ताके सुत भए सब विधि सब प्रसिद्ध ॥ ४३ ॥
द्वादस रवि से प्रगट है नासे जग अँधियार।
पय्यानंद सुपनंद पुनि दास पष्ट मतसार ॥ ४४ ॥
तिनमें बड़े बिसाल मत नाम अनंता नंद।
कीस्नदास तिन्ह के भए पैहारि निरद्वंद ॥ ४५ ॥
अग्रकील तिन्ह के भए महा अग्र मतिधीर।
तिन्ह के जंगी जी भए वड़ो वीवेकी धीर ॥ ४६ ॥
तिन्ह के तुलसीदास जु तिन्ह के दास सुरारी।
प्रगट पावोरा जगत में मेटि जिन्ह जगरार ॥ ४७ ॥

तीन्ह में अवरो भए घने सरस एक ते एक।
रहन गहन सांचो मनो पंडित परम विवेक ॥ ४८ ॥

हरीदास मौनी भए तिन्ह मो परम उदार।
कीनेदास अनाथ को गही कर जग निस्तार ॥ ४९ ॥

पेलत अंतर भेद में अंतरहि को ध्यान।
सीता पति के कृपा ते किए वो ग्रंथ परवान ॥

× × ×

संवत सत्रह सै गए पटत विस निरधार।
आस्वन मास रचना रची सारासार वीचार ॥ ५५ ॥

इति श्री प्रवोध चंद्रोदे नाटक सर्व सार उपदेस अनाथ दासेन विरचिते निरवित मोह विवेक भग्न वरौ वरननोनाम चतुरविसो अध्याय ॥६४॥ संवत् १९०५ मी० भादो वदी ॥४॥

विषय—संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का हिंदी में पद्यानुवाद।

रचनाकाल—सम्वत सत्रह सै गए पटतविस नीरधार।
आस्वन मास रचना रची सारा सार विचार ॥ ५५ ॥

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल का दोहा अस्पष्ट है, किंतु अनुमान से यह संवत् १७२६ है। ग्रंथ का 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' के अतिरिक्त 'सर्वसार उपदेश' नाम भी है। ऐसा इसलिये किया गया है कि इसमें 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' की केवल छाया ली गई है। उसके अतिरिक्त इसमें योगवासिष्ठ, गीता, महाभारत, शाक्तसिद्धांत और अष्टावक्र वेदांत आदि ग्रंथों का भी सार लिया गया है। यह चौबीस अध्यायों में है।

रचयिता अपनी संप्रदा को रामानुज वतलाते हैं, और अपनी गुरु परंपरा रामानंद से आरंभ करते हैं। आजकल रामानंदियों के विशिष्ट आचार्य अपनी संप्रदा 'रामानुज' न कहकर 'श्री संप्रदा' (सीता जी से आरंभ किया हुआ) कहते हैं। उनके मत के विरोध में नाभादास जी आदि संतों के उल्लेखों के अतिरिक्त प्रस्तुत उल्लेख और मिला है। अस्तु, रचयिता की गुरु प्रणाली इस प्रकार है :—

रामानुज
|
रामानंद
|
अनंतानंद
|
कृष्णदास पैहारी
|
अग्रकील
|

जंगीजी
|
तुलसीदास
|
दासमुरारि
|
हरिदास मौनी
|
अनाथदास

रचयिता अंतरवेद के रहनेवाले थे।

संख्या ३ ख. सर्वसार उपदेश, रचयिता—अनाथ, निवासस्थान, प्रयाग, कागज—देशी, पत्र—५७, आकार—५½ × ११½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ वि०, लिपिकाल—सं० १७२६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्री सर्वसार उपदेश प्रारंभ ॥ दोहा ॥

गंग जमुन गोदावरी सिंध सरस्वती सार।
तीरथ सबै अनाथ जहं अच्युत जस विस्तार ॥ १ ॥

... ...

पुरुष आदि सरवज्ञ अज पूरन रूप अनंत।
अस्ति भाति प्रिय निरय प्रभु नंद वेद गावंत ॥ ५९ ॥
निर विशेष व्यापक अमल साक्षी सर्व असंग।
सर्व रूप सब तें परे सब विधि सर्व अभंग ॥ ६० ॥
त्रिगुन नियंता ईस विभु चिद्घन सदा निवृत्ति।
ताके ईक्षत मात्र ही बल पायो जु प्रकिर्त्ति ॥ ६१ ॥
पुरुष प्रकृत के जोग तैं उदै भयो मन भूप।
तन संकल्प विकल्प जिहि उठि दोय शक्ति अनूप ॥ ६२ ॥

अंत—संप्रदाय रामानुजी रामानंद प्रसिद्ध—
तिनके द्वादस शिष्य भए सबै विधि सिद्ध ॥ ४३ ॥
द्वादस रवि से प्रगट जग नासन जग अँधियार,
नंद षष्ट सुप कंद पुनि दास षष्ट मति सार।
तिनमें बड़े बिसाल मति नाम अनंता नंद,
कृष्णदास तिनके भये पै अहार निरद्वंद ॥
अग्र कील तिनके भए महा अग्र मति धीर,
तिनके जंगी जू भए बड़े विवेकी धीर ॥

तिनके तुलसीदास जू तिनके दास मुरारि,
प्रगट पसारौ जगत में मेटी जिन जगरारि।
तिनके शिष्य भए घनें सरस एक तें एक,
रहनि गहनि साँचे मते पंडित परम विवेक।
हरीदास मौनी भए तिनमें महा उदार,
कीन्यो दास अनाथ कौं गहि कर जग निस्तार।
संवतु सत्रह सै अधिक षष्ट बीस निरधार,
अश्वन मास सरचना रची सार असार विचार॥
कृष्ण पक्ष रुचि मार्ग सिर एकादसी बुधवार।
पोथी लिपि पूरन भई रमा रवन आधार॥ ५७॥

इति श्री सर्वसार उपदेश शिष्य आंसका निरवृति कौ नाम चतुर विसो विश्रामः २४ सर्वसार ग्रंथ संपूरन समाप्तम्।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'सर्वसार उपदेश' है। इसमें भक्ति, ज्ञान, और वैराग्य का विस्तारपूर्वक वर्णन है। यह संस्कृत के योगवाशिष्ठ, अष्टावक्रगीता, महाभारत, श्रुति तथा स्मृतियों का सार लेकर लिखा गया है। विशेषतः 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' से सहायता ली गई है। यह गुरु शिष्य संवाद रूप में है। भाषा इसकी व्रज है और दोहा छंद में समस्त रचना हुई है।

रचनाकाल—संवतु सत्रह सै अधिक षष्ट बीस निरधार।
अश्वनमास सरचना रची सार असार विचार॥ ५७॥

संख्या ४. मानतुंग मानवती चउपई, रचयिता—उभयसोम, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—१० X ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२५, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १७२० वि०, लिपिकाल—सं० १७५९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—॥ दोहा ॥ श्री वीतरागाय नमः॥

प्रणमुं माता सरसुती प्रणमुं सदगुरु पाइ।
मूरष घी पंडित करइ जस जग मइ कहवाइ॥ १॥
कथा सरस नइ कवि वयण केलवीया बहु मीठ।
साकर दाप अमीय की मइजो अधिका दीठ॥ २॥
धरम अनेक प्रकार वइ साच समो नहि कोइ,
बोलण हारो साचरो विरलो कोइ कहोइ॥ ३॥
मानवती कउ कहयेउ समहू दउ अवसाण,
मानतुंग आगलि मिल्या जहेव उरहीयउ याण॥ ४॥

कहूँ कथा हिव तेहनी जिम हुई ते जग माहि,
सावधान थई सांभ लऊ सुरता मन धरि चाहि ॥ ५ ॥

ढाल चउपई

माला गिरवइ मालव देस वीजा देसांउच प्रदेश तीरथ तोयघणा तिहां घांन सन्नं कार घणा जिहांदन ॥ १ ॥

अंत—राजा सांभलि साधु मुपइ वली ॥
यामी विस सक उचित मन रली ।
देषी महिमा सांच तणी सही । हूँ ती ते हवी मुनि वर ए कही ।
एक ही मुनिवर साच वाणी ही यइ आणी जे करइ ।
संसार नाते सुप यामी सयल भव सायर जिरइ ॥ १ ॥

कर जो मीनइ राजा इम कहइ । आंधउं मारग तम्ह वी सद्गु लहई ।
वाहर व्रज जे श्रावक ना कह्या । ते मुझ दीजइ महमनि सरहया ॥ २ ॥

मनि दीयो इंसुहि नहि नइ सदा पाल इपांतियुं ॥
तेमानवती सुगुरु पासइ । व्रतलिय वहु भांति सूं ॥ १३ ॥

अनुक्रम वचइ व्रतपाली भला । पुहुमा मन मोरो मिटइ तोरो करमणो ॥
इम जाणि प्राणि साच वोलो वात एह वो मरमनो ॥ ४ ॥

संवत सतरह वीस इधु सोम सुन्दर प्रसारइ ।
अभय सोमइणि परि कहइ ।

एस रसकहि नइ कथा दापी भेद मति मंदिर लहरा इति श्रीमान तुंगमानवती चउपइ संपूर्ण ॥ संवत् १७५९ वर्षे पोप वदि-१० दिने सोमवासरे लिखितं पं० रूपहर्षेण लिपितं श्रीनवहर मध्ये । श्री रस्तु शुभं भूयात् ।

विषय—यह जैन धर्म विषयक रचना है । इसमें मानतुंग मानवती की कथा वर्णित है जिसमें मानवती ने सद्गुरु पाकर श्रावकाचार विहित आठों कर्मों का भली भाँति किया था ।

संख्या ५. आत्म विचार वैराग या ज्ञान (वहोतरी), रचयिता—अमृतलाल, स्थान—रतनपुरी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—९×४३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८८, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०७ वि०, लिपिकाल—संवत् १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी ।

आदि—॥ ६० ॥ वीतरागाय नमः अथ ज्ञान वहुतरी लिष्यते दोहा ॥ प्रणाम श्री अमात्मा धर सतगुर को ध्यान कछुक आतमाबोध को करुं वहुतरी ज्ञान ॥ १ ॥

पृथ्म बोले दुलभ मनुप जन्म पायकर फेर आलस,
प्रमाद माही दिन गमावे सो महा मूर्ष जाणवो ॥ १ ॥
धर्म की सर्व समग्री पायकर फेर आपनी आत्मारो
साधन नहीं कर सो महा ॥ २ ॥
पुन्य रूप पूँजी तो साथ ल्यायो नहीं,
और सुपीयो होन वास्ते घनी हाय हाय करे।
घनी तृस्ना वधावै सो महा० ॥ ३ ॥
कोइ पुन्य राउ दासु जीवने ग्याननी प्रापती भई।
लोभ सत्रु ते सुपदाइ जाणों फेर संतोप नहीं रापे सो ॥ ४ ॥

अंत—दीपक सवकुं उद्योत करे पिण आपने नीचे सदा अंधकार रहने वेदे प्रकाश होवे नहीं ल्युं अग्यानी जीव दूजा ने तो आठो उपदेश देवे पिण आप कुमार्ग चाले आपणो अग्यान रूप अंधकार दूर करीने ग्यान रूप सूर्य प्रगट नहीं करे पिन है चेतन सर्व कर्म को अंत करी ने केवल ग्यान रूप सूर्य रो उद्योत आत्मा के विपे प्रगट करेणातिवारे श्री मोष नगर पहुचेगा जौ अनंत सुप विलसेगा जन्म जरामरण दुप दूर होयगा ॥ ७२ ॥ दोहा ॥ वोल वहत्तरा कीया जिन आगम अनुसार सुने सुनाये सुरदवे जे पावे भवपार ॥ १ अरजी ॥ ग्यान बहुतरी नाम है किनी भविउपगार अमृत लाल करे मुक प्रभु पार उतार ॥ २ ॥ मे अणादि अति ही दुपी मरियो देष संसार जाते नाथ सरणोग्रही अव मोय वेगोतार ॥ ३ ॥ संवत उन्नीसे सात के वद दसमी फागुणमास रतनपुरी में ए रची निज आत्म प्रगास ॥ ४ ॥

इति आत्मविचार वैराग रूप ग्यान वहोत्तरी वालाववोध संपूर्ण मिति आपाढ़ वदि संवत् १९२६ ऋपि सलामत राय लिपी कृतं तुलसीराम पठनार्थं ॥

विपय—जैन आगमों के अनुसार मोक्षज्ञान (मोप नगर) का प्रतिपादन किया है।

रचनाकाल—संवत उन्नीसे सात के वद दसमी फागुण मास।
रतनपुरी में ये रची निज आत्म प्रगास ॥

संख्या ६. शालिहोत्र, रचयिता—अस्वपति रिपीसुर, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—१२×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५२, खंडित रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६३ वि०, सन् १८०६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवपूजन प्रसाद जी रईस और जमीदार, ग्राम—मिश्र जी की मठिया, पोस्ट—वैरिया, जिला—वलिया।

आदि—सिधि श्री गणेशाय नमः श्री सरसुत्यै नमः श्री परम गुरुवै नमः अथ सालहोत्र की पोथी लिप्यते ॥

दोहा

चंचल चपल चौगुनो वहु भोजन वहु रोप ।
रोही तुरियाहि पांच गुन रोही तिरियहि दोप ॥
सीतल पतल अमीर सुलघु भोजन नहि रोप ।
एहि तिरियहि पांच गुन रोही तुरियहि दोप ॥

॥ अथ घोरे के चार वरन तिनके न्यारे-न्यारे विभेद कहिजतु है ।

अथ विप्र वरन घोरो दूसरो छत्री तीसरो वैस्य चौथो सूद्र......

अंत— ॥ अथ वात भूलौ कौ उपचार ॥

मिरचै लाल हींग नौन घीव सो वोत देइ तौ पेसाव करै अथ और उपचार दूध टका तीन भर ३ । केसर मासे छह भर ६ और पेट दीजै तौ नीको होई अथ वोपद नो सादर मिरचे लहसुन के रस सौं बांट कै तव वात दीजे तौ पेसाव डार देइ नीको होई हरतार तव कियो पेसाभर १ विसु पैसा दोइ भर २ गुर पैसा भर सैंदुर पैसा दोइ भर २ सुहाग फूलै कै पैसा भर १ १ पापरी वैरू पैसा दोइ भर २ चना कौ चूना सेर पाव ऽ। सैंधो नोन टका भर १ आदे के रस सौं गोली वाधै वैरी की गुटिली प्रवान तव पेट दीजै एक गोली सकारे एक अधपै तौ सर्व रोग जाई अथ वात भूलै को उपचार घीव सेर पाव ऽ। भटा सेर पाव ऽ। ए दोउ वस्तै पेट दीजै तौ वात डार देई ।

इति साल होत्र अस्वपति रपीसुर कृत संपुरन समापता संवत् १८६३ श्री रामजी ।

विपय—घोड़े के लक्षण तथा उसकी बीमारियों के उपचार वर्णन किए गए हैं ।

विशेप ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । संख्या ४ के पश्चात् पाँच पत्रे लुप्त हैं । रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल संवत् १८६३ दिया है । पुष्पिका में रचयिता का नाम 'अस्वपति रिपीसुर' दिया है । इससे कुछ ऐसा पता चलता है कि यह नाम प्रस्तुत हिंदी रचनाकार का न होकर मूल संस्कृत ग्रंथ के रचयिता का है । प्रस्तुत रचना उक्त संस्कृत रचना का रूपांतर है, ऐसा विदित होता है । फिर भी ठीक-ठीक निश्चय न होने के कारण यही रचयिता का नाम मान लिया है । ग्रंथ व्रजभापा गद्य में है ।

संख्या ७. जयसिंह प्रकाश, रचयिता—आत्माराम, कागज—मिल का, पत्र—३४१, आकार—१२¾×८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४७६, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—संवत्—१७७१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभापा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।

ॐ

वचन अरथ ज्यों मिलि रहे, वचन अरथ निति आप
पारवती परमेश्वरै; वंदौं जगमा वाप ॥ १ ॥

पाइ हुकुम जयसिंह को जुहै सवाई नाम
भापा रघु में करत हौं सुकवि आत्मा राम ॥ २ ॥
सूरज ते लै स्याँ तके वंसु वरनि हौं तास
नमुं धरचो या ग्रंथ को, तौ जैसिंह प्रकाश ॥ ३ ॥
किते वंसु रवि ते भयो, कित मेरी मति छुद्र
जिन पूरा लै मोह ते, दुस्तर तिरत समुद्र ॥ ४ ॥
मूरख मैं कवि जस चहौ, व्है हौं जग उपहाँस
वावन वांह पसारिवो, ज्यों वड़े जोग फल आस ॥ ५ ॥

अंत—करिनी छंद ।

मुण्य प्रजनि को संग्रह कीन । मंत्रिन राज वधू को दीन
नृप की धरम सहचरी आहि । गरभ रह्या फिरि भापै ताहि ॥ ५४ ॥
राज सोकतें ताते आस । जिनसो गरभ तपत मो आस
कनक कुंभ भरि शीतल तोय । किय अभिपेक जुड़ान्यो सोइ ॥ ५५॥

सोरठा ।

जो वह प्रजनि समान । पुत्र हौंस रापें हियें ।
तासु भूति के काज । रानी गरभ धरयो तबै ।
महि ज्यों बीज समेत । वैठी सिंहासना लसै
सिपें राज विधि लेति । मूल वृहद मंत्री सहित
फिरि भापत हैं तासु । रीति यहै कोविद सकल
अगिनि वरन सम जासु । फैलि रह्यो वसुधा हुकुम ॥ ५६ ॥

इति श्री मन्महाराजाधिराज सवाई जैसिंह जी निदेसात आत्माराम कृतौ जैसिंह प्रकासे राज्ञी राज्याभिपेको नाम इकोन विंशतिकोल्लास ॥ २१ ॥ शुभमस्तु लेखक पाठकयोः

सत्रह[१७] से यकहत्तरा[७१] दसराहौ गुरुवार ।
राम कियो उज्जेनि मैं कै रघुवंश विचार ॥

विपय—महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' का भापा में छंदोबद्ध अनुवाद (२१ उल्लासों में) किया गया है।

रचनाकाल—सत्रह[१७] से यकहत्तरा[७१] दसरा हौ गुरुवार ।
राम कियो उज्जैनि मैं कै रघुवंश विचार ॥

विशेप ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता आत्माराम जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह के आश्रय में रहते थे। उन्हीं के नाम पर इस ग्रंथ की रचना हुई है। कालिदास के सुप्रसिद्ध काव्य रघुवंश का यह अनुवाद है। अनुवाद बहुत सुंदर हुआ है। रचनाकाल

संवत् १७७१ है। यह पुष्पिका के पश्चात् दिया हुआ है, अतः प्रस्तुत प्रति मूल प्रति विदित होती है। इसकी भाषा व्रज है जिसमें कुछ कुछ शब्द राजस्थानी के भी प्रयुक्त हुए हैं।

संख्या ८. स्वातिग सुभ लच्छिन, रचयिता—आत्माराम, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—५.५×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

आदि—श्री गुरुभ्यो नमः ॥ अथ पोथी स्वातिग सुभ लक्षिन लिषते क्रित आत्माराम सुभं भवत ॥

दोन्यु कर के थाल मैं रष्यो नाली पर शीश ॥
भेट धर्यो सुपदेव की पूज्या वीसवा वीस ॥ १

... ...

गुरु के दरस वोहत फल पावै,
जो पै सतगुरु दरस दिषावै। २२
गुरू दरसन तिहुँ ताप नशावै।
गुरु दरसन तन तपति बुझावै ॥
गुरु दरसन शीतलता प्रगटै।
गुरु दरसन भर्म वेड़ी कटै। २३

अंत—राजिस तामसि स्वातिगी तिर गुण समझि विचारि ॥
स्वातिग मैं मन थिर करो आत्म तत नीहारि ॥ ९७
ब्रह्मज्ञानी सब तें अधिक ऊँची समझ अगाध ॥
विना हुवै ब्रह्म दरस कै सभै वाक विष वाद ॥ ९८
ब्रह्म दरसी जो पैं भयो कीयौ न ब्रह्म सुप भोग ॥
वै नर विषई हुँहिगे तन मन वाढ़ै रोग ॥ ९९
ब्रह्म भोगी निहचल दिसा भयो न ब्रह्म कै रूप ॥
दिष्ट विंहूना नैन यूं नीर विहूना कूप ॥ १००

इति श्री पोथी स्वातिग सुभ लक्षिन समाप्तं संवतु १८०९ वृषे श्रावण वदी शनवासरे लिपते जसू ॥

श्रीराम

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'स्वातिग सुभ लक्षिन' है। स्वातिग शब्द सात्विक का अपभ्रंश है। अस्तु, इस ग्रंथ में आचारमय सात्विक जीवन का निरूपण किया गया है। आरंभ में गुरु की महिमा का वर्णन है। इसमें लिखा है कि शिष्य का विकास और

उसकी सिद्धि लाभ गुरु की कृपा से ही संभव है। गुरु की महिमा के पश्चात्, शील, सदाचार तथा कुछ हठयोग की साधनाओं के वर्णन हैं।

'स्वातिग सुभ लक्षिन' के रचयिता आत्माराम 'ज्ञानस्वरोदय' के रचयिता स्वामी चरणदास के शिष्य थे, अतएव इनकी रचना में संतों की विचारधारा का पूरा प्रभाव है।

विशेष ज्ञातव्य—चरणदास जी की गुरु शिष्य परंपरा जो अन्वेषक को प्राप्त हुई है इस प्रकार है :—स्वा० सुखदेव जी > चरणदास > आत्माराम > लछिदास > साधुशरण। प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल नहीं मिलता; परंतु अनुमानतः यह १८वीं शताब्दी के अंतिम चरण की है। इनके गुरू स्वामी चरणदास का रचनाकाल भी लगभग यही है। लिपिकाल संवत् १८०६ है।

संख्या ६. रास पंचाध्यायी, रचयिता—आनंद कवि, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—४.८×९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पंचाध्यायी लिप्यते ॥

राजोवाच ॥ दोहा ॥

मैं विनती तुमसौ करौ सुनौ रीपीन के राज ॥
तुम मोसो करिकै कृपा कहौ रास कौ काज ॥
परब्रह्म श्री कृष्ण जू कीन्हौ रास विलास ॥
गोपिन कौ सुपदेव कौ कीन्हौ मनहि हुलास ॥

चौपई

कारण कवन सरद रितु माही ॥
कीन्हौ रास कान्ह व्रज माही ॥
गोपिन सो उन किन सनेहा ॥
पारब्रह्म कौ चाहियै ना नेहा ॥
यह संदेह मिटावहु नीके ॥
तुम हो गुरु सदा सवही के ॥
व्रज की कथा कहौ तुम नीकी ॥
वाढ़ी प्रीति हमारे हिय की ॥

अंत— ॥ दोहा ॥

हरि के रास विलास की कथा महा सुखदाय।
सोई सुनेगो यह कथा जापर विस्न सहाय ॥

पंच अध्याइ की कथा संपूरण भई जान।
श्री शुकदेव ने नृप सों कही आनंद कहत बपान ॥ ६५
आनंद वन काशी पुरी ठारहे सो पैतीस।
तामें कथा बनाय के हरिहि निवाये सीस ॥ ६६

इति श्री भागवते महा ... ...

विषय—इसमें भागवत के अंतर्गत वर्णित रासलीला का वर्णन है। प्रस्तुत ग्रंथ में भी भागवत के अनुसार ही पाँच अध्याय हैं। उनमें क्रम से वंशीनाद, गोपियों का आगमन, कृष्ण का रास करना, अंतर्धान होना, गोपियों का विरह तथा उनका कृष्ण को ढूँढ़ना और अंत में रास क्रीड़ा का विस्तारपूर्वक वर्णन है। ग्रंथ की भाषा ब्रजी है और यह दोहा चौपाइयों में रचा गया है।

संख्या १० क. जमुना जस, रचयिता—आनंदघन, निवास स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८'४×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—॥ श्री यमुनायै नमः ॥

॥ अथ यमुना जस लिष्यते ॥ चौपाई ॥

जमुना कौ जस वरन्यो चाहौं। अति अगाध कैसे अवगाहौं ॥
जमुना कहे रसवती पानी। होति मधुर रसनिधि की रानी ॥
जाकैं तीर रसिक रस रंगी। वसत लसत गोपाल त्रिभंगी ॥
जमुना कौ जस कहत न आवै। नित विहार रस पारस पावै ॥
जो रस अगम अगोचर महा। सो याकें तट प्रगटित अहा ॥
या यमुना की भाग निकाई। मति अति रीझि विचारि विकाई ॥
महा रसवती राधापति। पूरन प्रेम तरंगिनी ततकी ॥
श्री जुत अंगराग की धारा। जमुना रूप अनूप अपारा ॥

अंत— जमुना कौ मंगल जस गायौ—
रसना निज सवाद फल पायौ
जमुना जस जैसें मन भायौ,
जमुना ही अपढार कहायौ
जमुना रस जस ऐसैं कह्यौ
वानी निज परमारथ लह्यौ

जमुना जस कौं जियरा तरस्यौ
जमुना कृपा सुरस उर सरस्यौ
तव कछु जमुना पर महि परस्यौ
बानी हूँ आनंदघन वरस्यौ

॥ दोहा ॥

जमुना जस वरन्यौ विसद निरवधि रस कौ मूल।
जुगल केलि अनुकूल है वसिवौ जमुना कूल ॥

इति श्री जमुना जस संपूर्ण

विषय—प्रस्तुत 'जमुनाजस' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें यमुना जी की महिमा वर्णन की गई है।

यह चौपाई छंद और व्रजभाषा में लिखा गया है। व्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि आनंदघन की कृति होने के कारण महत्वपूर्ण है।

संख्या १० ख. आनंदघन के कवित्त, रचयिता—आनंदघन (वृंदावन), कागज—हाथका, पत्र—६७, आकार—८'२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति। अथ आनंदघन के कवित्त लिष्यते ॥

॥ सवैया ॥

रूप निधान सुजान सपी जबते इन नैनन नैकु निहारे ॥
दीठि थकी अनुराग छकी मति लाज के साज समाज बिसारे ॥
एक अचंभो भयौ घन आनंद हैं नित ही पल पाट उघारे ॥
टारे टरैं नहीं तारे कहूँ सुलगे मन मोहन मोह के तारे ॥ १ ॥
आँपि ही मेरी पै चेरी भई लपि फेरीं फिरैं न सुजान की घेरी ॥
रूप छकी तितही विथकी अब ऐसी अनेरी पत्याति न नेरी ॥
प्रान लै साथ परी पर हाथ विकानि की कानि पै कानि चपेरी ॥
पाइनि पारि लई घनआनंद चाइनि बावरी प्रीति की फेरी ॥

अंत— कवित्त

देह सौं सनेह सो तौ ह्वै है पेह
पिन ही में नाते सव ह्वांते परि रहैगी नहीं रे नाम
फूलै भ्रम भूलै कित भूलै मोह फंदनि तू,
तनकौ सम्हारै किनि प्राननि के संमी स्याम

जागत हूँ सोवै पोवै समै सौ रतन बौरे,
पाइ घन आनंद तबै अचेत काम धाम
आमैं औधि औसर उसासह उसरि जैहै,
धरेई रहेंगे धन धाम धंधे धूम धाम।

सवैया

संग लगे फिरौहौं अलगौ रहौं,
मोहु वै गैल लगावत क्यों नहीं॥
नीरस रीचनि ही सरसौं रसार रति
प्रीति पगावत क्यों नहीं॥
ढीलौ परयौ तुमते घनआनंद
हौ गुन रासि बगावत क्यों नहीं॥
जागत सोवत से हौ कहावहो
सोवत मोहि जगावत क्यों नहीं॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि आनंदघन के कवित्त सवैया संगृहीत हैं। इनकी संख्या ४४६ है और इनमें राधाकृष्ण का प्रेम वर्णित है।

संख्या ११. आनंदघन चोबीस स्तवन (जिन चौबीसी), रचयिता—आनंदघन मुनि, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलोत।

आदि—रागमारू करन परीक्षा करण कुमार चल्यो ए देशी। (ऋषभदेव स्तवन)
ऋषभ जिनेसर प्रीतम माहरो और न चाऊँ रे कंत।
रीझयो साहिब संग न परि हरे, भाँगइ प्रीति सगाई रे
जगमाँ सहू करै, प्रीति सहि अनन्त ॥ १ ॥ (ऋ०)
सगाई न कोई, प्रीति सगाई रे निरुपाधिक कही
सो माधिकधन खोई ॥ २ ॥ (ऋ०)

अंत— महावीर स्तवन

बीर पणुं ते आतम ठाणै; जाण्यूं तुम चीवाणै रे।
ध्यान विनाणै सकति प्रमाणै निज ध्रुव पद पहिचाणै रे ॥ ६ ॥ बी० ॥
आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणति ने भामें रे।
अक्षय दर्शन ज्ञान विरागें, आनंदघन प्रभु जागे रे ॥ ७ ॥ बी० ॥
इति श्री महावीर स्तवन सू ॥ २४ ॥
इति श्री आनंदघन कृत जिन चौबीसी संपूर्णम् ॥ श्री ॥

विषय—आनंदघन ने चौबीस जिनों की स्तुतियाँ ढालों में पृथक २ रची है। इसी को 'आनंदघन' चौबीसी भी कहते हैं।

संख्या १२. कवित्त संग्रह, रचयिता—आलम और शेख, कागज—हाथ का, पत्र—५५, आकार—८'८ X ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८वीं शताब्दी। प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—·····लपटैं है लटकत ऐहैं सुपद सुनैहै वैजु बतिया अमोल हैं।
'आलम' सुकवि मेरे ललन चलन सीपैं,
बलन की बाँह ब्रज गलिन में डोलि हैं।
सो दिन सु दिन दिन ता दिन गनौंगी माई—
जादिन कन्हैया मोपै मैया करि बोलिहैं ॥ ४ ॥

× × × ×

समुद को पारु हैं सुभूमि हू को भारू पै
प्रीति को न पारवार कौन विधि कीजियै ॥
'सेष' कहै देपे अनदेप्योई करत केहू
अंक भर भेटे हूँ वियोग रस भीजियै।
मेरे कहे वारी तू निहारि ज्यु विहारी तन,
हेरे जौ इहतु हेत येतो कति कीजियै ॥
जाकी वास वेधे मन फूल देप्यो
चाहै जन हेरे ते कुसुम जानि केहूँ कर लीजियै ॥

अंत—चंद्र सुधा कर धार द्रवै जग मज्जत कालिमा टारि गई है ॥
जोति की ओट सहेट चली अभिसारिक के अभिलाप नई है ॥
सीस चढ्यो रजनी सब वैतन की थिर पावनि छांह भई है ॥
जोन्ह छपा दुरि आवन को तन सोजि मनाकर लाई लई है ॥३७१॥

× × × ×

औधिटरी निरपै सोउ रीतिय कुंज गली भई भारी
कवि आलम··· ··· ··· ··· ··· ॥ ३७६ ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का आद्यान्त प्राप्त न होने के कारण इसके नाम का पता नहीं चल सका है। कवित्तों में समस्त रचना होने के कारण इसका नाम 'कवित्त संग्रह' रख दिया है। इसमें आलम और शेप, जो आलम की स्त्री थीं, रचनाएँ संगृहीत हैं।

ग्रंथ का विषय शृंगार है। 'नवोढ़ा', 'संकेत' 'नायिका की दूती' और सुखांत आदि प्रसंगों के अतिरिक्त कुछ अन्य फुटकल विषयों का भी समावेश है। जैसे :—

१-व्रजनारी विरह, २-गोपी विरह, ३-वायु, ४-जमुना, ५-दीनता, ६-शिव और ७-श्री राम।

प्राप्त कवित्तों की संख्या ३८६ है। इनमें चार रेखते हैं जिनसे लोग प्रायः परिचित हैं। इसमें २८६ कवित्त आलम के, ४५ शेख के और ४४ छाप रहित हैं, जो छाप रहित हैं वे भी आलम के और कुछ शेख के होंगे। कवित्तों की भाषा व्रजी है। रचना में रीति कालीन प्रवृत्ति का पूरा आभास मिलता है।

संख्या १३. पदसंग्रह, रचयिता—इंद्रदत्त, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—९·३ × ६·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—जो पै करुनानिधान करुना चितवनि है।
मोहू सम दीन को दरद दारुन जनि है॥
जौ गरीब को नेवाजते गरिवी अनि है।
करुनामय कबहु काहु कहाँ ए गुन गनि है॥
वेद विदित विरूद जो गोपाल जी अकनि है।
इंद्रदत्त हूँ ते पतित पावन किए वनि है॥

अंत—वृज के विरही लोग वेचारे॥
विन गोपाल लागे ग्रह डोलत अधिक छीन मन हारे।
नंद जसोदा मारग जोहत नित उठ साँझ सकारे॥
वाल ग्वाल जे वृज जातहिं है सब घोप दुखारे।
सूरदास प्रभु विन तुम देखे जैसे रैन विन तारे॥

विषय—कृष्ण चरित्र।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ जीर्ण और खंडित है। इसके दो पन्ने नागरी लिपि में और शेष कैथी लिपि में लिखे गए हैं। इसमें कुछ पद इन्द्रदत्त के हैं और शेष तथा अधिकांश सूरदास के हैं।

संख्या १४ क. रसचंद्रिका (विहारी सतसई पर टीका), रचयिता—नवाब इसवी खाँ, कागज—देशी, पत्र—१०५, आकार—९$\frac{१}{२}$ × ५$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४८, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८०९ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० शुभनारायण तिवारी, सिहाकुंड, डा०—हलदी, जि०—वलिया।

(हस्तलेख सभा के लिए प्राप्त हो गया)।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ रस चंद्रिका लिप्यते॥

॥ दोहा मूल ॥

अपने अपने मत लगे वाद मचावत सोर।
ज्यौं त्यौं सवही सेइयौ एकै नंद किसोर ॥ १ ॥

॥ टीका ॥ इस जगैं वाद का अर्थ वृथा के लिए हैं। हेतार्थ दोहा का यह है। कि अपने अपने मत का झगरा करना वृथा है। क्योंकि जिनने सेया तिननैं मानौं नंदकिशोर ही कौं सेया है। क्यौंकि ब्रह्मा शिव शक्तादिक सब विश्नु ही हैं तौ जिननैं जिसकों पूजा मानौं विष्णु कौं ही पूजा। प्रमानालंकार ॥ तिसका लक्षन ॥ जहाँ वेद स्मृति पुरानादिकनि करि अर्थ पाइयै ॥ तौ इहाँ सवहि कौं एक नंद नंदन सेइयौ पुरानोक्ति है। क्यौंकि लिपन हैं कि सब देवता गाई नंद नंदन हैं। और जो कहियै पर संख्यालंकार है तौ ताको लक्षन यह है ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

किय प्रसंग नरवर नृपति छत्रसिंह भुवभान ॥
पढ़त विहारी सतसया सब···करत प्रमान ॥ १ ॥
कविनि किये टीका प्रगट अर्थ··काहू कीन ॥
अपनी कविता के लगैं और कठिन·········॥ २ ॥
कछू रहैं संदेह नहिं ऐसौ टीका होइ ॥
कवि वचन का पद अरथ समझि लेइ सब कोइ ॥३ ॥
···वि सबके हित कौं सुगम·····विलास ॥
···देत ईसवी पां कियौ रस चंद्रिका प्रकास ॥ ४ ॥
नंद···न वसु भूमि गुनि कीजै वरप विचार ॥
रस चंद्रिका प्रकास किय नभ पून्यौं गुरवार ॥ ५ ॥

इति श्री नवाव ईसवीपां विरचिता विहारी सतसैया टीका रस चंद्रिका नाम समाप्ता ॥ शुभमस्तु ॥ सिद्धिरस्तु ॥

विषय—विहारी सतसई के दोहों को अकारादि क्रम से रखकर उनका अर्थ किया गया है तथा प्रत्येक दोहे का अलंकार भी वर्णन किया गया है।

रचनाकाल का दोहा

नंद[९]···न वसु[८] भूमि[१] गुनि कीजे वरप विचार ॥
रस चंद्रिका प्रकाश किय नभ पून्यौं गुरवार ॥ ५ ॥

नंद और वसु के बीच में यदि 'गगन' शब्द हो तो रचनाकाल सं० १८०९ होगा और यदि 'वान' हो तो सं० १८५९ होगा।

टिप्पणी—प्रस्तुत प्रति का लेख शुद्ध है। संभव है, यह रचयिता के ही हाथ की लिखी हुई हो; परंतु यह अपूर्ण है। संख्या एक सौ चार के पश्चात् अड़तीस पत्रे नष्ट हो

गए हैं। अंत का पत्र विद्यमान है। रचनाकाल में एक शब्द के अक्षर मिट गए हैं; परंतु उसका अंत का अक्षर 'न' वर्तमान है। इससे यह शब्द या तो 'गगन' हो सकता है अथवा 'बान'। किंतु संभावना 'गगन' शब्द की ही अधिक होती है। मिटे हुए अक्षरों की जगह पर उनके जो चिह्न दिखाई देते हैं उनसे 'गगन' शब्द ही ठीक जँचता है। इस दृष्टि से रचनाकाल संवत् १८०९ वि० होता है। इसकी पुष्टि रचयिता के आश्रयदाता छत्रसिंह के समय से भी होती है। रचयिता का नाम नवाब ईसवी खाँ है। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ में नरवर (ग्वालियर) नरेश छत्रसिंह का उल्लेख किया है। ये राजा छत्रसिंह महाराजा रामसिंह के पिता थे (देखिए संक्षिप्त विवरण)। महाराज रामसिंह सं० १८३६ के लगभग वर्तमान थे। अतः रचनाकाल जैसा कि ऊपर लिखा गया है, संवत् १८०९ हो सकता है। इसी संवत् में नवाब ईसवी खाँ के महाराज छत्रसिंह के आश्रय में रहने की संभावना हो सकती है।

संख्या १४ ख. रसचंद्रिका, रचयिता—ईसवीखां कृत, स्थान—नरवर, कागज—देशी, पत्र—३९९, आकार—८३/४×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५८६, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य पद्य, मिश्रित, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल संवत् १८०९ वि०, लिपिकाल—१९७६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, (रत्नाकर संग्रह से) ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—ॐ। श्री गणेशायनमः॥ अथ विहारी सतसई पर ईसवी खाँ कृत रस चंद्रिका टीका लिख्यते।

मू० दो० मेरी भव बाधा हरो, राधा नागरि सोइ।
जा तन की झांई परे श्याम हरित दुति होइ॥ १॥

टीका—भव संसार सो कहे बाधा पीड़ा सो कहे हेत यह है कि तिसको राधानागरि हो। नागर को अर्थ प्रवीन है सो राधा कैसी हैं कि तिन तन की झाँई परे से श्याम की दुति डहडही होती है हेत यह है कि बिन देखे मुरझाई रहते हैं और देखे डह डहे होत है। ... यों कहें कि राधा को वरन पीत हैं और श्याम को वरन नीला है तो दोनों मिले श्याम हो जाय है हेत मोहित हो जाय है। अलंकार समर्थनीय को समर्थन करे तो या बाधा हरन की समर्थता यह है कि जिनकी झांई परे ते श्याम डह डहे होई है। तृतीय अर्थ में अलंकार विषम तिसका लक्षण और इस कारण रंग और काज और ही रंग सो यहाँ गौर ते श्याम रंग होत है।

कियं प्रसंग नरवर नृपति, छत्रसिंह भुवमान।
पढ़त बिहारी सतसया सब जग करन प्रमान। १
तब सबको हित कों सुगम भाषा वचन विलास
उदित ईस्वी खां कियो, रस चंद्रिका प्रकास। ४

नन्द[९] गगन[०] वसु[८] भूमि[१] गुनि कीजै बरस विचार
रस चन्द्रिका प्रकासकिय, मधु (शुचि) पुन्यो गुरुवार । ५

अंत—अलंकार उपमा तिसका लक्षण—जहां वेद सुमृति पुरानादि कनि करि अर्थ पाइये सबही को एक नंद नंदन सेइवो पुरानोक्ति है जो पर संख्यालंकार है तौ ताको लक्षण यह कि एक थल को सेवन वरजि एक थल नंदनंदन को सेवन ठहरायो या में और देवन की अवग्या होइ है जाते पर संख्यालंकार नहीं राख्यो ॥ इति ॥

पंडित गनेश बिहारी मिश्र की पुस्तक से बाबू जगन्नाथ रत्नाकर बी० ए० की आज्ञानुसार पंडित माताप्रसाद मिश्र निरिश्रा ग्राम निवासी ने लिखा ॥ स्थान लखनऊ मिती वैसाख शुक्ल ५ नी रविवार संवत् १६७६ वैक्रमीय ।

विषय—महाकवि बिहारी के प्रसिद्ध ग्रंथ बिहारी सतसई पर टीका की गई है जिसमें अलंकारों का भी वर्णन किया गया है ।

रचनाकाल—१८०९ वि० ।

संख्या १५. ककावली या ककावत्तीसी, रचयिता—उदय (संभवतः), स्थान—उदेपुर, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—५·३×३·१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२५ वि०, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलौत, जोधपुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ककावली लीष्यते ।

ककोन किरीपा करो करम करे ते चूर ।
किरिया विना रे जीवड़ा सीव नगरी है दूर ॥ १ ॥
षषा कर मजव करो पिसा करो मन मांह ।
पाते करो सेवा सदा जिण वर देव उद्याह ॥ २ ॥
गगा गरव न कीजिये गरब किया जस होता ।
गरव कीया थी गुण गलै गरव मत करो अयांण ॥३॥
घघा घर घरणी तजो, घर घर राखो कार ।
कुटुंब बहु स्वारथ लगै जमसेती विवहार ॥ ४ ॥
ङङा विरत करो सदा, विरत धरो मन मांह ।
विरत विनोद प्राणीया दुरगुन जैसी साह ॥ ५ ॥

अंत—हा हा इत वंधो सदा, खट जीवन हीतका ।
हित थकी हित उपजे, आखे सहु संसार ॥ ३२
अखर वत्तीसी एक ही, संबोधन अधकार ।
दूहा अर्थ विचार सी यांमे भवनो पार ॥ ३३
सतरे से पंच विसमें, संवत कीयो वखांण ।
उदेपुर उदय कीयो, मुनि महिमा हित जांण ॥ ३४

गए हैं। अंत का पत्र विद्यमान है। रचनाकाल में एक शब्द के अक्षर मिट गए हैं; परंतु उसका अंत का अक्षर 'न' वर्तमान है। इससे यह शब्द या तो 'गगन' हो सकता है अथवा 'वान'। किंतु संभावना 'गगन' शब्द की ही अधिक होती है। मिटे हुए अक्षरों की जगह पर उनके जो चिह्न दिखाई देते हैं उनसे 'गगन' शब्द ही ठीक जँचता है। इस दृष्टि से रचनाकाल संवत् १८०९ वि० होता है। इसकी पुष्टि रचयिता के आश्रयदाता छत्रसिंह के समय से भी होती है। रचयिता का नाम नवाब ईसवी खाँ है। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ में नरवर (ग्वालियर) नरेश छत्रसिंह का उल्लेख किया है। ये राजा छत्रसिंह महाराजा रामसिंह के पिता थे (देखिए संक्षिप्त विवरण)। महाराज रामसिंह सं० १८३९ के लगभग वर्तमान थे। अतः रचनाकाल जैसा कि ऊपर लिखा गया है, संवत् १८०९ हो सकता है। इसी संवत् में नवाब ईसबी खाँ के महाराज छत्रसिंह के आश्रय में रहने की संभावना हो सकती है।

संख्या १४ ख. रसचंद्रिका, रचयिता—ईसवीखां कृत, स्थान—नरवर, कागज-देशी, पत्र—३९९, आकार—८¾×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५८६, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य पद्य, मिश्रित, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल संवत् १८०९ वि०, लिपिकाल—१९७६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, (रत्नाकर संग्रह से) ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—ऊँ। श्री गणेशायनमः॥ अथ विहारी सतसई पर ईसवी खाँ कृत रस चंद्रिका टीका लिष्यते।

मू० दो० मेरी भव वाधा हरो, राधा नागरि सोइ।
जा तन की झांई परे श्याम हरित दुति होइ॥ १॥

टीका—भव संसार सो कहे वाधा पीड़ा सो कहे हेत यह है कि तिसको राधानागरि हो। नागर को अर्थ प्रवीन है सो राधा कैसी हैं कि तिन तन की झाँई परे से श्याम की दुति डहडही होती है हेत यह है कि विन देखे मुरझाई रहते हैं और देखे डह डहे होत है। अथवा यों कहें कि राधा को वरन पीत हैं और श्याम को वरन लीला है तो दोनों मिले श्याम हरित हो जाय है हेत मोहित हो जाय है। अलंकार समर्थनीय को समर्थन करे तो या भव वाधा हरन की समर्थता यह है कि जिनकी झांई परे ते श्याम डह डहे होई है। दुतीय अर्थ में अलंकार विपम तिसका लक्षण और इस कारण रंग और काज और ही रंग सौ यहाँ गौर ते श्याम रंग होत है।

किय प्रसंग नरवर नृपति, छत्रसिंह भुवमान।
पढ़त विहारी सतसया सव जग करन प्रमान। १
तव सवको हित कों सुगम भाषा वचन विलास
उदित ईस्वी खां कियो, रस चंद्रिका प्रकास। ४

नन्द[९] गगन[०] वसु[८] भूमि[१] गुनि कीजै वरस विचार
रस चन्द्रिका प्रकासकिय, मधु (शुचि) पुन्यो गुरुवार। ५

अंत—अलंकार उपमा तिसका लक्षण—जहां वेद सुमृति पुरानादि कनि करि अर्थं पाइये सबही को एक नंद नंदन सेइवो पुरानोक्ति है जो पर संख्यालंकार है तौ ताको लक्षण यह कि एक थल को सेवन वरजि एक थल नंदनंदन को सेवन ठहरायो या में और देवन की अवग्या होइ है जाते पर संख्यालंकार नहीं राख्यो ॥ इति ॥

पंडित गनेश बिहारी मिश्र की पुस्तक से बाबू जगन्नाथ रत्नाकर बी० ए० की आज्ञानुसार पंडित माताप्रसाद मिश्र निरिश्रा ग्राम निवासी ने लिखा॥ स्थान लखनऊ मिती वैसाख शुक्ल ५ नी रविवार संवत् १९७६ वैक्रमीय।

विषय—महाकवि बिहारी के प्रसिद्ध ग्रंथ बिहारी सतसई पर टीका की गई है जिसमें अलंकारों का भी वर्णन किया गया है।

रचनाकाल—१८०९ वि०।

संख्या १५. ककावली या ककावत्तीसी, रचयिता—उदय (संभवतः), स्थान—उदेपुर, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—५'२×३'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२५ वि०, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलौत, जोधपुर।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ककावली लीप्यते।

ककोन किरीया करो करम करे ते चूर।
किरिया बिना रे जीवड़ा सीव नगरी है दूर ॥ १ ॥
षषा कर मजव करो पिमा करो मन मांह।
पाते करो सेवा सदा जिण वर देव उचाह ॥ २ ॥
गगा गरब न कीजिये गरब किया जस होत।
गरब कीया थी गुण गलै गरब मत करौ अर्याण ॥३॥
घघा घर घरणी तजो, घर घर राखो कार।
कुटुंब बहु स्वारथ लगै जमसेती विवहार ॥ ४ ॥
ङङा विरत करो सदा, बिरत धरो मन मांह।
विरत विनोद प्राणीया दुरगुन जैसी साह ॥ ५ ॥

अंत—हा हा हित बंधो सदा, खट जीवन हीतका।
हित थकी हित उपजे, आखे सहु संसार ॥ ३२
अखर बत्तीसी एक ही, संबोधन अधकार।
दूहा अर्थं विचार सी यांमे भवनो पार ॥ ३३
सतरे से पंच विसमें, संवत कीयो वखांण।
उदेपुर उदय कीयो, मुनि महिमा हित जांण ॥ ३४

इति श्री कका बत्तीसी समाप्त ॥ श्री ॥

विषय—३२ दोहों में नीति विषयक उपदेश किया गया है। वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर को लेकर दोहे रचे गए हैं।

वर्णमाला का रूप :—

क ष ग घ ङ च छ ज झ ञ।

ट ठ ड ढ ण त थ द ध न।

प फ ब भ म य र ल व स ष ह ॥ ३२ ॥

संख्या १६. उदैराज दोहावली, रचयिता—उदैराज, कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—४×२½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर, जोधपुर।

आदि—(मध्य से)—

अब रींझ रा दूहा—

रींझ न जोवे सूर कछु, जात रूप कुल कार।
रींझ वूझ में अन्तरो, परग्यो हाथ हजार ॥ ७ ॥
रींझ वूझ में अंतरउ, वंध दसूण पुच्छ।
कोड़ कवड़ी सम गिणै, प्राण गिणै कटि तुच्छ ॥ ८ ॥

अंत—दोहा—चैत वदी चित मांगाई; नचणे नावे नीरड़ी।
वरस वरावर जाइ, कां विल निसि वासर घड़ी ॥ २०४ ॥

विषय—दोहों में संयोग वियोग एवं नख शिख विषयक वर्णन।

संख्या १७. उदैराज बावनी, रचयिता—उदैदास, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—६½×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल संवत्—१६७६ वैसाख पूर्णिमा, लिपिकाल—संवत् १७७३ वि०, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलौत ने यह विवरण दिया है, पूरा पता नहीं दिया है।

आदि—श्री रघुपतये नमः उदयदास बावनी लिख्यते।

आकेराम नमो अकल अवतार अपरंवर
गहन गुहिर गंभीर प्रणव अक्खर परमेसर।
चिहुण देव, त्रिकाल त्रिण अक्खर त्रेधामय,
पंचभूत परमोष्टि पंच इंद्रिय पराजय ॥
धुर मंत्रयंत्र अधिकार घर विध साधक भापन्त सहि,
भटसार पय पै गुरु भगति उदय पुत्र ओंकार कहि ॥१॥
नमुं प्रथम नवकार जपूं गुण जाप निरंतर,

आनंदी आनंद दीपण सुभ वचन संभारूं।
चरण शरण उवजभाय करूं प्रणाम तदन्तर ॥
आनंदी आनंद दीपण सुभ वचन संभारुं।
धरमवंत श्रीमान चरण तेरा चित धारूं ॥
उदय सिंघ नाम नृप उचरूं केहिधरु खेरूं करूं।
उदयराज इसी विच आतमा नाम नित्य लेउ धरूं ॥ २ ॥

अंत—रस मुनि पट ससी समै करी बावनी पूरि,
वैसाख पूर्णिमा वसन्त रीत राइ सनूरि।
बंबेई आविया काम दतन रिण मोड़े,
लखाणी लुंडिये तेपि घमांया घोड़े।
उदेराज तेथ गुण बावनी संपूरण कीधी तरै,
चहुवांण राण नृप सोन गिरि बसां वास जगनाथ गै ॥ ५८ ॥
कहै जिके बावनी लहै सिद्धि रिद्धि नये निधि,
सुणे जिके बावनी तिया परकास करि बधि।
लिखै जिके बावनी तिकै सुख संपति यामै,
भणैं जिके बावनी तके अनभ्या ग्रहि नामै।
इ कोई कवित्त कहैं हुवै तिको मनिप पंडित लहौ,
उदेराज संपूरण सुख करि, तिको अनेक बाता कहै ॥ ५९ ॥

इति श्री उदैराज कृत बावनी संपूर्णम्—संवत् १७७३ वर्षे मिति आषाढ़े वदि १ वुधे उपाध्याय साही पानी वाचनार्थं।

विषय—ईश्वर स्तुति, नीति और धर्म्मोपदेश आदि विषय वर्णन। कुल मिलाकर ५९ कवित्त हैं। ७ कवित्त मंगलाचरण (ईश्वर स्तुति) आदि के हैं।

संख्या १८, भक्त गीतामृत, रचयिता—उमराव या जन उमराव, कागज—देशी, पत्र—६२, आकार—९¾×५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१७, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०५ वि०, लिपिकाल—संवत् १९१४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—श्री गणेशायनमः लिख्यते भक्त गीता मृत ॥ चौपाई ॥
भगत काम तरू सदा सहायक। चरन कमल वंदौं गन नायक
चार भुजा मोदक लिये हाथा। सोहत मकुट मनोहर माथा
सदा चलत इंदुल असवारी। गत विलोक रहै पौन पछारी
चार भुजा यह नाथ तुम्हारी। देत अर्थ कामादिक चारी।
विनतव कृपा नाथ कचि कोऊ। शकत न वरन विमल मति वोउ ॥

× × ×

पौष्य अमावस सुभ घरी परी सौमारी पर्व
वानै व्योमं अरु रंध्र[१] महि[१] संवत सुपद अपर्व

× × ×

अंत—अथ आरती

भक्त गीत अमृत जिय जानी। आरति करहु करम मन बानी॥
जै हनुमान दास अरु तुलसी। गिद्धराज सिवरी मति हुलसी॥
रामदास श्रीधर निंबादित। रुक्मांगद प्रभु अलहु धरी चित॥
बिल्व मंगल अंबरीष उजागर। जै प्रहलाद भक्त गुन सागर॥
कृष्णदास जै विप्र अजामिल। निहकंचन मोरध्वज सामिल॥
सापि गोपाल जैति कामध्वज। जै तिभुवन जयमल भक्ती सज॥
सदावृती अरु नंद दास जय। गुहा सुदामा जैति ज्ञान मय॥
ममा भनेज ग्वाल वंशी कहि। रंतदेव ससिहास सुमति लहि॥
जैसिव सुत विष दई जो वहि। पङ्ग सैन कामथ गुन गहि।
जै रतिवंस और रत्नावति। जैतिधना धन बाल्मीक मति॥
जै अलर्क अरुदास त्रिलोचन। जै सुभक्त लापा दुष मोचन॥
जै पुर-सोत्तम वासी राजा। सित पिल्ला बाई मति साजा॥
जै मुरारि अरु हंस प्रसंगा। स्वेतद्वीप निवाशी रंगा॥
इहि विधि भक्त न केर आरतीहि। जो मन क्रम सहित भारती।
हृदय सोक अरु रोग भगावे। जन उमराव विमल मति पावै॥

...संवत् १९१४ साल वैसाषे मासे शुक्ले पक्षे पंचम्यां भौमवासरे ताद्दीने।
...संपूर्ण सुभमस्तु श्रीरस्तु लिखितं संभू गिरेण पैरागढ़ नग्र निवाशः छः

विषय—ग्रंथ में निम्नलिखित भक्तों का चरित्र वर्णित है :—

तुलसी, जटायु, शवरी, रामदास, श्रीधरस्वामी, श्री निंबादित्य, अंबरीष, प्रह्लाद, कृष्णदास, अजामिल, निहकंचन, मोरध्वज, सापीगोपाल, कामध्वज, भुवनचौहान, राजा जैमल, गुहाराम, सुदामा, मामाभनेज, ग्वालवंशी, रंतिदेव, चन्द्रहासराजा, पंगसेन कायस्थ, रतवंतबाई, रत्नावतीबाई।

रचनाकाल—पौष्य अमावस सुभ घरी, परी सौमारी पर्व।
वान व्योम अरु रंध महि संवत् सुपद अपर्व॥

संख्या १९. बाणियाँ, रचयिता—कणेरीपाव।

संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी बानियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २० क. आषाढ़ भूत चौपाई, रचयिता—कनकसोम, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९½×४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८,

पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३८ वि०, लिपिकाल—सं० १७८२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—॥ श्री मदभीष्ट देवतायै नमः ॥

सकल ऋद्धि समृद्धि कर त्रिभवन तिलक समान।
प्रणमू पास जिणेसूर निरूपम ज्ञान निधान। १
गोयम आदेगण धरइ जे प्रणमी नितमेव।
सानिधिकारी, सारदा ते प्रणमूं श्रुत देव। २
माणिक सागर सुझ गुरुनितणई चरणे नामुं सीस।
सुझ गुरु ते महि मानिला प्रणामुं विसवा वीस। ३
सदगुरू नासु पसायथी सोवइ सरस संबंध।
वचन विलास विलास विशेष थी प्रगट थाइ प्रबंध। ४
माया पिंडि तले जिके ते कहीयेनि ग्रंथ।
जिन मारग सूधो धरी साधइ सिवपुर पंथ। ५
लंपट सरस अहारना जे थाइ अणगार।
चारित्र वां मीनइति के मांझइ घर व्यवहार। ६

× × × ×

संवंत् सोलह सइ अठतीसइ। दिन विजय दशमी सुज गीसइ।
कहइ कनक सोम सुविचारी। श्री सव संघनइ सुष कारी॥

अंत—पामइ सव केवल नाणए। भाव तणे अहि नाण करइ महिमा सुखरराय।
तव वेस लेइ ऋषिराया। ए इणि परि भावना भावी जइ।
तपकरी दान वलिदीजइ श्री जिन सासन आगार।

ए मुनिवरथया उदार। १०।

संवत् सोलह सइ अठतीसइदिन विजइ दशमी सुजगोसइ।
कहइ कनक सोम सुविचारी श्री सव संघनइ सुपकारी। ११

इति श्री आपाढ़ भूत चउपई समाप्तं॥ संवत १७८२ वर्षे अश्वनमासे। कृस्नपक्षे १ प्रति पदातिथौ चंद्रवारे लिखतं वंशी ऋषि। सुवित हंसा ऋषि हेतवे महम्मद शाह राज्ये इंद्र प्रस्थ नगरे शुभं भवतु। दोहा।

जगत जनायो जिह सकल सोहरि जानो नांहि।
ज्यों आंषिन सब देपियत आंपिन देपी जाहि॥ १॥ श्रीः ६:

विषय—आपाढ़ भूत नाम के किसी जैन महापुरुष का चरित्र वर्णित है।

रचनाकाल—संवत् सोलह सइ अठतीसइ। दिन विजय दशमी सुजगीसई।
कहइ कनकसोम सुविचारी। श्री सव संघ नइ सुपकारी॥ ११॥

संख्या २० ख. आपाढ़ भूत चरित्र, रचयिता—कनकसोम, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—११×४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८७, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३८ वि०, लिपिकाल—सं० १८२१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ ६० ॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥ आदि सिद्धं भवकार गुरु चरेने कंजनमोवंद कनो अधकार कहो जी सतगुरु ते सुतो १।

राजगरी नगरी अपार वलराजा भोग धै जिस पर पंदक कुमार
रुप्रं कूप को उपना २ माता पिता अधार सुनते धैन सुकमाल के
सुप अनेक प्रकार जोवनवस्ता पामीओं एक दिन थिवरय धार
समो सरन उस नगर मैं परपदा होई नर नारि पंद कि आयो दरस को
सुन वानी मन जाग मानुप जन्म फिर २ नहीं जैसे टं
माणो की आग धन जोवन सव अथिर है ५

अंत—चउ घातीक कर्म तिवारी केवल थया सुविचारी रूप पंच कुमर प्रति वोधे
ते पणि चउ कर्म्मनि सोधइ ७२ पामइ सवके वलनाराग ए भावतरगा
अहिनाराग करैसहि सुर राया तउवेसलेइ ऋषि राया । ७३ ।
ऋषि राया लेई वैस वैटा भवने प्रति वोध वा उपदेश आसे
लोक सापे कर्म्म मैल निज सोधवा ७४
अनुकर्म करी विहारा चरित पालु मुक्ते सिंधा आपाढ़ा भूत चरित्र
गावा मणुयं भव सकला पावा ७५
इणि पर भावना भावीजइ तप करा कपासो जै
जिसासिण नौसिण गारा मुनिवर या उक्षारा ७६
संवत सोलह सय अठतीसो देव विजेस्वाभुजगी सइ कहि
कनक सोम विचारी सव संधने सुप कारी। ७७

इति श्री आपाढ़ भूत चरित्र संपूर्णम् संवत् १८२१ लिपतं मिदगुण देवी दासेन आत्मअर्थेन सुभं भवत श्रीमस्तु।

विपय—आपाढ़ भूत नाम के किसी जैन महापुरुप का चरित्र वर्णित है।

संख्या २१ क. कवीरदास जी की वाणी, रचयिता—कवीर, कागज—देशी, पत्र—७४, आकार—१०१/२×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वनारस।

आदि—सकल संत महापुरपायन्म ॥ श्री श्री वावा जी श्री कवीर साहिब जी को कृत लिपते ॥

॥ श्री गुरुदेव कौ अंग ॥

कबीर सतगुर संवांन को सगा सोधी संवी न दाति ।
हरजी संवांन को हितू हरिजन सवी न जाति ॥ १ ॥
कबीर जाति हमारी आत्मा प्रांण हमारा नांव ।
अलष हमारा इष्ट है गिगन हमारा गांव ॥ २ ॥

अंत—॥ अथ पद कबीर जी का अरथ सहित टीका लिषंते ॥

॥ राग गौड़ी ॥

दुलहनी गावहु मंगलचार । हमघरि आए हो राम भरतार ॥ टेक ॥
तनरत करि मैं मनरत करिहूँ पंच तत बाराती
रामदेव मोरे पाहुने आए मैं जोवन में माती ॥ १ ॥
सरीर सरोवर वेदी करिहूँ ब्रह्मावेद उचारा ।
रामदेव संगि भावरि लेहू धनि धनि भाग हमारा ॥
सुर तेतिसूं कौतिग आए मुनि यर सहस अठ्यासी ।
कहै कबीर हम ब्याहि चले हैं पुरुप एक अविनासी ॥३॥

अर्थ—दुलहनी आत्मा । वर घट । १ । भरतार प्रमेस्वर ॥ टेक ॥
तनमन परमेसुर सुरत कीया ॥ पंच तत तिनकी तासीर
प्रमेसुर सूं लीन ॥ बराती बने जोवन । प्रेमसदमत्त ॥ १ ॥
सरीर सरोवर वेदी करिहूँ प्रमेस्वर सुं वणाव सोई वेदी ।
ब्रह्मां वांनी । भावरि फेरा । प्रमेसूरसू विलास सोइ भावरि ॥ २ ॥ सुर देवता
तेतीस । पांच इंद्री पंचीस प्रकृति तीन गुन ए तेतीस ।
मुनियर सहंस अठ्यासी । नौ नाड़ी वहत्र कोठा । सप्तधात ए
अठ्यासी मुनी । आत्म प्रमात्म सूं संजोग सोई ब्याह ।
संसार सूं नृवासीक । हुय' चले ॥ ३ पद ॥

× × × ×

इति श्री कबीर साहिब जी को पद अरथां सहत संपूर्ण ॥ पद ॥ १२१ ॥ राम ॥९॥ संवत् ॥ १८५५ ॥ की मीती म्हा माशे सुकल पष्यौ तिथ्यौ नांम ११ ॥ वार सनीसर वार लिपतं च ग्राम पारख्यामधे ॥ लिषंत च साधू मुकनदास स्वांमी जी श्री ७॥ दरसणदास जी का सिष्य ॥ स्वामी जी श्री ॥७॥ अमरदास जी का पोता सिष्य ॥ स्वामी जी श्री ७॥ सेवादास जी का पोइ पोता सिष्य ॥ वांचै विचारे जांकूं रांम राम नमस्कार ॥ पोथी बावा जी की कृपा सूं लिखी छै पोथी मुकुनदास हस्ते पठनारथ ॥

विषय—निरगुन सिद्धांतानुसार दार्शनिक विवेचन तथा ज्ञानोपदेश । वाणियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं :—

१—साखी ... ... पत्र १७७ से १९८ तक।
२—रमैंणी ... ... पत्र १९८ से २०४ तक।
३—पद ... ... पत्र २०४ से २४९ तक।
४—रेखता ... ... पत्र २४९ से २५० तक।
५—पद कबीर जी का अरथ सहित ... पत्र २९६ से ३२८ तक।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित ग्रंथ और हैं जो हस्तलेख में आगे दिया हैः—
६—कबीर जी की रमैनी जन्म बोध, पत्र ५६२—५६८ तक।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ बड़े आकार के एक हस्तलेख में हैं। उक्त हस्तलेख में गोरखनाथ, जलंधरनाथ आदि अनेक सिद्धों और निरगुन पंथी संतों की बानियाँ संगृहीत हैं। उसमें आये समस्त रचयिताओं के नाम सेवादास की 'साखी' वाले विवरण पत्र में दिए गये हैं। हस्तलेख में कबीर के १२१ पदों पर और गोरखनाथ के ५८ पदों पर टीकाएँ दी हुई हैं। इसके आरंभ में रचयिताओं और उनकी रचनाओं की एक वृहत् सूची दी गई है।

संख्या २१ ख. नामदेव की लीला, रचयिता—कबीर, स्थान-काशी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—५३⁄४ × ४१⁄२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३५ वि० के लगभग प्राप्तिस्थान—पं० दीपचंद जी, ग्राम—नोनेरा, डा०—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर।

आदि—अथ नामदेव की लीला लिषते॥

नामदेव सुलतान बादला। देषौ वै छीपी तेरा हर विठला॥ टेक॥
वे हिंदु गुमरावै दीन। कलमाना ही कुफराना कीन।
पातशाह मैं क्यौं बेदीन। सुमरौ साहब अपना दीन।
कारी कपला व्यायी गाय। हतै मुला विसमला पाय।
आन मुराही वाही छुरी। हर का घोरा पापर परी।
नामदेव गाय पी लावे मोही। नातर गरदन मारू तोही।
पातसाह ऐसी क्यों होय। मूवा मुरदा जीलावै कोय।
अपना काजी मूला बुलाय। जै कोई मुरदा देय जीलाय।
दूध पिलावै तू देहरा फिरावै। काहे न मूरदा गाय जीलावै।
मेरा कीया कछु नहीं होय। करता है सो औरहि कोय।
तू पातसाह मैं जात कमीण। हिंदु तुरक का एक ही दीन।
कैतु पगरी दै कै दिन मैं आव। कलमा भरकै गाय जिलाय।
अगरी देऊ न कलमा भरू। जाते जीव का लोभ न करू।
जब कोपै असुर कौ राव। मातौ हस्ती दियौ झुकाय।
कुंजर करै सुंड की चोट। नामदेव उचरौ हरकी वोट।

सुन दौरी नामा की माय । कर मीडे मन में पछताय ।
अरी नामा नाम समझाय । विन आइ तेरा जीवरा जाय ।
तव बोली नाम की माय । राम छांड़ पुत्ता कहो पुदाय ।
हुँ तेरा पुत्ता तु मेरी माय । संकट परेपर कहुँ नहि पुदाय ।
नामदेव पर कोपौ सुलतान । रथ पीचे देपै ससमान ।
पातसाह सुँ साह वोले बोल । नामा समर सोनौ तोल ।
डंड देहु तो दो जग पडु । दिन छाड दुनिया कथ मरू ।
येक पहर में जीवे गाय । नाही तौ नामा जीव सुजाय ।
सात घड़ी तौ वीती सुनी । अजहु न आये त्रभवनधनी ।
तल धरती ऊपर आकास । नामदेव छाड़ी जीवकी आस ।
मेरा मूया न थोड़ा होइ । पाछे राम न कहसी कोय ।
गंग जमन जे उलटी वहै । नामदेव हरहर कहता रहै ।
राम तनाना जावा जला । सेवग भाई स्वामी आइला ।
नामदेव भगत करी लौ लाय । उठौ बछा चोपौ गाय ।
गाय जीलाई वाजे वाजै । पातसा महल कू भजै ।
भज पातसाह महलन कुजाय । महलन भीतर लागी लाय ।
भाजै बीबी करै सलाम । ते क्यौं काफ़र कीयौ हैरान ।
सांचा नामदेव तुम्हारा राम । हिंदु तुरक झपै वेकाम ।
पातसाह तव पकड़े पाव । वकसौ नामदेव तुमारीगाय ।
नामदेव पातसाह झगड़ौ पड़ौ । हितऊदास कवीर कहौ ।

इति श्री नामदेव जी कौ झगड़ौ संपूरन ॥ श्री सरदा जी सहाय ।

पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—एक कपिला गाय के लिये बादशाह और नामदेव में झगड़ा बढ़ गया। बादशाह ने नामदेव से कहा कि या तो गाय को जिलाओ या मरने के लिये तैयार हो जाओ। हिंदू धर्म की निंदा करते हुए नामदेव को मुसलमान धर्म स्वीकार करने के लिये भी कहा। नामदेव ने अपनी धार्मिक दृढ़ता दिखलाते हुए मरी हुई गाय के विषय में बादशाह को समझाया कि अब गाय जीवित नहीं हो सकती। किंतु बादशाह ने एक नहीं मानी। अंत में विवाद दोनों ओर से बढ़ गया। नीमा ने भगवान् का स्मरण किया। गाय जीवित हुई। बादशाह डरकर महल की ओर भागा। वहाँ वेगमों ने उनके कार्य की बड़ी निंदा की। पश्चात् नीमा का सम्मान किया गया और बादशाह ने क्षमा याचना की।

टिप्पणी—अंत के पद 'हितऊदास कवीर कहौ' से ही ग्रंथकार का नाम 'कबीर' ज्ञात हुआ। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। किंतु इस ग्रंथ के आगे एक ही हस्तलेख में 'जालंधर जुद्ध', 'धर्म चरित्र' और 'धू चरित्र' नामक तीन छोटे-छोटे आख्यान

और लिपिवद्ध हैं। 'जालंधर जुद्ध' में लिपिकाल सं० १८३५ वि० है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ का भी लिपिकाल यही होना चाहिए। लिपिकर्त्ता ने लिखने में बहुत अशुद्धियाँ की हैं।

संख्या २१ ग. ग्रंथ भवतारन, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—७३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ वि० = सन् १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, दाता—पंडित रामविनय शर्मा, स्थान व डा०—सरायमीर, जिला—आजमगढ़।

आदि—सतनाम ॥ सत सुक्रित आदि अदली अजर अचिंत पुरुष करुनामै कबीर सुरति जोग संताय न धनी धर्मदास मुक्तामनि नाम चूरामनि नाम सुदरसन नामाकुल पतिनाम ॥

प्रमोध गुरवाला पीर कवल नाम अमोल नाम सुरति सनेही साहेब की दया सो लिष्यते ग्रंथ भवतारन ॥

॥ धर्मदास वचन ॥

धर्मदास कहै कर जोरी। सत गुर सुनु विनती इक मोरी ॥
भव वारीध कौन विधि छुटै। जम बंधन कवने विधि टूटै ॥
भव दरियाव······रन पारा। तामहि अटके सभ संसारा ॥
सो दरियाव कोने विधि थाही। परम पुरुष के हम कैसे पाही ॥
करो भक्ति की जोग एह कमाउ। देहुदान की तीर्थ एह नहाऊ ॥
करो जोग की एह इंद्री साधो। बाहेर फिरो की एह मनको बाधो ॥

अंत— परम पुरुष अधर पर अमी है एक अंक।
अब महि एह निरअंक है धर्मनि होउ निसंक ॥
उतपति परलै बीज गति बीजै आवै जाइ।
गुपुत प्रगट जो हती सो सभ दिया लपाइ ॥
निह अछर अछर है अछर की परगास।
अछर ते जीव उपजै सुनो संत धर्मदास ॥
मनते माया उपजी माया तिरगुन रूप।
पांच तत के मैइली मे वेधे सकल सरूप ॥
माया ब्रह्म जीव तत रज सत तम तिरदेव।
इन्ह सभही को छाडिकै करै निअछर सोम ॥
जो चाहो एह सोइ मिलै मानो मोर यह विचार।
यही भेद जाने बिना कोइ ना उतरे पार ॥
जगमे भरमै नही यह मेटे संसय सूल न होय।
हंसा हीरा अमर··· ···न पला न··· ॥

कहै कबीर धर्मदास से तब उतरै भवपार।
हमरी प्रतीति करते रहो सकल परिवार विसारि ॥
अंसवंश परिवार जे ते नहोय गोविंद गुन सिप जो एह गाए।
जो चाहै निअछर जो सम भाय। भुकुति अंक सोइ लिपा जाइ ॥

इति श्री ग्रंथ भवतारन संपूर्ण ॥ वैसाप मासे कृष्णपछे परिवादिन व्रेसपति का संपूर्ण भया। लिपा संतोपदास कबीर वाग के सहर लखनऊ साकिन मपमूल गंज ॥ छितवापुर का नाका ॥ संवत् १९१८ ॥

विषय—कबीर का धर्मदास को संसार सागर पार होने के संबंध में ज्ञानोपदेश करना।

संख्या २१ घ. सुखसागर, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—८¾ X ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी कैथी मिश्रित, लिपिकाल—संवत् १८१२ वि० के लगभग= सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरू बालक प्रसाद जी, ग्राम—गौंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़।

आदि—लीपते ग्रंथ सुपसागर ॥

कहै कबीर सुनो ध्रमदासा। अगम भेद कहो परगासा ॥
सुप सागर की कथा सुनावो। परम पुरस को नाम बतावो ॥
जाकी गती मती काहु न पाइ। ताकी जुगती तुमसो कहो बुझाई ॥
अपरमपार पार ते पारा। सुपसागर सबही ते न्यारा ॥
सबके परे ताहे असथाना। मूलसार ते भए नीज स्थाना ॥
अगम कथा अकह की बानी। ध्रमदास लेहु जो मानी ॥
गती अबीगती ते है न्यारी। कोट भान रोम उजीआरी ॥
कोट चंद्र अम्रीत तेहि माही। ताकी गती कोउ जानत नाही ॥
बडे बडे रीषी मुनी भैएउ। वाका पोज न काहु पैएउ ॥
सुप सागर नीजु नाम परगासा। हंसा करे सुषसागर वासा ॥
सो हंसा कहीए मती धीरा। सुप सागर नीज कहै कबीरा ॥
पुरन पुरस ताहा नीज ध्याना। ताकर भेद न काहु जाना ॥
सबके ऊपर रहै रे भाइ। नीह अछर ते नाम कहाई ॥

अंत—केते वेद करै उचारा। पार न पावै अपरम पारा।
केते ब्रह्मा ध्यान लगावै। नाही प्रीथी मे नाम धरावै ॥
और कहा लगी करो वपाना। वोर पार सबही सुप जाना ॥
ध्रमदास कहन के नाही। समुझत बनै समुझो मनमाही ॥

सुप सागर सदा सुप होई । महा पुरुस बैठे ताहा सोइ ॥
ग्रंथ ग्यान बानी ताहा नाही । लपै लपावै उन्हकी छाही ॥
अलप अपार लपै केही भाती । अलप लपै अलप की जाती ॥
हंस हंसीनी करै बीलासा । सदा पुरुप के रहै पासा ॥
षोडस सुरुज हंस एक सोभा । ताहा हंसीनी का मन लोभा ॥
सुरुज चारी हंसीनी को रूपा । महासेत अरु बहुत अनूपा ॥
केते हंस पुरुप सुप देपै । लेपा नहीं अलेप अलेपै ॥
हंसन कह हंसीनी देपै । हंस नजरी भरी उन्हको पेपै ॥
ध्रमदास सोइ नीजु जाना । संतै संत है एह ग्याना ॥
बानी चौदह हम अत्र भापी । एही जुगुती नीज न्यारी रापी ॥
भेद भाव सवहीन मे कहेउ । होए अभेद मुल मे रहेउ ॥

दोहरा

भए अभेदी भेद तजी राह सार ठहराइ ।
आपा मेटै सोभी नीह अछर मीली जाए ॥

इती ग्रथ सुपसागर कवीर साहेव कहा से संपुरन ॥

विषय—परब्रह्म के स्वरूप का तथा कबीर के संसार में आने के हेतु का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—हस्तलेख में प्रस्तुत ग्रंथ के अतिरिक्त निम्नलिखित रचनाएँ और हैं :—

१—एकादशी माहात्म्य—सूरजदास कृत
२—कबीर संक्राचार्य की गोष्ठी—कबीर
३—संतोषबोध—कबीर

संख्या २१ ङ. कबीर और संकराचार्य की गोष्ठी, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८¾×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, लिपिकाल—सं० १८१२ के लगभग = सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी । दाता—श्री गुरू बालकप्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—लीपते सत कबीर औ संक्राचार्ज क गोस्टी ॥

॥ संक्राचार्ज मुनीवाच ॥

संक्राचार्जन पूछही बानी । हे स्वामी मोहे कहो बषानी ॥
ब्रह्मरूप कहीए समुझाई । केही बीधीमाआ संग कहाई ॥
जीव के माहे ब्रह्म की मरहीआ । सो सामी तुम सो कहीआ ॥

॥ कबीर उवाच ॥

ब्रह्म एक सुध चेतन्य होई। माश्रा अचेत ब्रह्म संग सोइ ॥
जैसे ब्रीछ ब्रीछ सो छाया। वैसे रहै ब्रह्मसंग माश्रा ॥
सलीता माह ब्रीछ जस छाही। वैसे ब्रह्म जीव के माही ॥
माश्रा वोट ब्रह्म नाही दरसै। जीश्र चेत केही वीधी प्रसै ॥
माश्रा परे ब्रह्म ही जानी। और न कोइ दूसर मानी ॥
एक अकेला ब्रह्म अपारा। माश्रा रहै ताहे पगधारा ॥

॥ संक्राचार्ज उवाच ॥

ए स्वामी एक वुझौ तोही। जो समुझाए कहो अब मोही ॥
केतीक सक्त ब्रह्म ते भएउ। केतीक माश्रा ते नीरमैएउ ॥
तीन के नाम नीनार बषानो। भीन भीन मैए ताते जानो ॥

अंत—अंतहकरनः चीत मन पानी को सरूपः अहंकार अगीन को सरूपः वुध प्रीथी को सरूपः एह चतुरथ अंतहकरन कहीएः सब्दश्रकास को सरूपः सपरस वाको सरूपः रूपतेज को सरुपः सब्द सपरस (स्पर्श): रूप रसगंधः ए तनमात्रा कहीएः अकास की इन्द्री स्रवनः वाए की इन्द्री तचाः तेज की इद्री चछुः जीभ्या पानी को इद्रीः नासा प्रथी को इद्रीः ए पंच ग्यान इद्रीय कहीएः वचन अकास की इद्रीयः हाथ वाए की इद्रीः पाव तेज की इद्रीः उपस्त अव की इद्रीः गुदा प्रीथी की इद्रीः एह पंच कर्म इद्रीया कहीः

× × ×

॥ ए अस्थुल मात्रा कहीए ॥

अस्त ब्रह्म को सरुप : मास वाए को सरुपः
नौ तत की रहट घट जीव कहीएः
कीट भ्रीग की नाइः इहसौ माया वह्म कौ नीरनौः
पींड ब्रहमंड को वीचारः पद सुछमः कवीर साहेव संक्राचारज को चेताएः

इती कवीर साहेव श्रौ संक्राचर्ज की गुस्ट संपूरन समापतः

विषय—कबीर का शंकाचार्य को तत्व ज्ञान का उपदेश करना।

टिप्पणी—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध 'संतोपबोध' के लिपिकाल के आधार पर संवत् १८१२ है। रचयिता का नाम 'कबीर' दिया है। रचना में कबीर शंकराचार्य को तत्वज्ञान का उपदेश करते हैं। यदि ये शंकराचार्य सुप्रसिद्ध अद्वैतवादी शंकराचार्य हैं तो इस रचना का कबीर कृत होने में संदेह है। इस दशा में किसी कबीर पंथी ने ही इसको रचा होगा, ऐसा जान पड़ता है। इसकी रचना गद्य पद्य दोनों में है। अधिक भाग गद्य में है।

संख्या २१ च, संतोप बोध, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१९, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १८१२ वि० = सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा वाराणसी, दाता—श्री गुरूबालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, पोस्ट—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़।

आदि—संत नाम लीपते ग्रंथ संतोपबोध ॥

धर्मदास सुनो शब्द ब्याब्हारा। निस वासर के करो बीचारा ॥
लाल तुरी जो जए परवाना। मुसकि जोजन उह ठीकाना ॥
हेरे तुरे जोजन दुई जाई। जरद जोजन तिनि पहुचाई ॥
हंस जोजन चारि पहुचाई। आपन आपन मईजलि कमाई ॥
पाच तुरे रथ एक असवारा। तामीतर मन जिव विस्तारा ॥
जिव परा है मन के हाथा। नाच नचावै राखै साथा ॥

साखि

अष्ट पंपुरिका कमल है ता भितर जिव को वास।
ता उपर मानको आसन नप शिप तन के पास ॥
सूर मिलावै चंद के चंद मिलावै सूर।
यह निज भेद बतावै ताहि मिले गुरु पूर ॥
जाहि पवन पर चंद चलै ताहि न ग्रसै काल।
जो एह भेद विचारि है सोइ जवहारिलाल ॥

अंत—बिना सब्द है घर अधीआरा। छन छन काल करै अहारा ॥
सब्द सुरती निरपी एक धारा। सुपते वचन भआ कछु सारा ॥
आगम तस मथुर (?) सरीरा। निरति नाम मैं संत कबीरा ॥
निरतीपुनी सब्द की आसा। सुरती नाम आहे धर्मदासा ॥
सुरति रमी रति बाधे एकनेहा। पावै नाम हसा को देहा ॥
कथै ग्यान जो भाटक सारा। लोग नामने मुद गवारा ॥
धर्मदास तुम करहु विचारा। हम तुम कीन्ह सकल संसारा ॥
मथुरा बैठी जो शब्द सुनाई। धर्मदास गहो चितलाई ॥

इति ग्रंथ संतोपबोध संपुरन स्मापती सन बारासै बनैइस की सल मीती बैसाप सुदी संतै को संपुरन भाई दिन मंगल ॥ १२ ॥ लीपो कुडवनदास बैरागी कोर जी बैठे लीपा ग्रंथ संतोपबोध तीलकदास को ग्रंथ संपुरन भए तिनपहर दिन रहो तब संपुर्न भाया १८१२ ॥ संपुरन भाया मगल के दिन ॥ १८१२ ॥

विषय—जीव विषयक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या २१ छ. ज्ञान प्रगास या ध्रमदास बोध, रचयिता—कबीर, स्थान—काशी, कागज—देशी, पत्र—६९, आकार—$6\frac{1}{2} \times 4\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—८१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १८७९ वि०=सन् १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत गुरुबालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—सतनाम कबीर साहेब का दाश्रा ॥ धनी ध्रमदास का दाश्रा ॥ साहेब ज्ञानदास का दुश्रा ॥ साहेब लालदास का दुश्रा ॥ साहेब मसुदनदास का दुश्रा । साहेब बीरबलदास का दुश्रा ॥ साहेब पुसीहालदास का दुश्रा ॥ साहेब लपनदास का दुश्रा ॥ साहेब गुलाबदास का दुश्रा ॥ सकल संत महंत हंस का दुश्रा ॥ सभ साधुन का दुश्रा ॥ ऐही बंदे की बंदगी सभको ॥ ग्यानी धानी को ली० ।

ग्रंथ ग्यान प्रगास ॥

सगुरु सत सत नाम । सत पुरुष संत सुषधाम ॥
सत सुक्रीत सतलोक नेवासी । दुषनासन अवीचल सुपरासी ॥
अमी नाम सो सत कहाए । अकह अलीह सो आपु रहाए ॥
अवीगती अपै अमान सरूपा । अकह अपोल अडोल अनूपा ॥
अजर अजायनी सो नीहस्वादी । नीहकामी नीरमोह अनादी ॥
नीहक्रोधी नीरलोभ नीहसंका । गुनातीत नीरवैर नीहलंका ॥
जम दारुन भंजन प्रभु सोई । आपुही तात मातु नहीं कोई ॥
माही तीन्ह पाच ततु तनधारा । रहे अमान नूक नपारा ॥
हौ ताकह नीसुदीन सीर नाऊ । गुप्त प्रगट ताको गुन गाऊ ॥
योनके हीग से तम चली आए । जीव नीसतारे उन्हीं पठाए ॥
सो हंसा नही जात वीगोई । ... ...
सतगुर शब्द गहै जो हंसा । मेरै जनम मरन जम तंसा ॥

अंत—ध्रमदास गहु चरन सरोजा । जुग कर जोरी ठाठ भै सोझा ॥
बैठे पुनी आग्या प्रभु पाई । बेमुप जीवन्ही को बात जनाई ॥
हौ प्रभु अस वीरतंत भौ ताही । पान प्रवाना लीन्हेसी नाही ॥
मै भापेउ प्रभु झसठी दाना । उन्ही दुरमती बुझेसी कछु आना ॥

॥ कबीरोवाच ॥

हो ध्रमनी जौ लीऐसीनपाना । परी ही काल मुप स्व प्रवाना ॥
पेत से कोइ टरै जो भाई । सो जीव नीस्चै जमु घरी पाई ॥
होए जमुचोर काल कै अंसा । ध्रमराय तेही करीही वीधंसा ॥
× × × ×
पाँचौ चोर प्रबल घट माहा । मनराजा पाचहु कै माहा ॥
सतगुर भान मनही धरी बांधहु । पाँच चार कह दीढ होइ साधहु ॥

॥ छंद ॥

धरीमनही बाधहु पांच साधहु सारततु गुर ग्यान ते ।
एह देस है जमराज को तरी होए वीदेही ध्यान ते ॥
सत नाम अकह अमान हीअ धरी करहु सेवा संतको ।
नीज ध्यान सतगुर रूप अस्थीत ग्यान लहै सो कंत को ॥

॥ दोहरा ॥

गुर मुष स्व प्रतीति करी हरष सोग विसराए ।
दआ छेमा सत सील गही तव अमरलोक को जाए ॥

॥ सोरठा ॥

वरनेउ ग्यान प्रगास ध्रमदास संमोध मत ।
कहै कवीर सोहृदास जेही ममस्व प्रतीत हीए ॥

इति श्री ग्यान प्रगास ग्रंथ ध्रमदास बोध ॥ संपुरन भयते ॥ सतगुर के चरनारबींद नमस्तुते ॥ दसषत जमुनादास के हाथ कै सकल हंसन पर दआकीन । ध्रमबोध मै तब लीषी दीन्ह ॥ ग्रंथ उतारल भगतुदास जगह गोंठा प्रगने घोसी तपे आजमगढ़ समत १८७९ मी० कुआर सुदी वरीज सोमार के ॥ सतनाम कबीर साहेब की दआ से भआ ॥

विषय—कबीरदास का ध्रमदास को निर्गुण ज्ञान का उपदेश करना ।

संख्या २१ ज. सुखनिदान, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१०×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, अपूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी ।

आदि—श्री अथ कबीर जी कृत सुष नीधान मधे की वाते ॥ दोहा ॥ हद हती जब आप मे : सकल हतो ता माहि, ज्यौ तरवर के पेड़ मे : डारपात फल छाहि । १ डारपात सब पेड मे : पेड बीज के माहि : आप आपको रगि चले कोई मीलत वीज को नाहि । २

जब करता आये हते बीज अीछया माहि; ताहि लखै कोइ संतजना सब संसै मिटि जाहि ॥ ३

॥ रमैनी ॥

प्रथमही करता सुष अमृत बानी : जाही रची सकल रजधानी
सुख निधान सुख सिंधु उजागर : करुनामय कृपाल गुन आगर
पंच तत्व तीनौ गुन जापै : पूरन ब्रह्म बोलता आपै
आप अखंडीत उग्र सरीर : सोहं सोहं सत कबीर
२ आपही तत्व ... ...

अंत—मैं गायत्री मैं भसवंती मैं गंगा जमुना में सरसती
ये तीनि लोक वसि करि के मोहो, तुम तीनौ सीस छत्र मै सोही

मैं हीरा रतन मैं सोना मोती, उडगन सकल हमारी जोती
ये वाक वादिनी सारदामाइ, मैं तीनहु को सदा सहाई
मैं जो करो सो निश्चै होइ, हम सो वली अवर नहीं कोई।
जेह ने वाजो होइना कीजै, जेहे संघारो मैं··

इसके पुस्तक खंडित है ···

विषय—कबीर और धर्मदास का संवाद और धर्मदास द्वारा किसी भंडारे का वर्णन।

संख्या २१ भ. स्वरोदय, रचयिता—कबीर, स्थान—काशी, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी मिश्रित नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स० काशी।

आदि—सतनाव प्रकास पुरस महापुरस की दया। कबीर साहीब की दया गुसाई धरमदासजी की दया। सब संत की दया। गुसाई भाउदास जी की दया। लिपते सरोधो कबीर साहीब को।

भाषा रव भोमे गा। सुरवार सुर दीन वाही के गुस धंग।
साख कारी जौतीध कीसन पप वसेप तासीध
सकलकारी जसु कलप वसेपता। बुधा शुकर।
वीसपत। सोमवार सुखाव नाड़ी वसवता।
सव कारीज सुकल पप वसेपत। संफराता को वोरो।
मेप सीध। धन। तुल। कुभ मीथन ये पट संकर ते।
उद सुरज सुभासुभ। मेती सकराते सुरज की है सो सुरजे चहिए

अंत—येह काल जंजाला। सहज सुनेय सुरजे समनी
क्या कारजसराया जसी रहणी जसी करणी सांच साच मिलाय
साच साईं का दरसन पाया आवा गवन नसाया
नीरगुन स्वामी अगम अगोचर दासरे काहु कीन आया।
तन मन अरप मिले भई साधो।
तइ भीपट।

मंत्र हीनगज देव ततसखः ये तो सरोध
कबीर साहीब को संपुरण सठे सही।

विषय—स्वरोदय का विषय, नासिका द्वारा स्वास प्रश्वास के आवागमन के अनुसार भविष्य तथा शुभाशुभ फल वर्णन।

संख्या २२ क. शालिहोत्र, रचयिता—फ़रताराम 'करता', कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१०½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७६,

अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १९०६ वि०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर चंद्रभान सिंह जी, स्थान व डा०—रतसंड, जि०—बलिया।

आदि—असुर सुरासुर अंम्रति पावा। वाजी जान भानु मन भावा॥
उत्तीम वाहन वाजी वीचारी। रवी कह दीयो जगत हितकारी॥
पुनी कमला बोली करजोरी। नाथ सुनहु वीनती एक मोरी॥
जगमह वाहन वाजी अनेका। उत्तीम मधीम अधम अनेका॥
उतीम अस्व आपु मुख भाषो। उन मध्य आदी मह राषो॥

॥ दोहा ॥

दीन वंधु आरत हरन वीनै करौ कर जोरी।
वीसतर सहित बषानिए कैसे उतम घोर॥

॥ चौपाई ॥

प्रीया प्रीती सो हरी अनुरागे। घोर बखान करन तब लागे॥
मोरे सदन वाजी कर वासा। जाहाँ घोर ताहाँ मोर नेवासा॥
सामी मंद समर के कादर। वाजी बांधी के करै नीरादर॥
ताहाँ न मोर घोर कै बेरा। संपती हीन दीन कै डेरा॥
लछमी धर्म कर्म सुप ताके। लछनवंत वाजी घर जाके॥
सव सुलछन दोष वीहीना। बसै जासु घर एको दीना॥

अंत—

॥ तोमर छंद ॥

इसर क्रीषा जब करै। तब कुर कुरी कह हरै॥
बर वाजी के एह ब्याधी। जब सैन्य पात असाधी॥
एह कहो सारंग पानी। कमला की रुची पहिचानी॥
एही बढ़त सहीत वीवेक। तेही होत बुधी अनेक॥
गुन दोष है को कहै। तब भूप को मन लहै॥
बुसो करहै जेही गेह। स्रीव सही सहीत सनेह॥

॥ हरी गीता छंद ॥

कातीक चतुर्दसी सकुल पछ परतेछ भृगुवासर।
भोताहाग्राम बैरीधाम मे एक जगा कढ़ि रवि फल॥
सालीहोत्र पवीत्र घोर चरीत देव वानी कहा।
सीरमानीरायेइजाए का सुप पाए कवी 'करता' कहा॥

॥ दोहा ॥

रीभबवक सो नागह नंद जुत करी सम्य (समय) जानी।
आसाद सीसीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानी

सालहोत्र भाषा समास सुभ मस्तु ॥ समत १६०६ साल मी० कातीक वदी १० रोज सनीचर जो प्रतीदेषा सो लीपा ॥

विषय—घोड़े के गुणदोष तथा रंग रूप आदि का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—हस्तलेख आरंभिक दो पत्रों के नष्ट हो जाने से खंडित है। रचनाकाल का उल्लेख तो है पर वह अस्पष्ट है। इसका दोहा इस प्रकार है :—

री भव वक्र (वक्त्र) सो नागइ नंद जुत करी सम्य (समय ?) जानी।
असाढ़ सी सीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानो ॥

लिपिकाल संवत् १९०९ है। ग्रंथकार ने अपने नाम का स्पष्ट उल्लेख कहीं नहीं किया है। कविता में जहाँ तहाँ 'करता' या 'करता राम' आने से वही उसका नाम मान लिया है। एक स्थल पर तो 'कवी दिज करताराम' भी आया है जो इस प्रकार है :—

अंग परीछा दोष गुन रंग सभै गुन ग्राम।
कहो सबै बीलगाइ कै 'कवी दिज करताराम' ॥

इससे प्रकट होता है कि करताराम ब्राह्मण थे।

संख्या २२ ख. शालिहोत्र, रचयिता—करताराम द्विज, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६$\frac{1}{8}$ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८५४ वि०, सन् १७६७ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ श्री गनेसायनमः शालिहोत्र लिषते ॥

॥ सवैया ॥

सिद्धि शदा नीकदे प्रगटे निघटे नीतहि दुप दारीद दंदन।
दुर्मतिमोह महातम के रवि बुधि प्रकासक आनंद कंदन ॥
मंगल मूल रहैं अनुकूल सो सुल हरे हर गौरी के नंदन।
'करता' कवि जो करु ध्यान हिये त गनेस के पाव कलेश नीकंदन ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

रदन एक सुभ सदन है सोभित वदन गअंद।
गहन मोह तम दहन उर प्रगटत पूरन चंद ॥

॥ दोहा ॥

द्वादस भवरी वाजी के रहत अंग अस्थान।
गुन ऐगुन को बुझिए मानि ग्रंथ परिमान ॥
भाल शीश सुप कंठ पर ह्रीदे नाभि के देश।
भारि भवरी दोष की गुनो जानीए वेश ॥

॥ चौपाई ॥

अगीला जाँघ गाठी पर भौरी। पुट उपार दोप अति औरी।
भवरि चरन पाछीले जानो। वेदावत महा भै मानो॥
दुम के मुलनीत में होवै। ऐसा घोर संप्रदा पोवै॥
भौरी घोर पीठी पर होई। आसन वेध विहाईव शोई॥
शीर पर भौरि सीगी कहावै। संपति शामि प्रान दहावै॥
ऐसे वाजि देषि परी हरव। तुरीत देस सेवा हर करव॥

॥ दोहा ॥

भवरी धहुँ विलोकिए सुंदर जो वल पुर।
अत्रीगी महा नीपिध है करव देस से दूर॥

॥ सोरठा ॥

नीसा वीलोके मंद वासर देपे विमलता।
बाघ वरन दुप दंद चतुर पारषि ··· ··· ॥

—अपूर्ण

विषय—श्री लक्ष्मी और विष्णु भगवान् के संवाद के रूप में अश्व के भेद तथा शुभाशुभ लक्षण वर्णन किए गए हैं।

॥ रचना काल का दोहा ॥

वेद[४] वान[५] वसु[८] भू[१] सहित है सुभ संमत साच।
कातिक वदि बुध छठी केशन वाह शेपाच॥

संख्या २३. कल्याण पुजारी जी की बानी, रचयिता—कल्याण पुजारी, स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—१२७, आकार—५.८ × ४.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपिनागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि— श्री राधावल्लभो जयति॥ श्री हरिवंश चंद्रोजयति॥

॥ अथ श्री कल्याण पुजारी जी की बानी लिष्यते॥

कवित्त

जकि (जाके) सिर ऊपर श्री व्यासनंद से धनी,
ताहि न प्रवाह (परवाह) कछू काहू और ठौर की।
चलत सुपथ साधु लक्षन ते नाजियत,
बानी सुप कहत रसिक सिर मौर की॥

श्रवन सुनत नैन देषत है रूप मन,
ध्यावत सरूप सोभा सिंधु में झकोर की ॥
सदाई 'कल्यान' रस फूले फिरें प्रेमी जन,
गुननु गंभीर धीर मिटी सब रौरनी ॥ १ ॥

॥ मलार ॥

देषिरी यह पावस रितु आई ॥
नाचत मोर कोकिला गावति बाजति प्रेम बधाई ॥
स्याम घटा अति सरसनेह निधि विज्वलता छवि छाई ॥
हरषि हरषि बरषत पिउप्यारी छतिया 'कली' ...... " १११

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'कल्याण पुजारी जी की वानी' है। इसके अंतर्गत कल्यान जी के कवित्त और पद संगृहीत हैं। इनके अतिरिक्त कुछ फुटकल संक्षिप्त रचनाएँ भी हैं, जैसे :—

१-जस रसिक जीवन
२-हित जी को मंगल

ग्रंथ का विषय दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक के अंतर्गत संप्रदाय के आचार्य श्री हितहरिवंश जी, वनचंदजी, कृष्णचंदजी, गोपीनाथ जी, मोहनचंद्रजी तथा सुंदरवर जी की प्रशंसा है, दूसरे के अंतर्गत राधाकृष्ण के मान, रूप, रति आदि केलि क्रीड़ाओं का वर्णन है। कल्यान जी राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे, अतः इनकी रचना उक्त संप्रदाय के सिद्धान्तों से प्रभावित है।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ के कर्त्ता कल्याणपुजारी राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी और आचार्य श्री सुंदरवर जी के शिष्य थे। ग्रंथ में कल्याणजी ने सुंदरवरजी को अपना गुरु होने का निर्देश किया है। श्री सुंदरवर जी हित हरिवंश जी के पौत्र और श्री वनचंदजी के सबसे बड़े पुत्र थे। इनका जन्मकाल संवत् १६०६ वि० बतलाया जाता है (देखिए राधावल्लभ भक्तमाल)। राधावल्लभ भक्तमाल में कल्याण जी को श्री वनचंदजी का शिष्य लिखा गया है जो ठीक नहीं है। कल्याणजी राधावल्लभजी के अनन्य भक्त तथा वृंदावन सेवी थे। ये राधावल्लभ मंदिर के पुजारी थे। इनका रचनाकाल १७वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध मानना चाहिए। प्रस्तुत वानी की रचना सरस और सुंदर है। इसमें हित हरिवंशजी की प्रशंसा में रचे गए पदों की संख्या पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त रचना संप्रदाय के सिद्धांतों तथा भावनाओं से रंजित है।

संख्या २४, सूरज प्रकाश, रचयिता—कवि या करणीदास, कागज—देशी, पत्र—६३, आकार—६ × १४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५१०,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १७८७ कार्तिक, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्रीं नमः

अथ रामरामेश्वर महाराजाधिराज श्री छत्रपति पृथ्वीपति रघुवंश सिंह ताज महाराज श्री अभयसिंह जी रो रूपक 'सूरजप्रकाश' कवि या करणीदान विजेरा मोत रोकहियो लिप्यते ।

प्रथम गाथा—श्रीपति भगति सहाय रिध सिध सुक्कर नयो सकरं सुत ।
सुर अभिचार्यं समाजं, श्रेष्ठ बुधि दीजिये गणेस्वर ॥

छप्पय—सोभवती संजति सोल शृंगार सकृती ;
हंसगति हालती हंस आरोह हकृती ॥
अधर दुती आक्रती जन्न वजवती जुगती ।
रूपवती रजति भाल झूलती मुकती ॥
विमलती वेद रघुवचंती, अणंदति हरति अमती ।
अभपति गुण गावण उकति सरस्वती दीजे सुमति ॥

अंत— छप्पय

कलपवृच्छ सुभकरण सूरि हाता, रीझवार ।
नाहसाल उखाणो सूवं काया राग चारां गहर ।
पूरब हो गुणी महाकविता मन मोहे ।
राजा अनिराइयां सीस गज अंकुश सोहे ॥
प्रगट सी दसे दिस अपरा तिको अवर धर अवर लिय ।
'सूण प्रकाश' अभनाह रो जप सूण प्रकाश जिय ॥ १ ॥

(रचनाकाल)—सत्र[१७] से संवत सत्यासिये[८७] विजै दसमी सनिजीत ।
वदि कातिक गुण वरणिये, दशमी बार अदीत ।

× × ×

(दोहा)—धुव सुमेर अंवर धरा, सुरिज चंद प्रकास ।
महाराजा अभयाण रो, रीधुइता जुग रास ॥

इति श्री महाराजाधिराज महाराजे राजेश्वर श्री श्री अभैसिंघ जी रो ग्रंथ नाम सूरज प्रकास कविया करणीदान रो कहियो संपूर्णम ।

विषय--१-राजा अभैसिंह के पूर्वजों और उनका विस्तृत वर्णन है।

२-राज दरबारी कवि के सब दोष वर्णित हैं।

३-कवि ने अपनी आत्मप्रशंसा भी की है।

४-भोजन सामग्री का, दावत का और पकवानों का विस्तृत वर्णन है।

५-कवि षट् भाषा ज्ञानी है। पिंगल आदि साहित्यिक बातों का भी ब्योरा मोटा ग्रंथ 'सूरज प्रकाश' से निकाल कर अलग बन सकता है।

६-षट् भाषाओं में 'नागभाषा' को गिना है।

७-संगीत और नृत्य शास्त्र का विस्तृत विवेचन है।

८-ऐतिहासिक बातें अधिकतर प्रमाणिक नहीं हैं।

टिप्पणी—इस पुस्तक की दूसरी प्रति के संबंध में इस प्रकार लिखा है :—दूसरी प्रति अपूर्ण है। देशी पत्रा—२७ (२६-४२ तक तथा १८१-२०० तक)।

पंक्ति—२३, आकार—८½ × ८.२ परिमाण (अनुष्टुप्)—८१०, रूप—प्राचीन मध्यम दशा। इसमें मुंज के ७वें पुत्र से जयचंद राज वर्णन तक और अजयसिंहजी के युद्ध विजय से उनकी राज्य समाप्ति तक का विवरण है। आदि अंत प्रस्तुत विवरण पत्र के अनुसार है। समाप्ति का अंश यों है :—

'संवत् १८७७ रा कार्तिक सुद १४ चतुर्दशी रविवासरे लिखतं इदं पुस्तकं श्री जोधपुर मध्ये'।

संख्या २५, कवित्त काशीराम, रचयिता—काशीराम, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७×४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८७ वि० (लगभग), प्राप्तिस्थान—पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', सदावर्ती, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़।

आदि—कवित्त काशीराम ॥

देषा देषी भई छूट सुकुच तवतें गई मिटी कुल कान कैसो घूँघट को करवो।
लागी टकटकी मिटी और धग धगी गति मति सभयकी ऐसो नेह कोउ धरवो।
चित्रका से दोउ जन ठाढ़े रहे काशीराम नाहिन परवाह भावों लाप लोक लरवो।
बांसरी बजैवो नट नागर को भूल गयो भूल गयो नागरि को गागर को भरिवो ॥ १ ॥

बूंदी होत नीलमणि वरन सकै कौन धौ चूनी छप जात नीठ नीठ दीठ जौ परैं।
मुक्त परवाल होत लाल होत जावक सो हीरा होत भगनी छवि कैं धरैं।
लैत दैत नवन हैं घटि है हमारो मोल आपनी अनोंपी ताहि तेरोई गुनी करैं।
पोटो हेम कुंदन सो होत कवि काशीराम वाके कर पर ते रुपैया होत मुहरैं ॥ २ ॥

मंदहू चलत इंद्रवधू कैसे वरण प्यारी के चरण चारु नौनहूते नरमै ।
सहिज लिलाई वरणी न जाइ काशीराम चुई सी परत अवताकी मत भरमै ।
एंडी ठकुराइन की नायन जो गहित करि ईंगर को रंग चढ आयो दरबर मै ।
दयो हैं कि देनो है विचारै सोचै वार वार वावरी सी हूय रहीं महावरी लै कर मै ॥३॥

केकी जव कूकैं तव सूकैं प्रान काशीराम हरी हरी भूमै देप सोच सरसत है ।
भाकसी भयो है भौन सहौं दुप कौन कौन देत क्षत्र लौंन जव पौन परसत हैं ।
वियत नरेश तुम्ह छाये परदेश इणाँ विपत हमारी यूं विधाता दरसत है ।
वेग सुध लेहु ना तो छूट जैहै देह अव कोप्यो है अदेह अवर मेह वरसत है ॥ ४ ॥

प्यारी जो न पाऊं आज प्रेमकाज हूँ सो काज मोहि फेर परयो हरि कैसे जी जीइतु है ।
चिरईन मिली आइ कोऊ न सिंघान पाइ, डौसन प्यास जाइ कैसे पीजयतु है ।
मानवे मणायइवे कों दौरवे कौं धाइवे को याही दुप काशीराम देह छीजयतु है ।
आंव तज आँवरे सो चापा चाहैं आँव रस वैद हूँ कै चावर कहू पीछ पीजयतु है ॥ ५ ॥

॥ दोहरा ॥

लप गुरजन विच कमल सों सीस छुहायो स्याम ।
हर सनमुख कर आरती हीए लगाई वाम ॥ ६ ॥
भोरही भीर अहीरण की जमुना जल तीर भई अति भारी ।
काशी कहैं परवीन महानंद नंदन श्रीवृषभान की राजदुलारी ।
उनै तसलीम करी जु दुहूँ चप चार भये तौ किनू न निहारी ।
लाल गहे इत पाग की पेच उतैं विंदुरी उन भाल सवारी ॥ ६ ॥

आइ रुत पावस पवन पुरवाई तैसी काशीनाथ,
तैसीये तडित लागी लपकन ।
उन आए वादर विहंग उठे चहू उर (? ओर),
कुंजन अधयारी लागी लपकन ।
झली झहनात ठौर ठौर मोर मोर सुन,
विरह अगन जर छाती लागी तपकन ।
हेर हार हरित निहार पंथ चार जाम पीय के,
वियोग नैन रैनी लागी टपकन ॥ ७ ॥

सुरत सार की वनाई है विरंच पच कंचन जडत चिंतामन जे जराव की ।
रानी कमला की पिय आगम की कहिनहार सुरसर सपी सुप देनी प्रभुपाइ की ।
वेद मैं वपानी तिहूँ लोकन की पटरानी चहू चक्र जानी सेनापति के सहाइ की ।
देव दुप दंडन भरथ सिर मंडन ए दोउ अघ पंडन परावों रघुराइ की ॥ ८ ॥
सील भरी परी करी अयाने कहैं मैं आंपे घरी घरी घरही मैं घूँघट संभाल है ।

गोकुल मै वसि कुल कामनी कहाइ ससि,
सूर ते छिपाइ मुप नीचोही निहार लै।
कहैं 'कवि काशीराम' सीता इंदुमती
कैसो सती पार्वती कैसो पतिवृत पारिलै।
जौंलौ तेरी दीठि न परत नंदलाल तौंलौं,
गरवेली ग्वालिनि गँवारि गाल मारि लै॥ ९॥

संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय—शृंगार रस के कवित्तों का संग्रह।

टिप्पणी—कुल कवित्तों की संख्या ९ है। पाँचवें कवित्त के पश्चात् एक दोहा भी हैं। ये सब दो पत्रों में हैं। जो एक ही जगह पर न होकर दूर-दूर सिले हुए हैं। इससे प्रकट होता है कि हस्तलेख एक बार अस्त व्यस्त दशा में हो गया था और उसकी सिलाई टूट गई थी। दुबारा सिलते समय पत्रों को व्यवस्थित रूप में लगाने का प्रयत्न नहीं किया गया। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। परंतु प्रस्तुत कवित्त वलीकृत 'अद्वैत प्रकाश' के साथ एक हस्तलेख में हैं। 'अद्वैत प्रकाश' का लिपिकाल संवत् १७८७ वि० है, अतः इनका भी लिपिकाल यही माना जाना उचित है।

संख्या २६. उषा चरित्र, रचयिता—जनकिशोर, स्थान—रामगढ़, कागज—देशी, पत्र—२९, आकार—६.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६४ आश्विन शुक्ल १० गुरुवार, लिपिकाल—चैत्र वदी ५ शुक्रवार, संवत् १८१९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीविहारी जी का मंदिर महाजनी टोला, इलाहाबाद।

आदि—श्री महागणपते नमः॥ अथ उषा चरित्र जन किसोर कृत लिख्यते॥

॥ दोहा॥

नमो नमो सब जगत गुर, सुंदर सब सुप सार॥
जीवनि दास किसोर की, श्री वसदेव कुमार॥ १॥

× × ×

॥ अरिल॥

पहौकर मथुरा विचि सुदेस सुगम है।
सब सुपवास विलास रामगढ़ नाम है॥
कमलापति वाराह विराजत है तहाँ।
परिहाँ चरणि सरणि चव चरण करत आनंद महा॥

दोहा

कुल पारीक किसोर जन नग्र रामगढ़ बास॥
राधावर के आसरै हरि भक्तन कौ दास॥ ७॥

संवत सत्रह सै वरिष साठि उपरै च्यारि (१७६४ वि०)
सुकल दसै आसोज की गुरुबासर सुपकारि
उपा अर अनुरुद्ध कौ वरन्यौ सुजस विवाह
द्वारावती घर घर सकल वहौ विधि भयो उछाह

अंत— सवैया

सिरी को संहिता पढ़ाई ही 'किसोर किन,
गनिका न गंगा जल कवहू अन्हाई जू ॥
अजामेल विप्र अति पापनि को अधिकरी,
नाव के प्रताप पापीनिहू गति पाई जू ॥
गरल लगाइ आई पूतना पयौ धरनि,
प्रभु को अरपि पति देवता कहाई जू ॥
नरक निवारन दलिद्र दुप टारन,
अनेक अधजन है कृष्ण की बड़ाई जू ॥

इति श्री उपा अनुरुद्ध चरित्र संपूरण शुभं। संवत् १८१९ मिती चैत्र वदी ५ शुक्रवार लिखितं महाआत्मा नैणसुप सवाई जैपुर मध्ये राज्ये श्री सवाई माधव सिंह जी ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में उषा और अनिरुद्ध की कथा का वर्णन है। वाणासुर शंकर भगवान् की तपस्या से सहस्र भुजाएँ और अनंत शक्ति का वरदान प्राप्त करके अपनी राजधानी शोणितपुर में आता है। कालांतर पर उसके यहाँ उपा का जन्म होता है। उपा पार्वती की सेवा में अपना शैशव काल व्यतीत करती है। जब युवती होती है तो पार्वती जी उसे यह वरदान देती हैं कि जिसे तुम स्वप्न में देखकर मुग्ध होगी वही तुम्हारा वर होगा। घर आकर उपा अलग प्रासाद में रहने लगती है। स्वप्न में अनिरुद्ध को देखकर वह आसक्त होती है। उसकी सखी चित्रलेखा आसुरी शक्ति से अनिरुद्ध को उषा के पास ले आती है। दोनों का गंधर्व विवाह होता है और आनंदपूर्वक रहने लगते हैं। वाणासुर पता चलने पर अनिरुद्ध को वंदी बनाता है। यादवों की चढ़ाई होती है। कृष्ण के विरुद्ध शंकर बाणासुर की सहायता करते हैं; परंतु अंत में वाणासुर पराजित होता है और उपा के साथ अनिरुद्ध का विवाह होता है।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि दोपपूर्ण है।

संख्या २७. रुक्मिणी विवाह, रचयिता—किसन, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश जोधपुर, जोधपुर।

आदि— (राग सोरठी)

पहली प्रणवूं देव गणेश सुर तेतीसा रथी,
सरस्वती स्वामिनी तुम पाई लागूँ देहि माता वर भारथी

वर देहि माता भारथी सुर सारथी सुंडाल
प्रणउं तो नगरी द्वारिका श्री नगर तट गोपाल
बारह जोजन कनक सैं गढ च्यारि पोलि प्रकार
कनक मंदिर मालिया कनक में गोख विहार ॥

आदि—(पत्र ६ से)—रुक्मिणी विवाह लो। (इकताली राग सोरठी; जाती तालो)

विद्दभ देस कुंदनपुर नगरी,
भीषम नृपति तहँ···सगरी ॥ टेक ॥
पंच पुत्र जाके कन्या हो रुक्मनी
तीनी लोक तरुनी सिरहरनी ॥

अंत—रुक्मिनी व्याह कथ्यो ज्यन क्रिस्ने सीखै सुनैरु गावै।
······अरु काम मुकती फल च्यारि पदारथ पावै ॥
भगती देत अवतार विमल जस भूतल लीला धारी।
गिरिवर धर राधा बल्लभ परजाड़ो (?) जाओ जन बलिहारी ॥ ८७ ॥
आभोग संपूर्ण ॥

इति श्री रुकमिनी व्याह संपूरण समाप्त। शुभ मस्तु श्रीरस्तु। संवत वर्ष भा (फा) गुण वदि इतिवार पीडका (प्रतिपद) लिखत बाई श्री रतनावती जी नरवर में ॥

विषय—श्री कृष्ण और रुक्मिणी विवाह वर्णन।

संख्या २८. किसनिया रा दूहा, रचयिता—किसनिया, कागज—पीला पतला पत्र—१, आकार—८ × ५·७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्) —६, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि—हाथी चोहटै हेक लप गलियां कूकर लेवै।
वडफ्या तसौ विवेक करेन षीजे किसनिया ॥ १२ ॥

× × ×

कोई नर केरे नार हटवाडे मेला हुआ।
सुपना ज्यू संसार खटो विशांणो किसनीया ॥ १३ ॥

अंत—हाटा मांहि हजार, मन में लू केता मिलों।
जीयण वेला जुहार, कोई क आपे किसनीयां ॥ १७ ॥

इति किसनिया रा दूहा संपूर्ण।
विषय—नीति विषयक सोरठों का संग्रह।

संख्या २९. युक्ति तरंगिणी, रचयिता—कुलपति मिश्र, कागज—देशी, पत्र—७७, आकार—१०×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७३३, पूर्ण,

रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४३ वि०, लिपिकाल—सं० १९०७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, 'रत्नाकर संग्रह', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि— ॐ

श्री गणेशाय नमः। अथ युक्ति तरंगिणी लिख्यते। दोहा

गोरी राधा सुमिरियै जाकैं मोहन मित्त
कियौ राग रंगि श्याम कौं वीर वधू रगि चित्त। १
प्रिया अंक धरि वंक मुप व्याल माल ससि भाल,
विघन हरौ अनुराग वपु सिव गौरी को लाल। २
चर थावर जगु जिन रच्यौ निजगुन तीन मिलाय,
जो चाहत बानी सरसु परसि भवानी पाय। ३

× × ×

कुलपति जुगति तरंगिनी रची मिलै सबसांज,
नवरस भूपन भाव सब सोधि लेहु कविराज। ३२
सहृदय करिहयाँ भावना तव कहियौ गुन दोप,
पाप कुटिलता होत है सहृदयता सौं मोप। ३३
इहाँ प्रथम वरनन कियौ राधा हरि को ध्यान,
बहुरि नायका भेद फिरी रति वर्नंनु पहिचानि। ३४

अंत—उदासीन ज्ञानी रसिक निज भगतन के हेत,
कीनी जुगति तरंगिनी कुलपति प्रेम निकेत। ७०२
गुण[3] रु वेद[4] रिषि-७ ससि-१ वरषर सांवनि सुदि की तीज,
कीनी जुगति तरंगिनी तन मन हरि रस भीज। ७०३
जय जय देवकि तनय हरि जय जय नंद किसोर,
जय जय राधा रवन इत चितवो दग की कोर। ७०४

इति श्री मिश्र कुलपति विरचितायां युगति तरंगिनी संपूर्ण समाप्ति मगमत्त॥ लिपितं कवि ईश्वर वंशीधर भट्टे चिरंजीव पंडित पन्नालाल पठनार्थं मिदं। शुभमस्तु।

इसके नीचे दूसरी रोशनाई से लिखा है।

इति श्री कुलपति मिश्र विरचिताया जुगति तरंगिनी संपूर्ण समाप्तं लिखितं चत्रभुज औलाद (पोता) कुलपति जी की मिती आपाढ़ वदी ८ एतवार संवत् १९०७ सा० संवत् १९०६, रचनाकाल—सं० १७४३ वि०।

विषय—नखशिख और नायिकाभेद तथा रसों का वर्णन।

रचनाकाल

गुण[3] वेद[4] रिषि[7] ससि[1] वरष सांवनि सुदि की तीज।
कीनी जुगति तरंगिनी तन मन हरि रस भीज ॥ ७०३ ॥

टिप्पणी इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसको कुलपति मिश्र के पौत्र चतुरभुज (चत्रभुज) ने लिखा था।

संख्या ३० क. अर्जुन गीता या राम रतन गीता, रचयिता—कुशलसिंह, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—५.६×१२.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि - नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० राजाराम, पंडित का पुरवा, डा०—अटामपुर, इलाहाबाद।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ श्री रामरतन गीता ॥ लिप्यते ॥

श्री गुरु विष्णु के चरन मनाउ। जेहि प्रसाद गोविंद गुन गाउ ॥
श्री विष्णु अर्जुन रण बानी। गुरु प्रसाद कछु कहौं बपानी ॥
अर्जुन कृष्ण भये इक ठई। ऐक समै श्री जदुराई ॥
धूप दीप लै आरति कीन्हा। चरण धोइ चरणोदक लीन्हा ॥
हाथ जोरि अर्जुन भए ठाढ़े। प्रेम प्रीति हृदय मह बाढे ॥
ऐक संदेह अहे मन मोरे। कहत आहो दुनौ कर जोरे ॥
श्री कृष्ण बोले विहँसाई। अर्जुन मोहि कहौ समुझाई ॥

दोहा

तीन लोक के ठाकुर दीन बंधु नंदलाल ॥
विनती करौं अधीन मै भोपहु वचन रसाल ॥

अंत— अन जानत कीन्ह अपकारी
त्राहि त्राहि कै करै पुकारी,
साधु के चरन मन मों रापै,
प्रगट होए सुप कबहु न भापै ॥
तब ही तै मन भएउ हुलासा,
साधु के चरन कीन्ह मन आसा ॥
एही भाव रापो चित लाई,
तब दाया कछु कीन्ह गुसाई ॥
तब कछु ग्यान ह्रिदे मह आवा,
राम रतन गीता प्रभु गावा ॥
धनदारा सुत बंधौ आही,
धंधा कै जानेउ मन माही ॥

ऐहि विधि गुरु दया जब कीएउ,
सरौ छुटि निर्मल तन भएऊ ॥

दोहा

गुरु दयाल भए मोपर छुटी गए सब भ्रम,
रामनाम चित लाईकै अवर न जानेऊ भरम।
इति श्री रामरतन गीता संपूरनं श्री

विषय—मोक्ष किस प्रकार मिलता है और कर्म करने से मनुष्य कौन कौन गति को प्राप्त करता है, यही विषय श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में वर्णन किया गया है।

संख्या ३० ख. अर्जुन गीता या रामरतन गीता, रचयिता—कुशलसिंह, कागज—देशी, पत्र—४८, आकार—६३⁄४×६१⁄४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ वि०=सन् १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० चन्द्रभानसिंह जी, स्थान और डा०—रतसंड, जि०—बलिया, वर्तमान पता—मैनेजर भारती प्रेस, बलिया।

आदि—श्री गनेस साये नमहः श्री पोथी अरजुन गीता ॥ श्री कथा आरंभः ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु वीस्न के चरन मनावो। जेही प्रसाद गोविंद गुन गावों ॥
श्री कृष्ण अरजुन रस बानी। गुर प्रसाद कछु कहो वपानी ॥
एक समै स्री जादव राई। आरजुन सहीत भै एक ठाई ॥
धूप दीप लै आरती कीना। चरनोदक लैमाथे दीन्हा ॥
हाथ जोरी आरजुन भै ठाढ़ा। कछु शंका मन मह जो बाढ़ा ॥

॥ दोहा ॥

तीन लोक के दाता दीन बंधु नंदलाल।
वीनती करो अधीन होइ भाष्यो वचन रसाल ॥

चौपाई

शंशै एक है चीत मोरे। कहत अहेउ दुनो कर जोरे ॥
स्री क्रीस्न जी कहेउ वीहसाई। आरजुन सुनहु मन चितलाई ॥

अंत—राम रतन गीता प्रभु भाषा। परम तंतु के आरजुन राषा ॥
श्रीमुख गीता पूरन भैऊ। आरजुन के संशै सब गैऊ ॥
श्री कृस्न आरजुन गुसीकीन्हा। एक ठाव सब कहवे लीन्हा ॥
भाषा कुशल शीघ तेही नामा। कीपा गुरुदेव अवर श्रीरामा ॥
श्रीमुष गीता अम्रीत बानी। गुर प्रशाद भाषा रसजानी ॥
बुधि अव ज्ञान गुरु मोही दीन्हा। उत्तीम अर्थ जो लीपे लीन्हा ॥

नाम भेद गुरु मुष ते पावा। दाआ कीन्ह ग्यान मोही आवा ॥
दोशरे कीन्ह शाधु की सेवा। तीन्ह प्रशाद पाए मै मेवा ॥
देषो बुझी जौन्ही दै मोही। रामरतन गीता ते आन न आंही ॥
काआ माआ मीथा मै जाना। तब पुनीत पाएऊ संकर ध्याना ॥
देषेउ जग कोई थीर ताही। मीथा कै जानो चीत माही ॥
धन्य दारा सुत बंधु जो आही। धंधा के जानेउं चीत माही ॥
अनजानत कीन्ह अपकारा। त्राही त्राही के कीन्ह पुकारा ॥
जब जीव पेह जग भे उदाशा। स्वंधा वरन मन पुजी आशा ॥
प्रगट होई मुष कबहु न भाषा। हरी की दाआ पुजी अवीलाषा ॥
एही भाती राषा चीत लाई। जब कछु ग्यान हृदै मो आई ॥
एही वीधी गुरदेआल मोही कैउ। संसै छुटी नृमल तन भैउ ॥

॥ दोहा ॥

गुर देआल मै मोकह छुटी गए सब भर्म।
राम नाम चीत लागे अवर न जानेऊ कर्म ॥

इति स्री रामरतन गीता समापतः जो प्रती देष्या शो लीष्या मम दोष न दीयते ॥ समत १८९६ वेशन १२४६ शाल ॥

विषय—मोक्ष किस प्रकार मिलता है और कर्म करने से मनुष्य कौन कौन गति को प्राप्त करता है, यही विषय श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में वर्णन किया गया है।

संख्या ३१ क. धमारि, रचयिता—कृष्णदास, कागज—बाँसी, पत्र—२५, आकार—७ X ५३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, बनारस।

आदि—श्री राधावल्लभो जयति। श्री हरिवंश चन्द्रोजयति। अथ धमारि लिख्यते।

देखहु श्री वृंदावन मोहन अति अभिराम
आयौ मधु रितु सेवतु महि हरषि घन स्याम। १
आन विविध संचारी तरु संपति व्रजनाथ
वीथी सकल बिलोकहु प्रांन प्रिया के साथ। २
पहिलैं असित पलास नि पुनिकलिक······रुनाति
मानहु धूमित विष······रानल किमपि जराति। ३
जि···कित सत वर गनि के कुसुम···विगसात
मानहु दिसि दिसि जत जुव जस उमगनि माल। ४

अंत—पद होरा। राग परज।

खेलैं री रंग भीनी होरी। व्यास सुवन की सुंदर जोरी।
नीलांवर अंचल उर मोरैं झलमली किरनि किनारी कोरैं

मनु वदन विधु मंडल जोरै । निरषि रहें पिय नयन चकोर । १
भरि लीनी सौंधे पिचकारी । घात गहन मिस अनंत निहारी ।
तितही नेकु निहुरि हरि निरख्यो । फिरि मुठि कैं सुंदरि मुख छिरक्यौ ।२
मोहन मुठी गुलाल की डारी । मनौं अपने अनुराग सिंगारी
सनमुख आवत भूलि सांवरौ । मंडरावत मुप फूल भांवरौ । ३
नाचत कुँवर बजावत मुरली । झुणु णु णु नूपुरधुन सुरली
रिझन रिझन रिझवार परस्पर । कृष्ण हित रहत भुजन भर । ४
॥ पद २ ॥

विषय—श्री कृष्ण की धमारि लीला का वर्णन ।

संख्या ३१ ख. सिद्धांत के पद, रचयिता—कृष्णदास हित, स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद ।

आदि—॥ राग सारंग ॥

मन तुरंग चंचल अति भारी ।
ता सम तूल चलत नहि कोऊ चहुँ दिसि फिरत शब्द करि तारी ॥
श्री भागवत रीति मारग शुक गुन गति सुष कहिवे तें न्यारी ॥
फेरो प्रथम सहज की डोरी जौ चाहौ कीयौ असवारी ॥
तसकर पाँच निकट तहां निवसत तिमिर अज्ञान प्रवल अंधियारी ॥
अति अमोल तातैं याके हित जतन जुगत रापौ रषवारी ॥
गुर कौ बचन दुवागौ आगैं साच मेप नहि जात उपारी ॥
उत्तम ठांउ साधु की संगति इहि विधि रापौ सुरति पछारी ॥
नित्याचार पुरहरौ कीजै दया झूल तन परम सुपारी ॥
सुमिरन सार करो निसि वासर छमा कायजा हो हुसियारी ॥
धरि जनि प्रीति तंग कसि कथै ग्यान कटी लै दै करियारी ॥
श्री कृष्णदास संतोष सहित हित चढ़ि न परै जौ हरि हितकारी ॥

अंत—प्रभु जू करैं सु सेवक मानैं ॥
अपमानौं ईं लाभ हानि तकि मन मैं गुन अरु दोष न आनैं ॥
सुत दारा गृह धन वधन सब अपनो करि नहिं जानैं ॥
जो हित करत राधिका वल्लभ ताहि कहा पहिचानैं ॥
कबहूँ न करि हिय सोच पोच तजि जाके हाथ विकानैं ॥
श्री कृष्णदास हित धरि विवेक चित निसि दिन जसहि बखानैं ॥
इति सिद्धान्त के पद संपूर्ण

विषय—राधा कृष्ण की भक्ति वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'सिद्धांत के पद' के रचयिता कृष्णदास राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे। खोज में मिले इस नाम के कवियों से ये सर्वथा भिन्न विदित होते हैं। श्री हित हरिवंश जी की 'चौरासी' में इनकी रचित फलस्तुति बराबर दी जाती है। इनके समय का पता न लग सका। रचनाकाल लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

संख्या ३९. कृष्णलीलामृत लहरी (संग्रह), रचयिता—कृष्णप्रसाद भट्ट (संग्रहकार), कागज—आधुनिक, पत्र—६६, आकार—१९¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी। प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—अथ ग्रंथ प्रारंभ ॥

अथ कृष्ण जन्मोत्सव लीला लं० १ ॥

श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥ अथ द्विजकुल दीपक गुज्जर भट्ट श्री चिंतामणि तस्यात्मज कृष्ण प्रसाद कृत संग्रह श्री कृष्ण लीलामृत लहरी ग्रंथ प्रारंभः ॥

॥ तत्र ग्रंथ प्रयोजन ॥ तत्र प्रथम गनपति वंदना ॥

॥ दीन दयाल कवि ॥

॥ कवित्त ॥

विनसे विघन वृंद द्वंद पद वदंतही मान अरविंद जे मलिंद परसत हैं।
ध्यावति मुनिंद गुन गावत कविंद जासु पावत पराग अनुराग सरसत है।
भागैं दुरभाग अंगराग देपें दीनद्याल वदन प्रताप पापपुंज धरसत है।
ज्यौं ज्यौं पिताकी सुत वक्रतुंद झांकी परै त्यौं त्यौं कविता की छुंड वाकी दरसत हैं ॥ १ ॥

× × ×

॥ दोहा ॥

आदि गौड द्विज कुल कमल माध्ववंस अवतंश।
गोस्वामी हरि भगत वर या विधिजगत प्रसंश ॥ १० ॥
गुरु गोसाँई गौडिया राधा रमणी ख्यात।
श्री राधा गोविंद जू जासु नाम विख्यात ॥ ११ ॥
इनहीं के सतसंग लहि परम कृपा की पोप।
गुज्जर कृष्ण प्रसाद को भयो कवित्त को सौप ॥ १२ ॥
वहु कवि की कवितान कौं हम जु एकठी कीन।
तव राधा गोविंद जू यह अनुसासन दीन्ह ॥ १३ ॥
संग्रह एक रचहु परम श्री हरि के गुन ग्राम।
सिरी कृष्ण लीला अमृत लहरी राषहु नाम ॥ १४ ॥

सुंदर संग्रह विरचिये कृष्णदास बड़ भाग।
जाके पढ़े सुने बढ़े हरिपद में अनुराग ॥ १५ ॥
यही प्रयोजन पाइकें आग्याधारी सीस।
सिरी कृष्ण लीला अमृत विरच्यौ विस्वावीस ॥ १६ ॥

॥ इति ग्रंथ प्रयोजनम् ॥

अंत — ॥ सवैया ॥

सूर को प्रेम कहा कहियै तन मैं धन मै मनहूँ न दयो है।
वीर वचा विरच्यौ वल वंडन हीँ इत मैं उतमै चितयो है।
फौज भकोरी कै द्द्यंडन मोरि कै राचि अनूपम चेप भयो है।
फोरि अमीरन मंडल की मरि सूरज मंडन फोरि गयो है ॥ ३६ ॥

॥ दोहा ॥

जैसे पूरो सूरिवाँ सर साझै सहि ······ —अपूर्ण

विषय—श्री कृष्ण लीला का वर्णन।

इसमें १२ तरंग हैं जिनके नाम नीचे दिये जाते हैं :—

१—प्रथम तरंग—कृष्ण जन्मोत्सव, वंशावली, पालना, छठी, दसूठन लीला, अन्नप्रासन लीला; कर्णवेध, बाललीला, राधा जन्मोत्सव, बंसावली, राधा पालना, वावन जन्मोत्सव।

२—द्वितीय तरंग—सांझी फूल वीनन, दसहरा, सरदलीला, रामलीला वंसीलीला।

३—त्रितीय तरंग—धन तेरस, रूप चतुर्दशी, दिवाली, अन्नकूट, भाईदूज, गोपाष्टमी लीला, प्रवोधनी लीला, चीरहरन लीला।

४—चतुर्थ तरंग—हेमंत सिसिर लीला, दानलीला, मानलीला।

५—पंचम् तरंग—बसंत लीला, होली, फूल डोल, लीलाएँ।

६—षष्टम् तरंग—रामजन्मोत्सव, राम बाल लीला, रामकुमार लीला।

७—सप्तम् तरंग—अक्षै तृतीया, ग्रीषमलीला, नृसिंह जन्मोत्सव, जलकेलि लीलाएँ।

८—अष्टम् तरंग—रथयात्रा लीला, पावसलीला, झूलन लीला, पवित्रालीला, रासीलीला।

९—नवम् तरंग—वियोग श्रृंगार लीला, संयोग श्रृंगार लीला।

१०—दशम् तरंग—सौंदर्यलीला।

११—एकादश तरंग—स्फुट लीला।

१२—द्वादश तरंग—निर्वेद लीला।

इस संग्रह में निम्नलिखित कवियों की रचनाएँ हैं :—

१—दीनदयाल कवि	२—गोविंद	३—नायक
४—नाथ	५—देव	६—दयानिधि
७—रसखानि	८—रहीम	९—निजकवि (गोसांई)
१०—उदार कवि	११—लाल कवि	१२—सूरत कवि
१३—ग्वाल कवि	१४—केशव	१५—नागरीदास
१६—रसिकलाल	१७—निपट	१८—बलदेव
१९—पदमाकर	२०—हनुमान कवि	२१—कवि तोष
२२—गिरधारी कवि	२३—प्रेमसुख	२४—कवि सहाय
२५—नेककवि	२६—मोहन कवि	२७—बृजराज कवि
२८—गिरधर कवि	२९—रघुनाथ	३०—घनस्याम
३१—कासीराम	३२—देवीदास	३३—जुगति
३४—भूषन	३५—परसाद	३६—विनायक
३७—जुवराज	३८—सरदार	३९—नागर
४०—आनंदघन	४१—जैसुख जु	४२—कालिदास
४३—सनेही	४४—आनंद कवि	४५—तुलसीदास (गोस्वामी जी)
४६—सुंदर	४७—भूधर	४८—स्याम
४९—रसिक विहारी		

टिप्पणी—संग्रह खर्राकार है। प्रत्येक पत्र अलग-अलग हैं। यह अपूर्ण है। इसमें समस्त १२ तरंगें हैं; परंतु १, ४, ७, ११ और १२वें तरंगों का पता नहीं लगता। लिपिकार ने कहीं-कहीं पत्र के एक ही ओर लिखा है और कहीं-कहीं दोनों ओर। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम कृष्णप्रसाद भट्ट है। आरंभ के अंश से प्रकट होता है कि इनके पिता का नाम चिंतामणि था। ये गुजरात के भट्ट ब्राह्मण थे। माध्व गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी गोस्वामी श्री राधा गोविंदजी इनके गुरु थे जिनके सत्संग से इन्हें कवित्तों की ओर रुचि हुई। इन्होंने बहुत से कवियों के कवित्त सवैया इकट्ठे किए और श्री राधा गोविंदजी के आदेशानुसार प्रस्तुत संग्रह तैयार किया। संग्रह का नाम कहीं-कहीं तरंगों की पुष्पिकाओं में 'श्री कृष्णलीला सिंधु' भी लिखा मिलता है। साहित्यिक दृष्टि से ग्रंथ उपयोगी है। यद्यपि रचयिता का समय ज्ञात नहीं है तथापि रचनाशैली से वह बहुत प्राचीन नहीं जान पड़ता।

संख्या ३३. पदावली, रचयिता—केवलराम वृंदावन जीवन, कागज—देशी, पत्र—१८१, आकार—८.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०७२,

पूर्ण (प्रायः), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस।

आदि—पत्र ११ से उद्धृत—

॥ रामकली ॥ सत संगत गोपाल सरन।
धर्म सरूप अभै के दाता हरि रंग राता दुप हरन ॥
तिनके मध पदारथ स्वारथ आरत प्रेमी दुतर तरन ॥
बचन विलास वाद नहि भाषै हीयें रापें विसु धरन ॥
ध्रु प्रहलाद प्रतग्या पूरन हरि की भगत करो कोई वरन ॥
केवलराम वृंदावन जीवन ब्रजवाला मन कृष्ण चरन ॥

अंत—॥ धनासिरी ॥ वधाई ॥

जसोदा गोपाल पालनै झुलावै ॥
प्रेम कलोलनि सों नंद रानी आँनद लाड़ लड़ावै ॥
किलकत कँवल नैन सुंदर घन हँसि हसि कंठ लगावै ॥
जाको ध्यान धरत ब्रह्मादिक वाकों गोद खिलावै ॥
वारत प्रान करत न्योछावर हरषि हरपि गुन गावै ॥
केवल राम वृंदावन जीवन हित विन मन में न आवै ॥

केवलराम वृंदावन जीवन के पद

(१) राग रामकली

ऐसो औसर वहुर न होय।
हरि कथा नित श्रवन करिलै वृथा जनम न खोय ॥
चेतरे मति मंद मूरख मोह नींद न सोय ॥
गाय निसि दिन गोविंद के गुन राखि हिरदैं पोय ॥
कृष्ण प्रान सनेहिया सों हितू नाहिन कोय ॥
केवल राम वृंदावन जीवन सरन साँच समोय ॥

(२) राग पंचम

सरस रस रंग भीने नवल रसिक हरि प्रात ही जात इतरात सोहैं।
प्रेम प्रतिम के अैन हित हुलस जागे रैंन चैंन चित निरपि दुति मैंन मोहैं ॥
मंद मृदु हसनि छवि लसन मुख माधुरी ललित कच कुटिल द्दग वंक मोहैं ॥
मदन गोपाल अवलोकि धीरज धरै कहोरी सजनी ऐसी वालको है।
चक्रत चितवत चित्र करत चंचल च्पन विसरि गति विवस बावरी होहैं ॥
सोभा को सदन सुप वदन की जोति लपि होत हैं कोट रवि ससि लजोंहैं ॥
लपट उदगार कंचन वसन प्रेम सिंगार तन मन लगों हैं ॥
केवलराम वृंदावन जीवन छकी सव सपी छवि रूप जो हैं ॥

(३) रागपट

गोपाल लाल व्रजराज कन्हैया हरि मेरो मन लीनौ री ॥
सुंदरवर गिरधरन साँवरो नव नागर रंग भीनोरी ॥
मोर मुकुट जगमग छवि जोहत मुप उजियारौ प्यारो री ॥
कुंडल कान्त घुघरवारी अलकें कमल दल नैन दुलारो री ॥
भावन पुनि वसन चक चौंधी उर वैजन्ती माला री ॥
गोकुल चंद चकोर केर दग भइ हैं वावरी बाला री ॥
विसरत नाहि विसारी मूरत संग सुधारस पीयेरी ॥
केवलराम वृंदावन जीवन रीझ चटपटी हीये री ॥

(४) राग विभाक्ष

नंद को किशोर प्रात देपि री कन्हैया ॥
अति छवि गोपाल लाल धेन को दुहइया ॥
सोभित सुरंग पाग सुंदर मुषारविंद ।
वाँकी भोहें चंचल दग वंसी को वजैया ॥
केवलराम वृंदावन जीवन झुकि झुकि रहीं स्याम पलकें ॥
कृष्ण - चंद्र दूलह की राधिका दुलाहिया ॥

(५) राग विभास

घनन घनन घन नूपुर वाजत निर्तत लाल ललित ललना संग ॥
ताल मृदंग बांसुरी सुलपगत ताता थेई थेई सुगंध ॥
गावत विभास रास मंडल में रीझ भीज रस गौर स्याम अंग ॥
केवल राम वृंदावन जीवन बंसीवट तट वरपत प्रेम रंग ॥

(६) राग देव गंधार

सपी लपि सुंदर श्री नंदलाल ।
मुकुट की लटकि चटकि कुंडल की टटकी उर वनमाल ॥
चंदन पौर अलक घुंघरारी चंचल नैन विसाल ॥
मृदु मुसकानि माधुरी सोहन नागर रूप रसाल ॥
भृकुटी वंक चपल चितवन चित चेटक मदन गोपाल ॥
केवलराम वृंदावन जीवन जन हित दीन दयाल ॥

(७) राग देवगंधार ॥

सपी हम आजु सुदिन करि जान्यो ।
निरखे नंद किसोर भोर ही नैननि अति सुष मान्यौ ॥
अति कमनीय कमल दल लोचन सुंदरता रस सान्यौ ॥
केवलराम वृंदावन, जीवन जग जीवन उर आन्यौ ॥

(८) राग देवगंधार

कहौ कोऊ प्रेम लपेटी बात ॥
कान्हर बाल विनोद भावते सुनि सुनि हियो सिरात ॥
गोकुल चंद रसिक नंद नंदन स्याम सलोने गात ॥
निरषि हरी रंग भीने बागे सबै सषी ललचात ॥
शोभा सिंधु किशोर मनोहर जगमग छवि परभात ॥
केवल राम वृंदावन जीवन गोकुल चंद पियारो ॥

(९) राग देव गंधार

ब्रज में पाए प्रान अधार ॥
माँषन माँग देव जिव अपनौ सुनिहै ग्वाल गवाँर ॥
सुंदर स्याम कमल दल लोचन खेलत नंद द्वार ॥
केवल राम वृंदावन जीवन प्रीतम कृष्ण मुरार ॥

(१०) देवगंधार

हेरत नंद दुलारौ हित सों ॥
मन मोहन रंग भीने बागें आन मिलत जित तित सों ॥
सुंदर छवि सोभा कौं सोभा रूप माधुरी चित सों ॥
बाजत ही कहुँ सुनी बाँसुरी प्रेम बढ़त है उतसों ॥
ये ब्रजबाल गोपाल दुहाई पात लला की नित सों ॥
केवल राम विंदावन जीवन बात बाहरी विन सों ॥

(११) देव गंधार

हरि छवि हेरत नैन सिराने ।
चित्र लिखी सी करी साँवरे मोतन तब मुसकाने ॥
गहें कुंज की डार मनोहर रंग भीने अलसाने ॥
सुंदर घन घेरे दामिन सी राधेवर मन माने ॥
हित की कहिय न जात बातरी नंद नंदन ललचाने ॥
केवलराम वृंदावन जीवन विन ही मोल विकाने ॥

(१२) देव गंधार

नागर नैन चकोरन चंद ।
सोभा जगमगात सुंदर वर गिरधारी गोविंद ॥
गोकुल गाँव प्रगट लीला ब्रज भावन जसुदानंद ॥
केवल राम वृंदावन जीवन राधे अति आनंद ॥

(१३) देवगंधार

हसत दोउ कुंज महल तें निकसे ॥
प्रेम प्रमोद मोद रस मंडित नवल कमल से विकसे ॥
कलवानी सुपसानी हित चित कुंजत हैं ज्यों पिक से ॥
भूपन वसन विचित्र मनोहर रूपे कछुक-कौतिक से ॥
कुँवरि किसोर रस रंजित छवि छाजत रहे छकिसे ॥
रंग भरे अवलोकन मोहन मदन मुरछ रहे जकसे ॥
ललितादिक द्रग रूप सुधाभर निरपि निरपि हिय हुलसे ॥
केवल राम वृंदावन जीवन वन विनोद सों विलसे ॥

(१४) विलावल

जसुदा मैया लेत वलैया ।
भोर भयो जागो मन मोहन सुंदर गोंहन धेनु दुहइया ॥
नाचत ग्वाल वाल अँगना में आरत गोपी लाल कन्हैया ॥
टेरत सखा साँवरे हसि हसि वोलत हैं संकर्पण भैया ॥
सुप देषें सुप सागर नागर हेरत घर में रांभत गैया ॥
केवल राम वृंदावन जीवन कुंज कुंज रस पेल पिलैया ॥

(१५) विलावल

राधावल्लभ प्रान हमारे ॥
श्री व्रजनाथ अनाथन को धन कवल नैंन नैंनन के तारे ॥
ऊधो कहा कहत हो कहिए मन तें मोहन होत न न्यारे ॥
सुधि आए दुप जात ललन की गोकुल चंद जसोदा वारे ॥
संप चक्र गदा पद्म विराजत नंद किशोर नाम उजियारे ॥
केवलराम वृंदावन जीवन सब काहू के काज सुधारे ॥

(१६) विलावल

हरि विन रह्यो न जाइ ठगीरी नागर नंद सांवरे री माई ॥
मोहन मदन मनोहरि मूरति चित्त चुरायो कुंवर कन्हाई ॥
निरपत शोभा अंग अंग की ये नेना मेरे रहे री लुभाई ॥
मान गुमान कहाँ रह्यो सजनी हँसि चितए हरिहौं मुसकाई ॥
उपजो प्रेम नेम जब कैसो अंतरगति मेरे प्रीति बढ़ाई ॥
रसिक विहारी नवल कुंज में आपुन रीझ रीझ हौं रिझाई ॥
वाजत वंशी वट जमुना तट कहा करों तवतें सुनि आई ॥
केवलराम वृंदावन जीवन वलिहारी लै लगनि लगाई ॥

विषय—प्रस्तुत 'पदावली' का मुख्य विषय तो राधा-कृष्ण से संबंध रखता है; परंतु साथ ही इसके अतिरिक्त बहुत से पद राम, हनुमान, गंगा, ज्ञान, तितिक्षा तथा उपदेश के भी हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत पदावली के रचयिता केवलराम वृंदावन जीवन कोई पंजाबी भक्त विदित होते हैं। 'पदावली' में ब्रजभाषा के अतिरिक्त पंजाबी में भी पद रचना की गई है। इनके इष्टदेव तो राधाकृष्ण ही हैं; परंतु कुछ पद राम, हनुमान, गंगा आदि के विषय में भी हैं, जिससे इनकी धार्मिक सहिष्णुता तथा उदारता का परिचय मिलता है। साहित्यिक दृष्टि से वृंदावन जी की कविता प्रौढ़ तथा सरस है। प्रस्तुत पोथी की लिपि न तो शुद्ध ही है और न सुंदर ही। परंतु इसकी एक विशेषता यह है कि पदों का क्रम विषयानुसार न होकर 'रागों' के अनुसार है।

संख्या ३४. जंबू के रेषते, रचयिता—केशव, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—७$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७१२ वि०, लिपिकाल—सं० १७६५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ श्री पार्श्व प्रणम्य ॥ श्री जिन बीर कौं ध्यायौं ऋषि जंबू गुणगावौं जंबू दीप भरत जानौ पुर राजगृह बपानौ। १ जह लोक वसै सुखीया दीसैन कोइ दुखीया निजधर्म कर्म राजै सब भोग विधि विराजै। २ नर नारि जंह प्रवीना नितुराग रंगभीना रस केलि कालु वीतै नहि वदन पीत भीतै। ३ तह सेवक वर भूपा मनोकाम देव रूपा रिपु राशि वसि जु कीनी पद सेवै भयलीनी। ४ तह सेवि ऋषभनामा सुखसागर को धामा धारणी तासु नारी अति सुंदरि सुखकारी। ५

दोहा

तसु ऋषि चवि सुरग लोकते जंबू सुपन प्रमान
जंबू कुमरु सु अवतर्‌यो पूरव पुण्य प्रधान। ६
सतरा सै वरहोतरै गोईंद वाल मंझारि।
पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि॥

अंत—गहवास वर्ष सोला प्रभु वस्यो सुखकल्लोला दस दोष वर्ष रंगे पध्यो अंग साध संगे। ९१
धरिभाव तणु सुत पीया सब कर्म भारपपीया भयो केवल उजियारा प्रग वेद वर्ष सारा। ९२
सब लोक तिथि वपानै गति आगति जिय जानै निज प्रभू वै पदु दीनो पद मुक्ति आप लीनो। ९३
है एसो जु भिषारी सो वरै सिद्धि नारी मुनि जंबू जसु गावै मन पूछत फलु पावै। ९४

गणि हंस राज ज्ञाता भयो सकल जग विख्याता तसु केशव शिष भाषै गुरु चरण शरण राषै । ९५

दोहा

सतरा सै वरहोत्तरे गोइंदवाल मंझारि पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि । ९६ जंवू के रेपते संपूर्ण संवत् १७६५ अश्वन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ दशिमी दिनं लिपतं जगता ऋषि पठनार्थं वीरा ऋषि शुभं ।

विषय—जंवू कुमार को बाल्यावस्था में ही वैराग्य उत्पन्न हुआ । उनकी माता ने ब्याह करने के लिये बाध्य किया तदनंतर माता की आज्ञानुसार वे कुछ दिन तक गृहस्थाश्रम में रहकर पुनः विरक्त हो गए । संक्षेपतः यही कथा इसमें कही गई है ।

रचनाकाल—सतरा सै वरहोतरै गोइंदवाल मंझारि । पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि ॥

संख्या ३५. रासा श्री केसवदास जी का, रचयिता—केशवदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२½×९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटवड़ागाँव, जिला—बलिया ।

आदि—रासा श्री केशवदास जी का

सब्द रामरसा रासा

निर्गुन नाम देषै कोउ आतम ग्यानी ।
त्रीकुटी संगम मनीदीसै झीलीमीली जोती नीसानी ॥
जाके वीती पोजत फीरै गन गंधर्व मुनी ग्यानी ॥
सोई अविगति पाइया मेटि आवा जानी ॥
रवी संसि दोउ सम भए द्वादस उलटि सयानी ।
नीझर झरला दसो दीसा वरषै अमृत बानी ॥
कोउ सीधा आनंद साराभरीआ चारीउ उपानी ।
गरजत गगन अनंत गती अनहद नाना वानी ॥ १

रामराग परज

पीया थारे रूप लोभानी हो ।
प्रेमठ मोरी मन हरो बिनु दाम बिकानी हो ।
दीपक ग्यान पतंग सो मिली जोती समानी हो ॥ २ ॥
सेंधु भरा जल पुरना सुप सीप समानी हो ।
स्वाती बुंद से हेतु है उरध लगानी हो ॥ ३ ॥

व्यापक पूरन दसव दीसा परगट पहिचानी हो।
'केसो' इयारी गुरु मीले आतम रहिमानी हो ।। ४ ।।
पीया थारे रूप लोभानी हो ॥

विषय—निर्गुन भक्ति तथा आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या ३६. भागवत, रचयिता—केसवदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—... ... ...

इभेंद्र कुंभस्थल खंडनाय। वृंदेश वृंदावन भंडनाय। हंसाय कंसा सुरमर्दनाय नमोस्तु० ॥ ८ ॥

× × ×

गुर गणपति ने सारदा ब्रह्मा वेद व्यास।
नारद शुक शौनक नमूं कहे एन 'केशवदास' ॥ १० ॥
पछे परीक्षरायने कर जोडी करू जुहार।
जे मु सुक संवाद थ्यौ अखिल भुवन उपकार ॥ ११ ॥
व्यास पुत्रवली वंदीए जे मुनिवर गुरू महा जांण।
वेदसार जेणे वधू पावन एह पुरांण ॥ १२ ॥
संसारी पड़ता सहु अवलोकी अंध कूप।
दया करी दीवो करो श्री 'भागवत स्वरूप' ॥ १३ ॥

अंत—बहु आख्यान बार स्कंध। हरि अवतरण सकल समंध ॥
अनेक राजा अविनी तणा। हरि गुण मिनत जे गुण घणा ॥ ४१ ॥
सृष्टि तरणी उत्पति ने नाश। पालण माया तणे प्रकाश ॥
जीव मुक्त जे तत्व चोवीस। प्रकृति पुरुष पुरुषोत्तम ईस ॥ ४२ ॥
अद्भुत जे अवतार चरित्र। प्रेमे कहीया परम पवित्र ॥
कर्म ज्ञाननो कहो विचार। भक्ति योग संयोग तिसार ॥ ४३ ॥

× × ×

कर जोडी स्तुति कीधी घणी। स्वयं स्वयं भूपाणी सुणी ॥
अवधारित में आगें एह। असुर भार अविनी ने जेह ॥ ९० ॥
बलोदेव स्वरछान किंसहु। कथन एकहें तम्हने कहु ॥
गोकुल माहे गोपी गोवाल। नरनारी अथ नान्ह वाल ॥ ९१ ॥
परिषद सहित प्रगट ज्यो तम्हो। आदी से अवूंछं अ—

—अपूर्ण

विषय—भागवत की कथा का वर्णन।

टिप्पणी—ग्रंथ का प्रथम पत्र और सातवें पत्र के पश्चात् का अंश त्रुटित है। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। ग्रंथ की भाषा पश्चिमी राजस्थानी है।

संख्या ३७. पद, रचयिता—कोविद, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१०½ × ६¾ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१; अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—श्री रामो जयति ॥

सिंधु भैरवी

लाल की छवि लखि सखि भूली ॥
देह गेह विसरो पसरो भले नेह मोटति जिमि शूली ॥
कंपित गात बात नहिं निसरत वदन स्वेद कनिका भलि खूली।
कोविद चाहिय वचन अमी अंग संग सजीवन मूलि मुदमुली० २। १।
लाल के लोचन दुख मोचन।
वदत वेद यह भेद अद्भुते मोहि दुखदेत मरो यह शोचन ॥ १ ॥
बावरी कहि पावरी कीनी मोहि सगरी वगरी के जन पोचन।
कोविद राजकुमार विचारहि उचित करहिं लावहिं शिर रोचन। २। २।

अंत—हमारी दृग लाल की दृग लगी :
रयन अयन नहि नयन लगे विन लपिये अचर जन पगी।
कोविद नरनारी उनकर जोइ सोइ ममा जग सरासगी। २। १३ ॥
अली मैं लाल की रस रसी।
मधुर मनोहर मूरति उनकर रयन अयन मन वसी ॥ १०
लोक शोक निज मोक रोक विन मुद विनोद करवसी।
कोविद कवि छवि छकि जकि तकि वकि प्रिय प्रिय जगमुपमसी ॥२।२।१४॥
नयणोरी अरुण क्यो किया वे शोणा।
अणरितु फाग मचाइ चातुर मति ताणी जाणी होणा ॥ १ ॥
झपकि छपावत छवि कवि कोविद हो पेपी चप कोणा ॥ २ । १ । १५ ॥

—अपूर्ण

विषय—राम और सीता के शृंगार तथा क्रीड़ा विहार विषयक पद।

टिप्पणी—ग्रंथ अपूर्ण है। केवल ३ पत्रे प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता का नाम कोविद है। परिचय इनका अज्ञात है, पर नाम प्रत्येक पद में आया है। एक कोविद का उल्लेख खोज विवरण (६–६२, २६–२४) में भी है,

पर यह नहीं प्रकट होता कि वे प्रस्तुत रचयिता ही हैं। वे ओड़छा नरेश महाराज उदोत सिंह और महाराज पृथ्वीसिंह के आश्रित थे तथा संवत् १७७७ के लगभग वर्तमान थे।

संख्या ३८. कंठमाल या विशुनपद कृपाराम जी, रचयिता—कृपाराम, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—७¾ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा बनारस, दाता—श्री सरल चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार, जिला—बलिया।

आदि—वीशनपद क्रीपाराम जी ॥

वंदो जो हरी भगती पीआरे।
ऐह ब्रह्मांड मध्य के जे शभ जहाँ तहाँ मुनीन उचारे ॥ १ ॥
भु अरु भुवलोक शर यह जन तपलोक गनाएव।
शीव अरु वीसन लोक के उपर श्री गौव लोक बताएव ॥ २ ॥ वंदो ॥
तल अरु अतल शुतल के नीचे वीतल तलातल जानेव।
कहो रसातल सेजनाग जहा शोइ पताल बपानेव ॥ ३ ॥ वंदो ॥
जंपुदीप पलछ शालमल कुर अरू क्रोच गनाएव।
पुश कहै कुस करता पीछे लोका लोक शोहाएव ॥ ४ ॥ वंदो ॥
इलावरत रामकं हीरन्य मै पुरशी पुरीशी पुनीत।
केतमाल भा दुप भरप हरी भारत पंड पुनीत ॥ ५ ॥ वंदो ॥
ब्रह्म वीस्न शीव लींग पदुम अशकंध पुरान वीचीत्रं।
वावन मीन वराह अगीनी अती कुरम प्रम पवीत्रं ॥ ६ ॥ वंदो ॥
नारद गरुड़ ब्रह्म वैवरत्त कशयते है एह नीको।
मारकंड ब्रहमंड भागवत अशटादश शीर टीको ॥ ७ ॥ वंदो ॥
नवलछ जल में जीव बपानो दश लछ पंछीगात।
दश अरु एक क्रीट क्रीम कहीए तीस पशुन की जात ॥ ८ ॥ वंदो ॥

× × ×

एतना में जो भगत भए है अब होइ हैं अरु आगे।
'रामक्रीपा' मन मधुकर होए कै चरन कमल रश पागे ॥ १० ॥ वंदो ॥

वौशर कंठमाल

वीनती शभ भगतन्ह शो कीजै।
अवध चंद्र नृीप राव लाडीलो ताशु भगती मोही दीजै ॥ १ ॥
शंकर कपील देव नारद वीधी शनकादीक मनुभुप।
भीपम वली प्रहलाद जनक शुक द्वादश प्रम शरूप ॥ २ ॥ वीनती ॥
जामवंत हनीवंत वभीपण शवरी पग सुग्रीव।
श्री उधो अंकुर सुदामा वीदुर पंडु शुप शीव ॥ ३ ॥ वीनती ॥

अंमुरीषी चीत्रकेतु परीचीत चंद्रहाश गजरूप ।
कोउपंग कुंता पंचाली रुपमा गीत ध्रुव भुप ॥ ४ ॥ वीनती ॥
वीश शेनी उरगारी व्याश मुनी शुरथ शुधन्वा दोउ ।
राम उपरोहित अव पुंडरीपेश्वर नील तमुर धुज शाए ॥ ५ ॥ वीनती ॥
शंप्रदा एहुचारी शीरोमनी रामानुज ही वपानो ।
माधो चारज वीशुन शामी नीम्बादीत जेहि जानो ॥ ६ ॥ वीनती ॥
नील्यानंद क्रीशुन चैतन्य प्रभु जगत वीदीत अवतार ।
चीत शुपमाधो लोकनाथ है इशभा प्रम उदार ॥ ७ ॥ वीनती ॥
रामानंद कवीर अनंता धाता अवरो एदाश ।
लालाचारज पीपा शैना पवहारी हरीआश ॥ ८ ॥ वीनती ॥
आचारज शंकर अरु देवा वील संगल जै देव ।
कील अगर अरु वीशुन पुरी ग्यान देव हरी शेव ॥ ६ ॥ वीनती ॥
नामदेव अव वलभ्हा चारज जै मंगल करमावाइ ।
ऐशे अगाधी अरु भुअन तीलोचन वारमुपी मनभाई ॥ १० ॥ वीनती ॥
शुकानंद शुरशुरानंद मुनी माधोदास प्रवीन ।
वीठलेश रघुनाथ गोगाइ शुरदाश चीत दीन्ह ॥ ११ ॥ वीनती ॥
प्रमानंद अवजाशुशामी क्रीशुनदास हरीराम ।
गोपाल अव भत्र रूप शनातन जीवनरायन नाम ॥ १२ ॥ वीनती ॥
रघुवंश गोशाइ के हरीदास । रामदाश नरशीलया शमी मीरा तुलसीदास ।
रशीक मुरारी उदार गजाधर गोवीद केवल राम ॥ १३ ॥ वीनती ॥
शाधुन के महीमा प्रभु नीजमुप दुरवाशा प्रतीभापु ।
नाभा मत ले राम कृपा एह कंठमाल रूचीरापु ॥
वीनती सब भगतन्ह शै कीजै ॥ १४ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—सृष्टि वर्णन के पश्चात् हरि भक्तों की महिमा का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। जैसा कि रचना के अंत में दिया है, यह नाभादास के भक्तमाल के अनुकरण पर रची गई है :—

शाधुन के महिमा प्रभु नीज मुप दुरवाशा प्रती भापु ।
नाभा मत लै 'रामकीपा' एह कंठमाल रुची रापु ॥

इस रचना के साथ एक ही हस्तलेख में कुछ अन्य रचनाएँ भी हैं। इसी संबंध में देखिए 'स्तोत्र' का विवरण पत्र।

संख्या ३६, खड़िया खेमा का परिहा, रचयिता—खड़िया खेमा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—९३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि—(परिहा लिख्यते)

सुंदर सोल श्रृंगार सन, उभी मिंदर बार।
नयन भलका सटरा, वाहै बारोवार ॥ १ ॥
बाहँ बारोबार किसु वखाणिये; जोवन छूटा बाण विधूटा जाणिये ॥
लंगर भंगर लाई अपूण नाखिया, कर चांह दै गयंद पपाला चखिया ॥ २ ॥

अंत—काठै कालिज कोद, कटाराकत्तियां,
अंभतणी अणुहार कि आंख्यां रसीयां ॥
कुइंण होली जेम भकोली गोरडी,
गावै खडियो खेम सनेही गोरडी ॥ ९६ ॥

॥ परिहा ॥ संपूर्ण ॥

विषय—स्त्री श्रृंगार वर्णन।

संख्या ४०. अभैसिंघ का कवित्त, रचयिता—खड़िया बख्ता, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—१०३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि— श्री नाथायनमः

आदि सगति ईसरी, मंगलकारी चिन्तामणि।
कामधेनु पौरसौ तुंही पारस शिवभामणि।
धण कण साहणसाह पूत परिवार बड़ाली।
देवी देस विदेस राजद्वारे रखवाली,
आंणद रूप आंणद में सबही काम सुधारणी
रीझावूं गुणेश राजा अभौ तो प्रताप जुगताणी ॥ १ ॥
जुग जणाणी जोगणी राम उघा पर वेची
भाज दैत चालक्यै नाम जिण चालक नेची ॥
भालै थल उजलौ जठै हरीया गहरा तर।
चालक जो गढ़त है रचे देवी अधोकर ॥
तिहुँ लोक जात आवै तठै बाजा छतीस बजावही।
रीझंवूं राज राजेसवर पावु खग पावही ॥ २ ॥

अंत—आउ सकल रीझिया ओण कीधा तर प्याला।
रुद्र ज्यारे रीझिया उवर पहरी रुंडमाला ॥
रिख नारद रीझिया जिकां रहस रस थाया।
हुर अच्छर रीझिया माहा सूर वर पाया ॥
सामलाग्री धरी धारू को अमल चराचर उपरा।
जीव जे अभा दूजा जसां माहाबाह अजमालरा ॥ १६५ ॥

जिते सेरू धरतरी भालं दुनी आँख दरसे।
जितैं सात मैहराण इन्ह घट हरें बटसै ॥
जितै पवन धर हेरे इतैं अठकुली डूंगरी चौरासी सिद्ध इतै
जितै नवनाथ अखतरां परमेस भगत जिवटै प्रगट
जोग माया संकट जितै ॥
ऊच रूंड चीतित रै अभा तुज राज रहज्यो तितै ॥ १६६ ॥

इति श्री महाराजा अभैसिंह जी रा कवित्त संपूर्णम् ॥ श्री रस्तु शुभ मस्तु ॥

विषय—महाराज अभैसिंह का यश वर्णन। डिंगल भाषा की रचना है।

संख्या ४१. खींवड़ा रा दूहा, रचयिता—खीवड़ा, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८४३ वि०—फागण वदि २२, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि—अथ खविंडा रा दूहा लिख्यते।
जाती श्री जगन्नाथ, दासत्या करवा देवरे।
अधविच पाड़ी बाढ, खोली मिलियो खीवंड़ो ॥ १ ॥
आयो आधीरात, आभरण केरे असतातिणो।
मोवस बावन वात, ते खेल बियो खीवड़ो ॥ २ ॥

अंत— सोरठा

बड़ा वावड़ी तणाह, निगुण नीलो थयो।
खविड़ा खलहल नाह, सार सयो सूको नहीं ॥ १४ ॥
पेणी तरण परवाह जऊ हेट अनी झटे।
जाणत हे जहा यह, लोही आवत लोयणे ॥ १५ ॥

इति श्री खंविड़ा रा दुहा संपूरण—लिखंत भा वाघमल गढ जालोर मध्ये संवत् १८४३ रा फागण वदि १२।

विषय—नीति के दोहे।

संख्या ४२. चिंतामणि, रचयिता—खेमजी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०$\frac{1}{2}$×५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ अथ पेमजी की चितावणी ॥
॥ दोहा ॥
काहू पूरब पूनि करि तैं पाई नर देह।

के महरवांन होइ मोजदी जनम सुफल करि लेह ॥ १ ॥
दस महीनां ग्रभ वास मैं तूं लीज रह्यौ सुप सूदि ।
जहाँ तात मात की गम नहीं वहां रापन हाराकूंन ॥ २ ॥
नप सप सु जब नांए करि प्रभु आराधौं मुक्ती ठौर ।
निप जी मैं साप्मीघणां धणी भए तब वौर ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

अंत—अब हाथ परत गयौ प्राणीयां तन मैं वीती एह ।
घरी आय ग्रीस्म सब जालि बालि करि पेह ॥ ४६ ॥
इत काया मैं दुप पड़े वहां संकट परे पीरान ।
'पेम' कहै सुणैं ज्यौं सब भजिल्यौ केवलराम ॥ ४७ ॥
इति पेम जी की चितावसंपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ ५ ॥

विषय—ज्ञानोपदेश वर्णन ।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना एक बड़े आकार के हस्तलेख में है । इसके लिये देखिए सेवादास (निरगुन मार्गी) की बानी का विवरण पत्र ।

संख्या ४३. लीलासागर, रचयिता—गंगादत्त, कागज—देशी, पत्र—५३२, आकार—१२×१०½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—ओं ॥ स्वस्ती श्री गणेशाय नमः ॥ श्री कृष्णाय नमः । कवित्त
सेवन करत मुनि देवन के काज सरे पावत न भेव बीच आवत न मन के
सुरसरि आय निधि हरत सकल पाप प्रबल प्रताप ताप मेटत सबन के
धारन धरनि जगें पावन सुधारन है धरा में उधारन धरत अधमन के
साधा के वरन मन साधा के सुमिर जग बाधा के हरन पग
राधा के रमन के । १

अथ नगर वर्णन दोहा
व्यासदेव के नगर जिह हैं विलासपुरि ख्यात ।
वसन सत्त रुद्रातीर में लसत दीपहूँसात । २

कवित्त

चरचा रहति जहाँ वेदन के भेदन की अरचा सदैव देव जगरमगर हैं
सरम के सिंधु भले करम अनेक करें धरम धरन हार बगर बगर हैं
गुननि गंभीर धीर वीरन की भीर वसें गंगादत्त सुकवि बखानत अगर हैं
सकल विलास को निवास त्रास दुष्टन को नगर विलासपुर सोभित नगर हैं । ३ ।

अंत—जहं पुरान सुनि ये सुषदाई। सुनि के सिगरे पाप निसाई
विसन लोक सुनि के नर पावे। कृष्ण चरित को हिय में गावे ॥१२॥

इति श्री मन्महाराज कुमारी राणी हिरदे श्री सरमौरी रचिते गंगादत्त विरंचिते लीला सागरे पुराण महातम बर्ननं नाम पंच पंचास मोस्तरंग ५५ ॥ इति श्री लीलासागर पुराण संपूर्ण शुभ मंगलं लेपकानां च पाठकानां च मंगलं। मंगलं सर्वलोकानां भूमि भूपाल मंगलं। १ श्री संवत् १८८९ जेठ प्रविष्टे। २७ हस्तनिक्षत्र ॥ श्री राणी सर मौरी पठनार्थं ॥

दोहा

जेठ मास को सुकल पछ तिथि सुद शर्मा जान
ता दिन शुभ कल्यान हे वार गुरु सुभ मान। १
ब्यास रिपन की पुरी में नदी सतलुजा तीर,
लिखत भया हरदेउ दिज महामंदमति धीर चंपावति के तीरम।

विषय—सारा ग्रंथ कृष्ण और नारद के संवाद के रूप में है। नारद ने प्रश्न किया है और कृष्ण ने उसका उत्तर दिया है। प्रायः सभी कथाएँ महाभारत के अनुसार हैं। पूरा ग्रंथ दो भागों में है। पूर्वार्ध में ५३ तरंग (अध्याय) और उत्तरार्ध में ५५ तरंग हैं:—

पूर्वार्द्ध संपूरणम्

पूर्वार्द्ध संपूरणम्

संख्या ४४. कर्मविपाक, रचयिता—गंगाराम (कायस्थ), स्थान—पटना गजेन्द्र निवासी, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५२, अपूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७३९ वि०=सन् १६८२ ई०, लिपिकाल—संवत् १८७१ वि० = सन् १८१४ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—रामजी सहाय, दुर्गाजी सहाय, श्री हनुमान जी सहाय श्री पोथी कर्म विपाका ॥

विघुन विनासन श्री गनेसा। वर्मा रुद्र वीस्यौ सेसा ॥
सिधि बुध दात अहो भवानी। वंदौ मातु पिता गुरु ग्यानी ॥

तैंतिस कोटि देवन्ह सिर नावों । कविजन पंदित सो मत पावों ॥
इस्ट मित्र बिनवो सब केही । वानी सुरस मेरावहु मोही ॥

॥ दोहा ॥

कर्म विपाक कथा जें भ्रिगरापी (? भृगु ऋषि) कहि समुझाइ ।
संसक्रित केहु बूझि न परई । तेहि निति भाप छंद उचरई ॥

॥ चौपाई ॥

संवत सतरह से बोनताला । जेठ वदि त्रियोदसि बुध वाला ॥
गंगाराम कुल कायथ कना । संसक्रित सों भाषा वर्ना ॥
रामानंद सुत पटना वासी । भुऊपति अवर गजेंद्र नेवासी ॥
ससक्रित केहू बूझि न परई । तेहि निति भाष छंद उचरई ॥

॥ दोहा ॥

जैसन कर्म करै नर सो तैसन फलपाव ।
कर्म विपाक ग्रंथमत गंगाराम गुनगाव ॥

अंत— ॥ चौपाई ॥

रोस करहु जनि हम कह देपी ।
मोरे करम अधरम विसेपी ॥
दआ करहु तुम उतरहु परा ।
मोहि अस पापी नहिं संसारा ॥
अवर अलंभ नहि कछु मोही ।
बुडि मरौं तौ लजा तोही ॥
केहि विधि स्वामी उतरव पारा ।
बहुरि न आवौं येहि संसारा ॥

॥ दोहा ॥

अथवा जन्म देहु जौं मिलै भगित भगवान ।
गंगाराम गुन गावै मन वच कर्म धरि ध्यान ।
भ्रिगमुनि भरथ सों भापा । करम वे पाक संपूरन रापा ॥

इति श्री करम वेपाक भापा क्रीत गंगाराम कै संपुरन भवेत ॥
समत अठारह[१८] सै अधि येकहतरि[७१] जिय जानि ।
मार्ग क्रिस्न तिथि त्रैयोदसी लिपेय गरंथ मन मानि ॥
कासी कै नैरितु दिसा जोजन अरध परमान ।
जकरावाद वरग्राम है लोहता तालुक जान ॥ १ ॥

विषय—संस्कृत के कर्मविपाक ग्रंथ का हिंदी में पद्यानुवाद । इसमें कर्मों के फलों का वर्णन किया गया है ।

रचनाकाल

संवत् सतरह सै बोनताला । जेठ वदि त्रियोदसि बुधवाला ॥

टिप्पणी—ग्रंथ के बीच के ७ पत्रे—संख्या १६, २०, २१, २२, २३, २५ और २७ लुप्त हैं।

संख्या ४५(क. फुटकर कवित्त, रचयिता—गंगाराम तिवारी (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत देवीदत्त शुक्ल, 'सरस्वती' संपादक, प्रयाग ।

आदि—६वें पत्र से उद्धृत:—

''''''न अदिन के ॥ जह सुर सकल सुरेश इंद्र चंद्र ऐसे वंदन करन हार पल छिन छिन के ॥ ४ ॥

हाथ में त्रिशूल शत्रु पुंज निर्मूल कर
सोहै शुभ चक्रवर कष्ट के हरन पैं।
कुमति मिटावैं पुनि सुमति बढ़ावैं मन गंगाराम,
ल्यावैं ऐसै संपति करन पैं ॥
पुनि जह भक्तन पर्यौ है कष्ट जाय तह तुरत हर्यौ है।
एक शब्द हुंकरन पैं।
सोक सिंधु हारन त्रिलोक के उबारन,
औ तारन स्वकीय जन भैरव चरन पैं ॥ ६ ॥
वर अभिधान जग विदित प्रकासमान,
विक्रम समान जस जाको भासमान है।
'गंगाराम' जाकी पुनि चंद्रमा की चाँदनी,
मानो महिं मंडन में कीरति वितान है ॥
सूरज समान परिपूरन प्रताप वर,
विमल बुलंद जाको विदित कहा न है ॥
संपति समाज द्विजराज महाराज मानौ नाम,
पुरुषोत्तम निदान भगवान् है ॥ ७ ॥
वरही वर पछ कृत रतन जटित चारु मौलि धरे मुकुट मनहर वृ''''''
१२वें पत्र से ऊद्धृत:—

''''''ककुभ बीच सींचवे को प्राण जग कुमुद समान पैं ॥
कैधौं साधु संत मन रंजवे की मूरति है कैधौं भय भंजवे को
फूरति जहान पैं ॥

कहत कवि गंगाराम कीरति विशाल ऐसी,
सोही महाराजा डालचंद अभिधान पैं ॥
कैधों कलि कलमष कदंब ही के काटिबे की,
पुन्य की पताका भासमान अशमान पै ॥ १३ ॥

शुभ गुण मूल पुनि कीरति सुतूल साषा,
कोमल बिमल वै न पत्र सम लेषियत् ॥
असल अनंत ज्ञान सुमन समान ज्ञान,
तापै सुभ कर्म धर्म फलहि विशेषियत् ॥
गंगाराम कवि कलि कल्पतरू ऐसो नर सोई,
महाराज जू पैं सौंतुप निरेषियत् ॥
नागर उजागर कृपाल सिंधु सागर सुवेनी,
राम पठित सु कल्पतरु देपियत् ॥ १४ ॥

कैंधों सीस सिंधु अरु उदधि उछाह रूप तापै भूपवृंद
सब जाके मुहताज है ॥

फैज वक्स सक्स है अनेक पर तामैं हुक्म हिंमत सरूप एक''''''महाराज। गंगाराम कवि कहैं कीरति कहां लौं कहौं करुना कदंब कैं''''''

मापांश पूर्ण रूपेण उद्धृत

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ के केवल दो पन्ने प्राप्त हुए हैं। इनमें डालचंद महाराज की प्रशंसा में लिखे हुए कवित्त हैं।

टिप्पणी—ग्रंथ का अधिकांश नष्ट हो गया है। रचयिता का वृत्त अज्ञात है। इनके आश्रयदाता डालचंद संभवतः मुरशिदाबाद निवासी और राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' के प्रपितामह थे।

संख्या ४५ ख, बारहमासा, रचयिता—गंगाराम तिवारी (स्थान—प्रयाग), कागज-देशी, पत्र—२, आकार—४'४×६'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, अपूर्ण रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत पं० देवीदत्त जी शुक्ल 'सरस्वती' संपादक, प्रयाग।

आदि—पत्र २ से उद्धृत :—

कामदेव जग जीत्यो सुनत तुरंत।
चंद चूर ह्वै जुगनू फिरत यकंत ॥ २० ॥
ढूढत हैं प्रियतम पद कुंज अनूप ॥
तेजवंत छिपत न हैं जुगनू रूप ॥ २१ ॥

क्यों सकाति कातिक करि रिपु लै मोल ॥
गाढ़हि गाउ उजाड़हिं जाड़हिं कोल ॥ २२ ॥
सुनाते क्राति कातिक मैं दान विचार ॥
करत बहार दिये हैं जलत कतार ॥ २३ ॥
है विकाति कातिक मैं चीज अनेक ॥
दिया फेर मत लीजो यही विवेक ॥ २४ ॥
झक झकाति कातिक में चन-सों रैन ॥
दीपक तारे सोहैं देखौ चैन ॥ २५ ॥
धक धकाति कातिक में नारी देह ॥
जीतै चहति जुवारी पीतम नेह ॥ २६ ॥

अंत—सब सुख साथ दिवारी धर निज नाथ।
संग रंग रच्यौ जुवारी दोनों हाथ ॥ २७ ॥
आपुस में पिम प्यारी परम उदार ॥
खेलैं जुवा जुवारी जीतन हार ॥ २८ ॥
होत दिवारी कारी सारी रात ॥
मंजुल मति उजियारी सरस सुहात ॥ २९ ॥

× × ×

गंगाराम तिवारी कवि कुल चंद ॥
विरच्यौ बारहमासा बरवा छंद ॥

विषय—प्रस्तुत 'बारहमासा' का विषय शृंगार रस है। प्राप्तांश में भादों से लेकर फागुन मास तक की दशा का वर्णन है। कुल २७ बरवै प्राप्त हुए हैं।

टिप्पणी—पूर्व ग्रंथ 'फुटकर कवित्त' और प्रस्तुत 'बारहमासा' के रचयिता गंगाराम एक ही व्यक्ति जान पड़ते हैं। प्रस्तुत रचना अपूर्ण है। केवल संख्या २, ३ के दो पत्रे प्राप्त हुए हैं। कवि का परिचय केवल इतना ही मिला है कि ये तिवारी ब्राह्मण थे और अच्छे कवि (कविचंद) थे। ग्रंथ स्वामी से विदित हुआ है कि ये प्रयाग के रहनेवाले थे इनको हुए अधिक समय नहीं हुआ तथा अब भी प्रयाग के बड़े बूढ़े इनके संबंध में जानते हैं।

संख्या ४६. नेमनाथ रीधमाल, रचयिता—गजानंद, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८·७ × २·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण—(अनुष्टुप्)—११, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलौत, पुस्तक प्रकाश जोधपुर।

आदि—पीय नेम पधारौ हो।
कै साहिब रंग धरे ॥ रा······ल (? राजमती) इम वीनवैहो।
कै आवौ राज घरे ॥ पीय विण न सुहावै हो।

कै पल एक बरस समो ॥ दिन हो हिलौ जाएँ हो ॥
कै कलियुग कोहि गयो ॥ १ ॥
निस नींद न आवे हो, कै नयना नेह धरयौ ।
सुख सेज न लावे हो, जाणौ इच परयौ ॥
अनवान न लाने हो, पीय विण जहर जिसौ ।
गहियो तन दहियो हो, कै सहणी न जाय तिसौ ॥ २ ॥
अंग फूलनी माला हो, कै काला आगि जिसी ।
मोती मणि माला हो, कै काला नाग तिसी ॥
पीय विण सिर सैं थोहो, कै लागे करवति सौ ।
पीय विण पग नेह डहो, कै वेडी वधनं सौ ॥ ३ ॥

अंत—श्री नेम जिणराहो, राहुल (? राजुल) राज सती ।
पाम्या शिव मंदिर हो, सुंदर रंग रती ॥
गजानंद इम वीनवै हो, सुण ज्यो सहु समणा ।
श्री गुण जिने गावो हो, पावे सुख घणा ॥ ११ ॥

इति नेमनाथ धमाल संपूर्णम् ॥

विषय—जिन भगवान् नेमनाथ के विरक्त हो जाने पर उनकी पत्नी राजमती का विरह वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रंथांत में इसी भाव का मीरा का भी एक पद दिया है ।

संख्या ४७ क, कालिका अष्टक, रचयिता—गणेशकवि, कागज–देशी, पत्र—१, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् महेश्वरी प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़ ।

आदि—

श्री गणेशाय नमः

तेरोई सुजसभयो काम तरु जाचिन को तेरोई सुजस लोक लोकन
मैं छायो है ।
तेरोई सुजस अहि जू हहरमाल कीन्हो तेरोई,
सुजस एक दन्त दंत पायो है ।
तेरोई सुजस भो कलम विरंचि जू को,
तेरोई सुजस वेदन में आयो है ।
गायो सूर वृंदन "गनेश" महि मंडल मै तेरोई,
सुजस महाकाली ठहरायो है ॥ १ ॥

कौंल पद चंपकली, अँगुली कदलि जाल चक्र से,
निर्तंब कटि केहरि सूठारयौ है।
रोम लता नाभी सर पीवन सुठार भुज,
शंख कंठ पीठी चारु ठोठी दुति गारयौ है।
विंबाधर दन्त जीमि अमल कपोल नाशा,
नैन शुभ भोहै वंक श्रोन कूप वारयौ है।
ललित ललाट लाल गुहै सूर इंद्रवधु वार,
सटकारे महाकालिका निहारयौ है ॥ २ ॥

तामरश विद्रुम वंधूक सेज पासे पासे,
नूतन रसाल पत्रहू ते आतवेश है।
रजोगुण मूल से अतूलराग तूल से है।
विंव अनुराग छवि शोहत शुभेश है।
भनत गनेश जया किंशुक कुसुम ढारयौ भीमरश,
मानिक सू केसरि निवेश है।
नासिका विविध दीप मालिका उतारै,
महा कालिका चरन भक्ति पालिका हमेशहै ॥ ३ ॥

कंचन कलित नग जटित विरंचित्रा,
अमित गनेश मति वरनै फनेश की।
रुचिर सिंहासन वों आसन अनंत,
काली गावत महंत संत लेत सुधि देश की।
"भनत गनेश" सूर उर मै चपत ठाढे गाढे गेरूनु,
जलपि प्रभुता सुभेश।
इंदीवर नैनी महा शुपद की दैनी,
आजु ढारती चमर वधु अमर नरेश की ॥ ४ ॥

सूरगतिहार शे नक्षत्र लघु चोपदार छमासे,
सूधाकर प्रभाकर विहारी री।
शेश अधिकारी जाहि पंडित विमल वुध्दि,
पंडित शकल गुण मंडित सुधारी री।
"भनत गनेश" महाप्रभुता तिहारि जानि,
देपतार उदार ते वै करत कहारी री।
वेधा त्रिपुरारी महाकाली जू मुरारी चिरदेपि,
वलिहारी जात नजरि तिहारी री ॥ ५ ॥

मदन कराल भाल भृकुटी विशाल भौंहै,
नैन अनियारे नार कज्जल लगात है।

रसाभा दसन वस रसना भयानक को,
विकट कृपान कपटि दनुज हशत है।
भनत गनेश कंठ भूषित मनुज माला अमर,
प्रतापि भेरा शिद्दिन वसत है।
रूप रूप जालिका विशालिका कहात है,
महाकालिका स्वरूप महाकाल के ग्रसत है ॥ ६ ॥

मार्‌यौ चंड मुंडै जोन अतुल प्रचंडै वीर,
रक्तबीज तार्‌यौ धीर होत प्रलापकाल में।
शैन महिषासुर निशुंभ मपारिपासुर,
को सिंधु मधुकैटभ संघार्‌यौ एकै काल मै।
भनत गनेश धुम्र लोचनै विदार्‌यो छन,
देवन दुलारे पारे संकट के जाल मै।
दनुज कुचालिन के काठि परनाली,
सिरहाली पहुँचायो महाकालिहर भाल मै ॥ ७ ॥

गावत पुरान वेद ध्यावत महेश ब्रह्म,
पावत न भेद मंद वरनै गनेश को।
आवत मुरारि फिरि जात उरगारि तहाँ नावत,
सुरारिशिर गरनै फनेश को।
जावत अमर उपजावत अनेग भक्ति,
भावत मुनीश सिद्धि उद्दित दिनेश को।
लावत अमल फूल विमल अतूल सोहै,
वित्यो महाकालिका चढ़ावत धनेश को ॥ ८ ॥

—पूर्णप्रतिलिपि

विषय—आठ कवितों में काली की महिमा का वर्णन किया गया है।

संख्या ४७ ख. जनक वंश वर्णन, रचयिता—गणेश कवि, कागज—देशी, पत्र–२, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़।

आदि— ॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

महाराज श्री ईश्वरीनारायण धरमग्य।
जनक वंस वर्नन करो कह्यो वचन यह प्रग्य।

आयसुपाय महिंद्र को वालमीक मत जानि ।
जनक वंश वरनन करत सुकवि गनेश प्रमानि ॥ २ ॥
मुनि वसिष्ठ के कहत अस रामवंस विख्यात ।
पानि जोरि बोले वचन जनक नृपति अवदात ॥ ३ ॥
परंपरा करि प्रभु कह्यौ मो कुल को विस्तार ।
सो सुनि मुनि वरनत भए निमि को वंस उदार ॥ ४ ॥
कहिवे लायक उचित जो जानहुँ हे मतिमान ।
परंपरा विधि जानि अस कुल को करहु वपान ॥ ५ ॥

॥ छप्पै ॥

तिहुँलोकन में विदित होत भे नृप सुकर्मकर ।
निमि सुनाम सरवज्ञ सर्व बलवान मध्यकर ।
निमि के भे उतपन्न पथम महिपाल जनकअस ॥
भूप जनक ते भए पुत्र उतपन्न उदावसु ।
धरमग्य उदावसु पुत्रवर नंदि वर्धं कीन्हौं प्रगट ।
पुनि नंदि वर्धं महिपालवर सुत सुकेतु कीन्हो सुभट ॥ ६ ॥

॥ अपरंच ॥

नृप सुकेतु सरवज्ञ देवरातहि उपजयो ।
देवरात राजर्षि विहद्रथ को प्रगटायो ।
महावीर उतपन्न कीन सूत धीर विहद्रथ ।
महावीर के भए सुधृत धृतवान तेजगथ ।
महिपाल सुधृति के होत भे धृष्ठकेतु धर्मग्य मुनि ।
तेहि धृष्ठकेतु राजर्षि के प्रगट भ हर पुनि ॥ ७ ॥
तेहि कीन्हौ पुत्र मरू कीयो प्रतिंधक ।
तेहि कीन्हौ धरमग्य कीर्तिरथ पुत्र अनिंदक ॥
कीन्हो सुत उत्पन्न कीर्तिरथ देव-मीढतक ।
देवमीढ के विवुध विवुध के भए महीध्रक ।
सुतकीन्ह महीध्रक भूपवर कीर्तिरात बलवान अति ।
तेहि कीर्तिरात राजर्षि के महारोम उतपति नृपति ॥ ८ ॥
महारोम सुत कह्यौ स्वर्णरोमाधर मिष्ठी ।
स्वर्न रोमा राजर्षि कीन ह्रस्वरोम वलिष्ठी ।
ह्रस्वरोभा धर्मज्ञ कीन वियसुत वर नृपध्वज ।
है जेठो तेहिमध्य जनक लघु बंधु कुसध्वज ।

सुत जेठ जानिकै जनक को राजभार नृप सौंपि दिग्र।
सोइ जनकराज वर जानकी रामचंद्र को ब्याहि दिग्र॥ ९॥
॥ इति जनक वंस वर्णन समाप्त ॥

—पूर्णप्रतिलिपि

विषय—महाराज जनक के वंश का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—कवि का नाम गणेश है। ये काशिराज श्री ईश्वरी नारायणसिंह और श्री उदितनारायण सिंह के आश्रित थे। संक्षिप्त विवरण में भी इनका उल्लेख है। प्रस्तुत रचना इन्होंने महाराज ईश्वरीनारायण सिंह के आदेश पर की। इस बार इनकी चार रचनाएँ—१-जनकवंश वर्णन, २-कालिकाष्टक, ३-रामचंद्र वंश वर्णन और ४-त्रिवेणी जी के कवित्त नाम से और मिली हैं।

सख्या ४७ ग. त्रिवेणी जू के कवित्त या पंचाशिका, रचयिता—गणेशकवि, कागज - देशी, पत्र—८, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़।

आदि— श्री गणेशाय नमः

अथ त्रिवेणी जू के कवित्त लिख्यते॥

॥ दोहा ॥

प्राग गए अस्नान को कासिराज करिहित।
उदित विदित प्रमुदित कह्यौ कीजै सुचित कवित्त॥ १॥
कवि 'गणेश' पंचासिका वर्न्यो करि उतसाह।
श्री ईस्वरी प्रसाद जुत नारायण के चाह॥ २॥

॥ कवित्त जात्रानुमान ॥

संगम नहान को विहान आनुमान तेरो,
मान मेरो कहिबो प्रमान करि चेरोहो।
एक दिन बासी ते उदासी कौं भाये कोऊ जनप संघाति हौं
पुकारि करि टेरो हो।
पायोना अराम जानि सासते विचारि याते,
जात और धाम को प्रनाम करि हेरो हो।
बूडि जैहौं वारि के अथाह मैं कहत पाय,
वेनी के प्रवाह मैं निवाह नहि मेरो हो॥ १॥

अंत—करो मन भायो संग रंग वनितान हूँ के,
लागे ते तरंग अंग पायजे उदाव हैं।

तमना करो रे जप सपना करोएरे,
कीजियो अनंग रंग याते अधिकात हैं।
'भनत गनेस' जगतारन प्रभाव देख्यौ वीस विसैहै,
करि महेस सरसात हैं।
समको तुलत और तमको विलात पाय,
जगको उजारी लोक हमको देपात हैं ॥ ४२ ॥
भागिन को भागि दै अभागिन को भागि करै।
मागी दै मुकुति भागीरथी विहरति है।
पाविन के पाप को अमाप आप हरै,
साकतीनि ताप हरै अछै पद को सरति है।
ब्रह्मपद दुर्लभ अदुलभ करत जाति जीवन को,
जन्म ते अजन्म को करति है।
ते सब निहारे गुन से सवन गाइ सकै,
केशव के सीस वसि केसव करति है ॥ ४३ ॥
पापी एक छोड़्यो है सरीर जन्हुजाके तीर ह्वैहौं,
ना प्रतापी महि मंडल मैं जायकै।
ह्वैहौं ना महेस औ सुरेस लोक आछी विधिवार,
वार काहे को पठावै सरसाय कै।
'भनत गनेस' मुनि ह्वै हौं ना मुनीसराज,
तो सन पुकारे वात कहत वनाय कै।
सेगरे विहायलोक मुकुति सुहाई देत,
तेरे तीर रैहों माय आछे सुप पायकै ॥ ४४ ॥

—अपूर्ण

विषय—त्रिवेणी का वर्णन। कवि ने यात्रा, संगम, अक्षयवट, यमुना, सरस्वती और गंगा जी का अलग-अलग बड़ा विशद और भव्य वर्णन किया है।

संख्या—४७ घ, रामचंद्र वंश वर्णन और झांकी वर्णन, रचयिता—गणेश कवि, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१०३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, पूर्ण रूप—प्राचीन, पद्य लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ रामचंद्र वंसवर्णन ॥

ब्रह्म के सनालक जु कंज सो भयौ है ब्रह्म ब्रह्म के
मरीच ताके कस्यप के भान भो।
भानु के महीप मनु मनुके इक्ष्वाकु ताके कुक्ष के विकुक्ष औ विकुक्ष हू के वान भो।

मान महाराज के भयो है अनरन्य भूप ताके
प्रथू प्रथू के त्रिसंक, जस मान भो।
ताके धुंधुमार भो कुमार जव ताखता के मदूस,
विधाता मानधाता गुनमान भो ॥ १ ॥

मान धाता भूप के सुसंधि ध्रुवसंधि जाके,
ताके भो भरथ पंड भरत सोहायो है।
भरत पूत असितौ सगर जाके असमंज ताके,
अंसुमान गायो है।
अंसुमान भूप के दलीप अवनीप भए
तिनके भगीरथ ककुस्थ उपजायो है।
सुवन प्रतापी भूप तापी रघुदायी,
भयौ पुन्य पथ थापी जापी दूसरो न गायो है ॥ २ ॥

अंत—उदितनरायन उदार अवनी के बीच लैकै,
अवतार भूमि भार हरि लीन्हौ है।
गाइ कविता कि भाई तुलसी गोसाई जौन,
तौन समुदाई प्रभुताई कै अदिनो है।
भनत गनेश हु ते त्रेता के विलास जे ते,
के प्रकास सब त्रास हरि लीन्हौ है।
रामचंद्र चरित नराचौ करिवे को कछू,
सांचौ रामनगर नगर करि दीन्हो है ॥ १० ॥

गायो वालमीक नीलकंठ जौन ठीक ठीक,
नीक नीक नाटक मै बात जतो कीन्हौ है।
गायो कागराज पक्षिराज सो सोहायो जौन,
जागवली गायो भरद्वाज सो अहानौ है।
भनत गनेश कलिकाल के उवारन,
को कारन विचारि उप चारन सो चीन्हो है।
महाराज उदित नरायन यौ महाराज,
रामचंद्र चरित प्रकास करि दीन्हो है ॥ ११ ॥

इति श्रीराम — ॥ समाप्त ॥ श्रीराम ॥

विषय—रामचंद्र जी के वंश का वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् रामचंद्र जी की झांकी का वर्णन भी है।

संख्या ४८. भक्तन के नाममाला अथवा भक्त वछावली, रचयिता—गरीबदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण

(अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३८ वि० और १८४० वि० के अंतर्गत, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डा०—चिटवड़ा गाँव, जि०—बलिया।

(हस्तलेख सभा के लिये प्राप्त कर लिया गया है।)

आदि— ॥ भगतन्ह कै नाममाला ॥

सतगुरु चरन सरोजवंदी सीर सादर सहीत मनावो।
संतनाम अभिराम कलपतरु गाइ अभैपद पावो॥
जीन्ह संतन्ह पदरज मंजुल सीर रापै तीलक बनाइ।
चारी पदारथ करतल ताके वेद उपनीपद गाइ॥
संत अनंत अंत जानै को को कथी पारही पावै।
मती अनुमान नाम की महीमा प्रेम सहीत नीती गावै॥
भौसागर तरवे की सरधा जीन्ह दुर वीमल सोहाने।
संतनाम अभीराम अभैमत पद कैवल्य समाने॥
ताते सुनेहु सुगम ऐह मारग देषेउ हृदय वीचारी।
सकल संत के चरन सरन तट आरत प्रनत पुकारी॥
सुमन सुगंध नाम संतन्ह को रची रची हार बनाओ।
मो मन हीन चहत वैरागी रुची सो तेही पहीरावो।
सीव सनकादी सनंदन नारद पुरन ब्रह्म पुराना।
अवीनासी अवीगती की महिमा नीज मुप भनीती वपाना॥

अंत—पद नीर्वान अमान बावरी वीरु भक्त ब्रह्म ग्यानी।
इआर महंमद परम ततु नीज आपुही मे पहीचानी॥
बुलादास वीलास ग्यान रस चाखी भए उन मतं।
गगन गुफा उनमुनी धुनी नीमल परम जोती भगवतं।
केसोदास हुलास मानही अपुरन प्रेम पीउपन।
त्रीपुनी तीलक ततसरि तापी आगम गम्य परीपुरन॥
जन गुलाल गुर ग्यान गम्य धुनि सब्द अनाहद पागे।
अवीगती अलप जोती रस लंपट उदै ग्यान वैरागे॥
परम दआल प्रन उपकारी धर्म धुरंधर जोगी।
तुरीआ पद वीग्यान जगत् गुरु प्रेम अमीअ रस भोगी॥
संत अनंत नाम की महीमा को कही पारही पावै।
सकल संत के चरन कमल रज "जन गरीब" सीर नावै॥
अंचल रोपी उभै कर जोरे प्रनत पालना कीजै।
सतगुरु चरन कमल की सरधा "जन गरीब" जो दीजै॥
इतिश्री भक्त गरीबदास जी के भक्तवछावली संपुरन समाप्त॥

विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन कुछ भक्तों का गुणगान किया गया है।

संख्या ४६. कथामृत, रचयिता—गिरधरदास (गोपालचंद), स्थान—बनारस (चौखंभा), कागज—आधुनिक, पत्र—११९, आकार—११½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९११ वि०=सन् १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— श्री गोपीजन वल्लभो विजयते ॥

॥ मच्छ कथा ॥

॥ दोहा ॥

सुंदर सुखद सरोज से वल्लभ जू के पाँय।
सुमिरत सुभ सरसाहिं सब सोक मोह भ्रम जाँय ॥ १ ॥
नंदन प्रभु श्री नंद के करन सकल आनंद।
सुमिरत गोकुल चंद पद दूर दुरैं दुख दंद ॥ २ ॥
सुमिरि मीन भगवान के पीन करम सुख मूल।
चारु कथा कथिवे चहत दूरि करनि भवशूल ॥ ३ ॥

॥ चौपाई ॥

कृत जुग आदि भयो बल धाम। दानव अधम संख यह नाम।
महामेरु सम उन्नत काया। जानै सकल भाँति की माया ॥

॥ कच्छप कथा ॥ कवित्त ॥

भवसिंधु सिंधु जीव मंदर महान गिरि कर्म वासुकी तहाँ लसै द्विजित दच्छ है।
ताको मुख पाय पुन्य पुच्छ अति तुच्छम है वासना दुविध दैत्य देवता प्रतच्छ है।
सुधा सुखकाज है समाज दोऊ जुथज को 'गिरधरदास' तहाँ निज-निज लच्छ है।
बूड़त उधारन कों शैलवर धारन कों लच्छन ललाम नाम कच्छप को कच्छ है ॥ २ ॥

अंत— ॥ राम कथामृत ॥

॥ तोमर छंद ॥

पहुँचे तपोवन जाइ। निवसे तहाँ रघुराइ।
पुनि ताडिका कहँ प्रात। निरखी भयंकर गात ॥
मुनिराज आयसु पाइ। धनुतानि कै रघुराइ ॥
हरते भए तिय प्रान। रघुनाथ धर्म निधान ॥ ८४ ॥
तब तुष्ट विप्र प्रवीन। सब अस्त्र रामहिं दीन ॥
तेहि सैल से रघुनंद। जिमि सारदी निसि चंद ॥ ८५ ॥

॥ दोहा ॥

यह रामायन सागरहिं वरन्यो बुंद समान।
रामकृपा पूरन भयो रामचंद गुन गान ॥ ९९६ ॥
फूल के नाते भिल्लिनिहिं निजपद दियो निवास।
को रघुवर सो और जग जनहित गिरधरदास ॥ ९९७ ॥
रावन खल पावन कियो दियो अभयपद दान ॥
कोऊ भांति सनमुख भयो यह मन आनि सयान ॥ ९९८ ॥
गुन आरामैं दुख कटै मन आरामैं लेत।
हरिपुर आरामैं लहत रामैं कहत निकेत ॥ ९९९ ॥
रघुवंसी सिरमौर तजि भजहिं जानि हित और।
ते नर खर कूकर सरिस निंध कुठौर कुतौर ॥ १००० ॥

॥ सोरठा ॥

कियो दसानन नास जिन छिन मैं निज भक्त हित।
पूजत गिरधर दास तिनके चरन सरोज हित ॥ १००१ ॥

इति श्री गिरिधरदास विरचितं रामकथामृतं समाप्तम् शुभमस्तु ॥ संवत् १९११ मार्गशीर्ष कृष्णाष्टमी ॥ ८ ॥ रविवासरे ॥

श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लि० कन्हैयालाल खत्री।

विषय—मच्छ, कच्छप, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं का वर्णन किया गया है।

मच्छ कथा का रचनाकाल

रितु[६] नभ[०] ग्रह[९] शशि[१] संवत दशमी भादव मास।
मंगल कर मंगल दिन पूरन भो इतिहास ॥ ५० ॥

॥ नृसिंह कथा रचनाकाल ॥

माधव को प्रिय मास है माधव उज्जल पच्छ।
चौदश दिन भाषा करी कृष्ण कथा यह स्वच्छ ॥ १०३ ॥

वामन कथा रचनाकाल

सास्त्र[६] सून्य[०] ग्रह[९] चंद[१] संवत कार्तिक पच्छ सित।
द्वादसि दिन सानंद करी कथा निस्तरन हित।

टिप्पणी—ग्रंथ से ऐसा ज्ञात होता है कि उसमें दश अवतारों की कथाओं का वर्णन रहा होगा। प्रस्तुत प्रति में मच्छ, कच्छ, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं का वर्णन है। कच्छप कथा के अंत के पत्रे नहीं है, अतः वह अपूर्ण है। सभी कथाएँ छपी हुई हैं। छापा प्राचीन लेथो का है। ये जहाँ जहाँ छपी हैं, उनका विवरण इस प्रकार है:—

१—मच्छ कथामृत-रचनाकाल संवत् १९०६ तथा लिपिकाल संवत् १९११ वि०। बाबू श्री गोपालचंद की आज्ञानुसार यंत्रालय मो फांद हिंद पांडे की हवली में मुन्शी हरवंशलाल वो हनुमान प्रसाद ने छापी दसखत कन्हैयालाल ता० २६ अप्रैल, सन् १८५४ इसवीय श्री हरिः॥

२—नृसिंह कथा – लिपिकाल संवत् १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद्र की आज्ञानुसार पाषाण यंत्र में मुद्रित भई। श्री कृष्णायनमः॥ लि० कन्हैयालाल॥

३—वामन कथा-रचनाकाल सं० १९०६ वि०; लिपिकाल संवत् १९११ वि०। श्री गोपालचंद जी की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। इस कथामृत में आगे भूल से चार सै सैंतीस का अंक दो वेर लिख गया है इसलिये पीछे पाँच सै बयासी का अंक घटाय दिया। अब बराबर जानना।

॥ दोहा ॥

बिरच्यो गिरिधर दास जू लिख्यो कन्हैयालाल।
छाप्यो मुन्नालाल ने रामकटोरा हाल॥१॥

४—रामकथा—लिपिकाल १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लिखा कन्हैयालाल खत्री॥

कच्छप कथा अपूर्ण है इसलिये उसके छपने का विवरण अप्राप्त है। रचयिता गिरधरदास है जिनका वास्तविक नाम गोपालचंद था तथा जो भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के पिता थे। उपर्युक्त छापे के विवरणों से पता चलता है कि ये संवत् १९११ में विद्यमान थे। व० क० का विवरण पत्र भी द्रष्टव्य है।

संख्या ५० क. कवित्त हनोमानजी के, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र-१, आकार—८×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—दयाशंकर जी मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला आजमगढ़, जि० आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः कवित्त॥ हनोमानजी की॥ अविवेक मारिवे कों अरिगर्व गारिवें कों संक सोच हारिवें कों सुर अतिवंत है।

अघ पुंज जारिवे कों मोह मद मारिवे कों,
जमफंद फारिवे कों महाबलिवंत हैं।

श्रीजग सुधारिवे कों अधम उधारिवे कों,
आरत उबारिवे कों महिमा अनंत है।
दीह दुप दारिवे को संकट संघारिवे कों,
बीपति बीदारिवे कों वीर हनिवंत है ॥ १ ॥

करम सुभासुभ के बीच ही में षीचंत है,
नीच मन मेरो यह नेकु न बीचारे हैं।
डोलत है चंग सम त्रीस्ना के तरंगनी में,
अँगना के रंग ते न पलक पसारे हैं।
काम की न सुधि रही तान के तरंगनि तें,
छवो रस बस परे रसना बीचारे हैं।
अजनी कुमार को सुमार करि सकै नाथ,
जगत में जेते सभ औगुन हमारे हैं ॥ २ ॥

आगे जाम नासिका कों संगत सुगंधन्हं की नैन,
निसि दीन रूप सुंदर नीहारे हैं।
आसा के उपाध तें न बुध्यि अस थीर होत,
मर के झकोर बौं फीरत मतवारे हैं।
देह सपरस तें सनेह बरबस गह्यो रह्यौ नहि,
चेत चित चिंता करि हारे हैं।
'गुरुदत्त' महावीर पीर के हरनहार,
मेरे तो सरन एक चरन तीहारे हैं ॥ ३ ॥

जोग जप तप जग्य नेमव्रत पुन्य जेते कीए नहिं,
पगु गंग मग में न धारे है।
तीरथ नहाए न गोवींद गुन गाए,
नहिं गुरु पितु मात पद पंकज पषारे हैं।
कीन्हें संग संत के न दान दीन्हें लीन्हें,
जस औगुन करोर घोर करत न हारे हैं।
'गुरुदत्त' अजनि के सुअन समीर नंद,
रावरे चरन दुष हरन हमारे हैं ॥ ४ ॥
रुद्र अंस वंस कपि भुषन सरोज कुल,
दुत रघुवीर के समीर के दुलारे हैं।
चारि फल दायक सहायक सरनागत के,
राम रघुनायक के प्रान सम प्यारे हैं।
हांक सुनि दीनता की देत सरवस आय परे,
परवस पर संपन्ह उबारे हैं।

'गुरुदत्त' बजरंगी बीना कौन संगी होत,
पीर के हरन बीर चरन तीहारे हैं ॥ ५ ॥

चिंतत चरन चिंता रहै न बीपति हुँ की दया,
द्रीस्ठ जाकी जग मंगल करन है।
दारिद हरन मंजु महिमा अपार जाकी,
सेवन सुपद सर्वं आनंद भरन है।
कीजिए गोहार दीन जन की पुकार,
सुनि अंजनि कुमार दुप दीरघ दरन है।
औढर ढरन आस पुरन करन कीस,
मुरति विकट कोटि संकट हरन है ॥ ६ ॥

वेरि काटीवे की पल आध कीन देरी होय,
चीर हनिवंत मोद मंगल मचाइए।
कारा ग्रीह मंध्यते निकारि नीज मंदिर में,
नंदन समीर के सु संपति सचाइए।
रंचता की अंक मेटि संकते निसंकि करि विभौ की,
बीभूत बीस्व बीच बीरचाइए।
अंजनी कुमार बीना सुनै को पुकार मेरी आरत,
हलोरत कौं, आपद के आँच ते बचाइए ॥ ७ ॥

पुराक्रीत पाथ के हलोरति हलोरत है,
तोरत है संचित समीर की डहर में।
बीपै वारिनिधि के मरोरनि मरोरत है,
कीय मान प्रवल पहार की उदर में।
औगुन अपारनि तें अघ अंधकारनि तें,
झोरत झकोर झंझकार की झहर में।
महाबीर राषिए जहाजरूपी जीवनाते बोहत है,
कुमति कुपंथ की कहर में ॥ ८ ॥

मधुर बीसाल तें बीसाल तन करि कुदौ,
दुत रघुवंश बली बारीध बीसाल को।
काढत कुलांच कांच कहि गए कंछप के,
गहि गए गाढे मेरु मंडल पताल को।
'गुरुदत्त' आसमान भासमान मढिगए,
बढ़िगए बर्मलोक लोक सुरपाल को।

सेस गए सरकि दरकि गये दीमाज,
लौं देपत कराल काल कपि के उछाल को ॥ ९ ॥

वायु ते प्रवल वायु नंदन चपलि चलौ,
हलौ तल वीतल तलातल अनेत लौं।
प्रलैकाल घन से घमंड घोर रव रूप,
देपत करोर भोर रवि के उगंत लौं।
'गुरुदत्त' कवि चाहै लंक लीलवे को,
कपि पोलवे कों चाहै नभ मंडल प्रचंड लौं।
लंकहूस थहरि हहरि उठे लंक लोक,
कहरि कहरि उठे दानव दीगंत लौं ॥ १० ॥

पावक विलोकि वीर वांको हनिवंत,
चली निवुकी निसंक लंक धंक गढ चढिगौं।
प्रलै घोर घन से कठोर धुनि गरजत,
तरजत मंदर समान तन वढिगौं।
दावानल ज्वार जोर चढि कै गगन लगौ,
डगौ दिसि कुंजर कमठ काच कढिगौं।
लुम लटपट की लपेट नभ मंडण जौं,
अरुन अखंडल सरासन में मढिगौं ॥ ११ ॥

वाढे लुम लहर कहर ज्यौं अगिन ज्वाल,
हेरत ही नीस्चर नगर उठे हाय हाय।
कोउ त्यागि त्यागि धाय वन भागि भागि,
चले आगि आगि आरत पुकार करैं आय आय।
कोउ ऊवि डुवि डुवि मरे सागर में,
लोटत लहर में जरत कोउ जाय जाय।
रानी राकसन की वीकल वीललानी,
फीरैं कोउ पानी पानी पानी कैं कुंआ में गीरैं धाय धाय ॥१२॥

कोउ कहैं वानर न हैरे देवतन धरे,
राम को पठावो वीरवल क्यौ वरनि जाए।
जोउ गात झारैं हमैं कहत बंबारैं कौन,
कोउ भौन भीतर भभरि गरि भहराए।
काल ते कठिन रूप कवि के नीरपि कोउ,
प्राण लै निकरि चलै कंदरनि में पराए।
कोउ हाय हाय करि धाए धाए धुनि धुनि,
सीस धरनि गीरत तात मात गन गोहराए ॥ १३ ॥

पावक प्रचंड पौन प्रेरित प्रबल देपि हहराए,
हौस्र लंक लाह सम लहराए।
चटकि चटकि टुटि फुटत कनक कोट पुंछ,
पटकनि मनो प्रलै घन अहराए।
जरि कै गीरत छुटि छुटि नग मंदिर तें,
टुटि टुटि परत रतन थंभ थहराए।
'गुरुदत्त' लुमनिरधुम छवि छहराए,
हहराए पावक झकोर झर झहराए॥ १४॥

कोउ लहरत गिरैं कंचन अटारीन्ह ते,
कोउ कहरत फीरैं नारी भीद बीललाए।
कोउ नीर छीठि छीठि पिटि पिटि सीर कहैं,
संकट हरन वेगि संकर करौ सहाए।
कोउ घाल वालक विभय गेह नेह तजि,
भाजि चलै आंच के लगत अंग अकुलाए।
कोऊ सौंज ढोए ढोए बाहर करत कोउ,
रोय रोय रावन के पावन परत आए॥ १५॥

मोम से पिघल परैं कंचन सहर औ लहर के,
झहर ते अकास अवनीछाए।
अंधाधुध अंधकारन ते रोके आसमान,
भान मंडल अपंडित छटा छपाए।
जरत असंप अस्व गज के पुकारन ते लहर,
अपारन ते पारन कहु समुझाए।
उध्धत अंदोर सोर सुनि कै स्रवन फुटै
'गुरुदत्त' घोर धुनि धुअलोक लौं सुनाए॥ १६॥

देपत कनक नग्र कौतुक विवुध भीद,
वरपत सुमन स्वर्ग मंडल सुजस गाए।
धन्य धन्य धुनि रहै धुर लौं धरा के,
छाए धरनी धरन तै न करनी बरनि जाए।
जारि कै निमिप में नगर घर घर सोधि,
कुदि परौ वीर नीर निधि में तुरित जाए।
पुंछ को बुझाये कैसी आके,
पद सीर नाए सागर उतरि गहे राम के चरन आए॥ १७॥

जहाँ अति पावक प्रचंड जौं अपंड,
धार लहरै अपार चहुवोर करि घेरे हैं।

जहाँ बाघ सिंघ को समुहनरदत फीरैं,
दुसीर दुरह दुरदन के दरेरे हैं।
जहाँ मेरु मंडल अपंडदल दैतन्ह के,
काल सम कोटिन्ह कुलिस ते करेरे हैं।
'गुरुदत्त' नंदन समीर के सपंछ ह्यौं प्रतछ,
तहा रापन को दुच्छ पद तेरे हैं ॥ १८ ॥

जहाँ जल हीन दीन मीन से मरत परे,
बीपते बीकल परे सकै न उबरिकें।
जहाँ घोर घाम तें जरत अंग जल बीना,
कंज से झुकरि गिरै मुलतें उखरि कें।
जहाँ उसे तछक के रछकन ए करन कल से,
पुंछकन कोउ बात पुछत पुकरि कैं।
रहत पौन नंद तेरे पद प्रान रापन कौं,
रापे आन अंम्रीत सरोअर से भरि कैं ॥ १६ ॥

जहाँ जात पातन में पुछत बात कोउ,
दीरघ दरीद्र महा मंदीर बसतु है।
आदर न रह्यौ जहाँ जाको रंक राजनि मैं,
देपत कुसाज लोक लाजन हँसतु है।
जहाँ दीन छीन अति आरत अधिन फिरैं,
हीन धन जहाँ द्वार द्वार दरसतु है।
'गुरुदत्त' महावीर वज्र तन धारी तहाँ तेरे पद,
कंज फल प्रदुम लसतु है ॥ २० ॥

जहा कोउ संगीत सहाय घाय माय घने घेरे दुष्ट दुरजन और धुंगल घवाइ है।
जहाँ जोर जकरे जजीरन्ह तें भारी पीर थीर परदेस मे न देस दुपदाइ है।
हीत सौं मीलत बात बोलत अनहित जहाँ जाँचन तें आस आस रापत पराइ है।
'गुरुदत्त' महावीर पीर के हरन तहाँ तेरे पद चींतेन सरव सुपदाइ है ॥२१॥

जहाँ लेस दुप को न खल को प्रवेस तहाँ देपत कलेस देस दुष्ट दुरजन के।
जहाँ पुंज प्रेम को अप्रेम प्रगटत जहां धन को सुमेर तहाँ ढेर नीरधन के।
जहाँ जस कीरति अकिरति अजस जहां व्यापत न बीथा तहाँ व्याध बरपन के।
'गुरुदत्त' तहां कीस नाएक सपंछ ह्वै बीपछता न रापै पछ प्रन के ॥२२॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विपय—हनुमान जी की स्तुति की गई है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना खरीकार है। इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता।

संख्या ५० ख. कवित्त श्री वींधाचल देवी जी को, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र—१, आकार - ८ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः कवीत ॥ श्री वींधाचल देवीजी को ॥

इन्द्रादीक देवन के मींद नीत सेवौ जहाँ अनिमादि सिधिरहे चेरी सी कहाए कै।
कला को समुह झलकत झला झल रही कोटि रवि चंद ते दुचंत छविछाए कै।
दानी अभिमत की नीसानी त्रिभुअन की है वानी वरनत सदा जाको जस गाए कै।
काहे को फिरत मुढ़ दीन ह्वै दूनी के बीच वीधाचल देवी को दरस देषजाए कै ॥१॥

धाए कै करेगो कहा जाय कै जगत में रे गायकै करैगो गुन कहा सुरनर की।
सुनै को दीगंत मे न दुजो दुप दीनन को बुझै को वीथा को वीनां कन्या भूमिधर की।
रूप की है रासनी प्रकासनी चराचर की नासनी है दुप की उसासनी अमर की।
रानी संभुजु की ठकुरानी त्री जगत की है वींध की भवानी सोहदानी अभै वर सी ॥२॥

जाकी आदी सुरती को ध्यावै विस्नु विधि संभु जाके वल पालन करत है जगत को।
जाके पद चींतामनि चींतन करत नेकु चिंता न रहत छन भीतर भगत को।
पाननी सुजस की उपाटनी अजस की सो ठाठनी है संप्रति की काटनी वीपत की।
स्रीष्टी की प्रकासनी निवासनी हीदै की वुधी, रासनी सो वासनी है वींध परवतकी ॥३॥

विधिकर कंज से सवारे हैं सुभग सीला स्वर्न भइ मंडीत अमंडीत प्रभासनी।
हेमगिरिहूँते उच्च उदित उदोत जोत मनि मै कनी को मंजु मंदीर सुखासनी।
मुल त्रीगुनत् की महत् महिमा की महा सुंदर वदन सोहै मंजु म्रीदु हासनी।
कोटीन कलाधर कला की है प्रकासनी सो विंध गिरि उपर वीराजे वींधवासनी ॥४॥
उदै अस्त गिरि लौं अपंडित प्रताप होत दाप होत मंडीत भुअन दस सार मे।

संपति कुवेर सो सुमेर सो अचल होत,
वल होत पारथ जौं भारत अपार में।
ग्यानी सुर गुरु से करन समदानी होत,
वानी सो वीदित वुधि गन के बीचार में।
'गुरुदत्त' कवि वींधवासनी भवानी जु के,
पद वरदानी दरसत दरवार में ॥ ५ ॥

जाके रोम रोम कोटि कोटि ब्रह्मंड वने,
मुल महिमा की सुलधर की धरनि है।

दुष की फरनि सोच हिय की हरनि,
असरनि की सरनि वारी आनंद भरनि है।
प्रलै उतपत की है वोही आदि कारन सो,
मंगल करनि ग्रंथ अचढर ढरनि है।
'गुरुदत्त' दाया की द्रवनि महामाया सोइ,
बींध गीरी देवी दीह दुष की दरनी है॥ ६॥

केते कोटि ग्रहमंड मंडल अपंड जाके प्रभुता,
प्रचंड ते प्रकासीत अवनि है।
केतो कोटि प्रलै उतपत सो जगत की है,
चीता की हरनि जाकी चारु चितवनि है।
केते कोटि ब्रभा औ बीस्न संभु सुरदेव,
पावत न भेव अंब आपद दविन है।
रूप की समुद्र राजे रुद्र की रवनि महा,
माया विध गिर की सो दाया की द्रवनि है॥ ७॥

कीन्हे जीन्ह ब्रभ को चेतन्य चहु जुग में,
श्रीगुन तीहुपुर में जाकी रही छाए कैं।
जाके गुन गन को समुद्र अपरमपार,
वार वार विधि वेद बानी कही गाए कै।
रचना रची है रंग रंग में अनेक अंग,
अंग में रही है रूप कोटिन बनाए कै॥
रानी आदि ब्रभ की प्रगट है भवानी सोइ,
विधि गिरि उपर बसी है अब आए कै॥ ८॥

जेते हैं जगत में जहा लौं दीन जनता को,
दुष को हरन...कोन...जो और देव रे।
सारदादि सेस ए...और गनेस गन गावत है,
रैन दिन पावन......भेव रे।
सुनि के पुकार बार बार...रन के करत गोहार को,
'गुरुदत्त' वांछित भरनि वसुधा की सोई,
विंधाचल देवी को चरन अब सेव रे॥ ९॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—विंध्यवासिनी देवी की स्तुति की गई है।

टिप्पणी—रचना खरोकार है।

संख्या ५० ग. कवित्त, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र—१ (खर्रांकार), आकार—८ फीट के लगभग × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--पं० दयाशंकर मिश्र, मोहल्ला—गुरूटोला आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि— ... ...

वाह गुरु धुनि सोर सुनि सेना अरिन की दरीन समाने तुंग तुरुक तीलंगी के।
भावक लगे ते अरि जावक से रंगी जाहि डगि जाहि पलक मैं सलक फीरंगी के।
संका रूप सामजौ परावन पलंका परे डरे सब डंका सुनि सींघदल जंगी के॥ ४॥

जाके पेसपाने को पयान सुनि वैरी गन भाजीवे की फौज तें नीकाली सी लिए रहैं।
अटक असाम कै अमिरन के भीर सब सुनि कै समर संकसाली सी हीए रहैं।
थलक थोपारा वो सोतारा लागि सींघन की गुरुदत्त कीरती उजाली सी कीए रहैं।
पालसा अकाली जौं करालदल काली के निरषि अवदाली सपताली सी दीए रहैं॥ ५॥

देषत ही झाई सी झलक स्याम झुंडनि के वीर रंड पंडनि के आतुर वेहाल के।
टोपी सिर फेकि फेकि फौजैं सब टापुन की चढ़ि कै जहाज मग हेरत ही माल के।
भाजे अरि सुनत अवाजैं अरदशनि के त्रासनि के मारे तन छुटैं अरिपाल के।
घालक मलेछन के सालक है सग्रुन के पालक हैं प्रन के ए बालक अकाल के॥ ६॥

कई वार द्वादस वरष लौं घसंडकरि ब्रंभ रिषि होन को अपंडतप धारे हैं।
कौसीक वीचारे और स्रीष्ठ करि हारे पै न कबहुँ वसीष्ठ ब्रंभ रिषि के पुकारे हैं।
सौ तौ कलिकाल मैं सुगत थोतार जो प्रभान करि केस के नीसान सीर धारे हैं।
श्रीगुर गोवीद के सरन मैं वरोवर ह्वै ब्रंभ होत वर्न अवरन न वीचारे हैं॥ ७॥

जोग जप तप जग्य नेम व्रत पुन्य जेते पावै पद ब्रंभ को न कर्मनि घटाए ते।
ससन अनेक देवतन के उपासन तें पावत न पार पौन उपर चढ़ाए तें।
मनि अमादि औ निषेद स्रुति वेदन तें पदन मिटै है कोटि तीरथ अन्हाएतें।
आगम निगम जहि अगम बषानै सो सुगम भयो वाह गुरू नाम गुन गाएतें॥ ८॥

जैसे दीप दीप के परसदीप समहोत भ्रींगी कीट तदवत सरूप लवलाए तें।
जैसे और कुप सर सलिता सलिल जेते गंग सम होत गंग जल में समाएं तें।
जैसे और तरु मैं सुगंध मलया से होत मलय सुगंधनि के गंध लपटाए तें।
तैसे होत श्री गुर गोवींद के सरन आए नाम इ वाह गुरु नाम गुन गाए तें॥ ९॥

जैसे जल रंग मैं परत रंग सम लोह हेम होते पारस तें परस कराए तें।
जैसे ब्रंभ रंग के तरंगनि मैं रंगी जात प्रेम के उमंगनि मैं अंग उमगाए तें।
जैसे आप आप मैं मीलत आप चीन्हत हीं संत सतगुरु ग्यान गुदनि लषाए तें।
तैसे होत श्री गुरु गोवींद के सरन आए नामइ वाह गुरु नाम गुन गाए तें॥१०॥
रहतीन हींदुन की दसीदह दीसनि मैं सहतीन भार महिपदल के झोक मैं।

अँटर्क के पार सम कंटक मलेछन को सींघ दल जाज़ीम जौं डारत न रोंक में।
पंथ के चढ़त जाके बढ़त वीवेक आवै पावै पर प्रभ को समानै गुरलोक में।
जप के पढत जय ऊपर दोहाइ मुष वाह गुरु कहत बड़ाई प्रभ लोक में॥११॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—सिखों के अकालीदल और गुरु गोविंद सिंह की बड़ाई की गई है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना खर्राकार है। इन्हीं खर्रों में 'कवित्त हनोमानजी' और 'कबीत वीधाचल देवी जी के' भी लिखे गए हैं। नित्यानंद नामक सुकवि के भी 'कवित्त' इन्हीं के साथ हैं।

संख्या ५१. सन्निपात चंद्रिका, रचयिता—गुरुप्रसाद नारायण (आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—१०$\frac{1}{2}$×७$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९१२ वि०, लिपिकाल—सं० १९१३ के लगभग, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, मोहल्ला—सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सन्निपात चंद्रिका लिप्यते॥

॥ दोहा ॥

स्वोस्ती श्री गुरुदेव पद करौं प्रनाम धरि शीश।
जनहित क्षिति धरि रूप दस संत सो सतगुर ईस॥

॥ दोहा ॥

गन नायक वरनो सदा वहुरि धनंतर देव।
स्वरसती चरन मनाय कहि सन्निपात के भेव॥

॥ सोरठा ॥

करौं वंदना ध्यान श्री सतगुर के चरण जुग।
भव भै हरन मन हान सो मूरति मो उर वसो॥

॥ दोहा ॥

सन्निपात त्रय दस अहै कहौं ताहि के नाम।
लक्षन ताकी औषधी सुनो सकल गुनधाम॥

अथ प्रथम स्यनि दास

॥ दोहा ॥

गरम रूप मीठो भषै जर पावत वढि आइ।
अति चिकनाई पाइके सन्निपात उपजाइ॥

अंत—

॥ अष्टपदी ॥

हरजू सिंघ के वंसनाथ सिंघ नाम जो पायो।
गुरुदयाल भै तासुतनै कन्हू सिंघ जायो॥

तीनही को सुत जुगत श्रेष्ठ गुन भयो निधाना ।
गुर प्रसाद लघुनाम गुरु नारायन जाना ॥
गुर नान्हक को सिष्य नाम आनंद जो पायो ।
विद्या दीन्हो मोहि पंडित शिव वच पढ़ायो ॥
तीनही के परसाद करी कविता मैं भाषी ।
नाम चंद्रिका सन्निपात यहि को लिपि राषी ॥

॥ दोहा ॥

स्वोस्ति श्री गुरदेव पद वसै सदा मन मोर ।
भ्रमै भवर ह्वै भाग के चरन रेनु की ओर ॥
मागत यह वरदान के गुर के चरन मनाइ ।
जवले रवि ससि नभ वसै तवले सुजस सुहाइ ॥

॥ अथ सम्वत वरणन ॥ क्षप्पै ॥

प्रथमहि गणपति दसन बहुरि ग्रह द्वादस दीजै ।
सम्वत विक्रमसाह मास कुम्मार कहीजै ॥
सुक्ल पक्ष शशि वार तिथ्य साप्तमी जनाई ।
गुरु दया आनंद करी पुरसा सुषदाई ॥
सिष्य पुत्र के हेत कही कबि सुनै इसे चित देइ मन ।
जै जै जै श्री गुरुदेव जू मैं असरन तुमरी सरन ॥

इति श्री गुरदयाल सिंघ आत्मज कन्हूसिंघ तत आत्मज गुरुप्रसाद नारायन विरचिते सन्निपात चंद्रिका संग्रह संपूर्ण ।

विषय—आयुर्वेद विषय वर्णन ।

॥ रचनाकाल ॥

प्रथमहि गनपति दसन[1] बहुरि ग्रह[9] द्वादस[12] दीजै ।
सम्वत् विक्रमसाह मास कुम्मार (? कुआर) कहीजै ॥
सुक्ल पक्ष शसि वार तिथ्य साप्तमी जनाइ ।
गुरु दया आनंद करी पुरन सुखदाई ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना के साथ 'दया विलास' रचना भी लिपिबद्ध है ।

संख्या ५२ क. रामजी के सहनाम, रचयिता—गुलाब साहब (भुड़कुड़ा, गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस । दाता—महंत श्री राजाराम जी, ग्राम और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया ।

आदि—श्री रामजी कै सहनाम लिष्यते। श्री रामजी के नाम को करो ब्याखान संतन्ह के चरन रेनु सीरधरी गुरू गोवींद जी की दया ते नाम।

राम रमेश्वर रमीताराम रघुवंसमनी रघुबीर रमायेनं
क्रीस्त केसवं करुणानीधानं करुनामयं कंशवधनं
क्रीपानीधानं करतारं कवलनैनं क्रीतार्थं ग्यान दीपं
गुरु लघ्युजं गीरवरधारियं गोपालं गुरुगोवींदं नारायनं
नारोत्मं नरक नेवारनं नित्यानंदनं नरहरे निर्मनं निराकारं
निर्भयं निर्गुनं नंदनंदनं नामरूपं चक्रपानियं चत्रभुजं
छत्रधारीयं योती स्वरूपं जगवंदनं जनार्जनं जगता
धारनं जगतारनं जसोदा नंदनं तनुरुपं त्रिगुन रहीतं
तारंग नामोदरं दीन दआलं द्रुग विजयं दुषहरनं
दरशानं ध्यानरूपं धरमधारियं धुरंधरं परमेश्वरं
पुरुष पुरानं रामानंदं अपार ब्रह्मं
प्रीतिपूर्णं परमात्मं परपीरहरनं फल रूपं
फलप्राप्तं वीस्नविसंभरं ब्रह्मरूपं ब्रह्मज्ञानं
वीमलं विनाकालं वेग्यानं विधात्यं
वनमालियं व्यकूठपते वसीधरं
भक्तवछलं भगवानं भैहरनं भैभंजनं भागवतं
मनरूपं मधुसूदनं माधवं मनोरथपूर्णं
मनव्यापियं मंगलं मुरारीअं लोकपालनं
लज्याधारनं सर्वग्यानं श्रीपते सुभयं सुग्यानं
हरीनामं हरीरूपं हरयां अनंतनामं अनंतरूपं
असंभवं आजोह्वीयं इस्वरं रामनामं सर्वग्यानं।

॥ रामसाषी ॥

येक नाम सर्व ग्यान है जुन अनंत को जान।
कहै गुलाल जो जय करै सो जाय मिलै भगवान॥

विषय—श्री रामजी के एक सौ नामों का वर्णन किया है।

टिप्पणी—इस रचना का लिपिकाल 'भीखासाहब' कृत 'रामजी का सहस्रनाम' के आधार पर संवत् १८३८ और १८४० के लगभग है।

संख्या ५२ ख. शब्द, रचयिता—गुलाल साहब, स्थान—भुड़कुड़ा, गाजीपुर, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के बीच, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटवड़ागाँव, जिला—बलिया।

आदि— ॥ रामराग हिंडोलना चतुरमासा ॥

हिंडोलना आसा प्रभु पद लाइ ।
इह जग नीर्फल जाइ ॥
कर्म धरम वनी नाव जगत चढी धावइ ।
अवघट घाट कुपाट पार नाही आवही ॥
मास असार अघोर उपजो जन्म सो वनीआइआ ।
चीत चंचल भयो दामीनी छीनुक छीनुक छपाइआ ॥
छत्री स्नातेज जो पवन वरपत जहाँ तहाँ झरिलाइआ ॥
कामादि मोर जो बोलु पल पल तेज सो घहराइआ ॥ १ ॥
सहज सुरती जघु होइ ग्यान सोइ पावइ ।
छन जीव अनुराग तौ प्रेम लगावइ ॥
साँस सावन भरौ चहुँदीसी नवो द्वारे धाइआ ।
सो करो करींपी प्रीती प्रभु सो जाइ गुर सरनाइआ ॥
इहमन वीचारो भर्मटारो दुंद सकल बहाइआ ।
प्रेम पुरन ग्यान उपजो सुरती नाता समाइआ ॥ २ ॥

अंत— ॥ राग वारहमासा ॥

वारहमासा वारह जौं ठहराइ । जनम सुफल तव भाइ ॥
मास असाढ़ जो आइआ तव जीअ आसा लाइ ।
चरनन्ह परचीत लागेउ इतउत नाहीन जाइ ॥
पुरुआ ते पवन झकोर उठत वादल दहुँदीसी धाइआ ।
गरजी गगन अनंत धुनी छवी नाम सो लपटाइआ ॥
सावन सासन मानइ गही गही रोकत जाइ ।
पीआ कै देसन पाएउ कैसे कै मन ठहराइ ॥
सुनी मैं झनकार झन झन मोती रीमी झीमी लइआ ।
धनी भाग वीरहीनी तासु जीवन जसु प्रभु घर आइया ॥ २ ॥
भादौ भरम न आवइ ग्यान कै सुमति लाइ ।
चहुँदीसी चमकत चीत चाक्रीत होइ जाइ ॥
सुपुम सेज सवारी वहु वीधी अगम रंग लाइआ ।
प्रेम सो पवढाइ प्रभु कहँ भाव अंकम लाइअ लाइआ ॥ ३ ॥
कुआर कामना पुरन सबै सोहावन भाई ।
कही जल थाह अथाह कही नीर्मल वरनी न जाइ ॥
मक्ष पुर प्रगास दहु दीसी उदीत चंद सोहाइआ ।
स्याम संग जो रंग लागो मगन माधो भाइआ ॥

× × ×

कहै गुलाल अपार स्वामी गुर क्रीपा घर आइआ।
धन्य जीवन भगत को जीन्ह परम पद इह पाइआ ॥ १२ ॥
परमपद इह पाइआ तव सहज घर ठहराइआ।
भवो अवीचल अभै ग्यानी समुंद लहरी समाइआ ॥ १२ ॥

विषय—आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—इसका लिपिकाल भीखासाहब कृत 'राम सहसनाम' के आधार पर सं० १८३८ और सं० १८४० के लगभग है।

संख्या ४३. अध्यात्म रामायण, रचयिता—गुलाबसिंह, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—८३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—ॐ श्री गणेशायनमः ॥ श्री महादेवोवाच ॥ चौपाई ॥

अथ राजा दसरथ वर जोई। सत्य पराक्रम श्री पति सोई
अजोध्या पती वीर यक आहि।
विश्रुति सब लोकन के मांहि। १
निः संतान दुःख तिन भारा।
वशिष्ट समीप गयौ यक वारा
मुनि शार्दूल वंद पद मंजुल,
परसन (प्रश्न) करी नृप वर कर अंजुल। २
सब लक्षण लषित संतानि।
केहि विधि होवै है मुनि भानि
पुत्रहीन राज सब जे तो।
केवल ये दुख कारण ते सो। ३
वशिष्ट कियो पुनि वैन उचारा।
हो वैं गो नृप वर सुत चारा
मानो लोक पाल तनु धारे।
हो वैं गे बल बुद्धि उदारे। ४

अंत—

कवि उवाच सवैया

जिनके गुण गावत है सनकादिक औ मुष मै चतुरानन गावे।
गुण गावत नारद वीन लये शिवपारवती प्रति नीत सुनावे।
सु उचारत शेश हजार मुषं नहिं अंतुकवी जग भीतर पावे
कवि सिंघ गुलाब सुता रघुनन्दन पुन्य कथा सुनि पाप मिटावे। ७५

जिनके युग भ्रात वसे नंद गाउ सु एक भले नित संग सहाई
जिन राज विभूत तजी छिन मै तन भीतरु वै मुनि रीति बनाई
जिनकी अति गोप कथा जग मै शिव औ रिष मंडल लोक जनाई ।
कवि सिंघ गुलाब सुता रघुनन्दन औध कथा जनु भाष सु नाई । ७६

इति श्री मदध्यातम रामायणौ उमामहेश्वर संवादे अयोध्याकांड नवमोऽध्यायः ।९ अयोध्याकांड समाप्तम् शुभमस्तु श्री संवत् १९१३ शाके १७७८ ।

विषय—महादेव पार्वती के संवाद के रूप में पुत्रोत्पत्ति के संबंध में दशरथ वशिष्ट जी के पास जाकर प्रश्न करते हैं और वशिष्ट जी उत्तर देते हुए पुत्रोत्पत्ति का प्रकार समझाते हैं ।

टिप्पणी—भाषा मुहावरेदार है, पर हस्तलिपि सदोष है । लिपिकाल संवत् १९१३ वि० (शकाब्द १७७८) है ।

संख्या ५४ क. अलंकार ग्रंथ, रचयिता—गुविंद, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५, खंडित (अंत के एक दो पत्रे खंडित), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद ।

आदि— ॥ अथ अलंकार भेद लिष्यते ॥

उपमा ॥ कवित्त ॥

मत्त जे मतंग कैसी मंद मंद चलै चाल,
पद अरविंद से सुछंद सुकुमार हैं ॥
केहरि सी पीन कटि पीन कुच कंचन
कुंभ से लसत कंठ कंबु सो सुठार है ॥
धनुप सी बाँकी भौंह वनी हैं 'गुविंद' दृग
मृग से चपल मुप चंद ऐसो चारु है ॥
रसिक विहारी एक प्यारी मैं निहारी
जाके अंगनि की सुपमा की उपमा अपार है ॥

× × ×

॥ तदगुनि का सवैया ॥

बेल कौ हार दियौ गुहि मालिनि प्यारी
के हाथ गुलाय दिपानौं ॥
लायौ हिये तय चपे कौ ह्वै गयौ
मंद हसी तय कुंद कौ जान्यौ ॥
नैननि को प्रतिबिम्ब परे गुलसोसन की दुति है गई मान्यौ ॥
ऐसो कहू पलटयौ अंग में रंग देपत ही मन मेरो बिकानौ ॥

अंत— ॥ क़ारक दीपक ॥ कवित्त

डोलि कटि काछिनी मैं नाभि सर न्हाइ एरी,
त्रिवली तरंगनि मैं अति सरसाईए ॥
रोमावलि रूप तर नैंक विरमाइ एरी,
राची उर केसरि के रंगनि रंगाइए ॥
बाँकी बनमाल सौं लपटि उरझाइ एरी,
अंग की त्रिभंगि पर वारि वारि जाइए ॥

संदेह ॥

केसौदास सकल सुवास को निवास
यह कैधौं अरविंद ही मैं कुंद मकरंद को ॥

विषय—प्रस्तुत 'अलंकार ग्रंथ' 'कवित्त सार संग्रह' के ही क्रम में एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध है। ग्रंथ में अलंकारों का निरूपण किया गया है। इस निरूपण में कोई क्रम नहीं है। उदाहरण मात्र दिए गए हैं, लक्षण नहीं। इन उदाहरणों में अधिकांश तो गुविंद कवि के हैं तथा कुछ केशवदास आदि अन्य कवियों के भी हैं।

संख्या ५४ ख. कवित्त सार संग्रह, संग्रह कर्त्ता—गुविंद कवि, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—७×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—अथ कवित्त सार संग्रह लिष्यते। प्रथम रितु वसंत।

कवित्त

पल्लव नवल नव सुमन सुवास नव
नवल पराग श्री गुविंद वरसंत है।
नवल समीर नव भौंरनि की भीर
नव कोकिलादि कीर कुलाहल सरसंत है ॥
नव नव जोवन सुहाग भाग अनुराग
दंपति नवल नेह नवल लसंत है ॥
नवल सकल साज नवल सपी समाज,
नवल निकुंज आज नवल वसंत है। १
पल्लव अधर अरू सुमन विकास हास,
झरत पराग वर वारिज वदन मैं ॥
भ्रमत भ्रमर नैन कुच फल पिक वैन
स्वास सुख दैन जानी त्रिविध पवन मैं ॥

रूप गुन जोवन सुहाग भाग अनुराग,
नाना मौर मंजरी गुविंद प्रीति वन मैं ॥
कीनौं बस कंत हुलसंत विलसंत आली
सहज वसंती सलिसंत तेरे तन मैं ॥

अंत—रूप तिहुँ लोक कौ अकेली तैं अनूप पायौ,
गायौ जन पंडित अठारहु पुरान मैं ॥
राम के निहोरैं घाम सीत हूँ मैं आवै जिनि,
कहै 'कासी राम' और कहाँ कहौं जानि मैं ॥
तेरो मुप देषत घनेरौ उतपात होत,
मेरौ कह्यो मानि सोर परैगो जिहान मैं ॥
सारथी समेत सूर मूरछि गिरैगौ आली,
भटकत फिरैगौ रथ पाली आसमान मैं ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'कवित्तसार संग्रह' है। इसमें विविध कवियों की ऋतु वर्णन विषयक रचनाएँ हैं। कवित्त वसंत ऋतु के वर्णन से प्रारंभ होते हैं और हेमंत पर समाप्त होते हैं। ऋतुओं के साथ साथ उनके विहारों का भी वर्णन है, जैसे—वर्षा का हिंडोला तथा शरद का रास।

जिन कवियों की रचनाएँ प्रस्तुत संग्रह में आई हैं उनके नाम ये हैं :—

१—गोविंद या गुविंद
२—देव
३—कालिदास
४—केशवदास
५—ठाकुर
६—भवानी
७—घासीराम

उपर्युक्त कवियों में गुविंद भवानी तथा घासीराम नवीन हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत संग्रह में गुविंद की रचना अपेक्षाकृत अधिक है इसलिये उसी को संग्रहकर्त्ता माना है। प्रस्तुत संग्रह जिस हस्तलेख में है उसमें अलंकार ग्रंथ और 'प्रेमवधीसी' भी लिपिबद्ध हैं।

संख्या ५५ क. चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता, रचयिता—गोकुलनाथ, स्थान—गोकुल, कागज—हाथ का, पत्र—८०, आकार—६३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री मुरारीलाल जी केडिया, मुहल्ला नंदनसाहु, बनारस।

आदि—सो तातें परमानंद स्वामी ने विरह के पद गायो

॥ विहागरो ॥

ब्रज के विरही लोग विचारे।
विना गोपाल ठगे से ठाढ़े अति दुर्लभ तन हारे ॥ १ ॥
मात जसोदा पंथ निहारे निरखति सांझ सवारे ॥
जो कोई कांन कांन कहि बोले अखियन बहुत पनारे ॥ २ ॥
इह मथुरा काजर की रेखा जे निकरे ते कारे ॥
परमानंद स्वामी बिनु ऐसे जैसे चंद बिनु तारे ॥ ३ ॥

अंत—पत्र ८०, कृष्ण की वार्ता का अंशः—

यह पद गाय कें कृष्णदास ने श्री गुसांई जी सो विनती करी जो महाराज मेरो अपराध क्षमा करिये। तब श्री गुसांई जी ने कह्यो तुम्हारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। सो श्री गुसांई जी के वचन से श्रीनाथ जी कृष्णदास को अपराध क्षमा कीयो।

विषय—वार्ता की प्रस्तुत पोथी में परमानंद की वार्ता है उसके पश्चात् वनयात्रा का वर्णन है। तत्पश्चात् कुंभनदास और कृष्णदास की वार्ताएँ हैं। पोथी अपूर्ण है।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'वार्ता' ब्रजभाषा गद्य का उदाहरण है। यह अपूर्ण है और इसमें गुसाईं जी की लिखी 'वनयात्रा' भी सम्मिलित है। इसके प्रस्तुत हस्तलेख की लिपि सुंदर है।

संख्या ५५ ख. चौरासी वैष्णव की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ (स्थान—गोकुल), कागज—देशी, पत्र—७६ से १७६ तक, आकार—७×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८००, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य (ब्रजभाषा), लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा गोपालदास जी, चैतन्यरोड, बनारस।

आदि—७६वें पत्र से उद्धृत :—

बहुत उत्साह भयो। तब स्त्री ने कही जो मैं तुम्हारे साथ दर्शन को आऊँगी॥ तब माहो जो पटेल ने कही जो हों तो अकेलो ही पावन चल्यो जाऊँगो तातें तू केसें आवेगी तब स्त्री नें कही जो में पावन चली आऊंगी। मेरे कछू लरिका तो नांही रोवत॥ तब माहो जी ने कही जो आपन दोऊ जने जांही तो घर कौन के भरोसे छोड़े॥ तब स्त्री ने कही जो मेरे कछू घर सों प्रयोजन नहीं॥ तातें मैं तुम्हारे संग सर्वथा आऊँगी।

अंत—१७६ वें पत्र से : —

मति श्री गुसांई जी नें समझी होइ जो कोठारी ने बीनती करवाई होइगी॥ पाछें कोठारी ने श्री गुसांई जी सों वीनती करी जो राज मो कों तुम्हारे चरणारविंद विना काहू और बात की अपेक्षा नाही। और राज नें यह वचन कह्यो जो आगे इनकी यह दिशा रहेगी नाहीं सो काहे······।

विषय—चौरासी वैष्णवों की वार्ता हिन्दी साहित्य की प्रसिद्ध पुस्तक है। इसमें वल्लभाचार्य की सेवा में उपस्थित रहनेवाले चौरासी पुष्टिमार्गी भक्तों का वर्णन है।

टिप्पणी—यह पुस्तक गो० गोकुलनाथ जी कृत बताई जाती है। इसका प्रस्तुत हस्तलेख जीर्ण शीर्ण और अत्यंत शोचनीय दशा में है। इसमें आरंभ के ७५ पत्रे नहीं हैं। अंतिम पत्र की संख्या १७६ है। लिपि इसकी सुंदर है।

संख्या ५५ ग. चौरासी वैष्णवों की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ (स्थान—गोकुल), कागज - देशी, पत्र—कुल १०३ (४ पत्र से ४३, ४५ से ६१, १४७ से ११३ खंडित हैं।) आकार—११ X ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३७, खंडित रूप—प्राचीन तथा छिन्न भिन्न, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० बा० बालकृष्ण दास जी, चौखम्बा, बनारस।

आदि—२४वें पत्र से उद्धृत :—

तब तुलसा ने या वैष्णव सों कही जो उठो स्नान करि कें महाप्रसाद लेउ। तब वा वैष्णव ने कही जो मैं तो अपने घर जाइकौ स्नान करुगो ताको कारन यह जो ॥ महा प्रसाद की नाही करी ॥ और ज्ञाति व्योहार के लीएँ लीयो नाहीं ॥ सो तुलसा अपने मन में समझ गई ॥ तातें बहुत आग्रह हू नाहीं कियो ॥ यह गौड़ ब्राह्मण हतो और लीला में श्री ललिता जी की सषी हे। तहाँ सौर भाईन को नाम हैं। इनके अंग ते इतर गुलाब की सुगंध आवती सो तुरसा के वश तो श्री मथुरानाथ जी हते ॥ ताते वह वैष्णव श्री ललिता जी की सषी है और तुरसा चंपकलता की सषी हे ॥ तातें महा प्रसाद न लीयो ॥ जो श्री ललिता जी की आज्ञा बिना कैसे लऊँ ॥ सो वह वैष्णव अपने घर उठि गयो ॥ तब तुलसा के मन में बहुत खेद भयो जो मेरे घर ते वैष्णव भुषो गयो ॥

अंत—२४९ वें पत्र से उद्धृत :—

सूरदास जी की वार्ता से

सो सारस्वत ब्राह्मण है। सूरदास जी दिल्ली से या ओर सीही ग्राम हे जहाँ परीक्षत के वेटा जन्मे सो जन्मत ही नेत्र मांई ताकों आंधरो कहियै सूर न कहियै सो या प्रकार सो सूरदास जी प्रगटे सो माता पिता बहुत वाति न करें जो नेत्र विना को पुत्र कहा। सो सुरदास जी वरस छह के भए तवपि ताको एक जिजमान ने दोई मोहर दीनी। ईन के घर में कछू खान पान न हतो। सो पिता दोई मोहर एक कपड़ा के टूक में बांधि के एक गवाजा में धरयो सो मोहर मुसा ऊपर छांति में ले गयो तब माता पिता दोऊ छाती कूटी बहुत रोवन लागे। घर में कछू है नहीं अब कैसी करें।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ प्रसिद्ध ८४ वैष्णवों की वार्ता है। पुस्तक पूरी नहीं मिली। प्राप्तांश में निम्नलिखित वार्ताएँ मिलती हैं :—१-तुलसी २-पद्मनाभ ३-रघुनाथदास ४-सेठ पुरुषोत्तमदास पुत्र तथा पुत्री सहित ५-रामदास ६-गदाधरदास ७-माधोदास ८-हरिवंश पाठक ९-गोविंददास १०-आभा क्षत्राणि ११-गज्जन १२-नरायणदास १३-एक क्षत्राणी १४-सूरदास।

उपर्युक्त वार्ताओं में सूरदास की वार्ता ध्यान देने योग्य है। ८४ वार्ता में एक बात विशेष यह है कि जिन भक्तों का वर्णन हुआ उनके—कृष्ण के अमुक सखा अथवा अमुक सखी करके कल्पित नाम दिए गए हैं।

टिप्पणी—इस ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति का लेख दोषपूर्ण है। भाषा की दृष्टि से भी कुछ प्रयोग चिंत्य हैं, जैसे :—१-तब आचार्य महाप्रभु कहे, २-अकाज (प्रांतीय प्रयोग)। विदित होता है कि इसके लिपिकर्त्ता पूर्वी प्रदेश के हैं। पुस्तक आदि, अंत और मध्य से खंडित और अव्यवस्थित है। सूरदास जी का वृत्तांत उल्लेखनीय है जिसकी संक्षिप्त रूप रेखा नीचे दी जाती है :—

'जन्मस्थान, सीही; सारस्वत ब्राह्मण, जन्मांध, छः वर्ष की अवस्था में घर से निकले, १६ वर्ष के हुए तो प्रतिष्ठा होने लगी और गऊघाट पर रहे। उस समय महाप्रभु वल्लभाचार्य ने इन्हें अपना लिया।'

वार्त्ता के अनुसार सूरदास के पद फारसी लिपि में अकबर ने लिखवाए थे। संभव है, कभी भाग्यवश वह प्रति मिल जाय।

संख्या ५५ घ. चौरासी वैष्णवों की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ, कागज—देशी, पत्र—२७२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५६, खंडित, रूप—सुंदर, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८४९ वि०, प्राप्ति-स्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी।

आदि—जो श्री आचार्यजी पधारे हैं। तब कृष्णदास ने कही। आज्ञा नाही कृष्नदास जब सीधा ले चले तब दामोदर दास पाछें पाछें चले घोड़ा पर पढ़वाइ दिये तब श्री आचार्य जी नें कृस्नदास को दूरी से देखे। पाछे ते दामोदरदास कों देखे जब दामोदरदास दंडौत किए तब श्री आचार्य जी कृस्नदास सों पूंछे जो तें या सों क्यों कही॥ तब दामोदर दास कहे जो महाराज ईन कछुवाही कह्यों हो याके पाछे पाछे आयो हो। तब श्री आचार्य जी दामोदरदास सों कही जो पत्र लाउ तब विनती किये जो पत्र को कहा काम हैं पाछें पत्र मंगायो तब श्री आचार्य जी नें पत्र वाच्यो पत्र को अभिप्राय दामोदर दास सों कहे। तब श्री आचार्य जी को अपने घर पधराई लाए।

अंत—तब अच्युत दास ने श्री आचार्य जी की पादुका जी के मंदिर को द्वार खोल्यो तब देखें तो श्री आचार्य आपु बेठे कहत हे। तब उठि के दंडोत प्रणाम कियो। तब श्री महाप्रभु कहा यह तुम मन में कछु संदेह मति करहु यह हमारी लीला है। अच्युत-दास एसे भगवदी कृपापात्र हुते॥ इति श्री आचार्य जी के से······तथा श्री गुसांई जी के सेवक तथा श्री आचार्य जी की तथा श्री गुसांई जी की वार्ता समाप्त सुभमस्तु॥ श्लोक॥ चिंता संतान हंतारो यत्पदां वुजरेण—

रचीयानां तान्निजाचार्यान्प्रणमामि मुहुर्मुहुः॥ संवत् १८४९ कातीमास कृष्णपक्ष पंचमीय शुभ वासरे संपूर्णं॥ ६॥

विषय—वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी गृहस्थ और विरक्त भक्तों की वार्ताओं का संग्रह। इसमें निम्नलिखित भक्तों का उल्लेख है:—१-कृष्णदास २-पद्मनाभदास ३-कन्नोजिया तुलसी की वार्ता ४-रघुनाथदास ५-लक्ष्मणभट्ट, ६-सेठ पुरुषोत्तमदास ७-उनकी बेटी रुक्मणी की वार्ता ८-रामदास सारस्वत ९-वेणीदास १०-माधोदास ११-अंमांक्षत्राणी कड़ावाली १२-गज्जनधावनाक्षत्री १३-महावन की क्षत्राणी १४-जयदाससूर क्षत्री १५-देवाकपूर क्षत्री १६-दिनकरदास मकुंददास १७-प्रभुदास राजघाट आगरेवाले १८-पुरुषोत्तमदास सेरगढ़ वाले १९-तिपुरदास कायथ, २०-पूर्णमल अंबालेवाले २१-जादवेंद्रदास २२-गुसाईंदास सारस्वत २३-माधवभट्ट २४-गोपालदास २५-पद्मरावत २६-जोशी जगन्नाथ की माता २७-महीधर २८-राणाव्यास २९-रामदास साचोरा गुजराती ३०-ईसुरदुबे ३१-एक राजपूतनी ३२-वासुदेवदास ३३-बाबा वेणू और कृष्णदास घर घरिया ३४-जगतानंद ब्राह्मण थानेसर के ३५-एक सूनार की वार्ता ३६-नारायणदास ठठेर ३७-एक बैरागी ने शालिग्राम पूजो ताकी वार्ता ३८-भगवान दास भितरिया ३९-दामोदरदास कायस्थ की वार्ता ४०-सिंहनद की विधवा क्षत्राणी की वार्ता ४१-कविराज ब्राह्मण की वार्ता ४२-गडू स्वामी की वार्ता, जनार्दनदास गोपालदास ४३-श्री गुसाईं जी की वार्ता ४४-आन्योर को एक ब्रजवासी अपने बेटा को ब्याह कियो ताकी वार्ता ४५-अच्युतदास ब्राह्मण ४६-कन्हैयाल क्षत्री ४७-नारायणदास अंबाले वाले ४८-पार्था गुजरी की वार्ता ४९-स्वामी कुंभनदास ५०-अलीखांन पठान ५१-रूप पुरा के गोपालदास ५३-हरिदास खवास ५४-आचार्य के अयोध्या पधारने की वार्ता ५५-भाईला कोठारी के भतीजा ५६-माणिकचंद ५७-मुरारिदास ५८-संतदास, चोपड़ा ५९-सुंदरदास माहजी ६०-जनार्दनदास चोपड़ा ६१-परमानंद स्वामी ६२-चाचाहू बंशजी की वार्ता ६३-वासुदेव दास छवड़ा ६४-नागजी भट्ट ६५-माधवदास भटनागर कायथ ६६-कायथ सिंहाराय के बाप बेटा तिनकी वार्ता ६७-श्री गुसाईं जी की वार्ता के साथ कुछ और वार्ताएँ हैं जो एक दूसरे के अंतर्गत हो गई हैं।

संख्या ५६, रास पंचाध्यायी, रचयिता—गोपाल (जनगोपाल), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—११×५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७५५ वि०=सन् १६९८ ई०, लिपिकाल—१८८१ वि०, प्राप्तिस्थान—पंडित श्रीधर मिश्र जी ज्योतिषी, मोहल्ला—सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ रास पंचाध्याई लिप्यते ॥

॥ छप्पै ॥

श्रीराधा चरणारविंद आनंद मोदवर।
नव पल्लव दल मंजु ललित जावक जुत सुंदर ॥

नप प्रसून जनु कुंद चंद सम रूप पयूपै ।
मनि नूपुर जगम्मगहि फेलि रहै विविध मयूपै ॥
अभिराम सकल छवि धाम मनु काम वाम वंचत रहत ।
दुपदंद फंद दंदन सकल सुनंद नंदन चंदन करत ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

ठकुरायन श्री राधिका ठाकुर नंद किशोर ।
कृपा कटाछ दुहुन की सरसित जन की ओर ॥ २ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

इहि विधि सुनि नृपराज मनि हरि अद्भुत रसरंग ।
निसा रची पटमास की मिलि गोपिन के संग ॥ ४ ॥

॥ गीतिका छंद ॥

इहि भाँति रासविलास विलसत रसिक सुंदर स्याम ।
चंदि चरन सरोज गोपी चली धामनि धाम ॥
जोग जज्ञ अनेक व्रत तप दान तीरथ आस ।
लहै फल पल येक मैं नर श्रवन सुनि हरिदास ॥
कटै संकट सकल निहचै त्रिविध पातक अंग ।
भगति जुत भगवान की जो सुनैरधि रसरंग ॥
करै जय जय धुनि सकल सुर मुनि भरे सब अहलाद ।
सुधासिंधु समान भूतल भूप सुक संवाद ॥
मदन मोहन माधुरी छवि निरषि लोचन कोर ।
कलपरू 'गोपाल जन कौं' सदी जुगल किशोर ॥ १४ ॥

दोहा

सुमति भई हरि भगति तें बरनी कथा रसाल ।
चारि पदारथ दाहिने रसिक राय गोपाल ॥ १५ ॥
संवत सत्रह सैं समैं पचपन भादव मास ।
आठौ बुध गोपाल जन वरन्यो रास विलास ॥ १६ ॥

इति श्री मद्गोपाल विरचत्तायाँ रहस्य चूड़ामणि विलास विलासितायाँ गोपीजन गोपाल विनोद वर्ननं नाम पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ संवत् १८८१ ॥

विषय—गोपियों के साथ श्री कृष्ण की रासलीला का वर्णन ।

रचनाकाल

संवत सत्रह सैं समैं पचपन भादव मास ।
आठौ बुध गोपाल जन बरन्यो रास विलास ॥

संख्या ५७ क. कर्म शतक, रचयिता—गोपालदास, स्थान—रायपुर (मध्यप्रांत) कागज—आधुनिक, पत्र—७, आकार—८३/४×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस ।

आदि—अथ कर्मशतक ॥

जै जै सकल लोक चिंतामनि शंष चक्र कर धारी ।
धरनी धरन हरन बहु शंकट हरिभक्तन हितकारी ॥
करता करम धरम के सब दिन पाप पुण्य परगासा ।
सकल भूत मय सकल कला करि करते पूब तमासा ॥ १ ॥
मनसा सकृति त्रिगुन तें तृभुवन सुर नर आप उपजाए ।
सुमति कुमति तैं जीव जहन कों नाहक नरक पठाए ॥
जिन जैसा गुन ग्रहै अलप तेहि तैसहिं देव अवासा ।
आप तमास गिरि तै साहेब लपते पूब तमासा ॥ २ ॥
सबको साहेब एक है रचना किये अनेक ।
जकरे करम जंजीर सों जीव न उबरे एक ॥ ३ ॥

॥ छप्पै ॥

कर्ममूल करतार पार पावै नहि कोई ।
ब्रह्म विष्णु शिव शक्ति आदि गति लहै न सोई ।
रचना सकल चरित्र लोक लोकन उपजावै ।
सुर नर मुनिहुँ न सदा नाच बहु अमित नचावैं ।
आगम समस्त सुविचार हित चिराहुँ सुमति सुधर्म कों ॥ ४ ॥

× × ×

चौबोला

पासवान अपमारग सिगरे कलिहिं नृपति के भारे ।
करत प्रपंच रहत निसिवासर राह सुमति के मारे ॥
परधन परनारी पर निंदा सब पर नर करि आसा ।
साहेब के दरबार तिनहुँ का ह्वैगा पूब तमासा ॥ ५७ ॥

× × ×

विषय—

ब्रह्मा, विष्णु, महेश की कीर्ति का तथा कीर्ति योग्य कार्यों का वर्णन ।

टिप्पणी—विशेष के लिये देखिए माखनकृत 'श्रीनागपिंगल' और गोपाल कृत 'विनोद शतक' ।

संख्या ५७ ग. पुन्यसतक, रचयिता—गोपालदास चानक, स्थान—रायपुर (मध्य प्रदेश), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—८½ X ६¾ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस ।

आदि—

अथ पुन्यसतक ॥

॥ त्रिभंगी छंद ॥

जै जै गन नायक मंगलदायक प्रभुलायक दारिद दरनं ।
जै जै वर वानि त्रिभुवन जानि सब सुषदानी तुव सरनं ।
जै सुंदर वदनं सब सुप सदनं अरिमद छपनं अघहरनं ।
हैहयकुल राजा रामनिवाजा जै जै कीरति उच्चरनं ॥ १ ॥

॥ छप्पै ॥

पूरन पुरुष पुरान पुन्य त्रिभुवन मे मंडन ।
अजर अमर अकलंक महापापन के पंडन ।
जोग जज्ञ जपतप समस्त जाके श्रुतिगावै ।
परायन जप होम रूप नारायन पावै ।
गोपाल भनत जिहि चरित नित सुनि मंगल जग जाहिने ।
षलदल कलेस दल मलन कौं सुधर्म प्रबल जिहि दाहिने ॥ २ ॥

॥ चौबोला ॥

पुन्य प्रबल जिहि होत दाहिनो ताहिन तक्कै कोई ।
तीन लोक पर अमन चलावै जो चाहे सो सोई
दिन दिन बढ़ै घटै नहि कबहूँ जो दिलमें कोई रष्पै ।
षूबी करै पलक में अच्छा षूब तमासा लष्पै ॥ ३ ॥

अंत—

जे नर महा विषय रस भूले मन मन फूले डोलैं ।
भावन भगत प्रेम के द्रोही कथा न मुष से बोलैं ।

महा कठोर काठ पाहन तें स्वारथ भोग विलासा।
निहचे नरक वास तिनहीं का ऐसा पूब तमासा ॥ २१ ॥
वाढै धर्म राज रजधानी राजनीति मतभारी।
कीरतिदान कृपाण पैज पन सुप संपति अधिकारी।
आनंदमोद विनोद दिनहि दिन सकल वृद्धि कै छाजा ॥
सकल प्रतापवान महि मंडन राजसिंह श्रीराजा ॥ २७ ॥

इतिश्री हैहय कुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामनि चानक गोपालदास विरचितायां पुन्य सतक समाप्तं शुभ मस्तु ॥

विषय—

राजाओं को प्रजा पर न्याय पूर्वक राज्य करने का उपदेश किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत शतक में २७ छंद हैं। विशेष के लिये देखिए, 'विनोद शतक' और माखनकृत 'श्रीनागपिंगल'।

संख्या—५७ घ, विनोद सतक रचयिता—गोपाल दास चानक, पत्र—१०, आकार—८½ × ६¾ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी,—प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी।

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥
श्री गुरुभ्यो नमः ॥ लिष्यते विनोद सतक ॥

॥ तृभंगी छंद ॥

जैगणु नायक मंगल दायक आनंद लायक शुभकरनं।
मंडित मनि जालं मुकुट विशालं वंदन भालं ससि धरनं।
कर कठिन कुठारं विघन विदारं अपरम पारं अघहरनं।
जै सुंदर वदनं आपद हरनं तव चरनं असरन सरनं ॥ १ ॥

॥ चौबोला ॥

जुगल किसोर विनोद सरस रस वरनत विविध विहारै।
पूरन प्रेम प्रीति निसि वासर रचे सषी सुकमारै।
मान विरह संजोग सुरति तै सुंदरि सदा विलासा।
बारह मास छ रितु नव कुंजन उपजै पूब तमासा ॥ २ ॥

अंत—

बहु विरोध बहु क्रोध लोभ बहु कबहुँ न किज्जिय।

बहु विषाद बहु वाद स्वाद बहु चित्त न दिज्जिय ।
बहु अधर्म बहु धर्म बहुँत कबहूँ नहि कारिय ।
बहु अनर्थ बहु अर्थ हेत सत्या नहिं हारिय ।
गोपाल कहत कछु मंत्र मति सुबहु विचित्र संसार पर ।
बहु गर्ब सर्ब दुष मूल है सुअति अधिक उतपात नर । ५३ ।

इतिश्री हैहय कुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामणि चानक गोपालदास विरचितायां विनोद सतक समाप्त ॥

शुभं भवतु

विषय—

राधाकृष्ण का कुंज विहार तथा बारहमासा वर्णन ।

टिप्पणी—इनके प्रस्तुत रचनाओं—शृंगार शतक, कीर्ति शतक, पुण्य शतक, विनोद शतक, वीरशतक और कर्मशतक—के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता हैहय वंशी राजा राजसिंह (रायपुर, मध्यप्रदेश) के चाणक थे। इनके पुत्र का नाम माखन था जो 'श्रीनागपिंगल' के रचयिता थे। दोनों पिता पुत्र उपर्युक्त राजा के ही आश्रय में रहते थे। प्रस्तुत रचनाओं को 'शतक' लिखा गया है, पर किसी में भी सौछंद नहीं पाए जाते। काव्य की दृष्टि से वे सभी रचनाएँ अच्छी हैं। इनमें दोहा चौबोला, सवैया, कवित्त और छप्पय छंदों में रचनाएँ की गई हैं। चौबोलों के अंत में 'देखा खूब तमास' या 'खूब तमासा देखा' खड़ी बोली के पद प्रयुक्त हुए हैं। हो सकता है, इनपर समस्या पूर्ति की गई हो। इससे यह प्रकट होता है कि उस समय खड़ी बोली में समस्या पूर्ति का प्रचलन हो गया था यद्यपि प्रस्तुत रचयिता ने ब्रजभाषा में इनकी पूर्ति की।

संख्या ५७ ङ. वीर सतक, रचयिता—गोपालदास (रायपुर मध्यप्रांत), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—८½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—श्री गणेशायनमः। अथ वीर सतक।

जै रघुबीर भीर भय भंजन धनुक बान कर धारी।
सीतावर सुंदर वर श्रीवर मंगल वर सुपकारी।
सकल धर्म वर भूमि भूपवर समर सुभट वर सोहैं।
कलपलता वरदान मानवर त्रिभुवन वर मन मोहैं ॥ १ ॥
वरनत वीर सतक वरदायक समरवीर रस वानी।
सब सुष बढ़े सदा सुभरन के पानी चढ़े कृपानी।

वीरभूमि भूपाल भोगियत चली विरज छवि छाजै।
राजसिंह वीराधि वीर नृप सदाराज श्री राजै ॥ २ ॥

जेते वीर भए वसुधामै तिन कीरति है छायो।
करि करतूति अभय रजतातैं अपने साक चलायो।
वानो विरद लाज ते भूतल वाढ़े सुजस विलासा।
सूरजमंडल वेधि वीर सब देखे षूब तमासा ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

राजस तामस सातकहिं त्रिविध वीर सब धर्म।
धरे धरनि संसार हैं आप आपने कर्म ॥ ४ ॥

अंत—स्वामी भगतभाव गुन वंदन विप्र भगत हितकारी।
दान धर्म वृत्त दाया करिके भक्ति सदा सुविचारी।
सुद्ध हृदय अति सुद्ध चाहिये सत सीलहिं की आसा।
चारिहुं वरन राह चल जानै देषै षूब तमासा ॥ ३७ ॥

॥ दोहा ॥

इहि विधि चारो वरन के वरने वीर समाज।
चानक कवि गोपाल किय राजसिंह नृपराज ॥ ३८ ॥

इति श्री हैहयकुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजाराजसिंह चूड़ामनि चानक गोपाल विरचितायां वीर सतक समाप्त शुभं भवतु ॥

विषय—वीरों का सात्विक, राजस और तामस के अनुसार भेद मानकर छः प्रकार के वीरों, यथाः—

सत्यवीर, दानवीर, दयावीर, उत्साह वीर, संग्राम वीर और विद्यावीरों का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना में सात्विक, राजस और तामस के अनुसार छः प्रकार के वीरों का वर्णन है :—

सत्यवीर[1] सत्यादिक कहिये दानवीर[2] व्रतधारी।
दयावीर[3] जीवन पै द्रव उत्साह वीर[4] सुपकारी॥
समर सूर संग्रामवीर[5] कहि विद्यावीर[6] वषाने।
ए षटवीर और पुनि कहिए आडंबर करि जाने ॥ ११ ॥

इन छः वीरों के भी उपर्युक्त गुणों के अनुसार उपभेद माने गए हैं। विशेष के लिये देखिए, 'विनोदशतक' और माखनकृत 'श्रीनागपिंगल' के विवरण पत्रों की टिप्पणियाँ।

संख्या ५७ च. सिंगार सतक, रचयिता—गोपालदास चानक, स्थान—रायपुर (मध्यप्रांत), कागज—आधुनिक, पत्र—६, आकार—८½×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ सिंगार सतक ॥

॥ प्लवंगम छंद ॥

जय प्रभु सुंदर स्याम महा अभिराम हैं।
काम विलास विमोहित गोकुल बाम हैं।
नैन निरूप निहारि हिये हरषाइए।
आनंद मोद विनोद भरे गुन गाइए॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

रसिकराय गोपाल हैं नव रस के रस लेत।
अति रूपक श्रंगार तें वृजबालनि सुप देत ॥ २ ॥

॥ पद्मिनीलक्षण ॥ यथा ॥

कुंदन सरीर नव कुंकुम को उबटन कैधौं
रूप पोथी काढी सौनिक मदनु है।
सुमन सुगंध अंग चाह को अहार जनु
मंद मुप हांस कुंद कलिका रदनु है।
साँची कै सीढारी वृषभानु की दुलारी प्यारी पूरण मयंक सम राजत बदनु है।
ऐसी मन भावती को भावते गोपाल लाल देषौ किन जाय वृषभानु को सदनु है ॥३॥

॥ अथ चित्रिनी लक्षन ॥

आजु हौं गई वृषभानु जू के भवन माँझ देषन के हौंस चढि औचक अटारी मैं।
कैधौं हैं पठाई कोक कारिका कौं काम नाहि निपट पहिचानी ताहि देव की कुमारी मैं।
सुषमा षषानवे कौं एक मुप रसना है तरुनी जितेक से लै सर्व वारिडारी है।
चित्रित तिहारौ रूप रमन विचित्रता सौं चित्रनी सो मोहि चाहि राधे चित्र सारी मैं ॥४॥

अंत— ॥ रौद्ररस कवित्त ॥

फारि डारे पंभ कौं फरांक दै दनुज उर
गारिडारे वलिदेव संकट विचारियो।
जारिडारे सगर के साठिहूँ हजार सुत
तारिडारे नृगु सें असेष निरधारियो।
मारिडारै ऐंड करि आए जे दनुज वली
कुवलयदतारे हूँ को पेलतैं संघारियो।

जैसे रंग भूमि माह मल्लन दरेरि मारे
दावादार दारि दै दरेरि किन मारियो ॥ ३३ ॥

॥ दोहा ॥

जुगल किसोर विलास रस वरनत कवि गोपाल।
हरपे सदा विनोद सुनि राजसिंह भुवपाल ॥ ३४ ॥

इति श्री हैहय कुल कमल प्रकाश भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामणि चानक गोपालदास विरचितायाँ श्रृंगार शतक समाप्तं शुभं भवत ॥

विषय--नायिका भेद और रसों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना में नायिका भेद का वर्णन अत्यंत संक्षिप्त है। केवल वीर, अद्भुत, भयानक और रौद्र रसों का वर्णन हुआ है, वह भी बहुत संक्षेप में। विशेष के लिये 'विनोद शतक' और माखन कृत 'श्रीनाग पिंगल' की टिप्पणियाँ द्रष्टव्य हैं।

संख्या ५८. वाणियाँ, रचयिता—गोपीचंद। इसके लिये कृपया देखिए, 'गोरखनाथ और सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९।

संख्या ५९. सिद्धों की वाणी, रचयिता—गोरखनाथ, भरथरी, चिरपट, गोपीचंद, जलंधरी आदि। कागज—देशी, पत्र—४९, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-४०, परिमाण (अनुष्टुप्)-३६७५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपि-काल—१८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस। (हस्तलेख, सं० ८७३)

आदि—स्वामी जी श्री श्री श्री श्री श्रीगोरखनाथ जी कौ कृत लिष्यते। अथ ॥ ग्रंथ गोरपबोध ॥ गोरपोवाच ॥

स्वांमी जी तुम्हें गुरू गुसांई। अम्हेज सिप सवद एक बूझिवा। दया करि कहिवा मनहु न करिवा रोसं आरंभी चेला कैसें रहै। सतगुर होइ सपूछ्या कहैं ॥ १ ॥

॥ श्री मछिंद्रोवाच ॥

अवधू रहिबा तौ हाटैं वाटैं रूप वृप की छाया।
तजिवा तौ कांम क्रोध लोभ मोह संसार की माया ॥
आपसूं गोष्टि अनंत विचार। पंडित निंदा अल्पअहार।
आरंभी चेला यहि विधि रहै। गोर्षं सुणौं मंछिंद्र कहै ॥

× × ×

संख्या ५७ च. सिंगार सतक, रचयिता—गोपालदास चानक, स्थान—रायपुर (मध्यप्रांत), कागज—आधुनिक, पत्र—६, आकार—८३/४×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ सिंगार सतक ॥

॥ प्लवंगम छंद ॥

जय प्रभु सुंदर स्याम महा अभिराम हैं।
काम विलास विमोहित गोकुल वाम हैं।
नैन निरूप निहारि हिये हरपाइए।
आनंद मोद विनोद भरे गुन गाइए ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

रसिकराय गोपाल हैं नव रस के रस लेत।
अति रूपक श्रृंगार तें बृजबालनि सुप देत ॥ २ ॥

॥ पद्मिनीलक्षण ॥ यथा ॥

कुंदन सरीर नव कुंकुम को उवटन कैधौं
रूप पोथी काढी सौनिक मदनु है।
सुमन सुगंध अंग चाह को अहार जनु
मंद मुप हांस कुंद कलिका रदनु है।
साँची कै सीढारी वृपभानु की दुलारी प्यारी पूरण मयंक सम राजत वदनु है।
ऐसी मन भावती को भावते गोपाल लाल देपौ किन जाय वृपभानु को सदनु है ॥३॥

॥ अथ चित्रिनी लक्षन ॥

आजु हौं गई वृपभानु जू के भवन माँझ देपन के हौंस चढि औचक अटारी मैं।
कैधौ हैं पठाई कोक कारिका कों काम नाहि निपट पहिचानी ताहि देव की कुमारी मैं।
सुपमा बपानवे कों एक मुप रसना है तरुनी जितेक से लै सर्व वारिडारी है।
चित्रित तिहारो रूप रमन विचित्रता सों चित्रनी सो मोहि चाहि राधे चित्र सारी मैं ॥४॥

अंत— ॥ रौद्ररस कवित्त ॥

फारि डारे पंभ कों फरांक दै दनुज उर
गारिडारे बलिदेव संकट विचारियो।
जारिडारे सगर के साठिहूँ हजार सुत
तारिडारे नृगु सैं असेप निरधारियो।
मारिडारे ऐंड करि आए जे दनुज वली
कुवलयदतारे हूँ को पेलतैं संघारियो।

जैसे रंग भूमि माह मल्लन दरेरि मारे
दावादार दारि दै दरेरि किन मारियो ॥ ३३ ॥

॥ दोहा ॥

जुगल किसोर विलास रस वरनत कवि गोपाल।
हरपे सदा विनोद सुनि राजसिंह भुवपाल ॥ ३४ ॥

इति श्री हैहय कुल कमल प्रकाश भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामणि चानक गोपालदास विरचितायाँ श्रृंगार शतक समाप्तं शुभं भवत ॥

विषय--नायिका भेद और रसों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना में नायिका भेद का वर्णन अत्यंत संक्षिप्त है। केवल वीर, अद्भुत, भयानक और रौद्र रसों का वर्णन हुआ है, वह भी बहुत संक्षेप में। विशेष के लिये 'विनोद शतक' और माखन कृत 'श्रीनाग पिंगल' की टिप्पणियाँ द्रष्टव्य हैं।

संख्या ५८. वाणियाँ, रचयिता—गोपीचंद। इनके लिये कृपया देखिए, 'गोरखनाथ और सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९।

संख्या ५६. सिद्धों की वाणी, रचयिता—गोरखनाथ, भरथरी, चिरपट, गोपीचंद, जलंधरी आदि। कागज—देशी, पत्र—४९, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-४०, परिमाण (अनुष्टुप्) - ३१७५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपि-काल—१८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस। (हस्तलेख, सं० ८७३)

आदि—स्वामी जी श्री श्री श्री श्री श्रीगोरखनाथ जी कौ कृत लिष्यते। अथ ॥ ग्रंथ गोरपबोध ॥ गोरपोवाच ॥

स्वांमी जी तुम्हें गुरू गुसांई। अम्हेज सिप सवद एक बूझिवा। दया करि कहिवा मनहु न करिवा रोसं आरंभी चेला कैसें रहै। सतगुर होइ सपूछ्या कहैं ॥ १ ॥

॥ श्री मछिंद्रोवाच ॥

अवधू रहिवा तौ हाटैं वाटैं रूंष वृष की छाया।
तजिवा तौ कांम क्रोध लोभ मोह संसार की माया ॥
आपसूं गोष्टि अनंत विचार। पंडित निंदा अल्पग्रहार।
आरंभी चेला यहि विधि रहै। गोपं सुणौं मंछिंद्र कहै ॥

× × ×

मारिबा तौ मनमस्त मारिबा लूटिवा पवन भंडारं ।
साधिबा तौ पंचतत साधिबा सेयबा तौ निरंजन निराकारं ॥ ३ ॥

× × ×

॥ कणेरीपावजी की सबदी ॥

सगौ नहीं संसार चित नही आवै वैरी ।
निरभै होइ निसंक हरप मैं हस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हस्यौ कणेरी हरप मैं हस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हस्यौ कणेरी हरप मैं एक लई आरन ।
जुए विछोही जो मरद मदन विछोह्या मन ॥ २ ॥
मनवा मेरा बीज बिजोवै पवना बाडिलगावै ।
चेतन रावल पहरै बैठा मृघा पेत न पावै ॥ ३ ॥

× × ×

॥ हालीपावजी की सबदी ॥

अजपा जपौ रे अवधु अजपा जपौ पूजो निरंजन थांन ।
गगन मंडल मैं जोति लपाई देपि धरेवा ध्यानं ॥ १ ॥
ल्यौकी आंपि चेतन की पांपि । दिवि रहै दिष्टि सुनि कूं भांपि ॥
अगम अगोचर तहाँ गुरुकुल है ।
एतत देपि सिधहालीपाव कहै ।

× × ×

॥ मीडकीपावजी की सबदी ॥

पिंड चलंतां सबको देपै प्राण चलंत अकेला ।
प्रांन चलंता जे नर देपै तास गुरू मैं चेला ॥ १ ॥
कहा वसै गुरु कहा वसै चेला । कूण सपेत्र कैसैं मेला ।
ऐसा ग्यान कथौ रे भाई । गुर सिप की कूंणवो लपाई ॥ २ ॥

× × ×

॥ हणवंतजी की सबदी ॥

वक्ता आगै श्रोता होइबा धींग देपि मसकीनं ।
सिध कै आगै साधिक होइबा यूं सति सति भापंत हणवतवीरं ॥ १ ॥
वेद पढे पढि पंडित मूवा पढि गुणि भाट नगारी ।
राज करंता राजा मूवा रूप देपि देपि नारी ॥ २ ॥

× × ×

॥ नागाअरजन की सबदी ॥

दारू तैं दाष उतपनी दाष कथी नही जाई।
दाष दारू जब परचा भया दाष मैं दारू समाई ॥ १ ॥
पूरब उतपत्ति पछिम निरंतर उपपति परलै काया।
अभिअंतरि पिंड छांडि प्रांन भरपूरि रहै।
सिध संकेत "नागाअरजन" कहै ॥ २ ॥
आपा मेटिला सतगुर थापिला।
न करिबा जोग जुगति का हेला।
उनमन डोरी जब पैंचीला।
तब सहज जोति का मेला ॥ ३ ॥

॥ सिध हरतालीजी की सबदी ॥

जोगी सो जो जुगति जांणै आपा थांभि रहावै।
वाहै जोतैं काटै क्यारी पांणी चुपन गिरावै ॥ १ ॥
जोगी सो जो चौर कूं रापै ससि की भिष्या होइ समांगै।
गगनमंडल मैं रोपै षंभ, नाद बिंद बाईस थंभ ॥ २ ॥
× × ×

॥ सिध गरीबजी की सबदी ॥

काया नगरी मैं मन रावल। अहनिस सीझै तहां नृमल चावल ॥
चावल सीझि पकाई डीब। सति सति भापंत "सिधगरीब" ॥ १ ॥

× × ×

॥ धूधलीमलजी की सबदी ॥

॥ चौरासी पटण मूधा मारया ता समझ्या की कथा ॥

॥ आइस जी आवौ ॥

बाबा आवत जात बहूत जुग बीता कछु न चढ़ीया हाथं।
अब का आवण सूफल फलीया पाया निरंजन सिध का साथं ॥ १ ॥

॥ आइस जावौ ॥

बाबा बैठा उठी उठा बैठी बैठि उठि जगदीठा।
घरि घरि रावल भिष्या मांगै अमी महारस मिठा ॥ ३ ॥ आइसजी बैठो ॥

बाबा जिन रठ गाया तिन सब पायातजि पेचर बुधि मति बोलै।
जैसा कमावै तैसा पावै। सति सति भापै धूधली सोलै ॥१४।१५॥

॥ रामचंद्र जी की सबदी ॥

अगनि कुंड समोनारी घृत कुंड समोनरा।
जंघ जोडि प्रसंगांनांम क्यूं तौ मन निहचलरे लषमणां ॥१॥१६॥

॥ बाल गुदाई जी की सबदी ॥

जास माता सीलवंती पिता अस्तन भापते।
तास पुत्र भए जोगेस्वर पुनिरपि जन्म न विंदते ॥ १ ॥
चहूँ दिस जोगी सदा मलंग पेलै वर कांमनि कै संग।
हसै पेलै रापै भाव रापै काया गढ़ का राव ॥ २ ॥
अधिक तत ते गुरु बोलीए समतत गुर भाई।
हीन तत्त ते चेला बोलिए सति सति भापै बालदाई ॥ १३ ॥

॥ घोड़ा चोली जी की सबदी ॥

श्री गोरखनाथ पंथ का भेव। अनंत सिधां मिलि पायो भेव।
पाया भेव भई प्रतीत। अनंत सिधां मैं गोरख अतीत ॥ १ ॥
रविल तेजे चालै राही। उलटी लहर समंद समांही।
पंच तत का जाँनैं भेव। तेतौ रावल प्रतपि देव ॥ २ ॥

× × ×

अंचित पुरांणां गगन गरस। बोलै "घोड़ा चोली" मछिंद का दास।
अचिंतं पुरै हाक्यौ न आवै। तब "घोड़ा चोली" कहा तू पावै ॥ १४ ॥

॥ अजैपाल जी की सबदी ॥

मूंड मूंडे भेप बितुंडे नां बूझी सतगुर की वाँनी।
सुनि सुनि करि भूले पसवा आपा सुध न जाणी ॥ १ ॥
नाभि सुनि तैं पवनां उठ्या ब्रम सुनि मैं पैसा।
तिहि सुनि तैं पिंड ब्रह्मड उपज्या ते सुनि है कैसा ॥ २ ॥

× × ×

जुरा मरन काल सर ब्यापै काम वसंत सरीरं।
लषमण कहै हौं बाबा 'अजैपाल' तुम कूंण आरंभ थीरं ॥ १७ ॥

× × ×

॥ चौणकनाथ जी की सबदी ॥

काकड़ी करमठ कीजै रे अवधू वाइचलै असरालं।
सूनैं देवल चोर पैसैगा चेतो रे चेतनहारं ॥ १ ॥
सिंध साधक मेरै बाइसूं विंद गगन मैं फेरे।
मन का बाकला चुणि चुणि पीलै सीढी उपरि मन क्यूं डोलै ॥ १ ॥

× × ×

॥ देवलनाथ जी की सबदी ॥

"देवल" भए दिसंतरी सब जग मेल्या जोई।
नादी भेदी बहो मिलै अभेदी मिलै न कोई ॥ १ ॥

॥ महादेव जी की सबदी ॥

गगन मन बाँकि लै त्रिविध दुप काटि लै थापि लै बाला पंचभूत।
हरिरस पाकि लै जनम भै भागि लै भापंत सति "सिव" अवधूतं ॥ १ ॥

× × ×

॥ पारवती जी की सबदी ॥

जल मल भरीया तल। अगनिन बलै नाभि कंतल।
अगनि न बलै न प्रगटै किरन। ता कारनि "पारवती" अगत्र का मर्न ॥ १ ॥

\+ + +

॥ सिधमाली पाव जी की सबदी ॥

"सिधमाली पाव लो" सिध माली पावलो सहजैं सींचत बयारी।
उनमनि कला एक पहौपनि पाया जोगिंद्र आवागमन निवारी ॥ १ ॥

\+ + +

चंद सूर दोई फूला फूली रचिलै पवनां मांल संजोई।
गगन सिपर बैठो चौसरि गूथै विरला बूझंत कोई ॥५॥२४॥

॥ सुकलहंस जी की सबदी ॥

देवल देपंता पंडिता देवल पढ़ हउसी।
राजा देपंतां रिणवासं गुरु चेलै प्रतपिवाद होसी ॥
पुत्र न मांनसी माइ बापं ॥ १ ॥

\+ + +

विमल विचार गिर कंदलि पैसिबा "सुकुलहंस" भापंतते हंसं।
चीया चेतन दोउ समकर मेलिबा उडन जाइसी प्रमहंसं ॥५॥२४॥

॥ दत्तात्रेय जी की सबदी ॥

पिमा जायं सील सेवा पंच इंद्री हूतासनं।
उनमनिमंडप निरवांन देव सदा जीवत भावना भेव ॥
लोलीन पूजा मन पहूप सति सति भापत श्री दत्तादेव अवधूत ॥ १ ॥

× × ×

॥ इति सिधू की सबदी संपूर्ण ॥

॥ अथस्यध्यूं का पद लिप्यते ॥

वाघनिलो रे वाघनिलो वाघनि है घटपाड़ी लो।
हेत करै घट भीतरि पैसे सोषि ल्हैवै नौ नाड़ी लो ॥ टेक ॥
जिंद भीसोषे विंद भी सोषे सोषे सुंदरि पाया लो।

\+ + +

ते नर जोनि कदे नही आवै सति सति भाषै 'हणवंतवीर' लो ॥२॥११॥

\+ + +

गहीयौ वाला सति सवद सुषधारा गगन मंडल चढ़ि प्रीतम
असौ रूप वरन तै न्यारा ॥ टेक ॥
धरता कूं करता मति मानौ सति कौ सवद चिताऊँ।
अव लग मरम लह्यौ नही मेरौ गुजवीज कहि जाऊँ ॥ १ ॥

\+ + +

इंछया वोऊ आदि लूं माया यूं सतिभाषै सतवंती ॥६॥१॥८॥

\+ + +

असमानो तयो वृंधं सममानो तयस्यावयं।
अरचंत॰पूजते बिप्रः दुग्धा गउ रोगछितं ॥ १ ॥

इति सिधूं की वानी संपूर्ण ॥ सरव संख्या ॥ गोरखनाथ जी का ग्रंथ ॥ २४ ॥ पद ॥ ६० ॥ राग ॥ १ ॥ सब्दी ॥ २६ ॥ ग्रंथ ॥ २ ॥ पद स्यध्या का ॥ ९ ॥ सरववाणी की जोड़ी ॥ २०५० ॥ सवत् ॥ १८५५ ॥ की मीति माह मासे सुकल पषे तिथ्यौ नाम ॥ २ ॥ वार बुधवार कै दिन सुभंभवेत ॥ लिषतं पारख्या मध्ये लिषतं साध मुकनदास स्वामी जी श्री १०८ अमरदास जी कौ पोता सिष श्री स्वामी जी श्री १०८ श्री दरसणदास जी कौ सिष वांचै विचारै तिनकू राम राम न्मसकार ॥

विषय—संसार को निस्सार बताकर योग द्वारा मुक्ति लाभ करने का उपदेश किया गया है।

इसमें पत्र संख्या २५१ से पत्र संख्या २९९ तक निम्नलिखित सिद्धों की वाणियाँ तथा सबदियाँ हैं :—

१ गोरखनाथ जी
२ भरथरी जी
३ चिरपट जी
४ गोपीचंद जी
५ जलंधरी पाव
६ पृथ्वीनाथ जी
७ चौरंगीनाथ जी
८ कणेरीपाव जी

९ हालीपाव जी
१० मीडकीपाव जी
११ हणवंत जी
१२ नागाअरजन जी
१३ सिधहरताली जी
१४ सिधगरीब जी
१५ धूधलीमल जी
१६ रामचंद्र जी
१७ बालगुदाई जी
१८ घोड़ा चोली जी
१९ अजैपाल जी
२० चौरंकनाथ जी
२१ देवलनाथ जी
२२ महादेव जी
२३ पारवती जी
२४ सिधमाली पाव जी
२५ सुकलहंस जी
२६ दत्तात्रे जी

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं। उसमें प्रस्तुत सिद्धों की रचनाओं के अतिरिक्त निरगुनी संतों की भी रचनाएँ हैं। विशेष के लिये देखिए, प्रस्तुत खोजविवरण में 'सेवादास' पर टिप्पणी।

संख्या ६० क. गोविंद प्रभु की बानी, रचयिता—गोविंद प्रभु, गोकुल, कागज—मशीन का, पत्र—२०, आकार—११ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस।

आदि— राग विभास

तू आज देखिरी मन मोहन वीर विराजैं।
मदन मोहन पीय मणि मंदिर तें बैठे बनि कसि आप छाजे।
लटपटी पाग उर माल मरगजी लटपटात मधुप मधु काजैं।
गोविंद प्रभु के जु सिथिल अरुण द्रग देखियत कोटि मदन लाजैं।

अंत—मदन मोहन वन देखत अरवारो रंग।
सुलप संच गति भेद वरहा निर्त्त करे कोकिला कुहु।
तानतरंग ॥ रें कोकिल कुहूँ कुहूँ तांन तरंग ॥

उघटत शब्द पपीहा पीऊ पीऊ कहे मधु वृत गुंज
माल सरस उपंग। गोविंद प्रभु रीझे सकल सभा सहित ज······।

विषय—वैष्णव कवियों का प्रधान विषय कृष्णलीला का वर्णन रहा है। प्रस्तुत पदसंग्रह में निम्न विषयों के पद हैं :—

१ – दानलीला   २—मानलीला
३—गोचारन   ४—रूपवर्णन

टिप्पणी—गोविंद प्रभु अष्टछाप के कवि माने जाते हैं। परंतु इनके प्राप्त पदों में सरसता और सजीवता का अभाव है तथा उच्चकोटि की कवित्व शक्ति का परिचय नहीं देते। पोथी की लिपि भी अत्यंत दोषपूर्ण है।

संख्या ६० ख. पदावली, रचयिता—गोविंद स्वामी (ब्रज), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—७.५ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंबा, बनारस।

आदि—श्री गोपीवल्लभाय नमः। देव गंधार तेताला।
मानरी मानरी॥ मोहन द्वारे ठाढ़े॥
तेरी तो प्रकृत आँनि पिय की पीर न जानें॥
बातें तो बोहोत डकानें त्यों त्यों आ गरे कपाट दिए गाठे॥ १॥
बरखा रैंनि कारी तो सो तोहि लगत भारी॥
ऐसे ललन पर तन मन धन वारि फेरि दीजें मान गाढ़ें॥
सूनत वचन प्यारी कंठ लगी गिरधारी॥
गोविंद प्रभु को हृदो प्रेम जल सों बुझावों आए विरहानल डाढे॥

अंत—विराजत स्यांम मनोहर प्यारो॥
प्रभु तिहूँ लोक उजियारो॥
सरस वसंत समें वन सोभा श्री ब्रजराज विराजें॥
सुर नर मुनि सब कौतिक भूलें देषि मदन कुल लाजें॥
रंग सुरंग कुसुम नाना रंग सोभा कहत न आवें॥
नवल किशोर और नवल किशोरी राग रागिनी गावें॥
चोवा चंदन अगर कुमकुमा उड़त गुलाल अबीर॥
छिरकत केशरि नव वंशीवट कालींदी के तीर॥
ताल मृदंग उपंग मुरज डफ ढोल भेरि सेहनाई॥
अद्भुत चरित्र रच्यो वृज भुपन शोभा वरनी न जाई॥

विषय—राधाकृष्ण की लीला संबंधी पद हैं। मुख्य विषय बाललीला, रूप, मानलीला आदि हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत पोथी में गोविंद प्रभु के २५१ पदों का संग्रह है। पर ग्रंथ में काव्य तथा संगीत का उचित सामंजस्य नहीं हुआ है।

संख्या—६० ग. गोविंद स्वामी के २५२ कीर्तन, रचयिता—गोविंद स्वामी, कागज-मोटापीला, पत्र—प्रथम और अंतिम, परिमाण (अनुष्टुप्)—७ खंडित, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह "गहलोत", जोधपुर

आदि—॥ ॐन्मः ॥ श्री गणेशायनमः ॥ अथ गोविंद स्वामी के कीर्त्तन लिप्यते: ॥

जागो कृष्ण जसोदा जू बोले यह औसर कोउ सोवे हो।
गावत गुन गोपाल ग्वालिनी हरखित दह्यौं बिलोंवे हो ॥ १ ॥
गो दोहन धुनि पूर रह्यो ब्रज गोपी दीप संजोवे हो।
सुरऽभी हूँ के बछरुवा जागे अवमुख मारग जोंवे हो ॥ २ ॥
वेंन मधुर धुनि महूर वर वाजे ग्वाल गहें कर सेटी हो।
अपनी गाय सब ग्वाल दुहत हें तिहारी गाय अकेली हो ॥ ३ ॥
जागें कृष्ण जगत् की जीवन अरुन वेंन मुख सोहें हो।
गोविंद प्रभु दुहत हें धोरी गोप वधू मन मोहें हो ॥ ४ ॥

राग विभास

एक रसमा कहा कहूं सखीरी ललन की प्रति अमोली।
हसन खेलन चितवन जु छबीली अमृत बचन मृदु बोली ॥ १ ॥
अति रस भरे मदन मोहन पिय अपनें कर खोलत वर चोली।
गोविंद प्रभु की हो बहुत कहा कहों जेजे वातें कहीं मोसों अपनों हूहों खोली ॥ २ ॥

अंत—अवही तें ढोठा चितचोर आगे कहा''(१ क) रोगें
नेंकु बड़े से किने हो,
हुं बलि जाऊं त्रिभुवन जुवतिन के मन हरोगे।
दीसत के तुमने हे से उदर में,
सप्तदीप खंड रोंम जिसुमति कों।
दिखाए सोई सांची अनु सरोगें गोविंद,
प्रभु के जुनेंन नवेंन रस सूं चत मेरे जान मन मथ सोंलरोगें ॥२५२॥

विषय—कीर्तन के पद।

संख्या—६१. श्रीराधामुख षोडशी, रचयिता—गोविंद सुकवि, कागज—आधुनिक, पत्र—१, आकार—१२३/४ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, खंडित, रूप—जीर्ण-शीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० परसुराम चतुर्वेदी, एम० ए० एल० एल० बी०, स्थान व पोस्ट—बलिया, जि० बलिया।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ श्रीराधामुख षोडशी ग्रंथ ।

॥ मंगलाचरन कवित्त ॥

कोऊ तो सराहे सदा गिरिजा गनेश पुनि,
कोऊ तो सराहे सदा नंद जू को नंद कों ।
कोऊ तो सराहे सदा शारदा स्वयंभू पुनि,
कोऊ तो सराहें सदा शंभु सुरचंद कों ॥
कोऊ तो सराहे सदा बौध व्यास वामन को,
कोऊ तो सराहे रामचंद सुखकंद कों ।
"गोविंद सुकवि" पर हम तो सराहे सदा,
आनंद के कंद एक राधा मुखचंद कों ॥ १ ॥

॥ मुखवर्णन कवित्त ॥

कोऊ तो कहत छवि'''र में सरोज भयो,
सुखमा सुभग ताकी नीकी निराधार है ।
कोऊ तो कहत''रसी अमोल ताकी,
आभा अभिराम अति शोहे सुखकार है ॥
कोऊ तो कहत चंद अवनी में उदेभयो,
एसें मुख उपमा कों कहत अपार है ।
गोविंद सुकवि पर मेरे मन जान पर्यो,
कनकलता में फूल लाग्यो आवदार है ॥ २ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त ॥

कोऊ कहे कलानिधि अंबर ते आये याके,
विमल विशाल महा सोपति ही ओज[1] है ।
कोऊ कहे कमनीय आरसी अमोल गोल,
नीकी निरमल महा राजत ही रोज है ॥
एसें अनुवाद करि राधा तेरे आनन की,
उपमा उचारे केते जाकी जेसी मोज है ।
गोविंद पें भेजे जान तेरे तन तालन में,
विकस्यो विशाल महा सुंदर सरोज है ॥ ३ ॥
राधिका रसीली तेरे आनन की आभा लखि,
जल में डुबात गात देखो जलजात है ।
मुकुर मसक[2] जात मान तजि मनही ते,
जानत जगत सोइ बात विख्यात है ॥

१—तेज, कांती, २—फट''',

गोविंद सुकवि कहे तजिकें गुलाब आव[1],
कंपत रहत काप दिन अरू रात है।
चंद शरमाई भयो मन में मलीन ताको,
दाग देह मांहि देखो आज लौं दिखात है ॥ ४ ॥

पुनः यथा कवित्त

जाकी छवि पास मंजु मुकुर मलीन लागे,
एसी अभिराम आभा विमल विचारियें।
जाको लखि रमनीय फविले गुलाव फूल,
लागत है फीके ताकों क्यों करि निवारियें ॥
गोबिंद सुकवि एसे राधा तुम वदन की,
कहो कौन रीते आस्य[2] उपमा उचारिये।
सुखमा समूह भयो अवनी उदय तापें,
कोटिक कमल और चंद्रमा को वारियें ॥ ५ ॥
ओपे अनुराग वाग गहिरे गुलावन की,
पुनीत प्रसून प्रभा उत्तम अमंद है।
कैंधों रस राजन के उचित अमोल गोल,
मंजुल मुकुर छवि छाजे सुखकंद है ॥
कैंधों रूप सागर में पुनीत प्रकाशमान,
कोमल कलित आछे ओपत अविंद है।
कैंधो कवि गोविंद ये राजत ललित महा,
प्यारी के वदन केधो सुधापर चंद है ॥ ६ ॥

'पुनः यथा कवित्त अधिक तद्रूपकालंकार'

चंद में कलंक तेरो मुख निकलंक सदा,
विमल विलोकि वाढ़े हिय में हुलास है।
दिन में मलीन और घटे वढ़े चंद पुनि,
तेरे मुख चंद जू को अखंड आभास है।
षोडश कला है चंद तेरे मुखचंद जू की,
रदन ललित कला वतीश विकाश है।
गोविंद सुकवि यातें चंद तें अधिक प्यारी,
तेरो मुख चंद सदा पूरन प्रकाश है ॥ ७ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त अभेद समरूपकालंकार ॥

राजे रद छदन[3] में पुनीत पीयुष[4] पुनि पोषन,

१—कांती। २—मुख। ३—ओठ। ४—अमृत।

की शक्ति धरि वचन वदन में।
सुंदर सुरंग नैन राजत कुरंग जैसे,
चंद्रिका ·····धोहे महा······में।
उडु सें अधिक नख विमल वरिष्ट महामुनि के,
हरत मन ललित लसन में।
गोविंद सुकवि कहे कीजे कहा फोर,
आली सुधापर चंद अरु राधा के वदन में॥ ८॥

॥ पुनः यथा कवित्त॥

सुधा को छिनाई राधे आपने अधर धारी चंद्रिका छिनाई दीनी देखो'·····दिकों।
षोडश कला को काटि वत्तीस वनाय रद[1] वाकों लखि हीरा हिय पावत प्रमाद कों।
पोषन की शक्ति लई धरी है वचन मांहि एसें सब चंद जू की मूसी[2] मरियाद को।
गोविंद सुकवि तवें वयु में विशाद पाई चंद ले कलंक नभ फिरे फरियाद कों॥ ९॥

॥ पुनः यथा कवित॥

सुधा को छिनाई धरे अपने अधर वीच,
ताकी मधुराई लखि मिश्री भई मंद है।
षोडश कला कों कभी रूदन ललित कला,
वतीश वनाई वैठी मंजू मसनद है।
पोषरू की शक्ति पुनि विमल वचन धरी,
लीनी सब संपत्ति यों राधे रचि फंद है।
गोविंद सुकवि तवे कालिया कलंकधरी,
विचरत व्योम फरियाद हित चंद है॥ १०॥

पुनः यथा कवित

पूरन प्रताप···औषधि को ईश छेकें मंजू···
धरि व्योम चढि आयो है।
यातें उर संतोष न भयो तप सागर में,
जाई अवगति अंग पानीय बनायो है।
तऊ मन वंछित की सिधि नहि पायो,
तब उर में उमंग धरि सुधा धरि ल्यायो है।
गोविंद यों चंद कोटि फंद करि हार्यो,
तऊ प्यारी मुख चंद जू की समता न पायो है॥११॥

१—दांत, २—ऐंठ लेना।

॥ पुनः यथा कवित्त ॥

मंजुल मुकर सो तो सबकी अहत छबि,
तदपि तनक नांहि तनु मांहि भाये है।
कमल करत तप सर में सदाय रही,
तदपि न पाय प्रभा किंचित सो काये है।
वारधि में बूडि बूडि पानिप चढ़ाई वपु,
चढ़े नभ सान[1] तऊ शोभा माहि लाये है।
गोविंद अनेक एसें फंद करिहारे पर,
तेरे मुख उपमा की योग्यता न पावे है ॥ १२ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त मुक्त प्रकेशी अलंकार ॥

\+ \+ \+

—अपूर्ण

विषय—श्री राधा जी के मुख का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—काव्य उत्तम है। कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। ग्रंथ की संपूर्ण प्रति लिपि कर दी गई है।

संख्या ६२. नासकेत पुराण, रचयिता—घनस्याम, स्थान—आजमगढ़, कागज—देशी, पत्र—५३, आकार—९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९१५ वि० = सन् १८५८ ई०, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु गोजवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ नासकेत पुराण भाषा लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु चरण प्रणाम करि रामानुज पदशीश।
वरणत नूतन ग्रंथ यह करहु कृपा जगदीश ॥

॥ चौपाई ॥

व्यास सिष्य अति परम सुजाना। वैस्यंपायन सब जग जाना ॥
जनमेजय सन कहा बुझाई। सूत पुरानिक सो सब गाई ॥
सोइ संवाद कहो अति पावन। नासकेत कर चरित सुहावन ॥
एक समै जनमेजय राजा। गंगातट तप तेज विराजा ॥
करि अस्नान दीन्ह बहुदाना। अन्न बसन मनि भूषण नाना ॥
प्रायाश्चित सुद्धि के कारण। किय दिक्षा जिमि होय निवारन ॥

१—नभ आकाशरू

विप्र रिषिन कर जुरे समाजा। तब कर जोरि प्रश्ण किय राजा॥
वेद शास्त्र सब जानहु स्वामी। व्यास सिप्य प्रभु अंतर जामी॥

॥ दोहा ॥

कहहु कथा अति दिव्य प्रभु जेहि सुनि पाप नसाय।
प्रायश्चित नेवारनो नाहिन अवर उपाय॥

अंत— ॥ छंद ॥

बाढे विविध विधि धर्म तेहि जो श्रवण कर मन लाइकै।
यह नासकेत पुराण नृप हम कहा बहु विधि गाइकै॥
यह सुनत पाप नसाहिं पुनि बैकुंठ बस सो जाइकै।
'घनस्याम' भाषा करि कहै हरिभक्त आयसु पाइकै॥

॥ सोरठा ॥

रामपदारथ लाल गोलवार आजमगढ़ी।
तेहि अज्ञा अनुसार घनस्याम रचना किए॥

॥ दोहा ॥

ओनइस सै पंद्रह कहै संवत कार्तिक मास।
कुज गणपति तिथि जानिये पक्ष सोम परकास॥

इति श्री ब्रह्मांड पुराणे नासकेतोपाख्याने घनस्याम रामानुजदास कृते अष्टदशमोध्याय १८॥ दसपत शिउदीन गुसांइ साकीन आजमगढ़ महल्ले आसिफगंज सुक्रवार सुभम् श्रीः।

विषय— नासिकेत ऋषि द्वारा चौरासी नर्कों की कथा का वर्णन।

रचनाकाल

ओनइस सै पंद्रह कहै संवत कार्तिक मास।
कुज गणपति तिथि जानिये पक्ष सोम परकास॥

संख्या ६३, घोड़ाचोली, रचयिता— घोड़ाचोली, कागज— देशी, पत्र— ७, आकार— ९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)— ६, परिमाण (अनुष्टुप्)— ११८, पूर्ण, रूप— प्राचीन, पद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान— सेठ शिवप्रसाद साहु गोलवारा, मोहल्ला, सदावर्ती; आजमगढ़, जिला— आजमगढ़।

आदि— श्री गणेशायनमः अथ घोड़ा चोलि॥

पारा टांक २ हरताल टांक २ गंधक टांक २ वचटांक २ विसटांक २ घिकुवारि रसटांक ४ टंकनखार टां २ सुंठी टां २ मिर्च टां २ पिपलि टां २ काली जीरि टांक २ हरडें टा २ वहेडा

टां २ आमला टां २ निवकि भ्री टां २ चूकटां २ वाय विडंग टां २ दारूहलदी टां २ अकलकरां टां २ पिपला मूल टां २ लवगं टां २ कूटटां २ ककरा सीगी टां २ मालकांगुनी टां २ निर्विसी टा २ अजवाइनी टा २ पुरासानि अजवाइनी टां २ नौसादर टां २ मुसवर टां २ समुद्रफल टां २ ए सर्व वरावरि करि कपड़क्षान करना ये सबके बरावरि अजेपाल सुद्धकरि मीगी लेना पुनः सर्व एकत्र परलना भंगरा रस सु परलना दिन २१ पुनः गोली मुंग प्रमान अथवा मृच प्रमान अर्चितं नित्य सर्व रोग नासनं 'घोरा चोली सिध कालापानि' नमोस्तुते श्री गोरषनाथ पादुकां नमोस्तुते सिधदाता गणेश ।

अंत—सेत तिलका तेल टां १ गोली सुं मुप मर्दन करे जाहा पश्यति सर्व संगति भवतु पव देवदारु इठ अजमा हिंग अकलकरु गोदुग्ध टां १ प्रमाण दिन २१ श्वेत कुष्ट जाइ पिप्पली मिरिच रक्त पित्ती जाइ पथ्य चना की रोटी अकलकरा छइ त्रिफला त्रिकुटा संग त्रिदोष जाई अजमा कृष्ण जीरक टं १ वटी १ रक्तवायु जाइ वा रक्तक रसेन अंजन नेत्र परास मूल रसे वां कदली रसेन वा पवार रसेन अंजन नेत्र पलास मूल रसे वा कदली रसेन वा पवार रसेनवा गोतकेण दिन २१ फिरंगरोग जोई पथ्य चना की रोटी चूक अजमा मिरिच टं २ अजा दुग्धेन पक्वे विधाय तांवूलेन समं दिन २१ जलंधर जाइ त्रिफला दारू हरिद्रा संग दिन २१ फिरंग वात जाई श्रीपली मधु सहितं वा अरंड तैलेन प्रसूतिवायुः जाइ गो मूत्रेण वा मथुवा रसेन हर्षः जाई कंकोज रसेन वा गुदा लेपः त्रिफला समं दिन ७ पिशाचादि नासनं मिश्री सहित पित्तज्वर नासनं मिरिच सहितं वा एला वा कालागुरु समं वा वावती समं वा चना धारी समं वा चावर जल समं वा धना वाइति ज्वर शांति कनक रसे नश्यति निर्गुंडी रसेन वा अजमा समं वा पिप्पली समं वा नव पत्र निर्गुंडीरस समं स्त्री ज्वर नासनं अरंड मूल सूंठी मस्तक लेपः पीडा नश्यति गोमय रसेन जल प्रेमह णयति पथ्य मठा मिरिच कृष्णभंटा समं रक्त प्रवाह नश्यति ॥

विषय—एक ओषधि का अलग अलग २ अनुपान के साथ अनेक रोगों पर प्रयोग करने का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। एक स्थान पर 'घोरा चोली सिध काला पानी नमोस्तुते श्री गोरषनाथ पादुकां नमोस्तुते' लिखा हुआ मिलता है। इससे जान पड़ता है कि रचयिता का नाम घोड़ाचोली अथवा कालापानी है। हो सकता है कि ग्रंथकार घोड़ाचोली अन्य नाम कालापानी हो और उनके किसी शिष्य ने इसको लिपिबद्ध किया हो। इससे ग्रंथ में दिए हुए उपर्युक्त लेख की संगति मिल जाती है।

संख्या—६४. अमल को कविता, रचयिता · चंडीदान, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—११ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

गीत अमल रो साणोर—

प्रगट अनलतरंग श्रंगार तसवीर मालिम परख।
थरक सिणगार रसवीर थावे है रममन
तारो सदा रंजिया हरक,
अमल थारो अरक गरक आवै ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

सजबी सो मजलस री, गजबी राखण गल्ल।
सदा पियारो सांवलो, यो अहि केण अमल्ल ॥ ४ ॥
दारण जमी देखिया, अनमी तोद अपल्ल।
अमी सरीखो अमलियां, यो अहिकेण अमल्ला ॥ ५ ॥

विषय—अमल (अफीम) की दशा का वर्णन किया है। गीत साणेर १० और दोहे ५ का संग्रह है।

संख्या—६५. श्रृंगार सागर, रचयिता—चंद्रदास, पत्र—६३, आकार ७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५३, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८०५ वि०, लिपिकाल—१६०६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, रत्नाकर संग्रह से, ना० प्र० स० काशी

आदि—

श्रीगणेशायनमः जै महराज की चंददास कृत श्रृंगार सागर लिप्यते।

॥ दोहा ॥

वरन विनायक विमल जस करन उदौ उरज्ञान।
दाएक सकल शो सिधवर गणनांगुणपान ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

बुध विरंच शोसि धरमा जपयोग महेसन मो गणनाऐक।
छब आनन चंद्र सरोज सुधा ससि शोभाल कपाल प्रदाऐक।
ग्रहज्ञान न भानन तेज कला प्रवला अघना सन दोपनसाऐक।
ऋतदान गिरारस रास अभै शोरचौ रचना पद कस्न सहाऐक ॥ १ ॥

अनेक पुरान निधान कीऐ रच भक्त विनोद विहारन मैं
रघुवीर कथा यदुनाऐक की अघ घाएक दोष प्रहारन मैं

गुनै सातिक सत्य सुधा करनी वरनी वहु भांति विचारन मैं
जनचंद रचै मनसा वच सो निजु संतते पद तारन मैं ॥ २ ॥

अंत—

दस[१०] अष्ट[८] सत व्रत वर्ष रची नव सुभनीत विवेक विचारो ।
श्रावण मास कला ससि की दुतिया सुभसंजम धर्म सुधारो ।
ग्राम शोहंस पुरी वसिके एहु पूरन दिव्य पुरान सवारो ।
चंद तजे रस भाव सवै रच जोग शो द्वारहि अंन विशारे ॥२५॥

॥ सोरठा ॥

लीला ललित विवेकु जामें सुपद अनेकु रस,
चंद साधहित मेकु भजन भक्त संजम कथा ॥२७॥
वासर पंच प्रसिद्ध भई सिध पावन कथा,
यहु रस सागर बुध चंददास कृत जान जो ॥२८॥

इतिश्री सिंगार सागर विरचितायां सुभग सुपद सारं
कृस्न लीला विहारं हरन तन विकारं दायकं पुनध्यानं ।
इतीहास क्रीडा वरननं नाम द्वादसमो ध्यान ॥१२॥

चंददास कृतभाषा ॥ इदं पुस्तकं लिख्यतं वासदेव नाम ब्राह्मणे अस्थान हंस ध्वज कोठराम आश्वन मासे कृस्न पक्षे पंचम्यां गुरु वासरे संवत् १९०९ ।

विषय—कृष्ण स्वरूप का वर्णन किया गया है । ग्रंथ में द्वादस अध्याय हैं ।

रचनाकाल

दस अष्ट सत व्रत वर्ष रची नव सुभनीत विवेक विचारो।
श्रावण मास कला ससिकी दुतिया सुभ संजम धर्म सुधारो॥

संख्या—६६. चिंतामणि पद्धति, रचना—चिंतामणि, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—११¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८२, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७८८ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य्य-भाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

श्री चिंतामनि चित के भवनिधि भवतु बनाइ।
प्रनत प्रनत प्रनवत सदा हैं चिंतामनि पाइ॥ १॥
प्रनत गजानन तुव चरन शिव सुत सुजस अनंत।
वसु[८] आठौ[८] मुनि[७] मेदिनी[१] भृगु दिनु माघवसंत॥ २॥
सिद्धि चर्क साग सौ मुनि घुनि वंग प्रकास।
स्वल्प वुद्धि जा वैद कौं ता प्रति वचन विलास॥ ३॥
कर अगुष्ट तो मूल है जाहुंत साकार।
महु दुप सुप जीव को पंढित करौहु वीचार॥ ४॥
आदि पित पुनि मध्य कफ अंत सो पवन प्रधान।
त्रिविघ नला लक्षण कहौं जानहु वैद सुजान॥ ५॥

अंत—

॥ चूर्ण भूपकर॥

सोठि लोध तसुरी हींग मुजिलेव तज पत्रजजायपत्री
पीपरि कवलगटा देवदारू अगर रूमी मस्तकी केसरि
काली जीर समलेव भुकुनू करै पाई॥ १२॥
उपर तात पानी पियै वातसीत पाड मिलाइ पाइ
वलकरै पुष्टि करै धातु पुष्टि करै॥ २०॥
दूसर अजमोदा वाइ विरंग सेघव देवदारू
पीपरि सोठि पिपरामूठ सोवा मिरिच विधारा
समलेव वुकुन करय॰॰

× × ×

विषय—

आयुर्वेद विषय का वर्णन।

रचनाकाल

प्रनत गजानन तुव चरन शिवसुत सुवसु अनंत।
वसु[८] आठौ[८] मुनि[७] मेदिनी[१] भृगुदिनु माघ वसंत॥ २॥

टिप्पणी—ग्रंथ की प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका से पता चलता है कि रचयिता का नाम चिंतामनि मिश्र और उनके इस ग्रंथ का नाम 'चिंतामणिपद्धति है:—

"इति श्री रीपीराम मिश्र आत्मज श्री चिंतामनि पध्यतौ प्रथम आलोकः॥" चिंतामनि मिश्र के पिता का नाम रीपिराम मिश्र था। ग्रंथ की भाषा पूर्वी हिंदी है जो कहीं कहीं खड़ी बोली का रूप लिये हुए है।

संख्या—६७. रासमंडल, रचयिता—चिंतामणि, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—४'२×८'७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—कार्तिक कृष्ण १ बुध, १८२५ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः॥

॥ चिंतामणि कृत रास मंडल लिष्यते॥

॥ झूलनाछंद॥

आपु बहु गोपिका जुगल के मध्य
बहु रूप संगीत की गति प्रवीनो।
विकच ब्रंदा विपिन बीच बहु वेलि
अरु जोन्ह छीरोद छवि पुंज लीनो।
मधुर गंधरब गन सुरज धुनि करी
अपसरन कल गान करि ताल दीनो।
मध्य श्री राधिका संग माधव मधुर
रास मंडल रसिकराय कीनो॥ १॥

फुल्ल नव मल्लिका मालती कुमद
मकरंद हर मंद गति अनिल आयो।
सरद विधु चंद्रिका विसद जमुना
पुलिन गगन सुरजान गन सतनि छायो।

कियो गंधरब अपसरनि मिलि गान अरु ताल वीना मुरज मृदु बजायो॥
सकल सुषमानि को एक आवास हरि रास रसरास सज्जिय सुहायो॥
बजत सुर दुंदुभी मुरज वीना प्रणव तार आदिक विविध मधुर बाजे॥
निकट नभ विमाननि उघट संगीत की देव वनितानि कल गान साजे॥
प्रथम गोपी बहुरि कान्ह गोपी बहुरि कान्ह यों जुगल छवि पुंज छाजे॥
विरचि मंडल नचत नंद नंदन सहित सुंदरी मंद सुंदर विराजे॥

अंत—

विविधि रंगनि वसन अंगना रतन तन
रतन गन रुचिर रुचि भरि विसेपे।
धन मनि सबै श्री नाथ सुंदरिन के
सुंदर विलास सुर तियनि देपे।
मंद मुसक्यानि मुप चंद छवि पानि
कल वानि ललनानि अति ललित लेपे।
लालु रिझायो सब निकुंज पंजरनि
जनु मंजु मुनियानि के पुंज पेपे॥ ३०॥

॥ छप्पय ॥

यह विधि सुललित केलि करिय सब सरद सुभग विधि॥
करिय नरनि पर कृपा कलुप हरि किरि कृरि कृपा निधि॥
फलित भयौ प्राचीन सुकवि जन पुन्य कलप तरु॥
रस अधिपति पति चरित लह्यौ मुनि श्रवण सुधाकरू॥
कातिक राका अंतहरि हठि पठई निज निलय तिय॥
वै लखैं सदाँ उनको निकट गोपन को पन नैकु किय॥ ३१॥

इतिश्री सुकवि चिंतामणि विरचिते "रासमंडलं" ॥ समाप्तं ॥ भागवत को लिखितं तेज लाल वाजपेयी स्व पठनार्थं। संवत् १८२५ कार्तिक कृष्ण १ बुध॥

विषय—

प्रस्तुत 'रासमंडल' में श्रीमद् भागवत के आधार पर झूलना छंदों में कृष्ण और गोपियों की रासक्रीड़ा का वर्णन। यह छोटा ग्रंथ है जिसमें झूलनों की संख्या ३० है। अंत में एक छप्पय है।

टिप्पणी—'रासमंडल' की रचना चिंतामणि द्वारा हुई बतलाई गई है। लिपिकार के कथन के अतिरिक्त इसका अन्य कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं होता। रचयिता ने छंदों में अपनी छाप नहीं दी। इसके अतिरिक्त ग्रंथ में प्रस्तावना नहीं है। इस प्रकार रचयिता का कोई भी परिचय प्राप्त नहीं होता। रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

संख्या ६८. वाणियाँ, रचयिता—चिरपट। इनके विषय में जनश्रुति के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं होता। विशेष के लिए कृपया देखिये 'गोरखनाथ और सिद्धों की वाणी' का विवरणपत्र संख्या ५६।

संख्या ६६ क. कक्का पैंतीसी, रचयिता—चेतन (स्थान वंग), कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० वि०, सन् १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ कक्का पैंतीसी राग में॥

॥ रागनी देवगंधारः॥

कर लीजै सुभ काम जगत में ॥ क० ॥
इह मन चंचल फंद में डारे थिर होय लीजै नाम ॥ जगत में ॥ क० ॥
तन सुं जीव निकल जब जावै कोई न पूछै चाम।
सब स्वारथ के कुटुब है तेरे तुं परमारथ थाम ॥ ज० ॥ २ ॥ क० ॥
वस्तु अमोलिक नाम कहावैं तिनको न लागै दाम।
समझ बूझ अपने मन लीजै तो रहे तेरो माम (? नाम) ॥ज०॥३॥क०॥
लप चौरासी गत कीयच्यारो नहि पाये विसराम।
चेतन चेतो सुद्ध मन अपने पावै अविचल धाम।
ज० ॥ ३ ॥ क० ॥ ते पदं ॥

राग भैरो ०

पाली आवै पाली जावै पाली जीव अकेला है।
पर संगत के माई भाई स्वारथ का सब मेला है ॥ १ ॥ पा० ॥

अंत—

राग इमन कल्यान

श्री जिनराज के सतरह सिपर सरसबने श्री महाराज के स० ॥ १ ॥ श्री० ॥
जाकेर चर्न अद्भुत सोहे अजी गुन निधान करत ध्यान,

धरत ध्यान सुर विमोहै विसाल विविध प्यास,
देपे छवि आज के स० ॥ १ ॥ श्री० ॥
तीन भुवन जिन मंदिर छाजै अजी कलस सजत महारजत,
घंट बजत नाद जग जत झागड़दी झागड़दी झागड़दी दुंदुभी अवाज के
स० ॥ २ ॥ श्री० ॥

मध्यलोक बहु बिंव सुहावै अजी दरस करत करम हरत,
विघन टरत फिरन परत जगत जाल भव संभाल पंचम गत काज के
स० ॥ ३ ॥ श्री० ॥

देव लोक सम चौमुप धारे अजी प्रतिमा प्यार जगमेसार
हृदयधार गुन अपार पार्श्वदेव करत सेव चेतन सुध साज के ॥ ४ ॥स०॥श्री॥

॥ इति पदं ॥

इति सतरह लिपर संपूर्ण। समप्ता। शुभमस्तु। मीती चैत वदि ६ मंगलवार संवत् १८७० का लीषतं सीताराम मथेन लीपायतं बाबू धरमचंद जी ॥ लपी पटना मध्ये ॥ ॥ श्री ॥

विषय—'क' से लेकर 'क्ष' तक के प्रत्येक अक्षर पर रागरागिनियों में पदरचना कर ज्ञानोपदेश किया गया है।

'ह' के पश्चात् 'लं' अक्षर भी मानकर पैंतीस अक्षरों पर पदरचना की गई है।

टिप्पणी— हस्तलेख की लिपि स्वच्छ और सुवाच्य है।

संख्या—६६ ख. चैत्य वंदन, रचयिता- चेतन (स्थान—बंग), कागज— देशी, पत्र—१०, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्) १०७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ चैत्य वंदन लिखते
आदि जिनेश्वर परम गुरु अरजी सुन लीजे,
हम आए तुम पास अ प्रभु दरसन दीजे।
नाभि कुल उज्जल मरुदेवी जाया, वृषभ लंछन विराजमान।

धनुप पाँच से काया लख चौरासी पूरव थितें ए तुम हो सब गुनवान।
ऋद्धि विजय उवझायनो चेतन धारें ध्यान ॥ १ ॥ इति ॥ १ ॥ पुनः

अंत—

छठा स्वयं प्रभु जिनराज सप्तम रिषभानन देवा।
अनंत वीर्य जिन आठ सदा करो नर सेवा।
नव में सूर प्रभु जिन देव दसम विशाल जिनंदा।
वज्रधर जिनवर इग्यार मुझ मेटो भव फंदा।
चंद्रानन जिन बार मोए तेरमो चंद्रबाहु भगवान।
भुयंग देव जिन चौदया साहिब गुन के पांन।
पदरम ईश्वर जगनाथ नेमी सोलम पूजो।
सतरे वीरसेन जिनराज आजमन वंछित पाया।
चंद्रयस उगणीसयो ध्याइये ए अजित वीर्य जिनवीस।
त्रिकाल वदो भाव सुं विघन हरो जगदीस ॥ ३ ॥

॥ इति संपूर्ण ॥

श्री सुबाहू विहरमान आज मुझ दरशन दीजे।
तुम वीतराग अरिहंत सेवक पर किरपा कीजे।
नगर अज्योध्यावास निसढराय कुल चंदा।
जनमें श्री भगवान उदरें मात भूनंदा॥
पद लंछन कपीये ए तिया किं पुरसा नार।
चेतनतासुध होयके वंदे वारंवार ॥ १ ॥

इति सुभमस्तुः

विषय—चौवीस जिग तीर्थंकरों की मूर्तियों की वंदना की गई है।

टिप्पणी—रचयिता का नाम 'चेतन' है। इनके विषय में कृपया देखिए, आगे 'लघुपिंगल' का विवरण पत्र। रचनाकाल अज्ञात है। रचयिता के 'पदों (ककापैंतीसी)' में, जो एकही हस्तलेख में प्रस्तुत रचना के आगे लिखे गए हैं—संवत् १८७० वि० लिपिकाल दिया है। अतः प्रस्तुत रचना का लिपिकाल भी यही होना चाहिए।

संख्या ६६ ग, लघु पिंगल भाषा, रचयिता—चेतन, स्थान—बंग (जन्मस्थान), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८४७ वि०= १७९० ई०, लिपिकाल—१८७० वि०=सन् १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ अथ लघुपिंगल भाषा लिखते ॥

धरत ध्यान सुर विमोहै विसाल विवध प्यास,
देषे छवि आज के स० ॥ १ ॥ श्री० ॥
तीन भुवन जिन मंदिर छाजै अजी कलस सजत महारजत,
घंट बजत नाद जग जत झागड़दी झागड़दी झागड़दी दुंदुभी अवाज के
स० ॥ २ ॥ श्री० ॥

मध्यलोक बहु बिंब सुहावै अजी दरस करत करम हरत,
विघन टरत फिरन परत जगत जाल भव संभाल पंचम गत काज के
स० ॥ ३ ॥ श्री० ॥

देव लोक सम चौमुप धारे अजी प्रतिमा प्यार जगमेसार
हृदयधार गुन अपार पार्श्वदेव करत सेव चेतन सुध साज के ॥ ४ ॥स०॥श्री॥

॥ इति पदं ॥

इति सतरह सिपर संपूर्ण । समप्ता । शुभमस्तु । मीती चैत वदि ६ मंगलवार संवत् १८७० का लीपतं सीताराम मथेन लीपायतं बाबू धरमचंद जी ॥ लपी पटना मध्ये ॥ ॥ श्री ॥

विषय—'क' से लेकर 'क्ष' तक के प्रत्येक अक्षर पर रागरागिनियों में पदरचना कर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

'ह' के पश्चात् 'लं' अक्षर भी मानकर पैंतीस अक्षरों पर पदरचना की गई है ।

टिप्पणी— हस्तलेख की लिपि स्वच्छ और सुवाच्य है ।

संख्या—६६ ख. चैत्य वंदन, रचयिता- चेतन (स्थान—वंग), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्) १०७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ चैत्य वंदन लिखते
आदि जिनेश्वर परम गुरु अरजी सुन लीजे,
हम आए तुम पास अ प्रभु दरसन दीजै ।
नाभि कुल उज्जल मरुदेवी जाया, वृषभ लंछन विराजमान ।

धनुष पाँच से काया लख चौरासी पूरव थितें ए तुम हो सब गुनवान ।
ऋद्धि विजय उवझायनो चेतन धारैं ध्यान ॥ १ ॥ इति ॥ १ ॥ पुनः

अंत—

छठा स्वयं प्रभु जिनराज सप्तम रिषभानन देवा।
अनंत वीर्य जिन आठ सदा करो नर सेवा।
नव में सूर प्रभु जिन देव दसम विशाल जिनंदा।
वज्रधर जिनवर इग्यार मुझ मेटो भव फंदा।
चंद्रानन जिन वार मोए तेरमो चंद्रबाहु भगवान।
भुयंग देव जिन चौदया साहिब गुन के पांन।
पदरम ईश्वर जगनाथ नेमी सोलम पूजो।
सतरे वीरसेन जिनराज आजमन वंछित पाया।
चंद्रयस उगणीसयो ध्याइये ए अजित वीर्य जिनवीस।
त्रिकाल.वदो भाव सुं विघन हरो जगदीस॥ ३॥

॥ इति संपूर्ण ॥

श्री सुवाहु विहरमान आज मुझ दरशन दीजै।
तुम वीतराग अरिहंत सेवक पर किरपा कीजै।
नगर अज्योध्यावास निसढराय कुल चंदा।
जनमें श्री भगवान उदरें मात भूनंदा॥
पद लंछन कपीये ए तिया कि पुरसा नार।
चेतनतासुध होयके वंदे वारंवार॥ १॥

इति सुभमस्तुः

विषय—चौबीस जिन तीर्थंकरों की मूर्तियों की वंदना की गई है।

टिप्पणी—रचयिता का नाम 'चेतन' है। इनके विषय में कृपया देखिए, आगे 'लघुपिंगल' का विवरण पत्र। रचनाकाल अज्ञात है। रचयिता के 'पदों (ककापैंतीसी)' में, जो एकही हस्तलेख में प्रस्तुत रचना के आगे लिखे गए हैं—संवत् १८७० वि० लिपिकाल दिया है। अतः प्रस्तुत रचना का लिपिकाल भी यही होना चाहिए।

संख्या ६६ ग, लघु पिंगल भाषा, रचयिता—चेतन, स्थान—वंग (जन्मस्थान), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८४७ वि०= १७९० ई०, लिपिकाल—१८७० वि०=सन् १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः॥ अथ लघुपिंगल भाषा लिखते॥

॥ दोहा ॥

चरन कमल गुरुदेव के वंदो सीस निवाय ।
लघु पिंगल भाषा करूँ सारद देहु बताय ॥ १ ॥
छायाविन नहिं करि सकैं पिंगल छंद अपार ।
रूपदीप चिंतामणि ए पिंगल मनधार ॥ २ ॥
चेतन लघु पिंगल कहै सुनियो वचन प्रमान ।
कवित्त छंद कहू जात के जानें चतुर सुजांन ॥ ३ ॥
लघु दीरघ गण अगण है अष्यर मत्त समांन ।
चेतन वरनें ग्यान सु लघु पिंगल गुन पान ॥ ४ ॥

॥ अथ लघुदीरघ वरनं ॥

॥ दोहा ॥

बरन बार है अंक के लघु दीरघ है सोय ।
तीन अंक लघु जानियै अधर अंक गुरु होय ॥ ५ ॥
केवल पिछौं छोटे लघु काक कुअंक पहिचान ।
संजोगी के प्रथम गुरु नवें अंक गुरु जांन ॥ ६ ॥

॥ अथ गण वर्णनं ॥

॥ दोहा ॥

मगण नगण दो मित्र है भगण यगण दो दास ।
रगण सगण रिपु जानियै तगण जगण उदास ॥ ७ ॥
गुरू तीन कीजै मगण नगण तीन लघु होय ।
आदि गुरू है भगण को यगण आदि लघु सोय ॥ ८ ॥
मध्य गुरू इह जगण है रगण मध्य लघु जांन ।
अंत गुरू है सगण मैं तगण अंत लघु आंन ॥ ९ ॥

अंत—

॥ अथ सुसुप छंद ॥

॥ दोहा ॥

दोय लघु सगण तीन है चरन मत्त दस चार ।
रुद्र अंक कलि एक में सुसुपी छंद सुधार ॥ १०८ ॥

॥ छंद ॥

सुगर जोर करों विनती इह लघु पिंगल की गिनती।
सब तुक पंडित सुद्ध करो अब गुन में गुन आप धरो ॥ १०९ ॥

॥ दोहा ॥

रूप दीप चींतामणि इह पिंगल को देष।
भाषा लघु पिंगल रची कीन्हा सुगम विशेष ॥ ११० ॥
छंद ब्यालीस जात के लघु पिंगल सों जांन।
भयो गुणे कंठे करे उपजें बुद्धि निधान ॥ १११ ॥

\+ + +

ऋद्धि विजय वाचक गुरु वहु आगम के जांन।
तस सिष लघु चेतन भयै जनमें वंग सुथान ॥ ११४ ॥
दिष्या ले यात्रा कियै फिर आए निज देस।
संगत पायै साधु की मेटे सकल कलेस ॥ ११५ ॥
चंद[1] सिद्ध[8] वेदा[4] मुनी[7] मास पोस गुण पान।
स्वेत बीज गुरू वार को पूरे ग्रंथ सुजांन ॥ ११६ ॥
लघु पिंगल पूरो भयो चतुर सुनो दे कान।
चेतन या सुध कीजियै तौ पावै सिव थान ॥ ११७ ॥

इति श्री लघु पिंगल भाषा संपूर्ण ॥ समाप्ता ॥ शुभमस्तु ॥

विषय—पिंगल विषय वर्णन किया गया है। लघु दीर्घ अक्षर तथा गण वर्णन के पश्चात् निम्नलिखित ४२ छंदों का वर्णन किया गया है :—

१–सारंगी छंद, २–तरूलनयन छंद, ३–दोधक छंद, ४–भुजंग प्रिया, ५–कामिनी मोहनी, ६–तोटक, ७–मैनावती, ८–मोतीदान, ९–नाराच, १०–प्रमाणिक, ११–नाराच १२–मल्लिका, १३–अर्द्ध भुजंगी संखनारी, १४–दोहा, १५–सोरठा, १६–चौपइ, १७–अडिल, १८–तोमर, १९–मधुभार, २०–अनुकूला, २१–चित्रपदा, २२–पवंगनाम, २३–रसावली, २४–पाधरी, २५–दुवैया, २६–शंकर, २७–त्रिभंगी, २८–द्रिढपटा, २९–मरहटा छंद, ३०–लीलावती, ३१–पोमावती, ३२–गीता, ३३–पैडी, ३४–कुंडलिया, ३५–रंगिका, ३६–घनाक्षरी, ३७–दूमला (? द्रुमल), ३८–मत्तगयंद, ३९–कडरवा, ४०–झूलना, ४१–छप्पय, ४२–सुमुख।

॥ दोहा ॥

चरन कमल गुरुदेव के वंदो सीस निवाय ।
लघु पिंगल भाषा करूँ सारद देहु बताय ॥ १ ॥
छायाबिन नहिं करि सकें पिंगल छंद अपार ।
रूपदीप चिंतामणि ए पिंगल मनधार ॥ २ ॥
चेतन लघु पिंगल कहै सुनियो वचन प्रमान ।
कवित्त छंद कछु जात के जानैं चतुर सुजांन ॥ ३ ॥
लघु दीरघ गण अगण है अष्यर मत्त समांन ।
चेतन बरनैं ग्यान सु लघु पिंगल गुन पान ॥ ४ ॥

॥ अथ लघुदीरघ वरनं ॥

॥ दोहा ॥

चरन चार है अंक के लघु दीरघ है सोय ।
तीन अंक लघु जानियै अधर अंक गुरु होय ॥ ५ ॥
केवल पिर्छो छोटै लघु काक कुअंक पहिचान ।
संजोगी के प्रथम गुरु नवैं अंक गुरु जांन ॥ ६ ॥

॥ अथ गण वर्णनं ॥

॥ दोहा ॥

मगण नगण दो मित्र है भगण यगण दो दास ।
रगण सगण रिपु जानियै तगण जगण उदास ॥ ७ ॥
गुरू तीन कीजै मगण नगण तीन लघु होय ।
आदि गुरू है भगण को यगण आदि लघु सोय ॥ ८ ॥
मध्य गुरू इह जगण है रगण मध्य लघु जांन ।
अंत गुरू है सगण मैं तगण अंत लघु आंन ॥ ९ ॥

अंत—

॥ अथ सुप्तुप छंद ॥

॥ दोहा ॥

दोय लघु सगण तीन है चरन मत्त दस चार ।
रुद्र अंक कलि एक में सुप्तुपी छंद सुभार ॥ १०८ ॥

॥ छंद ॥

सुगर जोर करों बिनती इह लघु पिंगल की गिनती ।
सब तुक पंडित सुद्ध करो अब गुन में गुन आप धरो ॥ १०९ ॥

॥ दोहा ॥

रूप दीप चींतामणि इह पिंगल को देष ।
भाषा लघु पिंगल रची कीन्हा सुगम विशेष ॥ ११० ॥
छंद व्यालीस जात के लघु पिंगल सों जांन ।
भये गुणे कंठे करे उपजें बुद्धि निधान ॥ १११ ॥

\+ \+ \+

ऋद्धि विजय वाचक गुरु वहु आगम के जांन ।
तस सिष लघु चेतन भयै जनमें वंग सुथान ॥ ११४ ॥
दिष्या ले यात्रा किंयै फिर आए निज देस ।
संगत वायै साधु की मेटे सकल कलेस ॥ ११५ ॥
चंद[१] सिद्ध[८] वेदा[४] मुनी[७] मास पोस गुण पान ।
स्वेत वीज गुरू वार को पूरे ग्रंथ सुजांन ॥ ११६ ॥
लघु पिंगल पूरो भयो चतुर सुनो दे कान ।
चेतन या सुध कीजियै तौ पावै सिव थान ॥ ११७ ॥

इति श्री लघु पिंगल भाषा संपूर्ण ॥ समाप्त ॥ शुभमस्तु ॥

विषय—पिंगल विषय वर्णन किया गया है । लघु दीर्घ अक्षर तथा गण वर्णन के पश्चात् निम्नलिखित ४२ छंदों का वर्णन किया गया है :—

१–सारंगी छंद, २–तरूलनयन छंद, ३–दोधक छंद, ४–भुजंग प्रिया, ५–कामिनी सोहनी, ६–तोटक, ७–मैनावती, ८–मोतीदान, ९–नाराच, १०–प्रमाणिक, ११–नाराच १२–मल्लिका, १३–अर्द्ध भुजंगी संखनारी, १४–दोहा, १५–सोरठा, १६–चौपइ, १७–अडिल, १८–तोमर, १९–मधुभार, २०–अनुकूला, २१–चित्रपदा, २२–पवंगनाम, २३–रसावली, २४–पाधरी, २५–दुमैया, २६–शंकर, २७–त्रिभंगी, २८–द्विढपटा, २९–मरहटा छंद, ३०–लीलायती, ३१–पोमावती, ३२–गीता, ३३–पैडी, ३४–कुंडलिया, ३५–रंगिका, ३६–धनाक्षरी, ३७–दूमला (? दुमल), ३८–मत्तगयंद, ३९–कइरया, ४०–झूलना, ४१–छप्पय, ४२–सुमुख ।

रचनाकाल

चंद[1] सिद्ध[8] वेदा[4] मुनी[7] मास पोस गुनषान।
स्वेत बीज गुरू बार को पूरे ग्रंथ सुजान ॥ ११६ ॥

टिप्पणी— रचनाकाल संवत् १८४७ है। प्रस्तुत रचना रचयिता की अन्य दो रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में है। रचनाओं के नाम, १—चैत्यवंदन और २—पद (कक्का पैंतीसी राग में) हैं। लिपिकाल केवल पदों में दिया है। अतः अन्य रचनाओं का भी यही लिपि-काल हुआ। रचयिता का नाम चेतन है। ये जैनी थे। इनके गुरु का नाम ऋद्धि विजय वाचक था। इनका जन्म वंग (संभवतः बंगाल) में हुआ। गुरु से दीक्षा लेकर इन्होंने यात्रा की और फिर अपने देश को वापस आए। 'पदों (कक्का पैंतीसी राग में) के अंत में एक दूसरा संवत् १८०५ वि० दिया है जो रचयिता का जन्मकाल विदित होता है:—

राग राम गिरी

क्षमाधार कर वाल लीजै धर्म को रप ढाल रे।
मोह नृप सुं जुद्ध करके करम अरि को टाल रे ॥ १ ॥ क्ष० ॥
मन वचन काया बस राप अपने छुटे भव को जाल रे।

× × ×

इक[1] अष्ट[8] चतुर चित पंच[5] धरियै विक्रम के इहसाल रे ॥ ३ ॥
अति माह उज्जल चंद जनमें बुद्ध चेतन लाल रे।
सुध पैंतीस अक्षर ग्यान के है भगो गुणे मंगल मला रे ॥ ४ ॥

प्रस्तुत ग्रंथ में विषय वर्णन बहुत संक्षेप में हुआ है।

संख्या—७०. वाणियाँ, रचयिता—चौणंक नाथ। इनके लिये कृपया देखिए, 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या—५९।

संख्या—७१. वाणियाँ, रचयिता—चौरंगीनाथ। संख्या—५९ के विवरणपत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरणपत्र।

संख्या—७२. हरिभक्ति विलाश (उत्तर खंड), रचयिता—जन छबीले, कागज—देशी, पत्र—८५, आकार—$12\frac{3}{4} \times 5\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्) २३३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१९ वि०=सन् १७५२ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

जयति गनपति गवरि तनय गज मुप भुजवर चारी।
लंबोदर रद श्रयुग शिर चंद बुद्धि निधिवारी ॥ १ ॥
जयति राम रघुकुल तिलक सेवक सुर कुलपाल।
पूरण जनमन कामना वारिधि कृपा विशाल ॥ २ ॥
वंदौ गुरू गिरिजा गिरा शंतत शज्जन शंग।
कहो भक्त भगवंत यस कारन कलिमल भंग ॥ ३ ॥
नहि चतुराई ज्ञान गुण कवि विवेक मुहि नांहि।
उर उपजत अभिलाप मम विनय करौ तुम पांहि ॥ ४ ॥
कृपा करहु मति देहु मोहि अछर अरथ अनूप।
भापा विधि वरनन करौं अगुण शगुण हरिरूप ॥ ५ ॥
उत्तम उत्तरखंड यह भापा भक्ति विलाश।
"जन छबील" वरणत सुनत शब सुखदानि सुपास ॥ ६ ॥

अंत—

संध्या समय सुरन्ह जयगाई,
चले भवन निजु दुंदु वजाई।
श्री नृसिंह भय अंतर ध्याना,
कीन्ह प्रगट 'नरसिंह पुराना'।
यह प्रभु चरित कीर मुनि गावा,
सुनत परिछीत अति सुपपावा।
जे यह चरित सुनहि अरु गावहि,
तिनके अघ नासहि सब पावहि ॥
विघन अनेक विशेप विलाही।
नरहरि नाम उचार कराही ॥

॥ दोहा ॥

अघ समुद्र अवगार तिहि नौका नरहरि नाम।
हरि स्मरण पेडवसदा सत संगति विश्राम ॥

॥ सोरठा ॥

मानहु पहुचे पार संत संग जग सुख अरुचि।
जन छबील निरवार निगम कियो मग मोक्ष कह ॥२८॥

इतिश्री हरिभक्त विलासे उत्तरखंडे भाषा सप्तदशोध्याय ॥१७॥ संपूर्णं ॥ जदूछर पद अर्छ मात्रा हीनेपु पर भवेतु तत् सर्वं छमितां देवं कस्यचैनिः चले मनं ॥ जो देप्यो सो लिप्ये में भूल्यो निजु अज्ञान । पढहु विचारहुं छमहु मुहि कविता परम सुजान । ललित काव्य कवि केहरी माया भक्ति विलास । पढत सुनत आवत दृढ़ रामचरण विस्वास ॥ संपूरण सुभमस्तु रिद्धिरस्तु ॥ श्री संवत् १८१९ मीति शावन सुदी अष्टमी ८ ॥ बुधवासरे ॥ श्रीकृष्ण•••

विषय—भागवत पुराण की कथाओं का संक्षेप में वर्णन किया गया है । इसमें १७ अध्याय हैं जिनका उल्लेख नीचे है:—

१	अध्याय	ऋषभ अवतार वर्णन	पत्र ३१७ से ३२० तक
२	,,	भरत राजय की कथा	,, ३२० – ३२५ ,,
३	,,	,,	,, ३२५ – ३२९ ,,
४	,,	,,	,, ३२९ – ३३३ ,,
५	,,	अजामिल कथा	,, ३३३ – ३३८ ,,
६	,,	,,	,, ३३८ – ३४४ ,,
७	,,	एकादशी माहात्म्य (चोलनृपति कथा वर्णन)	,, ३४४ – ३४९ ,,
८	,,	जयविजय की कथा (एकादशी कथा)	,, ३४९ – ३५४ ,,
९	,,	,,	,, ३५४ – ३५९ ,,
१०	,,	,,	,, ३५९ – ३६३ ,,
११	,,	कृष्णार्जुन संवाद एकादशी कथा के विषय पर	,, ३६३ – ३६९ ,,
१२	,,	जय विजय श्राप वर्णन	,, ३६९ – ३७४ ,,
१३	,,	प्रह्लाद चरित्र तथा हिरण्यकशिपु कथा	,, ३७४ – ३८० ,,
१४	,,	,,	,, ३८० – ३८५ ,,
१५	,,	,,	,, ३८५ – ३९० ,,
१६	,,	नृसिंह अवतार वर्णन हिरण्यकशिपु वध	,, ३९० – ३९६ ,,
१७	,,	प्रह्लाद तथा देवताओं द्वारा नृसिंह भगवान् की स्तुति वर्णन	,, ३९६ – ४०१ ,,

टिप्पणी—ग्रंथ दो खंडों में है—'पूर्व खंड' और 'उत्तर खंड' । इसका प्रस्तुत हस्तलेख 'उत्तरखंड' का है जिसकी पत्र संख्या ३१७ से आरंभ होती है और ४०१ में समाप्त । अतः इसमें समस्त ८५ पत्रे हैं । रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८१९ दिया है । इस खंड से रचयिता के संबंध में कुछ विदित नहीं होता । शायद पूर्व खंड में उन्होंने अपना पूरा वृत्त दिया होगा ।

संख्या—७३. जगजीवन दास की वानी, रचयिता—जगजीवन दास, कागज—देशी, पत्रा—११, आकार—१०½×५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण अनुष्टुप्—७२२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि-नागरी, लिपिकाल—१८५५ वि०, प्राप्तिस्थान आर्य्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ अथ जगजीवण दास जी की वाणी लिप्यते ॥
॥ अथ चिंतावणी जोग ग्रंथ ॥
आपनिरंजन संत सब कृपाकरि दीयारंग ।
गुर कृपा तें पाइए चिंतामनि का अंग ॥ १ ॥
चिंतामनि चौथीदसा लपै सु पावै सुप ।
जाइ धँसे वा सिंध में बले न दरसै दुप ॥
पूँजी तौ प्रेमेश्वर तणी तू मति परचै वीर ।
दरगह लेपा मांगिसी कून रंक को मीर ॥ २ ॥

अंत—

॥ सापी ॥

गाजे पढ़ि जे सुमरीए लाजे उनमांन ध्यान ।
जगजीवन हरि सुमरीए कबहुन बकीए आंन ॥ २ ॥
आन बक्यां अंतर परै उपजै सोग संताप ।
जग जीवन हरि भजन बिन सबद सबद मैं पाप ॥ २ ॥ अ० ॥ २ ॥

पद—॥ ५९ ॥

॥ इति श्री जगजीवनदास जी की वांनी संपूरण ॥

॥ दोहा ॥

प्रथम नामदे दुतीय जन रैदास ।
त्रेतीय पीपा प्रगटै चतुस्थ जग जीवन भास ॥

संवत् १८५५ की मीती फागुण माशे ॥ कृसन पक्षे तिथ्यौ नाम ॥ ७ ॥ वार बुधवार कै दिन सुभंभवेतु लिपंतंच गांव पारख्या मध्ये लिपंत च साध मुकनदास सांमी जी श्री १०८ दरसणदास जी कौ शप (? शिष्य) बांचै विचारै तिनकूं रांम रांम नमसकार श्री निरंजनायंनमः

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश वर्णन ॥

प्रस्तुत बानियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं:—

१—चिंतावणी जोग ग्रंथ पत्र ३५५ से ३५६ तक
२—प्रेमनामों जोग ग्रंथ पत्र ३५६ से ३५७ तक
३—पद पत्र ३५७ से ३६५ तक

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जिसमें अनेक सिद्धों और संतों की रचनाएँ लिपिबद्ध हैं, कृपया देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में सेवादास । हस्तलेख सभा में है ।

संख्या ७४. मोहमर्द राजा की कथा, कागज—देशी, पत्र—३, आकार १०३/४ X ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, का० ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

॥ अथ ग्रंथ मोह मरद राजा की कथा ॥
॥ चौपई ॥

गुरु गोविंद की अग्या पाऊं,
संत समागम भनि सुनाऊं।
सुनौ एक महापुरांनां,
नारद विष्ण भयौ बपांनां ॥ १ ॥
बैकुंठ लौग बिष्ण को बासा,
आए तहां सकल हरिदासा।
सनक सनंदन आए ईसा,
इंद्र आदि देव तेतीसा ॥ २ ॥
गंगा आदि तीरथ सब आए,
बड़े मुनेश्र और सब आए।
प्रण है है कथत है ग्यांना,
सबही करै विष्ण कौ ध्यांना।

अंत—

राजा नारद आग्या पाया।
व्यास नृप कूं बरनि सुनाया ॥

जो मानवी सीषे अरु गावै।
नाराइन कै अंति मन भावै ॥ ११३ ॥
गुर गोबिंद की आज्ञा पाई।
संत समागम बरनि सुनाई ॥
मोह मरद हर जी की गाथा।
निति पिति गावै "जन जगनाथा" ॥ ११४ ॥
॥ इती मोह मरद राजा की कथा संपूर्ण ग्रं० ४ ॥

विषय—

मोहमर्द राजा की कथा का वर्णन

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना बड़े हस्तलेख में है जिसमें अनेक सिद्ध और संतों की रचनाएँ भी लिपिबद्ध हैं। हस्तलेख महत्त्वपूर्ण है और सभा में विद्यमान है।

संख्या—७५, पद संग्रह, रचयिता—जगराम, कागज—देशी, पत्र—१८४, आकार ६ × ५.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०२४, खंडित, रूप—प्राचीन और अव्यवस्थित, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

ॐ नम सिद्ध। अथ जगरामकृत पद्य लिख्यते ॥ दोहरा ॥

श्री जिनवर के नाम की महिमा अमित अपार।
धरि प्रतीति जे जपत है सुफल करत अवतार ॥ १ ॥

कवित्त

इंद्र धरिनेंद्र षेचरेंद्र और नरिंद्र वृंद तेरे गुन गाइ गाइ पाइन परतु है।
तिनहूँ के पातिग अनेक भय संतत सो तूहू
जिन राज एक लव में हरतु है ॥
और पसु नर सुर ध्यावै नाथ तोहि
उर तिनेहूँ के काज मन वांछित सरतु है।
ऐसो जानि प्रीति सांनि जीय मै आनंद,
आनि "जगराम" राम तेरौ हीय में धरतु है ॥ २ ॥

मध्य—

लगी साडी प्रीति तुसाडे नाल।
तुजनूं महरि कछू नहीं आवही मैंडा दिल वेहाल।

रखि असांनू पास पास प्रभु भंजि विरह जंजाल ।
जग साहिब तुझनूं जग अखदा करि मैंडी प्रतिपाल ॥ २ ॥

अंत—

मेरी वार क्युं ढील करी जी ॥
सूली तैं सिंघासन कीनौ सेठ सुदरसन विपत हरी जी ॥
सीता सती अगनि मैं पैठी पावक नीर करी सगरी सगरी जी ॥
वारिषेण पै पड्ग चलायौ फूल माल कीनी सुधरी जी ॥
धन्ना वापी गिरयौ निकाल्यौ ता घरि रिद्धि अनेक भरी जी ॥
सांप कियौ फूलनि की माला सोमा पर तुम दया धरी जी ॥
द्यांनत मैं कछु चाहत नांही करि वैराग दसा हमरी जी ॥
इति चौतुकिये पद संपूर्ण ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में, मंगलाचरण के दोहों के पश्चात् कुछ कवित्त हैं. फिर पद दिए हैं। इसका विषय भगवान् जिन देव की भक्ति है। ये ग्रंथ जैनधर्म विषयक हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'पदों' द्वारा रचयिता के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। हाँ, विषय प्रतिपादन से स्पष्ट होता है कि वह जैन धर्मानुयायी था। उसका समय भी अज्ञात है। प्रस्तुत पद-संग्रह काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसकी भाषा ब्रज है। यत्र तत्र पंजाबी के भी कुछ पद हैं।

संख्या—७६, पद संग्रह, रचयिता—जनप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल, सोराँव, जि०—इलाहाबाद

आदि—

भरि भौ भंजन राम हरी।
क्रिपा सिंधु अब सुनौ निहोरा मारौ मोर अरी।
कर विलाप अनुराग देव सनि रोदत वदत मरी।
को कृपाल तुम विनु रघुनंदन को भौ पार करी।
"जनपरसाद" सियाराम नाम की मन में जिकिर परी ॥
तरन कुल मंडन रघुराई।
जे सरनागति भये निरंतर तिनकी वनि आई।
तारे पतित अनेकन जग में जे गे सरनाई।
तेते भये लीन हरि माही अपने सुपगाई।
सुमिरो राम निरंतर मन में दुविधा मिटि जाई ॥

अंत—

हरे व मन सुन्दर छवि दरसाय ॥
बाढी प्रीति बहुत उर अन्तर उमगि उमगि अधिकाय ।
कहा कहौं कछु कहि नहि आवै मन मेरा अकुलाय ।
'दास परसाद' छकी छवि प्रभु की रही प्रीति उरछाय ॥ ७ ॥

विषय—प्रस्तुत 'पद संग्रह' में रामभक्ति के पद हैं, जिनमें राम का पूर्ण चरित वर्णित है ।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत 'पद संग्रह' के रचयिता का नाम 'जन प्रसाद' है । कहीं कहीं 'जन' के स्थान पर 'दास' करके 'दास प्रसाद' नाम भी आया है । रचना सरस है । रचनाकाल लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं ।

संख्या ७७. श्री मद्भागवत गीता की टीका, रचयिता—जयराम, कागज—देशी, पत्र—५१ आकार—७ × १२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारागंज, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय: नमः
सत्पादाभोरुहं वंदे येन. सर्वमिदं ततं ॥
ब्रह्मादि स्तंभ पर्यंतं यत्कृपा परिपालितं ॥ १ ॥

चौपाई

गुण अनंत कल्यान कहाई । सब विभूति निर वधिक सदाई ॥
सब सुख पूर्ण निरंतर पाई । दिव्य रूप नित यौवन सोई ॥
अतिशय ज्ञान शक्ति बल पोई । तेज वीर्य धृति सब अति सोई ॥

× × ×

भीषम रक्षित निज बल पेखी ।
सेवा पांडव प्रबल सुजानी ॥
रक्षित भीम हृदै अनुमानी ।
लखि दुर्योधन हृदय गलानी ।

यत्र योगेश्वर कृष्ण यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूति ध्रुवानितिमतिर्मम ॥
योगेश्वर श्री कृष्ण जह पार्थ धनुद्धर होइ।
तहाँ विभूति विजै सदा निश्चै जानहु सोइ ॥ ७८ ॥

इति श्री रामानुज भाष्यानुसार जयराम रामानुजदास विरचित दोह गीतार्थं अष्टादशोध्याय श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥ श्री राम।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में श्रीमद्भागवत गीता का भाषा में पद्य बद्ध अनुवाद है। यह अनुवाद श्री रामानुजाचार्य के श्री भाष्य के अनुसार किया गया है।

अनुवाद के छंद दोहा चौपाई हैं और भाषा ब्रज है।

संख्या ७८. हितोपदेश कथा, रचयिता—जयसिंह दास। कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—९३⁄४×६३⁄४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७८२ वि० = सन् १७२५ ई०, प्राप्ति-स्थान—आर्य- भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः
॥ लिष्यते हितोपदेश के कथा ॥

॥ छप्पै ॥

जैगिरि नंदिनि नंद चरण जग वंदित जाके।
कबहूँ विघन नहिं होहिं नाम सुमिरे मनताके।
लंबोदर एक दंत नाम उप विराजै।
लसत शीश सिंदूर फरस अंकुश छवि छाजै।
जैसिंह दास वंदन करत हरत रहत भक्त कहँ सुर सुरू।
सकल सिद्ध दायक सदा जय गणेश कवि जन गुरू ॥ १ ॥

॥ घनाक्षरी ॥

वेदन की माता गुणदाता ज्ञान दाता,
सुव वंदत विधाता मोद माला अह्लादनी।
महिमा अपार जाके पावत न पार कोई,
जगत अंधार आदि उदित अनादिनी।
गावै सहसानन ह्वै रसना सहस जाके,

बंदन चरण जै सिंह हंस वाहिनी के प्रगट सरूप तीय यो लोक हिति वाहिनी ॥ २ ॥

संवत सत्र हसै जो वयासी । माघ शुक्ल द्वादशी प्रकाशी ॥
वार वृहस्पत पुष्य नक्षत्र । ग्रंथ अरंभ कियो कवि तत्र ॥
सारंग गढ़ अति अड़ियल कोट । है जहँ सकल साज के मोट ॥
तहँ उद्योत साहि देपाना । साहेब विक्रम्कम भोज समान ॥
देवकनंद तासु के मंत्री । राजनीत चातुर सरजंत्री ॥
तहाँ बसैं कवि "जैसिंह दास । जा···कछुछंद परगास ॥
तिन कवि सों राष्यौ अति प्रीती । पढ़त रहत संत नृप नीती ॥
तिन कवि सों यह कह्यो विचारी । कथा एक विरचौ अनुहारी ॥

॥ दोहा ॥

जौन पढ़त अति मति बढ़ै मन को होइ प्रवेश ।
करौ छंद परबंध सों कथा हितोप सुदेश ॥ ४ ॥
दीन्हो कवि कों सासना बाबू देवकी नंद ।
बाक बाग नीके सुमिरि बरनत छंद प्रबंध ॥ ५ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

एक मास नर कों करौं मृग सुकर दुइ मास ।
इनको संचय करि आपहि धन्यौ धनुक गुन आस ॥ १५४ ॥

॥ सवैया ॥

बान लगे धनुके गुन को तब टूटत कौ सु हिए मैं पोभी ।
आइ मिली सुपवास को मास तज्यौ मृग सुकर मानुप छोभी ।
देषहु तो महिमा यह लोभ की दाँतनिपोस पन्यौ है असोभी ।
जै सिंघदास कहै परहांस ज्यौं प्रान तज्यौ ऐसो जंबुक लोभी ॥ १५५ ॥

॥ दोहा ॥

पावै और पवावहीं है धन के गति दोय ।
पाइ पवावै जो नहीं ताकै मुप मैं सोय ॥ १५६ ॥

॥ हिरण्यक वाच ॥

सुनौ मित्र तुम बड़े सयाने । जो तुम उत्तिम भाव बपाने ॥
सिंघ पुरुष उत जोग विचारै । संचित अर्थ करै तिहिवारे

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत ग्रंथ हितोपदेश का अनुवाद किया गया है।

रचनाकाल

संवत् सत्रह से जो बयासी। माघ शुक्ल द्वादशी प्रकाशी।
बार बृहस्पत पुष्य नक्षत्र। ग्रंथ अरंभ कियो कवि तत्र।

संख्या ७६. वाणियाँ, रचयिता—जलंधरी पाव। संख्या—५६ के विवरण पत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या ८०. युक्ति रामायण, रचयिता—जानकी प्रसाद, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—५'४ X १३'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) ८, परिमाण (अनुष्टुप)—९४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य। लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्युनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ घनाक्षरी ॥

गनपति रूप ह्वै कै गनपति सेविन को नाथ,
ह्वै कै दिन को दिनेस व्रतधर को।
रूप ह्वै कै सकति सकति व्रज धारिन कों,
हर अनुसारिन सँवारि रूप हर को।
जाकी जहाँ प्रीति फल देत तहाँ ताही रीति,
"जानकी प्रसाद" नहि लावत गहर को॥
नाम जाको पूरन करत मन काम,
बंदीयत पर धाम नित राम रघुवर को॥ १॥

वसंत तिलक छंद

ब्रह्मादि देव गन छोंडि समै विचारे।
सौप्यौ सियै अनल दंडक मध्यभारे॥
तासों हियो मम सुराघव रीति जो है।
सांडिल्य वंस यह प्रीति प्रतीति सोहै॥ २॥

अंत—

॥ वानी छंद ॥
कोउ अंधकादि छबि पूरन छायो।

घन पंच वक्र संग युद्धहि ठायो ॥
कोउ स्वातिरिक्ष छबि पूरित सोहे।
अनुगौन चित्र कहि को अवरी हैं ॥१०३॥
कोउ नारदादि सम सोभ बढ़ावैं।
रसरोस कोक गति पंडन ढावै ॥
कोउ अंबु रासि तन पा छबि द्वारे।
अति मोद पूरि करि सारस धारे ॥१०४॥

॥ मनहंस छंद ॥

कोउ चंद मंडल से लसे सस धारहीं।
कोउ काम से सर जोर संवर मारहीं।
वृष राज से कोउ नीलकंठ अराधियो।
कोउ मेघनाद समान कौसिक बांधियो ॥१०५॥

विषय—

"युक्ति रामायण" अपूर्ण ग्रंथ है। इसमें जन्म से लेकर लंका युद्ध तथा अवध प्रत्यावर्तन की कथा है। इस ग्रंथ के अध्याय 'प्रतिहारों' के नाम से दिए हैं। ग्रंथ में अनुमानतः ७ प्रतीहार हैं। ६ पूर्ण उपलब्ध होते हैं और सातवाँ अपूर्ण।

ग्रंथ का 'युक्ति रामायण' नाम है जिसकी सार्थकता का पता नहीं लगता। रचयिता ने छंदों के बदलने में विशेष रुचि दिखाई है।

दंडकारण्य के जीवन में हेमंत ऋतु का वर्णन है जो वाल्मीकि रामायण के हेमंत वर्णन से बहुत कुछ मिलता है।

संख्या ८१. नेमनाथ राजमती मंगल, रचयिता—जिनदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७०९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स० बनारस।

आदि—

॥ [० ॥ अथ राजिल मंगल लिष्यते प्रथम राग बंगाली।

दोहा

गोयन गणधर पै नमो सुगुरु नाम सो सीस।
नेमिनाथ राजे मती नाम ज्यों निसदीस ॥ १ ॥
समुद्र विजै के लाभ ले जादव वंस दयाल।
तोरण आये नेमि जी पाए सोहन लाल ॥ २ ॥

सोला सहस मिल फगुवा खेले कालिंदी तट न्हाए ।
शुप विकस्यो सतभामा जी देखे अनचित व्याह मनाए ॥ ३ ॥
नेमनाथ कुमार जी ऐसे व्याहन आए अंचली ॥ ४ ॥

अंत—

हम दोनों संयम पालें । शिवपुर का पंथ निहालें ।
बन वसती मैं राष्यो । तैं बूझत फेरया पाद्यो ॥ ७७ ॥
तूं गुरु समान है मेरी । मैं पग की रज हौं तेरी ।
तू आंप तरी मुंझ तारया । पर भव का काज रचाया ॥ ७८ ॥
उग्र तपी तपी या हूवे । राज मती रह नेम ।
जिनको गज सविस्तरयो सुनीयो उग्रामेन ॥ ७९ ॥
हुवे दोनों केवल ज्ञानी । ब्रह्मचारी शिवपुर गासी जो निर्मल शील
अराधे शिवपुर का मारग साधइ ॥ ८० ॥
जाइ हुवा मुक्ति मिलावा जहाँ करे नही आवा जावा ।
जाइ ऋचल सुहागण लेइ जिसरी सकेर नहीं कोई ॥ ८१ ॥
जो राजल मंगल गावइ मन वंछित ही फल पावै ।
जिणदास कहै करि जोडी मैं अजाण हों मति थोड़ी ॥ ८२ ॥
तुम्ह ज्ञान अनंत अपारा ते कहिव सकों विस्तारा ।
त्रिहुकाले संजम कीजइ नर भव को लाहा लीजइ ॥ ८३ ॥

इति श्री नेमनाथ राजमंती मंगल संपूर्ण समाप्तं । संवत् १८०९ वर्षे मासे मार्गिशिर मासे कृष्ण पक्षे शुभं तिथौ त्रयोदश्यां तरूण दिने लिषतं रामजीपिंसय पठनार्थे वनूद नगर मध्ये ।

विषय—नेमिनाथ और राजमती के विवाह का वर्णन है । बड़े यत्न से राजमती का विवाह नेमिनाथ के साथ होता है; परंतु नेमिनाथ को वैराग्य उत्पन्न हो जाता है और विवाह के अवसर पर वन को प्रस्थान कर देता है । राजमती भी उनका अनुगमन करती है ।

संख्या—८२. सुरतांतलीला, रचयिता—जीवन धन, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७·७ × ५·२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८४० वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारीजी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद ।

आदि—

श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः ॥ अथ सुरतांस्त लीला लिष्यते ॥

चौपाई

निसि जागे आरस रस भीने ॥ प्रात उठे नवरंग नवीने ॥ १ ॥
मरगजे वसन हार कुमिलानें ॥ केलि रंग सुप छवि सरसानें ॥ २ ॥
अरसानी प्यारी सुप दैनी ॥ सिथलकुसुम कल विगलित बैनी ॥ ३ ॥

कवित्त

अति ही सुठौनौं मृदु सुंदर सलौनौं सषी
कहाँ लौं बपानौं छवि दंपति रसाल की ॥
भृकुटी मटक पट पीरे की चटक चारु मुकट
लटक आछी लटकनि लाल की ॥
कुंडल कपोलनि कलोलनि सलोल छवि
दलमल निकाम दुति हाल वनमाल की ॥
भाइन भरी है मन भावन छबीली
ऊठि वनी मेरी आंषिन में आवनि गुपाल की ॥५८॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

करि अंचल गहि छोर हरपि असीसै देति सपि ॥
मन भावन चितचोर हुलसौ विलसौ सुप सदा ॥१५२॥

॥ दोहा ॥

लाड भरे भागनि भरे रंग भरे चितचोर ॥
"जीवनधन" नव लाडिले दंपति अवचल जोरि ॥१५३॥

इतिश्री जीवनधन कृत सुरतांत लीला संपूर्ण ।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "सुरतांत लीला" है। इसमें राधा और कृष्ण का दाम्पत्य विलास वर्णित है। आरंभ में दंपति के रत्योपरान्त जागने का वर्णन है। तदुपरान्त क्रम से स्नान, शृंगार, रूप वर्णन, भोजन, कुंज क्रीड़ा, गृह प्रत्यागमन और अंत में रात्रिशयन आदि आते हैं।

इसमें रचयिता ने दोहे, चौपाई, कवित्त, सवैया विशेषतः रोला छंद प्रयुक्त किए हैं। इसकी भाषा ब्रज है।

टिप्पणी—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८४७ वि० इस आधार पर है कि यह संवत् 'सुदामाचरित्र' नामक रचना में दिया है जो प्रस्तुत रचना के साथ एक ही हस्तलेख में है।

संख्या ८३ क. भक्तिप्रबोध, रचयिता—जुगतानंद, कागज—देशी, पत्र—१६१, आकार—७'८×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८९८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८२४, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम इलाहाबाद।

आदि—

श्री कृष्णाय नमः

श्री सुपदेवाय नमः ॥ श्री चरनदासाय नमः ॥
श्री चरनदास जी का दास गुसाईं जगतानंद जी कृत भक्त प्रबोध ग्रंथ बहुअंग ॥

प्रथम सतगुरु महिमा वरनते ॥ दोहा ॥
दीन जानि विनती सुनों धर्म गुरु सुपदेव।
दास मानि संसे हरौ प्रकट करो सब भेव ॥ १ ॥
श्री गुरु चरन ही दास जी पुनि पुनि करूं प्रनाम।
तुम क्रिपा सब सिद्ध हो अरथ मोक्ष धर्म काम ॥ २ ॥
वंदों श्री भगवंत कूं बंदू हरि के दास।
अनभै वानी क्रिपा करि जन हिय करौ प्रकास ॥ ३ ॥
निरगुन सरगुन भेद जो सांप्य और वैराग।
जग अनित्य आतम जु सति कहौ होय अनुराग ॥ ४ ॥

अंत—

कुंडलिया

अठारह [१८] सै चौवीस [२४] को संवत महा उदार।
कातिग सुद पंचमी वार दीन ही वार ॥
वार दीन ही वार हिये अवलाषा कीनी।
गुरु हरजन गुन कथन कथन प्रभु सुरति जु दीनी ॥
भक्ति ज्ञान वैराग को लछन सहत उचार।
जुगता भक्ति प्रबोध ग्रंथ अठाई मैरु अठार ॥

विषय—जुगतानंद ने कृष्ण, शुकदेव तथा अपने गुरु चरणदास की प्रार्थना के पश्चात् निम्नलिखित विषयों का वर्णन किया है :—

१—गुरु महिमा, २—साधु महिमा, ३—मन, ४—जगनिवृत्ति, ५—वैराग्य, ६—नाममाहात्म्य, ७—अजपा, ८—कृष्णचरित्र, ९—शुकदेव स्तुति और १०—बारहमासा।

रचना दोहे, चौपाई, पद, कवित्त और कुंडलिया आदि छंदों में है।

॥ रचनाकाल ॥

अठारह[१८] से चौवीस[२४] को संवत महा उदार।
कातिग सुद पंचमी वार दीन ही वार ॥

टिप्पणी—रचयिता स्वामी चरणदास जी के शिष्य थे। ये एक ओर तो राधाकृष्ण का गान करते हैं और दूसरी ओर 'अजपा' और 'सतगुरु' का गुणगान।

संख्या ८३ ख. भगवद्‌गीता माला, रचयिता—जुगुतानंद, कागज—बांसी, पत्र—१५७, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४७३, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० स० बनारस।

आदि—

श्री कृष्णाय नमः ॥ ॐ श्री त्रिभुवन चंदाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः अथ श्री भगवत गीता माला मंत्र लिख्यते

॥ दोहा ॥

ध्रित राष्ट्र उवाच ॥

धर्मक्षेत्र कुरक्षेत्र में मिले जुध के साज
संजय मो सुत पांडवन कीने कैसे काज। १

संजय उवाच

पांडव सैंना वूह लपि दुर जोधन ढिंग आइ
निज आचरज द्रौन सौं बोले असे भाइ। २
पांडव सैंना अति वडी आचारज तू देपि
ध्रष्ट द्युमन तुव सिप्य मैं व्यूह रचौ जु वसेपि। ३
सूर धनुस धारी वडे अर्जुन भीम समान
द्रोपद महारथ और पुनि हैं विराट जुजुधान
ध्रष्टकेत अरू कासिपति चेकतांन बलवंत
कुंत भोज अरु सैव पुन पुरजित शत्रु निकंत। ५

अंत—

परंपरो जो ब्रह्म है अर्जुन तू चितरापि
आत्मवस्त विचारिनी दिष्ट लही मैं भापि। १
इन्द्री मन वुद्धि प्रान जो जुद्ध करन भगवान
अर्जुन सौं कहते भये गीता मध्यि वपांन। २

मर्न भषरा गुन रस प्रभु सील नीर विस्तार
जो नर धारै हृदै मैं सो होय सिद्ध भौ पार । ३
क्रेल क्रीड़ा कृस्न जु करत रहे विस्तार
श्रीमत भागौत स्कंध मैं दस्म मांहि विचार । ४
सहस हजार चौकड़ी व्रप तपस्या कीन
महातम श्रवन सुन फल प्रापिता चीन । ५

सोरठा

भजि जानकी नाथ प्रम जनन भक्ता श्रेष्ठः
मननिग्रह सुन काथ भक्ति जनन सदा सुषी । ६
इति पंचमुषी रतन सागरो संपूर्णं समाप्तं

विषय—आरंभ में भगवत्‌गीता का अनुवाद तथा ९९ पृष्ठ पर राम अष्टक, १०१ पृष्ठ पर हनुमान जैत, १०५ पृष्ठ पर विष्णु पंजर स्तोत्र, १२० पृष्ठ पर नाम सहंस स्तुतिभाषा आदि वर्णित है फिर चतुश्लोकी गीता, चतुर्विंशति गायत्री, पंचमुषी रतन सागर लिखकर ग्रंथ समाप्त किया गया है।

संख्या ८४. जेठुवा रा सोरठा, रचयिता—जेठुवा, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक, प्रकाश जोधपुर।

आदि—

जेठुआ तणी जगीस, सुख हुती मेलस नही।
बाला मिलो जवीस जोड़ी तो सूं जेठुआ ॥ १ ॥
लागो लोचन नाह, अणी आला अलता तणां।
सरसु सेर थपाह, जड़िया तो सूं जेठुआ ॥ २ ॥

अंत—

तिलग ते तीमाल, वेधक सूं बांता नहीं।
खहूयला दयाल, मंस्वा किरन परिमेहउत ॥ १३ ॥

इति जेठुआरा दूहा

विषय—नीति के १३ दोहे (सोरठी)।

संख्या ८५ क. मुअज्जम शाह के कवित्त, रचयिता—महापात्र जैतसिंह, असनी (फतेहपुर), कागज—देशी, पत्र—४५, आकार—७'२ × १३'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—

१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

श्री सरस्वत्यै नमः श्री गणाधिपतये नमः ॥

माजम साहिव दिसि दछिन की साधिवे को,
 वाधि समसेर साजि चढ़ो संग सेन को।
कहै 'जैतसिंह' पर पुरनि पुकार परी,
 पायन पराने उर पावत न चैन को।
एकै मुरि दुरि भुरि गिरिनि के दरि बीच,
 एके पेसकसी साजु साजतु है दैन को॥
एदिल सो लिया मालु वे दिण न करथौ हाल,
 सोलापुर ओलल ओ बीजापुर लेन को॥ १ ॥

अंत—

तोसो कहो तकि तेरे हितै तरू नापो तने दिन के कुल हेगो।
जानि है जात न जोवन को जब आइ जरा जगि जोर गहेगो।
वोलत सीष हमारी की सुधि भए पछितेले सो बोल चहोगे।
माननि मान कनाए न मानति मान अमान धरोइ रहोगे॥ २१९ ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में जैसा उद्धरणों से स्पष्ट है जैत कवि की तीन प्रकार की रचनाओं का संग्रह है—भक्ति, शृंगार और प्रशंसा। अंतिम विषय की रचना परिमाण में अपेक्षाकृत अधिक है। अतः यह एक प्रशस्ति काव्य है। रचयिता की प्रशंसा के प्रधान लक्ष्य औरंगजेब के पुत्र मुअज्जमशाह हैं। इसीलिए ग्रंथ का नाम 'मुअज्जमशाह के कवित्त' रखा है। मुअज्जमशाह के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यक्तियों का भी उल्लेख है जिनमें राजा जयसिंह राघोराय और छत्रसाल मुख्य हैं।

ग्रंथ में कवित्त सवैया और कुछ दोहे हैं। यद्यपि अधिकांश रचनाओं में कवि की छाप है तोभी ऐसे कवित्त या सवैयों की कमी नहीं है जो छाप रहित हैं।

मुअज्जम शाह के संबंध में कवि ने उनके अनेक युद्धों का वर्णन किया है। इनमें कहीं कहीं वीरगाथा कालीन छप्पय वाली शैली का प्रयोग किया है। जहाँ दानदाक्षिण्य आखेट, वर्षगाँठ अथवा राजभोग का वर्णन है वहां शैली स्वाभाविक है।

संख्या ८५ ख. साहिजादे माजम के कवित्त, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—९ X ६ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८११, पूर्ण, रूप—सुंदर, लिपि—

नागरी, लि० का०—१७४२ वि० प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सरस्वत्यै नमः। श्री गणाधिपतये नमः
माजम साहिब दिसि दाछिन की साधिये को
बाँधि समसेर साजि चढ़ो संग सेन को
कहे जेत सिंह पर पूरनि पुकारि परी पायन
पराने अरि पावत न चेन को
एकैं मुरि दुरि कुरि गिरिन के दरि बीच
एकै पेस कसी साजु साजत हैं देन को
ए दिल सों लियो मालु ये दिल न कह्यो
हालु सोलापुर ओल लियो मालुवे दिलन को। १

अंत—

स्तुतिनि वपानी गुन गानी सनमानी
प्रभु जगत की रानी बरदानी हेगंननि के।
जे हे वे अज्ञानी अभिमानी मोह गलतानी
तिनको क्रपानी सी सुजानी हे पननि के।
सेवा जिन ठानी अनुमानी जो स्तुति बानी
तिनको दयानी दानी मानी हे मननि के।
भीतल निवारी देति जीतल जीवन ज्याइ
हीतल सीतल करे सीतला जननि के ॥१५९॥
कढ्यो सेल गहि साहि आलम समथ्य
साहि पथ्थ से सुभट ठट्ट हरे भरी भर कों।
धोंसा की धुकार धसकत धराधर धरे
धीरधरा धीस को धरकि तेज दर कों।
ब्रह्मंड मंडल में दंड दे अदंड बचे
पंडनि के मंडरीक मिलें तजि वरको।
छीर निधि छलकि उछलि छीटें छिति
छाइ मानो तमहीन तारागन टूटे तरको ॥१५९॥
प्रबल प्रचंड मारतंड ते उदंड तेज
चढ्यो वीर वंड साहि आलम महाबले।
धोरे सुख होत धराधीसनि के धाकहीते
धुव धाम धूरि सों धुरेटेसुर कोकले।

दिव्व दल चले दले दिगज दिगंतनि में
दौरे दर वर के दरेरे दरियाहले
फनी फन फटे फुंकरत यों स्रोनित फुहीं
रंग ज्यों जावक फुहारन उनधे चले ॥१६०॥

विषय—मोजम शाह (शाह आलम) के किसी युद्ध का वर्णन है ।

संख्या ८५ ग. माजम प्रभाव अलंकार, रचयिता—जेतसिंह, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—९×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३६, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—१७२७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—

श्री गणेशाय नमः

चलित सुंड दीरघ भसुंड उदंड दंड जिमि ।
अति प्रचंड मंडित सो गंड पंडत मंढल तिमि ।
ललित पूर सिंदूर धूर जिमि सूर प्रात हुअ ।
एक दंत मयमंत संत वंचित जो कंत हुअ ।
गत ईस सीस रजनीस धर ईस भुअन दारिद्र दरन ?
वर बुदिद देत मति सुद्ध अति सौ सदद बुद्धि कारन हरन ।१ ॥

× × ×

नगर माजमा वाद हे दछिन दिसह अनूप ।
तामे नर ऐसे वसे सबे सरस से भूप । ३

+ × ×

तिनती अधिक कृपा करी मोहि मिरासी मानि ।
नर हरि को पनतीइहे जेतसिंह कवि जानि । १२

अंत—

अथ व्याघात अलंकार

व्याघात लछन राज करज भयो उपायजो ।
तेहीं उपाय सोइ काज ओर भाय कों होतु है ॥ १६४ ॥

जथा

मदन जर्यो जेहि दिट्ठि मृग नेनी की दिट्ठि सोइ
जीवतु काम इह अचरज मन आवई ।
जेहि दिस्टि के उपाय ते मेनका दग्ध काजु भावे
तेही दिट्ठि ते जिए का काज लेत है ।

अथ संसृष्ठि अलंकार

अलंकार जहाँ जाने जाने जाहि ।
अलंकार संसृष्टि सो कवि की जो मनमाहि ॥ १६६ ॥

यथा

मति मो में सो में कियो इह अपार मति सिंध ।
तते सुकवि सँवारिये अलंकार विंध ।

इति श्री जेतसिंह विरचितं माजम प्रभाव अलंकार ग्रंथ ।

विषय—अलंकार का विषय प्रतिपादित किया गया है । कवि ने अपने आश्रयदाता की वंशावली भी वर्णन की है ।

रचनाकाल

संवत सत्रह से जहाँ सत्ताइस गति लेपि ।
अगहन सुदि षष्टी गुरो ग्रंथ रच्यो अनुरेपि ॥ १५ ॥

संख्या—८५ घ. प्रबोध चंद्रोदय नाटक भाषानुवाद, रचयिता—जेतसिंह, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३८, परिमाण अनुष्टुप्—१४६२, पूर्ण, रूप—सुंदर, लिपि—नागरी, रचनाकाल और लिपिकाल—१७६२ वि, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि

श्री गणेशाय नमः ॥

सुंड सों मुंडगहि तुंड में इंदु तकि चंपि करि चम्मरपिच्छाह पेले ।
मुंडावर माल वहु हाल उत्ताल गहि करतहि डिमि डिंमिक डमरूहकेले ।
गंगवर अंग के संग निरषि हेरंग सोभितिकिय द्विजराहेले ।
वंभ विज्जंन ह्वेरहत आरंभ कवि संभु की गोद हेरंब पेले ॥१॥
अज्ञानिन के ज्ञान कों करत सुनत हीं बोध ।
नाटक चंद्रोदय प्रबोध भाषा करी सु सोध ॥२

परम पुरष जोति आनंद मैं निरमल भजुमन मेरे जो कहत सगुअंग में ।
ताके विन जाने माने छिति तिअपतेज,
आगियोन तत्व लोक के विचार कहँ जग में ।
जे से मारतंड की मरीचिका मध्यान मध्य,
पय पूरित जानि मृगधावे तकिमग में ।
पढ़ें कहा होत वहे पंडित जो न जान,
तत्व सुष भोगी भोग भ्रमत जेंव हेलग में ॥३

अंत—

हरषि पुरूप दियो आसिपहं एसे कहि,
मेघ अति वरषि अवनि पोपें आइके ।
राजा राजु करे छिति मंडल को सुष,
निरूपद्रवनिकरि दिसि विदिसिन पांइके ।
तत्व के प्रकास ते तमोगन भो दूरि सो,
प्रसाद के तिहारे इह जानि कह्यौ चाइके ।
संसार सागर मधि विषेमाया परपंच हे
निसंक महजननीके तरो जाइके ॥६५१॥

इति श्री प्रवोध चंद्रोदय नाटकस्य तस्य भापा करिष्य महापात्र जेतसिंहस्य षष्टमों अंकः ॥ लिपितं स्वहस्त ज्येष्ट वदि षष्टी गुरौ संवत् १७६२॥ पुस्तक संपूर्ण सुभमस्तु ।

विषय—

संस्कृत के 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' का भाषानुवाद ६ अंकों में है । इसमें विवेक, वैराग्य, श्रद्धा आदि एक ओर और काम, मोह, अहंकार आदि दूसरी ओर नियत करके आध्यात्मिक रूपक की रचना की गई है ।

इस रूपक का अभिप्राय वेदांत की शिक्षा देना है ।

रचनाकाल संवत् १७६२

टिप्पणी—ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति की पुष्पिका से विदित है कि यह मूल प्रति है । अतः इसका लिपिकाल और रचनाकाल एक ही संवत् १७६२ है । इस दृष्टि से यह प्रति महत्वपूर्ण है ।

संख्या—८६, तमाल मद्यभंग मांसानांनिषेध, रचयिता—ज्ञानदास, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४'१ × ५'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८७८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा, दारागंज, इलाहाबाद ।

आदि—

रमतीत राम । स्तुति ॥

रामनिरंजन परम गुरू संत सबै सिर मौर ॥
ज्ञानदास बंदन करै सीस नाइ कर जोर ॥१
संस्कृत अश्लोक है ब्रह्मांड पुराण के मद्धि ।
ता अध्याय की भाषा टीका करौं प्रसिद्ध ॥२
ब्रह्मा जू बरनन करचौ नारद मुनि सों जोय ।
सो भाषा कर कहत हूँ जेहि समझैं सब कोइ ॥३

श्री ब्रह्मोवाच ॥ श्लोक ॥

प्राप्ते कलिजुगे घोरे सर्वे वर्णाश्रमे तरा ।
तमालं भक्ति ते येन स गच्छेन्नरकार्णवे ॥१

। टीका दोहा ।

महा घोर कलि युग विषे बरणाश्रम पुनि और ।
ते तमाल भक्षन करै ते पावे नरक अघोर ॥ २
मधपान रत जे पुरूष ताको शिव नहि होइ ॥
ते मानुष धर्महीन है नरक महि पर सोइ । ७७ ।

इति श्री ब्रह्मांड पुराणे ब्रह्म नारद संवादे तमाल मध भाँग मांसानां निषेधः समाप्तः ॥ संवतु १८७८ मिति सावन सुदी ३ मंगल ॥ राम राम राम राम ।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "तमाल मध भाँग मांसानां निषेध" है । इसके नाम से विषय का पता चल जाता है । जो कुछ आश्चर्यजनक बात है वह यह है कि यह निषेद पुराण सम्मत कहा गया है । अर्थात्, यह ग्रंथ ब्रह्मांड पुराण से लेकर लिखा गया है । ग्रंथ दोहा, छंदों में है तथा ब्रजभाषा में लिखा गया है ।

संख्या ८७. मामूल अतिब्बा, रचयिता—टीपू सुलतान (दक्षिण भारत का सुलतान), कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—६.३ × ८.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९०७ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद ।

आदि—

ॐ श्री गणेशायनमः ॥ अथ मामूल अतिब्बा लिख्यते तिब्बमतात् ॥

फारसी खाना नान मैंदे गिजायकवी भाषा हिंदी रोटी मैदा की	नफा भोजन पुष्टि	जरह गिरानी जिगर व शंग गुर्दैह व दर्द सिकम्म कुनद	मुरलैत
नान षुष्क भाषा रोटी मोटी	पुल् गवारा व सुवक जल्दी पच जाय व हल्की है	बूढ़े आदमी कु बीमारि करै है	चुपर लेनी घी सै दूध के संग' 'पानी तो नुकसान न करैगी

अंत—

हिंदी जवां वरताउ वैद्यन का इपट्ठा किया हुआ टीपू सुल्तान का मिला हूआ उपर चार जद वल्के के पहली मैं नामपाने का पीने के दूसरी मैं फायदा तीसरी मैं नुकसान चौथी में उतार लिखा है।

इति सर्व वैद्य कृतं टीपू सुल्तान संग्रह कृतं मामूल अतिव्वा नाम संपूर्णम् संवत् १९०७ आश्विन शुक्ल १३ दश्यां लिखित मिदं मिश्र पूर्णवल्लभेन स्वार्थ आहार मध्ये गंगा तटे।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'मामूल तिव्वा' है। मूल ग्रंथ फारसी में है जिसको टीपू सुलतान ने संगृहीत किया था। प्रस्तुत पोथी में मूल ग्रंथ के साथ हिंदी का अनुवाद भी दिया गया है।

'मामूल तिव्वा' का विषय वैद्यक है। इसमें चार खाने दिए गए हैं। पहले में खाने पीने की चीजों का नाम है। दूसरे में उनका गुण वर्णित है। तीसरे में उनका विकार और चौथे में निदान दिया गया है। यह ग्रंथ साधारण उपयोग के लिये लाभदायक है।

संख्या ८८. टोडरानंद वैद्यक, रचयिता—अनुमानतः टोडरानंद, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—८½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०४, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७३७ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, एम० ए०, 'साहित्यरत्न', मह्यनाल, बनारस।

आदि—

यै शाव अपद कर कुट कं धरै तव हीग कह कटोरे मो डाली कै आगीग चढाई देह लाठी के हुरा सो घोटना जब हींग शुनी जाइ तब ओषद मह डारि कै छानी लेह कपरासो पुराक मास ४ गरम पानी सै दीजे तो भुप लागै वायु हरै पेट झरत होइ तौ पाई पानी न पीवै घरी २ पेट कनुज होइ तौ राती कौ पाइ सोवती वेला पानी जेतना पीवै झाडा पुली के होइ सीत वाऐ हरै २ अथ झोल वीधी। गोघृत तोला १६ आक क्षीर तोला ४ मीरीची काली तोला १ आक पत्र रस तोला २ हुर हुर पत्र रस २ ऐह औषद आनी कै रापै।

अंत—

दुशरी वीधी

भेला कर तेल नीकारी कै लोहे के वासन महकरी कै तव उसर मह गाडी रापै महीना भरी तव उपारी लेइ अर्जत वरन पर लगावै चंगा होइ दिन ६३ अथ शाक वीधी वाडभिरंग तोला १ चीता तोला १ कुरैआ कै छाल तोला भकटै अजरी की छाल तोला १ छीत वनाजारी की छा तोला १ धतुरा का वीज तोला १० अरुशा का पत मासे ६ बीरीआ तोला १ इति श्री वेदक टोडरानंद संपुरन समासं समत १७३७।

यह पोथी पंडित महादेवदत्त जी का है।

विषय—वैद्यक ग्रंथ है। कुछ रोगों पर अनुभूत औषधियों के नुसखों का संग्रह है।

संख्या—८६. महाभारथ कथा कर्न आरजुनी (कर्णार्जुन युद्ध), रचयिता—ठाकुर कवि, कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—७½ × ४¾ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)-४२०पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—१७६६ वि०=सन् १७३९ ई०, प्राप्तिस्थान-काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस दाता—ठा० रामदत्त सिंह, ग्राम—लछीरामपुर, डाकघर—रानी की सराय, जि० आजमगढ

आदि—

राम सहाइ सदा रहै
श्री गनेस आए नमह
लीः महाभार्थ कथा
करन आरजुनी,

गनपती प्रनवौ चीत दै चरना। कथा प्रवीत्र जासु हीत वरना।
पुनि प्रनवौ जालप कर जोरी। वीमल भगती देहु वीनती मोरी॥
सारद भारतइ सपन देपाना। गौरी पुत्र जेनु परवत पाना।
मै ठाकुर पुछत हौ तोही। भारथ कथा सुनावहु मोही॥

॥ दोहा ॥

सारद माता गनपती दुइ मीली कीन्ह पसाव।
"ठाकुर" बुधी पुनीत अती भारथ कथा सुनाव।

तव धरी लागी ए कपट कीन्हा। रावन सहित जन्स तेइ लीन्हा।
खेल एक पुरसन्ही पेलावा। पाछे महारथी माटी मेरावा।
आनी भुइ गुनव ऐ वादल। भुइ पर वारह डण्ड महापल।
उतर देस है प्रग हंकारी। कोठीक प्रगना लीन्ह करारी॥

॥ दोहा ॥

राज भेद कर राउत ठाकुर आन जुझार।
गावो करन क पौरुप महाभार्थ कथा रसार॥

अमर कोक अनेग जे अर्था। जाकारन पींगल औ भर्था॥
सुनीए सुप्रीत वेद पुराना। ताकी आदी 'ठाकुर' भल जाना॥
सीधनाइ के अछर है पाँचा। चौतीस अछर के कहरा वाँचा॥
कवी के अछर सभ सीषा। काढी परी हथवटी लीषा॥
सुध पढत असुध न जाना। लघु द्रीघ मइ कीछु न वषाना॥
भारथ कथा केरी सुरसाइ। वाढै धर्म पाप छै जाई॥

× × ×

अंत—

॥ दोहा ॥

तुहु पुनीत हम पापी बोलही पाचौ भाइ।
बहुत सोच भा मन मह लेपत लेषी न जाइ॥

राए दुदीस्टील अंकमलावा। सहदेव लकुर धरा गइ पावा॥
आर्जुन कहै संग भइ जरी हौ। भीम कहै मइ का जी करीहौ॥
राए दुदीस्टील से अस कहही। बंधौ कर्न हमारे अहही।
अन डाढी भुइ षोजहु जाइ। जहा न मनु सेजा होइ भाइ॥
देषी वीचारी सकल तहा हरी। कतहु न वसुधा हइ वीनु जरी॥

॥ दोहा ॥

करूना करही पंडव कवनी गती हम कीन्ह।
भीम पसारी हथौरी करन कै सज गती कीन्ह।

भीम हथौरी वीर सवाग्रा। करन दगध ले तहा दीग्रा।
क्रीश्न जाना क्रोध भा भींवा। यधव समुझी न मारइ जीवा॥
क्रीश्न के मन मह संका परी। तहा सइ वीचली गए तब हरी।

सुभमस्तु॰सीधरस्तु

इतीश्री महाभारथ कथा कर्न अर्जुनी समपुर्नजो देषा सो लीषा मम दोषो न दीग्रते समत १७६६ समै नाम माघ वदी तेरसी वार बुधवार के उतारल थानी मोकाम धवरहरा जे पंडित ज वाचही तेन्ह के वीनतीग्रौ॥

॥ दोहा ॥

जो देषेउ सो लीषेउ मै मतीमंद गँवार।
अछर मात्रा टुट वढा वाचव पंडीतराज सुधार॥

विषय—

कृष्णार्जुनयुद्ध का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—रचयिता ने अपने संबंध में कुछ लिखा तो है, पर वह अस्पष्ट है:—

तब धरी लागी ए कपट कीन्हा। रावन सहीत जन्म तेइ लीन्हा।
पेल एक पुरसन्ही पेलावा। पाछे महारथी माटी मेरावा॥
आनी भुइ गुनव ऐ वादल। भुइ पर बारह डंड महापल॥
उतर देस है प्रग हंकारी। कोठीक प्रगना लीन्ह करारी॥

दोहा

राउ भेद कर राउत ठाकुर आन जुमार।
गावौ करनक पौरुष महाभार्थ कथासार॥

अमर कोक अनेग जे अर्था। जा कारन पींगल औ भर्था॥
सुनीए सुम्रीत वेद पुराना। ताकी आदी ठाकुर भल जाना॥
सीधनाइ के अछर है पाँचा। चौतीस अछर के कहरा बाँचा
कबी के अछर सभ सीपा। काढी परी हाथ चटी लीपा॥
सुध पढत असुध न जाना। लघु द्रीघ मइ कीछु न वपाना॥
भारथ कथा केरी सुरसाई। वाढै धर्म पाप छै जाइ॥

उपर्युक्त उद्धरण से कुछ ऐसा पता चलता है कि ये किसी राव (राजा) के भेदिया और सरदार (रावत) थे तथा संभवतः प्रयाग (प्रग, उतर देस) के शासक थे। इन्होंने अमर, कोक, पिंगल और भारथ को अच्छी तरह से तो पढ़ा ही साथही वेद, पुराण एवं स्मृति ग्रंथों की आदि भी अच्छी तरह जानते थे। 'सीधनाइ' (ॐ न म सि धं) के पाँच अछर, चौतीस अक्षरों का ककहरा (कहरा) और कवि के अक्षर (शुभ और अशुभ अक्षर एवं गणागण) इन्होंने सीखे एवं उन्हें हाथ-से भी (? पाटी पर) लिखा। जो कुछ सीखा, पढ़ा और लिखा वह सब शुद्ध-शुद्ध। लघु-दीरघ के विषय में तो कुछ कहना ही नहीं है आदि। इन बातों से ये उच्च स्तर के लिखे पढ़े सुसंस्कृत विद्वान जान पड़ते हैं। संभवतः यही असनी के प्राचीन ठाकुर हैं जो अपने फुटकल कविताओं के लिये प्रसिद्ध हैं। प्रस्तुत ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १७९६ वि० है। अतः ये इस संवत् के पहले हुए। यदि यह अनुमान ठीक है तो ग्रंथरूप में उनकी यह रचना पहले पहल प्राप्त हुई है और इस दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। ये भगवती और गणेश के उपासक थे। प्रस्तुत रचना इन्होंने भगवती शारदा की प्रेरणा से की जिनका इन्हें स्वप्न हुआ था:—

सारद मारतह सपन देपावा। गौरीपुत्र जनु परवत पावा॥
मै ठाकुर पूछत हौ तोही। भारथ कथा सुनावहु मोही॥

दोहा

सारद माता गन पती दुइ मीली कीन्ह पसाव।
ठाकुर बुधी पुनीत अती भारथ कथा सुनाव॥

संख्या ९० क. शब्द सदगुरु के, रचयिता—ठाकुर या ठाकुरदास (गौसपुर, डा० निजामाबाद, आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस। ग्रंथदाता—पंडित जगन्नाथ मिश्र, ग्राम—गौसपुर, डा०—निजामाबाद, जि०—आजमगढ़

आदि—

पदमन के चहटका लागी।
छोराउत अमी सुधारस निर्मल पात उठै अनुरागी।
सो रस त्यागि विषै मे पागे स्वान रूप मन जागी॥ १॥
मारत लातन दातन काटत तवहु न गर्दभ भागी।
स्वान कटउ अलि करत विविधि विधि दुइ देत एक धागी॥ ३॥
ऐसी मोह जनीत दुप दारुण छुटत नाथ तव जागी।
"ठाकुरदास" चर्णरज सेवत शार शब्द उर लागी॥ ४॥
माधो घर की राह निवेरो।
पाँच पचीश तीस चवतीश को वांधि करो हिय डेरो।
आठ अव तीनि दोष दल मर्दौ उर पक्षी उर घेरो॥ १॥
दशौं द्वार को इसही वान्धो मया स्वप्न भ्रम तोरो।
कुमति पशार वांधि तन मन से नग्न दोहाइ फेरो॥ २॥
एह असाध्य दुख प्रभु जौ काटौं आपन खुशी पशेरो॥ ३॥
ज्ञान रूप हिय माह विराजौ जन की विनै शवारौ।
'ठाकुरदाश' दया सतगुर की ज होउ प्रछे पद चेरो॥ ४॥

अंत—

नहीं आकाश है नहीं पाताल है नहीं मृत्यु लोक की कार शाजी।
नहीं जमराज है नहीं धर्मराज है नहीं पाप नहीं पुन्य ताजी।
चंद्र अरु शूर्ज तारंगणा पवन जल नहीं है हींदुआ तुरुक पाजी।
नहीं वह हद है नही अनहद है नही वोह जगमगी जोति साजी।
भूत वेयताल नही काल सयतान नहीं जगत परिपंच नही कोउ काजी।
रूप अखंड है लहर आनंद है अगम की पंथ है सत्य साजी।
दास ठाकुर शोह देश मे पेशनीज जागता पुरुष से शकल शाजी॥ १॥ ८॥

\+ × +

प्रकृति तत्त्व मे मेलिए तत्व पृथक करि देपि।
मन वुधि चित के सोधिए वुम्हि नयन भेपि।

उलटि पलटि निरपत रहै बुझै मन ठहराय।
हरि हा हो ठाकुर गाएव नगर में घर करै तिनि सुंन्य के पाए ॥१०॥
सब्द सूरति शे शोहिये वानी विमल विराग।
सोद्धि बुद्धि मन दृढ़ दीये सत संघति गति जाग।
विरह भक्ति हृदये धोवै तन की दाग।
हरिहा ठाकुर विमल भक्ति मोती भूरै हंस होए...

—अपूर्ण

विषय—भक्ति, ज्ञान और वैराग्य संबंधी पदों का संग्रह।

टिप्पणी—ग्रंथ के आदि, मध्य और अंत के बहुत से पत्रे नहीं हैं। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। रचयिता का नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी से पता चला कि ये उनके पुरखे थे और लगभग १००।१५० वर्ष पहले वर्तमान थे। ये सनातन धर्म में आस्था रखते थे, पर साथ ही निर्गुणी संतों जैसे विचार भी रखते थे। दोनों विचारधाराओं को लेकर इन्होंने पदरचनाएँ की हैं।

संख्या ६० ख. ज्ञा० गी० (ज्ञानगीता), रचयिता—ठाकुरदास, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—१२¾×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस। ग्रंथदाता—पंडित जगन्नाथ मिश्र, ग्राम—गौसपुर, डा०—निजामाबाद, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः

वन्दौ श्री गुरु कमल पद जेहि शेये भ्रमनाश।
तेहि चरनन को रेनु काटै जम कौ फाश ॥ १ ॥
शकल सुमंगल मूल एह शकल अमंगल नाश।
सकल जीव कह मोक्ष प्रद शेवत जासु अनाश ॥ २ ॥
जेहि सेवत सुर सिद्धि नर विष्णु आदि त्रयदेव।
मछ आदि अवतार शद शोपद अछै अभेव ॥ ३ ॥
नीर सरगुन वेद मत शकल पछ को मूल।
जेहि शेये हरि चिन्हिया मीटी पाप मैशूल ॥ ४ ॥

+ + +

विनै प्रीति कर जोरि करि कहीय उमा मृदु बएन।
कहहु राम गुन रूप निधि खुलै होय दुइ नयन ॥ १६ ॥

सुनि बोले सीव विहसि उर शुनहु उमा चीत लाए।
रघुपति चरन सरोज रज करन लगे समुझाए ॥ १७ ॥

अंत--

मार्ग द्वार एक एंडी राखै। दूसर मूल द्वार धै राखै ॥
एहि विधि आशन सिद्धि लगावै।
उलटि पवन ब्रह्मांड चढावै ॥
गुरु से बुझि वान्धि उखेरा। त्रिकुटी संगम नावै डेरा।
विज मंत्र लेइ शास चढावै। इंगला पिंगला माह समावै।
पहिलै...श रेचक नामा। चौविश नाम पुरक भरिकामा।
छतिश कुंभक माह जपावै। एहि विधि कुछु दिन प्रेम बढावै।
आवत जात राह परिजाई। तव फेरि दुगुना देइ बढाई।
सतोगुन अनकृत स्वल्प अहारा। मारै निंद्रा नाम अद्धारा ॥
त्रिकुटी पवन बस्य करि रापै। वीज मंत्र तेहि उपर भाखै।
नवव नाटिका वंद करि बोलै। दशै द्वार केवारा खोलै।
झिलिमिलि जोति करै उजिआरा। देखहु दहुँदिशि जोति पशारा।
पाच तत्व तहा देखन आवे। मन बुद्धि शोधि चित उरलावै।
पहिलै प्रीथ्वी तत्व दरसावै। पित स्वरूप शकल भर्मावै।
तेहि वीचे अति नेह न लावै। ताके उपर जल दरशावै ॥
सेत रूप विच झलक न आवै। ताके उपर तेज दरसावै।
अरुन रेपि कछु देर न लावै। तापर पवन रूप दरसावै।
अरति रंग विच प्रिति न लावै। ता उपर आकाश दरशावै ॥

—अपूर्ण

विषय--एक रूपक कथा द्वारा आध्यात्मिक विषय का वर्णन है। कथा इस प्रकार है :--

काशी रूपी काया में मनसराज ब्राह्मण अपनी बुद्धि-रूपी स्त्री के साथ रहता था। वह विश्वनाथ (आत्मा) का बड़ा भक्त था। उसकी भक्ति की परीक्षा करने के लिये भगवान् एक दिन अघोरी साधु के रूप में उसके पास आकर अपनी तपस्या की सिद्धि के निमित्त उसका मांस माँगने लगे। साधु ने कहा, 'तू बड़ा भक्त है। मुझे तपस्या की सिद्धि तब प्राप्त हो सकती है जब मैं तुम जैसे भक्त का मांस खाऊँ। अतः हे भक्त! तुम मुझे अपना मांस दो।' ब्राह्मण ने पहले तो अपने से उत्तम भक्त की खोज की, किंतु इसमें जब सफलता नहीं मिली तो स्वयं ही स्त्री पुत्रों के साथ साधु की इच्छा पूर्ति के निमित्त तैयार हो गया। साधु जो स्वयं भगवान् ही थे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने ब्राह्मण से वरदान माँगने

के लिये कहा। ब्राह्मण ने भगवान् से अपने यहाँ पुत्र रूप में जन्म लेने का वरदान माँगा। भगवान् ने तथास्तु कहकर ब्राह्मण के घर जन्म लिया। आगे चलकर मनसराज पुत्र द्वारा बैकुंठ लाभ करता है। कुछ दिन पश्चात् पुत्र का अपनी माता (बुद्धि) के साथ वार्तालाप होता है जिसमें बुद्धि को ज्ञान लाभ होता है। अंत में बुद्धि पुत्र से योग विषयक ज्ञान भी प्राप्त करती है। इसके बाद ग्रंथ खंडित है।

संख्या ६१. तुरसीदास की वाणियाँ, रचयिता—तुरसीदास (गुसाईं), कागज—देशी, पत्र—१७१, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल – सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ गुसाईं जी श्री तुरसीदास जी कौ कृत लिष्यते।
॥ अथ प्रथम ब्रह्मनाम स्तुति ॥
ओॐ प्रम जोति प्रकासस्य प्रब्रह्म परापरं।
परानंद प्रमादि पुरूष प्रमात्मा प्रमेस्वरं ॥ १ ॥
प्रमततं प्रम तेजं प्रमसांत सरूपकं।
प्रमपद समांन सरब सिधि अजरौ अमर अनूपकं। २ ॥
प्रम नृगुन निराकारं निरक्षरो निरामयं।
निरविकारं निराधारं निरविग्रहौ निरामयं। ३ ॥
× × ×
॥ अथ गुर कृपा विधान ॥
तुरसी परथम गुर कृपा सु दुतीए सत संगम जांन।
त्रितीए पूरव अंकूर मिलि उदै भयौ यह ग्यांन ॥ १ ॥
तुरसी ग्यांन अभति हरि की भक्ति अष्टांग जोग अरु त्याग।
गुर गमि ग्यांन मजूसिका पुली हमारे भाग ॥ २ ॥

अंत—

स्थानं स्थिरं कृत्वा अलपं भोजनमाचरेत।
अल्पनिद्रां अल्पतुयं प्रथमे जोगस्यलक्षनं ॥ १८ ॥
निराकारं निराधारं दालिद्रं दुपभंजनं।
सदाशांत सर्व रुपं तुरसीदास तस बंदनं ॥ १९।

इति श्री गुसांई जी श्री तुरसीदास जी कौ कृत संपूर्ण ॥ कृत की संप्या ॥ साषी ॥ ४२०३ ॥ परिकरन ॥ २०० ॥ ग्रंथ ॥ ४ ॥ पद ॥ ४६१ ॥ राग ॥ २९ ॥ श्लोक १८ ॥ संवत् ॥ १८५६ ॥ की मिती जेठ मासे कृष्ण पक्षे तिथ्यौनांम ॥ ११ ॥ वार वृहस्पतवार

कै दिन सुभं भवेत ॥ लिपतं च ग्राम पारड्या मध्ये लिपतं श्री बाबा जी श्री श्री हरिदास जी का साधां श्री स्वांमी जी श्री सेवादास जी तिसशप श्री स्वांमी जी श्री अमरदास जी महा विरकत ता-प्रसाध श्री श्री स्वामी जी श्री दरसण दास जी ता प्रसादे सिप मुकनदास पठनारथं ॥

कृपा तैं पूसतग लिप्यौ छै सु अपन हस्ते ॥
बांचे विचारै जाकूं रांम रांम न्मसकारं ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश वर्णन। प्रस्तुत बानियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं:—

१—साखी

२—ग्रंथ चौअक्षरी

१—करनीसार जोगग्रंथ।
२—साध सुलक्षन जोगग्रंथ।
३—तत्वगुन भेद जोग ग्रंथ।
} पत्र—३६५ से
} ,, ५३६ तक

३—पद

ये ग्रंथ वृहद् हस्तलेख में हैं जिसके लिये सेवादास पर लिखी गई टिप्पणी देखनी चाहिए।

संख्या ६२. भ्रमर गीत, रचयिता—तेजसिंह, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—४'६ × ४'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० महेशप्रसाद मिश्र, गाँव—लिदहाबरा, डा०—प्रटरामपुर, जि०—इलाहाबाद

आदि—......

सो कुविजा वस ह्वै गई देषि कै,
काली को नाथ्यौ जैंडारि कै गोंद है।
तो कों पठाए ते आऐ इहा तुम,
ठाढे भयो हो महीना...लोदें है।
काहू को राज भऐ तुम भूले हो वावरे,
रावरे सों नहिं भोंदे है।
ऊधो जू साचु उहै उपपान है,
काका की भैंसी भतीजे कों सोंदें है॥

× × ×

चोर सो आइ सुनावत चाह भए वृज माँह बड़े दुपदाई॥
कान्ह बने कुविजा पति है पति राधे की बात कहै न सुहाई॥
आदि न जानत हो तप की तुम जोग की ह्याँ चरचा है चलाई॥
ऊधोजी काहे कोपात फिरो घर मे नाही सूजी भगौती दोहाई॥

अंत—

चाहत वै जोग हम भरी है वियोग
विसरायो वह भोग जामे दधि दूध महियो ॥
आपु करै राज लागै तनको लाज इहाँ जपतप,
साज हमही सों कहै गहियो ॥
तुम हो सुजान देष जात जैसो ठान,
तैसो कहियो निदान हूँ सकुचमति रहियो ।
छोड़ी बृजवास कीन्हो कुबिजा को काम,
ऊधो ऐसो घनस्याम सो प्रनाम जाइ कहियो ॥
केलि करी हरिजू बहु भाँति सों,
दान लियो हम सों दधि दूधो ॥
प्रीति की रीति बिसारि कै 'तेज'
संदेस पठावत वेद विरूधो ॥
प्राण पियारे को छोडि कै काहु,
कियो तप है हम पूछती सूधो ॥
जोग सिषावन आवत हो,
बृज वासन के घर घालन ऊधो । ३४ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में गोपी उद्धव संवाद के रूप में गोपियों का विरह वर्णित है ।

टिप्पणी—ग्रंथ ब्रजभाषा में है और इसमें कवित्त, सवैया छंद प्रयुक्त हैं । काव्य की दृष्टि से सुंदर और सरस रचना है ।

संख्या ६३. राजनीति चंद्रिका, रचयिता—त्रिलोकसिंह, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—५३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६६, पूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०५ वि०=१८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

॥ श्री गनेस जू ॥
॥ अथ लिख्यते राजनीति चंद्रिका ॥
॥ दोहा ॥
श्री गनपति विनऊँ सदा और सुसुती माइ ।
दीजै "सिंह त्रलोक" को उतिम ग्रंथ बनाइ ॥ १ ॥

× × ×

२ दोहे अपाठ्य हैं ।

हित उपदेसौ मित्र सौ रुचि सो सुनै नरेस।
होई जहां अनूकूल फिरि संपति करै प्रवेस॥ ३॥
सुभ उपदेसे करै नहीं कौन काम वह मित्र।
कौन काम वह प्रभु कहो कहित न सुनै दै चित्त॥ ४॥
बड़े ठौर पहुँचे कहा फल कर मन अनुसार।
वासुक कंठ महेस के करत समीर प्रहार॥ ५॥
उपवन रचना कौन पुनि ज्यौं माली सृष काल।
ऐसो अनुभौ होइ जो राज करै चिर काल॥ ६॥

× × ×

वेद अंग तत्वज्ञ जब हौंम सुकर्म समाज।
मन वच आसिष वंत जो वरनौ प्रोहित राज॥ ८॥

अंत—

राजनीति को ग्रंथ सुनि कछू कछू मति होइ।
दोहा 'सिंघ त्रलोक' ये करे दोइ सै दोइ॥ २०३॥
होत चंद्रिका को उदै रिपु कल कोक सकोक।
लोचन मित्र चकोर ज्यौं प्रमुदित 'सिंघ त्रलोक'॥ २०४॥

॥ छंद ॥

भ्रमै अबोध अंधकार इंद्र के विलास मैं।
बिलोक लोक सभा मिभ जास के प्रकास मैं।
कही 'त्रलोक सिंघ' सो पढ़ो गुनो अनंदिका।
अनेक हेत कै उदोत "राजनीति चंद्रिका॥ २०५॥

संपूर्ण सुभमस्तु वैसाष मासे सुभे शुक्ल पछे अष्टम्यां बुधवासरे संवत् १९०५॥

विषय—

राजनीति वर्णन, राजपुरोहित लक्षण, नृप लक्षण, राजा के लिए त्याज्य और विहित कर्म।

संख्या ६४, वाणियाँ, रचयिता—दत्तात्रेय, संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः उक्त विवरणपत्र द्रष्टव्य।

संख्या ६५, कवित्त दयादेव के, रचयिता—दयादेव, कागज—देशी (खुरदरा पीला कागज), पत्र—१, आकार—५×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७, अपूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८१२ के लगभग, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि--

श्री हरि ॥ कवित्त दयादेव के ॥

आछे ए अवास आछे कमला विलास,
आछी सोंधे नीकी वास मिली मधुकर गान सों।
रूप के निधान आपुकार सुजान,
आए कहा दयादेव मिलि विधि विधान सो।
तन को सिगार करि मन को अधार की
जो ये तेरो मान ही सों मान्यो......
मेरी मान करि मान सो ॥ १ ॥

+ + +

आयो है वसंत जहाँ संत ऊ संचित होत,
निहंचित तेई दयादेव जेई जोरी है।
तातें तजि मोन लालन ते करि गोंन आली,
सूधी करि भोंहे जोते नाहक मरोरी है।
मानि कह्यो मेरो मेरी मान को नवासरए,
मान तजि मिल जे कहा कछु भोरी है।
मान बिनु कीने मनु मानतु न मानति तो,
मान करिवे को और रितु थोरी है ॥ २ ॥

अंत--

अति अनमन अनवने सोच सने,
स्याम ठाढे रहे तू कहे तो पाइ पारिये।
मेहरी के मनु एसो होइ क्यों,
दैय्या त्यों त्यों पुठी जाति ज्यों ज्यों समुझाइये।
कहे 'दयादेव' देखि जाने अनजाने रोस,
कीनो सुतो कीनो अब रस की विचारिये।
रोस हू में रसु है जो है ढरहु तातें,
रोस ही रसीली आली रसुक कहि ठारिये ॥ ७ ॥

+ + +

विषय--विप्रलंभ शृंगार के ७ कवित्त।

संख्या ९६. भाषामहिमन (शिवमहिम्न), रचयिता—दयाल कवि, कागज देशी, पत्र—१०, आकार—८$\frac{3}{4}$ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्णशीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान--आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

सेवा संकर की करै·····हित मनुलाइ ।
रीझि रिझावत है······न के गुन गाइ ॥ १ ॥
संकर संकर······सेवक सिद्धि सहाय ।
करत कृपा······मैं कलमल दुःख पराय ॥ २ ॥
+ + +
चहत कियौं कविदीन है "महिमन भाषा" वेस ।
करौ सिद्धि वरनै लगौं करिकै कृपा महेस ॥ ६ ॥
"नरपति सिंह सुजान" ने आयस दीन्ह्यो मोहि ।
"रचिभाषा महिमन" करौ सैव सराहै तोहि ॥ ७ ॥
नरपति सिंह सुजान पै करौ कृपा जगदीस ।
करौ चक्कवै जगत को······यह दीस ॥ ८ ॥

अंत—

पूजा पाठ पद्धति पटल न करन पावैं,
जपतप व्रत नेम नाही निवहत घर ।
माया भ्रम जाल मै भरमावै पर देश देश,
वासर वितावै व्रथा तीर्थ ना करावै तर ।
भनत दयाल कैयो वेर मै पुकार्यौ नाथ,
कैसे हौ उदार जो अनाथ पैं कृपिनतर ।
संकट हरण असरण की सरण याते,
दारिद वृंद को विदारौ हे बरदवर ॥ ११ ॥
वरद विचारि वालपन तै सरण आयौ,
वांछित मनोरथ के सेवाफूल पाइहौं ।
सुरसरि तीर नीर संजम संभारि प्रात,
ध्यान धरिधाम वैठि निसुदिन ध्याइहौं ।
विद्या को विलास वाणी विमल विनोद छोंडि,
काँहू घरा धीसन पैं धोपे हूँ न धाइहौं ।
सुकवि "दयाल" पैं दयाल होत काहे नहिं,
तौं सों हैन दाता दास औरै को कहाइहौं ॥ १२ ॥

विषय—

संस्कृत रचना महिम्नस्तोत्र का अनुवाद ।

संख्या ९७. अवगत उल्लास, रचयिता—दयाल नेमि, कागज—देशी, पत्र—१०३,

आकार—५'४×८'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२९०, अपूर्ण (अंत का केवल एक पत्र खंडित), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारीजी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥

ॐ आत्म कौं परिणाम करि आत्म कहौं प्रकास।
याकौ नाम प्रसिद्ध है अवगत को उल्लास ॥ १ ॥
नाम रूप मृग जल सबै काकौं करौं प्रणाम ॥
मेरी मुझको वंदना सोहं आत्म राम ॥

कवित्त

नाम रूप मृग जल सब कौन कौं प्रणाम करौं,
अहै निज सार आप आप कौं प्रणाम है।
अपुनपौ अपार निरधार कछु नामैं करौं,
पटधार थकत येसैं चिदघन राम हैं।
बुद्धि तैं विहीन मूढ लपटे योगादिक भ्रम,
कहै निगम प्रगट तहाँ यतन को न काम है।
आदि अंत मध्य वस्तु जिउं की तिउं सब समान,
येसैं अनेमी घाल सुतै सिद्धि धाम है ॥ १ ॥

अंत—

अवगत अर्थं फल जानीयै फल अर्थं आत्मा जान।
'उल्लास' अर्थं सुप्रकास करि बनैंत विधि बिज्ञान।
आत्म प्रकास या ग्रंथ कौ जो समुझै सज्ञान।
तिन मानौ या जगत में कीनो अंम्रत पान।
अमृत पान करि अमर ह्वै मुक्त हो............

—अपूर्ण

विषय—'अवगत उल्लास' के अन्य नाम 'आत्म प्रकास' और 'सर्वसार संग्रह' भी है। इस ग्रंथ का विषय वेदांत है। आरंभ में कवि ने स्वयं अपनी (आत्मरूप में) वंदना की है तत्पश्चात् पंच देवताओं की प्रार्थना है। पंच देवताओं की प्रार्थना केवल परम्परा के पालनार्थ की गई है। इस ग्रंथ में ९ प्रयोग या अध्याय हैं जो नीचे दिए जाते हैं :—

१—वस्तु निर्देश और मंगलाचार।

२—षट्दर्शन प्रदीपिका—इसमें छओं दर्शनों के मत का उल्लेख है।

३—निरुपाधि, सउपाधि, एक अनेक, अध्यारोप, अपवाद आदि का निरूपण।
४—संकल्प विलास—इसमें मन का निरूपण है।
५—भक्ति आलोचना।
६—जीवन मुक्ति का स्वरूप वर्णन।
७—सर्वात्मस्वरूप वर्णन।
८—माया त्रिविधा। इसमें माया के सत, रज, तम तीनों रूपों का निरूपण किया है।
९—वैराग्य।

इन नौ अध्यायों के पश्चात् रचयिता ने साधक की शुभेच्छा, विचार और अभ्यास आदि सात भूमियों का वर्णन करके अंत में आत्मानंद स्वरूप का नव रस मय वर्णन किया है।

टिप्पणी—ग्रंथ में कवित्त तथा दोहा छंदों का विशेष रूप से प्रयोग हुआ है। इसके अन्य नाम 'आत्मप्रकाश' और सर्वसार संग्रह भी हैं। इसकी भाषा ब्रज है पर इसमें कहीं-कहीं खड़ी बोली भी प्रयुक्त हुई है, जैसे:—

नही काहू की ह्वै रहती है।
सबहूँ कौ अंतर दहती है।

× × ×

कृष्णादिक सों छल करती है।
यह काहू सों नहीं डरती है॥ (माया)

—पत्र संख्या, ५९

विषय की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। कविता भी ललित है।

संख्या—९८. प्रेम बतीसी, रचयिता—दयालाल, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ उद्धव गोपी संवाद प्रेम बतीसी लिष्यते॥ कवित्त॥

जाछिन तें जीवन मूर संग लै कै क्रूर
नाम अक्रूर गयौ करम कूर कै।
ताछिन तें गोपी जिन नेह धुजा रोपी,
तिन देह सुधि लोपी बिरह जरूर कै।
तरस हिये में रहै पिय के दरस काज,
करै सपरस आप मदन अरूर कै।
पूर करैं दुषन हिय चूर कैं सुषन तिय,
मूरकैं सुजिय बोलें कछू गरूर कै॥ १॥

स्याम के हिये में इत रहै तलावेली अति,
मेरी जे महेली ते अकेली मेली हाय क्यों ।
उन बिन मैं हू सूनौ अरू उन्हैं दुप दुनौं,
कैसै ह्वै है बोलऊनौ यहै सोच माय क्यौं ॥
वेग कहिआयौ ऐसौ वनत अभी न जैवो,
कछु तौ संदेस देवौ नही दुप जाय क्यों ।
सुधि न रहाय क्यौं हूँ कुछू न सुहाय क्यौ हूँ,
प्यारिन कौं छोडि दुप लयौ इहाँ आय क्यौं ॥ २ ॥

अंत—

उद्धव विचार व्रज भूमि जानी सार गुल्म लता हौंनो धर
आस हरि सौं जनाइ है ।
गोपिन सो मान हार हिय मधि राखि प्यार,
आपही सौं करी निराकार की मनाई है ।
व्रज वनितानि कौ प्रेम कौ न वार पार,
बुधि अनुसार कछु मैं हू ने गनाई है ।
मति सरसाई मन भाई 'दया' हिय आई,
गुरुन दिखाई रीति मरतैं यौं वनाई है ॥३२॥

इतिश्री उद्धव गोपी संवाद प्रेम वतीसी दयालाल कृत संपूर्ण

विषय—

ग्रंथ में ३२ कवित हैं जिनमें गोपी उद्धव संवाद के रूप में भ्रमरगीत वर्णित है ।

संख्या—६६. खुम्मानरासो, रचयिता—दलपति राम, कागज—देशी, पृष्ठ—६१२, आकार—६¾ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६५०, खंडित, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—

श्री गणेशायनमः

गाहा

ॐ ऐं मंत्र अपारं । सारद प्रणमांमि माय सुप्रसन्न । सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं । पूरे वर वेद पडि पुन्नं ॥ १ ॥ वरवेद पुच्छ कहच्छा ॥ वीणा सुर वद् कमल कर विमला ॥ हरणं सी हंस रूढा ॥ विज्जावैजंतिया माला ॥ २ ॥

दोहा

कमल वदन कमलासना । कवि उर मुप के वास ।
वसैं सदा वागेश्वरी विध विध करैं विलास ॥३॥

विद्या बुद्धि विवेक वर वायक दायक चित्त।
अरचैं जे भाई तुनैं चरण लगावैं चित्त ॥ ४ ॥
सेवक सूंसानिधि करो। महिर करो महामाय।
त्रिपुरा छोरू ताहरो सानिध करो सहाय। ५ ॥
आइ घो अक्षर अचल, अधिकी बुद्धि उकत्ति।
'दल पत' सूं कीजे दया सेवक जाणि शकत्ति ॥६॥

अंत—

सींधुर गह वर शावतादीधा दाशी दाश।
परिधल देपहिरावणि अधि पति वेहूँ उलाश ॥ ७० ॥
पदमणि परणें आविया उदिया पुर अधिपत्त।
पइणें महिल पधारिया हिकमत हिंदूपत्त ॥ ७१ ॥
हिंदूपति हरणापि सूं रत्तोराजड़राण।
सुंदर कमध महिलां शिरें मुकलिणि स्व वंजाण ॥ ७२ ॥
कुहकें कोयलजेम ॥ हंस गवण मुप मुलकती प्रीतम घण वहुप्रेम ॥ ७३ ॥
राणों इक दिन राजसी सहलें चढ्या शिकार।
गंग त्रिवेणी गोमती अनड़ विजें अपार ॥ ७४ ॥
नदी वंधाऊँ नाम कुर तो हूँ सहि हिंदवाण ॥ ७५ ॥
तुरत गजधर तेड़िया दीधार्यां शिर पाव। तीन नदी वां—

—अपूर्ण

विषय—ग्रंथ के प्रत्येक खंड की कथा का वर्णन संक्षेप में इस प्रकार है :—

प्रथम खंड (पत्र १–६५ तक)

शारदा, गणेश और गुरु की वंदना, चित्रकोट (चित्तौड़) का वर्णन, तथा सूर्यवंशी राजाओं की वंशावली के अनंतर वाप्पारावल की कथा का वर्णन है। कथा यों है:— चित्रकोट रघुवंशियो की राजधानी थी। उनमें से गहिलो नाम का एक पुरुष गांजणगढ़ आया। उसके वंश में श्री पंजर हुआ जिसके समय में गढ़ मुसलमानों के हाथ में चला गया। श्री पंजर की रानी किसी तरह प्राण बचाकर मेवाड़ भागी और वहाँ किसी नागेल (नागल) द्विज के यहाँ रहने लगी। उसने वाप्पारावल को जन्म दिया। वाप्पारावल जब आठ वर्ष का हुआ तो वह वन में गाय चराने के निमित्त जाने लगा। वन में उसे हारीत ऋषि के दर्शन हुए। ऋषि की कृपा से उसको शिव जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि वह चित्तौड़ का राजा होगा। ऋषि ने उसको एक लिंग की उपासना करने का भी उपदेश दिया। इन्हीं घटनाओं के क्रम में उसको देवी के भी दर्शन हुए जिसने प्रसन्न होकर सदा उसकी सहायता करने का वचन दिया। आशाओं के साथ साथ बाप्पा का तेज और उत्साह बढ़ा। उसने चित्रकोट के राजा चित्रसेन के यहाँ प्रतिदिन एक लाख मुद्रा वेतन पर चाकरी

कर ली। थोड़े दिन पश्चात् उसे द्रोणगिरि के एक दानव को मारने की आज्ञा हुई जिसने चित्रसेन के एक राज्य के एक भाग की प्रजा को खाकर समूल नष्ट कर दिया था। वाप्पा ने देवी की सहायता से दानव को मार दिया और गांजणगढ़ को मुसलमान बादशाह (सुलतान साह सलेम) के हाथ से छीन लिया। जब लौटकर आया तो चित्रसेन को मारकर चित्रकोट (चित्तौड़) पर भी अधिकार कर लिया। उसने दानव और चित्रसेन की पुत्रियों से विवाह किया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा। इस समय वाप्पा की अवस्था सोलह वर्ष की थी ? संवत् ४९१ में वह चित्तौड़ की गद्दी पर बैठा। संवत् का उल्लेख इस प्रकार है :—

संवत च्यार एकाणुवे एक लिंग अंबाव।
बर दीधो बापा बढे रुगत कियो सुपचात ॥ २८ ॥
× × ×
शुक्ल पक्ष वैशाख सुध पंचमी पुष्य नषत।
श्री गुरुवासर चित्रगढ़ बेठो वप्प तपत ॥ ३१ ॥

वाप्पा के बावन पुत्र हुए। उनके तरुण हो जाने पर उसने अश्वमेध यज्ञ किया।

इस खंड की पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री दोलत विजय विरचिते वापारो अधिकार संपूर्ण ॥ श्री रघुवंशान्वने वाप्पा तें खुमाण विचें आठ पेढी थई हिवें खुमाण रावल रो अधिकार कहे छें ॥ १ ॥ प्रथम खंड ॥

(द्वितीय खंड पत्र ६६–११० तक)

वाप्पा रावल की ७वीं पीढ़ी (संभवतः) में राजा करण राजा हुआ। उसका पुत्र खुमाण हुआ। करण के पास पुरपट्टन से एक गजधर (?) आया। वह वास्तुशास्त्र का जानने वाला था। करण ने उसको एक महल बनवाने की आज्ञा दी जिसके अनुसार उसने महल बनाकर तैयार किया। महल के एक खंड में उसने दिल्ली का चित्र बनाया जिसमें पाँच पद्मिनी स्त्रियों को भी अंकित किया गया था। खुमान इन स्त्रियों पर मोहित हो गया। उसको गजधर से पता चला कि वे दिल्ली के तोमरराजा की पुत्रियाँ हैं। अंततोगत्वा खुमाण का विवाह उनसे हो गया। दूसरा खंड समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री चित्रकोटाधिपति श्री रघुवंशे वापा पुमांण चरित्रे रति सुंदरी अभी ग्रह करण चित्रकारिका चरित्र रमणराज कुवांरी पाणी गृहण पंच सहेली चित्रगढ मिलण दौलत विजय रचिते द्वितीय षंड संपूर्णम् ॥ २ ॥

तृतीयखंड (पत्र ११०–२३० तक)

इसमें खुमान की रति क्रीडाओं और नलवरगढ़ की राजपुत्री तिलोत्मा के साथ विवाह करने का वर्णन है। नायिकाभेद, बारहमासा, षट्ऋतु और संगीत आदि का विशद वर्णन किया गया है। इस खंड की पुष्पिका यों है :—

इति श्री रघुवंशे चित्रकोटाधिपती वापारावल पट्टालंकार रावल करण तनुज पुमाण चरित्रे दंपति संवाद पंच सहेली आपेटक अधिकार नलवरगढ गमन लापा गृहे तिलोत्तमा आगमण धींगा गवरी पुनर पीटेटन मृत संजीवन एकत मिलन सामान्य वनिताद्दनायका भाव नवरस विलास त्रितियोपंड संपूर्णम् ॥ ३ ॥

चतुर्थखंड (पत्र २३०–४०८ तक)

इसमें खुमान का महमद गजनी के साथ घोर युद्ध का वर्णन है। युद्ध में खुमान को विजयश्री मिली। पश्चात् करण रावल ने पुमान को गद्दी पर बिठाया और स्वयं काशी वास करने लगा। करण ने ९१ वर्ष २० दिन राज्य किया। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री सूर्यवंशी वापारावल पट्टालंकार करण पुमाण चरित्रे संदेसा मोचन पुनः प्रीयतेढण चित्रगढ़ आगमन गजनीपति महमद पातशाह चित्रगढ़ आगमनं सामंत जुद्ध वर्णं सामंत नायका जुद्ध वर्णं पातशाह ग्रहें मोचन कांनड़देक सामोद रति सुंदरी देवल दे इत्यादिक चारित्रेयं दौलतविजय विरचिते नवरस विलास ग्रंथस्य चतुर्थैपंड संपूर्णं ॥ ४ ॥

पंचमखंड (पत्र ४०८—४५१ तक)

आलणसी चितौड़ का राजा हुआ। उसका गुजरात के राजा जयसिंह से युद्ध हुआ। जिसमें आलणसी को विजय प्राप्त हुई। जयसिंह ने उससे अपनी पुत्री का विवाह कर जान बचायी। पश्चात् आगे के रावलों की वंशावली दी है जिसमें समर सिंह का उल्लेख है। उसने दिल्ली पति पृथ्वीराज को अपनी पुत्री विवाही। पृथ्वीराज ने संयोगिता (जयचंद की पुत्री) के साथ बलपूर्वक विवाह किया। महम्मद गोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया और संयोगिता को माँगा। इस पर लड़ाई छिड़ गई। समरसिंह पृथ्वीराज की ओर से लड़ा और वीरतापूर्वक मारा गया। इसी प्रसंग में पृथ्वीराजरासा (पत्र ४२५) का भी उल्लेख है। यहाँ से चित्तौड़गढ़ के रावलों (गहलोतों) की पदवी राणा हुई। भीम चित्तौड़ का रावल हुआ उसका छोटा भाई भारथ था। इनके पिता का नाम सूरजमल्ल था। भारत दिल्ली दरबार में चला गया। भीम को पुत्री के अतिरिक्त और कोई संतान न थी। अतः उसने अपने जामाता को चितौड़ का उत्तराधिकारी बनाया। परंतु भीम की मृत्यु हो जाने के पश्चात् राजविद्रोह हुआ और भारत (भीम के छोटे भाई) को बुलाया गया। अंत में राहप (?) को राजगद्दी मिली और वह प्रथम राणा हुआ। इस खंड की पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इतिश्री चित्रकोटाधिपति सूर्यान्वये वापारावल पट्टालंकार करण करण पुमांण संतांने राणा राहप अधिकारें यं दौलत विजय विरचिते आलणसी रावल समरसिंह रावल अधिकारे पंचम खंड सम्पूर्णम् ॥ ५ ॥

षष्टम खंड (पत्र ४५१—५१६ तक)

इसमें रतनसेन पद्मिनी की कथा दी हुई है। अलाउद्दीन पद्मिनी के लिये चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है जिसमें वह हार जाता है। पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इतिश्री चित्रकोटाधिपति बापा खुमाणरावने राणा रतनसेन पद्मणी गोरा बादल संबंध किंचित पूर्वोक्तं किंचीत ग्रंथाधिकारेण पं० दौलत विजय विरचितो यं (पष्टा)--धिकार संपूर्णम् ॥

सप्तम खंड (पत्र ५१६—५६८ तक)

इस खंड में हम्मीर और अलाउद्दीन तथा राणा सांगा और बाबर की लड़ाइयों का वर्णन है। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इतिश्री वी दलपती विरचितोयं बापा पुमाण वंसा नृवने पंड सप्तमो समाप्तं ॥

अष्टम खंड अपूर्ण (पत्र ५६८—६१२ तक)

यह खंड अपूर्ण है। इसमें संख्या ५६८ से ६१२ तक के ही पत्रे हैं। जितना अंश उपलब्ध है उसमें विक्रमसिंह, वनवीरसिंह, उदयसिंह, प्रताप सिंह अमर सिंह करणेश, जगत सिंह और राजसिंह तक के राणाओं का वर्णन है। राणा उदय सिंह और राणाप्रताप सिंह का वर्णन कुछ विस्तार से है।

संख्या १०० क. मुक्तिरत्नाकर, रचयिता—दलेल सिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—१६३, आकार—१४३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्) १९७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५५ वि=सन्—१६९८ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः पोथी मुक्त रतनाकर कृत दलेल सीह के।

। दोहा ।

गुर गणेस गिरिजा गिरा गंग जनक गौरीस।
ग्रह नायक गोविंद जन प्रनवौं महि धरि सीस ॥

चौपाई

बंदौं गन नायक अभिरामा, त्रिजगत पुज्य सुमंगल धामा ॥
तन सिंदुर वर्ण छबि कैसे, जनु अनुराग देह धरि वैसे ॥

× × ×

आसिन मास सकल चलि गयेऊ। विजय जोग दशमी जब भयेऊ ॥
शुक्ल पक्ष शुभ मंगलवारा। मंगल उदधि कथा अनुसारा ॥
अति रहस्य यह कथा अनूपा। मम मति अल्प निरख भव कूपा ॥

× × ×

सम्वत सत्रह सै पंचावन। गुर पग सुमिरि कीन्ह गुण गावन।
बंदौ पितु पग मन वच कर्मा, जो मोरे ऐह तन के वर्मा ॥

दोहा

रामसिंह नृप जनक मम करणपूर के राव।
तिन्ह के पोडस भाग मोहि, आहि बुद्धि व्यवसाय ॥

अंत—

ऐह क्रिस्न तुलसी के चरित जो पढिहि सुनाइ है।
सोइ सर्व मंगल रूप सर्वद सर्वदा सुप पाइ है ॥
काष्ट चंदन मूल मितका लेपि चरनोदक धरै।
जमदूत जम तेहि देपि भागहि सकल अघ सहजहि टरै।
मंजरी दल कुपुम लै पूजिहि पुरारि मुरारि ते।
तरू रोपि पालन करहिं लालन दरस परसन फल जिते।
अभिपेक पूजा जप प्रदछिन कवच नुति जितने कहे।
करि प्रेम सर्द्धा सुनिहि जे इन्ह सभन्ह के फल तिन्ह लहै।
इतहि सुप आनंद निधि मे चोह दिन प्रति पाइ है ॥
अंत में भगवंत ढिग गोलोक धामहि जाइ है।
सभ पापहर सभधर्मकर सभकाम प्रद सुपदानि है।
दलसिंह भापित रत्न चौदह सकल मंगल पानि है।

॥ दोहा ॥

रत्न चतुर्दश सुष्य ए सुनेउ साधु बुध पांहि।
को जाने कितने भने मुक्ति महोदधि मांहि।
एह पुस्तक मंगल मई संपूरन करिलीन्ह।
सिंह दलेल महीप सो शिवहि समर्पन कीन्ह ॥

इति श्री वृंदावन चंद्र गोविंद चरनारविंद परिचये प्रवीन संजन मनोराज हंसावली विहार मंजुल तरे मुक्ति रत्नाकरे श्री दलसिंह विरंचिते तुलसी चरित्र वर्णननोनाम चतुर्दश रत्न प्रकाशः समाप्तम् ॥ १४ ॥ समाप्तो मुक्तिरत्नाकरः पोथी गोविंद प्रसाद चौधुरी जीव के बसीदे डुमराव प्रगने भोजपुर ॥

विषय—

इस ग्रंथ में निम्नलिखित कथा का वर्णन है :—

"नारायण ऋषि वद्रिकाश्रम में कठिन तपस्या करने लगे। इन्द्र ने समझा कि स्वर्ग का राज्य पाने के निमित्त ऋषि तपस्या कर रहे हैं। अतः उनका तप खंडन करने के लिये उसने कामदेव और रंभा को अनेक अप्सराओं के साथ भेजा; परंतु उनके द्वारा ऋषि का तप खंडित न हो सका। वे हार मानकर ऋषि के चरणों में गिर पड़े। ऋषि ने सबको क्षमा किया तथा इंद्र को संदेश दिया कि स्वर्ग के राज्य से उनकी तपस्या का कोई संबंध

नहीं है। अपने तपोबल से उन्होंने उर्वशी (अप्सरा) को उत्पन्न किया और उसे इंद्र को दे दिया।

कामदेव और रंभा उर्वशी को लेकर इंद्र के पास गए और उनसे सब बातें कह सुनाईं। इंद्र लज्जित होकर चुप हो गया। उस समय नारद मुनी इंद्र के ही पास बैठे थे। उनके हृदय में, नारायण ऋषि के उक्त तपोबल की बात सुनकर अत्यंत श्रद्धा उत्पन्न हुई। वे कुतूहल के साथ अपनी बीणा में हरिकीर्तन करते हुए नारायण ऋषि के स्थान को चल पड़े और बद्रिकाश्रम में जाकर उनके दर्शन किए। ऋषि के शिष्टाचार तथा संभाषण से वे और भी प्रसन्न हुए। पश्चात् नारद ने हरिचर्चा सुनने की इच्छा प्रकट की। नारायण ऋषि ने सहर्ष हरिकथा का वर्णन किया।

कथा का प्रधान विषय गोलोक और राधाकृष्ण एवं उनके अवतार लेने के हेतु का वर्णन करना है। साथ साथ बद्रिकाश्रम, शतशृंग, व्यंकटाद्रि (जो गोलोक में माना गया है), गंगा चरित्र, तुलसीचरित्र, कैलाश और अवधपुरी (जिसको गोलोक में माना है) का भी वर्णन हुआ है।

ग्रंथ में चौदह रत्न प्रकाश (अध्याय) हैं जिनका विवरण नीचे दिया जाता है :—

रचनाकाल—

संवत् सत्रह सै पंचावन, गुर पग सुमिरि कीन्ह गुण गावन ॥

संख्या १०० ख. मुक्ति रत्नाकर, रचयिता—दलेलसिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—१२३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२ (कहीं कहीं ग्यारह), परिमाण (अनुष्टुप्)—१३६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—

सं० १७५५ वि०=१६९८ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री गुरभ्य नमः ॥
गुरु गनेस गिरिजा गिरा गंग जनक गौरीस ।
ग्रह नाएक गोविंद जन प्रनवौ महि धरि सीस ॥
वंदौ गन नाएक अभिरामा । त्रिजगत पुज्य सुमंगल धामा ॥
तन सिंदुर वरन छवि कैसे । जनु अनुराग देह धरि वैसे ॥

दोहा

सिषावद्ध अहिराजते फनपति मनि छवि लीन्ह ।
मनहु अषंड प्रदीप ते सुरन आरती कीन्ह ॥
वदन गर्जेंद्र रदन कि सोभा । निकसे मनहु सरय की गोभा ॥
लोचन तिनि सुभ्र ससि रेखा । छवि मदिह गवाक्ष सम देखा ॥

+ + +

असनि मास सकल चलि गयऊ । विजै जोग दसमि जब भयउ ॥
सुक्क पक्ष सुभ मंगलवारा । मगल उदधि कथा अनुसारा ॥
अति रहस्य यह कथा अनूपा । मम मति अल्प निरत भवकूपा ॥
पावन चरित जानि मन भावै । करि हो जिनि माछि मधु लावै ॥
संमत सत्रह सै पंचावन । गुरु पद सुमिरि कीन्ह गुन गावन ॥
वंदौ पितु पद मन वच कर्मा । जो मोरे यह तन की ब्रह्मा ॥

दोहा

राम सिंघ नृप जगक सम (? मम) करनपुरा के राव ।
तीन्ह के खोडस भाग्य मोहि श्री हृदि बुद्धि वौसाव ॥

मध्य —

दोहा

मुक्ति महोदधि में भयो तीजी रत्न अमोल ।
सुमीरत दुख दारीद कहै रहै मुक्ति को बोल ॥

इति श्री दोहा वनचंद गोविंद चरनारविंद परिचै प्रविन सज्जन मनोराज हंसावली विहार मंजुल तरे मुक्ति रत्नाकरे श्री दलेल सींघ विरचिते सतसंग वर्ननो नाम त्रितिय रत्न प्रकार ॥ ३ ॥

अंत—

कहु जल जत्र अटारीन माही,
नीचे से उचे चढ़ि जाही।
परहि अग्र ते धार अभंगा,
मानो संभू सीस ते गंगा।
जल के चीन्ह ध्यान ते देपा,
जव मंदर मह वासुखि रेखा।
कहु मरकत मनि महल विराजै,
तासु जोति सर्वोपरि छाजै।
अमित वितान वरनी नहि जाही।
गज मुकुता डोल तत माही।
अति निर्मल जनु अवृत खंडा,
मानहु मुक्ति विहंग के अंगा।
सजल सुढार बड़े छविभारी,

—अपूर्ण

विषय—

श्री कृष्ण चरित्र और गोलोक का वर्णन किया गया है।

अध्यायों का विवरण :—

१—रत्नप्रकास-वदरिकाश्रम वर्णन	पत्र १ से ९ तक
२—रत्नप्रकाश-कैलास वर्णन	पत्र ९ से १४ तक
३—रत्नप्रकाश-सत्संग वर्णन	पत्र १४ से २३ तक
४—रत्नप्रकाश-अपूर्ण	

रचनाकाल—

आसनि मास सकल चलि गयउ। विजै जोग दसनि जव भयउ।
सुक्ल पक्ष सुभ मंगलवारा। मंगल उदधि कथा अनुसारा॥

+ + +

संमत सत्रह सै पंचावन। गुरपद सुमिर किन्ह गुन गावन॥

संख्या १०० ग. रामरसार्णव, रचयिता—दलेल सिंह, कागज—देशी, पत्र—३००, आकार—१५$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०९३१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५० (१६९३ ई०), लिपिकाल—सं० १२४६ फसली, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः ॥

॥ कृत दलेल सिंह राम रसान्नंव लिख्यते ॥

दोहा

गुरु द्विज गनपति रामरविहर गौरी हरिदास ।
चरन कमल रजसीस धरि कहन चहौं इतिहास ॥ १ ॥
हरि चरनोदक ब्रह्म मैं हरिहर तन के खानि ।
नाम दरस जल मुक्ति दा जगत जननि मृदुवानि ॥ २ ॥
गंगादिक तीरथ सकल ब्रह्मादिक सुरवृंद ।
वेद आदि विद्या सबै नारद आदि मुनिंद ॥ ३ ॥
पर उपकारी जिते नृप पृथु आदिक रतनीति ।
करौं दंडवत सवनि कहं सविनै शभ वसप्रीति ॥ ४ ॥
वरपा हरि गुन हलिक कवि शालि सु ग्रंथ अपार ।
उछ प्रीति लै कहत हौं निज मति के अनुसार ॥ ५ ॥
वुध गुरुजन सज्जन चरन वंदि कहौं कर जोरि ।
जगमंगल गुन वरनि के चाहौं इन मति मोरि ॥ ६ ॥
करौं जथामत हरि कथा राम रसार्णव नाम ।
छमि अघ आपर सोधिवो जानिदास विनुदाम ॥ ७ ॥

× × ×

यम[५] हर मुख[५] दिन[७] शुक्र दृग[१] संमत संख्या दीन्ह ।
मास अग्रहन दुजि शित कथा अरंभन कीन्ह ॥ १३ ॥
रामसिंघ नृप के त नय राम भक्त के दास ।
करनपूर पति मगध तजि कियौ रामगढ़ वास ॥ १४ ॥

तहं यह चरित अरंभन कीन्हा । हरिजन चरन रेनु सिर लीन्हा ॥
प्रणवौ शंकर पदजल जाता । जो जग विदित ज्ञान के दाता ॥
ज्ञान विना शुभ कर्म्म न होई । जतन अनेक करै किन कोई ॥

चौपाई

तिलक हेतु चंदन तिन दीन्हा । धरि मुनि वेप गवन वन कीन्हा ॥
नृपगन सकल रहे ठगि ऐसे । अमृत घटे असुर गन जैसे ॥
पूछहि सकल परसपर धाई । समुझि न परे भयेउ का भाई ।
सुनि अश्लोक अर्थ लहि ज्ञाना । रहे जवन पर पथ में सयाना ॥
तिन्ह तिन्ह कहेउ प्रेम की फाँसी । आधा कटक भये सन्यासी ॥
एकहि बार चले चहुँ ओरे । नव विहंग तिमि पिंजर तोरे ॥

जेहि के दिसि जौने दिसि भैऊ । जो जित रहे सो तित ते गैऊ ॥
तसु उपमा भाषहि हम कैसे । शुक के जन्म होत जग जैसे ॥
आधा कटक गये चलि कासी । दुवो भाँति जेहि मंगल रासी ॥
सुनेऊ कुंवर निज पितु के करनी । निज अभाग तिन्ह बहुबिधि बरनी ॥
पितु के वचन सीस धरि लीन्हा । नीति निधान राज तेहि दीन्हा ॥

इत नृप नंदन नाम सुबाहू,
दीन्हेउ तिलक कीन्ह नर नाहू ।
आसिष दीन्ह चूम्बि मुष माथा,
भव अलर्क नंदन नर नाथा ।
आपु सुवाहु बंधु मिलि गैऊ,
गंग जमुन के पटतर भयेउ ।
बंदि मातु पद पंकज जाई,
अति दुष्कर तप किहु दुहु भाई ।

अबिचल भयेउ बिस्न पग प्रीति । जुग जुग रहहि जासु जस गीती ।
एह चरित्र सब सुत वपानी । सौनक सुनत महा सुख मानी ।

दोहा

हरि[४] आउध हरके वदन[५] सागर[७] गन पति दंत[१] ।
तिथि राका वैसाख कै उमडेउ सिंधु अनंत ॥

श्री दलेल सिंघ विरचिते रामरसार्नवे त्रय पंचासत तरंग प्रकासः ॥ ५३ ॥

छंद

भौ तरंग तिर्पन भगति दर्पन सुचित सुनिहि जे गाई है ।
तेहि सकल मंगल सर्व संपति लहिहि जत मन भाई है ।
मुक्ति चौविधि भक्ति नौ विधि भुक्ति सौ विधि पाई है ।
दुख दुरपि दुर्मति दुअन दुर्जस कबहि निकट न आई है ॥
जत धर्म गत तप क्रतु ब्रतादिक सकल तीरथ फल जीते ।
सुनत गुनत वषानि सभ फल लहिहि गृह बैठे तिते ।
करि ध्यान ग्यान विधान हरि पग प्रेम अविचल पाय कै ।
इत भरिहि निर्मल जस श्रवनि भरि अंत हरिपुर जाय कै ।
रहिहि सानिधि छवि निहारत हरप उदधि अन्हाय कै ।
करि भोग सुर दुर्लभ सकल ध्रुव सरिस नगर वसाई कै ॥
जो चोप करि दुई चारि चौपाइ पढिहि परिहास ते ।
तेहि सपनहुं अघ दरस नहि इत वचिहि उत जम त्रास ते ॥
राम रसनिधि भयेउ पूरन संत गुर प्रसाद ते ।
लहि हरख निर्भर वरप जुग चलि गएउ अति अहलाद ते ॥

यह करि सपूरन किहु सीवार्पन काम मन बच जाहि के।
स्तुति सेतु प्रभु विन हेतु इत उत सुखद नृप दल साहि के॥
१७५४ इति श्री संत चरनार विंदु मधुव्रत ॥

विषय—

आरंभ में दशावतार वर्णन फिर रामचरित्र वर्णन तदनंतर हरिश्चंद्र चरित्र, सहस्र नाम, मारकंडेय चरित्र, मायादर्शन, गाधिचरित्र और अंतिम ५३ वें तरंग प्रकाश में पुनः दशावतार चरित्र वर्णित है। रामचरित्र में कांडों का भी क्रम रखा गया है।

तरंग प्रकाशों का विवरण निम्नलिखित है:—

मंगलाचरण

बालकांड

अयोध्याकांड

आरण्यकांड

किष्कंधाकांड

सुंदरकांड

२०—	,,	रघुवर प्रस्थान	पत्र १ से १२ तक

लंकाकांड

२१—	,,	अंगद लंकागमन	पत्र १ से १० तक
२२—	,,	हनुमत्प्रतिज्ञा	पत्र १० से १८ तक
२३—	,,	इंद्रजीत वध	पत्र १८ से २६ तक
२४—	,,	रावणवध	पत्र २६ से ३३ तक
२५—	,,	पुनर्भारद्वाज दर्शन	पत्र ३३ से ४३ तक

उत्तरकांड

२६—	,,	अगस्तराम संवाद	पत्र १ से १३ तक
२७—	,,	काल पुरुष मंत्रण	पत्र १३ से २१ तक
२८—	,,	रामराज्य वर्णन	पत्र २१ से ३२ तक

[२९ से ४८ तक लुप्त हैं]

४९—	,,	सहस्र नाम गुण वर्णन	पत्र १०
५०—	,,	गंगा आगमन	पत्र १० से ११ तक
५१—	,,	माया दरसन	पत्र ११ से २५ तक
५२—	,,	गाधि चरित्र	पत्र २५ से ३७ तक
५३—	,,	दशावतार कथा	पत्र ३७ से ५५ तक

विशेषज्ञातव्य—पुस्तक में दशावतार तथा रामचरित्र का वर्णन है। इसमें अक्षयवटमिश्र का एक नोट लगा हुआ है जिसमें लिखा है कि करणपुर के राजा हेमंत सिंह उनके पुत्र रामसिंह उनके पुत्र दलेल सिंह थे जिनकी यह रचना है। करण पुरा को छोड़कर ये लोग रामगढ़ में रहने लगे। 'रामरसार्णव' में रामगढ़ और 'शिवसागर' में शिवगढ़ लिखा है। ये लोग दोनों के मालिक थे अथवा एक ही गढ़ के वे दोनों नाम हों। अब भी करनपुर मगह में है रामगढ़ में क्षत्रिय लोग निवास करते हैं। राजा दलेल सिंह कवि और ग्रंथकार थे। ग्रंथ अवधी भाषा में है।

संख्या १०० घ. रामरसार्णव, रचयिता—दलेलसिंह, कागज—देशी, पत्र—४२४, आकार—११¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८१२, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—कैथी मिश्रित नागरी, रचनाकाल—१७५० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

दोहा

गुरु दिज गनपति रामरवि हर गौरी हरिदास।
चरन कमल रज सीस धरि कहन चहौं इतिहास ॥ १ ॥

हरि चरनोदक ब्रह्म मैं हरि हर तन के पानि।
नाम दरस जल मुक्ति दा जगत जननि मृदु वानि ॥ २ ॥
गंगादिक तीरथ सकल ब्रह्मादिक सुर वृंद।
वेद आदि विद्या सबै नारद आदि मुनिंद ॥ ३ ॥
बरणा हरि गुण ह्लिक कवि सालि सुग्रंथ अपार।
उछविर्त्ति लै कहत हौं निजमति के अनुसार ॥ ४ ॥

\+ + +

तम[०] हर मुख[५] दिन[७] सुक्र द्रिग[१] संवत संख्या दीन्ह।
मास अगहन दूजि सित कथा अरंभन कीन्ह ॥
रामसिंह नृप के तनय राम भगत के दास।
करनपूर पति मगध तजि कियो रामगढ़ वास ॥
तहं यह कथा अरंभन कीन्हा। हरिजन चरण रेणु सिर लीन्हा ॥

अंत—

दोहा

सिव भाषित अरु राम गुन संमित वेद पुरान।
सकल धर्म सिरताज पुनि ताहि करै को आन ॥ ९३१ ॥

छंद

यह राम चरित्र पवित्र चित्रित संत सुनि सुष पाइहै।
तसु चरन कंज पराग परसत जगत के अघ जाइहै।
दलसिंघ भाषित भवन में लिपि परिहि पल छिन गाइहै।
तही रामनाम प्रभाव अविचल भगति मंगल छाइ है ॥ ९३२ ॥

दोहा

अध्यातम पूरन भयो ऊप्या (?) चौसठि जान।
चतुस्सहससत वेविइत है अरलोक प्रमान ॥ ९३३ ॥
परगट त्रिंस तरंग मौ सुनहु संत चित चाहि।
रामायन पूरन भयो भाषित श्री दल साहि ॥ ९३४ ॥

इति श्री सन्त चरनारविंद मधुव्रत श्री दलेलसिंह विरचिते रामरसार्णवे त्रिसीत तरंग प्रकास ॥ ३० ॥

विषय—

आरंभ में कथा का आरंभ और उसके उद्गम का इतिहास और मंगलाचरण वर्णित है। पश्चात् रामकथा की ओर अग्रसर होकर पहिले मीनावतार, कमठरूप, वाराहावतार, दो अध्यायों में नृसिंह अवतार कथा, विराटरूप वर्णन, वासनावतार आदि कथाएँ देकर तब

राम कथा का कांड बद्ध वर्णन है। संपूर्ण ग्रंथ ३० तरंग प्रकाशों (अध्यायों) में है। तरंग प्रकाशों का उल्लेख निम्नलिखित है :—

संख्या १०० ङ. रामरसार्णव, रचयिता—दलेलसिंह, कागज—देशी, पत्र—१२५, आकार—९$\frac{१}{२}$ × ६$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३२०,

खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी। दाता—श्रीयुत कुलदीप नारायण 'झड़प', स्थान व डा०—लिलकर, जिला—बलिया।

आदि—

× × ×

......'जिमि नष्ट होहिं हरि पाये ॥

॥ चौपाई ॥

जानेउं क्रीपा विस्न ते पाये। मरन काल जिन्हि तोहि मीलाए ।
मोही गेह गोदोहन जवलो। निवसहु नाथ क्रीपा करि तौलो।
मोहि ढिग मन अस्थिर तव देवही। सो प्रभु पुन्य बडन्ह के लेखहि।
होए उचित मोहि औसर एही। कहहु क्रीपाल ज्ञान द्रिग जोही।
हहि मूमुर्ष चहिय जतकाजा। कहहु दया करि सो मुनिराजा।
को भजनीय स्रवन केहि करही। केहि प्रभु जपहि ध्यान केहि धरहि।
सो समुझाय कहहु मोहि नाथा। करुना भवन ज्ञान पति पाथा।
कहहि सूत रिपिराज समाजा। इमि पूछेउ सुकदेवहि राजा ॥
धुनि गंभीर बोले सुपदेउ। धन्य भूप तुम समनहि केऊ ॥

× × ×

ताते भूप भागवत सुनहू। एहि औसर अब दुतिय न गुनहू।

अंत—

यह राम रत्ननिधि काम तरु अभिराम धामद राम के।
जहाँ रामरत्न अमोल अगणित काम गवि जन काम के।
प्रभु प्रेम जल पूरन सदा इत सुखद हित परिनाम के।
जित प्रगट भव हरि जस निसाकर हरन तम कलिधाम के ॥
श्री नेवास नेवास जामे सकल मंगल आलयं।
विधि मन विहंग अपार मंजित तिन्हहि आनंद के चयं।
जहाँ भक्ति चिंतामनि विराजत मुक्ति पारस पानिये।
हरिभक्त मीन अनेक जलधर साधु सुर मुनि जानिये।
कर्म गंजन धर्म रंजन भर्म भंजन समदियें।
कलिमल...सन मति प्रगासन अवनिवासन नर्मदं।
दुरित दुर्मद दुप दुरासा दुष्ट तिमिर प्रभाकरं।
दलसिंघ भनित चरित्र चीत्र पवीत्र मीत्र सुपकरं।
एह सुनि सुनाइहि हरपि गाइहि करिहि चरचा चाहिके।
तमु...तिहि कलिमल दहिहि दुप सब लहिहि प्रभुदलसाहिके।

जसु ध्यान सुमिरन दरस परसन सुष सनातन दायकं ।
सो भक्ति अविचल धरिहि सब सुष भारहि अग जग नायकं ।

दोहा

षष्ट अधिक चालीस भयो उर्मिग्यान···।
कृष्णचंद निरपत वढो लेहु सत संग ॥

इति श्री संत चरनारबींद मधूव्रत श्री दलेलसींघ विरचिते राम रसारनवे दसम चरित्र वरननो नाम षष्ट चत्वारी सत तरंग प्रकास ॥४६॥ इति दसम चरित्र समाप्त

विषय—भागवत दसमस्कंध का संक्षिप्त भाषानुवाद है। प्रधान विषय रामचरित्र वर्णन है।

संख्या १०० च. शिवसागर, रचयिता—दलेलसिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—४२३, आकार—१३$\frac{1}{2}$×५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२९८, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ वि०, लिपिकाल—सं० १८१६ वि०=सन् १७५९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। श्री सरस्वतेनमः।
अथ स्लोक
वर्नानामार्थं संघानां रसानां क्षंदशामपि ।
मंगलानं च कर्त्तारौ वंदे वानो विनायकौ ।

॥ अथ दोहा ॥

गुर पग पदुम पराग लै सिर धरि वारंवार।
कृपा उदधि नर रूप जो विष्णु शंभु करतार ॥ १ ॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता सोई। जेहि विनु ज्ञान लहै नहि कोई।
परम पवित्र चरित्र चित्रअति। करन चहौ प्रभु देहु विमल मती।
प्रनवो गनपति के पग दोऊ। सिवनंदन सिवदायक वोऊ ॥
× × ×

दोहा

मुष्य ब्रह्मवैवर्त लै कथा अरंभन कीन्ह।
श्रुति सम्रत इतिहांस के चूनि चूनि मत लीन्ह ॥ ९ ॥
मुनि हरमुख दिन चंद लौ संवत संष्या दीन्ह।
अक्षै तीजि गुरुवार मै चरित भाषिवे लीन्ह ॥ १० ॥
× × ×

हिंमति सिंघ सुमति सिरताजा। देस करनपुरा के राजा।
रामसिंघ तिन्ह कह सुत भयेऊ। दान कृपान धर्म जस लैऊ॥
तासु तनै हम सब गुन थोरा। नाम दलेलसिंघ भै मोरा॥
सिवगढ़ माह वसे सुष पाई। तेहि थल मह यह कथा बनाई॥

अंत—

मूल पेय तांमूल फल भक्ष जहां लौं आहि।
सिव समर्पि भोजन करै कहै नृपति दल साहि॥११९०॥
सिवसागर सिवदान दीखी कीन्ह जिन्ह कर्म।
मिली आइ अति हरषते जल अगाध जनु धर्म॥११९१॥

इति श्री सर्व मंगल मंदिर चरनारविंद वंदनानंदित श्री दलेल सिंह विरचिते शिव-सागरे सारदा चरित्र वर्नंनो नाम त्रेतिसतिर्थ संगमः॥ ३३॥

दोहा

महि मुनिसागर सिंधु सुत भौ संवत जवप्यान।
पुस्तक लिपि पूरन किए सिव सागर सिवदानि॥११९२॥

संवत्॥ १८१६॥ मार्ग सुदि १३ रविवासरे सुभघरी......

पुस्तक लिषा वा गंगा विष्णु वर्णवार किर्पाराम सुत शाकि सुभ स्थान घोसिआ॥ दसषत भवानीप्रसाद कास्थ गौरदयाल दास सुत साकि विइहर॥ पोथी सिवसागर सह संपुण॥

विषय—

ब्रह्म वैवर्त पुराण के आधार पर देवदेवी प्रादुर्भाव, सृष्टिनिरूपण, नारद, प्रकृति, गंगा, तुलसी, सावित्री, गणपति, तथा गोलोक और श्री कृष्ण चरित का वर्णन किया गया है। ग्रंथ में तेंतीस अध्याय (तीर्थ संगम) हैं।

रचनाकाल—

मुनि७ हर सुष५ दिन७ चंद१ लौ संवत संख्या दीन्ह।
अक्षै तीजि गुरुवार मै चरित भाषिवे लीन्ह॥ १०॥

संख्या १०० छ. शिवसागर, रचयिता—राजा दलेलसिंह (करनपुरा), कागज—देशी, पत्र—२६८, आकार—१५.७×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्) ९६४८, पूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—अक्षय तृतीया, गुरुवार संवत् १७५७ वि०, लिपिकाल—चैत्रसुदी १३ संवत् १८४८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० देवीदत्त शुक्ल, 'सरस्वती' संपादक प्रयाग

आदि—

श्री मते रामानुजाय नमः

श्री सरस्वते नमः अथ श्लोक वर्नानामर्थ संघानां रसानां छंद सामपि। मंगलानांच कर्त्तारौ वंदे वाणी विनायकौ॥

अथ दोहा

गुरु पग पदुम पराग लै सिर धरि बारंबार।
कृपा उदधि नर रूप जो विष्णु संभु अवतार॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता सोई। जेहि विन ज्ञान लहै नहि कोई॥
सब मिलि करहु सहाय हमारी। होइ कथा जग मंगलकारी॥
मुष्य ब्रह्म वैवर्त लै कथा अरंभन कीन।
श्रुति सिमृत इतिहास के चूनि चूनि मत लीन्ह॥
(१७५७ संवत) मुनि[७] हरमुप[५] दिन[७] चंद[१] लौ संवत संष्या दीन्ह।
अक्षै तीजि गुरुवा मै चरित भापवे लीन्ह॥

कथा पुनीत विष्णु सिव केरा।
सकल धर्म साधन जसु चेरा॥

हिमति सिंघ सुमति सिरताजा। देस करन पुरा के राजा॥
राम सिंघ तिन कह सुत भएऊ। दान कृपान धर्म जस लैऊ॥
तासु तनै हम सभ गुन थोरा। नाम दलेल सिंघ भै मोरा॥
सि (? सिवसागर) अमाह वसे सुप पाई। तेहि थल मह यह कथा बनाई।
सिव के चरित सिवद सित धामा। रापेउ सिवसागर तसु नामा॥

दोहा

अंत—

लहु लहु तनु चुहु चुहु अधर पुहु पुहु हसत गोपाल।
मुहु मुहु त्रण तोरहि जननि चरणहि भाग्य विसाल॥ ६४३॥

+ ÷ +

इति श्री सर्व मंगल मंदिर सज्जन चरनार विंद चंदना नंदित श्री दलेल सिंघ विरचिते सिव सागरे सारदा चरित्र वर्णनो नाम त्रितिस तिर्थ संगमः ३३.

दोहा

महि[१] मुनि[७] सागर[७] सिंधु[७] सत भौ सावत जव ष्यात।
पुस्तक लिपि पूरन किए सिवसागर सिदास॥

संवत १८४८ चैत्र सुदी १३ सनि वासरे सुभघरी पुस्तक लिषते प्रह्लाद सुकुल... सुभ स्थान भवानी पुर ॥

विषय—

'शिवसागर' का मूलाधार जैसा, ग्रंथकार ने स्वीकार किया है ब्रह्मवैवर्त पुराण है। इसके अतिरिक्त उसकी रचना के निमित्त अन्य पुराणों, श्रुतियों एवं स्मृतियों से भी सहायता ली गई है। 'शिवसागर' का मूल विषय ब्रह्म का वर्णन, सृष्टि की उत्पत्ति, कर्म विचार, अवतार और कृष्ण आदि हैं। साथ ही ग्रंथ के नामानुसार उसमें शिव की कथा का भी विस्तारपूर्वक समावेश है यद्यपि उसके अधिकांश का संबंध भगवान् कृष्ण के चरित्र से ही है।

संख्या १०० ज. शिवसागर, रचयिता—दलेलसिंह राजा (शिवगढ़), कागज—देशी, पत्र—२०४, आकार—१४ × ६.२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७=सन् १७०० ई० (आरंभकाल), सं० १७६३=सन् १७०६ ई० (समाप्तिकाल), लिपिकाल—१८८७ वि०, फसली सन् १२४७ ई०, सन् १८३९, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः गुरुभ्योनमः

दोहा

गुरु पद पदुम पराग लै शिरधर बारंबार।
कृपा उदधि नर रूप जो विस्न शंभु करतार ॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता ओई। जिन्ह विन ग्यान लहै नहि कोई ॥
परम पवित्र चरित्र चित्र अति। करण चहों प्रभु देहु विमल मति ॥
प्रणवो गनपति के पग दोऊ। शिवनंदन शिवदायक ओऊ ॥
मंगल उदधि विघीनी के हरता। संतत भगत मनोरथ भरता ॥
ग्यानी प्रवर ग्यान के दायक। ग्यान गम्य गुणनिधि गननायक ॥
गजमुष एक रदन छवि पाई। मुष चुंमन सरसरि जनि आई ॥

॥ दोहा ॥

भाल लाल सिंधुर भरे दीरघ सूंड सोहाये।
रवि नंदनि प्रगटी मनो रवि मंडल में आये ॥

॥ दोहा ॥

मुष्य ब्रह्म वैवर्त लै कथा अरंभन कीन्ह।
स्रुति सिम्रिति इतिहास के चूनि-चूनि मति लीन्ह ॥

मुनि[७] हरमुष[५] दिन[७] चंद[१] लै संवत संख्या दीन्ह ।
अछै तीज गुरवार मै चरित भाषिवे लीन्ह ॥

× × ×

चौपाई

हेमतसिंघ सुमति सिरताजा । देस करनपुरा के राजा ॥
रामसिंघ तिन्हकर सुत भयेऊ । दान कृपान धर्म जस लयेऊ ॥
तासुत भै हम सब गुन थोरा । नाम दलेल सिंघ भौ मोरा ॥
सिवगढ़ मांह बसे सुष पाई । तेहि थल मे यह कथा बनाई ॥
शिव के चरित शिवद शिवधामा । राषेउ शिव सागर तसुनामा ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

लयय ताम्बूल फल भछ जहाँ लौ आंहि ।
शिव समर्पि भोजन करै कहै नृपति दलसाहि ॥
शिवसागर शिवदा नदी रदी कीन्ह जिन्ह कर्म ॥
मिलि आये अति हर्ष ते जल अगाध जसु धर्म ॥

इति श्री सर्व मंगल मंदिर संजन चरनार विंद वंदना नंदित श्री दलेलसिंह विरंचिते शिवसागरे सारदा चरित्र वर्नंनो नाम त्रय त्रिसंति तिर्थ संगम ॥

॥ दोहा ॥

स्मत दीन्हेउ राम[३] रस[६] दिन[७] ससि[१] मास वैसाष ।
उमडेउ सागर शंभु कै पूरन जन अभिलाष ॥

इति श्री शिव सागर कांड समाप्त ॥ जो देषा सो लिषा मम दोष न दीयते पोथी गोविंद प्रसाद चउधुरी वंसीदे डुमराव मीती भादो सुदी अष्टमी वार सुक सन १२४७ साल द: महीपतीदास मोकामी डुमराव श्री राम जी ॥

विषय—यह ग्रंथ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के आधार पर लिखा गया है । इसमें तेतीस अध्याय (तीर्थ संगम) हैं जिनका नामादि क्रम निम्नलिखित प्रकार से है :—

८—अष्टम् तीर्थ संगम	गंगा चरित्र वर्णन	पत्र ५३ से ६३ तक
९—नवम् तीर्थ संगम	तुलसी चरित्र वर्णन	पत्र ६३ से ७० तक
१०—दशम् तीर्थ संगम	सावित्री संवाद वर्णन	पत्र ७० से ८० तक
११—एकादश तीर्थ संगम	दान धर्म वर्णन	पत्र ८० से ८८ तक
१२—द्वादश तीर्थ संगम	देहदशा वर्णन	पत्र ८८ से ९६ तक
१३—त्रयोदस तीर्थ संगम	सुतपातयोपाख्यान	पत्र ९६ से १०५ तक
१४—चतुर्दश तीर्थ संगम	दुर्गाउपाख्यान	पत्र १०५ से ११४ तक
१५—पंचदश तीर्थ संगम	गणेश प्रादुर्भाव	पत्र ११४ से १२३ तक
१६—षोडश तीर्थ संगम	गणपति चरित्र वर्णन	पत्र १२३ से १३२ तक
१७—सप्तदश तीर्थ संगम	गणपति चरित्र वर्णन	पत्र १३२ से १३८ तक
१८—अष्टादश तीर्थ संगम	जन्म खंड गोलोक धाम वर्णन	पत्र १३८ से १४७ तक
१९—एकोनविंसति ,, ,,	गोलोक धाम वर्णन	पत्र १४७ से १५८ तक
२०—विंसति तीर्थ संगम	कृष्ण बाल चरित्र वर्णन	पत्र १५८ से १६८ तक
२१—एकविंसति तीर्थ संगम	द्विज पत्नी मुक्तिदान वर्णन	पत्र १६८ से १७८ तक
२२—द्वाविंसति तीर्थ संगम	चीर हरण लीला वर्णन	पत्र १७८ से १८७ तक
२३—त्रयविंशति ,, ,,	विधि मोहिनी चरित्र वर्णन	पत्र १८७ से १९९ तक
२४—चतुर्विंशति तीर्थ ,,	कंसवध पूर्वक नंद ब्रज आगमन	पत्र १९९ से २०९ तक
२५—पंचविंसति तीर्थ संगम	राधा उद्धव संवाद	पत्र २०९ से २१८ तक
२६—षट विंशति ,, ,,	रुकुमिणी मंगल वर्णन	पत्र २१८ से २२८ तक
२७—सप्तविंसति ,, ,,	सुदामा दारिद्र भंजन	पत्र २२८ से २३७ तक
२८—अष्टविंसति ,, ,,	बाण युद्ध वर्णन	पत्र २३७ से २४५ तक
२९—एकोनत्रिंसति ,,	राधा कृष्ण गोलोक धाम	पत्र २४५ से २५८ तक
३०—त्रिंसति तीर्थ संगम	गोपिका पुत्र प्रासाद वर्णन	पत्र २५८ से २६७ तक
३१—एकत्रिंसति ,, ,,	मंजुला चरित्र	पत्र २६७ से २८० तक
३२—द्वात्रिंसति ,, ,,	भद्राउ रिषभ संवाद राजनीति	पत्र २८० से २९१ तक
३३—त्रयत्रिंसति तीर्थ संगम	सारदा चरित्र वर्णन	पत्र २९१ से ३०४ तक

रचनाकाल

मुनि[७] हरमुष[५] दिन[८] चंद[१] लै संमत संष्या दीन्ह ।
अछैतीज गुरुवार मैं चरित भाषिवे लीन्ह ॥

संख्या १०१ क. वृत्तविचार या पिंगल, रचयिता—दशरथ, कागज—देशी, पत्र—५६, आकार—५½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि, नागरी, लिपिकाल—सं० १७९३ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः

गुर गनपति मतिदानि के अति गति नति उर आनि।
जिनके तरुन प्रभाव ते कीने पाहन पानि ॥ १ ॥
कीरति साधन सिद्ध तिनं आराधन करि ईस।
कीन्हो वृत्त विचार कवि अमलानुमत अहीस ॥ २ ॥
भाषा प्राकृत संस्कृत आदि वचन संसार।
अवछंद इक छंद पुनि तिनके द्वै परकार ॥ ३ ॥

॥ वचनं नाम ॥

जो कछु कहिजै रसन सों व्यक्ता रथ जुत बात।
वचन नाम सो जानिए कहत सुमति अवदात ॥ ४ ॥

॥ अवछंदो नाम ॥

छंदो भंगः

॥ छंदो नाम ॥

अवछंदो भंगः

अँरँजन जति अव छंद है रंजन जति सोइ छंद।
सुकवि छंद द्वै भाति है रहित सहित गण वंद ॥ ५ ॥
अवछंद गणिगन विधि विषै सहित गण वंद।
उदाहरण ते जानि हौ आगे सहित अनंद ॥ ६ ॥

अंत—

॥ अथ वर्ण वृत्तानि ॥

तेषां लहुवर्ण वसु वसु रिषि रिषि वसु वसु वसु वसु
को उर सद सरस नव विरई।
कोऊ पद रस दस रिषि वसु नियमन मिश्रित प्रतिपद पद निरई।
परहि निरंतर तति शुष दंतर मोहन मंतर मूरि मई।
पद इकतिक्षरि छंदु घनक्षरि जंपइ मक्षरि सुअन कई ॥

॥ यथा ॥

करुना के धाम अभिराम नाम आठौ जाम,
संकट हरन परिनाम एसौ कोनु है।

दीन को दयाल प्रतिपाल सरनागत को,
जागत सुजस जगति नही को तौन है ।
एक मुप वारे को विचारे ए सहस मुष,
हारे है न थाक्यो गुन गना को ओनु है ।
जोति है सूझति न ऐसे जैसे आरतनि,
सावरे वरन वारो जानुकी को रोनु है ।

॥ घनक्षरि छंद ॥

छट्ठम गुरु पंचम अगुर सप्तम सम पविराम ।
हर पर कल वसु वरन पद छंद अनुष्टुप् नाम ॥

॥ यथा ॥

चंद्रा नित करि चाहै जो पै असित जामिनी ।
रामचंद्र जसै गावै क्यौ न भूपति कामिनी ॥

॥ अनुष्टुप छंद ॥

इति श्री रघुवर कीर्तए दसरथ विरचिते वृत्त विचारे वर्णवृत्त वर्णनो नाम चतुर्थो विचारः ॥ भाषा दोष अदेषियो मति दरसन के गर्व ॥ करी बिनै व्युत्पन्न प्रति अन्य सिरोमनि सर्व ॥ निज बुधि वित हित मै कियो एतोश्रम सभार । इतर विबुध छमि जौन है तिन हित वृत्त विचार ॥ छ ॥ राम ॥ इति संपूर्ण संवत् ॥ १७९३ ॥ बदलसिंघ ॥

विषय—

छंद शास्त्र का वर्णन किया गया है । इसमें निम्नलिखित चार अध्याय हैं । प्रत्येक अध्याय का नाम 'विचार' रखा गया है ।

१—प्रथम् विचार—

मंगलाचारण, वचन नाम, अवछंदोनाम, छंदोनाम, अरंजन रंजन जति नमि, गणनाम, पदनाम, पद्यनाम, चरननाम, विश्राम, प्रस्तार, कलावर्ण, लघु, गुरू, नष्ट, मात्रोदिष्ट, मात्रामेरु, मात्रा पताका, सामान्य मर्कटी, मात्रामर्कटी, वर्णनष्ट, वर्णोदिष्ट, वर्ण मेरु; वर्ण पताका, वर्णमर्कटी, गणभेद, संचारी, स्थायी प्रयोजन, विशेष संचारी, अवछंद भेद, छंद भेद, वृत्त, मात्रावृत्त, वर्णवृत्त लक्षण, उभयवृत्त लक्षण आदि का वर्णन पत्र १ से १८ तक

२—द्वितीय विचार—उभयवृत्त वर्णन पत्र १८ से ४३ तक
३—तृतीय विचार—मात्रावृत्त वर्णन पत्र ४३ से ५५ तक
४—चतुर्थ विचार—वर्णवृत्त वर्णन पत्र ५५ से ५६ तक

संख्या—१०१ ख. नवीनाख्य, रचयिता—दशरथ, कागज—देशी, पत्र—१२७, आकार—५½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७९२ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः

दारिद के कदन गज बदन रदन एक,
सदन हदन बुद्धि साधन सुधा के सर।
धूमकेतु धीर के धुरंधर धवल धाम हाम के,
सरन सरना मनौ निधन कर।
लंबोदर हरहे भवती हित बुंद भाल,
चंद कंद आनंद विवुध चंदनीय वर।
सदा सुभ दाएक सकल गुन लाएक,
सु जै जै गननाएक विना एक विघन हर ॥ १ ॥

॥ अथ नायक नाइका निरूप्यते ॥ अनयों लछनं ॥
होत जाहि अवलंबि कै जामन मदन विकार।
कहो सुनायक नायिका निज संबंध अधार ॥ २ ॥
पति उपपति पर भेद ते नायकु द्विविध बषानि।
अनुकूल दक्ष सठ भ्रिष्ट पुनि चारिभाति पति जानि ॥३॥
नाएक चारयो होंहि ए चारि चारि अनुहारि।
उत्तम मध्यम अधम तो सामान्य अवधारि ॥ ४ ॥

अंत—

॥ अथ स्वाधीन पति का पंडितयोऽ संकरो यथा ॥
सुंदरि एकही सेज द्वै सोइ रही पट्ट तानि।
चनक मूंद वंचक हरें एक जगाई आनि ॥ ४३७ ॥

इति श्री दशरथ विरचिते नवीनाख्ये अष्टनाइका प्रकरन परिछेद ॥

॥ कवि वंस वर्णन ॥

महापात्र नरहरनि भयो अनुज तासु सद बंधु।
तिन तन भो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु ॥ ४३८ ॥
तिन कुल पंचादरति कवि भो दशरथ इही नाम।
काढयो निज बुधि सिंधु मथि एक नवीन ललाम ॥ ४३९ ॥

सत्रह[१७] सै अरु बानवे संवत कातिक मास।
सुक्र असित की सप्तमी पुस्तक लिपो प्रकास ॥ १ ॥
घासीराम सुजान मनि रसिक द्विजोत्तम वंस।
ताके हित हरजू लिषी सुपद सो मानस हंस ॥ २ ॥

॥ शुभमस्तु ॥

विषय—नायक नायिका भेद का पाँच प्रकरणों में वर्णन किया गया है :—

१—प्रथम प्रकरण—नायक नायिका लक्षण, नायक के पति, उपपति दो भेद, अनुकूल, दक्षिण, शठ और धृष्ट नायक के लक्षण और उदाहरण पत्र १ से १० तक

२—द्वितीय प्रकरण—नायिका वर्णन, स्वकीया नायिका वर्णन, स्वकीया के सुर, नर, गंधर्व और असुर विवाह वर्णन पत्र १० से १३ तक

३—तृतीय प्रकरण—परकीया लक्षण, ऊढ़ा अनूढ़ा दो भेद, अभजमान, भजमान लक्षण और उदाहरण, उद्वेग, प्रताप, उन्माद, व्याधि, जड़, संचारी भावों का ऊढा अनूढ़ा में वर्णन गुप्ता, विदग्धा लक्षिता, कुलटा, मुदिता और अनुसयना आदि ऊढ़ा अनूढ़ा में वर्णन, गुप्ता विदग्धा लक्षिता, कुलटा, मुदिता और अनुसयना आदि ऊढ़ा अनूढा के भेद वर्णन पत्र १३ से ७९ तक

४—चतुर्थ प्रकरण—मुग्धा लक्षण और उसके भेद वर्णन, अविज्जोव (अविज्ञात योवना) विज्जोवन (विज्ञात योवना) लक्षित जोवन नवभूषण भूषा, हियाकुला, हियामनोहरा, नवयोवनभूषिता, सुरत कुतूहल कामा, धृति वचना, रतिभीता, पराधीन रति मुग्धा, रतिवामा, विश्रब्ध, नवोडा, मृदुक्रोधा, मन्युभिरामा, चिंतामने आदि मुग्धा वर्णन, मध्या लक्षण और भेद वर्णन अलपाधिक लज्जा मध्या लज्जाधिका, समान लज्जा, न्यून लज्जा, उद्धत योवना मध्या, आरूढ़ जोवना, प्रादुर्भूत मनोभवा मध्या परिहास विसारदा मध्या, सुरत विचित्रा मध्या, मोहांतरित मध्यावर्णन, प्रौढ़ लक्षण और भेद, रति प्रीता, आनंद समोहिता, जौवनाधा, मदन मदमत्त, रतिकोविदा, आधरामित कांत, धृष्ट सुरत, उद्दामरति, अद्भुत विभ्रम, लब्धापति प्रौढा वर्णन पत्र ७९ से १०१ तक

५—पंचम प्रकरण—स्वाधीन पतिका लक्षण और भेद, उपासन्न, निरासन्न, परकीया, सोभा गर्विता, प्रेम गर्विता, स्वाधीन पतिका वर्णन, प्रोषित पति का लक्षण और भेद आगत पति का वर्णन, उत्कंठित लक्षण, वासक सज्जा लक्षण, अभिसंधिता लक्षण, अभिसारिका लक्षण, खंडिता लक्षण धीराधीरा आदि नायिका वर्णन, प्रौढा लक्षण और भेद, उत्तमा, मध्यमा, अधमा तथा अधमाधम लक्षण और उदाहरण, परज्ञा खंडिता, रति परज्ञा, प्रीति परज्ञा और अभिज्ञा

लक्षण, उदाहरण सिरसूना खंडिता, विप्रलब्धा तथा सबल संकर्षन वर्णन··· पत्र १०१ से ११६ तक

संख्या १०१ ग. नवीन ललाम, रचयिता—दसरथ, कागज—देशी, पत्र—११९, आकार—६½ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)- ६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२९४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७९२, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ कवित्त ॥

दरिद कदन गज वदन रदन यक सदन,
हदन बुधि साधन सुधाकेसर
धूम केतु धीर के धुरंधर धवल धाम,
हाम के सरन सरना मनौ निघन कर
लंबोदर हर हेमवनी हित तुंद भाल,
चंद कंद आनंद विबुध वंदनीय धर
सदा सुभ दायक सकल गुन लायक,
सु जै जै गननायक विघन हर ॥ १ ॥

॥ अथ नायक नायिका निरूप्यते । अनयोर्लक्षण ॥

होत जाहि अवलंबिकै जामन मदन विकार
कह्यो सु नायक नायका निज संबंध अधार ॥ २ ॥
पति उपपति पर भेद तें नायक द्विविधि वषानि ।
अनुकूल दक्ष सठ धृष्ट पुनि चारि भांति पति जानि ॥ १ ॥

+ + +

सत्रह सै अरुवानवे संवत कातिक मास ।
सुक्ल असित की सप्तमी पुस्तक लिखा प्रकास ॥ १ ॥
घासीराम सुजान मति रसिक हितोत्तम (? द्विजोत्तम) वंस ।
ताकेहित हरजू लिखी सुख सोभा मानस हंस ॥ २ ॥

+ + +

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु सदबंधु ।
तिन तन भो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु ॥४३८॥

तिन कुल पंचादरति कवि भौ 'दसरथ' इहिनाम।
काढ्यो निज बुधि सिंधु मथि एक नवीन ललाम ॥४३९॥

अंत—

॥ परकीया स्वाधीन प्रोषित पतिका यथा ॥

तिय पिय को इहि विरह मैं निरयौ रूप सोहागु।
औगुन गनै तौ विधि बनै स्वाहरि हींचन लागु ॥४३५॥

॥ स्वकीयोत्कंठित प्रोषित पतिका यथा ॥

पंचम पचाइके रचाइ रुचि और ही सौं,
हो ही के नचाई नांह मानगस रोकिलौ
मंद गंध वाहकै वहै न कौल वन के विहंग,
विहरैनकै मृनाल अवलोकि लौ
कर हरे किंसुक कसाई कौन मौरे न्यून कोउ,
आवै न विचार अवलोकि लौं
फूलत न एसो कौलनि ए गुलाब उहि ओर
भौर कैन ऐसे कौलनि एपोज खोई कोकिलौ ॥४३६॥

॥ अथ स्वाधीन पतिका पंढि (ते) भयो संकरो यथा ॥

सुंदरि एकहि सेज द्वै सोइ रही पटुतानि।
चनक मूद चंचक कहैर एक जगाई आनि ॥४३७॥

इति श्री दसरथ विरचिते नवीनाख्ये अष्टनाइक प्रकरन परिच्छेद।

विषय—नायिकाभेद वर्णन।

संख्या १०१ घ. नवीनाख्य (नवीन), रचयिता—दशरथ राइ, कागज—देशी, —३८, आकार—९३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११४९], रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६९ = सन् १८१२ ई०, प्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

दारिद कंदन गज वंदन रदन एक संदन हदन बुद्धि साधन सुधा केसर।
धूँमकेतु धीर के धुरंधर धवल धाम हाम के सरन सरनाम नव निधिन कर।
लंबोदर हर है मवंती हितनंद भालचंद कंद आनंद विबुध वंदनीयवर।

सदाँ सुभदायक सकल गुन लायक सु जै जै,
गन नायक विनायक विघन हर ॥ १ ॥

॥ अथ नायक नायका निरूप्यते ॥

॥ दोहा ॥

होत जाहि अवलंबि कै जा मन मदन विकार ।
कहौ सुनायक नायका निज संबंध अधार ॥ २ ॥
पति उपपति परभेद तें नायक दुविधि बखानि ।
अनुकूल दछ सठ धृष्ट पुनि चारि भाँति पति वानि ॥ ३ ॥

अंत—

॥ स्वाधीन पति का पंडिता संकरीजथा ॥
सुंदरि एकहि सेज ह्वै सोइ रही पटूतानि ।
चनक मूद पंचक हरैं एक जगाइ आनि ॥४४१॥

इति श्री दसरथराइ विरंचिते नवीनाख्ये अष्ट नाएका प्रकरन परिछेदह

अथ कवि वंस वरनन

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु दस बंधु । (? सदबंधु) ।
तिन तन भो चत्रुभुज दियो जिहि दीलीस्वर बंधु ॥४४२॥
तिनकुल पंचादरित कवि भो दसरथ एहि नाम ।
काढ्यौ निज बूधी सिंधुमथिए नवीन ललाम ॥४४३॥

संवत् १८६९ शमै नाम स्रावन सुदी १० वार सोमार ॥

विषय—

नायक और नायिका भेद वर्णन । ग्रंथ परिच्छेदों में लिखा गया है जो इस प्रकार है:—

१—नायक प्रकरण परिच्छेद	पत्र १ से ४ तक
२—स्वकीया प्रकरण	,, ४ से ५ ,,
३—परकीया प्रकरण	,, ५ से २५ ,,
४—स्वकीया सवल संजोग मुग्धादि	,, २५ से ३१ ,,
५—अष्ट नायिका प्रकरण परिच्छेद	,, ३१ से ३८ ,,

संख्या १०२ क. दामोदर स्वामी के पद, रचयिता—दामोदर, कागज—बांसी, पत्र—१६, आकार—७×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्) – ११०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

पद दामोदर स्वामी जी के लिख्यते।
हरि के दास सबतें बड़े।
नाम धन करि भरे पूरे ओर सब गड़े।
दुपित के उपगार को इहि हेत जग मे मंडे।
विपति संपति मांहि सुमिरत आनि होत अड़े।
नद नंदन रूप में चित्त संतत गड़े।
दामोदर हित स्याम जू के सदा अलिक लड़े॥ १॥
हरि के दास सबन ते परे।
और सेपी गौर शाली फिरति के सिगरे।
भक्ति श्री भागौत संमत तिहि टकसार घरे।
गुर वचन वर घन उजागर नाम सिक्का परे।
भवन चौदह मद्धि आदर चारि जुग नहिं टरे।
दामोदर हित नंद नंदन चरन को चरन सभरे॥ २॥

अंत—

हेली ये डफ बाजैं छैला के मन मोहन रसिया नागर के वा
जुलमी ओगुन गरिके सुनि सुनि जीव अति अकुलाई दई॥
आवत उमगति यौ निध ज्यौं अब कापै री क्यौं जाइय
इत गुरु जन की लाज दहत है घरि न सकति देहरी पाइ।
'दया सखी' अब ही इसु होवो मिलो घन स्यामइ धाई।

विषय—

वृंदावन की होली के अवसर पर राधाकृष्ण की केलि क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है।

संख्या १०२ ख. श्री राधाकृष्ण वर्णन, रचयिता—दामोदर दास हित (स्थान, वृंदावन), कागज—देशी, पत्र ३, आकार ४'३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ दोहा ॥

लगी लीक दग पीक तुम काजर ओंठन दीन।
मानुल लीने भली विधि प्रीतम को वस कीन॥ १॥

सवैया

कैसी लगी दग पीकन लीक है काजर श्रोठन में तुम दीनौ।
मानक लाली लगी उर में कल मोतिन की लट टूट नवीनौ।
वैनी के कोदन सों अरूझी पहुँची पिय की लष चित्र प्रवीनो।
जागो अली निसि बीती भली वृष भानु लली पिय को वस कीनो॥ २॥

सोरठा

प्रिया हँसी सुष मोर सारो शुक के वचन सुनि।
विहसे नवल किशोर सपियन के आनंद भयो॥ ३॥

अंत —

देष री देष राधा रूप।

सकल जुवतिन मध्य सजनी एक परम अनूप।
चारू कवरी मांग मंजुल नील पट फवि रह्यौ।
तिलक झलकत सुभग मांथे जास नहिं सुष कह्यौ।
कनक वुटला वने सुंदर कांति दमक कपोल।
वंक भृकुटी चारू चितवन वड़े नैन सलोल।
सुभग नासा बेसरी जुत अधर सुंदर महा।
वचन मोहन दसन सोहन चिवुक दुति कहु कहा।
ग्रीव सोभा अतिहि माई पोंति पुंजा चारू।
पुभि रही गुर नील कंचुकी माल मुक्त सुढार।
बाहु नाहुस अंस मंढित कोक पंढित बाल।
वने कंकन कर मनोहर निरषि रीझे लाल।
उदर श्याम सुदेश रेषा नाभि त्रिवली भली।
लंक सूक्षम किंकनी जुत जंघ सुंदर अली।
कनक नूपुर चरन राजै मंद मधुरी चाल।
सदा सेवहु हित दमोदर लाल प्यारी बाल।

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ में राधा और कृष्ण का संक्षेप में वर्णन है। घर में पले हुए तोता और मैना ने दम्पति की सुरति लीला की चर्चा करते हुए सपियों को जगाया। जागने पर सपियों ने राधा और कृष्ण की छवि का मुग्ध होकर वर्णन किया।

संख्या १०२ ग. हरिनाम महिमा, रचयिता—दामोदरदास हित (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—४'५ × ५'७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण—

(अनुष्टुप्)—६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८३४ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्री हरिनाम महिमा लिष्यते ॥

॥ चौपाई ॥

नमो नमो गुरू परम अनूप बुद्धि,
प्रकासिक सब सुष रूप ॥
सदा प्रसंन नयन अभिराम,
विकसित कमल वदन सुप धाम ॥
ऐसे गुरू कौं उर मैं आनैं,
तब हरि नाम प्रतापहिं जानैं ॥
हरि कौ नाम निगम कौ सार,
हरि नाम संतनि कौ आधार ॥
हरि नाम सत धर्मनि मैं राजै,
हरि नाम लेत सबै दुप भाजै ॥

अंत—

महिमा श्री हरिनाम की सागर ते गंभीर।
कही गई मोपै इती जितौ गहै पग नीर।
प्रीति सदा हरिनाम सों हरि भक्तनि मैं वास ॥
दामोदर हित दास कैं यह मन मैं है आस ॥ १२० ॥

इति श्री हरिनाम प्रताप लीला संपूर्ण ॥ संवत् १८३४ मिती सावन वदी ८ अँतवार लिपितं श्री वृंदावन मध्ये ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ 'हरिनाम महिमा' में भगवान की महिमा का वर्णन है।

संख्या १०३ क. रसिक संजीवनी, रचयिता—दिनेश पाठक, कागज—देशी, पत्र—१३३, आकार—६.६ × ५ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥

जै श्री कमलनयन गोपीजन वल्लभ ॥

॥ छप्पै ॥

उदित इंदु दुति मध्य सुभग सिंदूर सूर सम।

सवैया

कैसी लगी दृग पीकन लीक है काजर ओठन में तुम दीनो ।
मानक लाली लगी उर में कल मोतिन की लट टूट नवीनो ।
बैनी के कोदन सों अरूझी पहुँची पिय की लप चित्र प्रवीनो ।
जागो अली निसि बीती भली वृप भानु लली पिय को वस कीनो ।। २ ।।

सोरठा

प्रिया हँसी मुष मोर सारो शुक के वचन सुनि ।
विहसे नवल किशोर सपियन के आनंद भयो ।। ३ ।।

अंत —

देष री देष राधा रूप ।

सकल जुवतिन मध्य सजनी एक परम अनूप ।
चारू कवरी मांग मंजुल नील पट फबि रह्यौ ।
तिलक झलकत सुभग मांथे जात नहिं सुप कह्यौ ।
कनक पुटला बने सुंदर कांति दमक कपोल ।
वंक भृकुटी चारु चितवन बड़े नैन सलोल ।
सुभग नासा बेसरी जुत अधर सुंदर महा ।
वचन मोहन दसन सोहन चिबुक दुति कहु कहा ।
ग्रीव सोभा अतिहि माई पोंति पुंजा चारू ।
घुभि रही गुर नील कंचुकी माल मुक्त सुढार ।
बाहु नाहुस अंस मंडित कोक पंडित बाल ।
बने कंकन कर मनोहर निरपि रीझे लाल ।
उदर श्याम सुदेश रेपा नाभि त्रिवली भली ।
लंक सूक्षम किंकनी जुत जंघ सुंदर अली ।
कनक नूपुर चरन राजै मंद मधुरी चाल ।
सदा सेवहु हित दमोदर लाल प्यारी बाल ।

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ में राधा और कृष्ण का संक्षेप में वर्णन है । घर में पले हुए तोता और मैना ने दम्पति की सुरति लीला की चर्चा करते हुए सपियों को जगाया । जागने पर सखियों ने राधा और कृष्ण की छवि का मुग्ध होकर वर्णन किया ।

संख्या १०२ ग. हरिनाम महिमा, रचयिता—दामोदरदास हित (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—४.५ × ५.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण—

(अनुष्टुप्)—६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८३४ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्री हरिनाम महिमा लिष्यते ॥

॥ चौपाई ॥

नमो नमो गुरू परम अनूप बुद्धि,
प्रकासिक सब सुप रूप ॥
सदा प्रसंन नयन अभिराम,
विकसित कमल वदन सुप धाम ॥
ऐसे गुरू कौं उर में आनें,
तब हरि नाम प्रतापहिं जानें ॥
हरि कौ नाम निगम कौ सार,
हरि नाम संतनि कौ आधार ॥
हरि नाम सत धर्मनि में राजै,
हरि नाम लेत सबै दुप भाजै ॥

अंत—

महिमा श्री हरिनाम की सागर ते गंभीर।
कही गई मोपै इती जितौ गहै पग नीर।
प्रीति सदा हरिनाम सौं हरि भक्तनि में वास ॥
दामोदर हित दास कें यह मन में है आस ॥ १२० ॥

इति श्री हरिनाम प्रताप लीला संपूर्ण ॥ संवत् १८३४ मिती सावन वदी ८ अंतवार लिपितं श्री वृंदावन मध्ये ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ 'हरिनाम महिमा' में भगवान की महिमा का वर्णन है।

संख्या १०३ क. रसिक संजीवनी, रचयिता—दिनेश पाठक, कागज—देशी, पत्र—१३३, आकार—६'६ × ५ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥

जै श्री कमलनयन गोपीजन वल्लभ ॥

॥ छप्पै ॥

उदित इंदु दुति मध्य सुभग सिंदूर सूर सम।

श्रवत लोल मधु कल कपोल उदंड सुंडवर ॥
इक दसन दिश वसन गवरि आनंद कंद कर ॥

+ + +

नव निद्धि सिद्धि दायक सुमति महा मुदित मंगल करन।
दिज्जै 'दिनेश' मागत सुमति जै गणेश संकट हरन ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुन गान।
भई रसिक संजीवनी हरि भगतन की प्रान ॥ २० ॥
दामोदर सुर विप्रवर मगपुर पट्टन वास।
कवि भाषत 'कंठा भरन' हों भाषत हरिदास ॥ २१ ॥

इति''रसिक संजीवन्यां दिनेश पाठक कृता''''''

विषय—प्रस्तुत 'रसिक संजीवनी' रस विषयक ग्रंथ है। इसमें निम्नलिखित १६ प्रकरण हैं :—

१—(पत्र खंडित हैं)
२—नायक वर्णन।
३—मुग्धा वर्णन
४—मध्या वर्णन
५—प्रौढ़ा
६—चतुर्विध दर्शन
७—प्रथम स्थान कथन
८—मान लक्षण
९—अष्ट नायिका
१०—पूर्वानुराग
११—मान मोचन
१२—विप्रलंभ शृंगार
१३—सखी जन
१४—सखीजन कथन
१५—अष्टरस वर्णन
१६—विरस और निरस रस वर्णन।

अंतिम दोहे से रचयिता का दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है :—

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुनगान।
भई 'रसिक संजीवनी' हरि भगतन की प्रान ॥

अतः 'रसिक संजीवनी' रीति ग्रंथ होते हुए भी भक्ति विषयक रचना है। यद्यपि यह मत सर्वग्राह्य नहीं हो सकता। लक्षणों के उदाहरणों में राधा कृष्ण की प्रेम लीलाओं का वर्णन है। शृंगार रस का विशद और विस्तारपूर्वक वर्णन है। शेष रसों का समावेश केवल नाम के लिए ही हुआ है। ग्रंथ की भाषा व्रज है।

संख्या १०३ ख. रसिक संजीवनी, रचयिता—दिनेश पाठक, कागज—देशी, पत्र—६३, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६६९,

पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२४ वि०, लिपिकाल—सं० १७६४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, 'रत्नाकर संग्रह', काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ जय श्री कमल नयन गोपी जन वल्लभाय ॥

छप्पै

उदित इंदु दुति मध्य सुभग सिंदूर सूर सम,
रहत गंड मंडल अनेक गुंजरत मधुप तम।
श्रवत लोल मधु कल कपोल उद्दंड सुंडवर,
इक दसन दिग वसन गवरि आनंद कंदवर।
नव निद्धि सिद्धि दायक सुमति महा मुदित मंगल करन,
दिज्जै दिनेस मागत सुमति जै गनेस संकट हरन॥ १॥

\+ + +

सुर सरिता औसोन के मध्य महावन जानि,
तजि निज देस जै नए रहे सिंव समआनि।
सिद्धाश्रम के तीर तें जोजन जहाँ प्रमान,
नगर भोजपुर है तहाँ कलि कैलास समान।
वरन चारि आश्रम रहैं सदा सुखी जेहि देस,
पढ़त पढ़ावत वेद अरु विद्या विविध दिनेस।
तहाँ कन्यो करतार नृप रामसाहि सिरमौर,
जाको जस या जगत मै जगमगात प्रतिठौर।
भयो वहुरि सुत ताहि के नृपति साहि संग्राम,
महा सुभट सुंदर सुधी ज्यों दशरथ गृहराम।
पुनि ताके गृह अवतर्यो उग्रसेन नृप होय,
सुन्यो प्रथम प्रथु श्रवन अव औरन ऐसे कोय।
उग्रसेन नृप के भये होलराय वलवंड,
तेज पुंज करि वार वर जिन्ह जीत्यो नव षंड।
होलराय नृप के भए महा सुमति सुत तीनि,
बड़े नरायण मल्ल जग जिन्ह मार्यो आरवीनि।
ताको अनुज प्रताप पुनि कीर्तिसिंह सुजान,
जाकी कीरति जगत मैं कविकुल करत वषान।
नृपति नरायन मल्ल के होतन सूर समान,
जिन्ह मोर्यौ सुभ समर मैं सेरषान को मान।

भये पुत्र पुनि ताहि के द्वे दिनेस महि माहि,
जिन्ह देषत देषत जगत चंद सूर लजि जांहि ।
भये न ह्वै है जगत में अमर साहि समपीर,
प्रबलसिंह जाके अनुज महा रसिक रणधीर ।
कियो अमर जस समर करि प्रतिसाहिन के संग,
जिन जीती वहु अरिन की चमू चारु चमुरंग ॥ ११ ॥

दान सील सनमान करि सरि 'दिनेस' कोउ नाहि;
प्रबल सिंह करता कह्यो कल्प वृक्ष जगजान ।
कह्यो "रसिक संजीवनी" पुस्तक परम सुदेस,
हरि जस नवरस में सबै कीजे सुकवि 'दिनेस' ।
द्वितिया शुक्ल आषाढ़ की पुष्य नषत गुरूवार,
सत्रह[१७] से चौवीस[२४] में करी प्रगट करतार ॥ १९ ॥

अंत—

॥ अथ श्री लाल जू को नीरस रस वर्णनं ॥

॥ कवित्वं ॥

गोपन के सुतए सुजावै समगोपन की,
यातें लषि लाजन अकाज ऐसे कीजिऐ ।
तुम सों है प्रीति उर उनसों कुल की रीति,
लोक में अलोक तातें कैसे कै पतीजिऐ ॥
हरि तुम सरिवौर दूसरो 'दिनेश' को है,
प्रीति फंद परियै अधर सुधा पीजिऐ ॥
कांपे लेत पाए होत सामुहे सफाए मन,
सषिन्हि सों सकुच सषानि साथ लीजिऐ ॥ १९ ॥

॥ दोहा ॥

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुन गान ।
भई 'रसिक संजीवनी' हरि भगतन की प्रान ॥ २० ॥

दामोदर सुत विप्रवर मगपुर पट्टन वास ।
कवि भाषत 'कंठाभरण' हौं भाषत हरिदास ॥ २१ ॥

इति श्री नवरस रंजितायां रसिक संजीवन्यां दिनेश पाठक कृतायां मिश्रित रस वर्णनो नाम षोडश प्रकरणं समाप्तं ॥ १६ ॥ शुभमस्तु ॥ संवत् १७६४ फाल्गुन कृष्ण चतुर्थ्यां समाप्तमिदं श्री रामनाथ शर्मणा हिलेनालेखि ॥ शुभं भूयात् ।

विषय—

प्रस्तुत 'रसिक संजीवनी' रस विषयक ग्रंथ है। इसमें निम्नलिखित १६ प्रकरण (अध्याय) हैं:—

संख्या १०४. अलंकार दीपक, रचयिता—दिलेराम (स्थान-तरसोपरि), कागज—देशी, पत्र, ८१, आकार ८'५×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ सवैया ।

मोहनी मूरत्ति स्याम सरोज से गात की सोभा न जाति बषानी ।
सुंदरता को समूह लखे विधि की बुधि विभ्रम ही में भुलानी ।
जाहि लखे नर किन्नर देव अदेव की बामा सकामा बिकानी ।
सो नद नंद अनंद को कंद हरे- दुख दंद करे सुष पानी ॥ १ ॥
शिव रूप शिव के करन शिव प्रसाद पद धाइ ।
अलंकार दीपक करयो भाषा मैं सुख पाई ॥ २ ॥
व्यंगादिक ते भिन्न जह चमत्कार सरसाइ ।
अलंकार तासो कहे जे प्रवीन कवि राय ॥ ३ ॥

विषय कहत उपमेय को विषयी है उपमानु।
से सो सम पद आदि दे उपमा वाचक जानु ॥ ४ ॥
वर्णनीय को कहत है जह उपमान समानु।
साधारण धर्मादि ते पूरन उपमा जानु ॥ ५ ॥

॥ यथा ॥

ईश शीस सुर सरित सी सोभित भई विशाल।
पहिरत उरज उतंग पर मुकताहल की माल ॥

शंभु शीस गंगा उपमान ॥ उरज उतंग मुक्ताहल की माल उपमेय ॥ सोभित पद धर्म। सो उपमा वाचक ॥ इन चारयो के ग्रहण ते पूर्णोपमा ॥

अंत—

बाण[५] वेद[४] धृति[१८] शक भए श्री विक्रम भूपाल।
अलंकार दीपक रच्यो जनमाठे नदलाल (जन्माअष्टमी) ॥

या पुर श्री मधुसूदन जू तरसोपी ग्राम के पाढे वपाने। श्री मधुसूदन ही की कृपा ते रहे सुष संपति में अति साने। तीन भए तिनके सुत सिद्ध प्रसिद्ध भए घनस्याम सुजाने। जै चंद और भए जिनको जस अति उज्जल हरिचंद समाने ॥

ता कुल में घन स्याम सुत दिले राम कविराय।
अलंकार दीपक रच्यो भाषा में सुष पाइ ॥

इति श्री दिलेराम पांडे कृत अलंकार दीपक संपूर्ण ग्रंथ संख्या २३१० ॥ श्री कृष्णचंद्रा विजयते ॥

विषय—

'अलंकार दीपक' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें अलंकार विषय का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया है।

संख्या १०५ क. कवित्त, रचयिता—दुखहरन, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी। दाता—श्री सरल चौबे, और रामनिरेखन चौबे, स्थान और पो०—सहतवार, जि०—बलिया (उत्तर प्रदेश)

आदि—

कवीत्य

भग्र सुदामा को दालीद्र मेटी कीयो झोपरीउ जे हेम अटारी।
पंडोव को जीन्हीं भीपी मंगाइ के राज दीयो कवरो दल मारी।

राषी लीयो द्रोपती को शभा मो लागी अमारी चढ़ी अती शारी ।
जन दुपहरन को वीनती हंशा घर फेरि वशावो विहारी ॥ १ ॥
आदी निरंजण हच दुप भंजण दालीद्र गंजन शंत शहाइ ।
नाथ अनाथ के शाथ रहो प्रभु दीन्ह को तुम बाप वो माइ ।
नीरधन को धन भगतन को जन गोपीन्ह को मनशा शुषदाई ।
जन दुपहरण करै विनती हंशा घर फेरी वशावो कधाई ॥ २ ॥

अंत—

राम जहा विशराम तहाँ हरी नाम को लेत मेटे अघ ज्वाला ।
दालीद्र कोटि बीलाइ तुरंत ही जोपै कहै मुष राम कृपाला ।
हे हरी हे, हरी हे हरी हो प्रभु हाली हरो तुम दुप जंजाला ।
जन दुप हरन करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो दे आला ॥ १० ॥
हे मछ राम मह्वा मन शादीक हे कछ राम अछे अभी रासी ।
हे वराह मही के उधारण हे नरशीघ जी अंतर जामी ।
बावन हो प्रशराम अहो राम क्रीशुन वउध नयो शरनामी ।
जन दुप हरण करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो होशासी ॥ ११ ॥
दाश को आश जो वेगी पुरावहु शाधु जो आपही पावही टुका ।
राम को भक्ती करो नीशु वाशर माफ करो जन को शव चुका ।
जो कोई द्रोह करे हमशो अव ताही परे मुष मे मल थुका ।
जण दुपहरण करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो सलुका ॥ १२ ॥
सीताराम जीव दशहाए श्री राम जी शरन ॥ १ ॥

विषय—
जीव की मुक्ति के लिये भगवान से प्रार्थना की गई है ।

संख्या १०५ ख, भक्तमाल, रचयिता—दुखहरन (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—१५३, आकार—११×८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२७८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवबचन उपाध्याय, स्थान—सिकंदरपुर, जिला—बलिया

आदि—

× × ×
राम नाम कबहु जनि लेहु । असपर कृत्य छोड़ि तुम देहु ॥
जो कतहु राजा सुनि पाइहै । ना जानो दहु काह कराईहै ॥
मोर कहल सुनि पढ़ु सीउ । जो तुम चाहै आपन जीउ ॥
नातरु नाही दोस हमारा । तुहु जानहु अव राम तुम्हारा ॥
एह भातिन्ह गुरुदेव बुझाएउ । पै प्रहलाद के मन नहि आएउ ॥

दोहा

रामनाम ल्यौ लागि निशुदिन आठो जाम।
अवरो पढिआ जो रहे शभै पढावै राम॥

अंत—

श्री चेतनदास चरित्र

चेतन भगत भए एक ग्यानी। महा परमु पद पाए न बानी॥
कठवा हत तीन कर असथाना। देश वोढेशा के दोरशठवाना॥
भागीरथी नदी वहै जहाँ। दछीन दीस तठ पूरव तहाँ॥
चेतनीया प्रभुही तंह भैए। भए भगत मांह भगत एक भैए॥
नुतन पद हरी को रस एएव। भगत वोढेशा दीढारण्ण॥
जव तहँ भएउ वउध अवतारा। दरशन के धाएव संसारा॥
वोढेशा मह आए जो कोई। जर के देश नीवाहन होई॥

चेतनामा प्रभु जो परमोधी नशोदेश।
लागै भगत करै शभै नीचहै लागै भेश॥
गावही पद चेतन के लोगा।
करही भगत मानही सुप भोगा॥
वोढेशा देश महत जो कोई।
शभै धैशनो भए सीप होई॥
घर घर सुष मानही गुन गावही।
भरम पंथ से चीत न डोलावही॥

\+ \+ \+

चेतन औ भीतवानंद ऐ मही गए न होइ।
और सो शभ जन भाए रहै जहा लगी सोइ॥

—अपूर्ण

विषय—भक्तों का वर्णन किया गया है।

संख्या १०५ ग. पुहुपावती, रचयिता—दुखहरन (स्थान—गाधीपुर संभवतः गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१७२, आकार—८¼ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७५७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, रचनाकाल—सं० १७२६ = सन् १६६९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६७ = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ श्री रामजी सहाय ॥ श्री गनेसजी सहाय ॥ श्रीगोपाल जी सहाय ॥

श्री पोथी पुहुपावती ।

प्रथम ही सुमीरौ राम क नाउ ।

अलष रूप व्यापीक सब ठाउ ॥

घट घट माह रहा मीली सोइ ।

अस चोह जोतीन देषै कोई ॥

ससी सूरज दीपक गनतारा ।

इन्ह की जोति जगत उजिआरा ।

गत जोती देषी पहिचानी ।

वह सो जोती जग रहै छपानी ॥

ना कोइ देषै न काहु देषावै ।

जा पर दआ करै सोइ पावै ॥

अस गोसाइ बड सीरजनिहारा ।

तस न कोउ दुसर वरीआरा ॥

जो कछु कीन्ह सो आपु ही कीन्हा ।

नीगुन आ सबही गुन दीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

नीसु दीन वंदौ रामपद तुअ अनादी करतार ।

माली आदि तुही भवर फुलवारी संसार ॥

× × ×

तुही नीर से पिंड सवारा ।

तुही प्रान देइ सभ औतारा ॥

तुही सकल जीवन उपराजी ।

तुही दिन्ह वहु दुष सुष साजी ॥

तुही कीन्ह नर नारी सरूपा ।

तुही कीन्ह परजा कोइ भूपा ॥

तुही मआ मंद मोह उपावा ।

तुही काम औ क्रोध बनावा ॥

× × +

श्री गुरदेवजी की असतुती

नाउ मलूकदास गुर केरा ।

जीन्ह की सरन भए हम चेरा ॥

(ज) ग कर जोग करै सेवकाइ ।

देषत दरस पाप सभ जाइ ॥

उपजै सन मनसा कै आवै।
सो तुरंत मनसा सो पावै॥
तिन्हके स्रवन सब्द उन्ह दीआ।
उपजा ग्यान विमल भा हीआ॥

इह संसार असार के जाना। राम नाम सुमिरन मन माहा॥
भए सीध हरी दरसन पावा। आवा गमन क सोच मेटावा॥
...सो साधु भए हरी भगता। करही भगती सो तारही जगता॥

जस कबीर जस गोरष जस नानीक जस व्यास।
तस कलीमल जग हरन के प्रगटे मलुका दास॥

जाकी मोटरी ठाकुर ढोवा। काटा करम सकल दुष खोवा॥
दरस देपाइ लीयो अपनाइ। आपु गए तन माह समाइ॥
नैनन्ह मह होइ हीअ मह आए। जैसे भ्रीरंगी भीरंग बनाए॥
चीन्हा ब्रह्म कंवल कह सोधा। घरही बैठे जग परमोधा॥
महु भयो तीन्ह कर सीप जाइ। नाम देइ सब आस पुजाई॥
घटही मह सो पंथ लषावा। आपु ही पोइ कै आपुही पावा॥
सो बुझा जो कहा न जाइ। बुझा सो जहा रहे समाइ॥
भुगुती मुकुती प्रापती भइ उपजा होए सो ग्यान।
ध्यान लगो भगवान सो पावो पद नीवान॥

श्री पातसाह की अस्तुती

दीली साह सराहो काहा। नौरंगजेब पै रवी माहा॥
नो पंड मह फिरी दोहाइ। रवीहुते तेज तपै अधीकाई॥
सातो दीप के जो सुलताना। परग त्यागि सेवा तिन माना॥
औ जीत वडे भुप वरीआरा। नीसु दीन ठाढे कर ही बीचारा॥
नौपंड सात दीप मही माही। अरी वैरी कोउ रहा सो नाही॥
ऐसी अदल सरवत्र चलाइ। कोउ न काहु से करे वरीआई॥
औ जित देस के परजा दुपी। देइ देइ दान कीन्ह सब सुपी॥
गरवीही गरद मेरावे देइ भीपारी ही राज।
दानी ग्यानी सुरीवा साह गरीब नेवाज॥

जब कहो होइ चले असवारा। सेस कलमले कटक के मारा॥
है पुर थारन्ह धुरी उडाइ। दिनही दुपहरही सुरज छपाइ॥
अगीनीत कटक असूझ अपारा। गनत न आवही तुरै तुपारा॥
हाथी ऊंट की कौन चलावै। जो मागे सो मागे पावै॥
सहन भंडार न लेपे माही। दान देत नीती पागे नाही॥

धरम कथा नीके पहिचाना । निती उठी पढही कीताब पुराना ॥
सो वीधी सो वीधी ऐसनवाजा । एक छत्र चहु षंड वीराजा ॥

नौरंगजेब के पटतर और न दुजा कोइ ।
सीकंदर नौसेरवा सोउ न पटतर होइ ॥

कहै के उन्ह कीन्हा सुलतानी । इन्ह सो बंदगी नीसु दीन ठानी ॥
परगट करही राज सुष भोगु । गुपुत सो तपकर साधही जोगु ॥
लिषी कीताब पुनी वेची मंगावा । ताकर मोल दाम जो पावा ॥
ताकर लीन्ह मोल पुनी गाऊ । जव अनाज उपजे तेहि ठाऊ ॥
वाके रोटी साग से षाही । और स्वाद रस चाहै नाही ॥
भागी जरकसी औ वहुरंगा । वसन सेव सभ पहीरही अंगा ॥
चंद्रवदनी म्रीग लोचनी नारी । तीन्है तजी नाम जपही नीसुसारी ॥

एक मास रोजा रहही निति उठी करही नीमाज ।
गुप्त सो करही फकीरी परगट करही सो राज ॥

श्री गाधीपुर की अस्तुती

वसै गाधीपुर नगर सोहावा । घर घर कंचन चार वंधावा ॥
वसगीत नगर कही नही जाइ । जनु सुरपुर कवीलास सोहाइ ॥
गढ़ उतंग जस उच पहारा । नीरषत द्रीस्टी न जाइ नीहारा ॥
तेही के हेठ वहै तहा गंगा । निसु वासर तहा उठे तरंगा ॥
तहा जाइ जो करै असनाना । ताकर जन्म क पाप वीलाना ॥
नगर लोग भगत सभ ग्यानी । साधु औ पंडीत चतुर वीनानी ॥
मन वच क्रम करही हरी पूजा । चीत मह और न आनही दूजा ॥

\+ \+ \+

चारी वरन हीदु तेही देसा । अपने घर घर सभै नरेसा ॥
वीप्र पठहि सास्तर औ वेदु । वीद्याकर जानहि भल भेदु ॥
पुन्य धरम षटक्रम सो जाना । सुमीरही रामही पढही पुराना ॥
छत्री मह वीर वरी आरा । नीसुदीन गहे रहही हथियारा ॥
वैस धनीकं औ पर उपकारी । सत धरम तीन्ह वनीज पसारी ॥
सुद्र वरन सो सभ सुखवासी । ठाट ठाट सुर पुरा कलासी ॥

\+ \+ \+

मुसलमान पुनी वसही सुजाना । सइअद सेष औ मोगल पठाना ॥
फाजील उलमा ग्यानी महा । तीन्ह के असतुती जाइ न कहा ॥

× × ×

उपजै सन मनसा कै आवै ।
सो तुरंत मनसा सो पावै ॥
तिन्हके स्रवन सब्द उन्ह दीआ ।
उपजा ग्यान विमल भा हीआ ॥

इह संसार असार के जाना । राम नाम सुमिरन मन माहा ॥
भए सीध हरी दरसन पावा । आवा गमन क सोच मेटावा ॥
···सो साधु भए हरी भगता । करही भगती सो तारही जगता ॥

जस कवीर जस गोरप जस नानीक जस व्यास ।
तस कलीमल जग हरन के प्रगटे मलुका दास ॥

जाकी मोटरी ठाकुर ढोवा । काटा करम सकल दुप खोवा ॥
दरस देपाइ लीयो अपनाइ । आपु गए तन माह समाइ ॥
नैनन्ह मह होइ हीअ मह आए । जैसे भीरंगी भीरंग बनाए ॥
चीन्हा ब्रह्म कंवल कह सोधा । घरही बैठे जग परमोधा ॥
महु भयो तीन्ह कर सीप जाइ । नाम देइ सब आस पुजाई ॥
घटही मह सो पंथ लपावा । आपु ही पोइ कै आपुही पावा ॥
सो बुझा जो कहा न जाइ । सुभा सो जहा रहे समाइ ॥
भुगुती मुकुती प्रापती भइ उपजा होए सो ग्यान ।
ध्यान लगो भगवान सो पावो पद नीवान ॥

श्री पातसाह की अस्तुती

दीली साह सराहौ काहा । नौरंगजेव पै रवी माहा ॥
नो पंड मह फिरी दोहाइ । रवीहुते तेज तपै अधीकाई ॥
सातो दीप के जो सुलताना । परग त्यागि सेवा तिन माना ॥
औं जीत वडे भुप वरीआरा । नीसु दीन ठाढे कर ही वीचारा ॥
नौपंड सात दीप मही माही । अरी वैरी कोउ रहा सो नाही ॥
ऐसी अदल सरवत्र चलाइ । कोउ न काहु से करे वरीआई ॥
औ जित देस के परजा दुपी । देइ देइ दान कीन्ह सब सुपी ॥
गरवीही गरद मेरावे देइ भीपारी ही राज ।
दानी ग्यानी सुरीवा साह गरीव नेवाज ॥

जव कहो होइ चले असवारा । सेस कलमलै कटक के मारा ॥
है पुर थारन्ह धुरी उड़ाइ । दिनही दुपहरही सुरज छपाइ ॥
अगीनीत कटक असुझ अपारा । गनत न आवही तुरै तुपारा ॥
हाथी ऊंट की कौन चलावै । जो मागे सो मागे पावै ॥
सहन भंडार न लेपे माही । दान देत नीती पागे नाही ॥

धरम कथा नीके पहिचाना । निती उठी पढही कीताब पुराना ॥
सो वीधी सो वीधी ऐसनवाजा । एक छत्र चहु षंड वीराजा ॥

नौरंगजेब के पटतर और न दुजा कोइ ।
सीकंदर नौसेरवा सोउ न पटतर होइ ॥

कहै के उन्ह कीन्हा सुलतानी । इन्ह सो वंदगी नीसु दीन ठानी ॥
परगट करही राज सुष भोगु । गुपुत सो तपकर साधही जोगु ॥
लिषी कीताब पुनी वेची मंगावा । ताकर मोल दाम जो पावा ॥
ताकर लीन्ह मोल पुनी गाऊ । जव अनाज उपजे तेहि ठाऊ ॥
वाके रोटी साग से षाही । और स्वाद रस चाहै नाही ॥
भागी जरकसी औ बहुरंगा । वसन सेव सभ पहीरही अंगा ॥
चंद्रवदनी म्रीग लोचनी नारी । तीन्है तजी नाम जपही नीसुसारी ॥

एक मास रोजा रहही निति उठी करही नीमाज ।
गुप्त सो करही फकीरी परगट करही सो राज ॥

श्री गाधीपुर की अस्तुती

वसै गाधीपुर नगर सोहावा । घर घर कंचन चार वंधावा ॥
वसगीत नगर कही नही जाइ । जनु सुरपुर कवीलास सोहाइ ॥
गढ उतंग जस उच पहारा । नीरपत द्रीस्टी न जाइ नीहारा ॥
तेही के हेठ वहै तहा गंगा । निसु वासर तहा उठे तरंगा ॥
तहा जाइ जो करै असनाना । ताकर जन्म क पाप वीलाना ॥
नगर लोग भगत सभ ग्यानी । साधु औ पंडीत चतुर वीनानी ॥
मन वच क्रम करही हरी पूजा । चीत मह और न आनही दूजा ॥

\+ + +

चारी वरन हीदु तेही देसा । अपने घर घर सभे नरेसा ॥
वीप्र पठहि सास्तर औ वेदु । वीधाकर जानहि भल भेदु ॥
पुन्य धरम षटक्रम सो जाना । सुमीरही रामही पढही पुराना ॥
छत्री मह वीर वरी आरा । नीसुदीन गहे रहही हथिआरा ॥
वैस धनीक औ पर उपकारी । सत धरम तीन्ह वनीज पसारी ॥
सुद्र वरन सो सभ सुखवासी । ठाउ ठाउ सुर पुरा कलासी ॥

\+ + +

मुसलमान पुनी वसही सुजाना । सइअद सेष औ मोगल पठाना ॥
फाजील उलमा ग्यानी महा । तीन्ह के असतुती जाइ न कहा ॥

× × ×

दुपहरन कापुथ तेही गाऊ । वाटम दास पिता कर नाऊ ॥
तीन्ह के वंस महीसुत जामा । जेही के मन मानो हरी नामा ॥
अलपवैस वीधीवुधी मोही दीन्हा । नुतन कथा प्रेम की कीन्हा ॥
तीनी मीत्र हम कइ भा लाहा । जोरी मीताइ अंत नीवाहा ॥
'प्रेमराज' अती सुंदर कला । पढंत लीपंत नौ सील भला ॥
'बेचन राम' सभै गुन लोना । जैसे बारह बान क सोना ॥
'मुरलीधर' अती चतुर वीनानी । गाएन वली सुर सग्यानी ॥

एक समे हम चारिउ एक जाती एक वरन ।
प्रेमराज और बेचन मुरलीधर दुपहरन ॥

चारीउ मीत जस चारीउ भाइ । एक से एक भए अधिकाई ॥
चारीउ जुग जस चारीउ वेदा । जलरज पवन अगीनीकर भेदा ॥
जेहीआ वीधी जगमह औतारा । चारीउ कर एक लोद संवारा ॥
एक लोद से पुनी वेगरावा । तेही की चारीव देह बनावा ॥
एक अंस जीव तेही मह कीन्हा । तव औतार जगत मह कीन्हा ॥
जग अवतरी जब भए सआना । तन तन पोजत फीरही भुलाना ॥
एक दीन वीधी संजु मीली गैउ । आपुस मह एकै हम भैऊ ॥

मीले सोहाग कन सम मीले सोजल जल भाती ।
तन मन सभ एकै भए परी हीए मह सांती ॥

वै तीनो वोही भाती चपाना । दुपहरन हरी हाथ वीकाना ॥
एकै अछर गुरु पठावा । जेही से वेद भेद की छुपावा ॥
इह जग जस सपना कै लेपा । भोर भए फीरी कीछु नही देपा ॥

× × ×

दुपहरन एही जग मधे तीनी लाभ है सार ।
प्रथमही सुमीरन राम को पुनी सो दान उपकार ॥

एही जग अमर रहा नहीं कोइ । जेही का सभ अंबर जग सोइ ॥
अमर सुना भरथ औ गोपी । सोउ न देपा रहे अलोपी ॥
बहुतन्ह नाम रहे के काजा । वाग लगाइ इहारा साजा ॥

+ + +

तेही से सब्द कहे अव लीन्हा । मकु रही जाइ जगत मह चीन्हा ॥

सब्द ब्रह्म सब्द अंम्रित सब्द ही रतै जो कोइ ।
नाम भाषी रस चापी कै जग मह अमर सो होइ ॥

संमत सग्रह सै छवीसा। हुत सन सहस दुइ चालीसा ॥
कहेउ कथा तब जस मोही ग्याना। कोइ सुनी रोवा कोइ रह साना ॥
जेही जस सुझी तैस तेइ बुझा। जेही जस सुझी तैस तेइ सुझा ॥
वहुतन्ह के मन सर गुन आवो। बहुतन्ह नीगुन पटतर लावो ॥
वहुतन्ह सुनी के हीश्र मह रापा। वहुतन्ह सुनी के दोष न भाषा ॥
मोही जस ग्यान रहा हीश्र माही। कहेउ सभै कीछु छाड़ेउ नाहीं ॥
एक एक अछर पोजी वनावा। सुरपन दुष पंडीतन्ह सुष पावा ॥

गहौ चरन पंडीतन्ह कर वीनती करौ पुकार।
ऐगुन सकल दुराइ कै अछर दीहो सवार ॥

यह जग नीसु आइ अंधीआरी। जो जागै सो नर अधीकारी ॥
जागही वहुत भाती जग लोगा। जागही जोगी साध ही जोगा ॥
जागही राज करत कै राजा। जागत कथक वेजावत वाजा ॥
जागही वीरही वोरही संतावै। जागही दुषीआ जो दुष पावै ॥
जगही तस कर चीत वसै चोरी। जागही चकई चकवा जोरी ॥
जागही जुआ पेलत जुआरी। जागही रसीक पुरुष औनारी ॥
जागै कारन मै चीत जानी। हिश्र उपजाइ प्रेम कहानी ॥

यह जग रैनी अधारी है जागौ कौन उपाइ।
तव यह रचनी मन रची कहत सुनत नीसु जाइ ॥

॥ श्री आदी कथापंड ॥

वसै राजपुर उतीम देसा। परजापती तहा आदी नरेसा ॥
महाराज सक वंधी राजा। अगीनीत सभ दल वादर साजा ॥
अतीही भंडारन लेषे माही। कटक गनती मह आवै नाही ॥
अलप वजा के असवारा। वरछी छाहे चले भुआरा ॥
तुरै असंषन्ह रह हित वेला। ठावहि वांधे पाहि महेला ॥
अगिनिति ऊट औ गज मतवारा। अगीनीति गांउ भुमी विस्तारा ॥
भुप आप आएवु नही गहा। गहे केही पर कोउ अरी नही राहा ॥

नौ षंड सातो दीप मह सो राजा परचंड।
और जहा लगी राजा ताही देही सो डंड ॥

जो चाही सो सभ प्रभु दीन्हा। वीनु एक पुत्र मीपुत्री कीन्हा ॥

कहै बीचारी होए गुनी ग्यानी । एही जगमह परतछ भवानी ॥
तीन्ह की सेवा जो चीत लावै । मन सा करै सो मन सा पावै ॥
अब मैं तीन्है सुमीरौ होइ दासा । परसन होइ तो पुरवहि आसा ॥

× × ×

एही डरह हरी सुमीरन कीन्हा । प्रभु परसन होइ एही दीन्हा ॥
अब केही भातीन्ह जाइ जी आवा । इह मेरे पर पाप चढावा ॥
इह मन गुनी सीव सुमीरन कीन्हा । वेगी आइ सीव दरसन दीन्हा ॥
कहेन्ही मोही सुमीरौ का जानी । तव देवी तव कथा वपानी ॥

जीमी राजै सेवा कीवो औ जीमी सुमीरन कीन्ह ।
कहा सभै महदेव से औ जीमी प्रभु सुत दीन्ह ॥

इह सुनी सीव ससी अंमीत दीन्हा । आपु गवन कैलास ही कीन्हा ॥
देवी अंसी नृपती भुप दीआ । भुप मह परतही राजा जीआ ॥
देपेसी जागी कै आदी कुमारी । चढी सींघ पर आदी कुमारी ॥
देपत पन नृीप पावन परा । देवी उठाइ कीन्ह पुनी परा ॥
तव हंसी देवी कहा सुनु राजा । मम दरसन अघ तुअ सभ भाजा ॥
तै सेवा कीन्हे सुत लागी । देएउ पुत्र तोही वीधी से मागी ॥
करहु राज कै काज सवारी । अब जीअ मह जनि होहु दुपारी ॥

कही इह वचन भवानी तैसेइ गइ छपाइ ।
राजा रहा तवाइ कै जनु ठगुला दुपाइ ॥

+ + +

दसो चढ़ो जब नव वीति गेउ । तब वेटा राजा घर भेउ ॥
अती सरुप सुठी सुन्दर बालक भयो अनूप ।
ससी से अधीक सरीर छवी, रवी से महा सरूप ॥

+ + +

सुनी कै पंडीत पत्रा देपा । गनी गुनी हीअ मह लगन विसेपा ॥
चीत्र नछत्र वार बुधवारा । मास कुआर सींभु औतारा ॥
पांचौ रवी न वए ससी रहा । माथे नक्षत्र परे सुख महा ॥

बुध की दसा जनम भयो नीसी वीती भा भोर ।
उदै कीन्ह रवी जगत मह कुल होइ गयो अजोर ॥

+ + +

आएउ सहस वरीस एक होई । नृीप होइ वढा न जेही सर कोइ ॥
वीस वरीस पुजी जव आइ । जनम भुमी तजी पर पुर जाइ ॥
सुंदर नारी देषी अनुरागी । केती कौ दीन होइ ही वैरागी ॥
वहुरी वीआही तही होइ भोगी । जेही के कारन होइ वियोगी ॥

वहुरी चलै जव देस कह मध्य महारन होइ ।
जीती मारी तेही आवै वैकुंठ गवनै सोइ ॥

इह सभ लीपी कै भाषी सुनावा । राजा सुनत वहुत सुष पावा ॥
पंढीत कह दछीना वहु दीन्हा । तव दीज गवन भवन कह कीन्हा ॥

× + ×

श्री कुअर वीदेस पंढ

पीता क वचन कुअर जव सुना । उठी आयो कर मलि सिर धुना ॥
छठी छीन सुनी भइ गरानी । दहु लोचन भरी आयो पानी ॥
औ जस रन कर कादर कहा । से सुनी भाव सोच दुष महा ॥
होइ उदास भाषेसी मन माही । अव एही देस रहौ भल नाही ॥
फीरौ जाइ कै देस वीदेसा । देषौ को कंहा आही नरेसा ॥
तस न सभै जिन देस न देषा । ताकर जीवन जन्म न लेषा ॥
इह मम गुनी मंदील मह जाइ । काहु कह नही बात जनाइ ॥

लीयो जो मनसा मन भइ अंवर द्रव छपाइ ।
पौन जीत है पीठी चढ़ि चले निकस अकुलाइ ॥

आधी राती उदासी होइ । है वीनु संग न लीन्हेसी कोइ ॥
छाडेसी और बहुत है हाथी । छाडेसि और जहाँ लगी साथी ॥
छाडेसी मात पिता कै माश्रा । छाडेसी कुल कुटुब की दाश्रा ॥
छाडेसी राजपाठ अवराउ । छाडसी नगर देस भुइ गाँऊ ॥
छाडसी हीत मीत प्रान पीयारा । छाडेसी अम्र मलै धन सारा ॥
छाडेसी महल कोट सुखवासु । छाडेसि भोजन अमी गरासु ॥
छाडेसी मानिक मोती जरी । छाडेसी सभ जव पुनी धरी ॥

इह सभ छाडी गयो कुअर जो छाडे नहीं जात ।
कोस सहस पहुचे उपर होइ गयो परभात ॥

होत भोर सभ केउ जागा । धंधा जगत करै सभ लागा ॥

+ + +

चला कुंअर तेही वन मह जाइ । जेही अधीआरे मगुन देपाई ॥
कुंअर जोती जस रवी मनीआरा । जहा जाइ तह वही उजिआरा ॥
आपनी जोती चलै मगु हेरी । संक न मानै काहु केरी ॥
एही वीधी चलत देवस दस गेउ । तव तेही वनतें वाहर भैउ ॥
वस्ती पाइ वहुत सुष माना । इह तम निसु जनु भयो विहाना ॥
देपत चला देस पर देसा । एक से एक सो वडे नरेसा ॥
गाउ भुमि जिन्ह के वरिआइ । ठौर ठौर सभ ठाउ सोहाइ ॥

नर नारी सभ सुंदरी उत्तीम सभ वेवहार ।
देपत ऐसन देस सभ गा तहा राजकुमार ॥

॥ श्री अनुप गढ़ पंड ॥

जहा अनुप गढ नगर अनुपा । अंवर सेनी तहा के भूपा ॥
भांन समान तपै परतापा । सभ राजन्ह मीली वड़ स्थापा ॥
अतीही अपार राज तेही केरा । सनमुप ताही न कोई हेरा ॥
वसगीती नगर सगर उजिआरी । घर घर कंचन धाम अटारी ॥
चमकै गच जस मानीक मोती । जगमग होइ नपत की जोती ॥
सुरुजसेनी तहाँ परधाना । चंद्रकला मंत्री वड़ नाना ॥
अगुआ पौन सो अग्याकारी । मेघ महथ वरीसै घन वारी ॥

घर घर नारी अपछरा नरगन गंध्रप देव ।
वासुक डरै पताल मह इंद्र कर ही नीती सेव ॥

देपी उतंग धौरहर भौना । कुअर आम दिसी कीन्ह गौना ॥
दीरघ ब्रीछ सदा फर फरे । सभ छतनार औ लह लह हरे ॥
हेठ पताल गइ तीन्ह मुला । लगे अकास सपा फर फुला ॥
पांती पांती लागे सभ मेवा । रछा करही सकल मुनि देवा ॥
सभ मीठे अंम्रीत रस पागे । पाके रहही सो डारन्ह लागे ॥
नृीप चाहे तव छुरी मंगावै । ना तरु कोइ छुवै न पावै ॥

पंछी तहा क्रीडा कर ही जो भावै सो पाही ।
गीरा परा पंथीक कंह लेत कै वरजही नाही ॥

पुनि तेहि मह लाइ फुलवारी । जगमग होइ रही उजिआरी ॥
पीअर सेत स्याम रतनारा । फूले फूल करहि महकारा ॥
भांति भांति सब रंग विरंगा । देपत जीव मह होइ उमंगा ॥
तीन्ह की वास कही नही जाइ । जो सुंघै सो रहै लोभाइ ॥
तेहि सुवास कह गंध्रव धावही । पौन होइ कै वास न पावही ॥

भंवर भवहि फुलवारी माही । वास लेत को फुल कै जाही ॥
तेहि फुलवारी नीकट जो गैउ । लागी वास फुलेल सो भैउ ॥

रहहि फुल सब फुले छवो रीतु वारही मास ।
और जो फुल वसाहि सब तीन्ह फुलन की वास ॥

वारी नीकट सरोवर देषा । सागर सम अवगाह वीसेषा ॥
चहु दीसि कंचन पालि उठावा । पुनि चारि दीसि घाट वंधावा ॥
तेही सरवर मह अंबुजि फूला । गुंजहि वहुतौ मधुकर भुला ॥
सहस पापुरीक अंबुज होइ । छुवै न पावै ता कंह कोइ ॥
औ वहु जतु रहहि तेही माही । कीछु देषा कीछु देषा नाही ॥
उलथहि मछ कछ सीर काढे । वगर धदुर वाहर ठाढे ॥
औ पंछी जल वासी दीठा । कोउ पौरव कोउ फुल पर बैठा ॥

फुल रहे कोई कमल वास उठै महकार ।
नीमल जल दरपन सम भीटा उचे पहार ॥

पुनी चली देषी षेती फरी । अति सुंदर औ लहलही ॥
चलै रहट षेती सो सीचही । पगहा बाधि वसह मह पीचही ॥
षेत षेत पर कुंआ इदारा । अपरुव विधि से रहे संवारा ॥
सुंदरि नारि भरहि तहा पानी । ठुमुकत चलहि अधर वी''नी ॥
सभ सरुप जानहु अपछरा । मृग नैनी सुष ससी की करा ॥
जेहि के गुन से पावे पानी । निगुनी ठाढ तवा हिअ आनी ॥
मागे गुन कोइ काहु न देइ । जेहि कर गुन सो भरी भरी लेई ॥

एक जो भरी कै ले गइ एक भरे गही डोरी ।
एक छुछि लेइ वहुरी एक चली घट फोरी ॥

इह विलोकी सभ राज कुमारा । भीतर नगर कीयो पैसारा ॥

+ + +

ताही महल मह वसुधा रानी । जाती पदुमीनी नारी वखानी ॥
सषी वहुत संग चीत्रनी नारी । सभ सुंदरी उतीम सुकमारी ॥
वसुधा सभन्ह महा पटरानी । सभ से सुंदरी पंडीत ग्यानी ॥
तेही की सुता पुहुपावती वारी । चंद सुरज कर जस उजीआरी ॥
चंद सुरंज पुनि गहन गरासा । वह उजिआरी सदा परगासा ॥
जस जस दीन दीन भइ सआनी । तस तस भइ अनुपम वानी ॥
ससि सुरज से अधीक सरूपा । दिव्य सो सुरती मुरती अनुपा ॥

पढी चतुरदस विद्या औ पुनी चारीउ वेद ।
अंग अंग सभ अद बुद रंग रंग मह भेद ॥

सोरह वरीस की जब वह भइ । तन मह आइ चढी तरुनइ ॥
मन मथ मन मह आइ समाना । वालापन कर पेल भुलाना ॥
नीमल वदन अरुन होए गेउ । चहे सोहाग सो कुंदन भेउ ॥
भृकुटी कुटील जनहु धनु ताना । सघन कटाछ सो वरुनी वाना ॥
नैन सुरंग प्रेम रंग राते । अती उतीम दीरघ मद माते ॥
अधरन अधीक अरुनता छाई । गोल कपोल लोल ललीताइ ॥
उर मह कौल कली देपरानी । रोमावली सूठी अधीक सोहानी ॥

भई सआनी पुहु पावती जोवन सभै संजोग ।
लाज सकुच जीव उपजी चाहे पीव संग भोग ॥

जवते भइ सआनी कुमारी । रहै सपी संग सदा अटारी ॥
नाह वीना कीछु लागु न नीका । अंम्रीत भोजन सो सम फीका ॥
चीत मह वीरह प्रेम अधीकाना । चाहे आपन कंत सुजाना ॥
जल नही रुचै पचै नही पानी । चोआ चंदन अनल समानी ॥
भूपन चीर हार उर चोली । वरै आगी लागी जनु होली ॥
गुप्त सकल दुप सहै सो नारी । प्रगट न होए लाज की मारी ॥
रहै संग नीत सपी सहेली । तीन्ह संग वहरावे हंसी पेली ॥

प्रेम वीज पुहुपावति ही, भेद न जानै कोइ ।
झाके पोली झरोपा तव कीछु सुप जीव होइ ॥

तेइ सो पोली झरोपा झाका । चंचल नैन प्रेम मद वांका ॥
हेरत द्रीस्टि कुअर पर आइ । वदन वीलोकत रही लोभाई ॥
परी प्रेम फंद हेरत भोरी । चंद देपी होइ रही चकोरी ॥
हीए ग्यान गुनी करै वीचारा । को अस जगत राम औतारा ॥
महा सरूप अनुप सोहाए । देपत जाहि गहउ वउराइ ॥
कै है इंद्र इहै जो सुना । कै है इहै कान्ह वहु गुना ॥

× + +

जैसेइ कुंअर भयो चपु चोटा । तैसइ लागी वीरह की चोटा ॥
गीरी अटारी पर मुरझाई । देपी सपी चहु दीसते धाइ ॥

× × ×

मालीनी फुल सो आनै आवै । पावै जैसन जैस वीछावै ॥

मनही अचंभीत चुप रहै देपेसि गुन दिन चारी।
तव पुहुपावती से कहेसि रसना सकुची उघारी॥

कहौ वात एक राज कुमारी। जौ जीग्र मोर देहु वलीहारी॥
पुहुप कहा कहु कौन सो वाता। कीछु न कहौ तोही आनी वीधाता॥
पुहुप वचन सुनी दुती भापा। सुनहु न कुंग्ररी वात अभी लाषा॥
जेही सुरती पर मातीहु रानी। सो मुरती मै देवौ आनी॥
राज कुंग्रर नाउ तेही केरा। मोरे भवन कीन्ह तीन्ह डेरा॥
सुनी इह वात कुग्ररी दुप भरी। रोइ के दूतीक पग लेइ परी॥

\+ + +

इम पुहुपावती की सपी लपी वात सभ आइ।
कुग्रर देहु जौ वाचा तौ अव देही मीलाइ॥

कुग्रर कहा जग मह सत वाचा। ब्रह्मा वीस्नु सीव की है वाचा॥
वाचा देवता तेतीस कोटा। सत छाडे वाचै अघ मोटा॥
करौ सह पुहुपावती केरी। चहौ काम जो राम ही हेरी॥
जौ सत तजी आसन पुनी करई। जन्म सो नरक मह परई॥

\+ + +

तव एक सखी गही पुहुप भुज चाहेसीउ मीलाइ।
नैन चारी जव एक भा दुग्रौ गीरे मुरझाइ॥

\+ + +

तव दूती एक रची उपाइ। कुग्रर पुहुप एक ठाव सुताइ॥
अधर के उपर अधर ले राखा। दंपती मधुर सुधारस चाखा॥
जागे दोउ उठे जनु सोइ। लाज न पुहुप रही मुख जोई॥
तव सभ भागी सपी सहेली। पुहुपावती कह छांडी अकेली॥

\+ + +

अहेर खंड

अंवर सेनी पुहुप को ताता। सभा माह वोला एक वाता॥
भयो चाव मसु भोजन केरा। चलहु सभै मीली करहु अहेरा॥
जहा लगी कोइ नगर मह होइ। चलै साथ घर रहै न कोई॥

\+ + +

कुग्रर सुनत असराज ढीढोरा। वेगी पलानो आपन घोरा॥
कहेसी भयो मो कह वडी वारा। जाइ न पेलेउ कवहु सीकारा॥

\+ + +

लागत सर सीधीनी तब भागी। कुंअर परा पाछे तेही लागी॥

कोस तीस पर पोदी कै सीधीनी मारा जाइ।
आवत नगर अनूप गढ कुअर सो परा भुलाइ॥

उतरी के सेतवाध के पारा। गै निकसा तेही वाग मझारा॥
कुंअर ही देपत पम पहीचाना। तुरै चीन्ही अधी को रह साना॥

तब सम्यान मना करी बैठु कुंअर ढिग जाइ।
कुंअर देपी जोगीन्ह कह आस जीव मह आइ॥

\+ + +

कुंअर वचन सुनी जोगीन्ह कीन्ह सुरती सो बैन।
कहा होत पंढित करे सो देपौ नीज नैन॥

\+ + +

उठत ही धरा रहा जो राधा। पाचहु मीली कै कुंअर ही बांधा॥
चढ़ा सम्यान है कुंअर चढ़ाई। बाधी कुंअर कटि से कटि लाई॥
चला हाकि है भयो हुलासा। राती ही गा चली कोस पचासा॥

\+ + +

कासी नगर सुपवासी नृप चीत्रसेनी कर राज।
तही की सुता रूपवंती सव रूप ही कर काज॥

\+ + +

चढ़ै हरदी जब कुंवर के अंगा। हरदी वीसी कर जानु भुअंगा॥

\+ + +

॥ पाती पंड ॥

॥ कवित्त ॥

वन भयो भवन गवन जब कीन्ही पीव तन लागो तवन मदन लाइ तापनी।
भूत भयो भूषन वो सुरी सुरइल भइ हार भयो नाहर करेजे छुटी कांपीनी॥
दुप हरन पीव वीनु मरन की गती कासो मैं वरनी कहो वीथा कहो आपनी॥
फूल भयो सूल सूल कली भइ कांटा ऐसी राती रकसीनी भइ सेज भइ साथनी॥

॥ कुंडलीआ ॥

तन जो पसीजै दुपहरन वीरह अनील के जोर।
रोम रोम रोवत सभै देपी देपी दुप मोर॥

देषी देषी दुष मोर लोर तीन्ह नैन बहाइ।
जीन्ह कर हीआ कठोर वजूकर पटतर लाइ॥
पंषेरु गज वाज फीरही सभ रोवत वन वन।
तलफहाड कर गुद रोवै रोवा सभ के तन॥

पीअ दरसन जल त्रीषा अरील अधर सुष चाह है।
चात्रीक जेग वीनु स्वाती हीए तेव दाह है॥
दहु कव पुजै आस पीआसी होइ रहौं।
परीहा पीअही ते सुष होइ सो पीउ पीउ मैं करौं॥

\+ \+ \+

॥ दुतीषंड॥

इह सुनी दूती पाती लेइ। पुहुपावती कहा धीरज देइ॥
आइके भवन मुडाएसी केसा। होइ चली वैरागीनी भेषा॥
हाथे कवरी माथे टीका। गरे मेली माला तुलसी का॥
लीहेसी ग्यान गुर सब्द संभारी। मआ मोह सभ दीहेसी विडारी॥
अती सुंदरी छवी वैस नवेली। चली उताएल आपु अकेली॥

गावै नीगुन सरगुन भांती भांती सुर राग।
वंसी वीन वजावै सुनि उपजै वैराग॥

× \+ ×

॥ वैरागी खंड १४॥

इह सुनी चीत गुनी दुती कहा। प्रेम पंथ है साकर महा॥
काम क्रोध मद लोभ नेवारहु। तौ एही पंथ माह पग डारहु॥
चली एही मगु पग पाछे न फेरहु। सभ सुष सहीत न आगे रोवहु॥
छाड़हु अव सभ सुपरस भोगु। कीछु मती सुनहु कहै जौ लोगु।
राज छाड़ी जौ होहु भीषारी। अव तव पावहु प्रान पीआरी॥
तव की वार गएहु वीस भोरे। नही जानी केही वीधी केहीफेरे॥
अब तहा जात महा दुष होइही। सो जाइही जो आपुही खोइही॥

वन गीर सागर नांघत होइ वड़ा संताप।
जहा पुतही पर हेलही महतारी औ वाप॥

\+ \+ \+

भेष वीना सीध होइ न काजु । लेहु सो भेष तजहु अब राजु ॥
कपट भेष एक वढइ कीन्हा । जेही नृप सुता व्याही कै दीन्हा ॥
जेही कारन जो भेष बनावै । इछा करै सो राम पुजावै ॥

॥ दोहा ॥

भेष पहीरी सभको उतरा गोरष दत्त कवीर ।
पुहुप के कारन दुपहरन पहीरो भेष सरीर ॥

कुंवर कहा अब सुनहु न बाता । मै सुष तजी कै दुष मह राता ॥
तुम्ह गुर ग्यानी मैं लघु चेला । माआ मोह सकल पर हेला ॥

\+ + +

तीतषन वेगी चले उठी दोउ । और साथ लीन्हा नही कोउ ॥
तीनीउ दीसी तीनो गुन त्यागी । चौथी दीसी चौथे पग लागी ॥

\+ + +

॥ दानो पंड ॥

इह मन गुनी पीव आगे ठाढी भइ कर जोरी ।
दीन वचन लागी कहै मान गरव मन तोरी ॥

ऐ पीउ जीव के सुष देनी हारे । कसन वोलहु प्रान पीआरे ॥
काहे मौन रहेहु तुम्ह पीउ । कही कारन अस्थीर नही जीउ ॥

\+ + +

चीत तुम्हार जेही लागा मै तेही की वली जाऊ ।
जननी ठाव सो पग धरै सीस धरौ तेही ठाउ ॥

कुंअर छोहाना वीनती सुनी कै । लागो उतर कहै सीर धुनीकै ॥
ऐ सुंदरी का वोलौ वाता । कही नही जाइ चरीत्र वीधाता ॥

\+ + +

चीत चंचल तव देषी कै कहै रंगीली नारी ।
ऐ पीउ भौरा जगत के मोही कत चले वीसारी ॥

मोरे तुम्ह वीनु और न कोई । तुम्हरी दआ होइ सो होइ ॥
देषहु मन मह वुझी वीचारी । जीव वीनु कीनी जीवन हेनी नारी ॥

जौनेह पात तरु परीत्यागै । केही की डार जाइ सो लागै ॥

\+ + +

लेइ चलहु अब अपने साथा । मोही अनाथ के करहु सनाथा ॥

करी हौ सेवा रैन दीन रही हौ तुम्हरे संग ।
महादेव संग जैसे पारवती अरधंग ॥

\+ + +

तै तुम्ह हमरे संग चलहु कै वैरागीनी भेस ।
मन सकुच जनि आनहु जात वीराने देस ॥

\+ + +

॥ छवो रीतु रुपवंती वीरह पंड ॥

इहा कुंवर भुला सुप पाइ । पुहुपावती रापो वेलमाइ ॥
रुपवंती जो पहीली वीआही । कंत वीना तेही वीरहै दाही ॥
जौ लह सो नही भयो संजोगा । पीव वीछुरे नही भयो वीयोगा ॥
जव तन मह आइ तरुनाइ । दीन दीन वीरह भयो अधीकाइ ॥
भुला हसी पेल रस भोगु । जनु जोवन उपना तनरोगु ॥
नारी कंत संग करही कलोला । देषी सो सुप हीअ उठै मलोला ॥

\+ + +

हुत पीजरा मह मैना पाली । तेही के वीरह भइ सो काली ॥
अस दुष ताकर देषी सो मैना । पुछै लागु प्रीत से मैना ॥
कहु धनी मोसे अपनी पीरा । केही कारन से दहै सरीरा ॥
देषौ कवहु न करत सींगारा । कौन परा अस तोही पभारा ॥
नैहर सासुर दुनौ राजा । तन औडेरेसी कौने काजा ॥

\+ + +

कहेसी कहा दुप पुछहु मैना । कासो कहो सुनै जो वैना ॥

\+ + +

कहेसी सुनहु मैना दुप पीरा । पीव वीनु दाहै वीरह सरीरा ॥
काही लागी मै करौ सींगारा । जौ घर नाही कंत पीआरा ॥
नैहर औ सासुर कर राजु । कंत वीना आवै केही काजु ॥
सभ सुप दुप है पीव वीनु मैना । पीव संग दुपौ होइ सुप मैना ॥

× × ×

हे धनी अब धीरज कै पीव कह कहहु संदेसा ।
औ मोही देहु उडाइ कै दुढौगै परदेसा ॥

× × ×

पोजत पोजत हारी मैना । उड़त उड़त थाको जब डैना ॥
तब मै वैठी तेही फुलवारी । पुहुप कुँअर जहा करत धमारी ॥
सपी सहेली लीन्ही सु रंगा । आपुस माह करही रस रंगा ॥
कुसुम तोरी के गेंद सवारी । गोइ आवारी करही पुनी मारी ॥
एहीवीधी पेलत पेलत ससाला । गा तेही तरुवर राजकुमारा ॥
जातही डीठी ताही पर परी । देपेसी जस वीरहानल जरी ॥

अती उदास चीत चंचल नैन अरुन तन स्याम ।
कुँअर देपी गती ताकर भुला सुप वीस्राम ॥

+ + +

राजकुमार सुनत इह बैना । पहिचाना दै जैस मैना ॥
कहेसी महीहौ सो वैरागी । नीसराहुत पुहुपावती लागी ॥
तप वैराग लेइ वीर नीवाहा । पुहुपावती कह आइ वीआहा ॥
लागा करै केली रस भोगु । वीसरा कुल कुटंब सप लोगु ॥
आजु चाहती आनी कै दीन्हा । रहा अचेत चेत अब कीन्हा ॥
तात मात की कहु कुसलाई । कैसे अहही बाप औ माइ ॥
औ कैसेहही परजा पौनी । कहौ सो वेगी मोही चतवनी ॥

चलौ चेत के घर कह जहा पीता कर राज ।
अब पल एक न अटकौ करौ गवन कै साज ॥

+ + +

चला कुँअर तब करी परनामा । संग लगाइ पुहुपावती रामा ॥
राती रहै वसी जहा परथाना । भोर होत उठी कीन्ह पआना ॥
वजे नीसान भेरी सहनाई । अगीनीती कटक चली संग धाई ॥
चली संग सब सपी पीआरी । कुँअर साथ जीन्ह कीन्ह धमारी ॥

+ + +

रोवही अधम अधीर जी रोवही मोह मआरी ।
हसत चली संग चातुरी सुंदर प्रान पीआरी ॥

+ +

॥ उजेन षंड ॥

उत्तरी कटक जहा सर महा । तेही के नीकट नगर एक रहा ॥
देस उजैन वसै तहा नीका । रोठ गवार भुप कुल टीका ॥
तेही के नगर केर घसिहारा । घास काज गारहा सकारा ॥
तीन्ह सो देषी कुँअर दलसाजा । कहा जाइ जहा आपन राजा ॥
हेमराज राज के धनी । जेही की सैना जाइ न गनी ॥
कहत वात एक संका होइ । कहा चहौ किंमि रापो गोइ ॥
मै नही जानो मंद की भला । तुम्ह चातुर बुझहु इह कला ॥

दषनि देस को राजा संग लीए दल साज ।
सरवर तट इही उतरन जानी केहुँ काज ॥

इह सुनी चक्रीत रोठ गवारा । पुनी कहुका देपे घसीआरा ॥

× × ×

तव वसीठ कह पठएसी कहौ अस जाइ ।
लेइ हाथी (ल) भुइहारी मीलौ सो राजा आइ ॥

जाही तौ लुटी कटक सभ लेवौ । वीना लीए जाए नहीं देवौ ॥

× × ×

सुनी कै कुँअर अचंभौ माना । कै मन रोस वहुरी मुसुकाना ॥
कहेसी उतर अव सुनहु वसीठा । हम न देपु जो अस कोइ ढीठा ॥

× × ×

कहौ तुम्हारे राजा के को परधान देवान ।
को मंत्री को आगुआ जेइ दीन्हा इह ग्यान ॥

कहेसी सुनहु अव सभकरनांउ । जा सेवक राजा के गाऊ ॥
जव से पुरुष कहइ इह राजु । तवसे भीती लेही ऐही साजु ॥
नगर उजेन कआ कर जानहु । जीव कह रोठ गवार कै मानहु ॥
रज अप तेज संमीर अकासा । सभ घट मह एह तनु नेवासा ॥
पाचहु की परक्रीत है पाचा । जेही के घट कह साचो साचा ॥
हाड मासु जस इत वो माटी । चाम सुनौती जनु गच साटी ॥
वार सघन घन वाग लगावो । पंथक नारी नदी वहावो ॥

लार पसीना झरना पुत्र ओ सोमीत ताल ।
महावली अपरुपी कामदेव कोतवाल ॥

भुष पीआस है भूत परेता। आलस नीद्रा अधीक अचेता ॥
इन्ह महा वड़ा करोध करोरी। उठै आगी चीतवै जेही वोरी ॥
वोलव चलव वीर वड चोरा। वल बीसाव वीदी कह जोरा ॥
अगम अगोचर अगह अपारा। इहवा एक पाएक वरीआरा ॥
माआ माइ मोह महतारा। लोभ लालची राजक सारा ॥
रइआत राग रारी से ठानै। दुष्ट दुएप काहु नहीं मानै ॥
कपट करम करता कर हाथा। चरन चपल है जाकर साथा ॥

स्रवन संदेसी सब्द को दरसन द्रीष्टि देवान।
नेत नासीका वास कह इन्द्री इन्द्र समान ॥

क्षुप है महल रसन दे रानी। सदा रहै वीषी अंम्रीत सानी ॥
ममीता मंत्री पाप परधना। वकसी वैर अगुआ अभीमाना ॥
निद्रा नटी कलपना काला। डंडीआडं मदरोह दलाला ॥
है पहरु पापंडी पापी। दल छल छैल सकल संतापी ॥
झुठा झगर नगर इह जानै। कादर जदहा दुषी दुष जानै ॥
दइत दारीद्र अहेरी आसा। मीत्र मंद अंधी आरी फासा ॥
दुरमती दारून माल दरोगा। ए सभ चाहही आपन भोगा ॥

चोपदार हम चतुर है आए होइ वसीठ।
वात कहै साची सभै लागै तीत की मीठ ॥

नरक नर दावा नर के साथा। आएधु वीद्या सभ के हाथा ॥
इह सभ हमरे क्षुप की सैना। जीन्ह से कवही कोउ जीतैना ॥
तुम्हरे अब को है परधाना। को वकसी को महथ देवाना ॥
को कोतवाल औ कोहै माला। को अगुआ को अहै दलाला ॥
जेहीकेवल तुम्ह जावहु वाची। हमसो वात कहौ सो साचो ॥
सो हम कहही क्षुप सो जाइ। तेकर का दहु उतर पाइ ॥
कै जौ देहु जो मागै राजा। काहे के होइ जुभी कै साजा ॥

जौ एही मग तुम्ह आए तौ एतनी कहौ वात।
नाही तो को तुम्ह आगन हासील मागन जात ॥

कुँअर कहा अब सुनहु न दैना। कहौ नाम जेतीक है सैना ॥
पाच प्रान है पान अपाना। औ उदान वो व्यान समाना ॥
सहज सुन्या सैन कह जानहु। राजा राम सो राजही मानहु ॥
ब्रह्म है वाप मुकुती है माता। चीत चैतन्या नेह से नाता ॥
मन मंत्री गुस्टी गुर ग्याना। वकसी बुधी पवन परधाना ॥

महिमा महंथ है दील देवाना। धरम धनुकधर धरे है ध्याना ॥
छरीआ छेमा सुरती सुपरासी। अगुआ अंस दीनता दारी ॥

हंस हसी सर समीता साहस है सीकदार।
फौजदार सो फुरती है अजीत अचल असवार ॥

सत सपमना रानी सती। प्रान पीआरी पुहुपावती ॥
सां (? त) सुसील अभै वह दारा। पोत दार है पुण्य पीआरा ॥
नीत नहीं है सुरज सूरा। चोपदार हही चंद हजुरा ॥
•••त सुरतो की वीरती वीचारा। वली वीवेक है नाद नगारा ॥
सेवक साच है सकती सहेली। वीरज धजारी धज सकेली ॥
सरवस सीध सार संतोषा। कुसल की कोट नदी नीह्रमपा ॥
प्रन प्रजा है जाग्रीत जोधा। अमर आत्मा वाहन बोधा ॥

परमातमा पुरुपारथी जीलौदार है जोग।
अहनीसी सदा अजोर है भाव भला पन भोग ॥

परा पवास है दान दलाला। मान माल करता कोतवाला ॥
वड उमराव अहै अवकारा। उर सह रहै वोकील हमारा ॥
जोती जोती की पंडीत पावन। वेद वीनोदी सभा सोहावन ॥
भाग है भगत भरोसा भला। नीस्चे नेम नाम नीरमला ॥
दआ देवता सोभा साजन। अस्तुती अश्व तनु को ताजन ॥
मीनल महा उतगुन गजराजु। परचै पाए ससुक्रीत साजु ॥
पहर प्रेम न की वनी रासा। वीद्या वहल क्रितक वीलासा ॥

कहा ले कहौ कटक जीत सुर वीदेह अपार।
अग्याकारी एक मत परे रहही दरबार ॥

× × × ×

इह सभ रंग अहै तेही केरा। जो तुम्ह देषत कै सुप फेरा ॥
अब चीत मह कीछु करहु अंदेसा। वेगी दे चलहु राज पुर देसा ॥
जेतीक सपी सहेली रानी। तुम्ह सभ साह पाट पर धानी ॥
मै तुम्हार सभ आग्या कारी। वचन न मेटही कौनो नारी ॥
इह कहो कुंअर न लावो वारा। चला वेगी है होइ असवारा ॥
औ पुनी कटक चली सव संगा। गाड़ी हाथी उट तुरंगा ॥
चढ़ी वीमान दुनौ लीय चली। चौर जहा लगी होते आली ॥

मैना आगे पठावा देस में कहे संदेस।
गा होइ कुंअर भीपारी आयो होइ नरेस ॥

+ + + +

सक बंधी भा राज कुमारा। बड़े भगत औ बड़े भुआरा ॥
इह सुनी कै तब अधम उधारन। तेही की सत देषैं के कारन ॥
वैरागी होइ कै करतारा। जाइ कैं भ्रम साल के वारा ॥

\+ + + +

पुहुपावती जो नारी तुम्हारी। जेही के कारन भयो है भीषारी ॥
देहु सो आनी इहै अब आग्या। देषौं कस तोहार परतंगा ॥

अचक रहा इह सुनी कैं लचक परी ही अमाइ।
पुनी मन ग्यान बीचारी कै हसी बोले नर नाइ ॥

\+ + + +

पुहुपावती जो प्रान पीआरी। तुम्ह कह आनि देहु सो नारी ॥

\+ + + +

पुहुपावती इह बात सुनी नौसत अभरन कीन।
राजकुमार पकरी कर लै वैरागी ही दीन ॥

अंतर जामी मन की जानी। भए ̈प्रगट'''सारग पानी ॥

\+ + + +

'''हा ओगावती जमुनी माना। कहा चित्रावली कुंअर सुजाना'''
'''डा मधुमालती कुंअर मनहर। जनमत भयो सभन घर सोहर ॥
मरत न पायो काहुक षोजा। कहा गए द्रहु वीक्रम भोजा ॥

दुष हरन ताते कहां पढी गुनी वेद गरंथ।
भ्रम करहु रामै भजहु तजहु पाप को पंथ ॥

एती कथा पुहुपावती दुषहरनदास वीरंचीते संपुरन समस संमत १७६७ मीती अगहन वदी ७ वार सोमार के दीन समस हुआ जो देषा सो लीपा म्मदोष नन दीअते सजन जन से वीनती मोरी टुटल अछर लेवै जोरी। आगे दसषत लाला रामप्रसाद मीसर सीताराम के असथल गाजीपुर घर प'''का घाट महला नीआजी ।१११।

विषय—

योगानुकूल एक रूपक द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है। इसमें २६ खंड हैं जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

१—मंगला चरण, महादेव, देवी और गणेश की स्तुति तथा गुरु, पातसाह और रचयिता का वर्णन पत्र १ से ८ तक।

रूपक द्वारा जो कथा कही गई है उसका सार इस प्रकार है:—

राजपुर देश का राजा प्रजापति था। सात द्वीप नौ खंड में वह सब राजाओं का शिरमौर था। वैरी न रहने के कारण वह कोई अस्त्र नहीं रखता था। भगवती के वरदान से उसे राजकुमार नामक एक पुत्र प्राप्त हुआ था। ज्योतिपियों ने राजकुमार के विषय में भविष्यद्वाणी की कि वह बीस वर्ष की अवस्था में एक रूपवती स्त्री के प्रेम में पड़कर वैराग्य धारण करेगा तथा उसके साथ विवाह कर एवं मार्ग में एक राजा को जीतकर घर आएगा।

निदान बीस वर्ष की अवस्था होने पर एकदिन राजकुमार ने पिता से उन राजाओं को जीतने की आज्ञा चाही जिन्होंने उसके पिता के तपस्या करते समय राज्य का कुछ भाग छीन लिया था। पिता ने बालक समझ कर पुत्र को आज्ञा नहीं दी। इसपर राजकुमार असंतुष्ट होकर परदेश चला गया। मार्ग में उसे ऐसा भयानक और बियावान वन मिला जिसमें न तो कोई रास्ता था और न कोई पथिक ही चलता था। भूख प्यास भी सताने लगी। पास में धन था, परंतु अन्न नहीं था। इस स्थिति में राजकुमार को धन की तुच्छता का ज्ञान हुआ। जब भूख प्यास से प्राण बहुत अकुलाने लगा तो भगवद् कृपा से एक बनजारा मिला। उससे अन्न लेकर क्षुधा तृप्त की, पश्चात् आगे बढ़ा। उस वन में वह केवल अपनी ज्योति के द्वारा ही मार्ग देखता था; दूसरा कोई प्रकाश नहीं था। दस दिन तक इसी प्रकार चलते रहने पर वह अनूपगढ़ नामक एक नगर में आया। यहाँ के राजा का नाम अँबरसेनी और रानी का नाम वसुधा था। सूरजसेनी प्रधान एवं चंद्रकला आदि बड़े मंत्री थे। पवन अगुवा था और मेघ महंत। पाताल में वासुकी इस राजा के डर से डरता था। इंद्र नित्य सेवा करता था। राजा की पुत्री का नाम पुहुपावती था। एक दिन झरोखे से झांकते समय उसकी दृष्टि राजकुमार पर पड़ी। राजकुमार के सौंदर्य ने उसे मुग्ध कर लिया। किसी प्रकार मालिन को दूती बना कर वह राजकुमार से मिली। राजकुमार जो पहले से ही पुहुपावती से प्रेम करता था उसे पाकर अत्यंत प्रसन्न हुआ। मिलने पर दोनों ने विधिवत् विवाह होने तक काम के वशीभूत न होने की प्रतिज्ञा की। इस प्रकार अपनी अपनी प्रतिज्ञा पालन करते हुए दोनों मिलते रहे।

एक दिन राजा अंबरसेनी आखेट करने के निमित्त चला। राजकुमार भी साथ में हो लिया। राजा राजकुमार का परिचय पाकर प्रसन्न हुआ। सिंहनी का शिकार करते समय राजकुमार बहुत दूर निकल गया और मार्ग भूल कर सिंहलद्वीप पहुँचा। वहाँ उसे उसका मामा सज्ञान मिला। सज्ञान राजकुमार को पकड़ कर राजपुर ले गया और उसका विवाह काशीराज चित्रसेन की पुत्री रूपवंती से कर दिया। परंतु पुहुपावती से बिछोह हो जाने के कारण राजकुमार को इस विवाह से कोई प्रसन्नता नहीं हुई और वह उदासीन रहने लगा। उधर पुहुपावती को राजकुमार का वियोग असह्य हो उठा। उसने मालिन को दूती बनाकर राजकुमार को ढूँढ़ लाने के लिये भेजा। दूती राजपुर देश जाकर राजकुमार को वैराग्य भेष में अनूपगढ़ की ओर ले गई। मार्ग के धरमपुर देश में एक दानव राजकुमार को उठाकर ले गया। दूती वहीं छूट गई। दानव ने राजकुमार का विवाह सातसमुद्र पार बेगमपुर देश के राजा बेगसराह की पुत्री रंगीली से कर दिया। राजकुमार इस विवाह से भी प्रसन्न नहीं हुआ। उसने किसी प्रकार दानव को शिक्षा देकर वैरागी बना दिया और वहाँ से अनूपगढ़ की ओर प्रस्थान किया। रंगीली की प्रार्थना पर राजकुमार ने उसे भी साथ ले लिया। मार्ग में सात समुद्र पड़े जिन्हें पार करते समय रंगीली और राजकुमार बिछुड़ गए। रंगीली एक द्वीप में पहुँची और वहाँ शिव पार्वती की आज्ञा से एक मंदिर में चतुर्भुज देवता की उपासना करने लगी। इससे उसे पति मिल जाने का वरदान शिवजी से

प्राप्त हुआ। राजकुमार चलते चलते फिर धरमपुर पहुँचा और वहाँ दूती से मिलकर अनूपगढ़ पहुँचा जहाँ पुहुपावती से उसका विवाह हो गया। पुहुपावती और राजकुमार आनंदपूर्वक रहने लगे। उधर राजपुर देश में राजकुमार की प्रथम स्त्री रूपवंती ने तरुणावस्था में पदार्पण किया। उसे पति का वियोग सताने लगा। उसने अपनी मैना को राजकुमार ढूँढ़ लाने के निमित्त भेजा। मैना राजकुमार को ढूँढ़ते ढूँढ़ते अनूपगढ़ पहुँची और राजकुमार को रूपवंती का संदेश दिया। राजकुमार को अपने देश की याद आई और वह पुहुपावती को लेकर घर की ओर चला। मार्ग में उज्जैन के राजा रोठ गँवार के साथ युद्ध हुआ जिस पर उसने विजय प्राप्त की। यहीं पर उसे मैना की सहायता से रंगीली (दूसरी स्त्री) भी प्राप्त हो गई। अतः राजकुमार विजय पताका उड़ाता हुआ मैना और दोनों स्त्रियों को साथ लेकर घर पहुँचा। माता पिता पुत्र को पाकर अत्यंत प्रसन्न हुए और शीघ्र ही उसको राजतिलक दे दिया। रूपवंती भी पति को पाकर प्रसन्न हुई। इस प्रकार राजकुमार आनंदपूर्वक राज काज करने लगा। अंत में अधम उधारन (भगवान्) ने राजकुमार की परीक्षा लेने के लिये उससे पुहुपावती माँगी। राजकुमार ने पुहुपावती को सहर्ष प्रदान कर दिया जिस पर अधम उधारन ने प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया।

रचनाकाल

संमत सत्रह सै छवीसा। हुत सन सहस दुइ चालीसा॥

संख्या १०६. साठिका, रचयिता—दुर्गादेवी, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७५९ वि०=१७०२ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गनेशाये नमः॥ अथर्षकांड लिप्यते श्री देवोवाच शुक्ल नाम संवत शरे शाठिका मंगल श्यामी शुलकस्य गुण पार्थिः भाषितं कलयुग कै शमाचारः मतहिगे अन्यथा नाहि वर्षा वर्षति अन्न शस्ते वापर जागहिगें फाल्गुन पीड़ा होइगा होली लागैगा प्रजाघृत होइ रूइ अरिष्ट देखावै अकाले विषं मौलिहै पश्चिम देखव अरिष्टा मलेछ पानी पंथहि चाहिगें अतिस्वराजु होइहि मेघे गुरुमती न चराय होइहि प्रजा अरोग्य होइहि आनंद शलाह वर्ती है शभिशस्ता अगिले होइगो गोहूदाम १६ मोठ दाम ११ यवदाम १४ वीउ ५ तेल ३।

अंत—

दक्षिन पंडा बाजिहै महर्ष दिन ४५ ज्येष्ठ और पन्द्रह दिन अषाढ रही गु शोठी पीपरि कपरा इव शक्त शंग्रहव यल न चलि है माड़ को राजा छीजि है महा विरोध होइ है षाड़ा बागैगा। पूर्व उतर पीड़ा मारा २ फाल्गुन चैत्र इति पक्ष यनास के फला फाल्गुन

२० इति रुद्र विंशी समास शुभमस्तु इति शाठिका संपूर्ण सम्वत् १७५९ शर्मनाम ज्येष्ठ शुदि १४ भृगुवासरे।

विषय—

संवत्सरों के नाम और उनके फलानुसार किस देश में किन किन वस्तुओं का क्या क्या भाव रहेगा आदि गद्य में वर्णित है।

संख्या १०७ क. चतुरमासा तथा स्फुट पद, रचयिता—देवकीनंदन साहब (स्थान —चिटबड़ा गांव, रामशाला), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—६३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८८६, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, मठ, चिटबड़ा गाँव, रामशाला, डा०—चिटबड़ा गाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ चतुरमाशा ॥

सपी री कान्ह वीदेसन आयो । गगन घटा घहरायो ॥ टेक ॥
चलत त्रिविधी समीर पावन वहत जमुना नीर ।
चहुं वोर ते घन दरपीत तरपत भइ छन दुती थीर ।
उडत है वक पंक्ति सुक पिक भंवर करत गुंजार ॥
चढयो मास आसाढ़ प्रभु विनु विरह तन दुप भार ॥ १ ॥
परत कुंद समुह दहु दिसी झरत झरना वारी ।
वन ग्वाल बाल वीहाल डोलत नीर मएन्ह ढारी ॥
सीपर चढी सीपी टेर लावत सुवत सब ब्रजबाल ।
भइ अधिक अधीर शावन वसे वो उर नंदलाल ॥ २ ॥
नद नदी भए वो अथाह धारा मीलत जलनिधि जाई ।
पथ पथिक चलि नहीं सकत थाके वो रहे घो सदन बनाई ॥
घन की घन घहरात निसुदिन बढ़त बीरह सरीर ।
भादो भआवन भवन सपीरी हनत मनसीज तीर ॥ ३ ॥

अंत—

राग कल्यान

कछु विनए सुनीए प्रभु कान दे ।
जनमत मरत सहत दारुन दुष करम कठिन अभिमान दे ॥ टेक ॥
तापर काम वो क्रोध मोह मद हनत हृदय धनुवान दे ।
मारुत त्रिपय प्रचंड संग मन चरन सरन नहीं जान दे ।

सुत तीय पीय धन धाम जानी नीज घटत देपी सठ मान हैं।
"देवकी" पतीत पतीत पावन प्रभु भक्ति अभय वरदान दैं ॥ २ ॥

\+ \+ \+

॥ जोड़ा ॥

जवहि हरी गयो मज छाडी इतो।
सबही वीपरीत भयो सुप दुप उर वदत कीतो ॥ टेक ॥
चंदन चंद पवन जमुना जल दाहत अनल नीतो।
सेज भुअंग अंग मह लागत परत न पलक भीतो ॥ १ ॥
वरपत बुंद भराभरी सावन वीत्यो अवधी मीतो।
"देवकी" प्रान न रहत छनक घट भई सब आस रीतो ॥ २ ॥

श्री राम ॥ श्री राम ॥

विषय—

चतुर्मास, श्रीकृष्ण चरित तथा आध्यात्मिक आदि विषयों का वर्णन।

संख्या १०७ ख. शब्द, रचयिता—श्री देवकी नंदन साहब (स्थान—चिटवड़ागाँव रामशाला), कागज—देशी, पत्र—७६, आकार—६¾×५¼ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, मठ, चिटवड़ागाँव, रामशाला, डा०—चिटवड़ागाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ शब्द बीज दशमी ॥ (? विजयदशमी)

वीज दशमी सोइ जन पाइ। जाकह सतगुर देहि लपाइ।
सरद शरीर शुक्ल पछ म्याना। त्रीकुटी चंद देपी सुपमाना ॥ १ ॥
नवोद्वार नवदीवश वीराजे। दश ऐ द्वार वीजे दीन छाजे ॥ २ ॥
नीलकंठ नीज दरशन होई। नवोवती गह गह अनहद शोइ ॥ ३ ॥
मनराजा पुलकित होये देपे। अकह अगह अन भो छवी लेपे ॥ ४ ॥
'जन देवकी' गुर भेद बतावा। आपु में आपु वीजे दीन पाश्रा ॥ ५ ॥

× × ×

राग वसंत

चलु सुरति सोहागीनी सुन्य धाम।
जहाँ जोती अपंडित उठत नाम ॥ टेक ॥

यह गंग जमुन दोउ उलटी धार।
सब रोकी पवन जत तन पसार।
इमी होऐ स्वछंद करु चऐठी ध्यान।
तहाँ सब्द अनाहद परत कान ॥ १ ॥

पुनि उरध द्रिस्टी तकु पछीव वोर। वोंह सोहं सुर उगाउ जोर।
जीमी हीम मुरती उर नीर प्यास। तेइ लगत तरनी करन सेवो आस ॥२॥
तीमी हम हमार अवीकार भार। सोइ छुटत जीव भयो ब्रह्मकार ॥
'देवकी' तव सुध सरुप एक। रह्यो व्यापी सकल घट होये अनेक ॥३॥

अंत—

धरयो सरूप अधम हीत तुं हरी दीन दयाल।
पतीत अनेक गह्यौ सरनागती पालक प्रनत क्रीपाल ॥ टेक ॥
सबरी गीध अजामिल गनी कहि दीए वो धाम ततकाल।
वास वदन जपे वो जेइ अवसर हरयौ दुसह उरशाल ॥ १ ॥
सीला परसी रज गइ धाम नीज त्यागी जगत जंजाल।
सुपच चमार कीरात तिन्हें तुम दीन्हे वो भगति रशाल ॥ २ ॥
तीन्हं ते नीच मीच तें व्याकुल आए वो सरन वेहाल।
'देवकी' पतित राषी अब लीजै दसरथ सुत महीपाल ॥ ३ ॥ १५१ ॥

इति श्री सब्द झुलना हींढौल वा चंचरीक कबीरय आरील समास संपूर्ण समत १८८६ समै नाम कुआर मांसे कृष्णपक्षे ससम्यां रवीवासरे दसपत सुगंध राए भाट कै मोकाम बड़का गाँव कौसीके का ॥

विषय—निर्गुण तथा सगुण भक्ति का वर्णन।

टिप्पणी—प्रत्येक पद के अंत में 'देवकी' शब्द प्रयुक्त होने से तथा ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ग्रंथकार का नाम 'देवकीनंदन साहब' माना गया है। ये चिटबड़ागाँव (जिला बलिया) के निवासी थे। गुलालसाहब के शिष्य हरलाल साहब के वंश में तेजधारी साहब के ये पुत्र थे। इनके पर पौत्र वर्तमान महंत राजाराम जी हैं। ये जाति के कौशिक क्षत्री थे। इनके कुछ 'शब्द' इसी ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में लिपिबद्ध सुरतिकृत 'प्रवोध चंद्रोदय' ग्रंथ के आगे भी दिए हैं जिनके अंत में एक 'चतुरमासा' है। इस 'चतुरमासा' के पश्चात् भिन्न स्याही में ग्रंथकार की मृत्यु की तिथि संवत् १९१३ दी हुई है जो संस्कृत के श्लोकों और हिंदी के दोहों में है :—

गुण[3] ससि[1] ग्रह[9] मेकं[1] सम्बतो सुप्रमाणं दिनकर दिन मध्ये श्रीवने शुक्ल नौम्यां।
सुनपत अनुराधे लग्न तूले सुप्यातः तनु तजि ब्रह्मलीनं देवकी नंदनोयं ॥१॥
राम[3] चंद्र[1] ग्रह[9] चंद्रे[1] नवम्यां श्रावणे सिते देवकीनंदने देहा रवौ ब्रह्माहवान ॥१॥

गत संवत उनवीस[19] सत अधि त्रयोदश[13] जान।
श्रावन सीत नौमी तिथी रवी वासर परमान ॥ १ ॥
बुध्यमान गुननिधि चतुर देवकीनंदन उदार।
तजि सरीर स्वतंत्र प्रभु आए मिले करतार ॥ २ ॥
षोणइश[19] शत तेरह[13] अधीक शंवत गत अस्थूल।
श्रावन शुक्ल सुपंड तीथि रवि दिन मंगल मूल ॥ १ ॥
सीया राम पद ध्यान करि गुर पद कमल सनेह।
देवकीनंदन सुगवन करि रामधाम तजि देह ॥ २ ॥
संवत जानहु धीर गुन[3] ससि[1] ग्रह[9] गन द्वीज (?)।
देवकी तजेव सरीर रवि नउमी श्रावन सुकुल ॥

संख्या १०७ ग. शब्द, रचयिता—देवकी नंदन साहब, स्थान—चिटबड़ा गाँव, रामशाला, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—२९९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपिकाल—सं० १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजा राम जी, ग्राम—चिट बड़ागाँव, रामसाला, डा०—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेशायेनमः

॥ राम शब्द ॥

दीजे कान्ह कहा अहै मेरो मोती माला।
हम तुम काली जमुन जल विहर वीह पल संग सकल व्रीज बाला ॥ टेक ॥
नींद न परी भई जुग सम नीसी मोहन कीएवो कवन एह ख्याला।
बार बार आतुर होए मागति बोलत नही कहो गोपाला ॥
तब उरमांह हंसी सील लागत मम तन भइ एह सोच विशाला।
"देवकी" स्यामा फेट गही कर दीन्हें वो हरि विहसि नंदलाला ॥ २ ॥
श्री रघुवीर चरन चीत लए हीं।

अकल अनीह सकल घटवासी रूप अलष दरसए हो ॥ टेक ॥
कामक्रोध मद लोभ मोह भट तीन को जोर नसए हो।
कठीन कुसाज त्यागी या जग को नाम अभय पद पए हो ॥ १ ॥
मन क्रम बचन षीचारी तासु कर हो विनु दास विकाए हो।
जन देव की गुरु देव क्रीपा तै अभी अंतर लच लए हो ॥ २ ॥

+ + +

यह गंग जमुन दोउ उलटी धार।
सब रोकी पवन जत तन पसार।
इमी होऐ स्वछंद करु वपेठी ध्यान।
तहाँ सब्द अनाहद परत कान ॥ १ ॥

पुनि उरध द्रिस्टी तकु पछीव वोर। वोह सोहं सुर उगाउ जोर।
जीमी हीम मुरती उर नीर प्यास। तेह लगत तरनी करन सेवो श्रास ॥२॥
तीमी हम हमार अवीकार भार। सोइ छुटत जीव भयो ब्रह्मकार ॥
'देवकी' तव सुध सरुप एक। रह्यो व्यापी सकल घट होये अनेक ॥३॥

अंत—

धरयो सरूप अधम हीत तुं हरी दीन दयाल।
पतीत अनेक गह्यौ सरनागती पालक प्रनत क्रीपाल ॥ टेक ॥
सबरी गीध अजामिल गनी कहि दीए वो धाम ततकाल।
वास वदन जपे वो जेह अवसर हरयौ दुसह उरशाल ॥ १ ॥
सीला परसी रज गइ धाम नीज त्यागी जगत जंजाल।
सुपच चमार कीरात तिन्हें तुम दीन्हे वो भगति रशाल ॥ २ ॥
तीन्ह ते नीच मीच तें व्याकुल आए वो सरन वेहाल।
'देवकी' पतित राषी अब लीजै दसरथ सुत महीपाल ॥ ३ ॥ १५१ ॥

इति श्री सब्द झुलना हींडोल वा चंचरीक कवीत्य आरील समाप्त संपूर्ण समत् १८८६ समै नाम कुआर मांसे कृष्णपक्षे सप्तम्यां रवीवासरे दसपत सुगंध राए भाट कै मोकाम बड़का गाँव कौसीके का ॥

विषय—निर्गुण तथा सगुण भक्ति का वर्णन।

टिप्पणी—प्रत्येक पद के अंत में 'देवकी' शब्द प्रयुक्त होने से तथा ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ग्रंथकार का नाम 'देवकीनंदन साहब' माना गया है। ये चिटबड़ागाँव (जिला बलिया) के निवासी थे। गुलालसाहब के शिष्य हरलाल साहब के वंश में तेजधारी साहब के ये पुत्र थे। इनके पर पौत्र वर्तमान महंत राजाराम जी हैं। ये जाति के कौशिक क्षत्री थे। इनके कुछ 'शब्द' इसी ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में लिपिबद्ध सुरतिकृत 'प्रबोध चंद्रोदय' ग्रंथ के आगे भी दिए हैं जिनके अंत में एक 'चतुरमासा' है। इस 'चतुरमासा' के पश्चात् भिन्न स्याही में ग्रंथकार की मृत्यु की तिथि संवत् १९१३ दी हुई है जो संस्कृत के श्लोकों और हिंदी के दोहों में है :—

गुण[3] ससि[1] ग्रह[9] मेकं[1] सम्वतो सुभमाणं दिनकर दिन मद्धे श्रीवने शुक्ल नौम्यां।
सुनपत अनुराधे लग्न तूले सुच्यातः तनु तजि ब्रह्मलीनं देवकी नंदनोयं ॥१॥
राम[3] चंद्र[1] ग्रह[9] चंद्रे[1] नवम्यां श्रावणे सिते देवकीनंदने देहा रवौ ब्रह्मासवान ॥१॥

गत संवत उनवीस[19] सत अधि त्रयोदश[13] जान।
श्रावन सीत नौमी तिथी रवी वासर परमान ॥ १ ॥
बुध्यमान गुननिधि चतुर देवकीनंदन उदार।
तजि सरीर स्वतन्त्र प्रभु आए मिले करतार ॥ २ ॥
चोणइश[19] शत तेरह[13] अधीक शंवत गत अस्थूल।
श्रावन शुक्ल सुषंड तीथि रवि दिन मंगल मूल ॥ १ ॥
सीया राम पद ध्यान करि गुर पद कमल सनेह।
देवकीनंदन सुगवन करि रामधाम तजि देह ॥ २ ॥
संवत जानहु धीर गुन[3] ससि[1] ग्रह[9] गन द्वीज (?)।
देवकी तजेव सरीर रवि नउमी श्रावन सुकुल ॥

संख्या १०७ ग. शब्द, रचयिता—देवकी नंदन साहब, स्थान—चिटबड़ा गाँव, रामशाला, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—६¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—२९९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपिकाल—सं० १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजा राम जी, ग्राम—चिट बड़ागाँव, रामसाला, डा०—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेशायेनमः

॥ राम शब्द ॥

दीजे कान्ह कहा अहै मेरो मोती माला।
हम तुम काली जमुन जल विहर चीह पल संग सकल ग्रीज वाला ॥ टेक ॥
नींद न परी भई जुग सम नीसी मोहन कीएवो कवन एह प्याला।
वार वार आतुर होए मागति वोलत नही कहो गोपाला ॥
तव उरमांह हंसी सील लागत मम तन भइ एह सोच विशाला।
"देवकी" स्यामा फेट गही कर दीन्हें वो हरि विहसि नंदलाला ॥ २ ॥
श्री रघुवीर चरन चीत लए हौं।

अकल अनीह सकल घटवासी रूप अलप दरसए हो ॥ टेक ॥
कामक्रोध मद लोभ मोह भट तीन को जोर नसए हो।
कठीन कुसाज त्यागी या जग को नाम अभय पद पए हो ॥ १ ॥
मन क्रम बचन वीचारी तासु कर हो विनु दास विकाए हो।
जन देव की गुरु देव क्रीपा तै अभी अंतर लव लए हो ॥ २ ॥

+ + +

अंत—

॥ रेषता ॥

व्यापक सम सकल जगमांही। षलकाषाली कहूँ, माही।
असुर सुर नाग नर नारी। संभु सनकादी मुनि भारी ॥ १ ॥
सुर ससी नषत नभचारी। वरुन जम इंद्र धनुधारी।
कुप अरु नदी नद गंगा। समुंद मही जलद गज संगा ॥ २ ॥
गगनगिरि वाग वनवानी। अगीनी ब्रह्मंड पवन पानी।
पलक छन पहर दीन राती। मांस पछ वरष जुग जाती ॥ ३ ॥
प्रान मन ईस हो तुमही। इंद्री गन वीषए जुत जु मही।
नीर्गुन नीरुपाधी अविनासी। सगुन सोइ रूप सुपरासी ॥ ४ ॥
षाली नहीं सकल घट डेरा। वेद बुध संत जन टेरा।
"देवकी" अधम नीज जानी। राषी लेहु फंद भ्रम मानीं ॥ ५ ॥

इती श्री सब्द भूलना रेषता आरती समाप्त संपूरन समत १८८६ समै नाम जेष्ठ मासे शुक्ल पछे नवम्या सुभिह इपति वाशरे दसषत सुगंध राए भाट के

विषय—

इसमें कृष्ण लीला तथा अध्यात्म संबंधी पदों का संग्रह है।

संख्या—१०७ घ. कुंडलिया, रचयिता—देवकीनंदन साहब (स्थान चिटबड़ा गाँव, रामशाला), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६३/४ × ५१/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४, पूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १८८६ वि० के लगभग, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, ग्राम—चिटबड़ा गाँव, रामसाला, डा० चिटबड़ा गाँव, जि०-बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः। कुंडलीआ ॥

राम नाम मन सुमीरीये त्यागी जक्त बकवादी ॥
त्यागी जक्त बकवादी हरीदम ह्रीदै लय लावै ॥
काम क्रोध मद लोभ ताही को जोर नशावै ॥
आदि अंत और मध्य सदा प्रभु को ठहरावे ॥
आतम राम सरूप आपु मे आपु लषावे ॥
देवकी अकल अनीत सोइ ब्रह्म स्वरूप अनादी ॥
राम नाम मन सुमीरीये त्यागी जक्त बकवादी ॥ १ ॥

अंत—

काल अहेरी जक्त वन नारी फंद ते घेरी।
नारी फंद ते घेरी स्वान उरमी ललकारत।
क्रोध अनल दव लाए चहूँ दासी आतुर जारत।
कठीन धनुष कर गहे ले प्रचंड समें सर।
मृग जीव नहीं लपत चपत गइ आइ सीस पर।
"देवकी" वीसरी सकल सुधी जब डारे गही डेरी।
काल अहेरी जक्त वन नारी फंद ते घेरी॥ १९॥
सीता पती पद कमल रज रापहु ह्रीदय बसाइ।
रापहु ह्रीदय बसाइ ताहा ते सुरती न टारो।
अंजन करी सुपमानी वेगी वोही द्रीष्टी उघारो।
पीआ कै पोजी विचारी रैनि दिन ध्यान लगाइ।
इंगला पिंगला सुपमना त्रिवेनी जाइ नहाइ।
"देवकी" त्रिकुटी अमीअ रस पीवत छकी न अघाइ।
सीता पती पद कमल रज रापहु ह्रीदय बसाई॥ २०॥
इति श्री कुंडलीआ संपूर्ण॥ समाप्त॥

विषय—

सांसारिक विषयों को त्याग कर तथा अपने शरीर के अंदर की कुवृत्तियों पर विजय प्राप्त कर रामनाम स्मरण करने का उपदेश किया गया है।

संख्या १०८ इंद्रजाल, रचयिता—देवदत्त, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

जंत्र तांबे के पात्र में लिखि के मसान में गाड़े तो शत्रु दिमाना होय हाथ नहीं आवता होय दोऊषं लिखै।

अंत—

विधि

गोबर को भैसा कीजै दूध सोन्हवावै पाचऊ दवा के म्हठा में धरिजै शत्रु की घर की तरफ आको मोढ़ो करै पीछे ऊद लै जाय गोवर लै जाय ओऊद निकारि आके घर के तरफ फेंके भस्म होई। इति थाइं इंद्रजाले मंत्र भेद संपूर्ण।

विषय—

नाना प्रकार के फल देने वाले जंत्र, मंत्रों का संकलन है।

संख्या १०६ वाणियाँ, रचयिता—देवलनाथ, इनकी वाणियाँ संख्या-५९ के बिवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या ११०. पद, रचयिता—देवाराम बाबा (स्थान—करजा, आरा), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—११½ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, (अनुष्टुप्)—१८०, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान— पं० साधुशरण तिवारी, स्थान—सिहाकुंड (सीताकुंड), डा०—हलदी, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशायनमः

चरण कमल रज शीर पर मेरो मन वच ते हरी चेरो।
जब गजराज के ग्राह लयो है पछीली वैर नीवेरो॥
आरत होइ हरिनाम पुकारे बहुत कीयो जब भेरो॥ १॥
मक्र चक्र ते मारी दीयो है गजही के थल हीय वेरो।
ताके धाम दीयो प्रभु अपना जानत जन बहुतेरो॥ २॥
गाढ़ परे जय द्रौपद सुता पर तव तुम्हरे ओर हेरो।
चीर वढ़ाइ अमार लगायो राज सभा रहे घेरो॥ ३॥
बालापन ते भूली गयो है सुधी नारही हरिकेरो।
अबतो लगन राम से लागी मन माला हीया फेरो॥ ४॥
"देवाराम" जी की जानी आपनो करहु नाथ मति देरो।
भक्ति छाढ़ी अवर ना जची हो करहु सदा हीय डेरो॥ ५॥
अब मगन भइल मन मोर मुरली धुनी सुनी के।
तन तुंपक थीत चीलीगी वारो ज्ञान पलीता जोर॥ १॥
अनहद वाजा बहु बीधी वाजे को कही सकत अनोर।
जाके श्रवण बीच शब्द परतु है ताके प्रीती न थोर॥ ३॥
"देवाराम" हीआ अधीआर सतगुर कीन्ह अजोर॥ ४॥

× × ×

अंत -

राम बिना धृग जीवना जो सुमिरन नाही।
का ब्राह्मण का छत्रीया का वैश्य कहाही।
का वनीआ बहु रंग वने यन मे यगमामी॥ १॥

का कोइ सुप जान चढ़े चवर शीर ढारी।
हय दल रथ दल गजदल पयदल बहुता ही ॥ २ ॥
का राजा का रंक कोई का जाती सराही।
अंतकाल छार होहुगा कीट कुकुट पाही ॥ ३ ॥
'देवाराम' रघुनाथ भजो तेजु सुत वीत नारी।
स्वप्न तुल्य जानो सभ कोइ संग न जाही ॥ ४ ॥

विषय—

भक्ति संबंधी पदों का संग्रह।

संख्या १११. नारदनीति, रचयिता—देवीदास व्यास, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—११ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०० वि०, लिपिकाल—४ चैत कृष्ण, १८६८ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ अथ नीतिशास्त्र लिष्यते ॥

दूहा

विघ्न राज पद युग बिमल नमौं चितय धरि चित्त।
करूं नीत भाषा अर्थं नारद कहें कवित्त ॥ १ ॥

× × ×

महाराज करणेस सुत अनग अनूआधार।
हुकम कीयौ टीका रची भाषा व्यास विचार ॥

संमत सतरह से समैं वीसै करण विवेक रसिक राज कारण रची टीका अर्थं अनेक ॥

मध्य—

फेर पूछौं राजा पुरवासी लोक एक मतैं होई तासौं विरुद्धतौ नाहीं होई है ॥ अरु पर लोक विरुद्ध तौ नहीं है ॥ किसउ वास तैं विरोध करै वैरीयौ कैं वैरीयां के रुजगार सौं विके गए होइ ॥ वैरीयौं कौ रोजगार ले तद विरोध करैं हियै में सचेत न होइ ॥ तस्मात् राजा या वात की सावधानी रापौ हौ कि नांहीं ॥ फेर पूछौं राजा वैरी दुर्वल निवलौ पड्यौ अपने वल करि दवायौ कि नांहीं ॥ बलवंत वैरी अपनै वलकरि या मंत्र वलकरि अपने वश्य करीयै ॥

अंत—

इति श्री महाराज कुंमार अनूपसिंह जी करिता भाषा व्यास देवीदास कृत सभापर्वीक विचदध्याय टीका ॥ संवत् १८६८ नृपे शाके १७३३ मिती चैत्र मासे कृष्ण पक्षे तिथौ ४ चंद्र वासरे लिखतम् प्रोहित जगराम ज्ञात सनावठ वासबीं कोल्यांको को कोटा नगर मध्ये लखा पीतं गुसाईं जी श्री श्री १०८ श्री दयागिर जी ॥ श्रीरस्तु ॥

विषय—

'नारद नीति' महाभारत के सभापर्व के एक अध्याय का रूपांतर है। राजसूय यज्ञ के अवसर पर नारद ऋषि ने युधिष्ठिर महाराज को राजा के धर्म, कर्तव्य और नीति का जो उपदेश दिया था उसी का इसमें वर्णन है।

संख्या ११२. अंगदवीर (सत्तर रेखता), रचयिता—देवीदास (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—७३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद जी साहु गोलवारा, मोहल्ला, सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गनेस जी सहए। श्री अंगद वीर सत्तर रेपता ॥
अंगद वीर सो राम जी ने कहा लंक जइऐं।
रावन को सपुन सख्त नरम कही सुनइऐं।
दन हौ जानते हौ बहुतक सीषइऐं।
एतन हमारे काम को मेहनत कर अइऐं।
ले अइऐ सीतव पवर इसन से के वीच ॥
श्री बचन सुन सो स···फत हुआ हीआ।
अंगद जाना राम ने मुझपर करम कीया।
सभ पदीमो के बीच मो मुझसे रफ दीआ।
तस्लीम करी सीतव सो लंक कोर हलीआ ॥
दील मो नमी कछु पौफ पवर इसन से के वीच ॥
तीफलो के साथ बजी जो 'रावनक' एक पीसर।
आपुस मेन दोचर हुइ दोनों की नजर ॥
दोनों महावली वो जवानी मो सरपसर।
बातों में गुफत गो हुइ आपुस में एक दीगर।
तीसने उठाअ पाय उपर इसनसे के बीच।
अंगद ने पाय पकर फीराया सीस पर ॥

अंत—

रावन सी देषी आपु उठ एह पुकार भी।
मेरा कदम गहे नहीं तेरा उपर भी।
श्रीराम जी क पाय पकर तीसे उवभी।
बैठ षजील तष्त उपर इसन से के बीच॥
रोने कसी कस्त रूप जो रावन कतद हुआ।
जय महनीम रोजक अवल रद हुआ।
अंगद ने फीरी तीससे कही पदवष्त केय हुआ।
वे राम जी के वंदगी चहे अदद हुआ।
मुसे न बेहुआ है दीगर इसन से के बीच॥
अंगद ने सष्त नरम बचन तुसे बहुत कहा।
मन नहीं षवीस सपपत मो वझी रहा।
अगद चलत है जहा षोद पद पुसमह।
लसकर मो आए कैसो कदम राम की गह।
जीसको भी सेवते हैं अमर इसन से के बीच॥
'ए देवीदास' ह रफ करो आवत मम तुम॥

× × ×

विषय—

रावण की सभा में अंगद की वीरता का वर्णन किया गया है।

संख्या ११३. नागलीला, रचयिता—द्विजप्रयोग (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—१०, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। अथ नागलीला लिख्यते॥ छंद लावनी॥

सात बरस का हुआ कन्हैया पेलै गोदी वालो में
पाग केसरी मोर परवौआ मोती झलकै कानो में॥ १॥
वाकी भौंह पर हुआ है आसिक जुलफ देत झाई छिम में
स्याम वदनपर पोर विराजै चन्द छिपे मानो वादल में॥ २॥
कमल नेन नासिका वेसर धरे वासुरी अधरों में
गले विच मोतिन्ह के माल हीरा लाल लगे जिसमें॥ ३॥
भुज बीच जोसन के जोड़ा वन माला सोहै उर में
कड़ा बीच हाथों के सोहै सुभग लगे हीरा जिसमें॥ ४॥

पाव पैजनि कसे काछनी पीत वसन भावे मन में
लटक चाल झोके से चलता थिरिक-थिरिक नाचे बृज में ॥५॥
एक समै खेलन को निकला ग्वाल वाल लिन्हें संग में
गया तिर जमुना के मोहन गुलफुल्ला देखा वन में ॥ ६ ॥

अंत—

हलधर हाथ गहे प्रभु के ढिग,
वाम भाग नागिन सोहे।
बीच कान्ह काली के ऊपर,
नटवर भेप धरे विहसै।
अद्भूत रूप देपि बृज वासी,
मन मोहन महिमा वरनै।
चढे विमान देव गुन गावै,
अरि गजन कहि नाम धारे ॥ ५१ ॥

द्विज प्रयोग प्रभु को यह लिला छन्द लावनी गान करै मध्धुर मूर्ति नटवर गिरधारी।

विषय—कृष्ण की नागलीला का वर्णन।

टिप्पणी—रचयिता का नाम 'द्विज प्रयोग' माना गया है। परंतु हो सकता है, यह 'द्विज प्रयाग' हो। 'द्विज प्रयोग' कुछ बेढंगा सा लगता है। 'प्रयाग' नाम होते ही हैं। लिपिकार के हस्तदोष से 'प्रयाग' का 'प्रयोग' हो गया जान पड़ता है।

संख्या ११४ क. धरनीदास जू को संकट मोचन, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४$\frac{1}{3}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के भीतर, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डा०—चिटबड़ा गाँव, जिला—बलिया

आदि—

धरनीदास जू के संकटमोचना ॥

संकट मोचना हरीनाम। सब संत जन वीस्राम ॥
जे मनु समीरु करता राम। जाके अचल पदत्रीवान ॥
भरी पूर लोक लोक। जामें हर्ष व्यापै न सोक ॥
जहा भौन भुसाकर। तहा कनक भरत न दर ॥
जहाँ भरम कह संदेह। तहां आपु धरीआ देह ॥
केती चौगुनी चलि जाहिं। सतसंग बीनु सतनाहिं ॥

सतसंग भौ चीत चेत । भगततावली कहि देत ॥
प्रहलाद संकट पाघ । नही लगी ताती घाव ॥

अंत—

पीता परम रंको बंक । राम प्रताप भए नीह संक ॥
अल्ह जमाल जंगी जानी । जीन्ह के संग सारंग पानी ॥
नरसीघ पास कालु कीर । एतौ महामती के धीर ॥
नीर्मल नामदेव कवीर । हींदु तुरुक के गुरु पीर ॥
नानीक चघु भुज की बनी । जीन्ह अपनाइ लीन्हो धनी ॥
नीमानंद निजु कै गही । जैसी रही तैसी कही ॥
नेपा नैन गोवर्धनु । सोवत जागते तन मनु ॥
वलक की पातसाही डारी । प्रभु को मिलो हांकि प्रचारी ॥
ग्यानी गोवींदा मुरारि । प्रभु को मिले तनमन मवारि ॥
षचन मुर्तजा वाजीद । जिनके काया में महजीद ॥

(मसजिद ?)

दादु बूढना कमाल । ऐतौ भए निपट निहाल ।
तुलसी सूर नाभा भगत । जिन्ह के सुजस वाढौ जगत ॥
कान्हा कुंवरा हरी वंस । इन्ह मो वडो हरी को अंस ॥
मीरा पदुमा कर्मा सीता । तिन्ह हरि भक्ति से भव जीता ॥
देव इंदुनाथ अतीत । जीन्ह के राम नाम प्रतीत ॥
स्यामा वीस्न माधव चार्ज । कीन्हो धना जीव को कार्ज ॥
परमानंद माधवदास । उन्ह की भली पुजी आस ॥
पोजी टीके टीकमदास । चहुँदीसी फइली रही सुबास ॥
अनंता नंद उपजो अग्र । जीन्ह को वनो काज समग्र ॥
सर "वनोदा नंद" । जीन्ह की दश्रा सव ॥

+ + + +

अपूर्ण

विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन भक्तों का गुणगान किया गया है ।

संख्या ११४ ख. महराई गोसाई धरनीदास, रचयिता—गोसाई धरनीदास जी, कागज—देशी, पत्र–२, आकार ८×३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित राधावल्लभजी, स्थान और डा०—रेवती, जि०—बलिया

आदि—

महराई गोसाइ धरनिदास ॥

शुमीरी शुमीरी मन स्रीजनहार । जीन्ह कैला सुरनर सकल पसार ॥
रवि ससी अग्नी पवन कैला पानी । पानी पानी जीश्रा जंत अनीवनी बानी ॥
धरति समुद्र वन पर्वत सूमेरु । कमठ फनिंद्र इंद्र वैकुंठ कूबेरु ॥
गुर कै चरन रज सीरहि चढ़ाए । जीन्ह लीन्ह भव जल बूड़त बचाए ॥
देवता पितर प्रनवो कर जोरी । सेवा लेव मानी अलप बुद्धि मोरी ॥
जाहा लेह जगत भक्त अवतार । वकसी वकसी लेव गुनाह हमार ॥
तीरथ वरत चारी धाम सालीगराम । हाथे माथे परशी करैलो प्रनाम ॥

वीसराम

एकदिन मन मोर चहूल पहार ।
गाइ के गोहडी देषो बहुत पसार ।
अगीनीत गाइ भाइ गनी न सीराई ।
दहू दीस गोधन रहल छीती छाइ ॥
आकरी बीकरी केत वोसरी दोहान ।
बहिला गाभीनी कत बहुत बीआन ।
कत सीगहारी कत सारील अतोह ।
मन भरी भरी दूध गाइके संदोह ॥

बाछी आछी आछा देषो बाछारे घछेल । लेरआ वछरआ मगन मन षेल ॥
लाली गोली धवरी पीअरी कत कारी । सवरी कैइली कत कवरी टिकारी ॥
कत सीगहारी देषो कतरे भुंडेरी । गोरूआ चरत भैया नीपट नीवेरी ॥
सरभैला धरती जे उपर अकास । महरा रषल एक गाइ कै गोआस ॥

वीस्राम

ताहा उपजली घास लहलहि छहरी सीतल पनीवास ।
महरा न देषो वोहि ठहरा मन मोर भैल उदास ॥

पावदुनो पौआ परम झलकार । द्रूरूं हुरसामत न लावल हंकार ॥
लंबहरी कछीआ पतरी करीहाव । पीअरी पीछौरी कटी वरनीन आव ॥
चंदन की षोरीन्ह भरल आठो आंग । धारा अन गनीत बहुत जस गांग ॥
माथे मनी मकुट लकुट सुठी लाल । झीनवा तीलक सोभै तुलसी क माल ॥
नीकी नाक पतरी ललनी यदि आपी । मठूक मझार एक मोखक पाषि ॥

प्रफुलीत वदन त मधुर मुसुकात। ऐही छवी उपर धरनी बलिजात ॥
मन कैला डंडवत भूआ धरी सीस। हाथे माथे देषि प्रभु देलहि असीस ॥

वीस्राम

महरा हाथ वीकइ लहि मनूआ भए महरा के दास।
दूसर दूप मेटइ लहि साधु संघति सुपवास ॥
महरा कै डींगर कहेला परचारी।
देषहू चतुर नर हृदैय वीचारी ॥
इहो जनि जानहू केहू मसलक बात।
बूझला परीहिय नीसी अरअतात ॥
जब लगी म देषो धो लोग हंडी चरवाह।
जनु मनु परी गैला जल अवगाह ॥

सोची सोची मनूआ रहल मुरझाइ। ऐहि अवसर कान्ह मुरली बजाइ।
मुरली की धुनी सुनी मन भैला पूसीहाल। रहली भीछुक जनु भैलो भुअपाल ॥
धुनी सुनी मनुआ उपर चली गेल। तहवा देषल एक अदबूद पेल।
बीना रवी ससी ताहा होला उजियार। रीमी झिमी मोतीआ बरीसु जलधार ॥
गरजैला सुघन घन सुनत सोहाए। दहू दीस वीजुरी चमकी चली जाइ ॥
झरी झरी परत सुरंग रंग फूल। फूले फूले देषै लो भवर एक भूल ॥
चक्र एक फीरत उडत एक सांप। ताहा नही करम धरम पुन्य न पाप ॥

वीस्राम

तापर ढाठ देषीजे एक महरा अभरन वरनी न जाए।
मन अनुमान करत हो शुरत सो पति आइ।
पुन के बदल भैआ दे बहुत पून।
पून के दीहल से हो पाप न पून ॥
महरा का गौअन्ह करहू जनी धुन।
महरा झरीही पुनी ताहु सकचून ॥
महरा का गोअन्ही जे करीहि प्रतीपाल।
महरा करीही पुनि ताहु के नीहाल ॥
छोढि सुटि जीआ जंतु महरा कै गाइ।
जनी कैउ मारै भैया जनी केउ पाइ ॥
जैसन अपन जीव तैसन पराइ।
हाड चाम मासु नहि मानूष अहार ॥
हृदया धरी अधरी सुमीरो लेहु राम।
काहे धन पोअहु तेजहु काहा धाम।

साँच कहै साधुजन झूठ कहै चोर ।
दातन्ही के सुष जनी करहु पटोर ॥
साच बचन मन धरी लेहु पूनी झूठ देहु फटकी पछोर ।
ऐसन समझा पुनी नही पाइब अवरीक जनी करू भोर ॥
करुआ जो लागेला कहल कछू मोर ।
करी न सकहु जीअ अपन अटोर ॥
अकसर जल न दोसर नहि केउ ।
दीन चारी भैआ करी करी लेउ ॥
पानी को बुल बुला उपजु बीनसाइ ।
देह धरी धरी पुनी मरी मरी जाइ ॥
छोहनी अठारह जे छपन करोर ।
केउ न ले गैला संग सहन बटोर ॥
सोंन रूप अथर पथर हथीआर ।
केउ न ले गैला संग सुइआ मेकदार ॥
गढ मढ महल बहलै है हाथी ।
इह उतनाही केउ संग लै साथी ।
जेउ नीज जानी ले कुल पलीवार ।
इह उतनाही केउ संग जैनीहार ॥
भुइ मरकर मुठि अटकल भटकी रहल संवसार ।
जीन्ह जीन्ह साधु संवती धरी सो भैए भव जलपार ॥
महरा के महरैआ 'भैया' धरनी बरनी नहि जाइ ।
कहत सुनत सुष उपजै भाव भक्ती अधीकाइ ॥

महराइधर

— संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

योगसाधानुकूल एक आध्यात्मिक रूपक का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है :—

"एक दिन मेरा मन पहाड़ (त्रिकुटी) पर चढ़ा । उसने वहाँ नाना प्रकार के गौओं (चित्तवृत्तियों) के समूह को विचरते देखा । उस समूह में अगणित गायें थीं जिनसे दसों दिशाएँ आच्छादित थीं । इन गायों में कितनी ही वहिला, कितनी ही गाभिन और कितनी ही व्याई हुई थीं । कुछ तो सींगवाली और कुछ बिना सींगवाली थीं । इनमें छोटे बड़े तथा मध्यावस्था की बछियाँ और बछड़े थे । इनके लाली, गौली, धवरी, पीली आदि अनेक रंग थे ।

'महरा (गोपालक, यहाँ भगवान) ने नीचे धरती और ऊपर आकाश दोनों को ही गायों के विचरने का स्थान बनाया (योग में त्रिकुटी से नीचे शरीर के भाग को धरती माना गया है और ऊपर के भाग को आकाश। तात्पर्य यह कि भगवान ने समस्त शरीर को इंद्रियों का या चित्त वृत्तियों का निवास स्थान बनाया है। आकाश में गायें नहीं चर सकतीं, परंतु यहाँ शरीर के भीतर के आकाश से, जो योगानुसार है, तात्पर्य है) वहाँ (त्रिकुटी) पर उत्तम घास लहलहा रही है तथा वहाँ शीतल जलाशय भी है (त्रिकुटी में अमृत झरने की बात कही जाती है। योगानुसार जब यहाँ तक की क्रिया हो जाती है तो एक अलौकिक सुखानुभव होता है और भूख प्यास दोनों की तृप्ति हो जाती है। 'घास' और 'सीतल पनिवास' से यही संकेत किया गया है); मन ने यह सब देखकर जब महरा को नहीं देखा तो बड़ा उदास हुआ ; परंतु थोड़ी ही देर पश्चात् दो पावों के नूपुरों की बजने की आवाज (अनाहद शब्द जो यहाँ से सुनाई देता है) आई। एक साकार रूप भी दृष्टिगोचर होने लगा जिसकी पतली कटि थी और जो लंबी काछनी (धोती) कसे हुए था तथा ऊपर से पीला दुपट्टा ओढ़े हुए था। उसकी कटि का वर्णन नहीं हो सकता (इस स्थान पर गोलोक की स्थिति मानी जाती है जहाँ श्री कृष्ण भगवान का नित्य निवास है। ऊपर किया गया वर्णन श्रीकृष्ण का ही है)। सारा अंग चंदन की खौर से पुता हुआ था जो अनंत गंगा की धाराओं की शोभा को धारण करता था। मस्तक पर मुकुट और हाथ में सुंदर लाल लकुटी थी। भाल में सूक्ष्म तिलक तथा गले में तुलसी की माला सुशोभित थी। सुन्दर नासिका, पतले होंठ और बड़ी बड़ी आँखें थीं। मुकुट के बीच में मोर का पंख लगा था। प्रफुल्लित मुख पर मुसकान विराजमान थी। फिर क्या था, उस शोभा के ऊपर 'धरनी' (रचयिता) ने अपने को निछावर कर दिया। मन ने भूमि में शिर रखकर उस मूर्ति को प्रणाम किया। प्रभु ने मस्तक के ऊपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया'।

इसके पश्चात् रचयिता कुछ उपदेश करके कहता है कि यह कोई कहानी मात्र (मसलक बात) नहीं है। जब तक चरवाहा (गोपालक भगवान) को इस मन ने नहीं देख लिया तब तक वह अगाध (अवगाह) जल में (भवसागर में) तैर रहा था। ऐसे अवसर पर जब कान्हा ने वंशी बजाई तो मन अत्यंत आनंदित हुआ। मानों एक भिक्षुक को राज्य प्राप्त हो गया हो। ध्वनि को सुनकर मन ऊपर (सहस्त्रदल कमल की ओर) चला गया। वहाँ तो उसे एक अद्भुत ही खेल देखने को मिला। वहाँ बिना सूर्य चंद्र के भी प्रकाश था। रिमझिम जलधारा मोती के अनुरूप बरसती थी। सुनने में प्रिय लगने वाला सघन घन गरजता था। दसों दिशाओं में बिजली चमक रही थी। वहाँ नाना प्रकार के सुरंग फूल झड़ पड़ते थे। जिनमें वाह ! एक भँवरा (मन) भूल पड़ा (यहाँ पर मन का अस्तित्व नहीं रहता)। वहाँ एक चक्र फिर रहा था, जिसकी ओर एक साँप (कुंडलिनी) उड़ा हुआ चला जाता था। वहाँ न तो कर्म धर्म ही था और न पुण्य पाप ही। उस पर एक महरा खड़ा था जिसका कोई वर्ण नहीं था और जिसका कोई वर्णन भी नहीं किया जा सकता था। उसकी प्रतीति का अनुमान मन को तभी लग सका जब वह सुरति में परिणित हो गया।

इसके आगे रचयिता का कहना है कि इंद्रियों तथा चित्तवृत्तियों का खून (निरोध) नहीं करना चाहिये। यह सब महरा (भगवान) की गायें हैं जो स्वयं ही उनको मिलाकर उनका चून (सकचून) या आटा (सुधार) करता रहता है। इनके ठीक ठीक पालन करने से ही वह मनुष्य को निहाल कर देता है।

संख्या ११४ ग उधवा प्रसंग, रचयिता—धरनी दास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी। दाता—श्री सरल चौबे और श्री रामनरेखन चौबे स्थान और डा०—सहतवार; जिला—बलिया

आदि—

उधवा प्रसंग

धरनी धरन करम कली हों कछुवो न काम।
मन वच क्रम भजु हों करताराम ॥ १ ॥
धरनी धुवा धवराहर हो धुरी के धाम।
अइसन जीआन जगत में हों वीनु हरीनाम ॥ २ ॥
बन मृग केर अहेरीआ हो वड वटवार।
धरनी मन म्रीग जो वधे हो घनी अवतार ॥ ३ ॥
धरनी जीव जनी मारहु हो मासु जनी पाहु।
नागे पाव ववुर बन हो नहीं निरवाहु ॥ ४ ॥
धरनी यह मन म्रीग भैला हो गुर भैला व्याध।
वान सवद हींये छुभी गैला हो दरसन साध ॥ ५ ॥
धरनी जे हो घनी वीरहीनी हो धरइ न धीर।
वीहवल वीकल दुपीत चित हो दुवर सरीर ॥ ६ ॥
धरनी धीरज न रहे हो वीनु बनवारी।
रोअत रकत के आसुन्ही हों पंथ नीहारी ॥ ७ ॥
धरनी पीअ परवत पर हो चढ़त डेराऊँ।
कवही कै पाव डगमगे हो कतही न ठाऊँ ॥ ८ ॥
धरनी धरकत ही अजनु हो करके करेज।
ढरकत भरी भरी लोचन ही पीअही न सेज ॥ ६ ॥
धरनी धवल धवराहर हो चढ़ी चढ़ी हेर।
आवत पीअही न देपो हो भइली अवेर ॥ १० ॥
धरनी म्रीग से हो जीवन हो हो जाउ वो हाय।
पर रे पुरुष तर आंचर हो दीहल डसाइ ॥ ११ ॥

धरनी धन धन से हो जीवन हो मीलव जे नाह ।
संग पवढी सुप वेलसव हो सीर धरी वांह ॥ १२ ॥

धरनी ध्यान तहा धरु हो पुलए केवार ।
नीरपी नीरपी परीपत रहु हो वारंवार ॥ १३ ॥

धरनी धइ रहु हरीव्रत हो परी हरी मोह ।
धनी सुत वंधु वीभव जत हो अंत वीछोह ॥ १४ ॥

धरनी धोप न लाइअ हो अपनी ओर ।
प्रभु सो प्रीत नीवाहव हो जीवन थोर ॥ १५ ॥

धरनी अरध उरध भैली हो जोती सरुप ।
देपल मनोहर मुरती हो रूप अनुप ॥ १६ ॥

धरनी करम करै नही हो डरइ न पाप ।
सत गुरु जीन्हही लपावल हो अजपा जाप ॥ १७ ॥

धरनी फीरही देसंतर हो धरी धरी भेस ।
कोइ कोइ देपही देहंतर हो गुरु उपदेश ॥ १८ ॥

धरनी धनी गनीका भैली हो रसीआ राम ।
सहज सुरंग रंग भीनी गैला हो वनी गैला काम ॥ १९ ॥

धरनी धनी करे वालंमु तो वरनी न जाइ ।
सनमुप रहत रहनी दीन हो मीलत न धाइ ॥ २० ॥

धरनी जीन्ही पीअ पाएउ हो मेटी गैला दंद ।
उधवा उरध सुर गाएउ हो हीदआ अनंद ॥ २१ ॥

धरनी चहु दीस चरचीअ हो करीए पुकार ।
न हम काहुक केउ हो केउ न हमार ॥ २२ ॥

धरनी धाए चलहु जनी हो चीकनी वाट ।
पोटे दाम कवनी सीधी हो, नागरी हाट ॥ २३ ॥

धरनी पलक परे नही हो झलके सोहाए ।
पुनी पुनी पीअत परम रस हो, प्यास न जाए ॥ २४ ॥

धरनी धन तन जीवन हो रहेउ की जाउ ।
हरी के चरन हीरदये धरी हो हेतु वढाउ ॥ २५ ॥

गोरीआ गरव करहु जनी हो गोरे गात ।
काली परो झरी जइहो पीअरे पात ॥ २६ ॥

धरनी वीलपी वीनती करे हो सुनहु मुरारी ।
सव अपराध छेमो करु हो सरन तोहारी ॥ २७ ॥

अंत—

हाथी ठेल हठीले हो सीपहसलार ।
दीन चारी चहल पहल भैला हो पुनी सुपछार । २८ ।
घरन अैठली पनीआ हो दुइ तरुआरी ।
सोतन पनीआ पेवारीउ हो आगी ओकारी । २९ ।
घरनी धन धन से हो धनी हो कुल उजिआरी ।
जाकर वहीआ धइल प्रभु हो हाथ पसारी । ३० ।
घरनेस्वर व्रत चीत धरु हो धरनीदास ।
तासु चर वली वली जहाँ हो प्रेम प्रगास । ३१ ।
घरनेस्वर गुन गावल हो धरनीदास ।
जहाँ जैदेव नाम देव हो ताही देहुवास । ३२ ।
घरनी अपम मरम कलि हो कहीअै काही ।
जाननी हार सो जनी हे हो जस कछु आही । ३३ ।
उधवा कहहु से सुधवा हो तपती बुझाये ।
घरनी धनी दरसन वीनु हो अती अकुलाये । ३४ ।
ऊधव ही देहु देही ढुधवा हो कुलहक चाइ ।
घरनेस्वर ही लेआवहु हो वेगे जाइ । ३५ ।
जोवन रतन जतन करी हो धरेउ जोगाए ।
घरनेश्वर येही अवसर हो वेलसहु आए । ३६ ।
हीदुं तुरूक जनी छोडहु हो धरम इमान ।
घरनीदास पुकारै हो मउती नीदान । ३७ ।
घरनी अतीथ कहाएउ हो धन वेवहार ।
सहजही सपने वीसरी भैला हो परूवनहार । ३८ ।
धरमारथ पथ चढ़ी के हो करम कीन ।
जनु घर घोरवा अछते हो गदहा पलान । ३९ ।
काहु के वहुत चीभौ वल हो काहु परीवार ।
घरनी कहत हमही वल हो राम तोहार । ४० ।
सवुजा सोभीत सीर पर हो दुइ समसेर ।
तेही तन उपर देखीए हो सटीअक ढेर । ४१ ।

समाप्त

प्राप्त प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन किया गया है ।

संख्या ११४ घ. पद, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा काशी। दाता—श्री सरल चौबे और श्री रामनरेखन चौबे, स्थान व डा० सहतवार, जि०—बलिया

आदि—

राग गउरी

सुमिरो हरी नाम ही बौरे।
चक्रहु चाही चले चीत चंचल मुल मंत्र गही नीस्चल कौरे॥
पाँचहु ते परीचे करु प्रानी काहे के परत पचीस के भौरे॥
जौ लगो नीरगुन पंथ न सुझे काज कहाँ मही मंडल दौरे॥
सब्द अनाहद लषी नहीं आवै चारौ पन चली एसही गौरे॥
जौ तेली कर बैल बेचारा घरही कोस पचासेक भौरे॥
दया ध्रम नही साधु की सेवा काहे के मोजनमे घर चौरे॥
'धरनीदास' तासु बलिहारी झूठ तजौ जीन्ही सांच ही धौरे॥ १॥

सुमीरो एक राम गोसाईं।
जगुधंधा परी हरी अंधा न गहु गुर चरन सरन मन लाइ।
नीरलज्या लरीकन्ही संग डोले तब हुआह होती कहाँ चतुराई।
अब धनी सुत जन धन मन रातो सांच के मानत झूठ सगाई।
जीव दआ सत सुकृत धरी के तजी ममीता हमीता हलुकाई।
काम क्रोध त्रीस्ना फल तोरो तब अम्रीत रस पीअहु अघाई।
जोगी पंडीत दानी कवेस्वर एह सभदेह धरै फीरी ग्राइ।
'धरनीदास' कहै गुरु गमी भई भग्ती वीना भौ पार न जाइ॥ २॥

दील मालीक एक अलाह हमारा।
जाके एक सपुन फरमाए भए गवो चौदह तवक तआरा।
दुज कोइ अवरी नही देपो जैसा मन महबुब पीआरा।
हैं हाजीर नाजीर हरी साँइ तीवे तालीव से कोस हजारा।
ताकी जीकीरी फीकीरी करी वांचे मीर पीर पैगमरु सारा।
मका मदीना हाजीती मेटी रोजा इद मसीद वीसारा।
महरम जानी महल वीच रापो मेहरवान होइ देहु दीदारा।
वार वार वंदा सिर नावै धरनीदास गरीब बेचारा॥ ३॥

काहे को होत दीवाना रे वंदे तो।
एक अलाह दोस्त है तेरा और तमाम वेगाना।

कौल करार वीरी वावरे माल मनीमन माना ।
आपीर नही दुनीआ मो रहना वहुरी उहाही जाना ।
जाहीर जीव जहांन जहां लो सभमे एक षोदाई ।
बहुरी गनीम कहां ते आए छुरी चलाई ।
दुरी नही दील का मालीक वीना दरद नाही पैहो ।
धरनी वंग वीलंद पुकारै फीरी पाछे पछतै हो ॥ ४ ॥

॥ राग परज ॥

अंध अभागा रे समुझ नर ।
राम भगती वीसराए के का प्रेतन्ही लागा रे ।
संघारन माडे रहे झुठा उठी भागा रे ।
संत नगारो वाजही अजहुँ नहीं जागा रे ।
गाइ ही ते हत्या भये कहे भइसी के नागा रे ।
सनमुष सरन समाइऐ सभ परी हेरी दागा रे ।
धरनी गुर गोविंद भजे ताको काहे के पागारे ।
भइया जाहे राम नेवाजे हो ।
चाहे पगु नागा करे चाहे तुरये तुपारे हो ।
परम तंतुही दए वसे संतन्ह दल माजे हो ।
रहत सदा अनंद से सीर पदुम बीराजे हो ।
काल सरूपी कोइ नही सब आरहती साजे हो ।
•••जनी की मुदता उठी आपही भाजे हो ।
चारी पदारथ ना चहै सुष सहज समाजे हो ।
धरनी जीवन मुक्ती सो अतुलित छवीछाजे हो ॥ ६ ॥

प्राप्त पदों की पूर्ण प्रतिलिपि ।

विषय—

ज्ञान और भक्ति का विवेचन किया गया है ।

संख्या ११४ ङ. बोधलीला, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी । दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम गोंठा, डा०—दोहरीघाट, जि०—आजमगढ़

आदि—

॥ बोध लीला ॥

प्रथमहि प्रनवो ए•••

...दौ गुरु देव क पाऊ, जिन्ह प्रभु सोवत...

× × ×

देषो निरषि परषि सब कोई। सब फल माह बीज है सोई ॥
पूरन ज्यों जल मध्य अकासा। एकै ब्रह्म सकल घट वासा ॥
मनिगन माल मध्य जिमि डोरा। सागर एक अनेक हिलोरा ॥
एक भंवर सब फूल मंझारा। एक दीप सब घर उजियारा ॥
ततु निरंजन सबके संगा। पसु पंछी नर कीट पतंगा ॥
देषो अपनी काया विलोई। बाद विवाद करे मति कोई ॥
काम क्रोध मद लोभ निवारै। समिता गहि ममिता को मारौ ॥
आनक दोष कबहु नहि धरई। जानत जीव को घात न करई ॥
निरपछी सांचहि अस्थापै। निरदावा धन व्यथा न व्यापै ॥
संतत धर्म अनाश्रित करई। सो प्रानी भौ सागर तरई ॥
दुष सुष एकै भाव जनावै। अंभि अंतर विश्वास बढावै ॥
अस्तुति निंदा दुश्रौ समाना। सुर नर मुनि गन तासु बषाना ॥

अंत—

तेहि समान तूलै नहि कोई।
जीवन मुक्त जानियै सोई ॥
मन परमोध जाहि मन भावै।
त्रिविध पाप तन ताप नसावै ॥
चित्रगुप्त धर्माधिराजा।
कालदूत जम अहृति साजा ॥
अपनी आपा आपु मेटाइ।
'धरनीदास' तासु बलि जाई ॥
ऐसी दसा विराजै जाकी।
धरनी तहँ कछु रही न बाकी ॥
॥ बोध लीला संपूरण ॥

विषय—

ब्रह्म के विषय में ज्ञानोपदेश।

संख्या ११४ च. ककहरा, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास, डा०—दोहरीघाट, जि०—आजमगढ़

आदि—

ऊ अंकार सब स्रीष्टी बनाई। ऊ अंकार ही विसरो जनि भाई।
ऊ अंकार ही चहु वेद वषाना। ऊ अंकार विरले जन जाना॥
नाम सराहे सिरजनि हारा। नाना धर्म कीओ वीस्तारा॥
निर्गुन पुर्ष निरंतर कोई। नारि पुर्ष सबही ते सोई॥
मालीक एक जगत फुलवारी। मानिक रहे जोति उजयारी॥
मूल मंत्र गुर गम ते गहो। मति बहुतेरा बकी बकी बहो॥
सीध पुर्ष है एकंकारा। सुन्य सरोअर अगम अपारा॥
सतगुर मिलै तौ ले पहुचावै। लीपि लिपी पढ़ि गुनि हाथ न आवै॥
धंधा करत गए कत पुरुषा। धरो भक्ति भौ से तरु सुरूपा॥
धोपे धोप जनम चलिजाई। धरनेस्वर की धरू सेवकाई॥
अनहद शब्द लेहु ठहराई। अजपा जाप जपहु मनलाई॥
अरध उर्ध धरि सुरति मीरेपो। आपा मेटि अपानहि देपो॥

अंत—

होहु दयाल विसंभर देवा।
हम नहि जान पुजा सेवा॥
हमरे नहि कछु कर्मनी कोई।
हरि की कृपा होए से होई॥
छोरहु कर्म फांस गोंसाइ।
छोरि लेहु बंधन धरि आई॥
छोटि मति मैं निपट अनारी।
छूटे जनी एक नाम तोहारी॥
कर्म ककहरा ... ...।
संत ककहरा कोई कोई जाना॥
जाग्रत मौ अनुभौ परगासा।
तिन्ह की वलि वलि 'धरनीदासा'॥

॥ एता ककहरा संपुरन समाप्त करता राम राम॥

विषय—

'ऊँ न म' से लेकर 'ह' तक के अक्षरों पर कविता रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या ११५. वाणियाँ, रचयिता—धुंधलीमल। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या ११६. (१) गुणमाया संवादजोग ग्रंथ, (२) गुणादि बोध जोग ग्रंथ, (३) हरिचंद सत, रचयिता—ध्यानदास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५६वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ ध्यानदास जी का ग्रंथ

|| अथ गुणमाया संवाद जोग ग्रंथ लिष्यते ||

एक कनक अरु कामणी सब जग लीया लुढ़ाय।
साध गहे मत मछ कौ चढ़ै अपूठै बाई || १ ||
संतो सहज सुनि मन लागा।
उनमनि चढया आस सब परिहरि सबद गगन चढ़ि बागा || २ ||
पांच पचीस उलटि घरि आवैं तब मन अनंत न डोलै।
मूरति मांहि अमूरति दरसै नांनावांणी बोलै || ३ ||
देह उलटि दरिया भइ तब मन रह्या समाई।
रोम रोम बाजा घुरैं अस्थिर वैठ्यौ आई || ४ ||

अंत—

गणादिबोध जोग ग्रंथ से

चंद सूर तहां कछु नही नही धरणी आकास।
पवन नही पाणी नही नही तहां भोग विलास || १ ||
तेज नही तारा नही नही तहां रूप अरूप।
सबद नही सुरता नही नही छाया नही धूप || २ ||

× × ×

आदि अंति मधि संत सब अगणित गिण्या न जांहि।
"ध्यानदास" साहिब सुमरि सब आएउ समांहि || ४५ ||

हरिचंद सत

ध्याइ तीन्य या ग्रंथ की धरम कथा विस्तार।
'हरिचंद सत्' हिरदै धरै सो जन उतरै पार || ३११ ||
जो उचरैया ग्रंथ कूं लो सुनै संत चित्त लाइ।
"ध्यान" लहै सो परम पद पापताप त्रिय जाई || ३१२ ||

इति श्री हरिचंद सति ग्रंथ है ता मध्य मुक्ति उपाइ। ग्यान भक्ति बैरांग नध्य सब विध कहा सुनाई ॥ १ ॥ इति हरिचंदस्त ग्रंथ संपूर्ण ध्याइ ॥ २ ॥

विषय—

गुणमाया जोग ग्रंथ

गुण और माया से रहित होकर भगवद्भक्ति करने का उपदेश किया गया है।

॥ गुणादि जोग ग्रंथ ॥

शून्य के स्वरूप का वर्णन।

॥ हरिचंद सत ॥

राजा हरिचंद का वर्णन।

टिप्पणी—विवरण पत्र में रचयिता की तीन रचनाओं—गुण माया जोग ग्रंथ, गुणादि जोग ग्रंथ और हरिचंद सत के विवरण लिए गए हैं।

संख्या ११७ क, भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास जी (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री नारायण दंडी, स्थान—नारायण गढ़ और श्रीनगर, डा०—श्रीनगर, जिला—बलिया

आदि—

॥ अथ भजनाष्टक लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान सांत रस तें अधिक अद्भुत पदवीदास।
सापा (? सपा) भाव तिनतें अधिक जिनकै प्रीति प्रकाश ॥ १ ॥
अद्भुत बाल चरित्र कौ जो जसुदा सुपलेत।
तातें अधिक किशोर रस भज वनितनि कौ हेत ॥ २ ॥
सर्वोपरि है मधुर रस जुगल किशोर विलास।
ललितादिक सेवत तिनहि मिटत न कबहु हुलास ॥ ३ ॥
या पर नाहिन भजन कछु नाहिन है सुष और।
प्रेम मगन विलसत दोऊ परम रसिक सिर मौर ॥ ४ ॥
वृंदावन नित सहज ही नित्य सषी चहुँओर।
मध्य विराजत एक रस रस मै मधुर किशोर ॥ ५ ॥
छैल छबीली लाडिली छैल छबीलौ लाल।
छैल छबीली सहचरी मनौं प्रेम की माल ॥ ६ ॥

पंच बांन जिहिं पांन है देषि गिरयौ यह रंग।
तेइ बान तिहिं फिरि लगे जर्जर भए सब अंग ॥ ७ ॥
विवस भयौ सुधि रहि न कछु मोह्यो महा अनंग।
लज्जित ह्वै रह्यौ नमित अति करत न सीस उतंग ॥ ८ ॥
यह अष्टक ध्रुव पढै जौ जुगल चंद संजोग।
ताके हिये प्रकास रहै मिटै तिमिर हृदिरोग ॥ ९ ॥

इति श्री भजनाष्टक संपूर्ण ॥ १९ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री राधाकृष्ण के युगल विलास का भक्ति पूर्वक भजन करने का उपदेश किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना जिस हस्तलेख में है उसमें ध्रुवदास जी की तेईस रचनाएँ हैं और चतुर्भुजदास जी की बारह रचनाएँ जो 'द्वादस जस' नाम से प्रसिद्ध हैं। अंत में गीता का भाषानुवाद (अज्ञात रचयिता कृत) भी है। ध्रुवदास और चतुर्भुजदास जी की रचनाएँ इस प्रकार हैं :—

ध्रुवदासजी की रचनाएँ

१—जीवदसा, २—वैधक लीला, ३—मन सिध्या लीला, ४—वृंदावन सत, ५—ख्याल हुलास, ६—भक्त नामावली, ७—बृहद बावन, ८—प्रीति चौवनी, ९—भजनाष्टक, १०—भजन कुंडली, ११—भजन सत, १२—प्रेमावली लीला, १३—नामावली, १४—बन विहार, १५—रस विहार, १६—आनंददसा विहार, १७—अनुराग लता, १८—प्रेमलता लीला, १९—ब्रजलीला, २०—जुगल ध्यान, २१—नित्यं विलास, २२—मानलीला, २३—दानलीला

चतुर्भुजदास जी की रचनाएँ (स्वा० हरिवंश जी के अनुयायी)

१—सिध्या सकल जस, २—धर्मविचार जस, ३—भक्ति प्रताप जस, ४—संत प्रतापजस, ५—सिक्ष्या सार जस, ६—हित उपदेश जस, ७ पतितपावन जस, ८—मोहनी जस, ९—अनन्य भजन जस, १०—राधा प्रताप जस, ११—मंगलसार जस, १२—विमुप भजन जस।

संख्या ११७ ख. भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास—कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७ × ६½ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ भजनाष्टक लिख्यते

ध्यानं शांति रसतें अधिक अदभुत पदई दास।
सखी भाव तिन तैं अधिक, जिनके प्रीति प्रकास॥ १॥
अद्भुत बाल चरित्र को जो जो जसुधा सुखलेत।
तातें अधिक कीसोर रस ब्रज जुवती नित लेत॥ २॥

अंत—

यह अष्टक को पढै ध्रुव जुगल चंद संजोग।
ताके हीय प्रकास रहै मिटै तिमिर हद रोग॥ ६॥

इति श्री भजन अष्टक संपूर्ण।

विषय—

८ दोहों में कृष्ण भजन।

संख्या ११७ ग. शृंगार मणि, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—७×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ सिंगार मणि लिख्यते।
हरिवंस हंस आवत हिये, होत जु बहुत प्रकास।
अदभुत आनंद प्रेम को, फूल कमल प्रकास॥ १॥
नवल किसोरी सहज ही, झलकत सहजहि जोत।
उपमा दै उरनी तिन्है, यह दीठ्यो अति होत॥ २॥

अंत—

कहै सिंगार मणि नवे चारि अरु आठि।
प्रेम तिहि उर झलकि रहै जो कह ध्रुव पाठि॥ १०२॥
इति श्री सिंगार मणि।

विषय—

१०२ दोहों में राधा अंग वर्णन।

संख्या ११७ घ. रसमंजरी, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—७×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ रस मंजरी लिख्यते॥ दोहा॥

हरवंस नाम कहत ही बढ़ै आनंद बेलि।
प्रेम रंग उर जगमगै, जुगल कवल रस केलि ॥ १ ॥
हरवंश चरन युग वंदि कै, कहत बुद्धि अनुसार।
ललित विसाखा सखिन को, यह रस प्रेम अधार ॥ २ ॥

अंत—

या रस सौ लाछ्यौ रहै, निस दिन जाको चित्त।
ताकी पद रज सीस धर, बंदति रहै ध्रुव नित ॥ ३५ ॥
इति श्री रस मंजरी।

विषय—

राधाकृष्ण की एकान्त क्रीड़ा का वर्णन।

संख्या ११७ ङ. प्रिया जू की नामावली, रचयिता—ध्रुवदास हित (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०.५ × ७.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण—(अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी विक्रमी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ प्रिया जू की नामावली लिष्यते ॥
श्री राधा नित्य किशोरी बृंदावन विहारनी वन राजरानी निकुंजेस्वरी ॥

रूप रंगीली छवीली रसीली रस नागरी ॥ लाडिली प्यारी सुकुमारी रसिकनी ॥ मोहनी लाल मुष जोहनी ॥ मोहन मन मोहनी ॥ रति विलास विनोदनी ॥ लाल लाड लडावनी ॥ रंग केलि वढ़ावनी ॥ सुरति चंदन चरचनी ॥ कोटि दामिनि दमकनी ॥ नवल नासा चटकनी ॥ रहस पुंजे बृंदावन प्रकासिनी ॥ सौंदर्य रासिनी ॥ प्रीतम नैन निवासिनी ॥ नित्य आनंद दर्सिनी ॥ पुजन पिय हिय परसनी ॥ अधर सुधारस बरसनी ॥ रंग विहारनी नेह निहारनि ॥ पिय हित सिंगार सिंगारनी ॥ प्यार सों प्यारे को ले उर धारनी ॥ मोहन नैन विथा निवारनी ॥ जान प्रवीन उदार संभारनी ॥ अनुराग सिंधे स्यामा दामा भामा भामती ॥ जुवती जूथ तिलका ॥ बृंदावन चंद्र चंद्रिका ॥ हासि परिहासि रसिका ॥ नव रंगनी अलकावली ॥ छवि फंदनी ॥ मोहन मुसकनि मंदनी ॥ सहज आनंद कंदनी ॥ नेह कुरंगिनी ॥ नैन विसाला ॥ चंचल चित आकर्षिनी ॥ मदन मान षंडिनी ॥ सकल विद्या विचछने ॥ कुँवर अंक विराजिनी ॥ सुरत समर दल साजिनी ॥ मृग नैनी पिकबैनी ॥ सुलज्ज अंचला सहज चंचला ॥ कोक कलानि कुसला ॥ हाव भाव चपला ॥ चातुर्य चतुरा ॥ माधुर्य मधुरा विन भूषन भूपिता ॥ अवधि सुंदर्यता ॥ प्रान वल्लभा कामिनी, भामिनी हंस कल गामिनी ॥ छवि दामिनी ॥ घन स्याम अभिरामिनी ॥ रसिक रवनी ॥ मदन दमिनी ॥

केलि कवनी ॥ चित हरनी ॥ काल उर पर चरन धरनी ॥ छवि कंज बदनी ॥ रसिक आनंदनी ॥ रूप मंजरी सौभाग्य रस भरी ॥ सर्वंग्य सुंदरी ॥ गौरंगी रति रस रंगी ॥ वेचित्र कोक कला अंगी ॥ छवि चंद्र बदनी ॥ रसिक लाल वंदिनी ॥ सकल सुप रासि सदने ॥

दोहा

प्रेमसिंधु के रतन ए अद्भुत कुवरि के नाम ।
जाकी रसना कहत ध्रुव सो पावै सुपधाम ॥
ललित नाम नामावली जाके उर झलकंत ।
ताके हिय में वसत यह स्यामा स्यामल कंत ॥

इति प्रिया जू की नामावली संपूर्ण ॥

विषय—

प्राप्त हस्तलेख से ध्रुवदास कृत ४२ फुटकर रचनाएँ संगृहीत हैं जिनमें से एक श्री प्रिया जू की नामावली है। सं० विवरण के अनुसार अब तक इसका विवरण नहीं लिया गया था। इसमें श्री राधिका जी की नामावली वर्णन की गई है।

टिप्पणी—ध्रुवदास जी को श्री हित हरिवंश जी का शिष्य कहा जाता है। परंतु प्रस्तुत रचना जिस हस्तलेख में है उसकी पुष्पिका के अनुसार ये श्री हित हरिवंश जी के पुत्र श्री गोपीनाथ जी के कृपापात्र अर्थात् शिष्य थे :—

'इति श्री हित जू के पुत्र श्री गोपीनाथ जू के कृपापात्र ध्रुवदास जू कृत बयालीस लीला संपूर्ण ॥'

इसकी पुष्टि एक अष्टक संग्रह से भी होती है जिसमें निम्नलिखित दोहा है :—

सुंदर स्वामी लालवर और रसिक ध्रुवदास ।
ये श्री गोपीनाथ के कहै जु शिष्य प्रकास ॥

संख्या ११७ च. नामावली, रचयिता – ध्रुवदास जी (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८½×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३५ वि०, सन् १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री नारायण दंडी, स्थान – नारायणगढ़ और श्रीनगर, डा०—श्रीनगर, जिला—बलिया

आदि—

॥ अथ श्री प्रियाजी की नामावली लिष्यते ॥

श्री राधे नित्यकिशोरी ॥ वृंदावन विहारिनी ॥ वनराज रानी ॥ निकुंजेश्वरी ॥ रूप

रंगीली ।। छबीली ॥ रसीली ।। रसनागरी ।। लाडिली ॥ प्यारी ॥ सुकुवारी ॥ रसिकनी ॥ मोहनी ।। लालसुप जोहनी ॥ मोहनी मोहन मन ।। रतिविलास विनोदनी ।। लाल लाड लडावनी ।। रंग केलि बढावनी ॥ सुरत चंदन चर्चिनी ।। कोटि दामिनी दमकनी ।। नवल नासा चटकिनी ।। रहसि पुंजे ॥ १ ।। वृंदावन प्रकासिनी ॥ रंग बिहार विलासिनी ॥ सौंदर्य रासिनी ॥ सपी सुप निवासिनी ।। दुलहिनि मृदु हासिनी ।। प्रीतम नैंन निवासिनी ॥ नित्यानंद दरसिनी ।। उरजनि पिय परसिनी ॥ अधर सुधारस वरसिनी ।। रंग विहारिनि ।। नेहनिहारिनि ॥ पिय हित सिंगार सिंगारनि ॥ प्यार सौ प्यारे कौं लै उर धारनि ॥ मोहन मैंन विथा निरवारनि ।। अनुराग सिंधे ।। १५ ।। स्यामा ।। वामा ।। भामा ।। भावती ।। जुवति जूथ तिलका ॥ वृंदा वनचंद्र चंद्रिका ॥ हास परिहास रसिका ।। नव रंगिनी ।। अलका-वलि छवि फंदनी ।। मोहन मुसकनि मंदनी ।। सहज आनंद कंदिनी ।। नेह कुरंगिनी ।। नैंन विशाला ।। चंचल चित आकरपिनी ।। मदनमान पंडिनी ।। सकल विद्या विचछने ।। कुवरि अंक विराजिनी ।। सुरत समर दल साजिनी ।। प्यार पट निवाजिनी ।। मृगनैंनी पिकबैंनी ।। सलज्ज अंचला ।। सहज चंचला ।। कोक कलानि कुशला ।। हाव भाव चपला ।। चातुर्ज चतुरा माधुर्ज मधुरा ।। विनु भूषन भूषिता ।। अवधि सौंदज (?र्ज) ता ॥ प्रान वल्लभा ॥ ४ ॥ १६ ।। रसिक रवनी ॥ कामिनी ॥ भामनी ॥ हंस कल गामिनी ॥ घनस्याम अभिरामिनी ।। मदन दवनी ॥ केलि कवनी ॥ चित्तहरनी ॥ लालन उर पर चरन धरनी ॥ छवि कंज वदनी ॥ रसिक आनंदिनी ॥ रूप मंजरी ॥ सौभाग्य रसभरी ॥ सर्वंग्य सुंदरी ॥ गौरांगी ॥ रति रस रंगी ।। विचित्र कोककला अंगी ॥ छवि चंद्र वदनी ॥ रसिक लाल वंदिनी ।। सकल सुप रासि सदने ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम सिंधु के रतन ये अद्भुत कुवरि के नाम।
जाकी रसना रटै ध्रुव सो पावे सुख धाम ॥ १ ॥
ललित नाम नामावली जाके उर झलकंत।
ताके हिय मैं वसत रहैं स्यामा स्यामल कंत ॥ २ ॥
इति श्री प्रिया जी की नामावली संपूर्ण ॥ १३ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री राधा जी के नामों का वर्णन किया गया है।

संख्या ११७ छ. प्रिया नामावली, रचयिता—ध्रुवदास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७×६$\frac{1}{2}$ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ श्री प्रिया जी की नामावली लिख्यते।

श्री राधे नित किशोरी वृंदावन विहारिणी वन राजरी।
वृंदावन सुरीनि निकुंजे सूरी रूप रंगीली छबीली रसीली रसनागरी॥
लाडिली प्यारी सु कुंवारी रसिकिनी मोहनी लाल मुख जोहनी
मोहन मन मोहनी॥

रति बिलास विनोदनी लाल लाड़ि वीनी।
रंगकेलि निबटावनी सुरत चंदन चर्चिनी॥
कोटि दामि दमकनी ललित उर पट लपटनी।
नवल नासा चटकिनी रहसि पूजे॥ १६॥

अंत—

ललित नाव नामावली जाके उर लहकंत।
जाके हियै वसत है स्यामा स्यामल कंत॥ ७॥
इति श्री प्रिया जी की नामावली॥ संपूर्ण॥

विषय—राधा के १०८ नाम हैं।

संख्या ११७ ज. दान विनोद, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६$\frac{3}{4}$×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण—(अनुष्टुप्)—२२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ दान विनोद लिख्यते॥ दोहा॥

एक समय उर सखिन के बाढ्यो आनंद मोद।
देखैं लाडली लाल की लीला दान विनोद॥ १॥
वंशीवट तट हसजा (? हंसजा) सघन कुंज की ठोर।
दानी ह्वै ठाढे भये, नागर नवल किशोर॥ २॥
भाँति रंगीली सखी निजु तन वस छवीली वाल।
आई गई तिहि छिन तहाँ मत्त गयंदनि चाल॥ ३॥

अंत—

नित उठि जो गावै सुनै, यह लीला रस रूप।
'हित ध्रुव' ताके हिय कमल उपजे प्रेम अनूप॥ २२॥
इति श्री दान विनोद संपूर्ण॥

विषय—

कृष्ण के दान माँगने पर राधा ने अपने को समर्पण कर दिया।

संख्या ११७ झ. आनंदाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७×६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ आनंदा अष्टक लिष्यते ।। दोहा ।।

सखी सबै उडगन मनों, रोकी वारि अनंद ।
प्रिय चकोर 'ध्रुव' छकि रहै निरखि कुँवरि मुख चंद ।। १ ।।
अैसी अद्भुत सभा बनी, ईक छत सुख की रास ।
फूले फूल अनंद के, सहज परसपर हासि ।। १ ।।
देखि लाल के लालचहि ललिचाहूँ ललिचाहि ।
नवल कटाक्ष तरंग रस पीवत हूँ न अघाई ।। ३ ।।

अंत—

जो अष्टक जो पढै, ध्रुव संध्या और सवार ।
जाके हिय प्रकाश रहै, मिटै त्रिगुण अँधियार ।। ८ ।।

इति श्री आनंदाअष्टक सपूरण ।।

विषय—

आठ दोहों में कृष्ण राधा गुणगान किया गया है ।

संख्या ११७ ञ. आनंदाष्टक और भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास (स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०.२ × ६'४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्री आनंदाष्टक लिष्यते ॥ दोहा ॥
सपी सबै उडगन मनौ येकिवारि आनंद ।
पिय चकोर ध्रुव छकि रहे निरपि कुवरि मुषचंद ॥ १ ॥
अैसी अद्भुत सुभावनी इकछत्त सुप की रासि ।
फूले फूल आनंद के सहज परस्पर हासि ॥ २ ॥
देपि लाल की लालचहि लालचहू ललचाइ ।
नवल कटाक्ष तरंग रस पीवत हू न अघाइ ॥ ३ ॥

एक ही वैगुन प्रेम रस रूप सुसील सुभाव।
अद्भुत जोरी वनी 'ध्रुव' देख वढत चितचाव॥ ४॥

या रस के जे रसिक जन तिनकी कौन समान।
विना मधुर रस माधुरी परसत नहिं कछु आन॥ ५॥

रसिक तवहिं पहिचानिये जाकै यह रस रीति।
छिन छिन हिय मैं झलक रहै लाल लाड़िली प्रीति॥ ६॥

यह रस जिन समझ्यौ नही ताके ढिग जिन जाहु।
तज सत संगत सुधारस सिंधु सुतहि जिन पाहु॥ ७॥

वृंदावन रस अति सरस कैसे करौं वपान।
जिहि आगे वैकुंठ कौ फीकौ लगत पयान॥ ८॥

यह अष्टक जो पढै ध्रुव संध्या और सवार।
ताके हिय आवै जुगल मिटै त्रिगुन अँधियार॥

इति आनंदाष्टक संपूर्ण।

अंत—

अथ भजनाष्टक लिष्यते

॥ दोहा ॥

ज्ञान सांति रस तै अधिक अदभुत पदवी दास।
सषा भाव ताते अधिक जिनकै प्रीति प्रकास॥ १॥

तातै अधिक किशोर रस वृज वनतनि कौ हेत।
अदभुत बाल चरित्र को जौ जसुदा सुष लेत॥ २॥

सर्वोपर है मधुर रस जुगल किसोर विलास।
ललितादिक सेवति तिमहि मिटत न कवहु हुलास॥ ३॥

यापर नाही भजन कछु नाहिन है सुप और।
प्रेम मगन विलसत दोऊ परम रसिक सिर मौर॥ ४॥

वृंदावन नित सहजही नित्य सषी चहुँ ओर।
मध्य विराजत एक रस रसमय मधुर किसोर॥ ५॥

छैल छवीली लाडिली छैल छवीलौ लाल।
छैल छवीली सहचरी मानौं प्रेम की माल॥ ६॥

पंचवान तेहि पानि है देषि गिरयौ यह रंग।
तेई वान तेहि फिर लगे जर्जर भये सब अंग॥ ७॥

विवस भयो सुधि रही न कछु मोह्यो महा अनंग ।
लज्जित ह्वै रह्यौ अति नमित करत न सीस उतंग ॥ ८ ॥

यह अष्टक जो पढै ध्रुव जुगल चंद संजोग ।
ताके हिए प्रकासि है मिटै तिमिर हृदि रोग ॥ ९ ॥

इति श्री भजनाष्टक ।

विषय—

प्रस्तुत दोनों अष्टक कृष्ण भक्ति विषयक हैं और पूर्ण रूपेण उद्धृत हैं। ये दोहा छंदों में रचे गए हैं और इनकी भाषा ब्रज है ।

संख्या ११८ क, नायिका भेद, रचयिता—नंद, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—४ x ८.८ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

···रसु जोहे । तुम तें है तुम ही तें सोहे ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

रूप प्रेम आनंद रसु जो कछु जग में आहि ।
सो सब गिरिधर देव कौ निधरक वरणौं ताहि ॥ ५ ॥

रसमंजरी अनुसार करि 'नंद' सुमति अनुसार ।
वरणत वनिता भेद जहा प्रेमसार विस्तार ॥ ६ ॥

चौपाई

एक मीत हम सों अस गुन्यों । मैं नायका भेद नहि सुन्यों ॥
अरू जु भेद नायक के सुनें । तेउ में नीके नहि गुने ॥ ७ ॥

× × ×

मीन कमल के ढिग ही रहै । रूप रंग रस मधु लिह लहै ।
तासों नंद कहत तब ऊतर । मूरप जन कौं गोह वड दूतर ॥

अंत—

॥ स्वयं दूती यथा ॥

दृष्टि परहिं जब मोहन लाल । पठई जु अंग अनंग विशाल ॥
धीर्यं गलित गलित पुनि चीरा । तनकहि में ह्वै जाई अधीरा ॥ १०२ ॥

पिय तन तनक कनाखिन झकै ।
नाभी कुच प्रगटै अरु ढकै ॥
कंदुक खेलै सखि कहुँ ठेलै ।
पिय कौ हिय विलास छवि मेलै ॥ २०३ ॥
नयन सेन संकेत जनावै ।
स्वयं दूतिका सुतिय कहावै ॥ २०४ ॥

॥ रति लक्षण ॥

छचित स्वधाम काम तौ करै । जानैं नहिन कवन अनुसरै ॥
भूप पियास सबै मिटि जाई । गुरु जन डर रंचक कछु खाई ॥ २०५ ॥
मनकी वृत्ति पिय पैं इहिं ढारा ।
समुद मिली जस गंग की धारा ॥
तनक बात जौ पिय की पावै ।
सौ वरियाँ सुनि तृप्ति न आवै ॥ २०६ ॥

\+ \+ \+

विषय—

प्रस्तुत 'नायक नायिका भेद' का विषय इसके नाम के अनुकूल ही है । यह ग्रंथ चौपाई तथा व्रजभाषा में लिखा गया है ।

टिप्पणी—ग्रंथ आदि और अंत में खंडित होने के कारण इसका वास्तविक नाम तथा रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं हुआ ।

संख्या ११८ ख. नाम चिंतामणि माला, रचयिता—नंददास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार ५×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४० पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह 'गहलोत', जोधपुर

आदि—

श्री कृष्णोजयति, श्री परमातमने नमः ।
श्री कृष्ण कवल लोचन सुखकारी,
अविध भूत ईश्वर अवतारी ॥ १ ॥
तिनकी नाम चिंतामणि माला ।
प्रेम सूत्र पोइ रचूं रसाला ॥ २ ॥
छवि दैनी चिंतित फल देनी ।
बलि करूं तापर कोटि त्रिवेनी ॥ ३ ॥
जय श्री कृष्ण कृष्ण दामोदर ।
तन नव जलधर हलधर सोदर ॥ ४ ॥

अंत—

कामधेनु कहु देन काम वरु।
कलप तरनि कूं माहा कल्पतरु ॥३६॥
मंगलनिको माहा मंगलरूप है।
तातै यह कलि काल अनूप है ॥३७॥
तातै यह हरिनाम दास हित।
'नंददास' के कंठ वसौ नित ॥३८॥

इति श्री नाव चिंतामणि माला संपूर्ण ॥

विपय—

नामों के पर्याय दिए गए हैं।

संख्या ११६. हारसमय या हारमाला, रचयिता—नरसीमेहता, कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४४ वि०, प्राप्ति-स्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ श्री हार समय मेता जी नरसैं कृत हारमाला लिख्यते ॥ परयंध, राग आसावरी, अैताल, पद—

श्री दामोदर मंदिर स्वंदिर (अस्ताई)

गढ जुनो सुभ साज रे, भगती वंत ने साख अभ्यासी वृत्ति, वैष्णव मंडली कनू राम रे ॥ श्री० दामो० ॥ १ ॥
एक समय में तो मुसाले आव्या; माला गृही कर हार रे।
सुर संन्या सखी साथे लीधी, करै कीर्तन राग अपाररे ॥ २ ॥
नित्य प्रति में तो मंदिर में आवे, वैष्णव भली गावे (श्री०) आर रे।
में सो जी मन प्रयत्न थई ने विष्णु कंठ आरोपे हार रे ॥ ३ ॥ श्री० ॥
चर्चा चाली सारा नगर में, सुणी माला आरोपीय तेह।
वैष्णव मलीने सीखज दीधी,
अज बूढै या करसो एह ॥ ४ ॥

अंत—

कहै दामोदर सांभल नरसी, हूं पेम प्रीत बंधाणो रे ॥ अस्ताई ॥
लोक लाज नूं कारण जाणी, म्हारो रावा केदारो बचाणो रे ॥ कहै० ॥

× + ×

भक्ति भागवत आइ सनातन श्री गोकुल नारायरे ।
भयो नरसी हूँ दीन उगार्यो, ते संत चरण ने पसारय रे ॥
कहे दामोदर ॥७॥ पद ११६ ॥

इति श्री हार समय नरसी मेता कृत पद एक सो ने सोला संपूरण छे। संवत् १९४४ रा मिति श्रावण मासे शुक्ल पछे तिथि पंचमी ५ वार सोमवार लिखितं ब्राह्मण पुष्करण बोरा मंछाराम (?) जोधपुर मध्ये ॥ श्री रज्जु ॥ कल्याण मस्तु ॥

विषय—

भक्ति विषयक पदों का संग्रह ।

संख्या १२० क. नरहरि के कवित्त, रचयिता—महापात्र नरहरि, कागज—देशी, पत्र—२१ (३८ से ५९ तक), आकार—७'१ × १२'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी-साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

कवित्त नरहरि महापात्र के ॥ वादु लोहे सोने का ॥
प्रथजेपि (?) जगदीश कहँ करउ कवित्त रचिनेसु ।
जस निर्मल थिर चिर जिवे छत्रपति साहि सलेमु ॥
एक्क समय मन मुदित उदित द्वौ पुरुष बुद्धिवर ।
एकु कंचन अरु लोह उप्प रिझ्झहि ते अमर नर ॥
तरनि तेज जगमगहि भेष सज्जहि विचित्र तहा ।
कविय गुनिय गुन कहहि झुकित झगरहि अप्पु मह ॥
वहु विधि विनोद वढ़ेउ वसु है सोकहि नरहरि निरपीत नयन ।
पति लागि परसपर प्रगट ह्वै सो जुगुति कुति वोलहि वयन ॥

अंत—

कनक तुला मन मुदित तन दान दिन कहि जो ग्रंथ गन ।
सत सहस गोलछि देत विधि सहित सुद्धमन ॥
अस्व रथ गज रथ वसन ग्राम गनि कहइ कौन कवि ।
वहुरि प्रगटि कलि करन सत्य हरिचंद प्रात रवि ॥
तेहि अथ्थ मुकुति अरु भुगुति द्वौ कही नरहरी तहाँ संचरिय ।
दुरगावति मात समथ्थ कौ कहु केहिविधि पटतर करिय ॥ १२४ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महापात्र नरहरि के कवित्तों का संग्रह है । इसमें उनके दोहा, छप्पै,

कुंडलिया और विशेषतः कवित्त, संमिलित हैं जिनकी संख्या १२४ है। ग्रंथ का विषय विविध और फुटकर है। आरंभ में 'सोने और लोहे का झगड़ा' एवं 'तेली तमोली का झगड़ा' जैसे रोचक विषय हैं। इनके अतिरिक्त कुछ प्रशस्तियाँ हैं, परन्तु अधिक नहीं। कुछ कविता भक्ति भाव की भी है। जो हो, ग्रंथ की लिपि अत्यंत भ्रष्ट और दोषपूर्ण होने के कारण उसका बहुत कुछ अंश पढ़ा नहीं जा सका। अतः कवि की पूरी कृति का स्पष्ट रूप सामने आने से रह गया।

संख्या १२१. मंगल गीत, रचयिता—नवनिधि दास जी (स्थान—लखौलिया), कागज—आधुनिक सफेद, पत्र—९०, आकार—१०३/४ × ८३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचना काल—१९०५ वि०, लिपिकाल—सं० १९७४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत कन्हैयालाल जी पटवारी, ग्राम लखौलिया, डा०—नवानगर, जि०—बलिया

आदि—

(खंडित)

सीता सब्द सत है जोई। राम रूप घट व्यापक ओई॥
काया अवध भक्ति सर पावनि। जै जै कहत सकल अघ दावनि॥
सीता जनक लाड़ली नामा। दासरथि रघुनायक नामा॥
अवध समीप बहै सरिपावनि। जै कहते अघ सकल बहावनि॥
जैसु राम मँह अर्थ अनेका। कवन सकै कहि कहा विवेका॥

॥ दोहा ॥

जै सुराम सु अर्थ यह दुइता दुइत (? द्वैताद्वैत) विभेद।
नृगुन अगुण जुक्त करि सकल रसातल भेद॥
श्री गणेश मंगल करन श्री वल्लभ...
नवनिद्धि दास मानस...

\+ + +

श्रीवल्लभ वल्लभ गुन गायो। घड़ी पहर सुचि सो मन लावै॥
ता कंह सुख संपति धन मीता। दिन दिन बढ़ै आयु अमीता॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

"जन नवनिद्धि" विचारि के श्री वल्लभ गुन गाय।
जाते ममिता मोह कै दुख दरिद्र छुटि

\+ +

भक्ति भागवत आइ सनातन श्री गोकुल नारायरे।
भणे नरसी हूँ दीन उगारयो, ते संत चरण ने पसारय रे॥
कहे दामोदर ॥७॥ पद ११६॥

इति श्री हार समय नरसी मेता कृत पद एक सो ने सोला संपूरण छै। संवत् १९४४ रा मिति श्रावण मासे शुक्ल पछे तिथि पंचमी ५ वार सोमवार लिखितं ब्राह्मण पुष्करण बोरा मंछाराम (?) जोधपुर मध्ये॥ श्री रज्जु॥ कल्याण मस्तु॥

विषय—

भक्ति विषयक पदों का संग्रह।

संख्या १२० क. नरहरि के कवित्त, रचयिता—महापात्र नरहरि, कागज—देशी, पत्र—२१ (३८ से ५९ तक), आकार—७'१ × १२'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी-साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

कवित्त नरहरि महापात्र के॥ वादु लोहे सोने का॥
प्रथजेपि (?) जगदीश कहँ करउ कवित्त रचिनेमु।
जस निर्मल थिर चिर जिवे छत्रपति साहि सलेमु॥
एक्क समय मन मुदित उदित दौ पुरुष बुद्धिवर।
एकु कंचन अरु लोह उप्प रिझ्झहि ते अमर नर॥
तरनि तेज जगमगहि भेष सज्जहि विचित्र तहा।
कविय गुनिय गुन कहहि झुकित झगरहि अप्पु मह॥
बहु विधि विनोद बढ़ेउ बसु है सोकहि नरहरि निरपीत नयन।
पति लागि परसपर प्रगट ह्वौ सो जुगुति कुति बोल्लहि बयन॥

अंत—

कनक तुला मन मुदित तन दान दिन कहि जो ग्रंथ गन।
सत सहस गोलछि देत विधि सहित सुद्धमन॥
अस्व रथ गज रथ वसन ग्राम गनि कहइ कौन कवि।
बहुरि प्रगटि कलि करन सत्य हरिचंद प्रात रवि॥
तेहि अथ्थ मुकुति अरु भुगुति द्वौ कही नरहरी तहाँ संचरिय।
दुरगावति मात समथ्थ कौ कहु केहिविधि पटतर करिय॥ १२४॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महापात्र नरहरि के कवित्तों का संग्रह है। इसमें उनके दोहा, छप्पै,

कुंडलिया और विशेषतः कवित्त, संमिलित हैं जिनकी संख्या १२४ है। ग्रंथ का विषय विविध और फुटकर है। आरंभ में 'सोने और लोहे का झगड़ा' एवं 'तेली तमोली का झगड़ा' जैसे रोचक विषय हैं। इनके अतिरिक्त कुछ प्रशस्तियाँ हैं, परन्तु अधिक नहीं। कुछ कविता भक्ति भाव की भी है। जो हो, ग्रंथ की लिपि अत्यंत भ्रष्ट और दोषपूर्ण होने के कारण उसका बहुत कुछ अंश पढ़ा नहीं जा सका। अतः कवि की पूरी कृति का स्पष्ट रूप सामने आने से रह गया।

संख्या १२१. मंगल गीत, रचयिता—नवनिधि दास जी (स्थान—लखौलिया), कागज—आधुनिक सफेद, पत्र—९०, आकार—१०३/४ × ८१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचना काल—१९०५ वि०, लिपिकाल—सं० १९७४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत कन्हैयालाल जी पटवारी, ग्राम लखौलिया, डा०—नवानगर, जि०—बलिया

आदि—

(खंडित)

सीता सब्द सत है जोई। राम रूप घट व्यापक ओई॥
काया अवध भक्ति सर पावनि। जै जै कहत सकल अघ दावनि॥
सीता जनक लाड़ली नामा। दासरथि रघुनायक नामा॥
अवध समीप बहै सरिपावनि। जै कहते अघ सकल बहावनि॥
जैसु राम मँह अर्थ अनेका। कवन सकै कहि कहा विवेका॥

॥ दोहा ॥

जै सुराम सु अर्थ यह दुइता दुइत (? द्वैताद्वैत) बिभेद।
नृगुन अगुण जुक्त करि सकल रसातल भेद॥
श्री गणेशःमंगल करन श्री वल्लभ···
नवनिद्धि दास मानस···

\+ + +

श्रीवल्लभ वल्लभ गुन गायो। घड़ी पहर सुचि सो मन लावै॥
ता कंह सुख संपति धन मीता। दिन दिन बढै आयु अमीता॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

"जन नवनिद्धि" विचारि के श्री वल्लभ गुन गाय।
जाते ममिता मोह कै दुख दरिद्र छुटि जाय॥

\+ + +

अंत —

मंगल

मंगल यह संवाद है मंगल शुभ आनंद ।
मंगल गीता नाम है मंगल परमानंद ॥ ९८ ॥
मंगल पूरन काम भौ राम खेलावन नाम ।
मंगल शुभ सो भवन है मंगल सीताराम ॥ ९९ ॥
नवल लाल बृजराज आजु खेले होरी हो ।
नवल वसंत नवल बृंदावन नवल लाल भरि झोरी हो ॥
घर घर ते निकली बृज वनिता एक सावर एक गोरी हो ।
तेहि विच सोभै बृषभानु नंदनी आनंद चंद्र चकोरी ॥
वाजत लाल मृदंग अनाहद ढोल मजिर डफोरीहो ।
नाचत ताता ता थेई थेई धुधुक धुधुक धुधुकोरी हो ।
"चंदरूराम" चंद्र भै पूर्ण ममिता त्यागि बटोरी हो ॥
जन नौ निद्धि ठाढ एक पंभ ते विनै करत कर जोरी हो ।

इति श्री 'मंगल गीता संपूर्ण संमत १९७४ सा० मि० दुजा भाद्रवदी २ हस्ताक्षर रामदास सिंह सा० हल्दी रामपुर ।

विषय —

निम्नलिखित विषयों पर रचना की गई है:—

(१) कवित्त गंगा जी के, (२) कृष्ण पुकार, (३) ककहरा या कहरा, (४) निर्गुण तथा सगुण विषय के पद, (५) फगुवा, (६) वारहमासा, (७) सिद्धांत संबंधी रचनाएँ, (८) रामखेलावन वाक्य, श्री नवनिधिदास और उनके पुत्र का संवाद । इसमें आत्मज्ञान, संत महिमा, अनुभव वर्णन, राजनीति और तुलसी महात्म्य का वर्णन है ।

कृष्ण पुकार में एक संवत् दिया है जो इस ग्रंथ का रचनाकाल माना जा सकता है:—

त्रिपन छपै जानिए कृष्ण चरित्र शुभ सिद्धि ।
संमत उनइस[१९] सौ पांच[५] सै भापेउ जन नवनिद्धि ॥

टिप्पणी—पुस्तक का प्रथम पत्र लुप्त है । इसके पश्चात् के ९ पत्रों का अधोअंश खंडित है । रचयिता जाति के कायस्थ थे । ग्रंथ स्वामी का—जो रचयिता के वंशज हैं—कहना है कि ये इसी ग्राम—लखौलिया के निवासी थे । इनका वंश वृक्ष इस प्रकार है:—

रचयिता चार भाई थे, जिनके नाम क्रमशः मनबोधदास, जोधदास, नवनिधिदास और गतिदास थे। इस समय केवल मनबोधदास जी का वंश चल रहा है। शेष भाइयों का वंश एक एक दो दो पीढ़ी पश्चात् रुक गया। इस समय ग्रंथस्वामी ही इन सबके उत्तराधिकारी हैं। ये मनबोधदास जी की चौथी पीढ़ी में हैं। नवनिधि दास जी प्रस्तुत ग्रंथ में अपने पुत्र को उपदेश भी करते हैं। इन्होंने अपने गुरु का नाम 'चनरूराम (रामचंद्र) लिखा है। लोगों के कथनानुसार चनरूराम का शुद्ध नाम 'रामचंद्र' है। ये (रामचंद्र) उच्च कोटि के कवि थे। उनका निवास स्थान चंदाडीह था जो लखौलिया से एक मील की दूरी पर है। उनके वंश में एक सदाचारी पुरुष अभी भी उस ग्राम में रहते हैं जिनका नाम श्यामाचरण दास है जो परमहंस कहे जाते हैं। लखौलिया से थोड़ी दूर पर नवनिधिदास जी का मंदिर है जहाँ प्रत्येक वर्ष चैत्र पूर्णिमा को संत संमेलन होता है।

संक्षिप्त विवरण में उल्लिखित कबीर के अनुयायी नवनिधिदास प्रस्तुत रचयिता ही ज्ञात होते हैं। यद्यपि इन्होंने निर्गुण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं तथापि ये सगुणोपासना का भी गुणगान अच्छी तरह करते हैं। इस दृष्टि से इन्हें कबीर पंथी मान लेना उचित नहीं जान पड़ता। ग्रंथारंभ में इन्होंने 'श्री वल्लभ' और 'वल्लभ' स्वामी का भी उल्लेख किया है, यथाः—

॥ श्री वल्लभ श्री वल्लभ स्वामी। गोकुल नायक अंतरजामी ॥

अतः भले ही इन्होंने कुछ निरगुन विषयक रचना भी की, फिर भी ये कबीरपंथी नहीं कहे जा सकते हैं।

संख्या १२२ क. वर्द्धमान पुराण, रचयिता—नवलदास साहि, कागज—देशी, पत्र—१४६, आकार—७ × १०.२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)— १५, परिमाण—(अनुष्टुप्)—५९८६, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२५ वि०, लिपिकाल—सं० १९५१ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

ॐ नमः सिद्धेभ्यः अथ श्री वर्द्धमान पुरांण भाषा लिख्यते ॥ दोहा ॥
ऊंवंकार उच्चारि करि ध्यावत मुनि गण सोइ।
तामै गर्भित पंच गुरु तिन पद बंदौ दोइ ॥ १ ॥

गुण अनंत सागर विमल विश्वनाथ भगवांन।
धर्म चक्र मम वीर जिन वंदौ सिर धर पांन ॥ २ ॥
सिद्धारथ कुल कमल रवि त्रसला उर अवतार।
वंदौ सनमति चरण जुग सुभमति के दातार ॥ ३ ॥

छप्पय

जापूरवं अवतार मास पट चैन वलौवर ॥
वरपे रत्न अमोल सुभग छविवंत पिताघर ॥
देप सुअतिशय रूप हेम गिर करयौ न वनसुर ॥
अपति भयौ नहिं कोइ किये तव सहस अक्षर उर ॥
वर्द्धमान श्रिय वर्द्धअति मांन कीर्ति जग में सही ॥
मान वर्द्ध हिरदै नहीं सुवर्द्धमांन वासव कही ॥ ४ ॥

अंत —

दोहा

उज्जिय अंत विक्रम नृपति सवतसर गति तेह।
सत अठार[१८] पचिस[२५] अधिक समय विकारी येह ॥
सं० १८२५ वि०

× × ×

काय नवल अरू मन नवल, वचन नवल विसराम।
नव प्रकार जुत नवल अति 'नवल साहि' कवि नाम ॥

× × ×

पंच परम गुरु जुग चरण भविजन बुध जुत धाम।
कृपावंत दीजै भगति दास नवल परनांम ॥

इति श्री वर्द्धमान पुराणे भाषार्थं भगवत विहार गमन सकल देसांतोयात् श्रेणिक कथा भगवत निरवाण कल्पं ......नाम पोढसोधिकार......मिती वैसाख सुदी १३ गुरुवार सं० १९५१ तादिन पूण लि० पं० चोवे पेमचंद ॥ आगासौद ॥

विषय—प्रस्तुत 'वर्द्धमान पुराण' में भगवान महावीर का पवित्र चरित्र वर्णित है। यह ग्रंथ जैन धर्म विषयक है।

संख्या १२३. जालंधर जुद्ध, रचयिता—नवलराय (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—५$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० दीपचंद जी, ग्राम—नोनेरा, डा०—प्रहाड़ी, रियासत, भरतपुर

आदि—

अथ जालंधर जुद्ध लिषते ॥

कंठ सुरसति सुमर प्रेम आद मनाऊं।
मात पिता गुर सुमरि सिर भक्तन कुं नाऊं ॥
भानुसिंघ ते मथ लई गुर गन कथ गये ग्यान।
विसुवा सुरजे हर कूं सुमरै जैने मिलै भगवान ।। साध गुन गाइये ।।

नेम धर्म व्रत करै पाप हिरदै नहिं लावै ॥
आठ कातिग नौमाह प्रीति हर सूं जु लगावै ॥
नेम धर्म व्रत आगलि भगत करी येक ठावै।
राजा वगम लाड़ली श्री वृंदा वाको नाम ॥ साधु गुन गाइये ।।

शिव सुतहू प्रचंड तेग आपनि विराजै।
विंदा कू वह जीत व्याह जालंधर चाहै ॥
सुर नर मुनि सब खंग त्याग गये काहू न रही है टेक।
आय मिलौ जवंग वै राजा लै वृंदा की भेट ॥ साधु गुन गाइये ।।

अंत—

बुरी करी तै नार सोच जिया नैक न कीनो।
तनक न राषी कान तुरत ही पलटौ लीनो ॥
अबकौं जनम बकस दै त्रिया वौहौर न विछरू तोही।
हम तौ देह धरै गन गंद्रफ तुम कल तुलसी होय ॥साधु गुन गाइये ॥

वै कल तुलसी हुई देह पानन की पाई।
नार पुरुष औतरै आन कै पूजा चलाई ।।
त्रीया चर्चन जान कै भगत करौ चित्त लाय।
सो या लीला सुनै और गावै तारपान बलराज ॥

इति श्री जालंद्र जुद्ध संपूर्ण। मिती आसौज सुदी संवत् १८३५ बुध वासरे।

विषय—

जलंधर और वृंदा की कथा का वर्णन किया गया है।

संख्या १२४. नागड़ा रा दूहा, रचयिता—नागड़ा, कागज—देशी, पत्र—३ (सं० ५ से ७ तक), आकार—७½×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

सूतो सोइ धरेह, पीऊ पडुर पचेवड़ो।
सादे सादन देह, आज नहेजो नागड़ा ॥ १ ॥
टीपा टपटपियांह, विण वादल विछूटियां।
आंख्यां आम थयाह, नेह तुमीणो नागड़ा ॥ २ ॥

अंत—

जे तलियां जग मांहि, घातां बीचै वातियाँ।
अही उहांही मांहि; निर्वंध्यो न मिटै नागड़ा ॥१९॥
अह्मांडं लगतांह, मोटाई मांनों नही।
पाथर पूजतांह, निफल न हुवै नागड़ा ॥२०॥

नागडे रा दूहा

॥ संपूर्ण ॥

विषय—

नीति के २० सोरठे

संख्या १२५. वाणियाँ, रचयिता—नागाअरजन। इनकी वाणियाँ संख्या ५६ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरणपत्र।

संख्या १२६. पावस पचीसी, रचयिता—नाथकवि, कागज—देशी, पत्र ८, आकार—६$\frac{3}{4}$×४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण, (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, रचना संवत्—१९३७ वि० = सन् १८८० ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० परसुराम जी चतुर्वेदी वकील, स्थान, वलिया, जि० वलिया, (उत्तर प्रदेश)

आदि—

अथ पावस पचीसी

॥ नाथ कवि कृते ॥

॥ दोहा ॥

सघन विघन गनपति हरैं दुख दामिनि को दारि।
सुख वरषा वरखैं हरख नाथ साथ हितधारि ॥

॥ कवित्त ॥ घनाक्षरी ॥ राजा का रूपक ॥

कामिन के काज दलसाज दलवे कौ आज महाराज पावस सुराज रूप धारे हैं।
कारे कारे बादर मतंग मतवारे भारे सितासित वारे हय गरज नगारे हैं।

विज्जु छटा छटा चरि भटा केसे पटा झारैं बूंदिन की झड़ी बड़ी तीर के कतारे हैं।
'नाथ' कड़खैत के से दादुर बहादूरसे बलाका पताका पौन पंछी हरकारे हैं ॥ १ ॥

॥ मंत्री का रूपक ॥

मोतीमाल है विशाल भली सी बकावली की पंचरंगी चादर है चादर सुरंग के।
पागरी लता की वांकी फब है अजब पेंच सरपेच फूलन के छाल पटरंग के।
छूरी केवरा की तासु धूरी पूरी ओप आन बीजुरी कृपानवान बूंदी धनुसंग के।
दासैं खग मृग रासैं 'नाथ' मंज कुंज भासैं पावस सुसाहब से साहब अनंग के।

मध्य—

॥ कसाई रूप ॥

अति अँधयारे घन कारे से नकारे भेष मैली कुचैली सी धोती छालन की छाइ है।
धार करैं विज्जु तलवार धार विरही पैं रसरीलता की वाँकी फँसरी बनाई है।
खासा गँडासा का सा सुधार डारपात जुत पूरी छूरी केतकी की धूरी तासु लाई है।
गायसी विरहिनी को ती को हाय 'नाथ' विन नेकहू बसाई नाहि पावस कसाई है ॥१३॥

॥ गज रूप ॥

आगे सटकारी कारी घन की रे धारी सुंड पाछे एक धारी लघु पुच्छ से लफायो है।
बूँदीसुंड सीकर सी छोड़े जनु सीकर सी दांत बकपाँत गुंज घंटा घहरायो है।
गर्जन चिक्कार के प्रकार है अपाररव तडित सुहौदा हेम जड़ित सुहायो है।
'नाथ' विनु साथ सखि आज तो हमारे द्वारे पावस मतंग मतवारे भाँत आयो है ॥१४॥

× × ×

॥ फिरंगी रूप ॥

फुरतीले कुरतीले टोपी पतलून मेघ बीजुरी सी तड़प झड़प हूँ बिहंगी है।
फूली लता घड़ी चेन, बकावली छड़ी केन, झींगर भँवर वाजे अरगन रंगी है।
आशव खजूर सो हजूर मधुपान करैं, कंद कूट विसकुट छाल जंगी है।
कुंज•••है मेनेम संग ले मयूरी मेम; दास खगमृग 'नाथ' पावस फिरंगी है ॥ २ ॥

अंत—

॥ शिवरूप ॥

लता की जटा की छटा गज खाल घोर घटा मेघधार गंगधार विज्जु चंद छायो है।
बकमाल मुंडमाल जूगनू नयन भाल, बघछाल पीले पातकेला को सुहायो है।

भूरे से भसम सम पुहुप पराग राग अपराजिता फनीस सर सूल भायो है।
मयूरी सुगौरी शृंगीभृंगी नादकौरी आज पावसमों पौरीगौरी 'नाथ' बनि आयो है ॥२५

॥ दोहा ॥

द्वीपन[७] में दृग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] की जान।
जन्म मास व्रजनाथ को मंगल कर कल्यान ॥

॥ शुभम् ॥

विषय—

वर्षाऋतु का राजा, मंत्री, पहलवान, नट, बाजीगर, पंच, पंडित, जोगी, चोर, डाकू, बधिक, कसाई, गज, सिंह, पथिक, गवैया, दूलह, सूम, काम, इंद्र, फिरंगी, कामी, वीर, और शिव का रूपक बनाकर २५ कवित्तों में वर्णन किया गया है।

रचना काल

॥ दोहा ॥

द्वीपन[७] में दृग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] को जान।
जन्ममास व्रजनाथ को मंगल कर कल्यान ॥

विशेष ज्ञातव्य—हस्तलेख में लिपिकाल नहीं दिया है। इसके मुख पत्र पर किसी लोकनाथ चौबे की पेंसिल में निम्नलिखित टिप्पणी है जिसमें नाम और पता अंग्रेजी में दिया है :—

शुभाशिषः

कृपा कर मेरे श्रम को विचार कर शीघ्रतर इसे छापिये। और एक कापी मेरे पास भेजीये। भारतमित्र के एक पेज (अंग्रेजी अक्षरों) में पूरा होगा और संपूर्ण एकी बार छपने में अच्छा होगा नहीं तो इसका मजा जाता रहेगा।

लोकनाथ चौबे,

ऐट जम्बू सीटी

केर ऑव पंडित गनेश प्रसाद चौबे

चीफ जज ऐट जम्मू

इससे पता चलता है कि काश्मीर जंबू से यह पुस्तिका 'भारत मित्र' में प्रकाशनार्थ भेजी गई थी।

ग्रंथकार, नाथ कवि के विषय में कुछ पता नहीं चलता अनुमान से लोकनाथ चौबे वही विदित होते हैं।

संख्या १२७. प्रबोधचंद्र नाटक, रचयिता—नानकदास, कागज—देशी, पत्र—१५७, आकार—६×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२३७, पूर्ण, रूप-सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

ओं स्वस्ति श्री गणेशाय नमः अथ प्रबोधचंद्र नाटक लिख्यते, नानकदास कृत ओं नमो भगवते वासुदेवाय ॥ दोहरा ॥

विघ्नन हरन मंगल करन क्षेम कुशल परसदि।
ऊस्तति ऊस्तंति जोग हरि हितकर ऊचरों आदि ॥ १ ॥
जगत नाट जिसु नट रच्यो ऊपतखपत समरथु।
मैं तिस कर्त्ता पुरुष को ध्यावत मंगल अरथु ॥ २ ॥
नरु नारायण को प्रणाम श्री गुरु चर्ण जुहार।
बोधचंद्र नाटक कहौं सुनो संत चितधार ॥ ३ ॥

चौपाई

दक्षण देश अवंती नगरी। जाकी प्रजा धरम रत सगरी ॥
तहा रहे कृस्नदास भटनाम। अति प्रवीन पंडित गुन ग्राम ॥
परम विवेकवान हरि भगत। अहिनिस कृस्न भगत आसकत।
तिनका एक शिष्य था मूढ़ जो बनकर चंचल।
गुरु ताको उपदेश बतावै। पर वहु मंत्र हृदै नहि लावै।
जद्यपि गुरू उपदेश न धरै। पर गुरुकी सेवा नित करै ॥
ताते गुरू को लगे पियारा। चाहै शिष्य का होय ऊधारा।
ज्ञान मुक्ति दायक नर देहा। भजन करन को अवसर एहा ॥

+ + +

यह पोथी पूरन करी "बली राम" हरि संत
ताको भाखा में रच्यो, "नानक दास" विनवंत ॥ १ ॥

अंत—

दोहरा

मरो जीवरा होइरहु जे पात है लाल।
मरो जीवरे की भई या वहु विध की है चाल ॥ १८६ ॥
प्यारे के कर जेवरी हाथ हथेली प्रान ॥
सुखों मौनता सीस सों चलणों पंथनिवान ॥ १८७ ॥

इह इतहास पुनीत बड़ जहाँ अध्यात्म ज्ञान।
पढ़े सुने जो प्रीत सों पावैं पग भगवान ॥ १८८ ॥
संवत सत अखादस[८] अवर षष्ठ[६] चालीस[४०]।
मंवर शुक्ल पंचमी पोथी पूर्ण करीस ॥ १८९ जोड़ ७३० ॥

इति श्री प्रबोध चंद्र नाटके षष्टमों अंक समाप्तं ६ ओं नमो भगवते वासु देवाय ओं नमः शुभम्

विषय —

६ अंकों में, विवेक, वैराग्य, मोह, काम, दंभ, श्रद्धा, शान्ति आदि के कलह वर्णन द्वारा ब्रह्म ज्ञान का उपदेश वर्णित है। कथा मुख्यतया वेदान्त की परिपाटी पर अवलंबित है।

संख्या ४२८ क. दत्तात्रेय सतसंग उपदेश सागर, रचयिता—नायक, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप)—५१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान महंत श्रीरामचरितर भगत, स्थान और डा०—मनिअर (मठ), जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसायेनमः श्रीरामानुजाये नमः
लीष्यते दात्तात्रेई सतसंग उपदेस सागर।

॥ दोहा ॥

गुरु दयाल लषी शीष्य जब पुछत भए रुचि वएन।
स्वामी कहिये बुझाए मोहि समुझत होए हीए चएन ॥ १ ॥
दातात्रेय मुनीशवर जोगीराज निधान।
चतुरवीस गुर कीन्ह जो कामन करि अनुमान ॥ २ ॥
भाव गहत की ग्यान गुर कीधौं फुंकावत कान।
केहि केहि बीधि मुनि कीन्ह गुर सो सब कहीअ वीधान ॥ ३ ॥
कही पुरन पद प्रेम करि रूपक लछन भेद।
जेहि विधि ते होए राम पद नसै बीपै रस पेद ॥ ४ ॥

श्री गुरोवाक्य ॥ दोहा ॥

सुनहु सीष नीज भेद यह वेद पुरानन्ही गाव।
संतन्ही के मत दीठ करे पुनी भवसागर नाव ॥ ५ ॥
मुनी सुपदेव एह कहिगयो सूनही परीछत राए।
सो मत तुमसे कहत हों वेद वीहित एह न्याए ॥ ६ ॥

अंत

दोहा

ग्यान वीमल सतसंग यह कहेऊ प्रछीतराई ।
पोजी होई सोपाई हे शंत संघती में जाइ ।। ८४ ।।

ईतीश्री उपदेस सागर दात्तात्रेय सतसंग चौवीस गुरू उपदेस करनो नाम चौबीसमो वोध परीकरन ।। संपूरन समापत सुभ समत् १९२२ समै नाम मीती असान्ह सुदी ।। ३ ।। वार सोमार पठनार्थक रामसरन राम कोईरी चो रामलगन राम कोईरी साकीन मनीअर प्रगने परीद जीले गाजीपुर० ।। दसपत हस्ताअक्षर गंगाराम कायेस्थ मोकाम मनीअर प्रगने परीद जीले गाजीपुर सन १२७१ साल मोः मनीअर ।।

विषय—

दत्तात्रेय और उनके चौबीस गुरुओं की कथा वर्णित है ।

संख्या १२८ ख. सर्व सिद्धांत श्रीराम मोच्छ परिचय, रचयिता—नायक, कागज—देशी, पत्र—२५४, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी । लिपिकाल—१९२२ वि० = सन् १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरितर भगत, स्थान और डा०—मनिअर (मठिया), जि०—बलिया

आदि—

श्री रामानुजायेनम् ।। सर्व सीध्यांत श्रीराममोछपचे ।।

।। दोहा ।।

श्रीगुरु चरन सरोज उर आनत सबसुष पुरि ।
जासू वचन रवि उदित भव मोह महातम तुरि ।। १ ।।

।। दोहार्थ ।।

एह ग्रंथ को नाम सर्व सीध्यांत श्रीराम मोछ
प्रचे धरेव है ताको अर्थ सर्व सीध्यांत

कही सब वेद सव उपनिषत सब स्म्रीती सव शंहिता सब पुरान सब इतिहास सब रामायेन के सीध्यांत श्री राम नाम श्री रामस्वरूप श्री राम रामधाम श्री रामलीला है सोई मोछ रूप कही संसार बिस्मरन प्रम पद के प्राप्त ताहि के प्रचे कही चीन्हव एह ग्रंथ मो वरनन करेंगे ताते एह ग्रंथ के नाम सर्व सीध्यांत श्री राममोछ प्रचे कहे अरू टीका को नाम प्रमानंद लहरी धरे है ताको अर्थ ।। जैसे अनेक नदी है अनेक नाम है ।। जते जुदा जुदा वहत है तते भीन्न भीन्न नाम माहातम है ।। जब सव नदी एक समुद्र ही मो मीलो है तब

सर्वं नदि नाम माहात्म मिटि के एक सामुद्रहि भयो ॥ जाते सर्वं नदीन्ह को पुर्व ॥ सरूप सामुद्र प्राप्त भयो तब जल एक रस निर्मल थीर भयो प्र अगम लहरी बनो है।

अंत—

अवध में राज काज करे सब लोग को सौपाये है।
जाके पद अगम कहत वेद सास्त्र सो दुर्लभ दरस मुनि ध्यानन्ह मो पाये है।
अवसो रामचंद जाको वेदहु न अंत पावै भगतन्ह के हेतू नरलोक में कहाये है।
'नायेक' कहत सब भांति सुप दीन्ह प्रभू दीन के
दयाल नीज लोक के सीधाये है ॥ ३४ ॥

॥ सोरठा ॥

हरि महि भार उतारि सुर मुनि सुष सरवदए।
पुनि निजलोक शीधारि चारि भूजा रूप प्रगट करि ॥ ३५ ॥

इति श्री सरव स्रीध्वांत श्री राम मोछ प्रचे पुर्वं तीनि कल्प थी रामचंद्र अवतार लीला चरीत वरननो नाम सपत दसमो स्तरंग ॥ १७ ॥ ईती श्री कथा राममोछ परचे समापत संपुरन शुभ समत १९२२ शमै नामनीति शविनमासे शुकुल पछे शोम वासरे पूनिर्वा पठनारथ रामसरन सन् १२७२ शाल ॥

विषय—

ब्रह्मज्ञान तथा श्री रामचंद्र जी के तीन कल्पों के अवतारों की कथा का वर्णन किया गया है। ग्रंथ १७ तरंगों में है जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं :—

१—प्रथम तरंग—श्री गुरू पद वंदन और श्री राम स्वरूप रकार यकार और मकार की महिमा का वर्णन पत्र १ से १३ तक।

२—द्वितीय तरंग—श्री राम स्वरूप और भापा निरूपण तथा आचार्य लोगों के मत वर्णन पत्र १३ से २८ तक।

३—त्रितीय तरंग—सर्वं आचार्यों के मतवाद और ब्रह्म निरूपण पत्र २८ से ४७ तक।

४—चतुर्थ तरंग—द्विज ब्रह्मा राजा त्रिमींन सरमा पत्र ४७।

५—पंचमोस्तरंग—ब्राह्मन के रूप रहस्य और सत्संग वर्णन पत्र ४७ से ५५ तक।

६—षष्ठमोतरंग—विमल ज्ञान वैराग्य साधन वर्णन पत्र ५९ से ९० तक।

७—सप्तमो तरंग—विचार अविचार और ज्ञान के पंद्रह अंग, विभ्रममोचन ज्ञान, श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार वर्णन पत्र ९० से ११२ तक।

संख्या १२९. कवित्त सुकवि नित्यानंद के, रचयिता—नित्यानंद 'सुकवि', कागज—देशी, पत्र—१ (खर्राकार), आकार—८ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर जी मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेसाय नमः अथ कवीत सुकवि नित्यानंद कृत लिप्यते ॥

॥ कवित्त ॥

मंजुल मराल मन रंजन मनोहर सी मुकुत महसी मकरंद मधुमंद की।
पावन परम पद पवन प्रकासभान पूरन पुनीत परमानंद पसंद की।
'नंदभनि' निगम अगम कहे नेति नेति भरक निवारन सेस दुति मंद की।
बरनत बरन करन सुप सिर धरि चरन सरोज रज पावन मुकुंद की ॥ १ ॥

॥ श्री गुरु चरनन बरननं ॥

करुन कमल कल कोमल क्रपाल कमनीय कमलालय प्रभाकर प्रभान के।
सुंदर सवास वास विविध हुलास आस विधि को सदाइक सहाइक सुध्यान के।
रंजित पराग रज अजित द्रगन जग भागत जगत तम नासक॰अज्ञान के।
मुदित मलीद मन रसिक मकरंद नंद वंदो अरविंद पद सुकवि निधान के॥ ३॥
तामरस लोचन गोविंद अरविंद मुप सुषमा सदन सुषदाइ जग जाल को।
सदाब्रज जीवन सजीवन जसोमति को तेरे ढिग ठाढोरी सराह भाग भाल को।
नंद जनिहारी मनुहारि कर पांइपर धाइ धरी लाड उर उठि नंदलाल को।
मापन करै री मन रापन निहार ग्वारी चापन दै मापन री मदनगोपाल को।
कलित कलंक न ससंकन मयंक अंक अंकतन पंक संक सुरभान मद की॥
छविधर छपान छपाइ छवि छाजतन सोइ परीछित को न छुद्रछल छंद की।
राका रजनीस तम पीवन सुदीस तन उकति विचारि नंद जुगति पसंद की॥
छीर निधि गगन मैं फनिंद कुंड क्रत पै सोवत लसत प्रभा पूरन मकुंद की॥ ४॥
अंवर अवास वास विमल प्रकास कर विविध विवुध गुन गावत महानी के।
चांदनी वितान तारे मुकुतान झालरै सो कलित ललित दुति दीसत प्रभानी के।
रितुराज राका रजनीस उर स्यामता न वरनि अनूप 'नंद' जुगति॰वपानी के।
सुधानिधि सेजपर सुषमा निवास किधौं विथुरे विलास के सवास रमारानी के॥५॥
सीतल सेज स्वछ अछ परसत गीत नवल धवल छिति छोर लों प्रभासी है।
उडगन मोती महि मंडित अपंड जोति सहित मकरदुति दीपति सुधासी है।
'नंदभनि' वीचनी मरीचनि सों झलकत ललकत राका पाय कौतुक कलासी है।
छीर निधि चंद्रिका मैं इंद्र उर स्याम ज्यों फनिंद सेज सोवत मकुंद अविनासी है॥६॥
मंदिर उठाइ ब्रज रापो पुरंदर ते झारो ग्राह तेठ वारो अघ अवल महाकरी।
कीनी सिधि सुहृद सुदामा जु के धाम ठाम द्रोपदी की रापी पति सुनत सुहाकरी।
तारन तरन असरन के सरन नंद वीरद विसारो यते हहर हहाकरी।
आरत पुकारत निहारत न नेकं अब करुना करन कान्ह करुना कहाकरी॥ ७॥
पूरन प्रकासमान भासमान भासमान जासमान अंनन अमान दुतिरासी के।
पायतन ताप के सताप के हरनहार वारिज वरन जोग जुगत प्रकासी के।
'नंद' भनि गुन मनि जटित अटित छबि छाजत छबीले छिति छुद्र छलनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के॥ ८॥
मंडन मही के रघुकुल कलनी के प्रेम नेमवतजी के ही के अवध विलासी के।
दंडक अपंडन न पावन करन दल दानव दरन वर सेसा चल वासी के।
सेवत अगाध संत पावत प्रसाद जग मेटत विषाद मेघनाद मदवासी के।
वंदत मुनीश्वर महेश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट वीलासी के॥ ९॥
ज्ञान वरदानी विधि गावै वेद वानी सदा सारदा वपानी बात मानी मोदरासी के।
असरन सरन परन परिमानि मानि जानि दीनपाल दीन धाम सुपरासी के।
'नंद' लपि आवै ते परमपद पावै फेर अवननि आवै लोभ छोभ छलवासी के।

वंदत मुनिश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १० ॥
भवभय वारिध के वोहीत अनूप रूप निरलंब अवलंब विरद प्रकासी के।
तत्वग्यान ध्यान के निधान सुरमानत हे तिमिर अग्यान दीप दीपति सुभासी के।
जनमन मधुकर के है अरवृंद नंद पावन अलोक सोक हरन निवासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥११॥
अरुन वरन दुति धरन हरन दुष भरन सकल सुष सुषमा सुधासी के।
भावन सुहावन है दारुन दुसह दुष पावन अमरपद हद दुति नासी के।
'नंद' नवनीति हुते नरम निहारियत नीरजनी कोइ वारि पारिजात वासी के।
वंदित मुनीश्वर महेश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १२ ॥
रोषन कुवुधि वसुधा के वुधि वोधन ते सोधन असेप मुक्ति जुक्ति गुन रासिके।
तंत्र तन तत्व से है मंत्र अनुरक्त से है जगत विरक्त सक्त जुत मनवासी के।
'नंद' सुष कंद से सकल सुरवृंद से सो सेवत अनंद जगवंद अघनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छविश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १३ ॥
सीतल सुवास वास हीतल निवास कर परम प्रकास भास करत जरासी के।
सिद्धि नव निद्धि वृद्धि दायक सहायक से सब जगलायक सुभायक निवासी के।
नंद भनि निरषत पावत परम पद गावै श्रुति सारद विसारद सुवासी के।
वंदित मुनिश्वर महीश्वर छतिश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १४ ॥
सगुन रजोगुन से रंजत निहारियत वारियत वारीजात गात दुतिरासी के।
तम तेज नायक से परम प्रभाइक से त्रभुवन नायक अषील मनवासी के।
मन जन रंजन असुर दल भंजन है अंजन विहीन छबि लीन अघनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट वीलासी के ॥ १५ ॥

कवित्त रामचंद्र की

विकट कपि कटक संघठ उदद भटन के दपटि दल चलत रघुवीर अवनीस के।
गिरत गिरी वंक उठि उदधि में पंक सुनि पंक गढ़ लंक उर संक दससीस के।
दुषित दिगदंत दिगपाल भयवंत तरु झरत अनंत घलवंत वलषीस के।
अवनि हलत कुल कोल कल मलत ततल कछतल मलत फन मलत फनीसके ॥१६॥
जलधि उछलत तिहुलोक पलभलत मही मेरु पति हलत मन डुलत अतिधीर के।
बढ़त उर संक धीर रहत नहि लंक दसमथ्य मदरंक अतंक सुनि नीर के।
अनिल की ज्वाल अति करत विकराल दिग दुरत दिगपाल छितिपाल वहुभीर के।
कोप परचंड कर दुवन दल षंड जब गहत कोदंड भुजदंड रघुवीर के ॥ १७ ॥
बाल उर फारि परदुषनहि मारी दल दनुज संघारि हंकार धाए।
समर जैधीर गंभीर दोउवीर अव कपि कटक ले नीकट छाए।
समुद मद दूरि करि सेतु गिरि पुरि भरि भुवन जस भुरि सुर सुजस गाए।
कह्य दसमाथ तुम ताहि नरनाथ पथ पाथ करि नाथ रघुनाथ आए ॥ १८ ॥

मार्यो मेघनाद सुनि स्रवन सुलोचनि के लोचन स्रवत जल सुरति अंदेस की।
जाचो जगदीस पति सीस मोहि दीजिए जु कीजिए सनाथ नाथ आरत संदेश की।
सुनि दीन बात जल जात नैन जलजात पुलकित गात भुली सुरत सुरेस की।
तेरोपति ड्योढराज साज दै पठाउं सुनिवानी अवलीजै रजधानी कौसलेस की ।।१९।।
चारो वोर समुद विहद नदहद कीने दुधष्ट दुरंत कोटि ओठ पुर परके।
कोटिन कराल काल गंजन विकट वली निकट क्रपान गहेवीर निसिचर के।
मानत न संक बंक रहत निसंक अंक 'नंदभनि' पाय वरदान दानी हर के।
बैनवर चर के सुनत हिय हरपे सो करके उदंड भुजदंड रघुबर के ।। २० ।।

पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

राम कृष्ण की वीरता का वर्णन किया गया है ।

संख्या—१३० क. कवित्त हजरत अली साह मरदान सेरे खोदा सलवातुलाह अलेहवाल हीवोसलम की हाल गढ़ खैवर की लड़ाई का तथा कवित्त हजरत अली के मांजिजा के, रचयिता—नैनकवि, कागज-देशी, पत्र—११, आकार—९ × १३३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ), १७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़।

आदि—

कवित्त है हजरत अली साह मरदान सेरे पोदा सलवातुलाह अले हवाल हीयो सलम की हाल गढ़ पैवर की लड़ाई का ।।

पर्वतान थहरान भाग असमान भुलान्यौ ।
अतल वितल चल उथल विकल सेस डेरान्यो ।।
मछ कछ आरछ गछ सागर विनुपानी ।
रात दिवस ह्वै गयो धुंध चहुदिस छितरानी ।।
धव धकान अरी को हियो 'नैन सुकवि' तवयौं पढौ ।
जत्रे सेर अलाह के सनि सिलाह पैबर चढौ ।। १ ।।
गिरयौ गर्भनी गर्भनाह तन लपत न नारी ।
पवन गवन रहिगयौ अर्याभो चक्र कुभारी ।।
दसो दिसा डग मगी वगी गढ दिसा सिरानी ।
सेस देस 'कविनैन' धनै नहि कहत कहानी ।।
धूर धार लागी गगन, गरजि बंव उछाह की ।
कोह कोह अंदोह जग चली सवारी साह की ।। २ ।।

अंत—

दुल दुल सवार दल काफिर विडार अमियौंके
मोषतार औलियों के सरदार है।
सायल के घार को विकाने कहूँ वाना लगायो
सो अवारनाम मुसकिल कुशार है।
संकट अपर परयो सलिमा पुकारत हा
भयो कनहार त्यौंहु लास को संभार है।
दीन्हो जुलफिकार जिन्हें परवर दिगार अली हैदर
करार लाफताके ताजदार है ॥ १६ ॥

सिंधु समान जहान के बीच में सीप मदीने की राची थली है
साई सेवाती को रूप धरे वरष्यौ रसपान जो भाँति भली है।
नूर को नीर परयौ तहाँ आइ जहाँ अबदुल जी की गली है।
प्यारो विचारो निहारि सबै मिलिमो ... ...

अपूर्ण

विषय—

हजरत अली की खैबर की लड़ाई तथा हजरत अली के माजिजा का वर्णन क्रमानुसार छप्पय और कवित्तों में किया गया है।

संख्या ११० ख. अंगद रावण संवाद, रचयिता—नैनकवि, कागज—आधुनिक, पत्र—३, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ८$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़

आदि—

सिंधु बाँधि उतरयौ कहूँ भनक परी कवि नैन सो।
सोइ कहत है कपित हूँ रामचंद्र सुनिअस सुको ॥ ३ ॥
गरुडधुज गोविंद गरुडगामी गरुडासन।
स्रीपति स्रीधर सगुन सिरीमुष हाँस प्रकासन।
कमल नैन कवि नैन कमल करतारु विलासी।
स्याम रंग नवरंग गंग निज चरन उजासी ॥
सदाछीर सागर सयन औन वंस अवतंस भू।
सोइ रामचंद्र दसरथ सुअन रे दसकंधर मंद तू ॥ ४ ॥

+ + +

देवन को दुपहरन करन अपनी प्रभुताई।
राछसगन संघार देन विविपन ठकुराई॥
मंदोदरी सिंदूर दूरि कर चूरन चूरी।
या कारन कवि नैन देखु जल पाहन पूरी॥
चतुरंग सैन तजि संग रह्यौ भालु बांदरन की चमू।
सोई रामचंद्र दसरथ सुअन रे दसकंधर मंद सू॥

अंत—

कंपमान राछस भयौ हिए मनावत ईस को॥ ३०॥
सभा मध्य कवि नैन देपि अंगद रिपि वाढ़ी।
थौल फौल बेडोल कहत दसमौल सुगाढ़ी।
ऐ सपूत भए प्रगट वालि के वदन निहारो।
इन्ह समान नही मीर आशु लौं भौ जुग चारो॥
पितहिं पिठायौ चचहि मिलि इन्है प्रदछिन कीजिए।
सुपनी सत्रु कै दूत वनि आयौ उत्तर दीजिए॥ २१॥
निज करनी निज साथ होत करनी फल ताको।
कहा बाप कहाँ पुत्र नैन कवि कोउ न काको॥

—अपूर्ण

विषय—

रावण अंगद संवाद वर्णन किया गया है।

संख्या १३१. भक्ति कल्पतरु, रचयिता—पदुमन (स्थान—वादमनगर), कागज—देशी, पत्र—१४२, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७३६ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत रघुनाथ प्रसाद श्रीवास्तव, ग्राम—सोनवरसा, डा०—वैरिया, जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमः श्री कथा भगत कल्प'''कजरेन॥
वंदि भाल सिर नमित करी। सद्''''
त दिव्य दिग रोचप ही॥ जय जय गिरिजानंद॥

॥ प्रद॥

पूरन परमानंद॥ प्रगट कासना कल्पतरु''''''''

\+ \+ \+

संमत सत्रहसय जव भैएउ । चौनतालीस उपर चलि गएउ ॥
असित पंचमी मास असारा । गुर दिन कथा कीन्ह अनुसारा ॥
वादमनगर सो ठौर सुहावन । वसै विपुल सरिता सर पावन ॥
षाग तड़ाग निकट चहुँ फेरा । पुरजन मुदित रहहि तहं वेरा ॥

\+ \+ \+

॥ दोहा ॥

भूपति सिंघ दलेल तहं भुमि पुरंदर भोग ।
भंजन अरि रंजन सजन को तसु पटतर जोग ॥

कह्यो तास पुरुषा नॄप भए । करि करि रन्ह अमर पुर गए ॥
वेनु वंस छत्री तसु जाती । पैर वार पै······ज्ञाति ॥
बावदेव तित ते इत आए । तिलक करनपुरा के पाए ॥
कीरति सिंह तहि सुत भूपा । रामसिंघ तिनके अनुरूपा ॥
माधवसिंघ नॄपति तिन्ह जाए । ता सुत जगत सिंह जसु पाए ॥
प्रिथुम मसजि निज॰देस॰ वसावा । हिमतिसिंह तनै तिन्ह पावा ॥
धरम धुरंधर गुन गन भरे । विपिन विरंचि नरतिन्ह करे ॥
हेमतसिंघ नॄपति के नंदन । रामसिंघ नॄप वैरि निकंदन ॥

॥ दोहा ॥

नंदनराम नरिन्द के अवहि छत्र जेहि सीस ।
जीअवो सो जुग जुग जगत मह सिंह दलेल छिति ईस ॥

पिता सहोदर सरिस भुआरा । कृष्णसिंह सिररांज कह भारा ॥
आपु सदा सुष भोग विलासु । धरम कथा रत गुनि गन पासु ॥

\+ \+ \+

पंडित सभा नरेस कराए । तुलाराम द्विज मनि हकराए ॥
तुलसी राम सिश्र मति माना । सभ पुरान जिन्ह कंठ वषाना ॥
गुना राम पाठक मति भेछन । अवरो विप्र समूह विचछन ॥

॥ दोहा ॥

सव मिलि कथा प्रसंसहि 'प्रदुमन' करहि प्रकास ।
स्रोता सिंघ दलेल तसू भक्ति कलपतरु जासु ॥

\+ \+ \+

मध्य —

सभै गोप सानंद अति देपि सिद्ध सभ काम ।
'पदुमन' प्रभु के संग भए सभ आए निजधाम ॥

अंत—

पल ते गारिभ नितमह दोपा। पंडित ते पाएउ परितोपा।
चारि मास मह पुरन कीन्हा। स्रवन भक्ति स्रोतहि जस दीन्हा ॥
मै मति मंदु जै दुचिताई। वरने तजितहि रुछयता आइ।
तहाँ ते वुद्ध जन लेहि सुधारि। साधु सभा सभके उपकारी ॥

लेपक ना सहिलि प्रतभुलाइ।
सो अपराधन मोहि सिर भाई ॥

॥ दोहा ॥

'पदुमन' विनवै पानि परि सभहिते सिर नाए।
पठवहु सुधारि लिपहु सूद्धि जिमि पद छंद न जाए ॥

छंद

जिअउ श्री नृपति सिघ दलेल सुजान जिन्ह एह जस लिओ।
'दास पदुमन' गुन परम अनुताहि पर्वत सम कियो।
श्री राम सिंघ नरिन्द नंदन सुजस जुग जुग लिओ ॥

॥ दोहा ॥

भगति कलपतरो पचदस पलोघ पहिलो सापा।
स्रवन भगति अम्रत स्रवै सत स्रवन ते''पा ॥

इति श्री पावन भक्ति कथा इति श्री भगति कल्पतरो स्रेष्ट भक्ति कथवे पंच दस पलो प्रका ॥ १५ ॥

विषय—

श्रीमद्‌भागवत का संक्षिप्त अनुवाद है। ग्रंथ रचना पंद्रह पलो (? पल्लवों), अध्यायों में हुई है।

रचनाकाल का दोहा

संमत सत्रह[१७] सय जब भैएउ। वोनतालीस[३९] उपर चलि गएउ ॥
असित पंचमी मास असारा। गुर दिन कथा कीन्ह अनुसारा ॥

संख्या १३२. जैमिनि पुराण, रचयिता—परमदास, कागज—देशी, पत्र—१५०, आकार—९३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७१२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६४१ वि०=१५८२ ई०, लिपिकाल—सं० १७९३ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एम० ए०, प्राध्यापक हिंदी, हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस

आदि—

श्री गणेश देम्वता जी शहाये

श्री भवाणिजि शहाये ॥ श्री रामगती देहु शुमति ॥

श्री पुस्तक जैमुणि कथा ॥ श्री अशमेध कथा राजा हुदीश्ठील ॥

प्रनौ सुंदर कुंडल वैना । शशीलिलाट अति शोभीत नैना ॥
कटि किंकिनी श्रवनपुर चरना । विघीनी वीनाशण पातप हरना ॥
लंबोदर प्रशाद तोहारि । हिर्दै आनेवाश कहि देहु विचारि ॥
कथा कवित गीव छुन्द विचारा । जहा थाको तहा करहु नीश्तारा ॥
शुन्डल दशन वीजै शम सोहै । लंवित शुन्ड देवगण मोहै ॥
बुधीम शुद्र चेत मन दायेक । गौरि तण्यै शुभ सदा विनायेक ॥

\+ \+ \+

रशाधानी कर रछया जो रीपु दाढै बलवीर ।
परगदास कवी भाषा मोही नीश्तारहु जलतीर ॥

गोरषपुर देश शहुआरा । जगत वीदीत जानै शंशारा ॥
बड़ागाँव वश पुर्ष हमारा । तजीन्ही देश जव परा अकाला ॥
पंछीम देश वीध के बासा । शहस्त्र नाम मै लिन्ह नेवाशा ॥
हिग हरी माहरी भगत शआना । शजन शंग शुभै शुष माना ॥
ताशु तनै भौ मेघ शेआना । महा वैशनव हरी हीअमाना ॥
जीतीक कुरवी कुर जैशवारा । नीमल कुल परिवार हमारा ॥
अश्मै शमै लीन्ह विधी भाषी । अक्रम कर्म वीधाता शाषी ॥

॥ दोहा ॥

और वंडापन आपन भल भै ऋन बपान ।
घरमुष हाश्व छोन्डा है तव न कही शअ ठान ॥

अंत—

॥ चौपाई ॥

शंवत शोरह [१६] शै चली गयेउ । वरषन्छेआलीश [४६] उपर भयेउ ॥

पतीशाह अकवर शुलीताना । चारिहु षंड ताही कर आना ॥
रहै लहावर नुर शंशारा । दुवरही वरी अहीते नही पारा ॥
दुर्ग देस गंढ रहा न कोहै । अमल शवत्र ताहि कै होहै ॥
हाजीपुर परम रह जहीआ । शुनीअ पुरान कथा को तहीआ +
वशै हाजीपुर गंगा के तीरा । गंगा संगम नीमल नीरा ॥
नीती प्रात (? प्रति) ही नर मंजण करहे । वाढै धरम पाप शंघ रहै ॥
वैशाष माश पांष उजीआरा । त्रीत्रीथी तीरोदशी शोम गुरवारा ॥
हस्ता नीन्छीत्र जन्म शशी भयेऊ । कथा आरंभ ताही दिन कीयेउ ॥
वशाही नरोतम दिच्छत ताहि । भारद्वाज गौत्र शो आहि ॥
ताशुत भौ हरशीघ नीप माना । अती पवीत्र पंडीत जग जाना ॥

॥ दोहा ॥

ताशु तनयै धरनीधर तीन्ही शभ बुधी म आन ।
'परमदाश' कीउ भाषा रश दिच्छीत कहा पुरान ॥

॥ चौपाई ॥

जन्मै जै नीप पुन्छै लीन्हा । कैशन जग्य पाण्डन्ही कीन्हा ॥
ताही सुनै कै इंछया है मोरे । रीषी जैमुनी पाव वंदौ तोरे ॥

\+ \+ \+

जो येक पर्व शमापतह कीन्हा । जो वाचै तेही भोजन दीन्हा ॥
वस्तु देहु शौवन कै षोरा । हाटक तौली देही दश तोला ॥
थोर थोरं जो वीशनव करावा । दिहले पुन्य होवे अलपावा ॥
अशमेध्य शो नौपर्व जो भयेउ । हस्तीनापुर वाश दुदीस्ठील कीयेउ ॥

॥ दोहा ॥

जन्मै जै नीप श्रोता जै मुनी कहा मन लाये ।
अशमेध्य जग्य महाभारथ चौदह पर्व शीराये ॥

इति श्री अशमेध्य जग्य महाभारथे जैमुनी मुनी शंशक्रीत भाषा परमदाश कीअते चौषाठीमो अध्याये ॥ १४ ॥ ६४ ॥

इति श्री जैमुनी मुनी कथा शमामपतह जो देषा शोलीषा । ममदोष न दीअते पंडीत जन शौ वीनती मोरी । छुटल अन्छर लेव शव जोरी ॥ शीधीरस्तु शुभमस्तु ॥ लीषा रहै बहुत दिठा मेटी न शंकै कोई । लीपनीहारा वापुरा शो गली गली मीटी होई ॥ पोथी लीषावल दआराम कुरवी शुत नरोतम महतौ शाकीन चंडकुरा प्रगने पीली छी ॥ शंवत १७९१ शाल शमै नाम वैशाख शुदी शतमीदीन बुधवार को लीषा । अीपाती साहु शाहेब

मैहरवान उमरदराज शलतनती श्री महमदशाह गाजी जी ॥ श्री शुवै मलह बीर दीपा कीलापटने अमल शुवै बीहार ॥ श ११४३ शाल माह जीलकाद ता ॥ ६ रोज ॥ दशखत दाशानुही दास कुंजमनी दाश कायेस्प मन शाकीन बेरथु प्रगने तेलाठा ॥ मोकाम हीलशा प्रगने पीलीग्छी शरकार शुवै बीहार ॥

विषय—

संस्कृत के नैमिषिपुराण का अनुवाद।

रचनाकाल

शंम्वत शोरहशै[१६] चली गयेउ। बरषछेआलीश[४६] उपर भयेउ ॥
पातीशाह अकबर सलीताना। चारिहु पंढ ताही कर आना ॥

संख्या १३३, दानलीला, रचयिता—परमानंद, कागज—देशी, पत्र—१० (३२ से ४२ तक), आकार—९×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्रीगणेशायनमः

गुरु गणपति ने सीस नांमी रे।
प्रथम प्रणामुं सीतापति स्वामी रे।
देवी सरस्वति वाणी दीजै रे।
पद "दाणलीला" कीजै रे।
पद बंध कहूं इक दाण।
सुंद सी माथ सुबधना बहु साकरे ॥

\+ × +

संवाद गोपी ने गोविंद नो जे गावे प्रेमे संभले।
तेने 'परमानन्द' प्रभु परमेश्वर सांची ते प्रीते सुचमले ॥२॥

अंत—

(राग गरबो)

बजाबी रे बिढलवा सरीरं,
गोपी व्याकुल थई छै व्याकुल रे ॥
गोपी कुंज भवन सगली गई रे।
महीनां माइज में ल्यावे गली रे।

पतीशाह अकबर शुलीताना। चारिहु षंड ताही कर आना ।।
रहै जहावर गुर शंशारा। दुवरही वरी अहीते नही पारा ॥
दुर्ग देस गंठ रहा न कोहै। अमल शवत्र ताहि कै होहै ॥
हाजीपुर परम रह जहीआ। शुनीअ पुरान कथा को तहीआ +
बशै हाजीपुर गंगा के तीरा। गंगा संगम नीमल नीरा ॥
नीती प्रात (? प्रति) ही नर मंजण करहै। बाढ़ै धरम पाप शंव रहै ॥
वैशाष माश पांष उजीआरा। श्रीत्रीथी तीरोदशी शोम गुरवारा ॥
हश्ता नीन्छीत्र जन्म शशी भयेऊ। कथा आरंभ ताही दिन कीयेउ ॥
वशही नरोतम दिच्छत ताहि। भारद्वाज गौत्र शो आहि ॥
ताशुत भौ हरशीघ नीप माना। अती पवीत्र पंडीत जग जाना ॥

॥ दोहा ॥

ताशु तयर्यै धरनीधर तीन्ही शभ बुधी न आन।
'परमदाश' कीउ भाषा रश दिच्छीत कहा पुरान ॥

॥ चौपाई ॥

जन्मै जै नीप पुन्छै लीन्हा। कैशन जग्य पान्डन्ही कीन्हा ॥
ताही सुनै कै इंछया है मोरे। रीपी जैमुनी पाव वंदौ तोरे ॥

\+ + +

जो येक पर्व शमापतह कीन्हा। जो बाचै तेही भोजन दीन्हा ॥
वशतु देह शौम्रन कै घोरा। हाटक तौली देही दश तोला ॥
थोर थोर जो वीशनव करावा। दिहले पुन्य होवे अलपावा ॥
अशमेध्य शो नौवर्ष जो भयेउ। हश्तीनापुर वाश हुदीश्ठील कीयेउ ॥

॥ दोहा ॥

जन्मै जै नीप श्रोता जै मुनी कहा मन लाये।
अशमेध्य जग्य महाभारथ चौदह पर्व शीराये ॥

इति श्री अशमेध्य जग्य महाभारथे जैमुनी मुनी शंशक्रीत भाषा परमदाश क्रीअते चौषाठीमो अध्याये ॥ १४ ॥ ६४ ॥

इति श्री जैमुनी मुनी कथा शमामपतह जो देषा शोलीषा। ममदोष न दीअते पंडीत जन शौ वीनती मोरी। छुटल अन्छर लेव शव जोरी ॥ शीधीरंशतु शुभमस्तु ॥ लीषा रहै बहुत दिठा मेटी न शंकै कोई। लीपनीहारा बापुरा शो गली गली मीटी होई ॥ पोथी लीषावल दआराम कुरवी शुत नरोतम महतौ शाकीन चंडकुरा प्रगने पीली छी ॥ शंवत १७९१ शाल शमै नाम वैशाख शुदी शतमीदीन बुधवार को लीषा। श्रीपाती साह शाहेब

मैहरवान उमरदराज शलतनती श्री महमदशाह गाजी जी ॥ श्री शुवै अलह वीर दीपा कीलापटने अमल शुवै वीहार ॥ श १९४३ शाल माह जीलकाद ता ॥ ६ रोज ॥ दशखत वाशन्ही दास कुंजमनी दाश कायेश्थ मन शाकीन वेरथु प्रगने तेलाठा ॥ मोकाम हीलशा प्रगने पीलीन्छी शरकार शुवै वीहार ॥

विषय—

संस्कृत के जैमिनिपुराण का अनुवाद।

रचनाकाल

शंम्वत शोरहशै[१६] चली गयेउ। वरषछेआलीश[४६] उपर भयेउ॥
पातीशाह अकबर सलीताना। चारिहु षंढ ताही कर आना॥

संख्या १३३, दानलीला, रचयिता—परमानंद, कागज—देशी, पत्र—१० (३२ से ४१ तक), आकार—९×६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्रीगणेशायनमः

गुरु गणपति ने सीस नामी रे।
प्रथम प्रणामुं सीतापति स्वामी रे।
देवी सरस्वति वाणी दीजै रे।
पद "दाणलीला" कीजै रे।
पद बंध कहुं इक दाण।
शुद्ध सी माथ सुवधना वहु साकरे॥

\+ × +

संवाद गोपी ने गोविंद नो जे गावे प्रेमे संभले।
तेने 'परमानन्द' प्रभु परमेश्वर सांची ते प्रीते सुचमले॥२॥

अंत—

(राग गरवो)

वनाही रे विठलवा सरीरं,
गोपी व्याकुल थई छै व्याकुल रे॥
गोपी कुंज भवन सगली गई रे।
महीनां माहज में स्यावे गली रे।

सहु बाला जी वीहीं रही रे ।
इतठी हती व्रजनी सुंदरी रे ।
इतस्यां रूप धर्यां छे श्रीहरी रे ।
लीधां आलिंगन हित व्यालया ।
जिम सागर भर्यां नीर के सारंग पाणी जी ।
'परमानन्द' प्रभु दाणलीला बखाणी जी ।

इतिदाण लीला संपूर्ण ॥

विषय—

गुजराती मिश्रित भाषा में दानलीला का वर्णन ।

संख्या १३४. वाणियाँ, रचयिता—पारवती । इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं; अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र ।

संख्या १३५. वाणियाँ, रचयिता—पृथ्वीनाथ । इनकी वाणियाँ गोरखनाथ और सिद्धों की वाणियों के विवरण पत्र संख्या-५९ में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र ।

संख्या १३६. अभय विलास, रचयिता—सांदू पृथ्वीराज, कागज – देशी, पत्र—२८ (२ से ३९), आकार—११ × १०½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) —२२, परिमाण (अनुष्टुप्)–११००, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ रूपक अभय विलास । गणेश स्तुति काव्य लिख्यते ॥
उज्वल दन्त सुमेरू गिर्जासुत सुंड डंड प्रचंडयं ।
अंग गुंज कपोल लोल सरद मंद गंध धारा पहं ।
आरत्त स्वस्यन्दुर चर्चित मुख प्रसन स्वनामननं ।
ग्रंथ राजस्य कथितं गनपते वंदे स्वरं अग्रयं ॥ १ ॥
मूलाधार निरोध वुद्धि फलिनी कंदादि मंदानिले ।
नाकार्यं ग्रह राज लच्छिदिता प्रागएइच मातंगता ।
तत्रा धुजल चन्द्रमंडल ग्यान सरयू खयानो—लस
कैवल्यानुभवा सदा खुजगदा निदाय जोगेश्वरी ॥ २ ॥

विषय—

महाराजा अमरसिंह का गुण वर्णन किया गया है । मंगलाचरण से अजयपाल के जन्म तक और आगे महाराजा अमर सिंह के सिरोह (?) में जाकर विवाह करने तक का वर्णन । रचना डिंगल भाषा में है ।

संख्या १३७. राम पदावली, रचयिता—प्रताप कुँवर बाई, कागज—देशी, पत्र—१६१, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः पद राग कल्याण—

पहली गनपती देव मनाऊँ; सब देवन में देव
सुंडालो, रिध सिध पूजा पावै (टेर)

सुख संपत मंगल नित पावत, दुख दालिद्र मिट जाय ॥ १ ॥
कर फरसी मूसा को वाहन, मोदक भोग लगाय ॥ २ ॥
गल माला फूलन की सो है, भाल-तिलक छिवि छाय ॥ ३ ॥
दास "प्रताप" कहै कर जोरी, रिध सिध काज कराय ॥ ४ ॥

(अथ बारह मासौ लिख्यते)

सियावर सब संपत दाई ।
सब प्रपंच तज भज रसना से राम नाम भाई ॥ टेर ॥

अंत—

(राग परभाती मंगला)

जागा मारा रघुवर स्यांम, सकल जुग तारण ।
सदकै करूं सरीर, लेऊं नित वारण ॥ टेर ॥
पट खोलो हस बोलो, दुनियाँ दरसन करै ।
तन, मन, उनाहु मारो प्राण,
रघुवर जी रै उपर ॥ १ ॥

\+ + +

दरसन हित सब देव, अजोध्या आविया,
छाये गिगन बीमाण, फूल विरखा विया ॥ ७ ॥
जगे श्री रघुवीरनाथ, दरसण सब कूं दीया ।
गावे "दास प्रताप" लाभ नरतन को लीया ॥ ८ ॥ पद ३९०

इति श्री रघुवीर जीरा पद संपूरणम्,

विषय —

माजी साहब प्रताप कुँवरि जी ने श्री रामचन्द्र जी का गुण गान किया है ।

'बारह मासा' में रचनाकाल इस प्रकार दिया है:—

उगणी[११] से चौबीसो[२४] फागण वद तेरस मांह बारैमासो कियो प्रकट ॥

टिप्पणी—

'बारामासा' के अंत में रचनाकाल सं० १९२४ दिया है:—

संख्या १३८. प्रवीण सागर, रचयिता—प्रभानाथ, कागज—देशी, पत्र, ९८, आकार—१२¾ × ९½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५८१, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३८ वि०=१७८१ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

गणपति गिरजानंद नमो नमः ।
अथ प्रविन सागर ग्रंथ लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

प्रथम गणपति मंगला चरनं ।
चरन करन असरन सरन चंदन अरुन शरीर ।
चंदन धरन बार वदन हरन शरन जनभीर ॥ १ ॥

सवैया

शैल सुतासुत सिंधुर आनन शंकट गंज सदा शिवनंदा ।
शकरदी सुरदी वरदीवर वंदन भाल विराजत चंदा ।
मूषक रूढ परूढ महातम गायक गूढ गिरा गुन वृन्दा ।
नायक देव महासिध दायक भायक दुःख्य सदा सुख कंदा ॥१२॥

॥ दोहा ॥

वरन शुक्ति शुत एक रद नित प्रति करहु नवीन ।
बुधि दीजे वरनन वने सागर कथा प्रवीन ॥ ३ ॥

× × ×

संवत अष्टादश[१८] परजंत । तीस[३०] आठ[८] शाला वरतंत ।
सावन सुदी पंचमी कुजवार । कीयो ग्रंथ को मंगलचार ॥१५॥

श्री गुरुनाथ प्रसाद किव चन्द्रदेव मंगला चरनं ।
प्रेम प्रकाशन ग्रंथे प्रथम 'प्रवीन सागरो' लेहरं ।

अंत—

॥ सोरठा ॥

मंजन की जल गंग करी इंद्रन प्रतिभव भया।
सुरता नंद सु अंग प्रेम मंत्र ससहु सध्यो ॥२६॥
पूर्वायस अनुमान "प्रभानाथ" परसन चढे।
सिध सवे विधि जान गिर आश्रय तजि गमन किये ॥२७॥
पंच घोस विलमंत "प्रभानाथ" आये तहाँ।
तापस लिखित महन्त वंदि चरन अरचे विविध ॥२८॥

गाहा

विछुरन दसा परवीनं। सागर सिध मिलन वद्रिकाश्रमं।
एक सह अभिधानं। पूर्नं प्रवीन सागरो लैहेरं ॥२९॥

इति श्री प्रविन सागर ग्रंथे जोगि वद्रिकाश्रमागतो सिधमिलनों नाम एको तेरमो लहेरं ॥ ७१ ॥ अथ "प्रभानाथ" रस सागर चरचा प्रसंग ॥ यथा संख्या ॥ ॥ दोहा ॥

विषय—

अनेक कथाओं का वर्णन ७१ लहरों (अध्यायों) में है। कहीं कहीं एकही लहर में अन्तर्कथा भी आ जाती है। लहरों का परिचय अधोलिखित है :—

६८, ६९, ७० संख्यक तीन लहरों के अंक नहीं हैं।

रचनाकाल—

संवत अष्टादश परजंत। तीस[३०] आठ[८] शाला वरतंत।
सावन सुदी पंचमी कुजवार। कीयो ग्रंथ को मंगलचार ॥१५॥

संख्या १३९. हनुमत जयलीला, रचयिता—प्रह्लाददास पाठक (जन), कागज—देशी, पत्र—२३, आकार—७ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८२४ वि० = सन् १७६७ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमह श्री गुरूभ्योनमहः श्री हनुमते नमहः

प्रबल वीर हनुमान सदा प्रय राम को ।

परमदयाल कृपाल राम संतन सुखदाई। दसरथ राजकुमार तीनि लोकनु केराई ॥

करजोरे विनती करूं हृदै वसौ प्रभु आई।
हनुमान जस की लीला गांऊ कृपा करौ रघुराई ॥
सदा प्रिय राम कौ ॥

पवन पुत्र बलवान सदा संतन सुषदाई।
रहत राम जु के निकट करत कारज अधिकाई ॥
अंजनि सुत हनुमान जु विनवऊ सीसुनवाई।
तुमरे गुन कीरति जसु गाऊं कृपा करो कपिराई ॥ १ ॥
सदा प्रिय राम को।

अंत—

कृपा वलदाइन प्रभु कहे सीसनायौ कपिराई।
लछिमन अस्तुति करी दई सुग्रीव वड़ाई ॥
करि आये कारज वड़े ह्वै गए प्रभु के दूत ॥
धन्नि अंजनी माय जगत मैं जायो प्रबल सपूत।
सदा प्रिय राम को ॥ ९२ ॥

पवन पुत्र बल कथा सकल बरनी नहिं जाई।
कीरति राम प्रताप तीनि लोकनु मे गाई ॥
पढै सुनै सुत से पति देही शीता रघुकुल चंद।
जन पाठक प्रह्लाद दास को हनुमत करै अनंद ॥
सदा प्रिय राम को ॥ ९३ ॥

जदक्षर पद भ्रष्टा मात्रा हीने जद भवेत तत सर्वं छमितां देवो प्रसीद पुरूषोतमं श्री संवत् १८२४ वैशाख वदि १४ शोम वासे शुभं भुया

विषय—

हनुमान का यश वर्णन।

संख्या १४०. जैमिनिपुराण, रचयिता—प्राननाथ, कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—१२ × ५३⁄४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७५७ वि० = १७०० ई०, लिपिकाल—१९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ जैमिनी पुराण भाषा प्राननाथ कृत लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

गजमुख सनमुख होत ही बीतहि कुमति कुतर्क
कोक शोक मेचक महा जथा विलोकत अर्क
'पट्टनि देवी' रकट निकट विनु संकट विकटैन
यथा अगोचर भास्कर मेचक छोर छुटैन ।
प्रथम सिंगार विभत्स मै करुणा अद्भुत हास ॥
सांतवीर पुनि रौद्र मिलि नवरस कथा विलास ।
व्यास सिष्य जैमिनि सुजसु विदित अखिल संसार ॥
जन्मे जै महाराज कहं आगत भये यकबार ।
महा महीस मुनीस को आदर भारी कीन्ह ।
अस्वमेध पावनि कथा पूछत ही लव लीन्ह ॥ ६ ॥

× × ×

संवत सत्रह[१७] सै सुभग सत्तावन[५७] वर मास ।
मकर भूप रितु पंचमी कवि इतिहास प्रकास ।

+ + +

विदित त्रिवेदी कान्ह कुल प्रान नाथ कवि नाथ ।
सादर संभु प्रसाद वर वरन्यो हरि गुन गाथ ॥

अंत—

दोहा

अस्वमेध इतिहास वर वरन्यो आदि प्रजंत ।
जैमिनि जन्मे जै देव सो मागि बिदा विचरन्त ।
अघ हरनी मंगल करनी केशव कथा वदार ।
मग्न होत भव जलधि विच निराधार आधार ।
विदित त्रिवेदी कान्ह कुल प्राननाथ कविनाथ ।
सादर संभु प्रसाद वर वरन्यो हरिगुन गाथ ॥
जैसेहु तैसेहु हरि कथा जेनर कहै सुनै ।
'प्राननाथ' वैकुंठपुर मारग सुगम तिन्है ॥ २४५ ॥

इति श्री महाभारते अस्वमेध माहास्ये कान्ह तिलकोत्तर नाम यव कांड समाप्त मोध्यायः ॥ जादशी पुस्तकं दृष्ट्वा तादशी लिखितं मया । यदि शुद्धम शुद्धं वा मम दोषो न दीयते संमत् १६२४ ॥ वैशाप मास कृष्न पक्षे त्रयोदशी गुरु वासरे लिखा बालगोविंदमिश्र माफ़ बाठ के पठनार्थं सरदार बल्देव वकशसिंह वहादुर जिवके ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महाभारत कथा के अंतर्गत अश्वमेध यज्ञ का वर्णन सात अध्यायों में किया गया है। अध्यायों का विवरण अधोलिखित है :—

अध्याय विषय	पृष्ठ
१—श्याम कर्णहय प्रवेश	१—६
२—ललित नाम	१२
३—महाभारत माहात्म्य	१८
४—सुधन्वा सुरथ वध	३३
५—ववरकांड	५०
६—गौर तिलक कथा	५५
७—कान्ह तिलकोत्तरकांड	६६

इनके अतिरिक्त अन्तर्कथाएं भी बहुत आई हैं।

संख्या १४१. भागवत सुलोचना टीका, रचयिता—प्रियादास, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—९¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

चौपाई

पराभक्ति नवधा हरि प्यारी । हरि रूपा वरणी करन्यारी ।
ताकी राधा सह सुख कारी । सेव्य कृष्ण पर पुरुष अधारी ॥
यक शुद्ध पर जीव अखण्डित । भिन्न अभिन्न युगुल सुख मंडित ।
ज्ञान स्वरूप ज्ञान गुर नागर । कृष्ण अनादी अंश सुखाकर ॥
येहु मो करि सेव्य सदाई । श्रीमति सहरस सिंधु कन्हाई ।
प्रणता धीन प्रणत हितकारी । जड़ चेतन्य जुगुल तन धारी ।
॥ हु सेवक कारिका ॥ तयातु परया कृस्नः सेव्यो मेराधया सह ।
परोपि प्रणता धीन श्चैतन्य जड़ विग्रहः ॥ १ ॥

अंत—

चौपाई

जन्म मरण पावन हरन को। जगत विवेकी मन धारन को।
मारग सुखद नाहि सुरपुर जो। धर्म भागवत तें कित दूरु जो।
जाते भक्ति होय भगवत मे। तातें वरको कहहु जगत में।
श्रेष्ठ भागवत धर्म कहावो। यकहिं औरन मुनिवर गावो।
यातें जो मन जगत तरने की। वासुख संपति विपुल करने की।
कृष्ण चरणवर रेणुनिहारो। तो मन धर्म भागवत धारो।
जो चाहत अघ सुकृत होई। परम मित्र अरि सब कोई।
होय महत दुखहू सुख सागर। तो गह धर्म भागवत आगर ॥ ३३ ॥

॥ दोहा ॥

प्रियादास के मन वसहु धर्म भागवत देव।
आवत हरि सह भक्ति हिय जाकी करतहिं सेव।
अहो भागवत धर्म जिन गह्यो परम फल मान।
ताके पदकी सेवको चाहत देव महान।
प्रियादास वर्णन कियो धर्म भागवत सार।
सुनत कहत सेवत सहज होत जगत नीध पार।
महा भागवत धर्म यह सत संगहि ते पाय।
प्रियादास फिर भक्ति करि रहत कान्ह पद जाय ॥ ५५३ ॥

इति श्री सुलोचना टीकायां सेव्यत्व भागवत धर्म वर्णनो नाम तृतीय मयूष समूह।

विषय—

तीन मयूखों में भागवत धर्म का ग्रहण और फल कथन है।

संख्या १४२. सेवक जू की जन्म बधाई, रचयिता—प्रियादास, कागज—आधुनिक, पत्र—४८, आकार—६ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५९, खंडित, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गो० श्री राधाकृष्ण जी महाराज, बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति। श्री हरिवंश चंद्रो जयति।
अथ श्री सेवक जू की जन्म बधाई लिष्यते ॥ राग भैरो ॥
प्रथम सुसेवक पद सिर नाऊ ॥
करौ कृपा दामोदर मोपर श्री हरिवंश चरन रति पाऊं ॥

इति श्री महाभारते अस्वमेध माहात्म्ये कान्ह तिलकोत्तर नाम यव कांड समाप्त मोध्यायः ।। जादृशी पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशी लिखितं मया । यदि शुद्धम शुद्धं वा मम दोषो न दीयते संमत् १९२४ ।। वैशाप मास कृष्न पक्षे त्रयोदशी गुरु वासरे लिखा बालगोविंदमिश्र माफ गाउ के पठनार्थं सरदार बल्देव बकशसिंह बहादुर जिवके ।।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महाभारत कथा के अंतर्गत अश्वमेध यज्ञ का वर्णन सात अध्यायों में किया गया है। अध्यायों का विवरण अधोलिखित है :—

अध्याय विषय	पृष्ठ
१—श्याम कर्णहय प्रवेश	१–९
२—ललित नाम	१२
३—महाभारत माहात्म्य	१८
४—सुधन्वा सुरथ वध	३३
५—ववरकांड	५०
६—गौर तिलक कथा	५५
७—कान्ह तिलकोत्तरकांड	६६

इनके अतिरिक्त अन्तर्कथाएं भी बहुत आई हैं।

संख्या १४१. भागवत सुलोचना टीका, रचयिता–प्रियादास, कागज—देशी, पत्र–६०, आकार—९¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

चौपाई

पराभक्ति नवधा हरि प्यारी । हरि रूपा वरणी करन्यारी ।
ताकी राधा सह सुख कारी । सेव्य कृष्ण पर पुरुष अधारी ।।
यक शुद्ध पर जीव अखण्डित । भिन्न अभिन्न युगुल सुख मंडित ।
ज्ञान स्वरूप ज्ञान गुर नागर । कृष्ण अनादी अंश सुखाकर ।।
येहु मो करि सेव्य सदाई । श्रीमति सहरस सिंधु कन्हाई ।
प्रणता धीन प्रणत हितकारी । जड़ चेतन्य जुगुल तन धारी ।
।। हु सेवक कारिका ।। तयातु परया कृस्नः सेव्यो मेराधया सह ।
परोपि प्रणता धीन श्चैतन्य जड़ विग्रहः ।। १ ।।

अंत—

चौपाई

जन्म मरण पावन हरन को। जगत विवेकी मन धारन को।
मारग सुखद नाहि सुरपुर जो। धर्म भागवत तें कित दुरु जो।
जाते भक्ति होय भगवत मे। तातें वरको कहहु जगत में।
श्रेष्ठ भागवत धर्म कहावो। यकहि ओरन मुनिवर गावो।
यातें जो मन जगत तरने की। वासुख संपति विपुल करने की।
कृष्ण चरणवर रेणुनिहारो। तो मन धर्म भागवत धारो।
जो चाहत अघ सुकृत होई। परम मित्र अरि सब कोई।
होय महत दुखहू सुख सागर। तो गह धर्म भागवत आगर ॥ ३३ ॥

॥ दोहा ॥

प्रियादास के मन वसहु धर्म भागवत देव।
आवत हरि सह भक्ति हिय जाकी करतहि सेव।
अहो भाग्यवत धर्म जिन गह्यो परम फल मान।
ताके पदकी सेवको चाहत देव महान।
प्रियादास वर्णन कियो धर्म भागवत सार।
सुनत कहत सेवत सहज होत जगत नीध पार।
महा भागवत धर्म यह सत संगहि ते पाय।
प्रियादास फिर भक्ति करि रहत कान्ह पद जाय ॥ ५५३ ॥

इति श्री सुलोचना टीकायां सेव्यत्व भागवत धर्म वर्णनो नाम तृतीय मयूष समूह।

विषय—

तीन मयूखों में भागवत धर्म का ग्रहण और फल कथन है।

संख्या १४२. सेवक जू की जन्म बधाई, रचयिता—प्रियादास, कागज—आधुनिक, पत्र—४८, आकार—६ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५९, खंडित, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान – गो० श्री राधाकृष्ण जी महाराज, बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति। श्री हरिवंश चंद्रो जयति।
अथ श्री सेवक जू की जन्म बधाई लिष्यते ॥ राग भैरो ॥
प्रथम सुसेवक पद सिर नाऊ ॥
करौ कृपा दामोदर मोपर श्री हरिवंश चरन रति पाऊं ॥

गुन गंभीर व्यास नंदन जू तव प्रसाद सुजस रस गाऊँ ।
नागरीदास के तुमही सहायक रसिक अनन्य नृपति मन भाऊँ ॥

\+ \+ \+

प्रगट्यौ श्री हरिवंश चरन को पटपद,
सावन तीज सुधाकर वासर घुमड रह्यौ आशक्त मोदहद ॥
तहि घन सुरत हिंडोरै झूलत झगर लेत वधाई हित सों गद ॥
सुनि हरिवंश वरपि झरी हित की सेवक जनम 'प्रिया दासिनु' मदसद ॥

अंत—

॥ राग-जैत श्री ॥

आजु हमारै सुहेलरा सुहायौ । प्रगट्यौ कुंवरि हिय भाव ।
रस सौंन्दर्य प्रेम की आकृति तन मन सकल घुमावै ॥
उलटी समझि सेव्य हित आई रसिक छके जस गावै ॥ १ ॥
सुनत जनम हरिवंश जू आये मंगल निरप रचायौ ॥
अपनी जीवन मूर सुप संपति दंपति दिपै नचायौ ॥ २ ॥
पुनि पुचकारि चूमि उर मधि धर्यौ हियौ द्रग-कंठ भरायौ ॥
जानीहौ मोहित जो विचारी रूप्यौ न नेह तै जनायौ ॥ ३ ॥
जो भाई तुम्हें सोई आछी सेव्य तै सेवक कहावौ ॥
ज्यौ हौं तो···रूप अपासी अैसें तुम मो कहावौ ॥ ४ ॥
नीके रहियौ वेगी अइयौ वनमाली पै हिय लइयौ ॥
वासौ आयौ कछू न छिपाइयौ वहिय मर्म जनइयौ ॥ ५ ॥
सव हिय भाव गिरा कथ कहियौं मो आपौ रूप लपइयौ ॥
वचन रचन करनीं कें पोपियौ आशक्ति हिताई सुनइयौ ॥ ६ ॥
एक उही रूप समझि हैं तेरौ जुग गिरा संग लिपै ही ॥
मिलत सिरइहै वावनमाली हियौ तुम परवार सर्व दैहै ॥ ७ ॥
प्रगट विपन दिन सातहि वसियौ पुन इह देह उर लैहै ।
अति लगनीक "प्रियादास" प्रगटै हौं मो तो भेदनि गैहै ॥ ८ ॥
श्रुति धरि मंत्र नाम दियौ सेवक करहु सकल सिर राज ।
लव निमेप तोसौं नहि विछरौ चिर जीवौ करो निजुकाज ॥ ९ ॥
होत विदा पुनि पुनि सुप चुंवत सिर कर कमल फिरावै ।
गद गद सुर दुहूँ द्रग द्रवै उर उर गुथे सियरावै ॥१०॥
वंश विना हरिनाम न लैहौं तत्प्राण नाथे रतिभावै ।
हित अरु राधा विन को यौ बोलै नेह गिरा दुहु सापै ॥११॥
कुवरि कह्यौ सव भाव हिये कौं जै जै धुनि नभ छाई ॥
वजे दुंदभी कुसुमनि वरपत सुनी वन चंद्र हिताई ॥१२॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में राधावल्लभी संप्रदाय के सेवक जी की बधाइयाँ हैं।

संख्या १४३. जैमुनिपुराण, रचयिता—प्रेमदास, कागज - देशी, पत्र ६, आकार—९ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)-१०, परिमाण (अनुष्टुप्)-८६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

... ...

ज तेहपुर मह भारी।

सब मिली चला रहा नही कोई। चलहु तुम्हौ अस कह सब कोई॥
का घर रहे कवन तव काजा। विस्नु दरश ते पातप भाजा॥
गंगा जलही करहु अस्नाना। जीवन मुक्ति दरश भगवाना॥

प्रीध भये हरी सुमीरहु गंगा करहु अस्नान।
भुप जे भोजन सारहु तीनौ पद निर्वान॥

नृपती वचन सुनि तब ही कहई। सुनु राजा जैशन कीछु अहई॥
जौ मानुश के लछीमी होई। संग सजन पुछे शव कोई॥
धन ते आदर सब केउ करई। नीरधन धन ही दुरी परी हरई॥
धनते नृपती नीकट बैसावै। नीरधन नर वई ध्यान न पावै॥

द्र्व्यं लै बैठवइ भुप मह भौ परमान।
मै कहु नही जाइव जौ लगी कंठ परान॥

अंत—

काजी चीनी कचोरी स्वादन्ह सुरस अपार।
वरनत वरनीन आवै नृमल नौ प्रकार।

॥ चौपाई ॥

पापर भुजी देही रूकुमीनी। सीखन मह मीलाइक चीनी॥
खोवा दूध महीप के अना। फेनी भेइ जेउ भगवाना॥
चीनी चीरौंजी लौंग मेरावा। नरीअर मेली प्रकार वनावा॥
बुदी लेडु देवकी कीन्हा। हरी पुलकी तभै जेवै लीन्हा॥
अवरा केदली कीन्ह संधाना। फरतवार औरा के आना॥
केदली अीची संधाना कीआ। जामवंत रुकुमिनी रस जा...॥
सभ के परीजातक को माला।

॥ दोहा ॥

श्री गुरु परमानंद नित प्रेम रंग रस लीन।
जुगल किशोर विलासु निजु पगे हृदें सुपलीन ॥ १ ॥
कल्याणदास कल्यानकर श्रीकर कृपा निधान।
हृदै ध्यान धरि पद कमल सदा करै कल्यान ॥ २ ॥

× × ×

(वरसाने के आनंद वागका वर्णन)

॥ दोहा ॥

नंद लाल देषन चले आनंद वाग अनूप।
गोप कुमारनि वृंद में राजत स्याम सरूप ॥ १ ॥

अंत —

॥ दोहा ॥

लहौ शिवानुज परमरस पुलकित ह्वै अंग अंग।
सुषसागर हिय भरि उमगि, विहरौ रूप तरंग।
जुगलकिशोर विवाह नित सुनै,श्रवन चितु लाइ।
प्रेमा रसिक विलास प्रिय पावै प्रेम उपाइ ॥

इति श्री स्कंद पुराणे ब्रह्मषंमे (? डे) उमा माहेस्वर संवादे पर्यंक विधान विविधि पट रतन सुवर्ण रजत अनगनित धनदासी दास अस्व रथ गज गोदान विदा मंगल विलास नगर प्रवेस वधू प्रवेस दुधा मोती कंकन विधान वाग विलास जुगल सुष वर्णन प्रेम रस माधुर्य मंगल नाम राधाकृष्ण विवाह विनोद नाम इक विशंति मो विलासः।

संवत १८०८ मीती असाढ़ मासे शुक्ल पक्षे तिथी सप्तम्यां बुध वासरे लिषित सेवार तिवारी कुठभौवा लक्ष्मणपुर मध्ये पकरिया टोले मैं पठनार्थ अग्रवाल अकबराबादी के वासी लाला अछेलाल जी धर्ममुरति ॥ शुभं भूयात् ॥

लेषक पाठकयो चिरंजीयात्

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में २१ अध्यायों के अंतर्गत श्री राधा और कृष्ण के विवाह का वर्णन है। ग्रंथ का आधार स्कंद पुराण है। विवाह के प्रत्येक कृत्य का बहुत विस्तार के साथ वर्णन है, जैसे—तेल, शृंगार, द्वारचार, ज्योनार, मंडप रचना, पाणिग्रहण, भाँवरि गीत आदि। भाषा ब्रज है। दोहा, चौपाई में विशेष रूप से ग्रंथ रचा गया है। कवित और सवैया भी हैं।

टिप्पणी—रचयिता के संबंध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं होता कि वह राधावल्लभी संप्रदाय के किसी कल्याणदास के शिष्य थे :—

श्री गुरु पदारविंद सेवत सुषद सुभ चिंतित सकल जन आनंद निवास है।
दगनि विलोक ध्यान धरे ते विगत तन मैटत हिये की भ्रम करत प्रकास है।
सब विधि सहाइक वरदाइक सकल तन भुव सुरलोक में जे मन के हुलास हैं।
'प्रेमा' सोई 'हित' मेरे अति विभु 'कल्यानदास' देत वर जुगल किसोर के विलास हैं॥

संख्या १४६. शाह फकीर के शब्द, रचयिता—शाह फकीर, कागज—देशी, पत्र-१, आकार १२३/४ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीय, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत राजाराम, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

राम सब्द साही फकीरे जी कै

॥ राग काफी ॥

नदीया जोर बहै री मैं कैसे के उतरब पार।
नाही मोरे नइआ नाही मोरे भइया न मोरे पेवनिहार॥
सुरती नीरती सो मृतु बनायो एहि विधि उतरो पार।
नाभी कमल ते पवन चलावहु मन लगावहु त्रीपुनीधार॥
एह मत में इक जानै कोई रहनी विहंगम सार॥
जोर जो जमुना अतिहि भआवनी पनीआ वहत न थीर।
वीजा नाव री वीजा पांवरी उतरैं 'साह फकीर'॥

॥ राग कान्हरा ॥

हैफ तेरा रंग मीयां हैफ तेरा रंग।
गगन चढ़ायो जोति जगावो गंग जमुन के वीच में तहाँ मीलावो संग।
आगे चलैं जो एह बुझै सोई सतगुर धीर।
भाई इआरी हम तुम पाई गावै 'साह फकीर'॥

साषी

अजब अजब के पाँचो मारै का पचीस सोइ वाता।
सोरह हेलो छको पेठो तीनी मीलो तेहि जाता॥
चाँद सूर कै उलटैधकै वीच ही वीच समाई।
धारह अंगुल जे करे पैठे सोइ सो ताहा जाइ॥

हीदु पीर सतगुरू कहावै दीन्हो मोही लपाई।
'साही फकीर' जींदा देही इहद गैव बनाई॥

राम शब्द

ध्यान लगावहु त्रीपुनीद्वार। गहि सुपमना वीहंगम सार॥
पैठी पता में पछीव धार। चढ़ी सुमेर भव उतरहु पार॥
इस्त क्रमल नीके हम वूझा। अठयें विना एको नहि सूझा॥
'साह फकीरा' एह सव दंद। सुरती लगावहु जाहावोह चंद॥
अनहद ताल मनहि मन गावैं। सो भुला प्रभु लोक सीधावै॥
सुनत अनहद लागी रंग। वरी उठु दीपक परै पतंग॥
'साहा फकीरा' ताहा समावे। चीरुश्रा पानी नदी ही मीलावैं॥

॥ राम झूलना ॥

लालवे चुनी लाल फीरंगी हीरा ऊपर वलता है।
मन परींदा जोर पवन संग सेत लहरी पर चलता है।
सेत फटक आगम नीसानी तामे 'इआरी' पेलता है।
'साह फकीरा' पेल रचो है पांच तीन दल फरता है॥

राम साषी

मन कछी अति जोर है मारत नाही थीर।
करार लगाम दै पकरी सचे 'साह फकीर'॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—शाह फकीर यारी साहब के शिष्य थे। स्वयं अपनी रचना में इन्होंने एक दो स्थानों पर 'इयारी साहब' का उल्लेख किया है। इनका झूलना आद्योपांत खड़ी बोली में है। 'इयारी साहब' आदि के शब्दों के साथ एक ही हस्तलेख में इनकी प्रस्तुत रचना लिपिबद्ध है जिसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी है।

संख्या १४७. वैताल पचीसी, रचयिता—फकीरसिंह (वास्तविक रचयिता मणिकंठ), कागज—देशी, पत्र—८६, आकार—१०$\frac{3}{4}$×६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥ अथ पोथी वैताल पचीसी लिपते॥

॥ मंगलाचरन दोहा ॥

स्री गनपति गिरिजा गिरा गौरीपति के पाय ।
वंदो महि धरि सीस तिन्ह कीजै वेगि सहाय ॥

॥ सोरठा ॥

गुरु पद पंकज धूरि धरो हरषि निज भाल मह ।
मिटही मोह भ्रम भूरि जाकी कृपा कटाक्ष तें ॥

कथा कथन चौपाई

प्रतिस्ठानपुर सहर जु एका । मुदित तहा परजासु अनेका ॥
भूप भयो तह गंध्रव सेना । राजनीति रति वसै सुषेना ॥
एक समै गिरि कानन चारी । पेलत रह्यो सिकार सिकारी ॥
तापस एक नींवि तरु तरही । लाग समाध्य तपेस्या करही ॥
नृप सुत रहि ताहि लषि डरेउ । मनमह कहेउ राज यह हरेउ ॥
फिरे नगर आए गृह आपने । भए विकल कल परै न सपनै ॥
होत प्रात सिंगासन वैसे । हुकुम कीन्ह सेवक सो ऐसे ॥
गनिका नगर माहे की ल्यावो । औरो थल की हेरि मगावो ॥
जेतनी मिलै आनि दे मोही । हीरा हेम देउगो तोही ॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

सेज चतुर उठि भोर कही हकीकति भूप सों ।
सतएपर तब नौर है तोसक में देषिले ॥

॥ दोहा ॥

तुरितहि सतए परत में देपे भूप निहारि ।
लषी वनौरा भै चक्रीत आदर कियौ विचारि ॥
धनि मनि माल दियो तुरित विदा कियौ दिज भौन ।
आसिष दै भूपाल कौ कियौ पिता ढिग गौन ॥

॥ सोरठा ॥

एह कहि कै वैताल विक्रम सो बूझत भए ।
सांची कहो कृपाल इन्ह तीनों मह चतुर को ॥

॥ दोहा ॥

विक्रम दीन्ह जबाब तेहि अधिक चतुर है सोइ ।
भोजन विधि जो जानइ तासो कम है दोइ ॥

एह सुनि कै बैताल तब कूदि धरे द्रुम डार ।
भूपति चित चिंता भई नेकु न पावत पार ॥

इति श्री वैताल पच्चीसी फकीरसींह कारिते मनिकंठ कवि भापिते त्रैविंसितमो कथा समाप्त ॥ अथ चतुर्थ विंसितं कथा कर्म कथनंम्ब ।

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत वैताल पचीसी का हिंदी में पद्यानुवाद ।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना का वास्तविक रचयिता मनिकंठ कवि है । भूल से फकीरसिंह का उल्लेख हो गया है ।

संख्या १४८. पदितनामा, रचयिता-फरीद जी, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०$\frac{१}{२}$ × ५$\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)–३५, परिमाण (अनुष्टुप्)-६६, पूर्ण, गद्य, रूप-प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ श्री फरीद जी का पदित नांमा लिष्यते ॥

वगैर गुन्हा एक घड़ी नहीं गुजरी । मुझ परि । हजूरी दिल बंदगी भी एक घड़ी नहीं गुजरी । या निश्चै जांनि । इन नफसनै मेरा साहिब का राह मारया है । नफस इंद्रयांणां सोइ । जो हरहवाल सुकर करै । हरहवाल सुकर करैगा । तब आपनै नफस परि कादर होइगा । जिनि अपणांर गुसा पाये राजवान ।। सोई संसार मे छुट्या है । सब संसार मैं अहमप सो है । जो इंद्रयो के पीछै बहक्या फरै । तिसकूं अति साहिब न बकसैगा ।

अंत—

जो कोई कावि कबीरी करै । तिसका सब लुटि जाता है उस्तैं अमल रहता नांही । फीका होइ जाता है । उसका अमल औरूं मैं जाइ रहै है । उसका दिल घाइल होइ रहै । चतुराई जार करी । जिसतैं जवाव मुप बंदकर । पलक तैं आपकूं निरास रापै । तौ तेरे अंदरि रूस नांई होइगी ॥

इति श्री फरीद जी का पदित नांमां संपूर्ण ॥ १ ॥

विषय—

संसार से अलिप्त रहकर भगवद् नाम स्मरण करने का उपदेश ।

टिप्पणी—रचयिता नाम से कोई मुसलमान संत जान पड़ते हैं। इस नाम के एक प्रसिद्ध संत पंजाब में हो चुके हैं। प्रस्तुत रचना प्राचीन खड़ी बोली गद्य में है।

विशेष के लिये देखिए संत 'सेवादास'।

संख्या १४९. श्री भगवद्गीता की भाषा टीका, रचयिता-गुसाईं बद्रीलाल, कागज—देशी, पत्र—१०२, आकार ६'१ × ४'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २०, पूर्ण, रूप—सजिल्द प्रति, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ मार्ग शीर्ष वदि २, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

(भगवद्गीता का परिचय संस्कृत में देकर, ध्यान आदि की प्रणाली को लिखकर गीता के मूल श्लोक दिए हैं, उनके नीचे प्रति श्लोक गद्य में अर्थ दिये है)

१ ला श्लोक टीका—धर्म को क्षेत्र अरू कुरू क्षेत्र ता विषै जुद्ध की इच्छा करि के मेला जुड़िया है ऐसे जो मेरा पुत्र अरू पाडव सोहे संजय कही करता हुवा ॥ १ ॥

२ रा श्लोक टीका—पांडवनि की जो अनेक सेना ताकी जो रचना तहि देपि कैं, ता समैं दुर्योधन जु है सो आचार्य के पास जाय कै वचन बोलतो हुवो ॥ २ ॥

१० मा श्लोक टीका—भीसम जाको रखवारों है असी जु हमारी सेना सो हलकी लागै हैं। भीसम है रक्षिक जाको ऐसी जु है पंडवन की सेना बहुत भारी सी लगे है।

अंत—

७८ वाँ श्लोक—जा ओर जोगेश्वर श्री कृष्न चंद्र है अरू धनुर्धारी अर्जुन है। ताहि ओर श्री है। ताही ओर विजै है। ताही ओर विभूति है यह मेरी बुद्ध का निश्चै है।

संवत् १९१९ रा मीती मीगसर वद २ लीपतं वैष्नव मंगल दास गढ़ जोधपुर मध्येवासी नागोर के लीपी छै। श्री राम जी शदा साथ छै॥ टीका गुसांई बद्रीलाल कृत्त भाषा वचनक सहित॥

विषय—

गीता का अनुवाद भाषा में।

टिप्पणी—प्रत्येक अध्याय के समाप्त होने पर टीकाकार ने 'टीकासहित' या टीका सहत' या 'भाषा सहित' या 'भाषा वचनक सहित' जोड़ दिया है।

संख्या १५० क. स्फुट रचना, रचयिता—बलदेव (स्थान—आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२ के लगभग, सन्

१८९५ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरुटोला, मोहल्ला, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

साधोभाई विषय की झार।
बाहर छेके गुरुजन परिजन विषय घर भीतर परिवार।
रजत पहार पर राजत विरूप दग,
देव सब सोने के सुमेर पर छाए है।
कंचन की लंका तहा राकसनिसंक बसै दिल्ली से नगर पर जमन जमाए हैं।
'बलदेव' रिषि मुनि कंदरा करत बास पंडित कुलीन भीपि भूपन बनाए हैं।
आपु हरि मौन कहँ बात सुनैं कौन कछु विधि के चरित चित कौतुक सुहाए हैं।

औध उधारन लागे रघुपति०

नर पसु कीट पतंग सुए सब जनम जनम के जागे।
भूषन वसन विविध भांतिन के जथा जोग रूचि बागे।
चढ़ि चढ़ि देव विमान यान सो द्वंद मोह भ्रम भागे।
सैन सहित रघुनाथ चले सुरपति सुर आवत आगे।
हसत जात कोउ बात न पूछत दरस परम पद पागे।
विधि घर नाधि अंधतम नाध्यो कबहु न जहं सवितागे।
घट लोकेश लोचि लोचन सो उर अंतर अति दागे।
मुकुत क्रोध मंडित निरमल थल, आनंद घन छागे।
जन "बलदेव" विराग रूप सब राम भजन अनुरागे॥
राम भजहि पछिताहिगा वैरागीजी।
तन धन धाम काम नहीं ऐहै अंत अकेला जाइगा।
मन बहकाइ विषय मैं दौरत भोरवत भरम भुलाहिगा।
तेरो सब सब को तू साहेब यह तुझे न डेराहिगा।
फिर पीछे "बलदेव" देपु किन आपुहि आपु समाहिगा॥ वैरागी जी॥

॥ सविता की साहिबी सी कविता हमारी है॥

उदय बढ़ावै सुप अरून बरन ल्यावै मानस कसक लघुमलकी उज्यारी है।
देपि सुनि सब जग जागि सो उठत अति मधुर मधुर मधुकर धुनि भारी है।
मूढ़ तम अंधन के बंधन कटत जात याते 'बलदेव' सुभ किरनि सुधारि है।
दविता सो चंद रहै छवि ताकी कौन कहै,
सविता की साहिबी सो कविता हमारी है।
कविन की रीति लै नरेस को सुरेस कहैं,
रंकहु के राव कहै सातो सिंधु तरि हैं।

कौडी सो सुजस ताहि चंद्रमाते दूनौ करै,
दूनहू के उनो करै पाली कहै भरी है।
"वलदेव" वे जो वाक वानी के प्रसाद वर,
मन वच क्रम करि आपर जो धरि है।
तो पारथ के वान सो जथारथ लगोइ जानु,
टरि है सुमेरो न सुमेरो वैन टरि है॥

॥ आपे मत्य बुलाइए करत हौ काल्यष्टमी को विदा ॥
आउवानंद करो वलाप्प हिरनी कोरे वेटा पानिले।
चौका दै करि पाक भोजन भली भान्यागने सोइए।
लागी त्तौन छुधा बड़ी तव लगे मागौं चवैना भुना।
यापे मत्य कुत्ता ज करत है काल्यष्टमी कों विदा॥

काहू के हजार दृग काहु के हजार भुज,
काहू के हजार मुप जीभ द्वै हजार है।
चारि मुप पंच मुप पटमुप दशमुप,
केतिक मनाउ गुन गरिमा अपार है।
एक एक मुप दै विमुख मौन ठहरि,
"वलदेव" कौन जी करत करतार है।
हाथनि ओढाय देहि देहीन कों लागै वाढ़,
विधि को चरित चित कौतुक उदार है॥

—प्राप्त प्रतिकी पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

जगत के विषय, विधाता के कौतुक सहश कार्य, श्री रामचंद्र द्वारा अयोध्या के जीवों का उद्धार, रामभजन, सविता की साहिबी सी कविता हमारी है, वाणी सिद्ध कवि, आदि विषय तथा समस्याओं पर कविता की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का कुछ भी पता ग्रंथ से नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी के कथनानुसार ये उनके पूर्वज थे :—
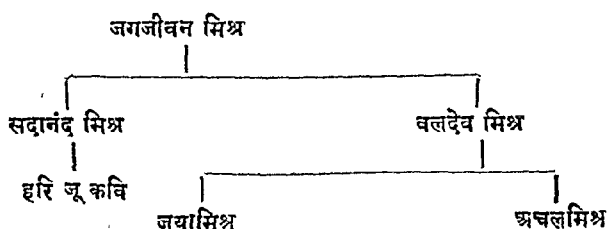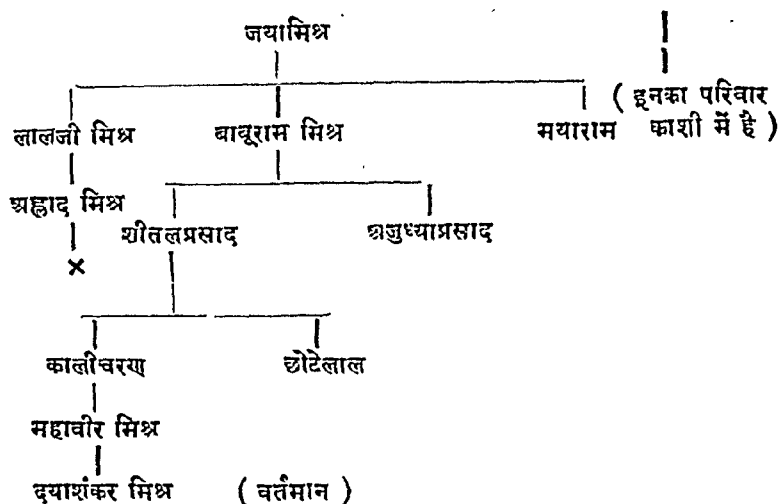
बलदेव मिश्र आजमगढ़ के राजा अजमति खाँ के राज कवि, गुरु और मंत्री थे। प्रस्तुत रचना कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक ही हस्तलेख में है। अन्य रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं :—

१—भाषाभूषण	महाराज जसवंत सिंह कृत
२—सिख नख	बलभद्र कृत
३—रामजी की वंसावरी	हरिलाल
४—कथा राजा हरिचंद के विपत्ति की	जन जगन्नाथ
५—संस्कृत रचना	बलदेवकृत
६—भाषा रचना (स्फुट रचना)	,,
७—रहीम के दोहे	रहीम
८—अजमति खाँ यश वर्णन	बलदेव

प्रथम रचना में लिपिकाल सं० १८७१ है तथा दूसरी और तीसरी में संवत् १८७२ है। अन्य रचनाओं में कोई संवत् नहीं दिया है। अतः ये रचनाएँ भी संवत् १८७२ के लगभग की लिखी हुई मान लेना चाहिए।

संख्या १५० ख. अजमति खाँ यश वर्णन, रचयिता—बलदेव मिश्र, स्थान आजमगढ़, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, पूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८७२ वि० के लगभग, सन् १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरू टोला मोहल्ला, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

घन गरज दपट्टै पटह निपट्टै खसं घट्टै व्योम पट्टै।
निविड़ गहन टुट्टै गढवर छुट्टै गढवद्द लुट्टैवीकल है।

अरि सिर अर लुट्टै बहु फर फुट्टै रुधिर विघुट्टै कालिरटै ।
अजमतिपा रुट्टै जवरन जुट्टै पल दल कुट्टै कुटिल भट्टै ॥ १ ॥
दहसति नवखंडन ककुभ प्रचंडन तल ब्रह्म मंडन मोर बढ्यो ।
पर परम अदंडन करि फर पंडन धर सिर मुंडन अवनि मढ्यो ।
गहि पङ्ग वितुपडन हनत भुसुंडन भभकत मुंडन रुधिर कढ्यौ ।
अजमति माहि मंडन जदिन उदंडन दुग्रन विहंडन कोपि चढ्यौ ॥ २ ॥
पूरन प्रताप जाको कर को करेरो अति जग में जनाइ जोति छाइ नवपंड मैं ।

सत्व तम राज को लपे तें जाहि छुटि जात,
भ्रमर जलज पर गुंजरत चंड मैं ।
बलदेव जाकी उदै सब सुप पावै अति,
देव सु करै जसु प्रकास ब्रह्मंड मैं ।
महो अधिकारी भुज विक्रम के भुजभारी,
देपो वावू अजमतिन केधौंमारतंड मैं ॥ ३ ॥

करम प्रधान है

करम के वस ह्वै धरम सुत भाइ जुत,
एकै तिय भोग करै भावत पुरान है ।
करम के वस गुर नारी सो रम्यो है ससि,
रति मुनिदार सो करी सो मघवान है ।
कहै "बलदेव" गाधि सुत महा तपवंत,
वार वधु लागी उर प्रीति भान है ।
राम वनवासी भए रावन विलाइ गए,
जानिए प्रधान याते करम प्रधान है ॥ ४ ॥

अजमतिपान कैधौं जलज लसतु है—

विधि को सदनु जनु सर मै रहत आपु सूर को
सुहिव जासो हियो हुलसतु है ।
कमला वसि है जाके रहत सुवास ताके,
परम पुरूष जामैं निति ही वसतु है ।
बलदेव रूप उजियारो औ सिंगार समै,
देपे रसु अलि को समूह विलसतु है ।
कोमल अमल ही बुझावै ताप तन कीसु,
अजमति पान कैधो जलज लसतु है ॥ ५ ॥
कैधो य जोगी कै वियोगी फिरै बन मैं ॥

तीरथ न जात मन मन मथ कै उजारो कायो,
जए यो वाहु वासर जौ ऐलौकि लियो तन मैं ।
भसम चढाय औ वढाय दुप विषवा मैं,
वोध की वसति वात आए सुधि छन मैं ।
'वलदेव' ध्यान धरै चिंतत सूरूप ही को
जग को सकल सुप देपै ज्यो सपन मैं ।
नग मैं उदासी ऐसो मगनै धौ कौन रस,
कैधो यह जोगी कै वियोगी फिरै वन मैं ॥ ६ ॥

दोहा

कवि कौतुक वलदेव कहि देपि परेपे राव ।
मूकी मारे सुप लहै कहै पुसामदि चाव ॥ १ ॥
कविता अजमति पान के परची लहै अथाह ।
नयो सुजस निति ही करै पढै सभा मै धाइ ॥ २ ॥
लरजत अरज करीए है गरज जानि वलदेव ।
अजमतिपां मरदान मनि दूजो महिसुर देव ॥ ३ ॥
सरस हेतु करि मैन छवि वोलै अजमति पान ।
यहै कहति हौ मान मय उत्तर देहु सुजान ॥ ४ ॥
दानपुरी नीके भए जाहिर नहै जहान ।
कवि के दारिद मरज को हाकिक अजमति पान ॥ ५ ॥
भयो प्रेम के महत भय भरम भुलानो चित्त ।
प्रीतम से कैसे मिलौं यह दुप व्यापत नित्त ॥ ६ ॥
लपौ वीर अरि साहि औ वार वधू की वाह ।
जीतन को ठाढी भइ जग लिये माह ॥ ७ ॥

पूर्ण प्रतिलिपि

विषय —

अजमति खाँ के यश का वर्णन किया गया है ।

संख्या १५१. शारंगधर वैद्यक, रचयिता—वलवीर, कागज—देशी, पत्र—६९, आकार—१०¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० वि० = सन् १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं०—सहदेव शर्मा आयुर्वेदाचार्य, डि० वो० औषधालय मनिअर, जिला बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमः श्री देवी जी सहाए श्री वैद सारंगधर ॥

॥ अथ नारी परीछा लीषते ॥

चौपाई

मुल अंगुठा कर गहु भारी। सकल बदन नारी लेहु वीचारी॥
कारन पीत कथा मो भाई। मेडुका काग कुलंग चलाई॥
कारन कफ की नारी वीचारी। हंस मइ उर चले सो नारी॥
कारन वदन होइ जो वाइ। सरप जलौ का चाल चलाई॥

\+ + +

दूसर भेद सुनो मन लाई। कंठ चढै असलेपभ जाई॥
नैनन जलन औसुज सरीरा। नीस्चे ऋीतु कहत 'बलबीरा'॥
सुन राजा तै तीसरी गता। सुचक होए सुज सव गाता॥
व्याकुल वेग बहुत जो होई। उपर स्वास भरे नीज सोई॥
भेद मउत का सुनो सुजाना। हृदय तपत होइ दुइ काना॥

अंत—

॥ इलाज गरभ रहे का ॥

पहीले दाइ आवै पंदरह रोज मटी का पुरा लगावै मेहरारू अपने नहान से होए तब नही न करे सफा होइ तव नरमा की पाती नव ठवर ९ मीरीच अडाई अंडा २ ॥ दूध गाइ के पाव भर ऽ। तीनु वीजु के मीस्री के दुध के साथ पीआवै तो गरभ रहै एक महीना पीआवै अपने सामी के साथ एक महीना रहै तो गरभ रहै इछा भगवान के चाही जे आछा होए।

इति सारंगधर वैदक देषा सो लिषा मम दोष ना दीयते दसषत अनंतलाल सीपाही कंपनी ५ रेंजमट ७२ छवनी वैसाष सुदी ॥ १५ सन ११५० महीना अवरैल (? अपरेल) साल १८४२

विषय—

शारंगधर नामक संस्कृत के वैद्यक ग्रंथ का भाषानुवाद किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख केवल एक चौपाई में किया है जो इस प्रकार है :—

'नैनन जलन औ सुज सरीरा।
निस्चे ऋीतु कहत 'वलवीरा' ॥'

गद्य की भाषा पुरानी खड़ी बोली है।

संख्या १५२. बिना नाम का ग्रंथ, रचयिता—वली या वलिराम, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार ६३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मुन्नीलाल जी, नंद गाँव, डा० नंद गाँव, जिला—मथुरा।

आदि—

श्री गुरुभ्यो नमः ॥

मांडुक कुजरा कर मांह लीया नग तीन कूं तोड चौगान कीया।
नहि प्राज्ञ न विश्व न तैजस है मृग नीरन लोक हिरान कीया ॥
मह तत्व नहीं वहुराट कहा माया पीस कैं इश पीसान कीया।
वह नाह मरै तनु नाह धरै तुरीया विह अमृत पान कीया ॥
प्रज्ञान ब्रह्म यह विश्व चराचर जीव कराकर व्याप रह्यौ है।
स्थूल भोग जाग्रत अवस्था मै छै इंद्रीयन करि निर्व छक्यौ है।
स्वप्न मध्य धिसना की संतित काम जनित सुख भार भरयौ है।
सुषुप्ति मध्य अवस्था दोऊ पीवत मधु भुक्नाम सौ वेद धरयौ है ॥
माया कर जन भोग भुगावत तुरप प्रसंग सो वेद वरयौ है।
इमकुं रक्षा कर रक्षण विन जनम मरन दोय दंश परयौ है ॥

तत्वं मसी महावाक्य साम की सार मणी। अय अत्मा ब्रह्म वाक्य सु अथर्व मणी ॥
प्रज्ञा काय मंझार वाक्य रिगवेद अणी। ब्रह्माहमस्मी महावाक्य जजुवेद गणी ॥

अंत—

छप्पै

अवस्था तीन अतीत तीन कौ मूल है।
समझ पड़ै बिन नाह जाय जगत सूल है ॥
वही जानिबे योग्य और सब तुछ है।
"वली" कहे आनंद ब्रह्म यह पुछ है ॥
चतुर्थ सांत अद्वैत वेद मे गाइये।
महत पुन विन कहो कहा कह पाइये।
हिरण्य गर्भ ने कही कंज आसन सुन पाई।
तिसते गही वीसिष्ट सक्ती को सुधि सुनाई ॥
शक्ति सुनु ते सुनाकार सुन सुक को दीनी।
सुक के शिष्य उदार गोडसुन अधालीनी ॥
उनके शिष्य गोविंद पाद विद्या के आयन।
उनकेभागवत पाद शिष्य सो ब्रह्म परायण ॥

उनके शिष्य उदार चार विद्या के अंगा।
इनतें प्रगटी आय इहा निज विद्या गंगा॥
जे अव गाहन करें लाल तिनकी है सारी।
पुण्यहीन प्रतिकूल जीत जगवाजी हारी॥
प्रथम आगम अद्वैत युक्ति किंचत कर गयी।
दूतिये श्रष्टिवै तथ्य स्वपन के तुली दिखायी॥
तृतीये युक्ति अद्वैत वेद की गती बखानी,
तुर्य मध्य मत खंड भ्रांति आलात वुझानी॥

॥ सोरठा ॥

अजातिवाद यह ग्रंथ चार वाद दूसन सहित।
सेवत संत महंत भ्रांति लेस तहां कछु नहीं॥

इति श्री यह ग्रंथ पूर्णताया को भयो होत भ्रांति को अंत गर्भवास तिनको नहीं। श्री राम जी।

विषय—

आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या १५३. पद संग्रह, रचयिता—बलिहारी 'वलि', कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—४.८ × ८.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनीटोला, इलाहाबाद

आदि—

॥ राग केदारो ॥

रसिक रसीलो रास॥

नृतत मोहन प्यारो॥ सरद जोन्ह सी भामिनी राधा हसि हसि करत प्रकास॥
सुभग पुलिन जमुना वहै परसत धीर समीर॥
नाचत मंडल करि दोउ जहाँ व्रज वधुवन की भीर॥
अलग लाग गति भाव सों साँवरे लई प्रवीन॥
तबही कुँवरि प्रिया लाडिली रीझि अपनपो दीन॥
भई मंद गति चंद की देषत नित्य विहार॥
'वलि' वलि विहरति छवि भरें श्री राधा नंद कुमार॥ १॥

+ + +

राग विहागरो

राधा रानी को परम सुहाग ।
प्रेम मुदित मन छके रहै द्रग प्रिय मोहन अनुराग
अंसनि भुजा दीयें दोउ विहरत अति ही रम्य बृंदावन वाग
जुगल रूप वलिहारी नैन भरि अवलोकत वड़ भाग ॥ ९ ॥

\+ + +

फिरि वो गया मैडे आगणा वो नंद दा ॥ लाज मरेंदी वेपरा न पाईयाँ
आँपडीया दा लगणा वो मोहणा ॥ मुरली वजावदा इस्क जगावदा
वोलण मिठडा दिलणू ठगणा ॥ को ई थी मिलावे वलिहारी सावला
नेह उसीदे नाल पगणा ॥ २० ॥

अंत—

॥ राग श्री ॥

मेरो री मोहन नैक न छाडै लंगर लगवार डोलैं ॥
वै निधरक, हौं सकुचों लाजन, निकट आय दुरि घूँघट पोलै ॥
भरि गुलाल आंपिन में भाजत वलि समझावै को लै ॥ १०२ ॥

राग धनाश्री

मोरी हरे पाट की ईंदुरी लाल तुम रापी

—अपूर्ण

विषय—

प्रस्तुत खंडित ग्रंथ में वलिहारी कवि के पद संगृहीत हैं। इनकी संख्या केवल १०२ है।

पदों का विषय श्रृंगार है। इनमें राधा, कृष्ण तथा गोपियों की दान, मान, रास, पनघट और वसंत आदि लीलाओं का अत्यंत सुंदर वर्णन है।

अधिकांश पदों की भाषा ब्रज है; परंतु बीच बीच में कुछ पद पंजाबी के भी हैं जिनकी संख्या १२ है।

संख्या १५४ क. धवल पचीसी, रचयिता—वांकीदास आसिया, कागज—देशी, पत्र—१ (५२वां), आकार—११ × ६$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

(दूहा धमल रा)

धवल पवेचे हे सखी ! दमडां कहा करेह ।
जल ऊमैं थल सांम है, धमलो चीतारेह ॥ २ ॥
धमलो धमलो मत कहो, धमलो धमलो न होय ।
कालोही धुर खंचणो, धमल कही जे सोय ॥ ३ ॥

—अपूर्ण

विषय—

बैल की तारीफ के २५ दोहे हैं; परंतु मिलते ९ ही हैं ।

संख्या १५४ ख. मान जसो मंडन रचयिता—बांकीदास आसिया, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०×१९८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४००, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री जलंधर नाथ जी सत्य छेः । श्री १०८ श्री खाविंदांरी हजूर में दवागीर आसिया बांकीदास दूहा बंध रूपग मान जसो मंडन कह्यो सो मालूम हो ॥

दोहा

निराकार निर्गुण नमो सगुण नमो साकार ।
जालंधर जोगेसवर अनघ चरित्र उदार ॥ १ ॥
सीस होय मुद्रा श्रवण, शिव विभूत तव श्याम ।
पीर कणेरी पावरो नाथ जलंधर नाम ॥ २ ॥

× × ×

कर जस मान कमंधरौ परहर आलस पात ।
परतप जास पसावसूं । सदन हुअ सुख सात ॥ ९ ॥
मान तणां गुण जोड मन, कोउ छोड अनकाज ।
सारा करसी काज सिध, मानसिंह महाराज ॥ १० ॥

अंत—

सोरठा

पत मुरधर पतसाह, ईख मान मन ऊपजै ॥
नल दमयन्ती नात, जोधाणे लीधो जनम ॥ २२४ ॥

अजन हरों आसान, कमधज मुसकल में करै ।
मोमत हूतां मान, मैं परमेश्वर मानियो ॥ २२५ ॥

समझ दान सयान, अविस्व पालकता अछै ।
राखे सिध राजान, मोनुं चरणां मानरा ॥ २२६ ॥

भूनभ ससहर भाण, अै जालंग तालंग अखै ।
औखां गढ जोधारण गोखां करौ गुमान रौ ॥ २२७ ॥

समाप्ति—इति श्रीमान् जसो मंडण संपूर्ण ॥

विषय—

जोधपुर नरेश मानसिंह जी का यश वर्णन ।

संख्या १५५. बाघरारा दूहा, रचयिता—बाघरा, कागज—देशी, पत्र—२ (१-२), आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री गणेशाय नमः

मिलसी तो मिलियांह,
पुड बोई पा पणि तणां ।
नपणां अरु नीदांह
घयर विलूधो बाघरा ॥ १ ॥

अंत—

सीगरती सिर चढियांह, खहरहि माहि खसोढिया ।
राणा राख थिवांह, चीसारीसूं "बाघरा" ॥ १५ ॥

इति बाघरा ॥

विषय—

विरहिणी की दशा विषयक ११ दोहे ।

संख्या १५६. १-मुख नामौ, २-गुन कठियारा, रचयिता—बाजिद (वाजीद), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

सुपनांमौं जोग ग्रंथ ॥

साधन संग सदा रहूँ सुनौ सयाने कोइ।
मन वच क्रम मोकूं भजै तौ गंजिन सक कोइ ॥ १ ॥
पंभ मांझ नरसिंह ह्वै प्रगट्यौ जनकै काज।
हर नष सिव कूं लैगयौ ज्यूं तीतर कूं बाज ॥ २ ॥
भगत सुमेरी आत्मां जाकू जाइ विरोध।
सुरपुर नरपुर नागपुर जहां तहां मारूं सोध ॥ ३ ॥

अंत—

॥ गुन कठीयारा नामू लिपते ॥
यादरि गहि दिवांन की साधू जन नित जाय।
कठिहारै एक देपि कै दोरि गहे दोइ पाय ॥ १ ॥

चौपई

साध येक साहिब दरगह जाई।
दोरि गहे कठिहारै पाई॥
अरज हमारी कीज्यौ ऐसी।
निसदिन विपति रहत घरि वैसी ॥ १ ॥

\+ + +

॥ अरिल्ल ॥

तौ बहुत कलिय कै जीव वृथा ही मरतु है।
विधना लिप्यौ लिलार सुतौ क्यौं टरतु है।
कूप छाडि सम दै जोवजन जाइ है।
परिहां टांव प्रवांनैं नीर सही सो आई है ॥ ६३ ॥
इति गुन कठियारा नामौ संपूर्ण ग्रं ॥ ८ ॥

विषय—

ज्ञानोपदेश का वर्णन।

संख्या १५७. रस चंद्रिका, रचयिता—बालकृष्ण, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—९ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२११६, खंडित, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

ज्यौं निसि नीकी ना लगै विन चन्द्रिका सुजान ।
त्यौंही कवि मग देखियै रस चंद्रिका अजान ॥ २८ ॥

रस देषन की चाह जिहि जगत मोहिये हेत ।
ताके हित रस चंद्रिका 'वालकृष्ण' करि देत ॥ २९ ॥

प्रथम प्रकास परंपरा दूजै नवरस रीति ।
तीजे रस विभिचार गनि चौथे नायक नीति ॥ ३० ॥

पंचम षष्टम नाइका दूती सखी विचार ।
भाव विभाव अनुभाव अरुभावनि कौ विभिचार ॥ ३१ ॥

दरसन हाव वखानि कै सप्तम छन्द विधान ।
दूषन भूषन अष्टमै नव मै गुण परधान ॥ ३२ ॥

पुनि कवि नियम वषानही जातै कवि गुरु होत ।
पुनि दंपती विनोद कही प्रथनि वाल उद्योत ॥ ३३ ॥

वहुरि समस्या करण विधि वंध रीति पुनि जानि ।
दशा और गुण कौ कथन अलंकार सव मानि ॥ ३४ ॥

'वालकृष्ण' इहि विधि कह्यौ सुनियहु चित्त दै मित ।
कला प्रमान प्रकाश जुत रस चंद्रिका सुकृत ॥ ३५ ॥

कवि कुल पंडित सुघर मिलि छमियहु यह अपराध ।
रस चंद्रिका वनाउ कौ उपजी मनमो साध ॥ ३६ ॥

अंत—

तिय नैननि सौं रीझि करि हीरति मानै जोरि ।
याहू विधि पूरन करौं वाल वुद्धि वल दौरि ॥ ९७८ ॥

पिय वूझत है निज सषी तिय नैननि ही रीझि ।
रति मानै यह जुगति कहि वालकृष्ण जनि षीझि ॥ ९७९ ॥

इहि विधि समस्या मित्त पद तुव पदारथ चित्त ।
वहुभाँति वूझहु नित्त तव वाल करहु कवित्त ॥ ९८० ॥

अथ युक्त समस्या यथा
जो जाके संतत मिलै सो वरनिय जिहि ठाव ।
'वालकृष्ण' कवि जानियहु युक्त समस्या नाव ॥ ९८१ ॥

विषय—

इस ग्रंथ में ११ प्रकाश हैं जिनमें क्रमशः निम्नलिखित विषय वर्णित हैं :—

(१) परंपरा
(२) नवरस विवेचन
(३) रस विचार
(४) नायक निर्णय
(५) (६) नायिका सखि, दूती, तथा भाव, अनुभाव विचार।
(७) छन्द विधान
(८) दोष निरूपण
(९) गुण
(१०) कवि नियम
(११) दंपति विनोद वर्णन।

संख्या १५८. वाणियाँ, रचयिता—बाल गोदाई। इनकी वाणियाँ विवरण पत्र संख्या ५९ में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १५९. श्री बावरी साहबा के शब्द, रचयिता—श्री बावरी साहबा, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१२३/४ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४, पूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजा रामजी, स्थान और डाक घर—चिटवड़ा गाँव, जि० बलिया (उ० प्र०)

प्रारंभ—

श्री बावरी जी के शब्द

अजपा जाप सकल घट बरतै
जो जानै सो पेपा।
गुर गम जोति अगम घर बासा,
जो पाया सो देपा।
मैं बांदी हौं परम ततु की,
जग जानत किसु भोरी।
कहत 'बावरी' सुनो हो 'बीरू'
सुरति कमल पर डोरी।

विषय—

दार्शनिक ज्ञान का विवेचन किया गया है।

संख्या १६०. दामोदर हरिदास चरित या ज्ञानावली, रचयिता—बीठू बांकीदास, कागज—देशी, पत्र –४ (८२-८५), आकार—८ × ९½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८३ वि०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्रीरामाय नमः अथ गीत लिख्यते—

महो पिच्छम ऊहूं करे चत्र मासो,
लख पुल सांधा पंथ लियो ॥
मारग मिलै माड़रा मांझी,
दोप सतां उपदेश दिपौ ॥ १ ॥
चाय अग्राध गोढियो चित्त में
धारे सिखां चांदियो ध्यान ।
चारू प्रसाद चाढियो चेला
गुरां दूलोई छोटियो ज्ञान ॥ २ ॥

अंत—

दोहा

शस्त्र वसन ले सिखन के, गे खेराये गांम ।
श्रीदयाल गुरुदास करि, धरी भेट गुरू धाम ॥ ५७ ॥
गुरु दामोदर हरि को, पूरन चरित पुनीत ॥
बीठू बांकीदास कवि, गायो जस करि गीत ॥ ५८ ॥
भावन जन ताको भन्यो, विस्तर अरथ विचारि ।
न्यूनाधिक या में निरखि सज्जन लेहु सुधारि ॥ ५९ ॥
ग्रन्थ गोप्य 'ज्ञानावली' दीनों गुरू उपदेश ।
सदा प्रेम संजुत सुणै लोभ न उपजै लेश ॥ ६० ॥

संपूर्णम

विषय—

जोधपुर में खड़ोपा संतों का स्थल है। वहाँ के दो साधु (गुरू शिष्य) शिव परगने के अंड् गाँव में चौमासा करने जाते थे। मार्ग में चोर मिले, उनसे लड़े और अंत में ज्ञान उपदेश द्वारा उन्हें शिष्य बना लिया।

कथा में गीत, दोहा, नाराच आदि ६० छंदों में बात है।

संख्या १६१. श्री वीरू साहब के शब्द, रचयिता—वीरूसाहब, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१३½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री वीरू साहब के शब्द

॥ राग गौरी ॥

हंसा रे बाझल मोर याही घरा। करवो मैं कवन उपाइ।
मोतीआ चुगत हंसा आइल हो। सो तो हंसा रहल भुलाइ॥
झीलर को बकुला भयो है। करम कीट धरी पाइ॥
सत गुरू सत्य दया कीयो। यह बंधन लइ छोड़ाइ॥
यह सँवसार सकल है अंधा। मोह माया लपटाई॥
"वीरू" भगत हंसा भयो। सुपसागर चलेव नहाई॥

अंत—

राग बंगला

त्रीकुटी के नीर तीर बाँसुरी बजावै लाल,
लाल भाल से सभै सुरंग रूप चातुरी।
जमुना ते अवर गंग अनहद झरतान संग,
फेरी देपु जगमग कौ छोड़ी देवै बादरी।
बाइ प्रचंड चंड वंकनाल मेरु दंड,
अनहद को छोड़ी दे आगे चलु बावरी।
ओंकार धार वास उन्हहु को करै वीनास,
षसम को साथ करू चीन्ही ले सइआ मेहरी।
जन 'वीरू' भाव तान आन पौन मौन घोर,
जोर सत गुरू सब्द चाबुक करार री।
काव्य (? रकाव) पग धरु चरु सुर मैदान,
जीति घर आवरी ॥ २ ॥

विषय—आध्यात्मिक ज्ञानोपदेश वर्णन।

संख्या १६२ क. फशफुल वजूद अर्थात् ब्रह्मनिरूपण, रचयिता—शाह बुरहान, कागज—देशी, पत्र—२९, आकार—९ × ५.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण

(अनुष्टुप्)—५२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हाफीज सैयद, १३ चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

॥ बिस्मिल्लाह अर्रहमान अर्रहीम ॥

अल्लह वाहिद सिरजन हार—जों जग आलम जिसथे वार।
जाहिर बातिन अपना रूप—जात मनज्जह सहज सरूप।
दायम कायम आपै आप—जो नापन करे ना मा बाप।

तन मन जोबन ना अंक लेत—
ना उस पीत ना उस चेत।
कहते न आवै कुछ मिसाल—
जाय तरफ ना वहम खयाल।

जात मनज्जह सब थे पाक—वह न आवे किस इदराक।
इश्क कहूँना मोहब्बत शौक—लज्जत कहूँना सोहबत जौक।

नैना बिन वह देखे सब,
कानो बिन वह सुनता सब।
नासिक बिन वह लेवे वास,
वजूद नहीं पन भोग विलास।

जिवहा बिन बोलन हार—हाजिर नाजिर है करतार।
जान पनावै अपना नूर। राखिया अपने नजर हजूर
अविद कर इस किया जुदा। तो उन साबित किया खुदा॥

अंत—

वासिल फिर रूह तसल्ली पाय—
याद फिरसक न जीव अखाय।
तजल्ली का तू बूझ असल,
हक सो बोलू हक मिसल।
मदद हक सों करूं बयान,
रोशन होवे सब अयां
नैन तो किसका होय मजाल,
बिन हक पावै ऐसा हाल
तो मैं कुछ करूं निसान,
आरिफ होकर देवै कान,

नफस का भाता सार जाय—
दोनों आलम दिन के पाए
दिल में मुहीत जात अखिल,
रूह का होता देख वस्ल।
दिल तो जान पने का संग,
अकल लाली केरी रंग।
अम्ल दलाली नफ्स थे जान,
नफ्स थे मेल देख पहचान
नफ्स थे जावें सब हरकत
दिल मुनज्जा होय सत॥

तम्मत शुद

विषय—

'कशफुलवजूद' सूफी धर्म का ग्रंथ है जिसमें ब्रह्म का निरूपण किया गया है।

संख्या १६२ ख. मुन कातुल ईमान, रचयिता—शाह बुरहान साहब, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—९ × ५'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हफीज सैयद, १३ चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

बिसमिल्लाह अल रहमान अरहीम
अल्ला वाहिद सिरजन हार, ये जग रचना रचिया अपार।
सकला आलम किया जहूर, अपने बातिन केरे नूर॥
देखन क्यों दे लाया जग, कोई न समझे उसके लक।
गफलत सेता परदा आप, सब जग लेता उसमें नाप।
बहुतों खालिक किया विचार, भूलिया सब जग गफलत यार॥
'नात मुहम्मद मुस्तफा सरे अल्लाह अले वसल्लम'

(मुहम्मद साहब की प्रशंसा)

नबी केरे भूली राह, उनमें थोरे हक आगाह
जिसको होय इरादत हक, तो वह बूझें हक मुतलक
मुलहिदान की ऐसी बात – खुदा पछानै केते घात
वह भी आखों तुझ मुईन—परगट बोलो देखें अैन
कोई इक आँखें ऐनहवा—आपुस विरले करै दवा।
वह कौन हुआ देख उसमे—रचनक जग की हैं जिसमें॥

अंत—

जिसकों तोफीक उसमें होय,
उसके कर्मों समजे कोइ
यूं सब बंदे हैं अनजान—
जिस वो पूरे दे ईमान
ईमान देवे जिसे अता
वह क्यों जावे देख खता
वली नबी के सब अकवाल,
समजिया नाही वह किस हाल
उन बोलों पर थे हो मुरतिब
राह हकीकत थी हो बद
बूजे नाही राह सलूक
गफलत राह लग भूले चूक
मुरशिद पूरे राहनुमा,
तो वह बूझें खूब अघाँ
नही तो फिर फिर भौरी माँन,
घोल वकार में सर वरदान
जिसके दिल पर खोले नजर,
उस पर खोलें सब पदर
अल्लाह राखे गफलत थे,
आप दिखाये कुदरत थे
बंदे सकले नातवाँ—
अल्लाह राखे आप पिन्हा
यो फरमाये शाह बुरहान
इसमें आहे नफा ईमान
तमामशुद

विषय—

प्रस्तुत 'मुन फातुल ईमान' अर्थात् 'धर्म का लाभ' सूफी मत की रचना है। इसमें केवल ११ पत्रे हैं। यह बहुत छोटी सी रचना है और इसमें परमात्मा या खुदा के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति भाव रखने का उपदेश है।

संख्या १६३. इरशादनामा शाह बुरहान उद्दीन जानां, रचयिता—शाहबुरहान उद्दीन जानां, (दक्खिनी), कागज—देशी, पत्र—१६२, आकार—७ X ४.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२६०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य

और पद्य, लिपि—फारसी, लिपिकाल—सन् १०२७ हिजरी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हफीज सैयद, चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

......मशाहिद अकस का लेना हो और रूह का मशाहिद लेना तो आलम तबीयत पर है। दूधवर या ज्यों सोने का मैं हूँ होर इसे देखें को जीव क्या आखियाँ पौरें। विपत रोवे तुरा छीदम दीदये जान वैन वानी होर फाज करोमी अज़ कर कम होर हदीस......सो खोलना नूर के परदे देखने को होर........परदे देखने का नूर होर नबी केरी मुहब्बत सब पर है।

अंत—

परमल नाच परमल वास, नास करें वह.....खास।
बने पे कंथरी लाये कली, अपदें सत की सेज मेरी।
अरसी मुतलक पाकर गनी—
गालिब शहवत बहुत मैंनी
जिसके ऊपर होय खयाल,
उसको अपना देय वसाल
जैसी सुनकर मिल वैसा होय,
तो वह वेधी समझें कोय
जेको इसके मन कों भाये—
अपनी........किन समझाए

—अपूर्ण

विषय—

गुरु शिष्य संवाद के रूप में सूफी मत का प्रतिपादन किया गया है। रचयिता ने पद्य के अतिरिक्त गद्य का भी प्रयोग किया है। पद्य में चौपाई छंद का प्रयोग हुआ है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत पुस्तक दखिनी भाषा (जिसे दखिनी उर्दू कहा जाता है) में लिखी हुई है। इसके शब्दों के रूपों में प्रायः ये विशेषताएँ मिलती हैं:—

'कुछ' के लिये 'कुज' लिखा गया है
'लेकिन' ,, ,, 'लाकिन' ,,
'और' ,, ,, 'होर' ,,
''भी' ,, ,, 'बी' ,,
क्रिया के रूप 'मानिया', 'जानियाँ' आदि भी मिलते हैं।
लिपिकाल सन् १०२७ हि० है।

संख्या १६४ क. रामायण (किष्किंधाकांड लंकाकांड और उत्तरकांड), रचयिता—बुलाकीनाथ बाबा, कागज—देशी, पत्र—३०८, आकार—९¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)–५८५२, खंडित, रूप—प्राचीन (जीर्ण शीर्ण), पद्य, लिपि—कैथी और नागरी मिश्रित, रचनाकाल—सं० १८०७ के लगभग, लिपिकाल—सं० १८३३ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—ठा० जगन्नाथ सिंह, ग्राम—बुलाकीदासजी की मठिया, डा०—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

देषी भएल नीषी सुप (? ऋष्यमूक) नाथ।
देषी दरस भयेउ सनाथ॥
तेही सीषर पर सुग्रीव। पतनी सहीत वलसींव॥
नीज देषी जब वल सींव।
उठी मीले नीज सुग्रीव॥
जसनाथ तुव परभाव।
मोही कीन्ह प्रेम सुभाव।

पुछेन्ही सकल इतिहास। सभ कहेउ नाथ प्रकास॥
तेही बंधु के वड़ी त्रास। दंपती सहीत उदास॥
जब कहेउ प्रभु इतिहास। सुनी भएउ जुग उर आस॥
× × ×
सुनी सुकंठ बहुरी बहलावा। दुतीय धावन बहुरी पठावा॥
कवन राम कहवाँ रजधानी। पुछहु जाहु दुत मृदुबानी॥
आएहु मानी सो दोसर आवा। सभ प्रसंग लछुमनही सुनावा॥

दोहा

सुनत लषन दुतीए वएन तुरीत कहेउ रीसी आई।
सहीत सीघासन पट अबही दीहौं बीहाई॥ ४०॥

सोई राम जेही सभ जग जाना। बाली मारी जीन्ह तुम सनमाना।
लछुमन नाम तासु लघुभ्राता। जासुन कीए मइत्री के नाता॥
जौ अबही के नाही आवहु दुआरा। नतौउ प्रभु अंगद करव भुआरा॥
जौ अस सुनी अवही देउ धाउ। वीनु प्रभु आएसु नाही वसाउ॥
अंत—

उत्तरकांड

छंद त्रीभंगी

मंगल बधाव भूप भवन सभए मनोहर गावहीं।

अनुरागता गनी लो ती लोचन प्रेमचारी अन्हावइ ।
सुर शरव जान वेबान नभ शभ भुप अजीर जनावही ।
नाचही अपछरा गान मंगल सुमन झरी सभ लावही ॥
रानीन्ह शभन्ह पुर नारी नर तेही काल भवन बोलाइ कै ।
शादर सभही पहीराइ भुपन बीनै वचन सुनाइकै ।
मानीक मनोहर दीयो सभ पुर लोग धनद शंमाकीए ।
बुझी परत नहीं सुलोक कीधौं भवन नीज नीज अवधए ।
लछी आवही लछीं जावही शीता दरस सभ फल पावही ।
नभ नग्र अनंद वधाव वाजत कोकीला सुर गावही ।
शुर जैती जैती प्रसुन्य वरषही वीवीध वीधी स्तुती करी ।
धन्य धन्य कोसल नाथ शीअ सभ अवध नभ पावन करी ॥
रनशेधु अगम अगाधी प्रबल प्रताप रीपुदल दलमले ।
सभ बंधु कोसल धनी शीआ रघुबंस कुल भुपन भले ।
सुरलोक सुरपुर रीपी नीप के देव अन्हुती गावही ।
शुनी सुजस दशरथ राम के शंग्राम जीती सुहावहीं ।
जए राम कामनी काये चहु जुग शुजश शुरमुनी गाइहे ।
लंकेश भग्ती प्रशंग शुरमुनी ध्यान उर अवधाइहे ।
जे कीयो तेही तस दीएहु तश फल धन्य धन्य कृपाधनी ।
शभ बंधु सीअ रघुनाथ राम नमामी अस्तुती सुरभनी ।
नीपद्वार चारीउ भाइ देवन्ह दरश देपी मंगल महा ।
'सेंगर बुलाकी' राम अवध प्रशंग उत्तर कथा कहा ॥

इति श्री रामाऐन उत्तरकांड राम लछमन सीता भरत शत्रुहन शैना शपा कुल परिवार नीपद्वार प्रथम राम आसन ॥ अवध कुशल प्रसंग चारीउ भाई पुसी उत्तरकांड कथा देवन्ह अस्तुती नारद वाशीश्ट शंमाद भापा क्रीत बुलाकीनाथ शाके शेंगर कुल गौतम गुर..........

विषय—

हरिहर पुराण के अनुसार किष्किंधाकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड के रामचरित्र का वर्णन किया गया है। प्रत्येक कांड में निम्नलिखित अध्याय हैं :—

किष्किंधाकांड (पत्रसंख्या—१०५)

१—पहला अध्याय—सुग्रीव रामलक्ष्मण प्रथम मुलाकात ।
२—दूसरा अध्याय—राम लक्ष्मण हनुमान सुग्रीव प्रसंग ।
३—तीसरा अध्याय—सुकंठ इतिहास वर्णन ।
४—चौथा अध्याय—वाली सुग्रीव और अंगद इतिहास वर्णन ।

५—पाँचवाँ अध्याय—अंगद सुकंठ मिलन।
६—छठा अध्याय—सुग्रीव राम तथा अंगद जुवराज वर्णन।
७—सातवाँ अध्याय—संपाती, गरुड़, संपाती राम, तथा अंगद हनुमान, संपाती गरुड़ संवाद वर्णन।
८—आठवाँ अध्याय—रावण तथा लंका पलंका इतिहास वर्णन।

लंकाकांड (पत्र संख्या १५२ के लगभग)

१—पहला अध्याय—कुंभकरण स्वप्न वर्णन।
२—दूसरा अध्याय—अभयनंद मंदोदरी संवाद।
३—तीसरा अध्याय—कुंभकरण, मेघनाद, विभीषण संवाद।
४—चौथा अध्याय—कुंभकरण, विभीषण, सीता संवाद।
५—पाँचवाँ अध्याय—कुंभकरण स्वप्न प्रसंग समाप्त तथा विभीषण की भक्ति का वर्णन।

लंकाकांड (क्रमशः)

१—पहला अध्याय—वैराग और भक्ति संबंधी काव्य।
२—दूसरा अध्याय—अंगद की दूत कार्य में नियुक्ति।
३—तीसरा अध्याय—अंगद रावण संवाद।
४—चौथा अध्याय—अंगद का रावण की सभा में पदरोपण तथा रावण के मुकुटों का हरण।
५—पाँचवाँ अध्याय—अंगद का वापस आना और युद्धारंभ करना।
६—छठा अध्याय—लक्ष्मण का मेघनाद से युद्धारंभ।
७—सातवाँ अध्याय—लक्ष्मण मेघनाथ युद्ध वर्णन।
८—आठवाँ अध्याय—मेघनाथ द्वारा लक्ष्मण का मूर्च्छित होना तथा हनुमान का संजीवनी लाना।
९—नौवाँ अध्याय—मेघनाथ वध और सुलोचना का रामदर्शन को आना।
१०—दसवाँ अध्याय—सुलोचना का सती होना।
११—ग्यारहवाँ अध्याय—रावण कुंभकरण संवाद और ज्ञानप्रसंग वर्णन।
१२—बारहवाँ अध्याय—कुंभकरण संग्राम वर्णन।
१३—तेरहवाँ अध्याय—कुंभकरण संग्राम वर्णन।
१४—चौदहवाँ अध्याय— " " "
१५—पंद्रहवाँ अध्याय—राम रावण और कुंभकरण रामलक्ष्मण समर वर्णन।
१६—सोलहवाँ अध्याय—राम लक्ष्मण और कुंभकरण संग्राम वर्णन।
१७—सत्रहवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम तथा विभीषण राम ज्ञानोपदेश।
१८—अठारहवाँ अध्याय— " " "

१९—उन्नीसवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम तथा अंगद प्रशस्त संग्राम पथ वर्णन।
२०—बीसवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम और हनुमान अंगद प्रताप वर्णन।
२१—इक्कीसवाँ अध्याय—रावणवध तथा हनुमान का विजय संदेश लेकर अशोक वाटिका में सीता जी के पास जाना।
२२—बाइसवाँ अध्याय—सीता जी की अग्निपरीक्षा और राजा दशरथ राम मिलन वर्णन।
२३—तेईसवाँ अध्याय—रामचंद्र जी का अयोध्या को लौटना।

उत्तरकांड (पत्र संख्या ९३)

(इस कांड में अध्याय नहीं हैं)

रामचंद्र जी का राजतिलक, कुल परिवार सहित चारों भाइयों का राजसुखोपभोग तथा अयोध्या की सुख शांति का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—किष्किंधा कांड की पुष्पिका में दो संवतों का उल्लेख है। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री रामाएन हरीहर पुरान ॥ बाली ॥ सुकंठ ॥ अंगद ॥ हनुमान ॥ नल ॥ ॥ नील ॥ दुविद ॥ मअंद ॥ जामुअंत ॥ अनकरंभ ॥ नील कुद ॥ कटाछ ॥ श्रीकुट ॥बान॥ ॥ सबल ॥ सदइब ॥ तार ॥ सघोस ॥ केसरी ॥ असंक ॥ गज ॥ गती ॥ श्रीग सपा ॥ ॥ सदेज ॥ ब्रातासपन्या ॥ अस ॥ बीधी ॥ पीड ॥ अबीस ॥ ऐता ॥ प्रधान ॥ रावन ॥दुं॥ ॥ तीथ्रा ॥ रावनं ॥ लंका ॥ दुतीअ ॥ पलंका ॥ कथा प्रसंग ॥सुग्रीत॥ संमाद ॥कीकींदा॥ कांड ॥ रामाएन ॥ क्रीत बुलाकीनाथ साके सेंगर कुल गौतम रीषी बंसावरी पुन्य पावन ॥ सीगी रीषी सुत जोधसिंघ गुरु जुड़ावन परवत चरनार ब्रींद नमसुतुते ॥ अष्टमो अइध्याइ संमत अठारह सै सात १८०७ ॥ समै नाम बैसाप सुदी छठी वार सोमार मोकाम मगध देस गाआ छेत्र राजअस्थान टेकारी ॥ मोकाम सेमुआरा ॥ चौडधुरी केहरीसिंघ का पुहुकर पर रामसागर बुलाकीनाथ कै तपैसा के आसन ॥ जल सएन पच अगीनी असन पोपरा देषीन पुरव क बगला पोथी बनली होम जग्य वेदी पर पंच अगीनी तपैसा पर पोथी बनली सुबे रामपुरी इलाहाबास (? इलाहाबाद) भारथ पंडे जमुदीपे जनम धरती सरकार गाजीपुर प्रगने जहुराबाद लपनेसर मधी तपै डापा जनम धरती तालका लषनराइ साकेन सुरतानपुर रामसाला सुपबेलास नाथनवर कथ संपुरन ॥ कीकींधाकांड सुभमसुतु ग्यानरसुतु मगल लाभ फलदाता स्रोत वकता उकुती हनुमान महाबली बुधीदाता सारदमातु कथा संपुरन लीपल दसपतः नाथ मोकाम अंकरुवा बैसाप परीवा वार आगवा ॥ संमत १८२३ समै माघ सुदी पुरनवासी वार सुकरवार मोकाम सुरपी दसपत बुलाकीनाथ लीपल संपुरन ॥

प्रथम संवत् १८०७ वि० कदाचित् रचनाकाल और द्वितीय संवत् १८२३ वि० लिपिकाल है।

संख्या १६४ ख. रामायण अयोध्या और बालकांड, रचयिता—बाबा बुलाकीनाथ, स्थान—सुलतानपुर बलिया, कागज—देशी, पत्र—३०३, आकार—१३ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४०८, खंडित, रूप—प्राचीन, (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, रचनाकाल—सं० १८४१ वि= सन् १७८४ ई०, लिपिकाल—सं० १८४१ वि० (संभवतः), प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, वाराणसी। दाता—ठा० जगन्नाथ सिंह जी, ग्राम—बुलाकीदास की मठिया, डा०—रसड़ा, जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसाए नमह ॥ श्री सारद मातु सहाए श्री बालकांड कथा रामाएन सुपवंद कीत पयहारी श्री बुलाकीनाथ साके सेंगर ॥

॥ दोहा ॥

आदी जोती सीव सारदा सरब देव अब ध्याई।
सेंगर बुलाकीनाथ हित सभ मिली करीउ सहाई॥
आसीनी अवनी कुमारदीन सुकुल पछ उजियार।
चतुरदसी रघुवर चरीत प्रथम भए अनुसार॥
जथा नीलाबर सरब जुग सुरसरी पावन नीर।
सलीता मिले समये वीमल मंज वीमल सरीर॥
× × ×

॥ चौपाई ॥

समत अठारह सै ऐक ताला। कातीक वदी अमावसी काला॥
करउ कथा रस सुधा सुधासु। सुनीही सुसजन मंगल रासु॥
अवनी कुमार नउमी मधुमासा। अवधपुरी मुद मंगल रासा॥
+ + +
सुनि सुनि भूप साधु मुनि बानी। दंपति सहित सुक्रीत गुनपानी॥
कनक कनात बसन बहु आनी। ठाठ करही नीप थाहील पानी॥

अंत—

॥ छंद ॥

भै हरन जगनीस तरन तन तप धर्म भरथ सुजस नए।
नही कीन्ह राज कबूल भाएप राम लछीमन अस भए।
उत लपन सीता राम कानन भानु वंस दीवाकरं।
इत भरथ तप रीपुदवन सेव प्रेम सीया वरं॥
अस राम चरीत पेउप वारीध भरथ मानस हंस को।
नीती नेम जीवत प्रेम भाजन भरथ वीनु अस करत को॥

ऐही कथा काड अवध प्रकासीत सुनीही जे नर गाइहे ।
धन धाम पुत्र कलत्र फल सुनी मनौ वांछीत पाइ हे ।
असमेध कै फल लहहि प्रानी भरथ राम चरीत महा ।
सेगर बुलाकीनाथ सीव कल्यास गीरीजा से कहा ॥

॥ सोरठा ॥

कथा अजोध्या कांड भरथ चरित तप राम वन ।
सुनीही जे चीत धै कान नाथ बुलाकीराम जस ।
से पाइही धनधाम चरीत राम सीअ वीमल जस ॥
सभ पुजीही मन काम सेंगर बुलाकी राम भग्ती ॥

ऐती श्री हरीहर पुराने रामाएन अजोध्याकांड कथा राम भरथ संमाद ॥ क्रीत भाषा भनीती पयहारी बुलाकीनाथ साके सेगर कुल गौतम बसाउरी सीगी रीषी सुत जोधसीघ गुर जुडावन परवत चरणारबींद नमसतुते ॥ दशमोऽध्याए ॥ १० ॥ जंबुदीपे भारथ पंडे सरकार अवध सुबे इलाहाबाद सरकार गाजीपुर प्रगने जहुराबाद लषनेसर मधी तपेढपा । तलुका लषनसए जनम धरती मौजे सुरतानपुर रामसाला प्रगने कोपाचीट मौजे कमतइन । आसन मंठनाथ नगर सुपवेलास पोथी पास दसषत संमत १८४१ समै नाम अगहन वदी एकादसी वार रवीवार संपूरन जगरनाथ काएथ लीपल ॥ मोकाम नाथ नगर बुलाकीनाथ का रामसाला ॥

विषय—

हरिहर पुराण के अनुसार बालकांड और अयोध्या कांड के रामचरित्र का वर्णन किया गया है । इन कांडों में निम्न प्रकार अध्याय हैं:—

बालकांड (पत्र संख्या १४३)

१—पहला अध्याय—मंगलाचरण अस्तुति आदि ।

२—दूसरा अध्याय—रामकथा माहात्म्य देवी देवता साधु असाधु वर्णन ।

३—तीसरा अध्याय—रामकथा वर्णन के विषय में सती ईश्वर संवाद, गरुड़ काकभुसुंडी संवाद तथा भारद्वाज याज्ञवल्क्य संवाद ।

४—चौथा अध्याय—शिव भवानी राम कथा संवाद वर्णन ।

५—पंचम अध्याय—नारद ब्रह्मा संवाद, वाल्मीकि मिलन, नारद उपदेश ।

६—छठा अध्याय—रामअवतार का कारण वर्णन ।

रामकथा का वर्णन

१—पहला अध्याय—(अध्याय नहीं दिया है परंतु इसमें रामजन्म से लेकर विश्वामित्र के यज्ञ तक का वर्णन जानना चाहिए) ।

२—दूसरा अध्याय—सीता स्वयंवर परशुराम संवाद वर्णन ।

३—तीसरा अध्याय—जनकपुर शोभा वर्णन ।

४—चौथा अध्याय—राजा जनक का अयोध्या को पत्र भेजना।

५—पाँचवा अध्याय—अयोध्या में उत्सव तथा जनकपुर जाने के लिये बारात का सजना।

६—छठा अध्याय—अयोध्या से बारात का श्रृंगी ऋषि के आश्रम में आना।

७—सातवाँ अध्याय—बारात का वाल्मीकि के आश्रम में जाना।

८—आठवाँ अध्याय—ऋषि वाल्मीकि का राजा दशरथ को रामचरित सुनाना।

९—नवाँ अध्याय—जनकपुर में बारात का प्रवेश, जनक दशरथ संवाद।

१०—दसवाँ अध्याय—सीताराम विवाह वर्णन।

११—ग्यारहवाँ अध्याय—बारात का अयोध्या के लिये विदा होना।

॥ अपूर्ण ॥

अयोध्या कांड (पत्र संख्या १६०)

१—पहला अध्याय—राम नारद संवाद।

२—दूसरा अध्याय—मंथरा केकई संवाद।

३—तीसरा अध्याय—राम सीता का कौशिल्या से वन जाने के लिये विदा माँगना।

४—चौथा अध्याय—राम लक्ष्मण सीता का श्रृंगवेरपुर पहुँचना, लक्ष्मण निषाद संवाद।

५—पाँचवा अध्याय—राम लक्ष्मण सीता का चित्रकूट में प्रवेश।

६—छठा अध्याय—अयोध्या में भरत आगमन तथा भरत वशिष्ठ संवाद।

७—सातवाँ अध्याय—भरत का राम को मिलने के लिए चित्रकूट को प्रस्थान करना।

८—आठवाँ अध्याय—पंथवासियों का भरत दर्शन।

९—नवाँ अध्याय—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुहन का मिलन तथा नागरिकों सहित गुरु वशिष्ठ और कौशिल्यादि माताओं का राम से मिलना।

१०—दसवाँ अध्याय—राजा जनक का चित्रकूट को प्रस्थान।

११—ग्यारहवाँ अध्याय—राजा जनक का चित्रकूट पहुँचना और राम भरत संवाद।

१२—बारहवाँ अध्याय—भरत तथा राजा जनक का चित्रकूट से लौटना।

रचनाकाल

संमत अठारह सै एकताला। कातीक वदी अमावसी काला॥
करउ कथा रस सुधा सुधासु। सुनीही सुसजन मंगल रासु॥
अवनी कुमार नउमी मधुमासा। अवधपुरी सुद मंगल रासा॥

संख्या १६४ ग. गीता ज्ञान सागर, रचयिता—बुलाकीनाथ बाबा, स्थान—सुलतानपुर, वलिया, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१२ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण—(अनुष्टुप्)—१५०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी,

लिपिकाल—सं० १८३३ के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—जगन्नाथ सिंह जी, ग्राम—बुलाकीदास जी की मठिया, डाकघर—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

……तवनी घाट मोहि देव बतए।
कहै पेवक सुन प्रीआ आनी।
नारी सुभाव बुधी जडठानी॥
जनम जनम अस नेती न होई।
कमठ छाड मलाह न केइ।
मीन कमठ मकर घरीआरा।
इसभ केवट केर अहारा॥
कवनीहु भांति न मानेइ कवट कै पीआ नारी।
चली अग्र कै कंत पुनी पल पल धरम वीचारी॥
गइ तुरीत जल घाट समीपा।
प्रजा पालै जीमी चलइ महीपा॥
पुछी कछप जल बाहर आए।
पोजत सावक कतहु न पाए।

केवटीनी केवट आउ तेहि वारा। कमठ कमठ तै कीन्ह पुकारा॥
सावक अपन लेहु तुम्ह आइ। कंत हमार परम अनीग्राइ॥
सुनी असी वचन केवटनी केरा। जलते नीकल पटमुप हेरा॥
सावक लै तेइ धरु तेही आगे। कर जोरी वीनेइ करै तेही आगे॥
पाही पाही हम सरन तुम्हरी। वीनइ बहोरी केवट कै नारी॥
लीजीउ आपन अंड बीचारी। घटै वेगि तस कहेउ वीचारी॥

केवटनी कहै कमठ सनु नेती न कीन्हो कंत।
तुम्ह नीज क्रीपां वीचारीए जीमी पल पालै संत॥

अंत—

+ + +

सुनी असी वएन वहै नीप रानी।
पगु परी बहुरी बोली म्रीदु वानी।
संकुच सेदेह कहत मीठी वाता,
आए सकल संग तउ? माता।
केहरी वर कँह लीउ बोलाइ,
सभ कह वेगी लेथु हँकराइ॥

आए केहरी वर सुनी आगे,
अए सु होइ सो करउ सुभागे।
कहै धरती वनसपती गाइ।
सभ पसु तुरीत लेहु हँकराई॥
तेही अवसर एक कुंजल धाए।.........

—अपूर्ण

विषय—

हरिहर पुराण के आधार पर केवट केवटनी संवाद पच्छिम के घोड़ों का राम दर्शन के निमित अयोध्या जाना, धरती, वनस्पती और पशु संवाद तथा सबका रामदर्शन को चलना। सिंधु-नृप पशु-धरती वनस्पती संवाद।

संख्या १६५. साखी, रचयिता—बुल्लासाहब (भुड़कुड़ा, जिला—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ वि० और १८४० के बीच, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजारामजी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री स्वामी बुलानंद जी की साषी।
सीस फूल बँदी फुली सोभा अनंत अपार।
मेर डंड झलकल रहै जन बुला ब्रह्म वीचार॥
'बुला' भजन परग की धार है कोई त्यागी सनमुष होइ।
लरै तौ कोइ सुरीवा जाती बरन कुल पोइ।
गगन गरजीआ हे सखी 'जन बुलही' भयो अंदेस।
कब पीअ पावो वेलसों नातौ कहौ संदेस।
अधर धार धुधकत रहै सनमुष चढो न जाए।
'बुला' गुर परताप ते चढो नीसान वजाए॥
'बुला' फुला गगन में बंक नाल गहि मूल।
नहीं उपजै नहीं विनसै सदा फूल का फूल॥
ऐन झरोपे नैन है राम वइठी दरबार।
जब 'बुला' हाजुर में रोके सब परिवार॥
पवन पीआदा जाइकै मुंदे नवो दुवार।
पाँच पचीस कसरी करै मोहकम दीजे हमार॥
+ + +

अंत—

'जनबुला' तन मन सोधी कै प्रेम प्रकास मीलाए।
'इश्रारी जन' सत गुर मिले दुवीधा सकल मीटाए॥
कुल के पसम पीश्रारिश्रा देपी पसम का रूप।
सेत सिंघासन चढ़ी चले जन बुला श्रलप श्रनुप॥
जीवो जो लाइ साँच की रही न घट में कांचु।
'जनबुला' हृदय वीचारी कै नीभो होए कै नाचु॥
एह तन को ढावां कीयो पवन पान धरी रापु।
मन तमोली फेरइ जन बुला हरी रस चापु॥
माश्रा मन की मोहनी मोही रही संसार।
'जन बुला' जोती समानेउ माश्रा मारी पैजार॥
माश्रा के सवकै रहे करै नीगुन सो हेतु।
नीर्गुन की गती बुझते छुटा सभन सो पेत।
श्राठ पहर वतीस घरी भरो पीश्राला प्रेम।
जन बूला कहैं वीचारी कै इहै हमारो नेम।
श्राठ पहर वत्तीस घरी जन बुला धरत हैं ध्यान।
नहीं जानो कवनी घरी श्राइ मीलैं भगवान।
श्राठ पहर वतीस घरी मन रहतु मेरे पास।
'जन बुला' हीदए वीचारीश्रा इह जानो वीस्वास॥
पट क्रम पट सास्त्रु पट धर्म पट पुन्य।
पट पुजा पट कीरीतन इह सब करी कै सुन्य॥
या तन चंदन मन तीलक है सत्य......॥

× × ×

—अपूर्ण

विषय—

निर्गुण मतानुसार ब्रह्म ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या १६६. अमृत भाषा गीत गोविंद, रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—१२$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४१०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवपूजन प्रसाद मिश्र जी, ग्राम—मिश्र जी की मठिया, डा०—वैरिया, जिला—वलिया (उ० प्र०)

आदि—

मुखरमधीरं त्यज मंजीरं रिपुमिव केलिपु लोलं।
चल सखि कुंजं सतिमिर पुजं शीलय नील निचोलम्।

मुखरसधीरं शब्द करि आतुरहे । त्यज मंजीरं । येसे नुपुर को त्यज । रिपु मिव केलिपु लोलम् । संकेत स्थान के विषे जे वाचाल होइ ते समै कों उचित न जाने यासे हे नूपुर । चल सखि कुजं । हे सखि राधे तुम कुंज प्रति चलह । सतिमिर पुजं । अरु अंधकार का पुंज होइ येसे अथवा अंधकार को पुंजहै जा कुंज विषै । शील नील निचोलम् ।। अरुनील साडी को पहिरहु । नीलो वस्त्र ताकरि अनुकूल रसु पोपनो ताकी सामग्री कहीं । अरु गौरांगी जे तूं अरु नीला वस्त्र ताकरि शोभा को विशेषता करि मोहन जे कृष्ण ताकों भी मोहन होइगो यह कह्यो ॥ केलि सुलोलं कहीं ये सो पाठ हे ॥ तहा क्रीडा के विषै उपजावोगी हे ताते जे बोलहि ताते ये सो आभरण पहिरनो यह तात्पर्यं ॥ अहो मंडन के त्याग से शोभा की हानि होइगी या कारण ते परस्पर मिलत जे भूषण को अंग तिन करि परम शोभा होइगी ये सी उत्कंठा को उपजावत स ते कहत हैं ॥

अंत—

श्री राधा अपने शृंगार केऽर्थ आज्ञा दई ताकरि अति प्रीतिवंत भयो तातें सुप्रीत पीताम्बर कर्‍यो । श्रीभोज प्रवस्य रमादेवी सुत श्री जगदेवस्य परासरादि प्रियवंधु कंठे श्री गीत गोविंद कवित्वमस्तु ।। श्री भोजदेव ताते हे उत्पति जाकी देवी को पुत्र जयदेव तिनको जे श्री गोविंद कवित्व ते परासर आदि दै करि जे प्रियबंधु तिनके कंठ विषे होठ ॥

इति श्री किन्दु विल्वीय कविराज जैदेव कृत गीत गोविन्दस्य प्रबंधः समाप्तः ॥ शब्दोदधाव । शब्द को उदधि अलंकार रस छंद प्रबंध हाव भाव संजोग वियोगादिक अरु अनुप्रास दोपादोप इत्यादि कवि कर्म जे हैं ॥ नाम्नत ॥ जो इतनो न जाने ॥ भास्य ज्ञानार्थं निश्चये । भापा को जो ज्ञान ताके विषे विश्वास होइ । तेषां भगवद्दासेन तिनके हेतु भगवानदास रामानुजा चीरंजी भापामृत प्रत्तत्पते ॥ अमृत भाष्य गीत गोविंद को विस्तार्यौ है जिनि ॥ इति श्री वल्लभो जयति ॥ श्री कृष्ण ।।

शब्दोदधाव नम्नाता भाष्य ज्ञानार्थ निश्चये ॥ तेषां भगवद्दासेन भास्यामृत प्रतन्यते ॥

विपय—

राधा कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है। यह गीत गोविंद का गद्य में अनुवाद है ।

संख्या १६७. प्रेम पदारथ, रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र—३९, आकार—५¼ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति । श्री हितहरिवंश चंद्रो जयति ॥ अथ प्रेमपदारथ लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

लीला ललित गुपाल की सुधा सिंधु सुखरासि ।
कहि भगवान हित रामराय के पीवत वाढ़ैप्यास ॥ १ ॥

चौपाई

जाके प्रीतम नंद किसोर। कृष्न नंद ताके नैन चकोर ॥
चरन कमल पर अलि जाको मनु। ताहि न भावै और कछू धन ॥
यह लीला लागे जिय ताके। हरि मूरति हिर्दे होय जाके ॥
वृंदावन अति सघन अनूप। तहा विराजत कृष्ण स्वरूप ॥
खोलि धरयौ कंकनमुख जैसें। आस बहे जमुना तेसें ॥
प्रिया सखी निजु ता वन रहें। यौं हरि भजे जु हरि मन गहें ॥
जुतो सबै प्रेम की मूरति। कहाँ लगि बरनों तिनकी सूरति ॥
कमल नैंन तन रहें निहारि। वृंदावन में करे विहारि ॥

दोहा

प्रेम भगति जब ऊपजे जाने कृष्ण सरूप।
दुविधा मनते दूरि सरगुन रवि निर्गुन धूप ॥ १ ॥

अंत—

मगन भई सबहिन पायो सुख,
निरषि रही सब संतनि कौ सुख।
जोरि जोरि कर अस्तुत करें।
उमंगि उमंगि सब पायन परें।
वह लीला लागे जिय ताकें,
कमल नैंन प्रीतम होय जाकें।
जापर कृपा करें राधा पिय।
निस दिन वस्यौं रहें ताके जिय।
जाको अति ऊजल सुंदर मन।
ताकौ मन हरि लेय श्याम घन ॥
ताको और कथा नहिं भावै।
निस दिन मगन कृस्न गुन गावै।
ताहि न काम क्रोध संतापै,
माया पल कवहूँ नहिं व्यापै।
जग जंजाल ताहि नहि काल।
जाके प्रीतम मदन गुपाल।

दोहा

जाको भावै यह कथा सोई पुरुष पुरान।
राम राय के हेत जानिके कहे दास भगवान ॥

इति श्री प्रेमपदारथ संपूरन ॥ समापतः ॥
शुभ ॥ मस्त ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥

विषय—

कृष्ण भक्ति की महिमा, फल तथा लक्षणों का निरूपण है।

संख्या १६८. हरिचरित्र पारायण अमृत कथा (वृंदावन खंड), रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र-१६०, आकार—७.१ × १०.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)-२०८०, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२१ वि०, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वत्ये नमः ॥ श्री राधा कृष्णाय नमः ॥ श्री राम ॥ अथ कृष्ण अवतार कथा वृंदावन खंड लिप्यते ॥

॥ सोरठा ॥

गणपति पद जल जात वंदों वाक समेत हिय।
करत चरित विख्यात प्रभु गुण वोर निवाहिये ॥ १ ॥
शुभ गुन जदुकुल चंद पारिक्षित सुनियै विमल।
पारायण सुख कंद मधुर भक्ति सर सरस वर ॥ २ ॥

चौपाई

जो रस विधि हरिपर सुनि पाये। नारद मुनि पहँ विमल बताये ॥
नारद व्यास कहा समुझाई। सुनि मुनि रुचिर भागवत गाई ॥
रिषि मुनि संत सुजन रस चापा। तासु स्वाद मुनि कीन सभापा ॥

अंत—

रिषि मुनि संत अनेक जुग करत ध्यान मन वीध।
सहज कृपा केवट गुहा सवरी कुविजा गीध ॥ ४८० ॥
सिकिलीगर शुक वचन वर सुजन कृपान समान।
सुनत मलत कलिमल विगत कढ़त और तन म्यान ॥ ४८१ ॥
सहस दोय सतचार पुनि वृंदावन सुखकंद।
'भगवान दास' वरनी कथा अरसठि तामैं छंद ॥ ४८२ ॥
वृंदावन कहि पुनि कहत मथुरा खंड सुदेस।
विमल त गावत व्यास सुत हित करि सुनत नरेस ॥ ४८३ ॥

इति श्री हरिचरित्र पारायण अमृत कथा वृंदावन खंड संपूरणो नाम वहतरिमो अध्यायः ७२ मिती कार्तिक कृष्ण भृगु धन तेरसि सुखदानि। शशि[1] शिवदग[3] ग्रह[९] चंद्र[1] पुनि सोई संवत जानि। श्री राधाकृष्णायनमः।

विषय—

इस ग्रंथ में 'वृंदावन खंड' और 'मथुराखंड' नाम से दो खंड हैं जिनमें क्रम से भागवत के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध की कथाएँ दी हुई हैं। हस्तलेख में उक्त ग्रंथ का 'वृंदावन खंड' नामक भाग है। इसमें ७२ अध्याय हैं जिनमें कंस जन्म, देवकी तथा वसुदेव का विवाह, कृष्ण जन्म और व्रज की लीलाएँ वर्णित हैं। अंतिम अध्याय में अक्रूर के साथ कृष्ण के मथुरागमन का भी वर्णन है।

ग्रंथ की रचना व्रजभाषा में हुई है और इसमें २४०० चौपाई तथा ६८ छंद हैं।

संख्या १६६. बारहमासा, रचयिता—भगवतीदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—सरलचौबे तथा रामनिरेखन चौबे, स्थान और डा०—सहतवार, जिला—बलिया (उ० प्र०)

आदि—

उमडी बादल फिरत चहूँओर गरजी गुरूजी सुनावही।
मास ऐसो निठुर हे सपी री सास अरहरनी आवही।
सावन रीमी झीमी बुंद वरषै जोर से झरी लावही।
बनही चात्रीक मोर बोलै दादुल सवद सुनावही॥
भादौ अती घन घेरी आये अवरी दमकै दामिनी।
सुनी सेज घर कंत नाही अवरी डरपै कामीनी।
आसुनी आवनी कहि गये पीअ आस अवन की भए।
ताल भरी भरी नीर सोषत एही वीधी वरषा वीतीगए।
मास कातीक कामी रही पीअ पीअ रहो अकेली ही पड़ी।
हम जीअही कवन अधार उधौ जोगते······जुग भरी।
अगन सपी रीतु जाई आई साम (? स्याम) कीछु औनौं कही गैए।
साम के जे कठिन हीअरा वीहरी के नाही दुरी भैए॥
पुसहु नाही साम (? स्याम) आए कवनी वीरहीनी यसी कीवो।
हीली मीली उनको सुप दीन्हो दुप उनको हरी लीनो।
माघ दुआरे सेज पीअरी कतन सेछा पढाइए।
तुहु जीअत बाला मुअत अवला मुअल आनी जीआइए।
फागुन सपी सभ होली पेलही चीत माह उपज अनंद घना।

चोआ चोली लपट केसरी तीलक वेसरी अती घनी।
चहुत चहुँओर फुल फुले भवर जाइ लोभाइए।
सुरूप पीअवा मरम नो जानै सभै प्रीत लगाइए।
•••तहु तन की लाज ते सपी चलहु पीअही मनाइए।
तवतराज सुत जेठ उगै अंगन वीरहीनी सोइए।
गावही 'भगवतीदास' हे सपी बाहमास सुनाइए॥
बारहुमासा शंपूरन संमापते जो देपा शीलीपा मम दोपणा दीऐते॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री कृष्ण के परदेश गमन पर किसी गोपिका का विरह वर्णन किया गया है।

संख्या १८०. नासकेत कथा, रचयिता—भगौतीदास, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—१२ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८८ वि०=सन् १६३१ ई०, लिपिकाल—सं० १८७४ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० चंद्रदीप पांडे, ग्राम—पिढ़ोय, डा०—अमिला, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः श्री सरस्वती नमः श्री भवानी शंकर सहायेनमः। श्रीरामाए नमः श्री नासकेत कथा पिप्पलादिक मुनि॥ उद्दालिक मुनि शंवादे प्रारंभः॥

जेहि सुमिरे सवपाप निपाता। आयुहि सर्व वस्तु के दाता।
एक दंत कर संकर लीन्हा। संतन्ह सदा अभै पद दीन्हा॥
सुरनर मुनि गंध्रप मनावही। निभैं सुमिरत तुअ वर पावही॥
सिर सुंदर गज वदन विराजै। छुद्र घंटिका सुंदर बाजै॥
भुजा चारि सोभित सभ सुंदर। वाहन जासु विराजत उदर॥
कर फरसा कुसरुनि सोहै। गवन धरन सुंदर सुर मोहै॥

॥ दोहा ॥

मन मोदिक दै परसहि सिधवीध ते लेहि।
नासकेत गुन बरनौ जौ मति अछर देहि॥

आदि सकति सुंदरि सुकुमारी। चरन रेनु जनसे बलिहारी॥
तोहते ब्रह्मा विष्णु त्रृपुरारी। तुअ माया त्रिभुवन विस्तारी॥

+ + +

संवत सोरह[१६] सै भए अठासी[८८] । ज्येष्ठ मास दुतिआ परगासी ॥
सुकुल पछ औ सोमक वारा । मिरिगसिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा ॥

\+ \+ \+

॥ दोहा ॥

संत भक्त के सेवक हरि चरनन्ह कै आस ।
नासकेत गुन गावहीं 'नृप भगौतीदास' ॥

अंत—

नासकेत देषि आस आए । ते रिषि सब मंदिलै सिधाए ॥
आदर भाव भगति मनुहारी । रिषि सुष मानि जो चलै विचारी ॥
नासकेत जे सुनहि पुराना । संतत सुष हरी पुरन कामा ॥
गंगातट सेवहि जो कासी । ते हरिलोक रहि सुषवासी ॥
तैसे नासकेत अनुमाना । तेन्ह घर होइ सदा कल्याना ॥
नासकेत सुनहि मन लाई । जम व्यापिक दुष सदा नसाई ॥
नासकेत वनज से सुनी । तसि भूपा छापा लै गुनी ॥
ऐहिकर मन अभिमान न कीजेहु । सहज सुभाउ मानि किछु लिजेहु ॥
मानहु वद्रि परसी केदारा । सिव माथे पुजि जलधारा ॥
गंगा मह त्रीवेनी कीन्हा । गाइ सहस्त्र दीन तहाँ दीन्हा ॥
कासी परसी गया होइ आय । पित्रन्ह पित्र कै पिंड दीआय ॥
पुष्कर पुन्य कीन्ह अस्नाना । ग्रहन समै कुरछेत्र प्रमाना ॥
हरिद्वार हरिराए मनाय । शकल तीर्थ मनकर्म घनआय ॥
अतना फल पावै पुनि सोई । नासकेत कथा ले सुनै कोई ॥

॥ दोहा ॥

अम्रत कथा नासकेत कै सुनै सो होइ हुलास ।
पापी वर्जित सुनैहि जे कहत 'भगौवति दास' ॥

इति श्री गरुड पुराने नासकेत कथा प्रसंगे सकल रिषि संबोधनो नाम अष्टदसमो अध्याय सम्वत ॥ १८७४ ॥ साके १७४० पुसमासे कृष्णपक्षे ऐकादश्यां तिथी बुधवासरे ॥

विषय—

नासिकेत ऋषि की कथा का वर्णन ।

रचनाकाल

संवत सोलह[१६] सै भए अठासी[८८] । ज्येष्ठ मास दुतिआ परगासी ॥
सुकल पछ औ सोमकवारा । मिरिगसिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा ॥

संख्या १७१. हित भजनदास की बानी, रचयिता—हित भजनदास, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—९.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७६ वि०, प्राप्तिस्थान—इलाहाबाद म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री हित व्यास नंदनो जयति ॥

॥ अथ श्री हित भजनदास की बानी लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

जै श्री चितवनि अलि सुपद नित्य सिद्धि हित रूप ।
जासु कृपा हित भजन गुरु पायो रसद अनूप ॥ १ ॥
श्री हित मंत्र स्वरूप गुरु श्रीहित भजन रसाल ।
प्रगटे भो कल्याण हित सरनागत प्रतिपाल ॥ २ ॥
श्री हित भजन कृपाल विनु मेरी गति नहि आन ।
जिन मोहू से पतित की पकरि बाँह सुजान ॥ ३ ॥
अैसे गुरु विन को कहै यह रस अकह अपार ।
जामैं मिले न और कछु केवल प्रेम विहार ॥ ४ ॥
श्रीगुरु सुप तें जो सुन्यौ ताही रस अनुकूल ।
मेरी मति अनुसार कछु कहौं सकल सुप मूल ॥ ५ ॥
श्री हित चितवनि कृपातें कुँवरि चरन चित लाइ ।
वरनौ नित्य विहार रस श्री गुरु पद सिर नाइ ॥ ६ ॥

अंत—

श्रीहित चितवन कृपा विनु कौने चलै इहिचाल ।
प्रेम गैल अतिही कठिन कछू न लागै ताल ॥ ९७ ॥
याते श्री हरिवंश पद भजि मन करि विस्वास ।
श्री हित दंपति केलि वन पावै निकट निवास ॥ ९८ ॥
यह प्रबोध कल गैल जे उर धरि करैं विचार ।
श्री हित जू के भजन वल पावै नित्य विहार ॥ ९९ ॥
श्रीहित मंत्र इष्ट हित गुरु हित भजन सुजान ।
सदा बसो मो हीय मैं यह मागौं वरदान ॥ १०० ॥
इष्ट गुरु अरु मंत्र निज एक रूप रसपानि ।
इनकौं तजि औरहि भजै सो विभचारी जान ॥ १०१ ॥

दोहा एक अरु एक सत कहे भजन हित हेत।
बांचै जाच विचार जो राचै हित चित चेत॥ १०२॥

इति श्री हित चेतनदास जी के चेला हित भजनदास जी की वानी संपूर्ण॥ संवत १८७१॥ मिती जेसु ५॥

विषय—

प्रस्तुत 'हित भजनदास की वाणी' राधा वल्लभी संप्रदाय संबंधी रचना है। इसमें १०२ दोहों में भजनदास जी ने राधाकृष्ण के प्रेमविहार का वर्णन किया है। आरंभ में गुरु चितवनि अलि अथवा चेतनदास जी की वंदना है। तदपश्चात् श्री हितहरिवंश जी की प्रार्थना है। अंत में युगलमूर्ति का रस विहार वर्णित है। रचना धार्मिक अथवा सांप्रदायिक है, काव्य रचना नहीं है।

संख्या १७२. वाणियाँ, रचयिता—भरथरी। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १७३ क. भागवत चरित्र, रचयिता—श्री भागवतदास, स्थान—प्रयाग और शिलावनकुटी, जिला फतेहपुर, कागज—देशी, पत्र—२८०, आकार—५.६ × १३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६३ वि०, लिपिकाल—सं० १८८० वि०, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्णजी शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग, इलाहाबाद

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः अथ भागवत चरित्र लिख्यते॥ स्यामा बदातमरविंद विशाल नेत्रं बंधून पुष्प सदृशा धरपाणिपादं॥ सीता सहाय मुदितं धृतचाय वाणं रामंनमामि सिरसा रमणीय वेपं॥ १॥

॥ छप्पै ॥

जय जय जय जगदीस जैति श्रीपति सुपसागर॥
जै मुकुंद छवि धाम राम रघुपति अति नागर॥
जै श्रुति संभव ईश जयति गणपति सिद्धि दायक।
जै नारद सनकादि सारदा हरिगुण गायक।
जै भाष्यकार त्रैलोक्य गुर श्रीरामानुज धरनिधर।
भागवत दास पद कंज रज वंदै सिर धरि जोरिकर॥

वंदो चरित भागवत गंगा। निरपत जाहि होइ अघ भंगा॥
उपजी दोउ हरि पद ते पावन। जलमय जनमय सरित सुहावन॥

सुकवि विरंचि कमंडल जैसे । श्रोता भागीरथ वर तैसे ॥
संत कथा यह गंग तरंगा । चली करत अघ पर्वत भंगा ॥
लोक वेद मत मंजु किनारे । कथा प्रसंग मिलत नद नारे ॥
राम कृष्ण कीरति विख्याता । मिली गनहु रविजा सर जाता ॥
वृंदा कीर्ति परसधर नामी । मिल्यो सोन नद सालिग्रामी ॥
जल समूह हरियश छबि छाये । संत कथा वहु भ्रमर सोहाये ॥
चारि व्यूह थल दिव्य सोहाये । घाट विविध अध्याय बनाये ॥
दोहा छंद अमित चौपाई । ते जलचर विचरत सुपपाई ॥
भक्ति तरंग विविध अति शोभा । ज्ञान स्वक्षता लपि मनलोभा ॥
चलत वक्रगति सोई कविताई । भाव मूल उथल गहिराई ॥
उपश्रोता पुर ग्राम सोहावन । संत सभा काशी अति पावन ॥
नित नेमी श्रोता नर नारी । ते वन विटप बाग फुलवारी ॥
मन विहंग सुप फल लहै नाना । प्रश्न परस्पर सोई जल जाना ॥

दोहा

वक्ता पंडित विप्रवर अन्हवावत हरिदास ।
मंजि चारि फल लहहिं जे सुनहि मानि विश्वास ॥ ७ ॥

मिल्यो उदधि हरि रूप उजागर । भा यह चरित सुगंगा सागर ॥
चारि व्यूह चौमुख वर धारा । कष्ट काष्ट काटै कै आरा ॥
संत कथा यह काम दुहासी । सकल जीव तारै यह कासी ॥

(भा० च० व्यूह १ अ० २)

\+ + +

मोहि गुरु सोइ कथा सुनाई । जो नाभा तुलसी ते गाई ॥
तीरथ राज प्रयाग अति पावन । पाप तिमिर कह रवि दुपदावन ॥
तिहि थल गुरु यह कथा रसाला । मोहिं सुनाई करी प्रतिपाला ॥
अष्टादस सै तिरसठि संवत । करौ कथा हरिजन जस संतत ॥
कार्तिक शुक्ल पक्ष बुधवारा । नौमी तिथि शुभ योग उदारा ॥
कृष्ण जन्म धरनी सुचि जानी । नाम मधुपुरी वेद बपानी ॥
तिहि पुर मध्य कथा विस्तारी । निरपत जाहि मिटैं अघ भारी ॥
करि जमुना मज्जन हरि ध्याना । कीन्हेउ चरित भागवत गाना ॥

भा० च० अ० ३ व्यूह १

× × ×

दोहा

रामचंद्र जबते भए दसरथ के गृह माहि।
तबते सुष तजि अवधपुर अनत जात कहु नाहि॥

जो सुष संपति नृप गृह छावा। सो कुवेर पुरहुत न पावा॥
नर पुर सुर पुर सरिता जेती। कहत धन्य सरजू कह तेती॥
देव सकल मुनिवर जग जेते। आए अवधपुरी सव तेते॥
लषि रामहि अतिसै सुषरासी। तजि निज पुर भे अवध नेवासी॥
पोषत कौसिल्या सुत केसे। उजियर पछ निसाकर जैसे॥
उवटन तेल लगावत नीके। फनि मनि सम राखत निजजीके॥
चदुवा चारु चंद मणि दीन्हो। कठुला गजमनि भूषित कीन्हो॥
दीन्ह दिठौना पुनि दृग आजे। जिनहि विलोकि चराचर राजे॥

दोहा

पीत भीन झिगुली लसत सुंदर स्याम सरीर।
दीपावलि छवि देत जनु कालिंदी के नीर॥

कचन मणि मै नृप अंगनाई। सांझ समै वैठे रघुराई॥
अर्द्ध जाम जब जामिनि वीती। राम विलोकेउ ससिहि सप्रीती॥
पूछेउ मातु सिंधु सुत गावा। कहेउ पेल बना दे मन भावा॥
अति वडि दूरि मिलिहि सुत कैसे। सुनत वचन गे मचलि अनैसे॥
चंद मगाइ रापु हठ मोरा। न तुम मातु न मै सुत तोरा॥
बहुविधि कौसल्या समुझाए। लोटत पुहुमि न उठत उठाए॥
तव जल धरि ससि छाह देषावा। निरषत हरषे जनु ढिग आवा॥
हसत धरत नहि आवै पानी। कौतुक देषै रानि सयानी॥
जासु छाह ते भुवन अनंता। विरचै प्रकृति कहै श्रुति संता॥
सो ससि कर प्रतिविम्ब निहारी। मगन भयो इव सत्य विचारी॥

दोहा

कहेहु जाहु ससि निज सदन दीन्हो जल ठहराई।
कौसिल्या लै राम को भवन सोआए जाई॥

चौपाई

भोरही भूपति जागि सुभाए। गुरु हरिहर पद पदुम मनाए॥
सोअत श्री रघुवीर निहारे। कही जगावहु प्रान पिआरे॥
कर गहि रानि राम जगावै। उठहु तात तव तात वोलावै॥

सुकवि विरंचि कमंडल जैसे। श्रोता भागीरथ वर तैसे ॥
संत कथा यह गंग तरंगा। चली करत अघ पर्वत भंगा ॥
लोक वेद मत मंजु किनारे। कथा प्रसंग मिलत नद नारे ॥
राम कृष्ण कीरति विख्याता। मिली मनहु रविजा सर जाता ॥
वृंदा कीर्ति परसधर नामी। मिल्यो सोन नद सालिग्रामी ॥
जल समूह हरियश छवि छाये। संत कथा बहु भ्रमर सोहाये ॥
चारि व्यूह थल दिव्य सोहाये। घाट विविध अध्याय बनाये ॥
दोहा छंद अमित चौपाई। ते जलचर विचरत सुघराई ॥
भक्ति तरंग विविध अति शोभा। ज्ञान स्वक्षता लषि मनलोभा ॥
चलत वक्रगति सोई कविताई। भाव मूल उथल गहिराई ॥
उपश्रोता पुर ग्राम सोहावन। संत सभा काशी अति पावन ॥
नित नेमी श्रोता नर नारी। ते घन विटप बाग फुलवारी ॥
मन विहंग सुप फल लहै नाना। प्रश्न परस्पर सोई जल जाना ॥

दोहा

वक्ता पंडित विप्रवर अन्हवावत हरिदास।
मंजि चारि फल लहहिं जे सुनहि मानि विश्वास ॥ ७ ॥

मिल्यो उदधि हरि रूप उजागर। भा यह चरित सुगंगा सागर ॥
चारि व्यूह चौमुख वर धारा। कष्ट काष्ट काटे कै आरा ॥
संत कथा यह काम दुहासी। सकल जीव तारै यह कासी ॥

(भा० च० व्यूह १ अ० २)

\+ + +

मोहि गुरु सोइ कथा सुनाई। जो नाभा तुलसी ते गाई ॥
तीरथ राज प्रयाग अति पावन। पाप तिमिर कह रवि दुपदावन ॥
तिहि थल गुरु यह कथा रसाला। मोहि सुनाई करी प्रतिपाला ॥
अष्टादस से तिरसठि संवत। करौ कथा हरिजन जस संतत ॥
कार्तिक शुक्ल पक्ष बुधवारा। नौमी तिथि शुभ योग उदारा ॥
कृष्ण जन्म धरनी सुचि जानी। नाम मधुपुरी वेद बषानी ॥
तिहि पुर मध्य कथा विस्तारी। निरपत जाहि मिटैं अघ भारी ॥
करि जमुना मज्जन हरि ध्याना। कीन्हेउ चरित भागवत गाना ॥

भा० च० अ० ३ व्यूह १

× × ×

दोहा

रामचंद्र जबते भए दसरथ के गृह माहि।
तबते सुष तजि अवधपुर अनत जात कहु नाहि॥

जो सुष संपति नृप गृह छावा। सो कुबेर पुरहुत न पावा॥
नर पुर सुर पुर सरिता जेती। कहत धन्य सरजू कह तेती॥
देव सकल मुनिवर जग जेते। आए अवधपुरी सब तेते॥
लषि रामहि अतिसै सुपरासी। तजि निज पुर भे अवध नेवासी॥
पोषत कौसिल्या सुत केसे। उजियर पछ निसाकर जैसे॥
उबटन तेल लगावत नीके। फनि मनि सम राखत निजजीके॥
चढुवा चारु चंद मणि दीन्हो। कठुला गजमनि भूषित कीन्हो॥
दीन्ह दिठौना पुनि द्दग आजे। जिनहि विलोकि चराचर राजे॥

दोहा

पीत झीन झिगुली लसत सुंदर स्याम सरीर।
दीपावलि छवि देत जनु कालिंदी के नीर॥

कंचन मणि मै नृप अंगनाई। सांझ समै बैठे रघुराई॥
अर्द्ध जाम जब जामिनि बीती। राम विलोकेउ ससिहि सप्रीती॥
पूछेउ मातु सिंधु सुत गावा। कहेउ पेल बना दे मन भावा॥
अति बडि दूरि मिलिहि सुत कैसे। सुनत बचन गे मचलि अनैसे॥
चंद मगाइ राषु हठ मोरा। न तुम मातु न मै सुत तोरा॥
बहुविधि कौसल्या समुझाए। लोटत पुहुमि न उठत उठाए॥
तब जल धरि ससि छाह देषावा। निरषत हरषे जनु ढिग आवा॥
हसत धरत नहि आवै पानी। कौतुक देषै रानि सयानी॥
जासु छाह ते भुवन अनंता। विरचै प्रकृति कहै श्रुति संता॥
सो ससि कर प्रतिविम्ब निहारी। मगन भयो इव सत्य विचारी॥

दोहा

कहेहु जाहु ससि निज सदन दीन्हो जल ठहराई।
कौसिल्या लै राम को भवन सोआए जाई॥

चौपाई

भोरही भूपति जागि सुभाए। गुरु हरिहर पद पदुम मनाए॥
सोअत श्री रघुवीर निहारे। कही जगावहु प्रान पिआरे॥
कर गहि रानि राम जगावै। उठहु तात तब तात बोलावै॥

भुप पट पोलि चितै हसि दीन्हो। बहुरि सलज्जित ह्वै ढकि लीन्हो ॥
भूप कही सुत लेहु पेजवना। ललकि उठे हसि जिमि हरि दवना ॥
भूषन वसन सवारेउ रानी। मोदक मधुर धरे कर आनी ॥
मोद समेत गोद नृप लाए। तेहि छन कवि पंडित वर आए ॥
विप्रन कह परनाम करावा। रामहि निरषि सबहि सुप पावा ॥

दोहा

भरत लषन रिपु दवन लै दासिन सहित समोद।
बैठारे महिपाल के अनि सुवन सव गोद ॥

अंत—

श्री हरि हरिजन गुर हृदय पावन विसद अकास।
रवि मनि सम तह नित लसै चरित 'भागवत दास' ॥
कामहि नय प्रिय धन कृपिहि पितु मातहि लघु वाल।
इमि प्रिय लागहि मोहि नित हरि गुरु संत कृपाल ॥

इति श्री भागवत चरित्रे पर्म पवित्रे हरिजन मित्रे चतुर्थ व्यूहे सुचनिका वर्णनोनाम अष्टादशोध्याय १८ च्यारौं व्यूह संपूरन ॥ संवत १८८ लिखितं प्रयाग मध्ये श्री रामदास वैष्णव लिखितं सुक्ल पछे कार्तिक मासे रविवारे ॥

विषय —

प्रस्तुत 'भागवत चरित्र' नामक वृहद् ग्रंथ में चार व्यूह अथवा खंड हैं और प्रत्येक व्यूह में १८-१८ अध्याय हैं। ग्रंथ का मूल विषय भगवान् और भक्तों के चरित्रों का वर्णन करना है। इन चरित्रों में अधिकांश पौराणिक हैं, जैसे—प्रह्लाद, ध्रुव, राम एवं कृष्ण आदि। शेष ऐतिहासिक हैं, जैसे :—

व्यूह १—शंकराचार्य, रामानुज और श्री संप्रदाय, निम्बार्क और सनकादि संप्रदाय, मध्व, विष्णु स्वामी।

व्यूह २—जैमल, मीरा, नरसी, जयदेव, निम्बार्क संप्रदाय के भक्त केशव भट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यास, सोमुराम और चतुरदास।

व्यूह ३—माध्व संप्रदाय चैतन्य, रूप, सनातन, जीव, सूरदासमदनमोहन, श्रीनारायणभट्ट, हित हरिवंश, हरिदास, व्यास, कबीर, पीपा, रैदास, धना।

व्यूह ४—तिलोचन, नामदेव, वल्लभ, विठ्ठल, कृष्णदास, सूरदास, गोकुलनाथ, गोविंद गोसांई, रत्नावती, तुलसीदास।

इन चरित्रों का आधार अनुश्रुतियाँ ही हैं। ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८६१ वि० है अतएव ये चरित्र परम्परागत मात्र हैं। इनमें ऐतिहासिक तत्व न्यून है।

ग्रंथ के अंत में अर्थात् चतुर्थव्यूह अध्याय १८ में रचयिता ने समस्त कथावस्तु की सूची प्रस्तुत की है जो नीचे उद्धृत की जाती है :—

चौपाई

प्रथम कहा सत संग अनूपा। चरित भागवत विष्णु स्वरूपा॥
चरन चिन्ह कहि प्रेम दिढावा। श्री हरिनाम महातम गावा॥
पंचाली को पट जिमि वाढा। कह हरि भस्मासुर जिमि डाढा॥
नमुचि वध बुध संकर लीला। वरने सब आचरज सुसीला॥
श्री रामानुज कर अवतारू। श्री पद्धति वरनी अति चारू॥
लाला चारज चरित सुनाये। रामानंद राम सम गाये॥
कृष्णदास अरू कील की गाथा। पृथ्वीराज जिमि भए सनाथा॥
कह जिमि तप किये वद्रीनाथा। अरू अर्जुन मोर धुज गाथा॥
प्रेम विदुर सेवरी कर गावा। स्वेत दीप को चरित सुनावा॥
कुल सेपर जिमि दरसन पावा। संभु अगस्त समागम गावा॥

वाल चरित रघुवीर के वरने विविध प्रकार।
श्री अवतार कथा कही अरू नरसिंह अवतार॥

गुर निष्ठा जैमल चरिताई। वरनि जिमि मीरा गति पाई॥
पदत्रकल्प अरू कपिल प्रसाद। वरना जनक जोगि संवाद॥
ध्रुव के कथा कही मन लाई। जिमि करमैती भक्ति दिढाई॥
नरसी निवारक चरिताई। कर हरिवासर कथा सुनाई॥
विप्र चरित्र माधव की गाथा। कवि जयदेव लहे जिमि हाथा॥
सुर व्रज वसे सो कथा वपानी। कंसहि जथा भई नभ वानी॥
कृष्ण जन्मि जिमि गोकुल आये। कहै पूतना चरित सोहाये॥
तृणावर्त्त वध सिसु चरिताई। जिमि मातहि माया देपराई॥
कही कथा जिमि गही मथानी। धनद सुतन कै सुगति वपानी॥

वत्सासुर वक वध कही अवर अघासुर नास।
ब्रह्मा की माया कही पुनि वृंदावन वास॥

धेनुक वध काली की गाथा। कही लीन्ह जिमि गिरवर हाथा॥
रहस केलि कै कथा सुनाई। संप चूड़ अरु अहि गति गाई॥
वृषभा सुर के वध वपाना। नारद कंस दीन्ह जो ज्ञाना॥
केसी वध अक्रूर की गाथा। कह जिमि मधुपुर गे जदुनाथा॥

रजक बध्द मालीक प्रसंगा। कुबिजा सुगति धनुप के भंगा॥
गज जिहि जिहि बिधि मल्ल पसारे। कंस निपाति सुभट रन मारे॥
उग्रसेन कह जिमि नृप कीन्हो। पढ़ि विद्या गुरु सुत जिमि दीन्हो॥
गोपिन्ह मिलि उद्धव जिमि आये। नाभा विसद चरित सब गाये॥

कहि मुचकुंद कथा विसद जरा सिंधु की जंग।
राम कृष्ण के ब्याह कहि अरु मणि को परसंग॥

नारद मुनि की कथा सुनाई। अरु दुर्वासा की चरिताई॥
कृष्ण विभव नाना विधि गावा। विप्र सुदामा जिमि धन पावा॥
बहुरि माध्व संप्रदाय सुनाई। नित्यानंद कृष्ण चरिताई॥
रूप सनातन कर बैरागू। कहा व्यास कर जन अनुरागू॥
श्री हरिवंस की प्रीति बपानी। श्री हरिदास कथा रसपानी॥
अंबरीस कर भाव बपाना। धर्म प्रेम जिमि रानी ठाना॥

बरने रामानंद के दास अनंत कबीर।
धना सेन रैदास दे नृप पीपा गंभीर॥

देव मुरारी गजहि जिमि तारा। कहा भाव जन प्रेम अपारा॥
विश्वामित्र परस धर गाथा। कही जथा भंजे नृप गाथा॥
गाधि तनय जिमि रामहिं ल्याये। कीन्ह यज्ञ सो चरित सुनाये॥
मुनि त्रिय गति गंगा की गाथा। कही मिले जिमि तिरहुत नाथा॥
कही सिया जिमि रामहि देखा। धनुप कथा बरनी सविशेपा॥
धनुप भंग रघुवीर विवाहू। परस राम संवाद निबाहू॥
जन्मेजय ते वैसंपायन। कही कथा सो अति सुपदायन॥
धर्म तनै को मोह प्रकासा। जिमि गंगेय कीन भ्रमनासा॥

बरने हरि ते नाम बहु नाना विध अवतार।
जिमि भीपमवर धर्म कहि भये भवाँ वुधिपार॥

उमा संभु संवाद बपाना। जिमि तुलसी महिमा हरिजाना॥
बरने वृंदा चरित अपारा। बहुरि पवनसुत कर अवतारा॥
विष्णु स्वामि की कथा सुनाई। नामदेव जिमि गाइ जिवाई॥
कहे त्रिलोचन वल्लभ ज्ञाता। कृष्णदास विट्ठल सुत साता॥
पुनि समुदाय संत चरिताई। बरनी नाभा अति मन लाई॥
सुमृति पुरान नीत जुत सीला। कह जुत सुतन्ह भक्ति कै लीला॥
वैष्णव दस रहस्य भल बरना। कही प्रश्न उत्तर भ्रम हरना॥
कलजुग गुन कलकि अवतारू। बरना तुलसीदास जस चारू॥

मुनि समूह हरिजन कथा तजि तुलसी तनमान।
हरिहिं भेटि फासिहि गये कृत हरि हरिजन ध्यान ॥

विशेषज्ञातव्य—रचयिता की गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

बाबा टहलदास
|
ज्ञानदास
|
रामदास
|
भागवतदास
|
नारायणदास
|
सुदर्शनदास
|
हरिश्चंद्रदास
(वर्तमान)

इनके जन्म अथवा मृत्यु का समय निर्णीत नहीं हुआ है; परंतु इन्होंने 'भागवत चरित्र' की रचना का आरंभ—जिसका ग्रंथ में उल्लेख है—संवत् १८६३ वि० में मथुरा में किया। इसके अतिरिक्त एक पुराने कागज से इनका सं० १८९७ वि० में होना सिद्ध होता है :—

"मिती पौप सुदी अमावस १५ वार मंगल संवत् १८९७ भूमि ठाकुर क चढाई जिमिदार तिलहापुर के ठाकुर छोटूसिंह दुरगापुर मा० महंत भागवतदास जी कौ जमीन बीगहा २८

दसखत छोटूसिंह"

अतः यह सिद्ध होता है कि ग्रंथकार संवत् १८६३ और १८९७ में वर्तमान था।

संख्या १७३ ख. हनुमान अष्टक, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—३.६ × ६.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण, (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

अथ हनुमान अष्टक लिष्यते

॥ दोहा ॥

सकल सुमंगल लुप मिलै विद्या बुद्धि अपार।
जय भगवत सब कार्य कृत सुमिरहु पवन कुमार ॥ १ ॥

तोहि जपै त्रिपुरारि मुरारि सुरेस बिरंचि पदांबुज हेरे ।
देव दिगीस चहै करुना सुरसिद्ध लपै पदपंकज तेरे ॥
एकहु वार जो नाम कहै न रहै कबहूँ दुष दारिद तेरे ।
दीनदयाल वली बजरंग करौ सब सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ १ ॥

कार्तिक कृष्ण चतुर्दसि सातौ रिक्ष सनीचर रैन अँधेरे ।
जन्म लियौ तव अंजनि के सुर सिद्ध लै आरति पूजि निवेरे ॥
कूदि ग्रस्यौ रवि के रथ को उगिले लह्यौ आसिरवाद घनेरे ।
दीन दयाल वली बजरंग करौ सब सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ २ ॥

वाल की त्रास सुकंठ दुषी न वसै कतहूँ वन पर्वत घेरे ।
आइ मिले हनुमंत वली युत मंत्रिन्ह कीन ते मित्र वडेरे ।
राम ते भेट कराइ दई तिन भूप किये दिये संपत ढेरे ।
दीन दयाल वली बजरंग करौ सव सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ३ ॥

जाई दई मुदरी सिय कों मणि आइ दै राम की सोक निवेरे ।
वाग उजारि सुलंकहि जारि हते भट रावन के बहुतेरे ॥
सोक बिभीषन को करि दूर मिलाइ किये रघुवीर के चेरे ।
दीन दयाल बली वजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ४ ॥

मूर्छि परे रण लक्षन वीर हनी हिय शक्ति दसानन नेरे ।
आनि सजीवन तोपि भरत हते भट रावन के बहुतेरे ॥
राम समेत सबै दल को जनु सोक समुद्र ते बूडत फेरे ।
एकहु वार जो नाम कहै न रहै कबहूँ दुष दारिद नेरे ॥
दीन दयाल वली वजरंग करो सव सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ५ ॥

पैठि पताल वने वर शक्ति सुदेषि प्रभाव महाषल घेरे ।
आनि जुरी अति भीर अपार कपिंद्रहि राम गिरावर ढेरे ।
छोरि लये दोउ बंधु गरज्जि मिटे अहिरावन पूछ के फेरे ।
दीन दयाल वली वजरंग करो सव सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ६ ॥

वेद पढे जव ते जब ही उलटे रथ अग्र उडात करेरे ।
कीन मनोरथ देवन को उर साधुन के हरि भाव घनेरे ॥
अर्जुन को रथ राखि लियौ जवही मृग दंत गयंदहि फेरे ।
दीन दयाल वली वजरंग करो सव सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ७ ॥

कंचन मेरु समान सुदेह लिये कर आयुध रक्षत चेरे ।
तको तहाँ तेहि भाँति भए तुम लेहि जहाँ जेहि भाँतिहि टेरे ।
भागवतदास जु आस किये हरि भक्ति लिये करू चित्त में डेरे ।
दीन दयाल वली वजरंग करो सव सिद्ध मनोरथ मेरे ॥ ८ ॥

एकहु बार जु पाठ करै यह अष्टक कै तो त्रिकाल कहाहीं।
डाकिनि साकिनि भूत पिसाच सबै तेहि देषत दूर पराही ॥
जंत्र औ मंत्र औ तंत्र सबै अनयासहिं तासु के वश्य रहाही।
भागवतदास कहै तेहि ऊपर श्री हनुमंत दयाल सदाहीं ॥

इति श्री हनुमत अष्टक संपूर्णम् शुभम्

(अष्टक पूर्णरूपेण उद्धृत है)

विषय—

हनुमान जी का अष्टक।

संख्या १७३ ग. रामायण माहात्म्य, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—४.६ × १०.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि० (फाल्गुन कृ० १५), प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥

अथ रामायण महात्म लिष्यते ॥·········

······कवित्त ॥ वरण प्रीति प्यारी अलंकार जमक भारी कथा अतिसै रुचकारी यहै सर्वोपर ठानिये ॥ गावत त्रीलोक जन भावत है सबके मन कहै यहै संत जन कहां लौ बषानिये ॥ मुक्ति को आगार रामजस सिंगार प्रेम भक्ति को बिचार "भागवत दास" मानिये ॥ तुलसी की बानी श्रीराम पटरानी महा औरन की बानी सबै दासी सम जानिये ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

देव दनुज नर नाग मुनि जक्ष्य पितर गंधर्व।
निज मति भरि वर्नन करी कथा राम कै सर्व ॥ १० ॥

श्रोता वकता भवतरे ताही सुनि गाइ।
पुनि ताको माहात्म को सुनौ सुजन मनुलाइ ॥ ११ ॥

अंत—

छंद

जो रामचरित पवित्र है त्रैकाल नित प्रति ध्यावई।
सो सर्व पाप नसाई श्री साकेत धामनि पावई ॥

यह रामचरित महात्म भगवत दास बाचै कहुँ मरा ।
तिहि धन्य कहि सुर सुमन बरषै स्वर्ग नाचै अपसरा ॥

॥ दोहा ॥

नाम महात्म रामजस बाचै सुनै जौ कोइ ।
द्विज गृह तीरथ साधु ढिग तिहि सम धन्य न कोइ ॥ १९ ॥

इति श्री रामचरित महात्म्ये भागवत दास भाषा कृते तृतीयो अंक ॥ ३ ॥ संवत् १९११ । मासोत्तमे मासे फागुन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ १५ ॥

विषय—प्रस्तुत 'रामायण माहात्म्य' में भगवान् राम के चरित्र की महिमा का वर्णन है । इसमें तीन अध्याय हैं जिनका विषय क्रम से इस प्रकार है :—

अध्याय

(१) संस्कृत के श्लोक
(२) नाभादास का तुलसी विषयक छप्पय
(३) राम की महिमा (जो रामचरितमानस से ली गई है)
(४) राम की महिमा अपनी ओर से
(५) रामायण माहात्म्य की एक कथा

अध्याय २

कुलशेखर की रामभक्ति का वर्णन

अध्याय ३

(१) पद्मभक्त की कथा
(२) नाम महिमा—मानस से
ग्रंथ की रचना दोहा, चौपाई और छंदों में हुई है ।

संख्या १७३ घ. रामायण माहात्म, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४.६ × १०.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग ।

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री रामानुजाय नमः ॥ दोहा ॥

चित्रकूट श्री अवधपुर सदा राम को धाम ॥
संत सुपद सब सिधि प्रद सुमिरू कल्पतरु नाम ॥ १ ॥

साधन जिन्ह के लोक कों ब्रह्मा विष्णु महेस ॥
आदि देव श्रीराम भजु जो सब देव दिनेस ॥ २ ॥ चौपाई ॥

नैमष वन तहं रिषय समाजा । सौनक प्रश्न सूत-प्रति साजा ।
जग बंधन छूटै मुनि कैसे । राम अचल पद पाइय जैसे ।
महाघोर कलजुग अब आवा । आतम ज्ञान वेद नहि भावा ।
रत पाषंड ह्रस्व अति देहा । ऊजर घर तन रहित सनेहा ।
प्रजा सहित धन हीन अभागे । तन पोषक वैस्या संघ लागे ।
तिय पति विमुष पतिउ रतदासी । दोउ कर पंडत सिर दुष रासी ।
दंपति अति बाचाल मलीना । सबते नेह रहित धन हीना ॥

\+ \+ \+

यह महात्म निति प्रति सुनै पढ़ै जो भगवत दास ।
गंगा का असनान फल पावै बुद्धि प्रकास ॥ ९ ॥

इति श्री अष्ट स्कंधे पुराणे उत्तर पंडे राक्षस विमोचनो नाम प्रथमोऽध्यायः

अंत—

रामायण सब तीरथ तें पर । रहै न भूत पिसाच तासु घर ।
ज्येहि के घर रामायण होई । त्येहि घर सम नहि पावन कोई ।
वाचै सुनै राम प्रभुताई । सो नर जनु सब तीर्थ अन्हाई ।
जोतिवंत नहिं सूर्ज समाना । राम सुजस सम श्रुति न पुराना ।
येकहु बार जो सुनै रामायन । सोनर होहि तरन तारायन ।
सुनि नारद तें सनत कुमारा । भये नृवृत्ति तुरत संसारा ।
सुनै राम प्रिह लीला जो जोई । पुनरावृत्ति नत्येहि कै होई ।
वांचै राम चरित जेहि द्विजवर । तासु वदन चितवैं विधि हरिहर ॥

॥ दोहा ॥

धेनु वसन कंचन सहित पोथी विप्रहि देहि ।
सो सब पर दातार बनि सहज परम पद लेई ॥

विषय—

प्रस्तुत 'रामायण माहात्म्य' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें क्रमशः राम की कथा की महिमा उसके प्रभाव से सुदामा नामक व्यक्ति की मुक्ति, संक्षेप में राम की कथा, कथा पारायण की विधि तथा फल वर्णित हैं।

टिप्पणी—रचयिता का एक अन्य 'रामायण महात्म्य' विवरण में आ चुका है; परन्तु प्रस्तुत माहात्म्य में और उसमें अंतर है। दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं।

प्रस्तुत माहात्म्य की रचना सूत और सौनक ऋषि के संवाद के रूप में हुई है। कदाचित् इसीलिए इसके प्रथम अध्याय के अंत में 'इतिश्री अष्ट स्कंधे पुराणे उत्तर पंडे राक्षस विमोचनो नाम प्रथमोध्यायः' लिखा है। इससे अनुमान होता है कि इस माहात्म्य में आठ स्कंध होंगे।

संख्या १७३ ङ. तत्वबोध, रचयिता—भागवतदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—४'६ × १०'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ अथ तत्वबोध भाषा भागवतदास जी कृत लिष्यते ।

॥ दोहा ॥

येकै तत्व अनेक है परमात्मा दरसात ।
ताकौ हौं वंदन करौं श्रधा रूप विष्यात ॥ १ ॥

जाकु तनकी समुझ नहि नही तत्व परकास ।
तत्वबोध भाषा रच्यौ तिन्ह हित भगवतदास ॥ २ ॥

साधन चारि संजुक्त जो मोक्ष वांक्षा येक ।
अस अधिकारी पाइकै कहिये तत्व विवेक ॥ ३ ॥

॥ सोरठा ॥

साधन चारि विभाग नित्या नित्य विवेक यक ।
अरु फल भोग विराग पट संपति सुमुमुक्षता ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

ब्रह्म सुसत्य अनित्य जग नित्यानित्य विभाग ।
उभौ लोक सुप फल विषै त्यागै स्वै वैराग ॥ ५ ॥
सम दम तप सु तितिछा साधन अरू समाधान ।
ये सभ पट संपति कही सुनिये तिनको ज्ञान ॥ ६ ॥
मन निग्रह को सम कहिय दम इंद्री जित ज्ञान ।
सुपदुप सहबु तितिछा तप सुधर्म अनुष्ठान ॥ ७ ॥
गुरु श्रुत वानी गहि चलै श्रधा ताहि वपान ।
चित येकाग्र डोलै नहीं सो कहिये समाधान ॥ ८ ॥
मोक्ष चाह अति सै हृदै वहै मुमुछु आय ।
तत्वबोध तासो कहिय अस सुपात्र जन पाय ॥ ९ ॥

अंत—

जीव आत्मा जानिये निर्विकार सुषधाम।
अषिल निरंजन ज्ञानघन सास्वत अज निःकाम ॥ ६७ ॥
स्वस्मै स्वयं प्रकास वर निर्मल व्यापक सील।
अहं अर्थं निरलेप अज येक सुसदा सजील ॥ ६८ ॥
भिन्न क्षेत्र प्रति जानिय रहित अष्ट गुण सोई।
नित्य अव्यक्त अचिंत्य है लपै सो ज्ञानी कोय ॥ ६९ ॥
पंच भूत अहंकार अरु विषय पंच जुत जान।
इंद्री अरु मन बुधि चित अरु अव्यक्त वपान ॥ ७० ॥
अचित रूप ईसि जानिये चौविस तत्व प्रकास।
त्रगुण विषय जड है सदा उतपति और विनास ॥ ७१ ॥
सर्व व्याप्त वर बोध जुत अपिल अनंदाकार।
साक्षी सुगुन अनंत अज सास्ता सर्व अधार ॥
श्री प्रभु लीला अधिप प्रभु स्वाधीनो व्यापार।
अति सुंदर लावन्य वपु विग्रह अमित विहार ॥ ७३ ॥
यह पदार्थ त्रै तेज गत प्रभु सरीर है सोई।
जन भगवत त्यहि मग चलै सहज परम पद होई ॥ ७४ ॥

इति श्री तत्वबोध भागवत दास भाषाकृत संपुर्णम् सुभमस्तु ॥

विषय—

प्रस्तुत 'तत्वबोध' नामक ग्रंथ का विषय दर्शन है। इसमें आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के विषय में संक्षेप में विचार किया गया है।

ग्रंथकार ने 'तत्वबोध' में, दोहा और सोरठा, केवल दो छंदों का प्रयोग किया है।

संख्या १७३ च. रामरसायन, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२३ (६ पन्ने से २८ तक), आकार—५ X ९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप)—१२६५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

॥ अथ काव्यगुण ॥

वोज और माधुरज रस अरू प्रसाद गनि लेहु।
क्रम ते तीनौ भेदवर समुझि चित्त विच देहु ॥ ६६ ॥

पद कोमल माधुर्ज रस अदभुत हास सिंगार।
सिषवहिं सिय पिय को सपि धूजा को वर द्वार ॥ ६७ ॥

पद आडंबर ओज रस रौद्र वीर भये ग्राम।
धन मदांध दस कंध भर धनु दुइ भो भ्रगुधाम ॥ ६८ ॥

प्रगट अर्थ सुप्रसाद गुण रस सिंगार सुहास।
रामहिं सिय जयमाल दिय छुवै न मुनि तृयत्रास ॥ ६९ ॥

अंत—

॥ अथ इंद्रवज्र छंद ॥

जगन तगन पुनि जगन रचि द्वै गुरू दीजै अंत।
इंद्रवज्र यह छंद है वरणि कह्यौ अहिकंत ॥ ७६ ॥

॥ छंद ॥

भजे सदा प्रेम समेत जोई ॥
रामापति मोहि मदादि खोई ॥
चराचरो जीव कदापि कोई ॥
लहै परा मुक्ति न बात जोई ॥ ७७ ॥

इतिश्री रामरसायने कवि कुल आनंद दायिने भागवतदास विरचिते मात्रा प्रस्तार वर्णनो नाम द्वितीयो हुलास

विषय—

'रामरसायन' का विषय पिंगल है। संभवतः तीन हुलास या अध्याय हैं। प्रथम में पिंगल संबंधी प्रारंभिक बातें कही गई हैं, जैसे—वर्ण, गण, चरण, मात्रा आदि। द्वितीय अध्याय में मात्रिक छंदों का वर्णन है। तृतीय में वर्णिक वृत्तों पर विचार हुआ है।

पिंगल संबंधी ग्रंथ होने पर भी इसका नाम 'राम रसायन रखा गया है। ऐसा कदाचित् इसलिये किया गया है कि इसमें दिए गए उदाहरण रामचरित संबंधी हैं।

संख्या १७३ छ. रामरसायन, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२५, आकार—४·७ x १०·७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रामरसायन पिंगल लिष्यते।

॥ दोहा ॥

जेहि बिरची माया प्रबल जाते जगत अपार।
ऐसे करता राम कों वंदौं वारंबार॥ १॥
वरण वरण में रमि रह्यौ एकै राम विसेपि।
जग में ऐसी वस्तु को जामे परै न देषि॥ २॥

अंत—

॥ अथ ग्रंथ करता को कवित ॥

अवध नैमष विच ग्राम मगरौरा नाम तामैं लीन्हों जन्म विप्र रामपरसाद के॥
सीताराम दास जू को दास भयौ प्राग माहि जाने भेदनिको भांति वेद पुनिनाद के।
लैके बनायो राम धाम श्री सेलावन मै चारि चारि कोस गंगा जमुना जल स्वाद के॥
भागवतदास अभिराम ग्रंथ प्रगट कीन्हों जाके पढे जानै छंद भेद वेद वाद के॥

अष्ठादस[१८] सत सरसठि[६७] संवत सुभ बुधवार।
भाद्र चतुर्दसी विष्णु व्रत पूरयो ग्रंथ सूचारू॥

विषय—

'राम रसायन' का मूल विषय तो पिंगल है; परंतु रचयिता ने इसमें रस और अलंकार आदि अन्य काव्यांगों का भी यथास्थान किन्तु संक्षेप में समावेश किया है। ग्रंथ के अंत में षटऋतुओं का वर्णन है। लक्षणों के उदाहरणों का विषय रामचरित ही है। इसीलिये ग्रंथ का नाम 'रामरसायन' है।

रचनाकाल

अष्ठादस[१८] सत सरसठि[६७] संवत सुभ बुधवार।
भाद्र चतुर्दसी विष्णु व्रत पूरयौ ग्रंथ सूचारु॥

विशेष ज्ञातव्य—भागवतदास जी मगरौरा (अवध नैमष के बीच) ग्राम के निवासी रामप्रसाद विप्र के पुत्र थे। प्रयाग जाकर ये टहलदास बाबा की परंपरा में बाबा सीताराम जी के शिष्य हुए। पश्चात् जिला फतेहपुर के शिलावन ग्राम में शिलावन कुटी की स्थापना की। रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८६७ में वर्तमान थे।

संख्या १७३ ज. सूर्यपुराण, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—४ × ९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९३ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० रामकृष्ण सुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः।
अथ सूर्य पुराण लिष्यते

॥ दोहा ॥

श्री रवि मंडल मध्य जो नारायण छबि देत ।
ताहि वंदि आदित सुगुण कहौं आत्म सुषहेत ॥ १ ॥

॥ छप्पै ॥

जै आदित्य दिवाकर भास्कर पर्म प्रभाकर ।
सहस्र अंशु हरिदस्व त्रिलोचन श्री सोभाकर ॥
सुभ प्रद सूरज देव सु दिवकर बुध जसु गावै ।
द्वादश मूर्ति त्रिमूर्ति वरनि सुर सीस नवावै ॥
ये द्वादस सूरज नाम जो रविहि नौमि नर नित पढय ।
भागवतदास कहै तासु के सुप सोभा संपति बढय ॥

॥ चौपाई ॥

जै नारायण दिनकर देवा । सफ़ल करहु निज जन कै सेवा ॥
तेज पुंज तम तोम बिनासक । सुपद ज्ञान विज्ञान प्रकासक ॥
तुमते जोतिप धर्म प्रचारा । तत विन द्रग बूडत संसारा ॥
तुमहीं ते त्रिलोक मग पावै । तुम ते सुभ गति वेद बतावै ॥
वेद पुराण सास्त्र तव बानी । तुम उतपति पालन लय पानी ॥

॥ छंद ॥

सुष संपदा कौ परम सुरतरु सूर्ज को जसु जानिकै ।
सुर नाग नर पावहि मनोरथ सवहि विधि सनमानिकै ॥
मार्तंड महिमा नारि नर जे हरपि सुनहि सुनावहीं ।
तिन्ह सहित भगवतदास मंगल मोद कीरति पावहीं ॥

॥ दोहा ॥

तीरथ राज प्रयाग मैं टहलदास सु प्रकास ।
तिन्ह के दास दास को दास भागवत दास ॥
विप्रनवर आज्ञा दई रवि छबि सक्ति प्रधान ।
तिन्ह कै विसद पुराण यह भाषा करहु वषान ॥
रामायण भागवत श्री भारत औरौ ज्ञान ।
लैय श्री वेदे व्यास मत कीन्हो सूर्ज पुरान ॥ ७ ॥
रवि मंडल विच जो लसै राम चतुर्भज रूप ।
वसौ भागवतदास उर सो छवि परम अनूप ॥

इति श्री सूर्ज पुराणे उमा महेश्वर संवादे भागवतदास जी क्रिते सत नाम महात्म पंचमोध्याय ॥ संवत १८९३ लि० चरनदास पांडे गौड ब्राह्मण प्रयाग जी में।

विषय—

'सूर्यपुराण' का विषय उसके नाम से ही स्पष्ट है। यह धार्मिक ग्रंथ है और जैसा पुष्पिका से ज्ञात होता है—रामायण, महाभारत, भागवत एवं अन्य संस्कृत ग्रंथों के आधार पर रचा गया है। इसमें पाँच अध्याय हैं जिनका वर्ण्य विषय क्रम से नीचे दिया जाता है:—

अध्याय—१—सूर्य के बारह नाम, महिमा, पुराण की परंपरा, नारद और ब्रह्मा का संवाद, पूजा विधि।

अध्याय—२—अवतार वर्णन।

अध्याय—३—सूर्य के व्यूहों का वर्णन।

अध्याय—४—नारद यज्ञ।

अध्याय—५—नाम माहात्म्य।

संख्या १७३ भ. सच्चिदानंद विहार स्तोत्र, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—३'२ X ६'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः

तुँअँ चरण प्रणाम्यं व्याक्त निर्मूल जो है।
निर्गुण गुणचारी लोक लोकेश सो है॥
अनव्य अजीतं आनरंभं अकामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ १॥

आदिष्टि अरूपं वेद रूप स्वरूपं।
आगम्य तुरीयं जोग आत्मा अनूपं॥
परिपूरण माया ब्रह्म ईसं भजामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ २॥

क्षर अक्षर पारं सर्वं आत्मा सनेही।
त्रिभुवन सिर धारं सूक्ष्म देही विदेही॥
त्रैकाल प्रकासी जोति भूपं भजामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ ३॥

आधोक्त तु चाहं मूल उर्द्धा चली है।
गुण सीची साषा वेद पणावली है॥
कुंश मित नित नूतं विश्व व्रक्षं प्रणामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ४॥

ब्रह्मांड निकाया सर्व कल्यान मूर्ते।
सहस्रांड तिहारे रोम रोम वली ते॥
पुरषोत्तम सरूपं आत्मा अंभजामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ५॥

मनु जलज सरूपं चक्षु मार्तंड जो है।
कं आनन लेप्यो वृक्ष रोमांच सो है॥
सिर सुर पुर पारं चर्ण पाताल धामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ६॥

सगुंण गुणपारं रूप द्वै है तिहारे।
वैकुंठ नेवासी ब्रह्मचारी निहारे॥
संतन हितकारी राम नामं नमामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ७॥

पै उदधि नेवासी वस्त्र पीतांम्र सोहै।
निज अयुधधारी देव देवी विमोहै॥
उर शुभ वन माला लक्षिमी कंत नामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ८॥

सब अधम उधारे जेतन स्वर्ग तारे।
सहसानन वानी नाम गावैं तिहारे॥
अब दरसन दीजै शंभु के चित्त गामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ९॥

गो द्विज हितकारी नेति कै वेद गावै।
भगवतजन कै शे तासु को अंत पावै॥
अब करुपा कीजै चर्णं पंकज नमामी।
करू मम उरवासं..................॥ १०॥

जो प्रेम प्रतीते ध्याइ है प्रात सामैं।
फल चारि सो पै है कामना अर्थ कामैं॥
हरि भक्ति सो पै है मैटि कै दुःख दंदै।
हिय धरि विश्वासै मालिनी गाऊ छंदै॥ ११॥

इति श्री सच्चितानंद विहार स्तोत्र समाप्तं ॥ शुभमस्तु लीष्यतं त्रिपाठी ईश्वरी प्रसाद श्री कृष्णार्पणमस्तु ॥ जो वाँचै ताह को सीताराम पहुँचै ॥

[स्तोत्र पूर्ण उद्धृत है]

विषय—

भगवद् स्तोत्र वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—इस स्तोत्र का रचनाकाल संवत् १८५५ वि० के लगभग है। यह जिस हस्तलेख में है उसमें इस स्तोत्र के पहले 'गर्भगीता' और अनाथ कवि कृत 'विचारमाल' आदि ग्रंथ स्वयं प्रस्तुत रचयिता के हाथ के लिखे हुए हैं तथा उनका लिपिकाल सं० १८५५ वि० दिया हुआ है। स्तोत्र का लिपिकार कोई ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी है। लिपि अत्यंत अशुद्ध है। फिर भी वह सरलता से ज्ञात हो जाता है कि 'स्तोत्र' ग्रंथ कार की प्रारंभिक रचना है। अतः इसमें और 'भागवत चरित्र' (रचनाकाल सं० १८६३ वि०, जो रचयिता की उत्कृष्ट रचनाओं में है) में कम से कम आठ या दस वर्ष का अंतर होना स्वाभाविक है ।

संख्या १७३ ञ. रामरहस्य, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज-देशी, पत्र—५२, आकार—४·६ × १०·८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ अथ श्री रामरहस्ये भागवतदासजी कृतः

सोरठा

वंदौ सीताराम नाम कामधुक कल्पतरु ॥
देत सर्व मन काम-विघन हरण मंगल करण ॥ १ ॥

दोहा

उर विरंचि हेमाद्रिवर नारद प्रस्न सुभुमि ॥
रामकथा सुरसरि चली विलसति चहु दिसि भूमि ॥ २ ॥
रहस चरित श्री राम को अद्भुत परम प्रकास ।
निज गुरु तें कर जोरि कै पूछो भगवत दास ॥ ३ ॥

चौपाई

श्रीगुरू पूर्ण कीन्ह अभिलाषा । रचै प्रबंध करिहौं मैं भाषा ॥
अद्भुत रामचरित अतिपावन । सुनत सकल अघ ओघनसावन ॥

कथा जो विधि नारद ते गाई। सोइ वसिष्ट हनुमतहि सुनाई ॥
सोई भुसंडि ते मुनि पग नाथा। भए विगत संदेह सनाथा ॥

अंत—

मोरि कथा यह पवन सुत रामहि दइ सुनाई ॥
अपनो विरद विचारि प्रभु विहसि लई अपनाई ॥
भरद्वाज तें यह कही बालमीकि मुनि भूप।
षट रहस्य रघुनाथ के तारक मंत्र सरूप ॥ १३ ॥

इति श्री राम रहस्ये महाकाव्ये भागवत दास भाषा कृते जज्ञ वर्ननोनाम षष्टो वर्नः ॥ ६ ॥ संपूर्ण समाप्तम् ॥ संवत् १९११ मासोत्तमे मासे उत्तिम मासे जेठ मासे कृष्ण पक्षे तिथौ ॥ ९ ॥ वार आदित्यवार ॥ हस्त अक्षर देवीदीन। अस्थान प्रयाग राज मध्ये तेलियरगंज गंगातटे ॥

विषय—

प्रस्तुत 'रामरहस्य' में भगवान् रामका यश वर्णित है। यह जैसा कि रचयिता ने लिखा है, एक महाकाव्य है। इसमें नीचे दिए छः सर्ग हैं:—

(१) श्री (सीता) अवतार वर्णन
(२) रामसविन्नी—जन्म से लेकर दंडकारण्य तक की कथा।
(३) रामकलस को जागरन व्रत—इसमें दंडकवन की रहस्य लीला का वर्णन है।
(४) साकेत नगर वर्णन
(५) सप्तग्राम लीला वर्णन, इसमें जाप की विधि और शूर्पणखा कांड तक की कथा है।
(६) जज्ञवर्णन—इसमें महाप्रयाण की कथा वर्णित है।

संख्या १७३ ट. रामकंठाभरण, रचयिता—भागवतदास (स्थान – प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—४.७ × १०.९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४४, पूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, रचनाकाल – सं० १८८९ वि०, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी-साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ श्री रामकंठाभरण लिष्यति ॥

राग बेलावल

विघन हरण गज वदन विनायक।
गिरिजा सुत संकर सुपदायक ॥ १ ॥

जन रंजन दारिद दुषभंजन सजन सुमति सदा सब लायक।
धीर गंभीर महाभव मोचन सुभट त्रिचत (?) के गण नायक॥
विधि हरिहर नित करत प्रसंसा लहहि परम सुप तव गुण गायक॥
कारज सबै होत सुमिरन क्रत नाग सिद्धि नवनिधि दायक॥
यह कलिकाल देव नहिं दूजो अकालज्ञ तुही सब लायक॥
भागवत दासहि देहु यहै वर बसहि राम उर धर धनुसायक॥ १॥

अंत—

तीरथ राज प्रयाग में टहल दास सुप्रकास॥
तिनके अनुचर ग्रंथ यह कीन भागवतदास॥ १॥
येक[१] सहस अरू आठसै[८] नौवासी[८९] को वर्ष।
अगहन शुक्ल सु द्वादसी पूर्यौ ग्रंथ सहर्ष॥ २॥
अष्ठोत्तर सत पद कवित रामकंठ आभर्न॥
अब श्री कंठ करिहै सुजन जग भूषण सुपकर्ण॥ ३॥

इति श्री भागवतदास जी कृत श्री रामकंठाभरण संपूर्ण॥ शुभमस्तु संवत् १९२६॥

विषय—

प्रस्तुत 'रामकंठा भरण' में रचयिता ने १०८ पद और कवित्तों में राम के चरित का वर्णन किया है। रचना में सीताराम के विवाह तथा तदुपरान्त दाम्पत्य सुख की कथा का समावेश है। मुख्य विषय के अतिरिक्त भक्ति और निष्ठा (राम के प्रति) के भी अनेक पद सम्मिलित हैं। पदों में आद्योपांत विषयानुकूल कोई निश्चित क्रम नहीं।

संख्या १७३ क. ककहरा, रचयिता—भीखासाहब (स्थान भुड़कुड़ा, जि०—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—७, आकार ६ × ४$\frac{1}{2}$, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्) ६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव; जिला—बलिया

आदि—

लीष्यते रामजी क केकहरा

संतो भजीलेहु सुरती लगाइ के कहरा नाम को।
क काया में करत कलोल रहुंनी दीन सोहं बोलै।
ष षीजे चित लाइ भरम को अंतर पोलै॥
ग ग्यान गुरू दया कीयो दीयो महापरसाद॥

घ घमंड घरहरात गगन में घंटा अनहद नाद ॥
न नएनन्ह सों देपु उलटी ठाकुर दरवारा ॥
च चमतकार चोह नुर पुर संतन्ह हीतकारा ॥
छ छमान श्रीन कर्म गयो है जीव ब्रह्म के पास ।
ज जै सब्द होत तीहुँ पुर में सुध सरूप अकास ॥ २ ॥
झ झकोर झवार झपटी नर समै गवाइ ।
न नही समझत नीज मुलअंध होइ दीस्टी छपाइ ॥

अंत—

लाम अलीफ सों नीकट ही पावो जीत दइ चीतवो ताही ॥ ७ ॥
हमजा हम हमार दोइत उहा नाहीन सोहै ।
ऐ एक तु होइ ग्यान ध्यान तव जनमन मोहै ।
तीनी आंक में वस्तु सकल है रज तम सत समइस ।
'भीपा' नाम सोन जव दीन्हो तब भयो अछर तीस ॥ ८ ॥

केकहरा ग्यानका ॥

विषय—

'क' से लेकर 'ह' तक तथा 'अलिफ से लेकर 'ऐ; तक के प्रत्येक अक्षर पर कविता करके ब्रह्मज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या १७४ ख. नाम पहारा, रचयिता—भीखासाहब (स्थान-भुड़कुड़ा, गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१३½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल-सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी । दाता-महंत श्रीराजारामजी, चिटबड़ागाँव, बलिया

आदि—

॥ अथ नाम पहारा ॥

जौ कोई नाम पहारा पढ़ै । विद्या प्रीति दस गुना बढ़ै ॥
ऐका एक मिलै गुर देवा । सीप सोई जो लावै सेवा ॥
तन मन वारी चरन चीत धारा । ऐक दहाइ दसए द्वारा ॥ १ ॥
दुआ दुइ दोइत जौ तजै । जोर जुगति कै अजपा जपै ॥
सुरति वीचारी नीरति यह गैउ । दुइ पर सोन वीस गुना भैउ ॥ २ ॥
तीआ त्रीवीध ताप तव मेटै । तवही जीव नरायन भेटै ॥
माका मदीना घठ मैं षोजा । तीन दहाइ तीसो रोजा ॥ ३ ॥

चउथे चारी पानी है जेते । सब मह ब्रह्म बोलता तेते ॥
घटिक हौ नहि हाल हजुरा । चौथी दहाइ चालीस पुरा ॥ ४ ॥
पंच ऐ पाचो मुद्रा साधै । ससी औ सुर अकासही बाधै ॥
प्राना आव (? प्रानायाम) पवन परगासा ।
सौन पाच पर भयो पचासा ॥ ५ ॥
छटए चक्र कठिन मत आही ।
सोगी वहै जेही राम नीवाही ॥
चढै उरध मुप पवन को भाठी ।
छटए दहाइ तेही पर साठी ॥ ६ ॥
सतए चक्र अनाहद बाजा ।
तूर सुनत मनुआँ भौ राजा ॥
है अति बंद अमल बड़ जोरा ।
सतए दहाइ सत नीचोरा ॥ ७ ॥
अठए आठ गमन दल फूला ।
जोति रूप देषी जीअरा भूला ॥
उदीत भयो प्रगासीत ग्याना ।
अठए दहाइ असी भाना ॥ ८ ॥
नउए नाम नीरंजन जोई ।
सहज समाधी जाही कह होई ॥
सो जानै जो जावै तहाँ ।
नउए दहाइ नवे जहाँ ॥ ९ ॥
दसए दसों दीसा मह मेला ।
"भीषा" ब्रह्म नीरंतर षेला ॥
दसए दहाइ अजपा जापै ।
बढै सैगुना गुर परतापै ॥ १० ॥

विषय—

एक से लेकर दस तक के प्रत्येक अंक पर कविता कर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या १७४ ग. श्री राम कुंडलिया, रचयिता—भीखा साहब (स्थान—भुड़कुड़ा), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री राजाराम जी, स्थान—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसायनमः । अथ कुंडलिया लीप्यते ।

जीव कहा सुष पावइ वे सुष बहुत घर माहि।
वे सुष बहुत घर मांहि एक ते एक अपबंल।
तेहुते है अधिक अधिक ते अधिक महावल।
तेहि महँ मन अरू पवन त्रिगुन कै डोरी लगाइ।
बाधे सब जग जाल छुटै कोउ नहि पाइ।
जौं भीषा सुमिरै राम को तो सकल थ होइ जाहि।
जीव कहा सुष पावइ वेसुष बहुत घर मांहि॥ १॥
राम रूप कौ जौं लषै सो जन परम प्रवीन।
सो जन परम प्रवीन लोक अरु वेद वषानै।
सत संगति मैं भाव भक्ती परमानंद जानै।
सकल विषै को त्यागि बहुरि परवेस न पावै।
केवल आये आपु आपु में आपु छपावै।
भीषा सबते छोट होइ रहै चरन लवलिन।
राम रूप को जो लषै सो जन परम प्रवीन॥ २॥

अंत—

चलनि को पांनी पडौस कब रहा भयो न कबही होइ।
भयो न कबही होइ भजन बिनु ध्रिग नर देही।
झुठ परिपंच मन गह्यो तज्यो हरि परम सनेही।
ज्यों सपने लागी भूप अन्न बिनु तन मर जाही।
कबही के उठे जाग हरष कहुँ बिसमै नाही॥
भीषा सत्य नाम जाने बिनु सुष चाहै जो कोई।
चलनी को पानी पडौसक बरहा भयो न कबहीं होई॥ १८॥
इति श्री राम कुंडलीया संपूरन समाप्त॥

विषय—

सांसारिक माया मोह को त्यागकर राम भजन करने का उपदेश किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना बड़े गुटकाकार हस्तलेख में निम्नलिखित आठ रचनाओं के साथ लिपिबद्ध है :—

१—कुंडलिया—भीषा साहब, २—कुंडलिया—अग्रदास जी, ३—शब्द—देवकीनंदन साहब, ४—प्रबोध चंद्रोदय ग्रंथ—सूरति कृत, ५—शब्द—देवकीनंदन साहब, ६—चतुरमासा तथा स्फुट पद—देवकीनंदन साहब, ७—पिंगल—सुखदेव मिश्र, ८—कुंडलिया—देवकीनंदन साहब।

संख्या १७४ घ. श्री रामजी का सहस्र नाम, रचयिता—भीखा (स्थान-भुड़कुड़ा गाजीपुर, जन्मस्थान—खानपुर बोहना, जिला—आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ X ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता-महंत श्री राजारामजी; स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि —

श्री राम जी क सहस्र नाम लीषते ॥

श्री रामचंद रघुबीर सुनाम । राम रमापति रमिता राम ॥
कोसिल्या सुत दसरथ नंदन । रघुवर नाथ नाम जगवंदन ॥
सीतापति सो धन्वाधारी । लछीमी नराएन जन हीतकारी ॥
चक्रपान चरीत सभलाएक । क्रीपा सींधु अजोध्या नाएक ॥
रघुकुल मनि रघुनंदन कहीए । सुंदर सुभग सुलछन गहीए ॥
भानुकुल दीप कवल दल लोचन । नाम प्रताप सकल अघमोचन ॥
दीनकर वंस महाबल दाएन । चरीत अपार सो राम रसाएन ॥
मकुंद सीरधर जय सीरताज । भगत भगत बछल सुपकाज ॥
मकसुदन मन मोहन माधो । ताडुका हतन दीज जग्य अवराधो ॥
त्रैलोकिक्त प्रभु सारंग पानी । अवीगती नाथ नीरंजन जानी ॥
जन रंजन सुप सजन धीरा । नाम दुषहरन हरन सभ पीरा ॥

अंत —

धनराज धनजैं धन्य हैं वोई । नाम है अगुन गनै का कोई ॥
नामै प्रानाश्राम कहाए । सोहं सोहं नामै गाए ॥
नामै सुंदर नूर जहुर । नामै लामै नीकट हजुर ॥
नाम अनादी एक को एक । 'भीषा' सब्द सरूप अनेक ॥

राम साषी

जाप जपै जो प्रीती सौं बहु वीधी रुचि उपजाइ ।
संझा समै अरू प्रात लगु तत पदारथ पाइ ॥
राम को नाम अनंत है अंत न पावै कोई ।
'भीषा'' जस लघु बुधी हे नाम तव न सुप होई ॥
भीषा' एक संप्रदा सब्द घर एक दवारा सुप संच ।
एक आतम सभ भेप मह दुजो जग परी पंच ॥

भीषा भए दीगांमर देषी कै तजी कै जग्त वलाइ।
कस्त करै नीज रूप कों जहा को तहाँ समाइ॥
॥ इति श्री राम जी क सहस्त्र नाम॥

विषय—

श्री रामचंद्र जी के सहस्र नामों का वर्णन किया गया है।

संख्या १७४ ङ. रेखता, रचयिता—भीखासाहब (स्थान—भुड़कुड़ा जि०—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्रीराजाराम जी, स्थान व डाकघर—चिटवड़ा गाँव; जि०—बलिया

आदि—

॥ रेखता ॥

बीतो बारह बरष उपजो रामनाम सो प्रीती।
नीपट लागी चटपटि मानो चारि मनगौ बीती॥
नीही पान पान सोहात तेहि वीनु बहुत तन दुरबल हुआ।
घर ग्राम लागो वीषम धन मानो सकल हारो है जुआ॥
षटदरस के षोजो चीत दै जहाँ बसत अलप अलेप।
कीरीपा करि कब मीलहीगें दुहु (धौं) काहा कवनी भेष।
कोउ कहेव साधु बनारसी तहाँ भक्ति बीज सदा रहे।
ताहा सास्त्र मत को ज्ञान है गुर भेद कांहु नाही कहे॥
दिन दुइ चारी बीचारी देष्यो भरम करम अपार है।
बहु सेवा पुजा कीरतनामन माश्रा रत वेवहार है।
चलो वीरह जगाइ छन छन उठत दील अनुराग है।
दहु (? धौं) कवन दीन और घरी पल कब षुलेगी मेरी भाग है।
कोइ लीषत सीषत पढ़तनीसु दीन करत हरीगुन गान है।
कोउ ध्रुपद बहुत वीचीत्र सुनत आभोग भु पूछेव कहाँ॥
नीअरे भुरकुंडा ग्राम जाको सब्द आये हैं तहाँ।
चोप लागी बहुत जाइकै चरन पर सीर नाइआ।
पूछेव कहाँ कही दीवोलई आदर सहित वैसाइआ।
गुर भाव बुझी मन मगन भौ तब जन्म को फल पाइआ।
लषी प्रीती दरद दआल दखो आपनो अपनाइआ।
आतमा नीज रूप सांचो कहत हम करी कस्म कै॥
भीषा आये आपु घट घट बोलत सोहं मस्म कै॥

विषय—

इस रेखता में रचयिता ने अपनी आत्म कहानी कही है जो इस प्रकार है :—

बारह वर्ष बीतने पर हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई। वह बहुत ही चटपटी (आनंदप्रद) लगी। साथ ही ऐसा लगा मानो चारों ही अवस्थाएँ बीत गईं। उसी क्षण से खान पान अच्छा नहीं लगने लगा। शरीर बहुत दुर्बल हो गया और घर, ग्राम एवं धन विरुद्ध ज्ञात होने लगे मानों सब वस्तुएँ जुए में हार दी गई हों। सुना कि षट्दर्शनों को पढ़कर परमात्मा का पता लग जाता है, अतः यह समझ कर कि न जाने कब और किस भेष में वे (भगवान्) छिपा करके मिल जायँ। चित्त देकर वहाँ भी खोजा। किसी ने कहा, बनारस में साधु लोग रहते हैं जिनके हृदय में ईश्वर भक्ति का बीज सदैव रहता है। वहाँ शास्त्रानुसार सब बातों का विवेचन किया जाता है। परंतु गुरुभेद किसी ने नहीं बताया। दो चार दिन भी यह देखा, किंतु इसमें कर्मों का नाना प्रकार का भ्रम पाया। बहुत सेवा, पूजा, कीर्तन आदि पर भी मन माया के व्यवहार में ही रत रहता हुआ दिखाई दिया। वहाँ से भी क्षण क्षण विरह में जलता हुआ और हृदय में प्रेमानुराग भरता हुआ चला। यह विचारता जाता था कि न जाने कब, किस घड़ी और पल में मेरे भाग खुलेंगे। होते करते, एक गाँव के समीप आया। देखा—कोई लिख रहा है, कोई पढ़ रहा है, रात दिन हरि गुणगान हो रहा है। एक ध्रुपद ने, जो गाया जा रहा था, एक विचित्र ही बात उत्पन्न की। सुनकर न रह गया। पूछा, यह सब कहाँ हो रहा है और यह कौनसा गाँव है? ज्ञात हुआ भुड़कुड़ा गाँव है। अतः मन की अभिलाषा ने जोर मारा और कीर्तन स्थान पर पहुँचकर गाने वाले के चरणों पर गिर पड़ा। बातचीत होने पर मुझे आदर से बैठाया गया। सहज गुरु भावों को व्यक्त करते हुए उन्होंने मुझसे पूछा। मेरा मन आनंद मग्न हुआ और मुझे जीवन का फल मिला। मेरी प्रीति देखकर उनका हृदय द्रवित हुआ। दया करके उन्होंने मुझे अपना लिया। मैं सौगंधपूर्वक (कसम कै) सत्य कहता हूँ कि आत्मा ही केवल अपना सत्य स्वरूप है। वह (आत्मा) प्रत्येक के घट में अपने आप सोहं सोहं करता रहता है।

संख्या १७५ क. कृष्ण संहिता, रचयिता—भुवनदास, कागज—देशी, पत्र—१४३, आकार—१३ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (प्रतिपृष्ठ)—३३८९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ चौपाई ॥

वंदौ दुरद बदन पद पावन
येक रदन सुचि पर्म सुहावन ॥ १ ॥

सकल सिद्धि दायक सब लायक,
देह चरण गति मति सुखदायक ॥ २ ॥

कहा चहौं हरि चरित अनूपा,
मोपर कृपा करौ गण भूपा ॥ ३ ॥

पवन तनय पद कमल नमामी,
कृपा करौ सब घट विश्रामी ॥ ४ ॥

सदा बसत जन मन घन कानन,
काम क्रोध मद करि पंचानन ॥ ५ ॥

+ + +

बानी चारि चरण शिरूनाई,
कहि हौं हरि के कथा सोहाई ॥

+ + +

पंचामृत भोजन करवाये,
गुनि गण विप्रछेत्र के आये ॥ ६ ॥

+ + +

संवत वनइस[११] सत नप[२०] चारी[४] । माधौ मास दुइज उजियारी ॥
संवत प्रान मथी श्रुति गावा । तेहि संवत यह कथा बनावा ॥

अंत—

दोहा

सालीग्राम आदि वय हरि के अमित सरूप ।
अपन इष्ट मन जानि कय पूजै पर्म अनूप ॥

चौपाई

चहै प्रतक्ष चह मन मां पूजा । हरि सम अवर देव नहिं दूजा ॥
यहि प्रकार मुनि व्यास बतावा । ज्ञान ध्यान विज्ञान सुनावा ॥
सुनत नरेस कृष्ण सुखपाये । हरपि व्यास निज थलका आए ॥
कृष्ण गये उठि नंद के धामा । देपि जसोमति मन अभिरामा ॥
चूमि बदन उर लखत माता । गद गद प्रेम न कछु कहि जाता ॥
नीकी विधि भोजन करवाये । बहुरि कृष्ण राधा गृह आये ॥
राधे दीन्ह प्रजंक बिछाई । बहुठि कृष्ण सुख बरनि न जाई ॥
कृष्ण केर रनिवासु अपारा । नित नित घर घर करहि विहारा ॥

॥ दोहा ॥

विष्णु रूप भगवान प्रभु सदा सर्व घट वास।
येहि विधि नारद मुनि कहेउ सुनि हरषि तब हुलास ॥

इति श्री कृष्ण चरित्रं प (? र) म पवित्रं पाप वहित्रं रजसुईजगि राजा उग्रसेनि व्यासदेव संवाद वरननो नाम अठरह मंडक १८

विषय—

ग्रंथकर्त्ता की सूचना के अनुसार इसमें १८ मंडकों (अध्यायों) में भागवत की कथा का वर्णन है। परंतु १८ के बदले १७ मंडक हैं। ११ के दो मंडक हैं। पत्र संख्याएँ पूर्ण हैं और कथा का क्रम भी अखंडित है।

मंडकों का विवरण अधोलिखित है :—

रचनाकाल

संवत वनइस सत नव चारी। माधौ मास दुइज उजियारी ॥
संवत प्रान मथी श्रुति गावा। तेहि संवत यह कथा बनावा ॥

संख्या १७५ ख. राम संहिता (यज्ञ खंड), रचयिता—भुवनदास, कागज-देशी, पत्र—४३, आकार—१३ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

आदि—

श्री रामो विजयते । अथ यज्ञ खंड प्रारंभः ॥

चौपाई

सुनि सुमंत कह सुनहु कृपाला । तुम्हरी कृपा कुशल सब काला ॥
सर्व काल गति जानहु स्वामी । प्रभु उदार सब घट विश्रामी ॥

दोहा

राजनीति रापत सदा प्राकृत भूप सुभाउ ।
जँह जँह गयो तुरंग तव सो कहि हौं सति भाउ ॥ १ ॥

चौपाई

प्रथम अवध ते चलेउ तुरंगा । पवन वेग गति सुभग कुरंगा ।
कामद देश गयो रघुराई । सुमद महीप मिले तहँ आई ॥
परम साधु तव पद प्रभु सेवक । जो नहि जानहि अवरे देवक ॥
प्रथम कमध्यै तेहि वर दीन्हा । तव ते राम तुमहि वै चीन्हा ॥
अस कहि सुमति सुमद बोलवाई । आइ रामपद शिर तिन नाई ॥
प्रभु गहि भुजा मिले तेहि वारा । सादर सहित राम बैठारा ॥
वहुरि सुनहु अब कृपा निधाना । तहाँ ते हयवर कीन्ह पयाना ॥
चीमन मुनि आश्रम कहँ गयऊ । चीमन अवध चलत तव भयऊ ॥

× × ×

संवत वाण[५] तीन[3] यक ऊन[११] विंस्सत वाम ।
जेठ कृस्न एकादसि शुक्र दिन रजनी गत यक जाम ॥ १ ॥
कृष्ण पक्ष सुचि नपत में राम राम कहि राम ।
योगभ्यास तन त्यागि 'जन भवन' गये पर धाम ॥ २ ॥
येक सत पाँच अब्द लगि भजन कीन्ह धरि ध्यान ।
राम स्वरूप अनादि जो द्विभुजन जेहि सम आन ॥ ३ ॥
'भवनदास' कृत ग्रंथ यह जे नर करि विस्वास ।
पढै सुनै मन मनन करि ते गोलोक नेवास ॥ ४ ॥

अंत—

दोहा

वीर सेन तिनके भये महि मंडल रिपु जीति।
भली भाँति नृपता कियो सदा वेद की रीति॥

चौपाई

प्रिया कुसुंभा शुचि नृप पायो। राजा शुभ मस्ती जिन जायो॥
रानी बाल सुंदरी जिनके। नीति केतु सुत प्रगटे तिनके॥
रामवंश मय कीन वषाना। देव अंस खग नाथ सुजाना॥
आगे मानुष होइ अपारा। रहिहै विदित सकल संसारा॥
तेहि ते नहि मय वर्णि सुनावा। मानुष चरित मोहिं नहि भावा॥
रामवंस की कथा वषानी। अति पुनीत सुरसरि जिमि जानी॥
जो कोई पढ़ै सुनै मन लाई। तेहि का वंस वढ़ै अधिकाई॥

इति श्री राम चरित्रे परम पवित्रे सार संग्रहे रामसंहितायां विरचिते भुवनदास यज्ञे खंडे श्री राम अवतारी वंस वर्णनो नाम सप्तमो मंडकः॥

विषय—

सात मंडकों (अध्यायों) में राम कथा का वर्णन है। मंडकों का विस्तृत विवरण अधोलिखित है :—

प्रथम—सुमन्त देशदेशांतर वर्णन।

द्वितीय—अयोध्यापुरी यज्ञस्थल वर्णन।

तृतीय—कुश लव गान वर्णन।

चतुर्थ—कुश लव रामायण वर्णन। रुद्रयामलीय सिद्ध सीता संवाद।

पंचम—यज्ञ सभा वर्णन।

षष्टम—राम परमधाम गमन वर्णन।

सप्तम—राम वंश वर्णन।

संख्या १७६. अर्जुनगीता, रचयिता—जनभुवाल, कागज—देशी, पत्र—७३, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १७०० वि०, लिपिकाल—सं० १८९८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीराधाप्रसाद जी, स्थान और डाकघर—फेफना; जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेस जी सहाए ॥ श्री रामजी सहाए ॥ श्री महादेव जी सहाए ॥ श्री सरस्वती जी सहाए ॥ श्री पोथी आर्जुनगीता लीपते ॥

बरनो आदि अलष करतारा । सुमीरत नाम होए नीसतारा ।
सुमीरो गुर गोविंद के पाऊ । अगम अपार है जाकर नाऊ ॥
करुनामय तुम्ह अंतरजामी । भगतीभाव देहु गरूरागामी ॥
दीन देआल तुम्ह बाल कन्हाइ । अपने जन कह होहु सहाइ ॥
क्रीपा करहु तुम्ह सारंग पानी । नीरभै अछर कहौ वपानी ॥

दोहा

क्रीपा करहु जग ईश्वर वीनती सुनो चीत मोर ।
भगतीभाव देहु स्वामी कह 'भुआल' कर जोर ॥

\+ + × +

॥ दोहा ॥

ब्रह्मा वीसन महेसवर तेही सवो मन लाए ।
गीता अरथ कहहु प्रभु 'जन भुआल' वलिजाए ॥

॥ चौपाई ॥

संवत कर अब करौ वषाना ।
सतरह[१७] सैए संपुरन जाना ॥
माघ मास क्रीसन पछ भएऊ ।
दुतीआ तीथ रवीवारही भएउ ॥
तेही दीन कथा कीन्ह मन लाई ।
हरी के नाम चीत भौ आई ॥

अंत

॥ चौपाई ॥

गीता कथा सुनो मनलाई । सुनत कथा पातष सब जाइ ॥
जीअन उपजै अर्थ सुनावै । जन भुआल सब भाषा गावै ॥
जोइ कथा सुनी लागै थोरी । पंडित गीता देषहु छोरी ॥
गीता महाजप कहा बीचारी । सोभाषा कीहु जग अनुसारी ॥
सुनत कथा मन परम अनंदा । गीता सुनै छुटै सब दंदा ॥

॥ दोहा ॥

हरीजन सौं बीनती एह दोस न लागै मोही।
'जनमुआल' के स्वामी सब विधि सेवो तोही ॥

इति श्री अरजुनगीता सुपनेषा अस्तुति ब्रह्मविद्या जोग सास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुनसंवादे सन्यास जोग बरननो नाम अठारमो अध्याये ॥ इती श्री अर्जुन गीता संपुरन जो देष्या सो लीष्या ॥ संवत १८९८ साल मिती भादो वदी रोज एतवार को पोथी तैआर हुआ दसषत सोहन लाल कायथ अमस्ट साकीन महेल कसबे रानीपुर प्रगनेह पेजी अजीमावाद सरकार सुबे बीहार ॥

विषय—

ब्रह्मज्ञान का वर्णन।

रचनाकाल

॥ चौपाई ॥

संवत कर अवकरौ वषाना। सत्रह[१७] सैए संपूरन जाना ॥
माघ मास क्रीसन पछ भएऊ। दुतीआ तीथ रवीवार ही भएऊ ॥

संख्या १७७. सूर्यकथा, रचयिता—भूपराम, कागज—देशी, पन्ना—२०, आकार—४.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिं० सा० स०, प्रयाग

आदि—

नेमधर्म सौं करै अहारा। द्वादस वर्ख करै इतवारा ॥
कुसुम विछाय करै विसरामा। हर्षत लेहि सूर्य को नामा ॥
दे पीपर वृछ धिरत मिष्टाना। ताके धर्म पुत्र भलदाना ॥
निश्चै प्रसन्न होंय भगवाना। पाँच पुत्र होंय अगिनि समाना ॥
बाँझ कथा मन लावई टेक धरै वृत ध्यान।
निश्चै पाँच पुत्र तेह तोहि जोधा अगिनि समान ॥

अंत—

दक्षिन देस अनूप हइ सुनहु उमा चितु लाइ।
अगिले अर्थ जस होहिंगे सुनहु कहौं समुझाइ ॥

कल जुग कौ विनास तब है है। मानुष तब ही भानको गैहै।
तब अवतार होइ निहकलंकी। मानुष तन हुइ हैं जस पंकी ॥

विषय—

प्रस्तुत 'सूर्यकथा' में सूर्य भगवान् की महिमा तथा उनके व्रत का फल वर्णित है। प्रसंगानुसार इसमें त्रिपुर दैत्य, हलधर विप्र, रूपमहेस, तथा जैमल विप्र की कथाएँ भी दी हैं।

ग्रंथ व्रजभाषा और दोहा चौपाई छंदों में लिखा गया है। बीच बीच में कुछ अन्य छंदों का भी प्रयोग हुआ है।

यह उमा और शिव के संवाद के रूप में लिखा गया है।

संख्या १७८. सुदामाचरित्र, रचयिता—भृगुपति, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, लिपिकाल - सं० १८०३ वि०=१७४६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० सरल चौबे और रामनरेखन चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार दखिन-टोलाबड़तर, जि०—बलिया

आदि

श्री गणेशाय नमः ॥ पोथी श्री सुदामाचरित्र ॥

श्री कीश्न जीउ को रहा एक मीत। पांडे परम ग्यान सुंदर शुचीत ॥
पढ़ा भी बहुत था शंतोषीबड़ा। जहाँ पाप चरचा न होता खड़ा ॥
भुपै मरे पै न धावैं कहीं। कछु देऊ मोको कहै भी नहीं ॥

नीशी दीन हरी को शुमरता रहै।
वीना मागते कोउ देतो कहै ॥
जोरू भी उशकी अजवशी रही।
मामा मेहरवान जैशी कही ॥
रहे श्वामी आके नीकट हर घरी।
कहूँ जाए आवै न जौ दुपभरी ॥
तन आपने शौश कै जौ करै।
फल मूल कंद लै आगे धरै ॥
शुवह शौ रहै वह शदा मुनहार।
करै श्वामी का भी जुठा अहार ॥
शाएक दीन ब्राम्हनी वह भली।
वैठी रही एक चरचा चली ॥

आभनी वाच

आपै कहा था कवै एकवार । श्री कीश्न जीउ है हमारे हआर ।।
शो हम सुना एक कहता रहे । है द्वारीका मो महाराज है ।।
शोने के चारों तरफ है देवाल । घर मो लगे है जवाहीरलाल ।।
जो कोई जाता दुपी औ गरीव । पावै शवै जाही जैशी नशीव ।।

सुदामावाच

शत्रु है शुनीत है मौ भी शुना । कमी क्या उन्हे है हमेशे घना ।
शोवे महाराज है नीत के । दाता वडे मोछ के वीत के ।।

आभनीवाच

आपै उहा जाइये एक वार । जो चाहिए शो मीले वे शुमार ।।
जन्म की नशै दुप वीपती शवै । जगत मो जन्म का शोगारथ फवै ।।
हम तौ त्रीआ जात बुझै नही । करौ माफ तशकीर जो हम कही ।।
आपै कछु ग्यान की वातै वोली । करौ दुर मोरी कुमती गाढी पुली ।।

सुदामावाच

नाही कुमती है शुमती है परी । कीश ही भाँति नैना शो देपो हरी ।।
कै काम कै लोभ कै क्रोध शौ । उन शौ मीला चाहीऐ वोध शौ ।।
नर देह पाएन आए तनी । जौ कीश्न जी शौ लागै रत घनी ।।

।। आभनीवाच ।।

कहौ जो कहावै भए अश्नाव । श्री कीश्न जीउ काहे कैशा शुभाव ।।

शुदामावाच

कहा लगी कहौ है कीशा दुरराज । भआ था गुरु के भवन मो शमाज ।।
एक दीन गए कीश्न पानी भरै । हमको कही गए इंधन करै ।।
ऐशीकरत जो भआ अवेर । भीछया पुरी मागी वैशे शवेर ।।
भुपे रहे वै नीशा शेज शोए । परै नीद नाही कवै प्रात होवै ।।
दुनौ उठे हम नदी को गए । पीवै को जल नाही भुपे शवैए ।।
गए जाए पहुँचे नदी तट प्रात । प्रात देपा भरा था लहै दाल भात ।।
शंशै भई शो पावै को नाही । स्री कीश्न बोले गही मेरी वाही ।।
हम को कहे वै उनै हम कही । शंकोच के भए कोउ नाही गही ।।
मैआ कीआ लै जनेउ शौ हाथ । बाँधा भी अपना उनो का हाथ ।।
हशी हशी दोउ मीलन लगे पान को । तौ तौ त्रीपती हो गए प्रान को ।।

शुन रीशो पुछी शो ग्रैसी रही । हम कीश्न जी सो जुदागी नही ॥
अव कीन जानो चीधाता चरीत्र । मनो न माने दशा है वीचीत्र ॥
तौलौं जाइए देपीए एकवार । मीलै तौ मिलीऐ उजी उशीग्रार ॥
हम तौ चलै है कीछु घर संदेश । दीजै शो जाना हमै दुर देश ॥
शो शुनी कही ग्राभनी उहभली । भीछ्या करी मागीवउ मीलेइ ॥
शो फरही अंचल वांधु पोटरी । शो श्वामीग्रा लै वगल मो करी ॥
चलै पंथ चीता करत चीत माही । कै तौ मीलैगे फुरै वुधनाही ॥
एही भाती चीत को वीचारत गए । जहाँ कीश्न मंदील चनो ग्रीह नए ॥
गए जाए भीतर ग्रैगन मो परे । परो जे चरन दुऊ धुलन भरे ॥
स्त्री कीश्न देप्या शुदामा परा । उतरी शेज शौ जाए ग्रंक मे धरा ॥
धरे हाथ ग्राए त्रीग्रा थी जहाँ । लागे करै प्रेम पुजा तहाँ ॥
शोने के पल तरे रापी के । शोने के झारी लई नीपी कै ॥
झारी लै नीरपारै वंधु । ग्रैशे ग्रानंदे शो नाही कंधु ॥
धोए चरन लेप चंदन कीग्रा । ठढी कनक चौर भरें त्रीग्रा ॥
वुंदी जीलेवी ग्रछी गोझीग्रा । चीनी दही थाल ग्रागे कीग्रा ॥
वाशा मुशुक पान केशर कपूर । शुपारी शुल कथ औ लौंग चुर ॥
वीरी चवाएँ भरे मुंह गाल । छीरके पुहुप तेल लागे गुलाल ॥
धरी हाथ शौ वात पूछन लागे । कैशे मीले जैशे भाई शगे ॥
हहा वहुत रोज वीता हमे । केते फीरे पै न देपा तुमें ॥
कहौ पाह कीग्रा की नाही ग्रजौ । ग्रवतौ शकुच छाडी हमको भजो ॥
है शुध तुमै उश दीन की कहो । गुरु के भवन मो जो पठते रहो ॥
हम तुम धाए जगल को गए । तोरा इंधन वांधी वोझा लीए ॥
वुतै चलै नाही फाटे हीग्रा । तन शौश कै नाही ग्रपना पीग्रा ॥
ग्राई झरीमेघ कारी घटा । ठनके वीजुली मामो दामीनी छुटा ॥
जल थल भरा नीर औ ग्रंधकार । तौ तौरई ग्रार रोग्रै पुकार ॥
इहां शौ हमारे गुरु शुना पुकार । वोझा लीए चले मेह वेशुमार ॥
देपत गुरु धाए ग्रंकम भरा । माथे शौ वोझा उलटी गीर परा ॥
रोवन लगे लाए छाती ग्रनके । छोड़े नहीं वात वोलै वीव के ॥
ग्ररे हद कीया ग्रागले शौन होए । हमारे भले को चले जीग्र पोए ॥
गुरु की भगती ग्रव तुमौ हद कीग्रा । गुरु के शोग्रारथ को तन मन दीग्रा ॥
पढौ शव चेले वेद वीध्यान । वीना पढते गरंथ करौ वपान ॥
ऐसे शाके ते शहे दुष वडे । हम तुम गुरु के भवन मो षडे ॥
कहा जी हमारो शषीन दीग्रा । शंदेश वगल मो तुमौ जो दीग्रा ॥
एते कहते सुदामा लजाए । रहा पोटली को वगल मो छपाए ॥

जेव जेप कहे •तेव तेव टारन लगा। तन मो पसीजा भन्ना शाग शगा ॥
नीचा करै शीर श्रो शौर श्रौर। शुमरी कनक पुथी श्राग भरी लोर ॥
श्रो कीशन वल शौ लीश्रा फेरीछत। शुदामा करै पेरी लेने को कश्त ॥
कल वल शौ पोलु गीरह वेपरा। जतन शौ कीश्रा है शरा चौहरा ॥
श्रा श्रा नीकरी मटर भीवना। भुना कोई एक तीदुल कना ॥
श्री कीशन की गेहनी जो हथी। लपो श्रचल यदन भरी मानो शशी ॥
मेरी मकीतनीत कीऐट शुनो। दीश्रा प्रीती शौ पावो भुना चनो ॥
वीना मीवी जो देह छोहारा वदाम। शो कैशेठ मेरे श्रावै न काम ॥
रह मान शी मोही लागे कनी। दीश्रा है महा प्रीती शौ वाभनी ॥
भरी हाथ मुप मो दीश्रा मुपभरा। दुनो भरा गाल ताह गरा ॥
पावन शके नोहनीगल न लगे। रुपे चुरे पै लगे थे गले ॥
रानी लपकी नीर भारी देई। पानी के घोट शौ नीगन फीर गई ॥
वहुरी हाथ डारे भरन को मुठी। थै हाथ रानी वुरी होए उठी ॥
हा हा करत होगश्रा था श्रवै। लगा था गले मो मुए थे थवे ॥
दै हाथ छीन गोदी कीश्रा। गश्रा था हाथ शौ श्रपना हीश्रा ॥
वलीहारी कीश्रा मै ऐसा संदेश। रोए हंशे राजरानी सुदेश ॥
पांडे संकोच शौ करै शीर गडा। मानो परा नीर शौ शौ घडा ॥
फिरि वे गए सांझ होते तहाँ। श्रीकीश्न की शेज रापु जहाँ ॥
उठे प्रातही कीश्न शौ होएवीदा। पांडे चले श्रपने घर जुदा ॥
पुशी होए चले प्रेम सो वशभए। इह शाहेवी कीश्न कैशे नए ॥
वडी साहेवी है वडेशाम धान। इती विपती परै श्वामी श्रनजान ॥
इन धरै नैन रुधे गला। धन का वीगारा कुचा भी भला।
परी इह महा श्रचरजशा लगै। दीश्रा नाही कीछु जो दालीद्र भगे ॥
थोरा भी नाही दीश्रा कीछु हमे। रुपा परा दिल हमारा भमै ॥
परी तो हमारी दश्रा है करी। मती इह छकै मती वीशारै हरी ॥
ऐशे करत श्रागए जी तहाँ। श्रपने पुटे के शीमाना जहाँ ॥
जहाँ झोपरी शो मंदील वना। शोना जवाहीर लागे घना ॥
दोमहला ते महा चौपंडी वाग। द्वारे पडे मद गलीत वीशनाग ॥
शो देपी चौंका सुदामा हीश्रा। श्ररे इंह काने भूप डेरा कीश्रा ॥
कैशे कीले को वंधे थे वाश। वाती घनी वोझ वाधे येकाश ॥
श्ररे क्या भश्रा एक तीनुका नही। टुटा परा भी मीलै जौ कही ॥
एते कहते श्रागई वांभनी। नपशीप शौ हेम मोती मनी ॥
चलो जी चलो भौ भीतर श्रावो। धोवो चरन भवन देपो नवो ॥
श्ररी तू चली जा यहाँ उपरी। हम ब्रामन शौ क्या मशपरी ॥
देपोरे भाई सतावै हमे। देपै नही इह वुरी शीश मैं ॥

अव पीछु लागी है देषो कहा। रही जो शंपती जुटेउ सव गहा ॥
घरे राषी गया था कउन आया। कुश का आशन कहा दउ गया ॥
शवाहाथ का टाट था कोपीन। शोकी गया दूर द्वारे शेछीन ॥
कापन लगा शो आफतशहा। अरोशी परोशनी शवै मील गहा ॥
महल उठे की हकीकत कहा। तव ते सुदामा भवन मो रहा ॥
तव वुभते वुभते वुभ गआ। स्त्री कीश्न जीउ में पराएन भया ॥
शवै भगती की भई जो दया। 'भीगंपती' कथा इह कीआ ॥
शुदामा चरीत्र पढ़ै मन लाई। वाढ़ै धर्म पाप छै जाई ॥

इती श्री शुदामा चरीत्र कथा शंपुरन शमापत दशपत मानीक चंद शाकीन भागलपुर ११५९ शाल १९ रजवरोज शुक्र ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

संख्या १७६. रस रतनावली, रचयिता—मंडन, कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—८.७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८८, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत बालकृष्ण दास जी, चौखंभा, बनारस

आदि—

श्री महागणपतेय नमः श्री सरस्वती मांता जी सहाय अथ रस रतनावली लिष्यते ॥ सीता राम जू सहाय ॥

॥ दोहा ॥

गुरू गुपाल गोकुल गिरा गोवर्द्धन गगनेस ।
मंडन गोधर गंग सुत गिरिजा गिरिस गनेस ॥

अंत—

वारों ये वेर गवारन को भपु तैई पे पास जिन्हें कछु हौंनो ।
'मंडन लाल' कहा इन सो ललचावत हो अपनो मुंह लौंनों ॥
मेवा जु होइ सुलेहु वलाइ लौं दारिनो कै दाप विकात जु कौनो ।
सो अपने कहि देहु मगाइ कहौ वलिहार जराव औेर सोनो ॥

इति श्री रस रतनावली मंडन विरचितं समपूरण समाप्त ॥ दोहा कवित्त व सवैया ॥ २३४ ॥ लिपा हीरालाल सुपराम का मिती सावण वदी ४ संवत् १७८८ श्री आंवावती नग्री में लिषी ।

विषय—

'रस रतनावली' रीति ग्रंथ है। इसमें शृंगार रस का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया है।

संख्या १८०. मकरंद वानी, रचयिता—हित मकरंद, कागज—देशी, पत्र—७०, आकार—५'४ × ८'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१५ वि०, लिपिकाल—सं० १८२५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यू० म्यूजियम; इलाहाबाद

आदि—

श्री व्यास नंदनो जयति ॥ श्री राधावल्लभो जयति ॥

॥ कवित्त ॥

रवि कांति मनिन के घाटनि के बंगला में,
बैठी सपी करैं भाव एक रस सार री।
सुरत के रंग भरे परे आइ कुंज द्वार,
वार अरझाये हार पिय कर धार री॥
अहो रसदानी सुपदानी जानी सुरझन में,
उरझन कौ काहू भाँति पावत न पार री॥
बोली निज अली अहो कहा कहैं सारों शुक,
लये प्यारी हाथ कहे चदौ वार वार री॥ १॥

मध्य—

संवत दस से आठ अठारहि। असौजी सुदि द्वैज उर धारहि॥

॥ दोहा ॥

दोहा कवित्त अरु चौपई इत सत ऊपर पाँच।
रति रण केलि लतानि कौ छिन छिन प्रति उर सांचि॥

॥ इति रतिरण केलि लता संपूर्ण ॥

अंत—

॥ राग राइसो ताल चंपक ॥
रच्यौ है प्रेम हिंडोरना श्री हरिवंश कृपाल।
श्री वृंदावन रम्य में झूलत ललना लाल॥ टेक॥

उज्वलता अरू स्वच्छता थंभ सरल ह्वै वानि।
मदन मयारी फबि रही जटित सचिक्कन ठांनि ॥ १ ॥

मरुवा विलुवा स्निग्धता मादकता सरसाई।
चाह चटपटी अटपटी चट्टुवा लट्टु लटकाई ॥

\+ \+ \+

जै श्री हित मकरंद यह सुप सच्यौ मिष्टभाव बिलसांही।
दृष्टि वृष्टि जिहि पर करै तेई भावक ह्वै जांही ॥ ६६ ॥

विषय—

प्रस्तुत 'मकरंदवानी' में 'हित मकरंद' जी की रचना संगृहीत है। इसमें विशेषतः पद हैं तथा एक रचना 'रति रण केलि लता' नाम से भी है। इसके अतिरिक्त कहीं सवैया भी अपवादस्वरूप आए हैं।

'मकरंदवानी' उसके रचयिता के समान ही श्री राधावल्लभीय संप्रदाय की चीज है। अतः इसकी मूल भावना उक्त संप्रदाय के आचार विचारों के अनुकूल है। इसमें श्री राधाकृष्ण रास विलास वर्णित है। इसके अतिरिक्त बहुत से स्थानों में श्री हित हरिवंशजी का अभिनंदन अथवा यशोगान भी है।

वानी के प्रत्येक पद के अंत में 'मिष्टदृष्टि' शब्द अनिवार्य रूप से आया है जो रचयिता के भावदृष्टिकोण का द्योतक है। लिखा भी है :—

'दृष्टि वृष्टि जिहि पर करै तेई भावक है जाही' अर्थात्—वे श्री राधिका जी की प्रेम दृष्टि के अभिलाषी हैं।

पदों की संख्या ११३ है। रचनाकाल संवत् १८१८ है जो ग्रंथ में इस प्रकार दिया है :—

संवत दस सें आठ अठारहि। असौजी सुदि द्वैज उर धारहि ॥

संख्या १८१. मगनिया रा दूहा, रचयिता—मगनिया, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री जलंधरनाथ जी सत्य छे

॥ दोहा ॥

गुणता गुण भवपार, है मानव खिण एक में।
वांदौ वारंवार, मुद्रा वन पै मगनिया ॥ १ ॥

वेद पुराण विसेक, पर न लाभे पंडितां ।
इच्छा सिद्ध पत एक, महा अपरवल मगनियाँ ॥ २ ॥
अति नर करैं उपाय, हु अैंक अथवा नह हुवै ।
जाणी किणियन जाय, महा अलख गत मगनियां ॥ ३ ॥

अंत—

वाट चलण री वोक, सीगांला जाणै सवल ।
चलकर खंचे न वोक, माठो धोरी मगनिया ॥ ४३ ॥
पिसणां न द्रव पाक, दिल आवै जितरो दियो ।
अति पय सींचो आक, मीठो हुवै न मगनियां ॥ ४४ ॥

—अपूर्ण

विषय—

नीति धर्म के ४४ सोरठे ।

संख्या १८२. पिंगल या छंदसार संग्रह, रचयिता—मतिराम, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—९३/४ X ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, खंडित, रूप—प्राचीन (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मतिराम पिंगल लिषिते ॥

॥ छंद ॥

गवरिगोद महिमोद मगन मोदकर वीलसत सुषकंद ।
चंदन वलित ललित उतमंगल हास गहि सुभग जगमगीय चंद ॥
इमि सरूप सुभगज सुष ध्यावत सरसावत बहुविधि वर छंद ।
मंगल करन हरन अघ साँचे जै जै सिधि सदन सिव नंद ॥ १ ॥

\+ \+ \+

॥ दोहरा छंद ॥

अंबु चरन चीत लाये वरनौ वंस बूँदेल कौं ।
वीमल कृति गुनगाये निज कुल भाँन समाँन लषि ॥

नृपति 'सरुप सुजाँन' बहुविधि जाके लेषिये ।
वढ़त दाँन सनमाँन भीक्षुक आये भवन मैं ॥
सबनि लहे मन काँम त्यौंही नृप कौं सुजस सुनी ।
आयो कवि मतिराम ताहि वचन सनमानि कै ॥
कीन्हो काम सुजाँन ग्रंथ ससक्रुत रीति सों ।
भाषा करो प्रमान यह सुनि रचना छंद विधि ॥
करो सुकवि समुदाइ वृत्त रीति सब जाँनि हैं ।
जो पढ़ै चीतलाइ पिंगल करता आदि दै ॥

+ + +

छंदसार संग्रहे रच्यो सकल ग्रंथ मति देषि ।
बालक कविता सींष कौं भाषा सरस विसेषि ॥

मध्य—

संपूरन सब कहत है अस कही कीजे फेरि ।
सब्द रूप रसग्रंघ कहि नाना कुसुम जु हेरि ॥
गन औ वरन विचारिकै कीन्ह कुगन विचार ।
गन ओ सुरगन वीचारि कै कीन्हों ग्रत व्योहार ॥
अस सब्दादीक आदि दै मंगल वचन अनेक ।
ग्रंथादिक को जानि कै नही सुग असुभ विवेक ॥

॥ छप्पै ॥

श्री मंहाराज राजा अधीराज वीरसींघ देव हुव ।
चन्द्रभान धरनीस धीरता को प्रसीध सुभ ॥
मित्रसाहि तिनके सपुत वीष्यात जगत सब ।
तासु पुत्र अवतंस अवनी पंचमसिंघ सरूप अब ॥
जासु जासु येकु अवलंब सौ मतिराम सुकवि हित चित धरीये ।
रची छंदसार संग्रह सरस सुगन नृपति ध्यातीकरिय (गनवती)

॥ संपूरन ॥

अंत—

॥ अथ विंव व्रतं ॥

भगन येक गुर येक फिरि येक चरन में कीन ।
विंव व्रत सों जानिये पंचम नृपति प्रवीन ॥

जथा

पंचम को वंसवलि साजि सदा फौज भली जाइ जहां जंग जुरे। भुप हीयो हुलसि जाहिले हुंदनसे।

+ + +

॥ अथ निसभुप व्रत ॥

॥ दोहा ॥

नगन येक फिरि जगन जुग लघु गुरु फेरि मिलाइ।
भूप सरूप अवनीस सुचि निसभुप व्रत सुहाइ॥
.........सरूपवली जहा तहा सत्रु समाज हली।
बहुविधि सज्जन पातवली दिन दिन कीर्ति आसन ली॥

॥ अथ वर्ण प्रयातव्र ॥

—अपूर्ण

विषय—

पिंगल विषय वर्णन।

संख्या १८३. विषहरनविधि, रचयिता—मन संतोष, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—११३/४ × ५१/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२०, प्राप्तिस्थान—भारतकला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ विषहरन विधि लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

कछु ग्रथंन मै देष कैं कछु गुर भेद बताइ।
जहर दिनाइ संसक्रति भाषा करौ बनाइ॥ १॥

॥ चौपाई ॥

पारवती मन चिन्ता भई। तब शंकर सौ पूछत भई॥
जे विष है पृथ्वी मै सबै। ते कहिये प्रभु मोसो अबै॥
केतिक विष केते उपविष जान। केतिक जरकी परवति पान॥
केतिक जीव विष लै रहै। पूछत गौरा इश्वर कहै॥ २॥

॥ छंद ॥

जे जहर वुरे अरू विकट ज्वाल । ते करै नर नीके विहाल ॥
तुम कहौ जातै होइ काज । नर जीवै विपतै त्रिपुरार ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

विप नाम नीलकंठ पंधारिया परवतिया हरयार ।
सौठिया हरदिया नागिया ये अति है वरयार ॥
रतुवा दुधिया तेलिया महावरिया अतिसैन ।
निरविसिया जु फिटिकिरिया त्रोदश शृंगी ऐन ॥ ६ ॥

मध्य—

पथरा को विप पथरा हरै । कहत 'संतोप' जो सय सुप करै ॥

\+ + + +

'संतोप चदेरी' वैद तावै । पीर ना होइ न वहुत गै हारौ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

विपनाशन उपचार सब भये समापत सोइ ।
'मन संतोप' विचार कै भापा करी अवलोइ ॥

॥ जुलाब की इलाज ॥

निसोत पीपरी घेला घेलाभर पांडा २५ ठंडे पानीमै पाइ ठंडो पानी पियै फेर दूध भात पाइ वंद होइ ॥

इति श्री विशहरन विधि समाप्तं फाल्गुन सुदी ३ गुरू वासरे संवत् १९२० इदं लिखतं नंदकिसोर गौडेन ॥

विपय—

अनेक प्रकार के विपों की ओपधि वर्णन की गई है ।

संख्या १८४. कवित्त, रचयिता—मनिवेद, वेदमनि तथा वेदविद, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—७$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरूटोला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री भवानी जी सहाइ ॥ राम जी सहाई ॥

श्रींगणेशाय नमः ॥

हे जगतंब विलंब न कीजै है अवलंब तिहारो ॥
अति अथाह अवगाह जलधि जल पगनिवाह निहारो ॥
चाहत सुचित होन नहि पावत चितमेरो पचिहारो ।
तुमही कृपा पूरि पदु पंकज जनके मनहि विहारो ॥ १ ॥

विधि हरिहर चाप आप पाय रहे ताप तिहु पुर प्रगट अलापसुति सेस को ।
सिद्धि ही को कारन विदारन विपति कोहै वारन सो वदन विराजत सुदेस को ।
धूम ध्वज धीरज धरन के चरन करि पावत सुगम धन ध्यावत धनेस को ।
जनतु न जानिए अनतु उपमा है याते कीजिए मनतु गुन गनतु गनेस को ॥ २ ॥

\+ + + +

अली मंद मंद मुरली धुनि बाजै नृतत्त कुंज विहारी ।
गावत मोद भरी दै दै वृषभान कुमारी तारी ।
फेरनि मृदंगनि सहासनि हेरनि ठगी निरषी सब नारी ।
हाव भाव निरषत नटवर को कोन होइ विविचारी ।
किंकिनि कल नूपुर धुनि सुनि चित्त चेति मंद पद चारी ।
पोत खेद सुप सोत सदा 'मनिवेद' होत वहारी ॥ ४ ॥

अंत—

बालम भली भाँति विसरो ।

पापी प्रान चलत प्रिअ तुम्ह से तवै नाही तिसरो ।
फूले नाही नैन पांषडी निसि दिन नीर भरो ।
लीनै सुरति 'वेदमनि' जैसे वरवस गरे परो ॥ १ ॥

अब प्रभु जी मेरे गुन गहि है ।

तौ तौ कुटिल प्रान कपटी एकैसे सुपी निवही हौ ।
जीवत तुम्है विहीन निलज जौ पथिक जाइ कोउ कहि है ।
प्रीति प्रतीत तजै प्रीतम हम कसन सासना सहि है ।
करनी समस जाइ दै दै अब विरह अनल तन दहि है ।
'वेद' दीन विन सलिल मीन ज्यों तरफराति तरहि हौ ॥ २ ॥

सुनिए विदित तेरो विरद विसाल जन आपने जननि नाहि नेसुक विसारती ।
एतो दुप पायो चिंता चिंता न मिरायो दिन एहि कविता यो मो विनै न उर धारती ।
गारती गरूर दीह दारीद नेवारति तै दनुज दरन को है पापर पपारती ।
'वेदमनि' आरती हे हरकी उदारती सभारती त्वारित क्यों न विपति बिदारती ॥१८॥

विषय—

शृंगार और भक्ति संबंधी कवित्तों का संग्रह ।

संख्या १८५ क. मनीराम के कवित्त, रचयिता—मनीराम, कागज—देशी, पत्र-११, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

साहिब किरान सानी साहि जहा पातिसाह साहिब की जामिसे सु लीन्हें महि माथ हे । दसों दिसा दावें दिग पाल रहें जाके लिये मेरु रापे रहे मध्य तेजु तिन साथ हे । चक्कवे चकत्ता चहू चक्क के साहिब आजु दसों दिसि तेरी दस दिसि कोले नाथ हे । जासों लीजे तासों लीजे जाहि दीजे ताहि दीजे लीवो दीवो आलम पनाह तेरे हाथ हे ॥ १ ॥ तुहीं दानि दुनी में देवैया दीननि को तुही तेरे गुन गणे को जो होइ सेत रूप से । तेरे दिये दान न घटत घर ते घरीक घने घने पेलन पेलाइ देषो जूप से । मरजिया जावक पावत मोज लहरी सों सुजस को सिंधु ते नृपति योर कूप से । सुनि सुनि तेरो दान साहि पिरोजपान भूप मे भिपारी ते भिपारी किए भूप से ॥ २ ॥

अंत—

आलम जियाइवे को आलम पनाह आपु करी न परति महीमा हे अवतार की । जिय की न जाने कोन जोगीस्वर वात सोइ जानतु हे साहिजू के मन के करार की । लंका पतिहू से कोउ थपि थापे एकनि कौ और काहि छवि छाजे एती भुअभार की । साहि किरन सानी साहि जहाँ पाति साहि जामे सब पैये करतूति करतार की ॥ २०५ ॥

गज आननि पुनि देव कटिहि जड़ भाव वित्त कर ।
फुर सो मुछि जग पथ्य डिढि दै इसे दुप्प हर ।
सेवक पिप्पिहि सिद्धि छुंड गन लिये ठट्ट फल ।
लंब जठर भव वंच हु है सुघट मंझ छंडि छल ।
मंदहि सो देव फन पत्ति मिलि भवर डिढ मार्मिहिलहि ।
'मनिराम' सुमिरि गनपति कहि मन चिंतित अच्छर मिलहि ॥ २०६ ॥

विषय—

बादशाह शाहजहाँ की प्रशंसा की गई है।

संख्या १८५ ख. पातसाही कवित्त साहिजहां के, रचयिता—मनीराम (स्थान—असनी, फतेहपुर), कागज—देशी, पत्र—३७, आकार—७ × १३'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः कवित्त मनीराम के ॥

साहिब किरान सानी साहि जहाँ पातिसाह साहिब की जानि से सुलीन्हें महि माँथ है।
दसौ दिसा दावें दिगपाल रहैं जाके लिएँ मेरू रापें रहैं मध्य तेजु तिन साथ है॥
चक्कवै चकत्ता चहुँ चक्क के साहिब आजु दसौ दिसि तेरी दस दिसि को तै नाथ है।
जासों लीजै तासों लीजै जाहि दीजै ताहि दीजै लीवो दीवो आलम पनाह तेरे हाथ है॥

\+ \+ \+

केता मेरा लसिगर मार विचलाइ दिया आपु जसु लिया देपा कैसी दिल आई है।
सारे पुरासान के मुकाविले अकेला आया सेर सम धाया यों हिम्मत हिए नाई है।
जिस फौज उह सरदार होइ साहि कहें उस फौज में न जाना सामुहें वडाई है।
ऐसे हिंदू लरते हैं जैसा लरा सत्रुसाल उस सों हमारी हिरगिज न लराई है॥६०॥

अंत—

जान पनी आनि जगति मति गनपति नागपति,
हू की गति भूलि भूलि भरमति है।
तेज आगे तरनि तेज सो तरैया सम कहे,
'मनिराम' ए तौ राजे करिवर में।
परम प्रतापी पाति साहि जहा (जाइ)
डोले दिगपाल जब पगलेत कर में।
मोज सुनि सहमे सुमेरु कसे के कुवेद।
लक्ष पतिहू घेरू होत घर घर में॥ २०४॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में मनीराम के २०५ कवित्त हैं। बीच बीच में १–३ दोहे भी हैं; परंतु वे अपवाद स्वरूप हैं। इस ग्रंथ का विषय शाहजहाँ और उसके दरवार के राजपुरुषों की प्रशंसा है। अतः यह एक प्रशस्ति काव्य है। इसके अतिरिक्त कुछ कवित्तों का विषय देवी, शिव और कृष्ण की भक्ति तथा भ्रमर गीत है।

ग्रंथ में शाहजहाँ के विषय में अधिक कवित्त हैं तथा उसकी बसाई हुई दिल्ली या शाहजहानाबाद का भी वर्णन है। शेष राजपुरुषों में से निम्नलिखित विशेष महत्वपूर्ण हैं; क्योंकि वे हिंदी कविता के प्रेमी और कवियों के आश्रयदाता कहे गए हैं :—

१—फीरोज खाँ (कवित्त संख्या २, २५, २६)

२—मुदफर हुसेन (क० सं० ११, १७, १८, ३६, ३७, ७०, ७४)

३—मिरजा साहेब सेप पुल्लह (१९)

४—वहमनियार खाँ असफ खाँ के पुत्र (२४)

५—इतकाद खाँ (असफ खाँ के पुत्र) (६६)

६—मिरजामुतलिब (३०, ३१)

७—दारा शिकोह (३२, ५९, ७२, ७१)

८—तरवियत खाँ (३५)

९—निजावत खाँ (६३, ६४)

१०—असालत खाँ (६७)

११—आसफजाह (१६३, १६७)

१२—माथुर मुकुंद राय (१६८)

१३—जयसिंह (५३, ५४, ५५)

१४—कुँवर अमर सिंह (राजा जयराम के पुत्र ३३)

१५—मित्रसेन (१३)

१६—सदारंग (१४)

टिप्पणी—रचयिता के कुछ कवित्तों की भाषा खड़ी बोली लिये हुये है, देखिए संख्या ६० का कवित्त :—केता मेरा लसिगर मार विचलाइ दिया आपु जसु लिया देपा कैसी दिल आई है······ ।

संख्या १८६. श्री राधिका रमण रस सागर या राधारमण रस सागर, रचयिता—मनोहरदास जी (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ वि०, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—गो० दामोदराचार्य वैष्णव शास्त्री, राधारमण मंदिर, वृंदावन, जिला—मथुरा

आदि—

श्री राधा रमणो जयति अथ श्री राधारमण रससार लीला लिष्यते ॥

कवित्त

प्रथम प्रणाम गुरु 'श्री रामशरण' नाम पट्टराज चरण सरोज मनभायो है ।
कृपा कीनी दीनी दीक्षा सिक्षा परिचर्या निज राधिका रमण वृंदावन दरसायो है ॥
सद्‌गुन समुद्र दयासिंधु प्रेमा पारावार सील सदाचार को वितान जगछायो है ।
ता दिन सफल जन्म भयौ है अनाथ बंधु 'मनोहर' नाम राखि मोहि अपनायौ है ॥१॥

॥ छप्पै ॥

श्री चैतन्य कृपाल कृपाकर भट्ट गोपालै ।
तिन श्री निवाला चार्य वर्य करुणा को आलै ॥
रामचरण तिन कृपा चक्रवर्ति विख्याता ।
रामचरण पटराज कृपा तिन सारहि ज्ञाता ॥
सुद्ध भक्ति रस राग तिन करुणाकर दीक्षा दयी ।
'दास मनोहर' नित्य गुरु पद धूली सिरपर लई ॥ २ ॥

\+ + +

द्वितिय शिष्य अद्वितीय देव वनवासी भूसुर ।
गौड श्री गोपीनाथ गुसाईं गुरु सेवन वर ।
करुणाकर श्री भट्ट गुसाईं कियौ अधिकारी ।
श्री राधिका रमण सौंपि सेवा सुठि भारी ।
हरिनाथरु मथुरादास हरिराम जु निजु अनुगत किये ।
इनके वंस प्रसंस मनोहर परिचर्या चितवित दिये ॥ ५ ॥

अंत—

राधिका रमण रस सागर सरस संत पढत दिवस रैनि चैन नाही मन मैं ।
सेवन की अभिलाष राषत छिनुही छिनु बिनु दरसन तलफत वृंदावन मैं ॥
ऐसो वड्‌भागी पै करत कृपा अभिमत निरखै युगल हित पुलकित तन मैं ।
मनोहर करै आसपास वास नित्त निकट मैं रहै श्री गोपाल भट्ट परिकर मैं ॥१११॥

॥ अरिल्ल ॥

संवत सत्रह १७ सै सतामन५७ जानि कैं ।
सवन वदि पंचमी महोत्सव मानि कैं ॥
निरखि श्री राधा रमण लडैतो लाल कौं ।
हरिहर 'मनोहर' संपूरन वनराज विचारयौ ख्याल कौं ॥ ११४ ॥

इति श्री राधारमण रस सागर नाम लीला संपूर्ण संवत् १९११ कार्तिक दीपमालिकूं लिपि पूर्णा चुन्नीलाल ब्राह्मण मूढोति यामनी पारावास वृंदावन राधारमण इष्ट ॥

विषय—

पटऋतुओं में श्री राधारमण जी के रास विहार का वर्णन किया गया है।

रचनाकाल

संवत सत्रै[१७] से सत्तामन[५७] जानि कै।
सावन वदि पंचमी महोत्सव मानि कै॥
निरखि श्री राधा रमण लड़ैती लाल कौं।
हरिहर 'मनोहर' संपूरण वनराज विचारयौ ख्याल कौं॥

संख्या १८७. उधौपचीसी, रचयिता—मलूक, कागज—पीला, खुरदरा पतला, पत्र—३, आकार—६'५ X ४'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५ कवित्त, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत; पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ गोपी कौ उराहनौं॥ ऊधो समय॥

सुनि सुनि बातें ऐसी माधौ सौं बशाति नाहि जोग जोग नाही ताके कैसे उर आइहै।
तुमको तो कही है यह कौंन की कही है बात हम तौ सही है जो पे तुम मन लाइहै॥
सुनो हो 'मलूक' यह बात है परवाने वारी वय के बंबूर कोऊ आव फल खाइहै।
परधन पाइ के जु अति इतराइ ऊधो काहू कलपाइहै सो कैसे कल पाइहै॥ १॥

\+ \+ \+

जोगऊ निदी तौं हम लीनौं धरि आंखिनी पै
भस्म लगावैंगी जू पाइअहु सीस लौं।
मोह से लगेंगी ओर बसनो रंगेगी जाइ ब्रह्मा
सौं लगेंगी औ पगेंगी ध्यान ईस लौं।
सुनो हो 'मलूक' हमें और न परेखौ कछू
कुबिजा कौ नांव बीच लागत है टीस लौं।
नरगस फूल कीसो डांडियौ न करी प्रीति
तौरे हूँ रहस फूलति उधौ द्यौस दस वीस लौं॥ २॥

अंत—

जौ उनि कौ हितु है हम सौं अव तौ यह मोनिहै बात कही कौं।
जोग 'मलूक' वनें तवही मन हाथ रहें जब जानें सही कौं।

जोग वहै जु कहावत उद्धव जोग करैं हरि बाँह गही कौं।
नातरु बात की बात कही जु गई सु गई अब राख रही कौं ॥ २५ ॥

इति मलूक कृत उधो पचीसी संपूर्ण ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥

विषय—

मथुरा से ज्ञान का संदेश लेकर आए हुए उद्धव को गोपिकाओं का उराहना देना और निर्गुन ब्रह्म की हँसी उड़ाना।

संख्या १८८. प्रकटज्ञान, रचयिता—मलूकदास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७.२ × ५.१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री राम मलूक ॥

अथ प्रगट ग्यान गरंथ संसकीरत में अनभा ॥

॥ दोहा ॥

उपदेस्ठा इस्ट प्रभु श्री हर प्रमानंद।
व्यापीक कारन जगत के ता नमामी पद वंद ॥

चौपाई

सुनीये प्रगठ ग्यान करी भाषौ, शोई नाम गरंथ को राषो।
तामे मुख शीखा ततशारा, शाधु वीचारहु वारंवारा।

ब्रन आस्रम को श्रम तेही तप हरी शंतुस्ठ।
वैराग आदी शहज ही भए शाधन कहौ चतुस्ठ ॥

॥ चारौ शाधन भन्य भीन्य (? भिन्न भिन्न) ब्रनन ॥

॥ प्रथम वैराग लछन ॥

ब्रमा आदी वीभो शव जेती, अपर शकल लोकन में तेती।
काक वीस्ठी (?) राम सखी करै त्याग।
शो कहीये नीमल वैराग ॥

॥ अथ जोग नाम वरनन ॥

जम औ नेम त्याग की जानो।
मौन देश का लघु वा मानो ॥

आशन मुलबंद जो आही।
देह शमाद्गीग अस्थित काही ॥
शंजम प्रान औ प्रतीअहार।
और धारना को करो वीचार ॥
आतम ध्यान शताधी जानो।
शुनीये भीन्या भीन्या वी'..... ॥
अथ शाधन भीन्य भीन्य वरनन नाम

चौपाई

पोथी जीर्ण-शीर्ण होने से और उद्धृत नहीं किया जा सका।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का संबंध संत संप्रदाय से है। इसमें विवेक, घट साधन, विचार, जगत कारन, आत्मदेह, युक्ति, आत्म अनात्म, ज्ञान-जोग वर्णन आदि प्रसंगों के अंतर्गत ज्ञान की चर्चा है।

ग्रंथ दोहा चौपाई में रचा गया है।

संख्या १८९. मनलगन, रचयिता—काजी महमूह वहरी (स्थान—गोगी), कागज—देशी, पत्र—११०, आकार—८'६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, रचनाकाल—१२ वीं सदी हिजरी, प्राप्तिस्थान—श्री डा० मुहम्मद हफीज सैयद साहब, चैथम लाइन, प्रयाग

आदि—

किताव मन लगन तसनीफ काजी महमूद वहरी साकिन गोगी विसमिल्लाह अरहमान रहीम ॥ ए रूप तेरा रते रते हैं—ए रूप तेरा रते रते है—परवत परवत पते पते हैं। परवत में आदिक न कम पते में—इकसार है रास होर रते में।

होरय यूँ पैखी न जाय तुझको—जो बीज जगत के जाय तुझको।
सागर तू न सूरमाँ दांमें नाका—सन्दूक में सोर क्यों समाका।
तूफान तनिक समन के वू में—समदूर इक अंग के अजूं में।
इकपाल में नौ फलक वसे क्यों—इक घर सैंने दो जहाँ धसे क्यों।
दरिया में सदफ है लाग भरता—पन क्यों भरे हिच सदक में दरिया।

अंत—

कर कोई सुक्र अछोकर कोर-
बहरी करानाल वसयो मजकूर।

यो लोग खान योगियान पोकत-
यो भेद खान यो पे हकीकत।
कोई छाछ मैंने शकर न भावें-
हौर दूध केतें नमक न लखें।
...तो औथाथ ताते जाता-
के भाँत विचार मुख दिखाता।
खामोश कों बोलते पुरुष है-
खेते कों कहें कि वुल हवस है।
तू जिया है अवस हवस केतें होश-
कर होश हवस सबै फरामोश।
रख असिल पैचिश न छाँव ऊपर-
कर खत्म खुदा के नाँव ऊपर।

विषय—

'मनलगन' सूफी मत की रचना है और इसका विषय दर्शन है। इसमें आरंभ में क्रम से ईश्वर की वंदना है। मुहम्मद साहब की वंदना, सामयिक सम्राट् (बादशाह औरंगजेब) की प्रशंसा, गुरु की वंदना और पुस्तक लिखने का कारण आदि वर्णित हैं। इसके उपरांत पुस्तक का मूल विषय प्रारंभ होता है। पहले हिकायत, अर्थात्—कोई कहानी या दृष्टांत दिया गया है और उसके पश्चात् मत या निष्कर्ष का प्रतिपादन है।

इस प्रकार मूल विषय कहानी और उपदेश के रूप में है। यह रचना १२ वीं सदी हिजरी अर्थात्, औरंगजेब के समय की है जैसा, एक तो ग्रंथ में उक्त बादशाह के उल्लेख से पता चलता है तथा दूसरा स्पष्ट उल्लेख भी है :—

'हे भाई यो बारवीं सदी है
नेकी को दवा वदी वदी है।'

पुस्तक की भाषा हिंदी का दक्खिनी रूप है। फारसी शब्दों का प्रयोग स्वतंत्रता पूर्वक हुआ है और सूफियों के प्रिय छंद दोहे चौपाइयों के स्थान पर फारसी छंदों का प्रयोग किया गया है।

संख्या १९०. वाणियाँ, रचयिता—महादेव। इनकी वाणियाँ संख्या ५८ के विवरणपत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १९१. श्रीनाग पिंगल, रचयिता—माखन (स्थान—रायपुर), कागज—आधुनिक, पत्र—३२, आकार—८½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ श्री सरस्वत्यैनमः श्री गुरूभ्यो नमः ॥

॥ सवैया ॥

मंगल श्री गुरुदेव गणेश कृपाल गोपाल गिरा सरसानी।
वंदन कै पद पंकज पावन पावन छंद विलास वषानी॥
कोविद वृंदन के कलपद्रुम काम धुका मनि काम निधानी।
सादर इंदु मयूपन सीतल सुंदर सेस सुधारस वानी॥ १॥

॥ दोहा ॥

पिंगल सागर छंद मणि वरण वरण बहु रंग।
रस उपमा उपमेय तैं सुंदर अर्थ तरंग॥ २॥
तातें रच्यो विचारि के नर वषानि नर हेत।
उदाहरण बहु सरन तैं वरनत सुमति समेत॥ ३॥
राजसिंह नृपराज मणि है हौ वंस प्रकास।
सुवसरायपुर मे रच्यो सुंदर छंद विलास॥ ४॥
सदा सुकवि गोपाल को श्री गोपाल कृपाल।
तिन सासन हित तै रच्यो छंद विलास रसाल॥ ५॥
नरवानी पिंगल रच्यो छंद सेसमति धारि।
अथा सुमति माषन रचो बुधजन लेहु विचारि॥ ६॥

गितिका

पितु सुकवि गोपाल को यह भयो सासन है जबै।
विमल पद वंदन कियो हिय सुमति वाढी है तवै॥ ७॥
अति भारि पिंगल सिंधु मे मति मीन ह्वै करि संचरौं।
मथि काढि छंद विलास माषन कविन सों विनती करौं॥ ८॥

द्रुमिला

जिमि कंचन के कन आडि तिला सम ज्यौ न तुला पर नेकु चढै।
इमि कर्ण तुला कवि लोगन के सुनि छंद विहून कहू न रढे॥
मति मूढ हुलास प्रवीनन मध्य असुद्ध कवित्त बनाय पढै।
हँसि बोलि सराहत सो न लषौ उरमै सरसैं फेर फेर कढै॥ ९॥

दोहा

यातें पिंगल ग्रंथ गुणि कीन्हो छंद विलास।
पढ़ै गुनै सुनि तै वढ़ै दिन दिन बुद्धि प्रगास ॥ १० ॥
चारित्री सकल मै सबै द्वादश मात्रा जानि।
नव दीरघ करि लेपिये लघुकर तीन वपानि ॥ ११ ॥

अंत—

॥ हरि मालिक छंद ॥

चरन चमू प्रति कल लै वीसहि दीजै।
विरति दसाइक दै दिग मै पुनि कीजै ॥
अंत गुरु यक देहु कि द्वै करि वंदौ।
कहि 'माषन' तिहि सो हरिमालिक छंदौ ॥ ३१ ॥

॥ जथा ॥

रजनी आजु जगे कित प्रीतम प्यारे।
राजत नयन परे सु दुवो रतनारे ॥
उरसि नपक्षत ए गुन विनु माल लसै।
अंजन अधर कपोलनि वंदन दरसै ॥ ३२ ॥

॥ मदन सुमोहन छंद ॥

कल तेइस पद प्रति देहु चरन सु उक्ति करौ।
गुरु एक सुलोचन अंत मध्यहि राम धरौ ॥
जति त्रिदस रुदिना मे रापि पिंगल नाग भनै।
यह मदन सुमोहन छंद भिधा कवि जनहिं गनै ॥ ३३ ॥

॥ जथा ॥

मनमोहन रूप निधान रसिक सुरंग भरे।
वे नृतत ग्वालिन संग मुरली अधर धरे ॥
धरि मंजुल मोर किरीट कुंडल गंडह लै।
यह छवि कवि 'मापन' देषि काम के मात चलै ॥

इति श्री नाग पिंगल भाषा माषनकृत मात्रावृत्त संपूर्ण समाप्त शुभंभवतु ॥

विषय—

वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों का वर्णन किया गया है।

संख्या १६२. दोहावली, रचयिता—माखनदास, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—५.८×९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

श्री गुरुवे नमः ॥ श्री जानकी नाथायनमः ॥

॥ अथ दोहावली लिख्यते ॥

सोरठा

वंदो गुरु पद कंज विगत राग विज्ञान मै ।
नाम अमीरस रंज भाति दानि दाता अचल ॥ १ ॥
गुरु प्रताप जल जान 'मापन' मन विश्वास कर ।
आतम तत अग्थान पाइन उतर पार जे ॥ २ ॥
गुरु पद रज उजियार 'मापन' माडामोह मैं ।
नासै तिमुर अपार तव सूझै तेहि भग्ति पथ ॥ ३ ॥
विन रवि गुर अधियार सोवत देपौ जग्त सव ।
त्रिगुणी निसा अपार 'मापन' सुतवित स्वप्न सुप ॥ ४ ॥

अंत—

पंडित कविता वुध नहीं, नही अगन को ग्यान ।
'मापन' मन रुचि जोरि कै, कियो राम गुण गान ॥ ३३७ ॥
विगरो अर्थं सुधारि कै वुध करि है मनु पूर ।
'मापन' कटि है कुटिल जे ते हमहू ते क्रूर ॥ ३३८ ॥

मास अगन पक्ष कृष्ण तिथि सप्तमी सोमवार ॥ संम्तसर १८६१ ॥ श्री रामचंद्र सत्ति ॥ दोहावः ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'दोहावली', अर्थात्—दोहों का संग्रह है । ये दोहे माखन कवि रचित हैं । इनका विषय ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का उपदेश करना है । आरंभ में गुरु की महिमा है । उसके बाद राम नाम का माहात्म्य है । अंत में राम के शील और भक्त-वत्सलता का वर्णन है । ग्रंथ के आरंभ में तो एक प्रकार का विषय क्रम लक्षित होता है, किंतु अंत में विविध विषयक दोहे विना किसी क्रम के आने लगते हैं ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना साधारण कोटि की है। कवित्व प्रदर्शन इसका हेतु न होकर रामगुणगान करना ही इसका प्रमुख ध्येय है :—

पंडित कविता बुध नही नहीं आगम को ग्यान।
'मापन' मन रुचि जोरि कै कियो राम गुणगान॥

संख्या १६३. माणकबोध या आत्मविचार (टीकासहित), रचयिता—माणक, कागज—देशी, पत्र—५८, आकार—१० X ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६३१, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९१५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० श्याम सुंदर जी, स्थान और डाकघर—नंदगाँव, जिला—मथुरा

आदि—

श्री रामाय नमः॥ श्री गुरूभ्यौ नमः॥ सकल संतभ्यौ नमः॥ अथ माणक बोध आत्म विचार लिषतं॥

दोहा

मंगलायेन करुणायतन अव कल्याण गुणधाम।
मम मानस सर हंसवत रमण करहु सियाराम॥ १॥

॥ ध्यान कृष्ण जी कौ॥

स्याम सरीर पीताम्बर सोहत दामनी ज्यौं रवि देत दिपाई।
सीस मुकुट अति सोहत है घन ऊपरि ज्यौं रविदेत दिपाई।
कंठ विषै मणि माल वनी मनौं नील गिरि मैंहि गंग जु आई।
माणक के मन मांहि वसौ असो नंद को नंदन वालकनाई॥ २॥
गोधन के संग आवत गावत वंसी वजावत है मग मैं।
भाल तिलक उरमाल धरि कटि कंकनि नूपर है पग मैं।
चिंतत ही चित्त चोरत है कोऊ है ठग माणक महाठग मैं।
अस ध्यान सदा उर मांहि वसो वह जीवन को फल यौ जग मैं॥ ३॥

अंत—

सर्व सास्त्र पारदरसी सर्वज्ञ ईश्वर तुल्य आचार्य दयाकरि तत्वजो वपानही।
तत्व तैं विमुप अति अभिमानी मत्सरी जो तत्व को निसंक होय करै अपमानहीं।
मंद बुद्धि जाके सर्व सास्त्र को ज्ञान नांही ऐसा ही है कृत्य मेरा ताकूं कथमानही।
ज्ञान की विशुधि काज कियो है विचार ऐसो जांनि बुद्धिवान नांही कोप उर आनही॥२॥

\+ \+ \+

॥ सवैया ॥

यमुना तट केलि करै वहरै संग वाल गोपाल बनै बल भइया।
गावत है कवी बंसी बजावत धावत है कवहुँ संग गइया।
कोकल मोर की नाँई वे बोलत कूदत हैं कपि मृग की नईया।
'माणक' के मन माहि वसो ऐसो नंद को नंदन बालकनइया ॥ ६७ ॥

इति श्री आत्म विचार ग्रंथ महामोक्ष हेतु संपूरण मिति आसोज वदी ११ संवत १९१५

विषय—

आत्मज्ञान का वर्णन किया गया है।

इसमें अधोलिखित चार प्रकरण हैं :—

१—अनुबंध निरूपण नाम प्रथम प्रकरण	१ पत्र से १० तक
२—अध्यात्म निरूपण नाम द्वितीय प्रकरण	१० पत्र से २४ तक
३—आत्मस्वरूपावधारण नाम तृतीय प्रकरण	२४ पत्र से ५४ तक
४—आत्मस्वरूप स्थिति निरूपण नाम चतुर्थ प्रकरण	५४ पत्र से ६३ तक
५—आत्मविचार की फल द्वारा स्तुति प्रकरण	६३ पत्र से ६४ तक

संख्या १६४. करुणाष्टक, रचयिता—माधौदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—९ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री नाथ जी, अथ करुणाष्टक लिख्यते
......गज घंटा तले सुत राखे टिंटेरी।
अरि तैं राखि लियो पैहलाद जु ॥
शास्त्र बतावत साख घनेरी।
इंद्र कोप समे मज गोप गउ हरि।
राखि लिये सब वेर कटैरी।
दीन दयाल कृपाल दयानिधि,
वोहि सहाय करो प्रभु मेरी ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

करुणा अष्टक को पढ़ै, सांझ मध्य अरु भोर।
ताकै संकट सब मिटै, निहचै नंद किसोर ॥ ९ ॥